Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्ष

# भारत के प्राचीन मुद्राङ्क

# Ancient Seals of India

योधेयानां
जयमन्त्रधराणाम्

स्वामी ओमानन्द सरस्वती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

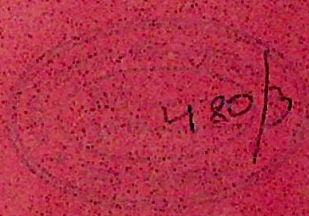

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

# भारत के प्राचीन मुद्राङ्क

# Ancient Seals of India

पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी.....
पु०सं०.....५८९
भारती पुस्तकालय

## यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्

स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# समर्पण

जिस महापुरुष से मुझे लिखने की प्रेरणा और आदर्श मिले, जिन्होंने भारतवर्ष ही नहीं
अपितु मारीशस, अफ्रीका आदि द्वीप-द्वीपान्तरों में वैदिक धर्म का प्रचार किया,
सिख इतिहास और आर्यसमाज के महाधन आदि अनेक ग्रन्थों का निर्माण
किया, जो एक व्यक्ति होते हुए भी संस्था स्वरूप थे, मेरे सदृश
जिनके सहस्रों शिष्य आर्यसमाज की सेवा में आज भी जुटे हुए हैं,
उन महामानव, वैदिक सिद्धान्त और राजनीति के महान्
पण्डित, राजर्षि, त्यागी, तपस्वी, वीतराग, लौहपुरुष,
आदर्श सेनानी, वीर संन्यासी पूज्यपाद श्रद्धेय
श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के
पवित्र चरण कमलों में उनकी स्मृति
के रूप में यह 'हरयाणे के
प्राचीन मुद्राङ्क' नामक
श्रद्धा सुमनाञ्जलि
सादर समर्पित
करता
हूँ

त्वदीयं वस्तु राजर्षे ! तुभ्यमेव समर्पये

ओ३मानन्द सरस्वती
फाल्गुन, शिवरात्रि, सं० २०३१ वि०

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी.....
पु०सं०.....
भारती पुस्तकालय

वीर संन्यासी श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

# भारत के प्राचीन मुद्रांक

# Ancient Seals of India

स्वामी ओ३मानन्द सरस्वती
Swami Omanand Saraswati

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर

प्रकाशक :
हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय
गुरुकुल झज्जर, रोहतक, हरयाणा
दूरभाष : ४४

भारत सरकार के शिक्षा और समाज कल्याण मन्त्रालयान्तर्गत
सांस्कृतिक विभाग द्वारा प्रदत्त अनुदान से प्रकाशित

प्रथम संस्करण १०००
सृष्टि संवत् १९६०८५३०७५
युधिष्ठिर संवत् ५१११
विक्रमी संवत् २०३१
दयानन्दाब्द १५०
मूल्य ५०१-००
Price Rs. 501-00
£ 30-00
सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रक :
सैनी प्रिण्टर्स
७११७-१८ पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# कुछ विशिष्ट सम्मतियां

प्रधान मन्त्री
भारत, नई दिल्ली

हमारे प्राचीन इतिहास और संस्कृति में हरयाणा का विशिष्ट योगदान रहा है। आपकी पुस्तक में इसी योगदान की झलक मिलती है।

१५/५/७५

—इन्दिरा गाँधी

हरयाणा हमारे देश का बहुत ही प्राचीन प्रान्त है। इतिहास में यह यौधेयों के निवास स्थान से प्रसिद्ध है। वस्तुतः 'हरयाणा' इसका अपभ्रंश नाम है। प्राचीन ग्रन्थों में इसका 'वहुधान्यक' के नाम से उल्लेख आया है। महाभारत में भी इस क्षेत्र का वर्णन है। रोहतक को महाराज कार्त्तिकेय का प्रिय स्थान बताया गया है। हरयाणा प्रदेश में यौधेयों की मुद्रायें बड़ी मात्रा में मिली हैं, जिनसे वहुत से ऐतिहासिक तथ्यों की पुष्टि होती है। डा० वीरबल साहनी ने अपनी खोज के आधार पर लिखित पुस्तक में महाभारत में वर्णित रोहतक की महत्ता को सिद्ध किया है। यौधेयों के वारे में पाणिनि लिखित ग्रन्थों में भी चर्चा मिलती है। पाणिनि ने विशेष रूप से यौधेयवंश के लोगों को शूरवीर और योद्धा कहा है और भी कई पुस्तकों में यौधेयों के विषय में उल्लेख मिलते हैं। परन्तु इनके निवास स्थानों के वारे में जानकारी उन उपलब्ध सिक्कों, मोहर इत्यादि से प्राप्त हुई है, जो उत्खनन से मिली हैं। जनसमुदाय के सिक्कों इत्यादि का एक वड़ा भण्डार सहारनपुर के समीप वेहट, सोनीपत, सिरसा, पानीपत, करनाल इत्यादि में उपलब्ध हुआ है। उससे हरयाणे के प्राचीन इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ता है। नौरंगावाद में मिली मिट्टी की मोहरों के अभिलेखों तथा गिरनार के शिलालेख में भी यौधेयों की वड़ाई की गई है। हरयाणा प्राचीन काल से धनधान्य और दूध घी से सम्पन्न रहा है और मुझे प्रसन्नता है कि इस परम्परा को हरयाणावासियों ने आज तक भी कायम रक्खा है।

गुरुकुल झज्जर में स्वामी जी ने जो संग्रहालय स्थापित किया है, वह इनके त्याग, इनकी लगन और गवेषणात्मक प्रतिभा का प्रतीक है। तभी तो थोड़े से समय में स्वामी जी के अथक प्रयासों के फलस्वरूप अब यह संग्रहालय हरयाणे के प्रान्तीय संग्रहालय के रूप में गिना जाता है। हरयाणे की प्राचीन मुद्राओं, मुद्रांकों, ताम्रपत्रों तथा अन्य पुरातन सामग्री से यह काफी समृद्ध है। परन्तु सवसे अधिक महत्त्वपूर्ण इसमें मुद्रांक हैं जिनकी संख्या १५०० है। मुद्रांकों का यह संग्रह वहुत माने रखता है।

यह प्रसन्नता की वात है कि यह संग्रहालय अपनी संगृहीत वस्तुओं की जानकारी जनसुलभ बनाने का प्रयत्न कर रहा है। स्वामी जी द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ इस दिशा में एक नया प्रयास है, जिसका हमें स्वागत करना

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये। क्योंकि इस प्रकार का विस्तार सहित मुद्रांकों के विषय का ग्रन्थ अपने ढंग की पहली कृति है। जिसमें हिन्दी में मूलपाठ के साथ एक बड़ी संख्या में उदाहरण भी दिये गये हैं। यह पुस्तक एक बड़ी खोज और सूक्ष्म अध्ययन का नतीजा है। जिसमें दिये गये लगभग ५०० मुद्रांकों के चित्र उन पर लिखित अभिलेख, उसका लघु वृत्तान्त इतनी अच्छी तरह से दिया गया है कि हर पट पर दिये गये उदाहरण को पूरी तरह से समझा जा सके। वास्तव में इन मुद्रांकों की इस ग्रन्थ में पूरी आत्मकथा वर्णित है। कोई भी ऐसा पहलू नहीं, जो स्वामी जी की दृष्टि से छूट गया हो। मुद्रांकों के अभिलेख, चिह्न, चित्र, उनके आकार-प्रकार, विचित्रता, विशेषता, प्राचीनता, उद्देश्य तथा ऐतिहासिक महत्त्व सभी पक्षों की विस्तार सहित इस ग्रन्थ में चर्चा हुई है। मुद्राओं की भांति मुद्रांक भी इतिहास के सूत्र माने जाते हैं। इनके पुरालेखों से कई ऐसे सूत्र मिलते हैं जो इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ देते हैं। आप ने इन पुरालेखों को इस पुस्तक में चित्रित किया है, उससे इस विषय के विद्यार्थियों को बहुत सहायता मिलेगी। पुरातत्त्व की दृष्टि से यह एक उपयोगी और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। स्वामी जी को उनकी इस महान् कृति के लिये मैं बधाई देता हूं। यह जरूरी है कि इतिहास के इन सूत्रों को सुरक्षित रखा जाये तथा नये सूत्र हम तलाश करते रहें जिससे इतिहास की टूटी हुई उन कड़ियों को जोड़ा जा सके जो काल के प्रभाव से लोप हो गई हैं। किसी मूल्य पर भी इन्हें देश से बाहर न जाने दें। यह हमारे देश की अमूल्य निधि है और हमारी परम्परा का सूत्र है।

स्वामी जी का समस्त जीवन त्याग और राष्ट्र सेवा का प्रतीक रहा है। सही मानों में हम इन्हें कर्मठ योगी कह सकते हैं। हरयाणा को आपने एक संग्रहालय ही नहीं दिया, गुरुकुल महाविद्यालय, आयुर्वेदिक औषधालय भी दिये हैं, साथ ही कई अनमोल ग्रन्थ भी दिये हैं। आपका जीवन नई पीढ़ी के लिये प्रेरणा का स्रोत है। आपने जो संग्रहालय स्थापित किया है, वह सारे हरयाणा प्रदेश का प्रतिनिधि बनकर यहां की सांस्कृतिक सम्पदा की जानकारी को विश्व के विद्वानों तक पहुंचाने के लिये प्रस्तुत है। मैं समझता हूं कि इस ग्रन्थ की रचना इस दिशा में एक प्रशंसनीय प्रयास है। मैं आपके इस ग्रन्थ को सफलता के लिये अपनी हार्दिक शुभ कामनायें देता हूं। इस ग्रन्थ के विमोचन में मुझे बड़ी प्रसन्नता है।

—बासप्पा दानप्पा जत्ती
( भारत के उपराष्ट्रपति )
१५-४-१९७५ ई०

मैंने श्री स्वामी ओ३मानन्द जी महाराज की नई रचना 'हरयाणे के प्राचीन मुद्रांक' देखी है। श्री स्वामी जी ने लगातार वर्षों घोर परिश्रम करके हरयाणे के प्राचीन शासकों के मुद्रांक स्थान-स्थान से एकत्र किये हैं। इस अनुसन्धान कार्य में इन्होंने लाखों रुपयों का व्यय किया है। इनके पास ऐसे एक हजार से अधिक मुद्रांकों का संग्रह है। उस संग्रह में से अति महत्त्वपूर्ण लगभग पांच सौ मुद्रांकों के चित्र और उनके विवरण इस विशाल ग्रन्थ में दिये गये हैं। स्वामी जी का यह अनुसंधान कार्य अनोखा है और इससे विशाल हरयाणा के प्राचीन इतिहास के अन्वेषण तथा लेखन में अभूतपूर्व सहायता मिलेगी और उससे भारत के प्राचीन इतिहास पर भी नया प्रकाश पड़ेगा। ग्रन्थ की छपाई और आकार-प्रकार भी अति आकर्षक है। सभी इतिहास प्रेमी स्वामी जी के इस ग्रन्थ से लाभान्वित और उपकृत होंगे। यह ग्रन्थ प्रत्येक संस्था के पुस्तकालय में रहना चाहिये।

—आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति
भूतपूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय



CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# प्रस्तुत पुस्तक कतिपय विद्वानों की दृष्टि में

श्रद्धेय स्वामी ओ३मानन्द जी के आजीवन अथक परिश्रम का फल प्रस्तुत पुस्तक है, जो भारतीय इतिहास के लिये अमूल्य निधि है। यौधेयों की भांति यह कृति भी जयमन्त्रधर है जो हमारी श्री की झांकी है। यह कला के इतिहास के लिये भी महत्त्वपूर्ण होगी। पूज्यपाद स्वामी जी का यह प्रयास बहुजनहिताय होगा।

—डा० लोकेशचन्द्र, अध्यक्ष सरस्वती विहार, नई दिल्ली।

ज्ञान और इतिहास की खोज के प्रबल प्रयत्नों का परिणाम है आपका ग्रन्थ—"भारत के प्राचीन मुद्राङ्क"। वर्षों की साधना और अनुपम श्रम का प्रतीक यह ग्रन्थ अनेक नवीन सत्य स्थापनाएं कर सकेगा। जो कार्य शासन भी न कर सका, वह प्रभु प्रेरणा से आपने किया। इसके लिये आपका जितना भी अभिनन्दन हो, अल्प है।

—भारतेन्द्रनाथ, अध्यक्ष दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली।

प्राचीन भारत के मुद्रांक ग्रन्थ को पढ़कर अत्यधिक हर्ष हुआ। आपका यह कार्य प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व जगत् में न केवल प्रथम काय है अपितु सर्वथा अनूठा और बेजोड़ भी है। ग्रन्थ में मुद्राङ्क लेखों को ब्राह्मी एवं खरोष्ठीलिपि में भी लिखकर इसकी महत्ता और भी अधिक बढ़ा दी गई है। साथ ही भविष्यत् के लिये एक आदर्श भी उपस्थित कर दिया है। इस ग्रन्थ में जिस बहुमूल्य सामग्री को प्रकाशित किया है, उससे भावी शोध कर्त्ताओं को मार्ग दर्शन मिलेगा। अन्ताराष्ट्रिय ख्याति पाने वाले इस ग्रन्थ रत्न के प्रकाशन पर आप तथा आपके सहयोगी श्री विरजानन्द दैवकरणि को अनेकशः वधाइयां।

—योगानन्द शास्त्री इतिहास प्रवक्ता, भगतसिंह कालेज, नई दिल्ली

प्राचीन मुद्रांक पुस्तक मैंने आद्योपान्त देखी। यह पुस्तक प्राचीन मुद्रांकों का अपूर्व भण्डार है। अमूल्य और अभी तक अप्राप्य मुद्रांक इस पुस्तक में मिल सकते है। मुद्रांकों की लिपि को पढ़ना बहुत बड़ी समस्या थी। स्वामी जी महाराज ने अपने सतत अध्ययन से न केवल उन पर लिखे शब्दों को पढ़ा, अपितु उनका समय भी स्थिर किया। यह कार्य स्वामी जी के प्रखर वैदुष्य और सूक्ष्मतार्किक बुद्धि का परिणाम है। पुस्तक अपने आप में एक अद्वितीय रचना है। ऐतिहासिक जगत् में इसका विशेष स्थान होगा। इतिहास की उलझी कड़ियां सुलझाने में ग्रंथ में प्रकाशित नये तथ्यों का विशेष योगदान होगा। प्रामाणिक विद्वान् और यशस्वी लेखक श्री स्वामी ओमानन्द जी महाराज इसके लिये हार्दिक बधाई के पात्र हैं।

—महावीर मीमांसक संस्कृत प्रवक्ता, शिवाजी कालिज, नई दिल्ली

प्राचीन मुद्रांक पुस्तक अपने विषय की अनूठी पुस्तक है। सम्भवतः भारतवर्ष में इस प्रकार का वैज्ञानिक प्रकाशन प्रथमवार ही हुआ है। पुरातत्त्व इतिहास वेत्ताओं को इसमें अत्यन्त मूल्यवान् सामग्री मिल सकेगी। अनेक दुर्लभ और अमूल्य मुद्रांकों का यह कोष कहा जाये तो अत्युक्ति नहीं होगी। श्री पूज्य स्वामी ओमानन्द जी महाराज के अध्यवसाय, अथक परिश्रम और अगाध पाण्डित्य की परिचायक यह प्राचीन मुद्रांक पुस्तक विश्व के इतिहास-पुस्तकालय में एक मूल्यवान् वृद्धि प्रमाणित होगी। पुरातत्त्व विषय के मर्मज्ञ लोग श्री स्वामी जी के सदैव ऋणी रहेंगे।

—प्रो० रामसिंह प्रधान अखिल भारतीय हिन्दू महासभा, दिल्ली

प्राचीन मुद्रांकों का यह सविवरण पुस्तकाकार प्रकाशन सभी के लिये अत्यन्त उपादेय तथा ऐतिहासिकों का प्राण है। इस विषय में स्वामी जी का कार्य अद्वितीय है। वस्तुतः स्वामी जी अकेले ही एक संस्था का रूप हैं। इनके द्वारा किया गया यह कार्य अत्यधिक परिश्रम एवं व्ययसाध्य है। इस महत्त्वपूर्ण प्रकाशन के लिये स्वामी जी हार्दिक बधाई के पात्र हैं।

—उदयवीर शास्त्री, संन्यास आश्रम, गाजियाबाद

त्याग और तप की साक्षान्मूर्ति स्वामी ओ३मानन्द जी सरस्वती ने ऐतिहासिक वस्तुओं की खोज में वर्षों का समय और लाखों रुपया लगा दिया था। परिश्रम से एकत्रित किये गये इन दुर्लभ मुद्रांकों का यह प्रकाशन ऐतिहासिक अनुसंधान-कर्ताओं को विशेष सामग्री देगा। प्रत्येक पुस्तकालय में ऐसा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ होना चाहिये। इसके लिये स्वामी जी की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है।

—अमर स्वामी परिव्राजक, संन्यास आश्रम,गाजियाबाद

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# दान-दाताओं की सूची

५१११) श्रीरामसिंह जी पटवारी सुपुत्र चौधरी झण्डूसिंह जी, पाना उद्यान, नरेला ने दान दिये हैं। ये नरेला ग्राम के पुराने आर्यसमाजी सज्जन हैं। इन्होंने मुझे बाल्यकाल से उच्च जीवन निर्माणार्थ उत्साहित किया तथा सभी शुभ कार्यों में सदैव दान देते रहते हैं।

५०००) चौधरी प्रियव्रत जी तथा चौधरी प्रतापसिंह जी पूर्व एम०एल०ए०, सुपुत्र चौधरी लखीराम जी आर्य, खेड़ी आसरा, रोहतक ने दान दिये। इस परिवार ने लाखों रुपये का दान धार्मिक तथा शिक्षण संस्थाओं को दिया है। इनकी दान की धारा अभी निरन्तर चल ही रही है। ये सुयोग्य पिता के सुयोग्य पुत्र हैं।

५०००) चौधरी सुमेरसिंह जी आर्य, सुपुत्र श्री चौधरी शिवदानसिंह जी, ग्राम स्वरूपगढ़ भिवानी ने दान दिये हैं। ये अत्यन्त सुशील, सरल, धर्मात्मा और दानवीर आर्य सज्जन हैं। जहाँ शुभ कर्मों में सदैव दान देते हैं, वहाँ सेवा कार्यों में भी स्वयं बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं। गुरुकुल झज्जर रोहतक के अनेक वर्षों से प्रधान तथा कोषाध्यक्ष पदों को सुशोभित करते आ रहे हैं। सभी संस्थाओं में शक्ति से बढ़कर दान देते रहते हैं। दानवीर आर्य किसान हैं।

५१००) चौधरी मनफूलसिंह जी आर्य, सुपुत्र चौधरी ध्योनन्द जी, ग्राम पनीवाला मोटा, प्रधान आर्यसमाज, सिरसा ने दान दिये। ये अत्यन्त सरल स्वभाव के दृढ़ आर्यसमाजी हैं। सदैव शुभ कार्यों में दान देते रहते हैं। आर्यसमाज के सभी कामों में बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं।

५०००) श्री सूबेदार रूपचन्द जी पहलवान, ग्राम बामला, भिवानी ने दान दिये। ये अत्यन्त उदार स्वभाव वाले, वीर सैनिक, स्वयं पहलवान तथा अनेक पहलवानों के गुरु और निर्माता हैं। मुझे सदैव सभी शुभ कार्यों में सहयोग देते रहते हैं। इनका सारा परिवार ही मेरी सहायता करता है।

७०००) कन्या गुरुकुल नरेला, दिल्ली-४०

६०००) महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर, रोहतक (हरयाणा)।

३५००) आर्य समाज तथा ग्राम नरेला (दिल्ली)।

२१००) श्री डा० सोमवीर जी आयुर्वेदाचार्य सुपुत्र चौधरी भागेराम जी, ग्राम चमराड़ा, ने अपने दादा चौधरी चन्दगीराम जी आर्य की स्मृति में दिये। इनका सारा परिवार दानी और धार्मिक है।

२१००) श्री सुधीर कुमार जी आनन्द, सुपुत्र श्रीमती सुशीला आनन्द, ग्रेटर कैलाश, नई दिल्ली।

२०००) श्री चौधरी थाम्बूराम जी आर्य, किसरेंहटी, रोहतक, हरयाणा।

११००) श्री हरि सिंह जी व्यायाम निरीक्षक, घसोला, दादरी, भिवानी।

११००) श्री चौधरी हीरासिंह जी आर्य, सदस्य महानगर परिषद् सुपुत्र श्री चौधरी जैशीराम जी, मुखमेलपुर, दिल्ली। इनका सम्पूर्ण परिवार आर्य और दानवीर है।

११००) श्री प्रिंसिपल होश्यारसिंह जी आर्य, सुपुत्र चौधरी रामचन्द्र जी आर्य, वाजीदपुर, दिल्ली। प्रिंसिपल हायर सैकेण्ड्री स्कूल नरेला, दिल्ली।

११००) श्री प्रिंसिपल श्रीकृष्ण जी आर्य, घेवरा, प्रिंसिपल हायर सैकेण्ड्री स्कूल, नांगल ठाकारन, दिल्ली।

११००) श्री मा० रोहताससिंह जी सुपुत्र चौधरी छोटूराम जी माजरा डबास, दिल्ली।

११००) श्री वैद्य कर्मवीर जी, नरेला सुपुत्र महाशय प्रभुराम जी दहकोरा रोहतक।

११००) श्री सूबेदार धीरजसिंह जी आर्य, सुपुत्र चौधरी श्रीरामजी आर्य, महीपालपुर, दिल्ली। प्रबन्धक कन्यागुरुकुल नरेला।

११००) श्री पं० बालकृष्ण जी, सदस्य दिल्ली नगर निगम, सुपुत्र पं० दीवानसिंह जी, पाना मामूरपुर नरेला, दिल्ली।

११००) श्री चौधरी ओम्प्रकाश जी आर्य, सुपुत्र चौधरी नेकीराम जी, पाना पपोसिया, नरेला, दिल्ली।

११००) श्री चौधरी रत्नसिंह जी आर्य, सुपुत्र चौधरी जुगलाल जी, पाना उद्यान नरेला, दिल्ली।

११००) श्री चौधरी होश्यारसिंह जी, होलम्बी, दिल्ली।

११००) श्री लैफ्टिनेण्ट फतहसिंह का ठोला, हुमायूँपुर, दिल्ली।

११००) श्री चौधरी जयदेव जी आर्य, भापड़ौदा, रोहतक (कृष्णनगर, दिल्ली)।

११००) श्री चौधरी सुलतानसिंह जी आर्य, गुमाणा, सोनीपत, हरयाणा।

११००) श्री रायसाहब दानवीर चौधरी प्रतापसिंह जी आर्य, माडल टाऊन, करनाल, हरयाणा।

११००) श्री लाला दिलीपसिंह जी आर्य, रईस, पानीपत, करनाल, हरयाणा।

११००) श्री चौधरी कर्णसिंह जी आर्य, फीरोजपुर बांगर, सोनीपत, हरयाणा।

११००) श्री मा० रामस्वरूप जी आर्य सुपुत्र चौधरी सूरतसिंह जी, रामपुर कुण्डल, सोनीपत, हरयाणा।

११००) श्री नम्बरदार सुखचैन जी आर्य, सुपुत्र श्री चौधरी हेतराम जी, मातनहेल, रोहतक, हरयाणा।

११००) श्री डा० महेन्द्रप्रतापजी आर्य, सुपुत्र चौधरी आशाराम जी आर्य, रसूलपुर जाटान (मुजफ्फरनगर उ० प्र०) द्वारा।

११००) श्री ब्रह्मचारी बदनसिंह जी आर्य पहलवान, सुपुत्र श्री योगिराज भीमसिंह जी आर्य, निस्तौली, मेरठ (उ०प्र०)।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री पटवारी रामसिंह जी आर्य, नरेला, दिल्ली

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

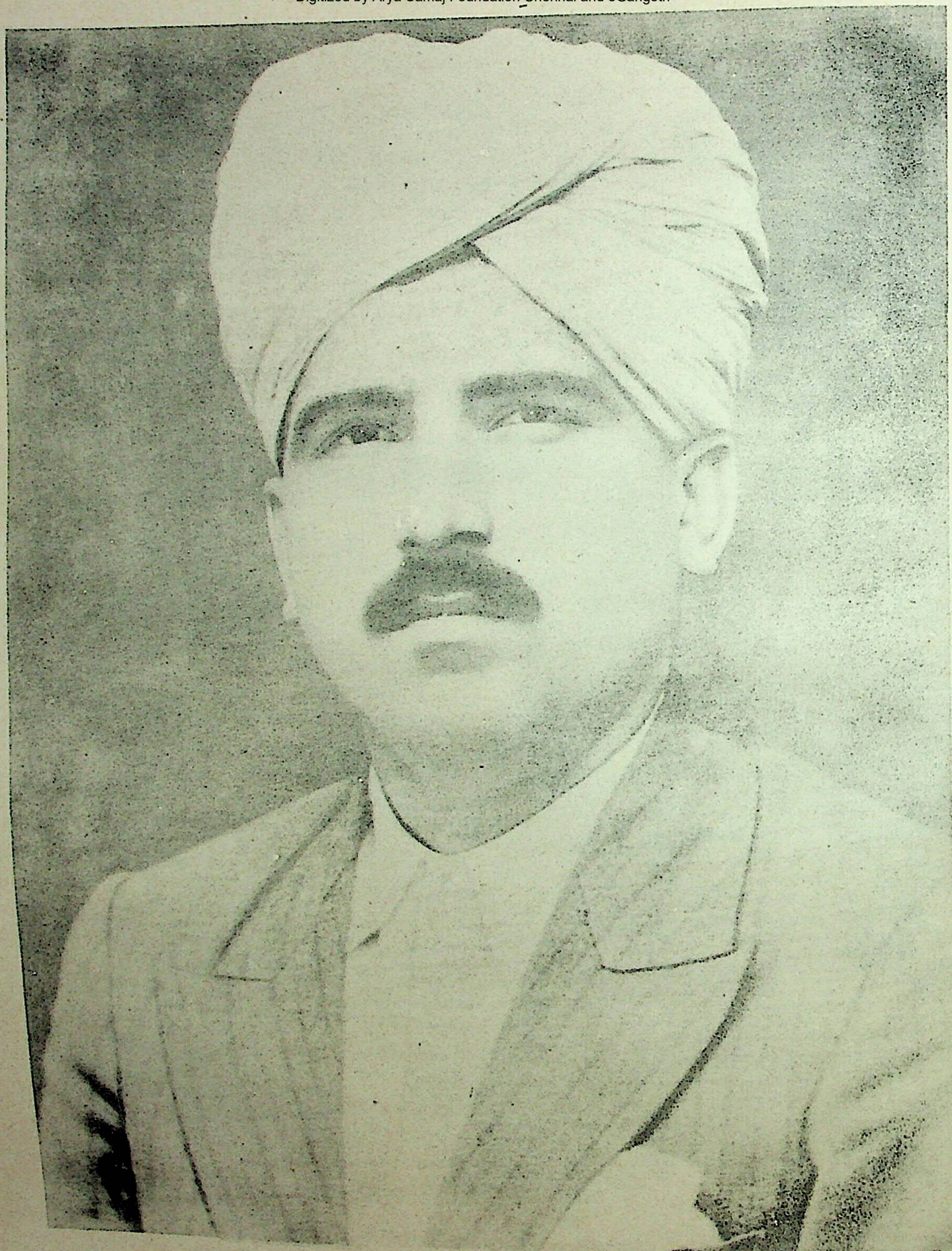

श्री चौधरी लखीराम जी आर्य, खेड़ी आसरा, रोहतक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

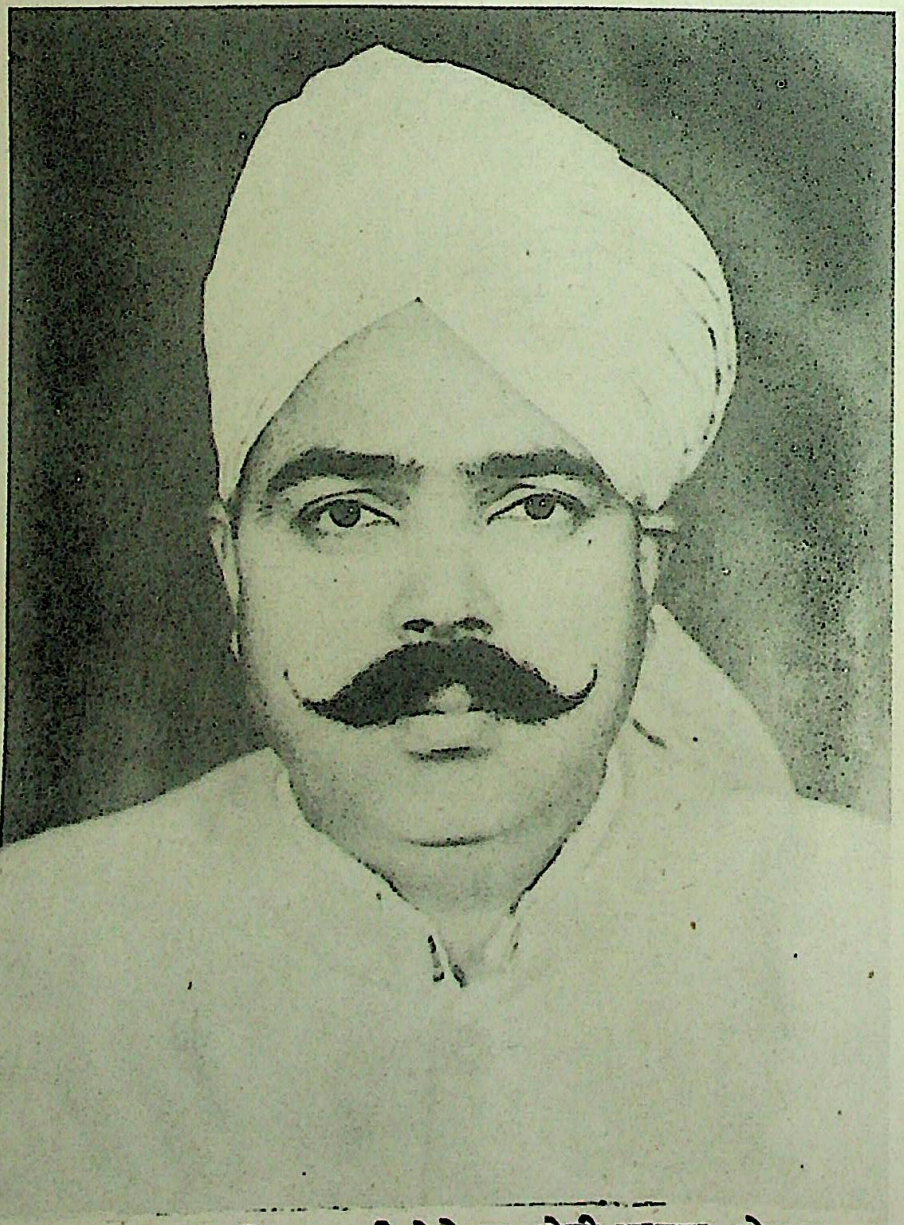

श्री चौधरी प्रियव्रत जी ठेकेदार, खेड़ी आसरा, रोहतक

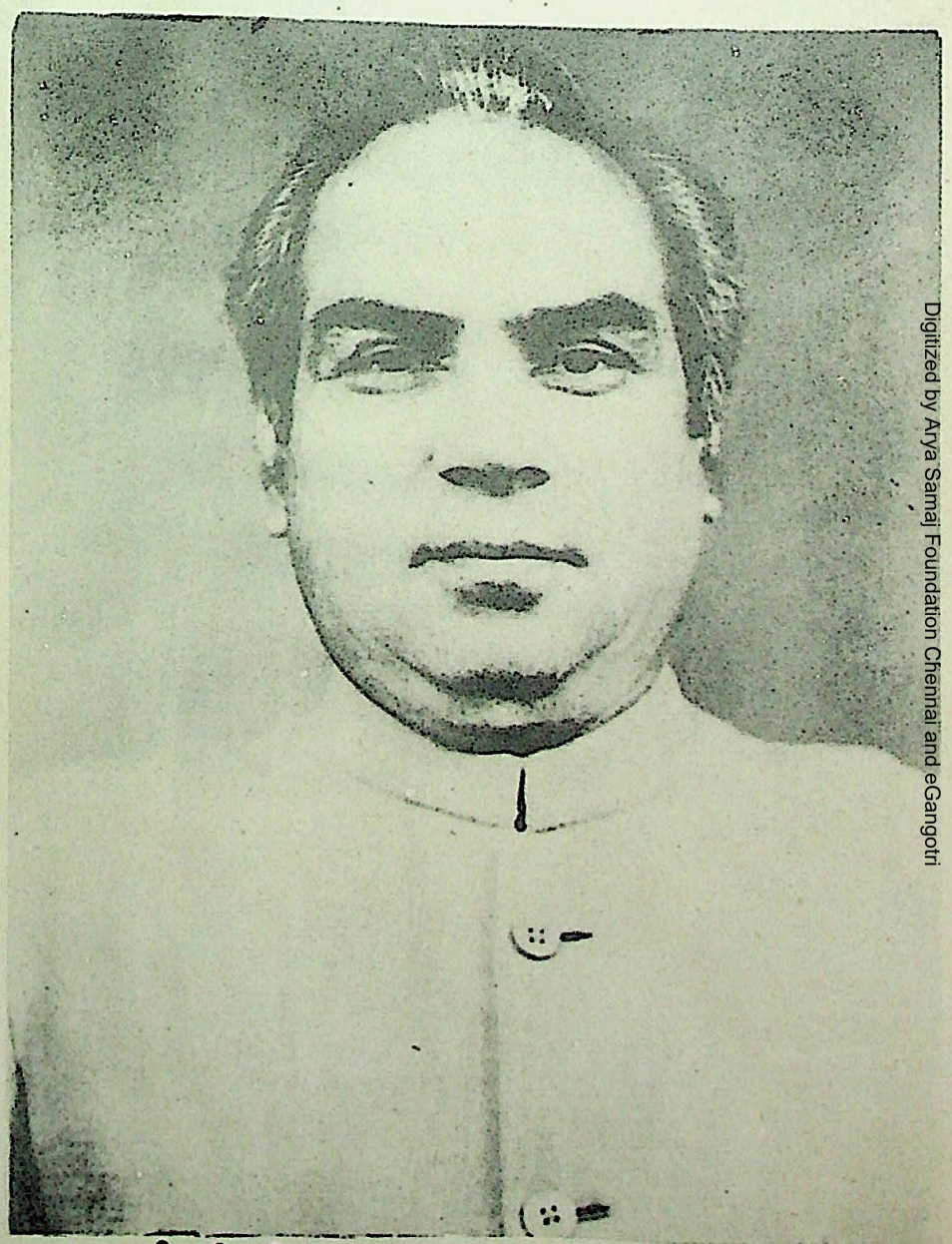

श्री चौधरी प्रतापसिंह जी, खेड़ी आसरा, रोहतक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

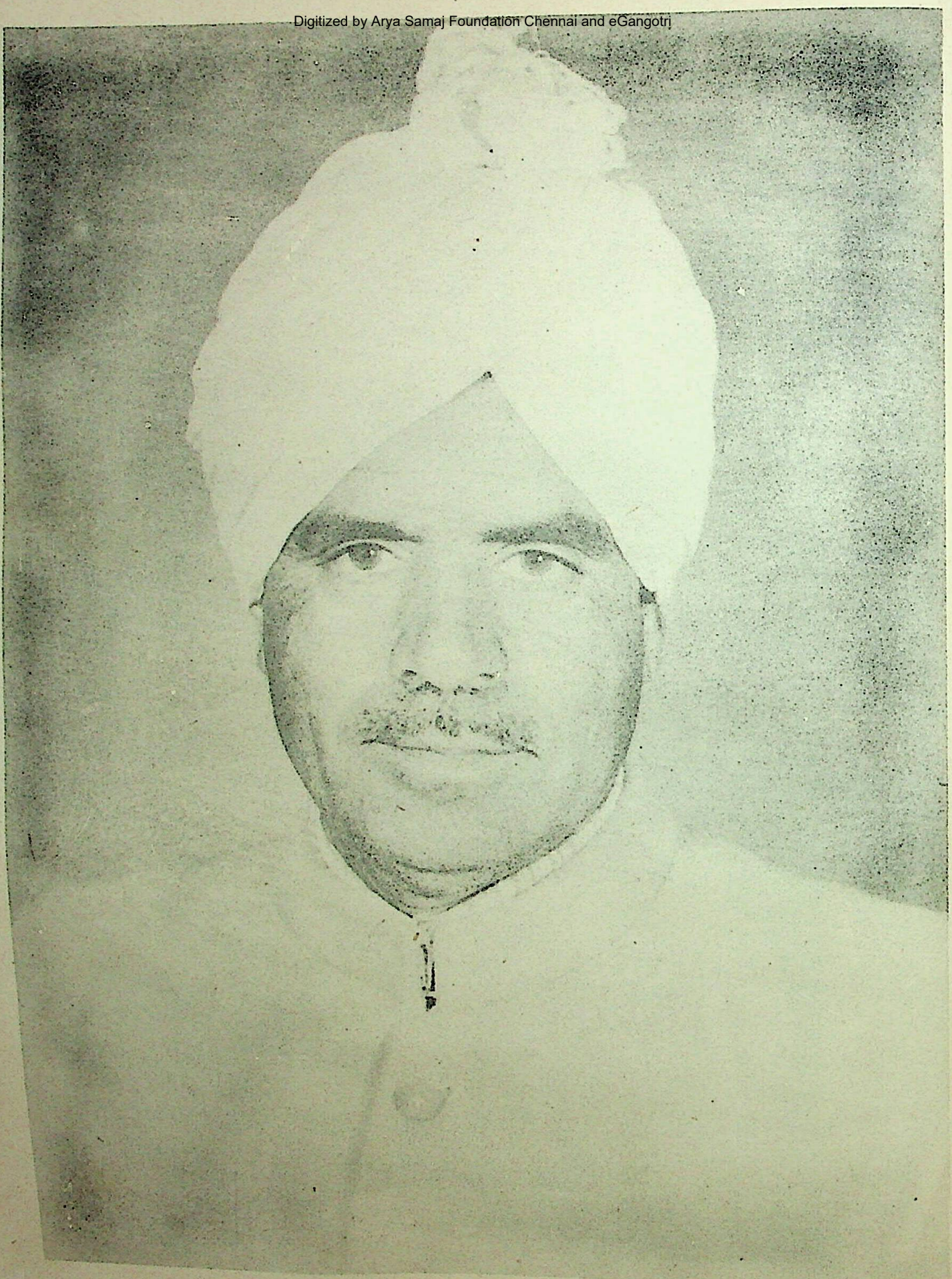

श्री चौधरी सुमेरसिंह जी आर्य, स्वरूपगढ़ (शांतौर), भिवानी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री चौधरी मनफूलसिंह जी आर्य, पनीवाला मोटा, हिसार

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री सूबेदार रूपचन्द जी पहलवान, बामला, भिवानी

CC-0 Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

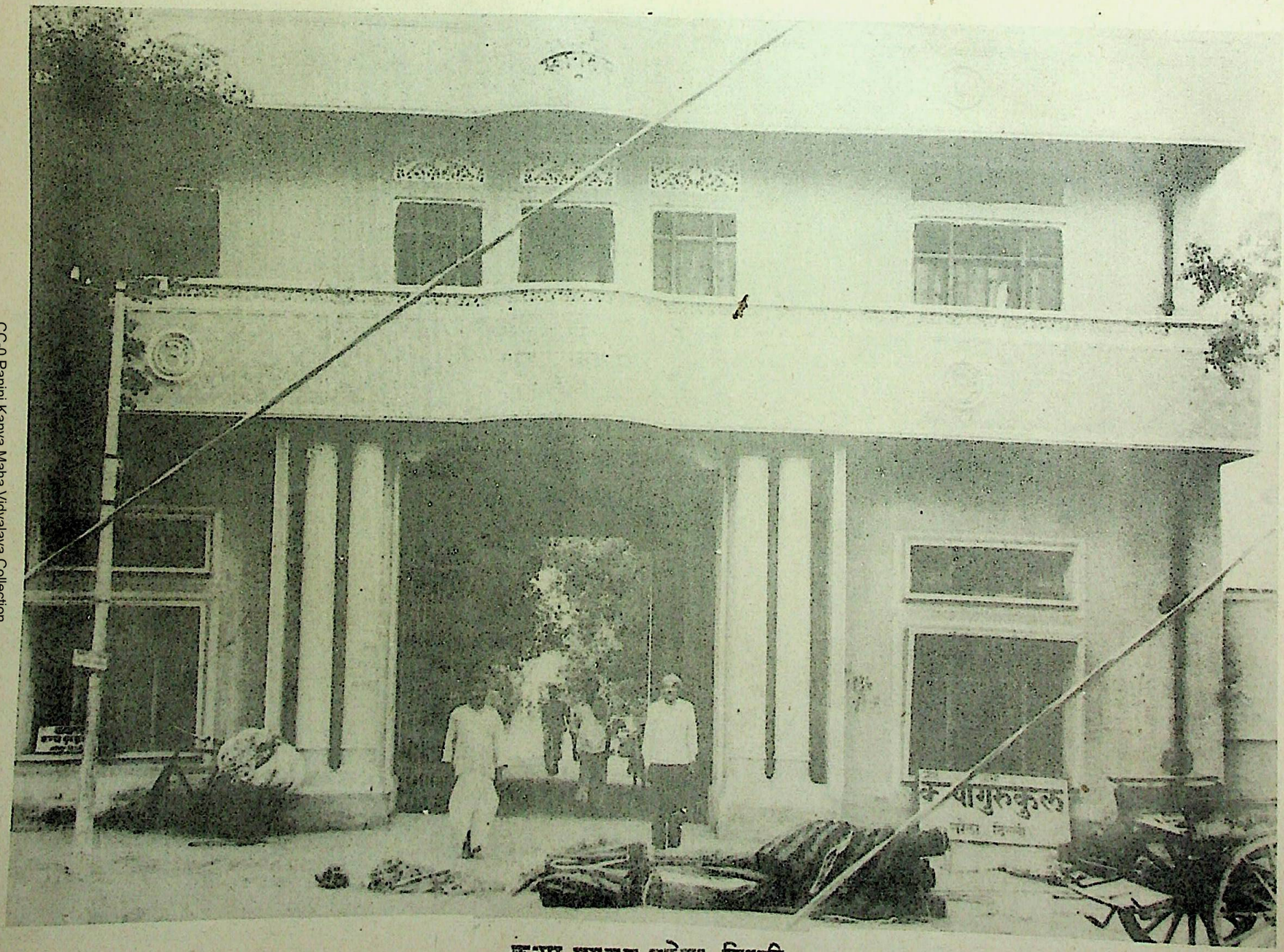

कन्या गुरुकुल नरेला, दिल्ली

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

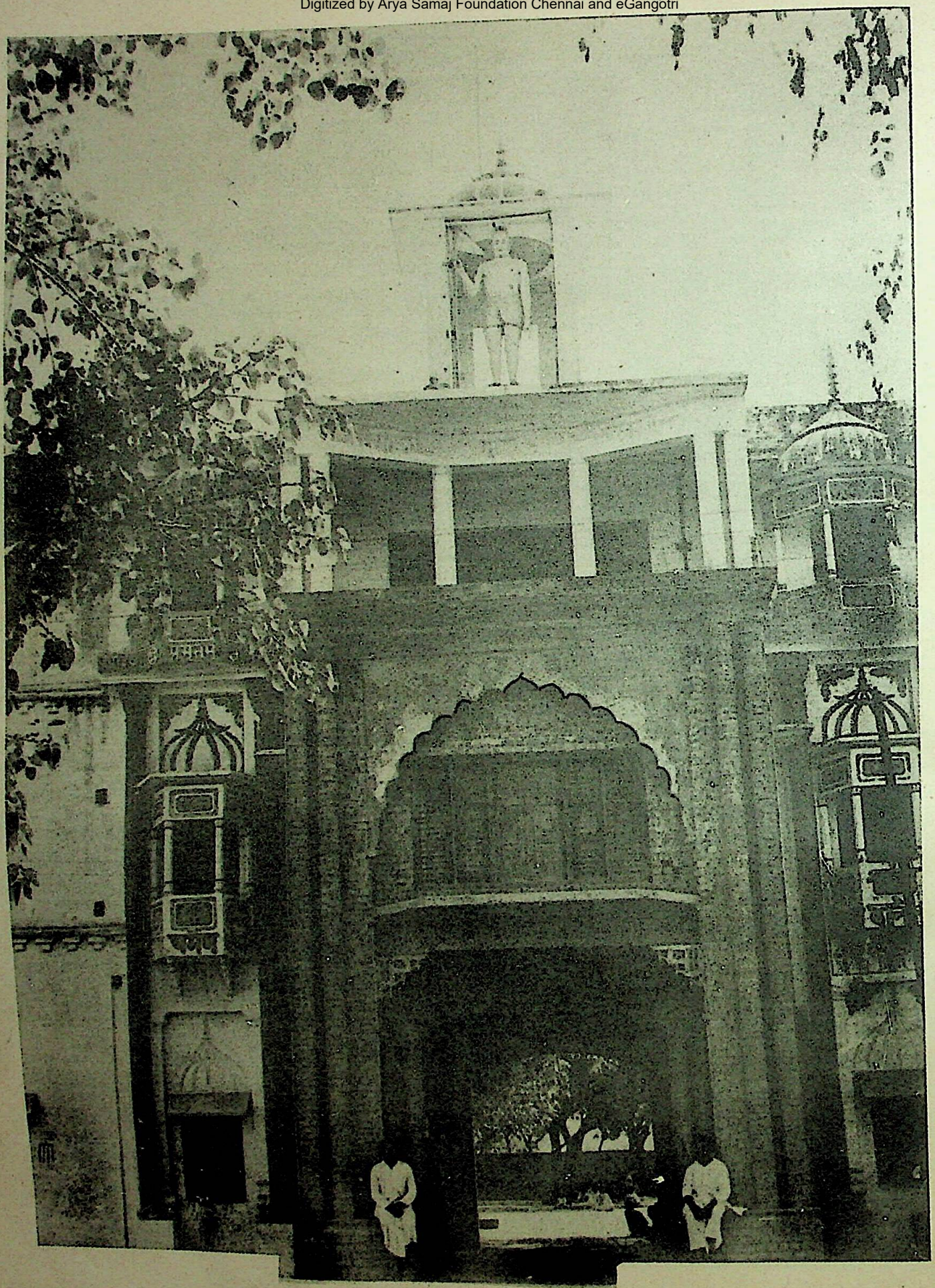

गुरुकुल झज्जर, रोहतक, हरयाणा

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

# भूमिका

परमपिता परमात्मा की महती कृपा और महर्षि ब्रह्मा से लेकर इस युग के प्रवर्त्तक महर्षिदेव दयानन्द तक के ऋषि महर्षियों की दिव्य दया से इस "हरयाणे के प्राचीन मुद्रांक" नामक ग्रन्थ के लिखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। महाकाव्य रामायण के रचयिता आदि कवि महर्षि वाल्मीकि और भारतीय प्राचीन इतिहास जय अर्थात् महाभारत के लेखक महर्षि वेदव्यास को मेरा बार-बार प्रणाम है। इनके ग्रन्थों को पढ़कर मुझे इतिहास सम्बन्धी कुछ लिखने का उत्साह मिला। छान्दोग्योपनिषद् के 'इतिहासपुराणः पञ्चमो वेदानां वेदः' इस लेख ने तो मेरे हृदय और मस्तिष्क में इतिहास की महत्ता इतनी अधिक अङ्कित कर दी कि मैंने अपने जीवन के बहुत वर्ष और लाखों रुपये ऐतिहासिक सामग्री के जुटाने में श्रद्धा और निष्ठापूर्वक लगा दिये। इसी के फलस्वरूप 'हरयाणे के प्राचीन मुद्रांक' नामक ग्रन्थ इतिहास-प्रेमी पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर सका, इसका मुझे अत्यन्त हर्ष है। महाभारत के पीछे जो इतिहास की कड़ियां टूट गई थीं, उनके जोड़ने में यह ग्रन्थ एक महत्त्वपूर्ण कार्य करेगा। महाभारत में यौधेय, मालव, कुणिन्द, उदुम्बर, आदि अनेक गणराज्यों का उल्लेख मिलता है। साथ ही चन्द्रवंशी क्षत्रियों के अनेक कुलों वा वंशों जैसे यदुकुल (वृष्णि, भोज और अन्धक), कुरुकुल (कौरव और पाण्डव), अनुकुल, शिवि, मद्रक, केकय आदि गणराज्यों की चर्चा मिलती है। महाभारत के पीछे इनका क्या बना, ये कहाँ गये, इनका अस्तित्व रहा वा नहीं, यह सब रहस्य ही बना हुआ है। इनकी थोड़ी बहुत चर्चा किसी-किसी लेखक ने की भी है। उन्होंने कुछेक मुद्राओं के प्रमाण भी दिये हैं। किन्तु इस ग्रन्थ में लगभग ५०० मुद्रांकों के चित्र और विवरण देख, पढ़कर पाठक यह तो अवश्यमेव अनुभव करेंगे कि हमने इन मुद्रांकों द्वारा भारतीय इतिहास सम्बन्धी उनके ज्ञान में कुछ नई उपलब्धियां भी कराई हैं। यौधेय, वृष्णि, महाराणी द्रौपदी की जन्मभूमि और उत्तरपाञ्चाल की राजधानी अहिच्छत्रा तथा पाण्डव और वत्स राजाओं की राजधानी कौशाम्बी के मुद्रांक इतनी अधिक संख्या में एक ही पुस्तक में देखने को मिलेंगे यह आशा पाठकों को तो क्या, स्वयं मुझे भी नहीं थी। हम से पूर्व जिन विद्वानों ने पुरातत्त्व अर्थात् मुद्रा, मुद्रांक, शिलालेख और ताम्रलेख आदि के अन्वेषण में परिश्रम किया है, भारतीय इतिहास उनका चिरकाल तक ऋणी रहेगा। उपरिलिखित पुरातत्त्वीय सामग्री द्वारा ही लुप्त इतिहास पुनः लिखा जा सकता है। इतिहास के लिये ठोस प्रमाण चाहियें। सारहीन कल्पनायें करके कुछ समय के लिये मूर्खों को तो भ्रम में डाला जा सकता है, किन्तु सच्चा इतिहास नहीं लिखा जा सकता। विदेशी इतिहासकारों तथा उनके अन्धे शिष्यों ने भारतीय इतिहास के साथ भी मिथ्या कल्पनायें करके खिलवाड़ की है। इतिहास तो अनवच्छिन्न परम्परा के सुदृढ़ प्रमाणों की आधारशिला पर खड़ा किया हुआ ही हो सकता है। इसीलिए अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग और बहुत धन पानी के समान व्यय कर डाला। भारत के प्रामाणिक इतिहास लिखने में जहाँ मुद्रायें, मुद्रांक आदि पुरातत्त्वीय सामग्री अत्यन्त सहायक है, वहाँ ब्राह्मणग्रन्थ, श्रौतसूत्र, रामायण, महाभारत, अर्थशास्त्र, आयुर्वेदशास्त्र और पुराण आदि का सहारा लिये बिना भारत का सच्चा इतिहास लिखना असम्भव है। आधुनिक इतिहास-कारों की खोज से तो अधिक भारत का प्रामाणिक इतिहास पुराण, बौद्ध-जैन ग्रन्थ, बाणभट्ट और कालिदास आदि की कृतियों में ही मिलता है। विदेशी लेखकों की अपेक्षा इतिहास विषय में पुराणों के लेख बहुत विश्वसनीय और महत्त्वपूर्ण हैं।

आज का शिक्षितवर्ग रामायण महाभारत आदि सच्चे इतिहासों को तो पुराने इतिहासों की कल्पित कहानी (Legend) कहकर टाल देता है और विकासवाद के मूर्खतापूर्ण, मनघड़न्त और मिथ्या कल्पना पर आधारित "कि हमारे पूर्वज बन्दर

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



थे, उनकी दुम (पूँछ) घिस गई और वे बन्दर से मनुष्य बन गये" पूर्ण विश्वास करके सच्चा मानता है। यह कैसी हास्यास्पद बात है। हमारे पूर्वजों को असभ्य, जंगली, विद्याविहीन और बर्बर कहना इतिहासज्ञान से इनकी शून्यता प्रकट करता है। भारत के प्राचीन इतिहास का ज्ञान बिना संस्कृत भाषा के नहीं हो सकता। जिन्हें संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं, जो रामायण, महाभारत, पुराण आदि को भी अंग्रेजी भाषा के द्वारा ही पढ़ते हों, ऐसे व्यक्ति भारत का इतिहास लिखने के लिये लेखनी उठाने का दम्भ और दुस्साहस कैसे करते हैं, यह महदाश्चर्य की वार्ता है। ऐसे ही मिथ्याभिमानी तथा उनके गुरु आज तक यही मानते और लिखते हैं कि आर्य लोग बाहर से आकर भारत में बसे थे। वस्तुतः जो आर्य आदि सृष्टि में (अर्थात् १९६०८५३०७५ वर्ष पूर्व) इसी भारत के उत्तरी भाग में उत्पन्न हुए, उन्होंने इस पवित्र भारत को बसाया, जिनके कारण इसका नाम आर्यावर्त्त हुआ, उन्हीं आर्यों को विदेशी लिखना इन तथाकथित इतिहासज्ञों का ही कार्य है। ऐसे ही लोगों के लिए एक रूसी विद्वान् का वक्तव्य भारत के समाचारपत्रों में इस प्रकार छपा है :—

## रूसी विद्वान् के विचार

इतिहास के विद्यार्थी के लिए संस्कृत अनिवार्य होनी चाहिये। रूस के भारती विद्याओं के चोटी के विद्वान् श्रीवोंगार्डलेविन ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि भारत में भारतीय इतिहास के विद्यार्थियों के लिये संस्कृत की शिक्षा अनिवार्य नहीं की गई। एक प्रेस सम्मेलन में आपने कहा कि मैं स्वयं भारतीय इतिहास का एक विद्यार्थी हूँ और इस नाते से कह सकता हूं कि संस्कृत पढ़े बिना प्राचीन भारत के विषय में कुछ भी जानना सम्भव नहीं है। मुझे भारत में यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यहाँ के विद्यार्थी महाभारत और गीता का अंग्रेजी अनुवाद पढ़ते हैं।

—दैनिक प्रताप, ४ फरवरी १९७५ ई०.

कुछ निष्पक्ष विदेशी विद्वान् तो अब इस निश्चय पर पहुँचने लग रहे हैं कि भारत के विषय में यदि कुछ भी जानना है तो संस्कृत भाषा का ज्ञान अवश्य करना होगा। किन्तु भारतीयों की अवस्था यह है कि भारतीय इतिहास के लेखक बने बैठे हैं, भारत के इतिहास पर शोध कार्य कर रहे हैं, परन्तु संस्कृत ज्ञान से सर्वथा कोरे हैं। भारत का सारा प्राचीन वाङ्मय संस्कृत में है। प्राचीन शिलालेख, ताम्रलेख, मुद्रायें और मुद्रांक सभी संस्कृत भाषा में हैं। फिर संस्कृत ज्ञान के बिना भारतीय इतिहास का शोध कार्य करना तथा इस पर लिखना धृष्टता नहीं तो और क्या है ? ऐसे ही नामधारी विद्वान् भारत के इतिहास का कालक्रम (Chronology) निर्धारित करते हैं और भारत के सच्चे इतिहास रामायण, महाभारत आदि को कथा कहानी की कल्पित पुस्तकें बताते हैं। ऐसे अनर्थकारी ग्रन्थों द्वारा फैलाये जा रहे अज्ञानान्धकार से भारतीय इतिहास के विद्यार्थियों को सावधान रहना चाहिये।

भारतीय इतिहास के महान् विद्वान् देवतास्वरूप भाई परमानन्द जी और पं० भगवद्दत्त जी आदि ने अपना सर्वस्व भारतीय इतिहास के शोधकार्य तथा लिखने में लगाया, ऐसे विद्वज्जनों के आगे हमारा श्रद्धा से शिर झुक जाता है। क्योंकि ऐसे ही व्यक्तियों ने ऋषियों की टूटी हुई परम्परा को फिर से अपनाया है। इसी टूटी परम्परा को पांच सहस्र वर्ष के पीछे आदित्य ब्रह्मचारी महान् विद्वान् महर्षि दयानन्द ने पुनः जोड़ने का महान् प्रयत्न किया। वे इस देश के विषय में अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखते हैं—

"अब आर्य लोगों के कि जो आर्यावर्त्त देश में बसने वाले हैं उनके मत का खण्डन तथा मण्डन का विधान करेंगे। यह आर्यावर्त्त देश ऐसा है कि जिसके सदृश भूगोल में दूसरा देश कोई नहीं है, इसीलिए इस भूमि का नाम सुवर्णभूमि है, क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है, इसीलिए सृष्टि की आदि में आर्य लोग इसी देश में आकर बसे।"

वे अष्टम समुल्लास में लिखते हैं—

आर्य लोग सब भूगोलों में उत्तम इस भूमि के खण्ड को जानकर यहीं आकर बसे। इसी से इस देश का नाम आर्यावर्त्त हुआ। यह आर्यावर्त्त देव अर्थात् विद्वानों ने बसाया और आर्यजनों के निवास करने से आर्यावर्त्त कहाया है। इसके

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पूर्व इस देश का नाम कोई भी नहीं था और न कोई आर्यों के पूर्व इस देश में बसते थे क्योंकि आर्य्य लोग सृष्टि की आदि में कुछ काल के पश्चात् तिब्बत से सूधे इसी देश में आकर बसे थे।"

आज जो भी भारतवर्ष में कौल, भील, द्रविड़ हैं जिन्हें लोग आज तथाकथित आदिवासी नाम से पुकारते हैं, ये सब आर्य हैं, आर्यों के ही सन्तान हैं। विदेशियों की गहरी चाल है कि भारत के लोग सदा परस्पर झगड़ते रहें। आर्यों को विदेशी लिखकर तथा जंगली और पिछड़े हुए लोगों को आदिवासी बनाकर इन दोनों के बीच ऐसी चौड़ी और गहरी खाई खोदने का यत्न किया है कि ये परस्पर कभी मिल न सकें, सदैव लड़ते रहें, जिससे भारत देश की कभी उन्नति न हो सके। हम सब भारतवासी आर्य हैं। सभी ऋषि महर्षियों के सन्तान हैं। परस्पर मिलकर इस देवभूमि को उन्नति के शिखर पर पहुँचायें और परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर! जैसी उन्नति हमारे आर्यावर्त्त देश की पूर्व काल में थी वैसी अब भी कीजिये। यह उन्नति संस्कृत भाषा के पठन-पाठन के बिना नहीं हो सकती। महर्षि दयानन्द जी सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखते हैं—

दाराशिकोह बादशाह ने भी यही निश्चय किया था कि जैसी पूरी विद्या संस्कृत में है वैसी किसी भाषा में नहीं। वे ऐसा उपनिषदों के भाषान्तर में लिखते हैं कि मैंने अर्बी आदि बहुत-सी भाषा पढ़ीं, परन्तु मेरे मन का सन्देह छूटकर आनन्द न हुआ। जब संस्कृत देखा और सुना तब निस्संदेह होकर मुझको बड़ा आनन्द हुआ है।

वेद, शास्त्र उपनिषद् और प्राचीन इतिहास रामायण, महाभारत, पुराण आदि सभी ग्रन्थ देववाणी संस्कृत भाषा में ही हैं। जब सभी सत्य विद्याओं का भण्डार संस्कृत भाषा में है तो इसके पढ़े-पढ़ाये बिना भारत का ही क्या सारे संसार का कल्याण नहीं हो सकता। इस संस्कृत भाषा की उपेक्षा करके राजा और प्रजा दोनों ही अपने सर्वनाश के साधन जुटा रहे हैं। क्योंकि वेदादि सत्यशास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सभी आर्यों का=श्रेष्ठ पुरुषों का परम और मुख्य धर्म है। विश्व के कल्याणार्थ सारे संसार में संस्कृत भाषा का पठन-पाठन अनिवार्य करना होगा। तभी सच्चे सुख और शान्ति की प्राप्ति होती है। बंगाल के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री देवेन्द्रनाथ जी मुखोपाध्याय ने महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित में अपने हृदय की वेदना इस प्रकार प्रकट की है—

"जैसे और जिस प्रकार यह सत्य है कि एक और एक दो होते हैं, वैसे ही और उसी प्रकार यह भी सत्य है कि आर्षज्ञान ही मानवीय शान्ति का अनन्य हेतु है। इसमें तनिक भी संशय नहीं हो सकता कि ऋषिप्रणीत शिक्षा और ऋषि-प्रसारित ज्ञान ही मनुष्य की शान्ति का एकमात्र हेतु है। क्या मनुष्य-संसार से शान्ति विदा नहीं हो गई है? हम पूछते हैं कि कभी पहले शिक्षा और विज्ञान के नाम पर संसार में इतने उपद्रव, इतनी अशान्ति, इतने अस्वास्थ्य का विस्तार किया गया है? क्या कभी सभ्यता के नाम पर मनुष्यों ने इतने मनुष्यों के शिर काटे हैं? क्या कभी उन्नति की पताका हाथ में लेकर मनुष्य ने वसुन्धरा को नर रक्त से इतना रंगा है। यदि पहले कभी ऐसा नहीं हुआ तो आज क्यों हो रहा है? हम उत्तर देते हैं कि इसका कारण है अनार्ष शिक्षा और अनार्ष ज्ञान का विस्तार। इसका कारण है यूरोप का पृथ्वी-व्यापी प्रभाव और प्रतिष्ठा। यूरोप अनार्ष ज्ञान का गुरु और प्रचारक है। वे आगे लिखते हैं—यूरोप तूने संसार का और मनुष्य का सब से बड़ा अनिष्ट और अकल्याण यही किया है कि तूने मनुष्य जीवन की प्रगति को उल्टा करने का प्रयत्न किया है। जिस मनुष्य ने निरन्तर मुक्तिरूप शान्ति पाने के उद्देश्य से जन्म लिया था, उसे तूने धन का दास और दुर्निवार्य भोगेच्छा का क्रीतकिङ्कर बनने के लिये शिक्षित और दीक्षित कर दिया है। तू भोगमय और भोगसर्वस्व है। तूने ब्रह्मवृत्ति का अपमान किया और उसे नीचे गिरा दिया तथा वैश्यवृत्ति का सम्मान किया और उसे सबसे ऊँचा आसन दिया ह। इसकी अपेक्षा और किस बात से मनुष्य का अधिक अनिष्ट साधन हो सकता है? तूने सैंकड़ों-सहस्रों नर-नारियों के हाथ में एकदम भीख का प्याला दे दिया है, जो स्थान शान्ति और आनन्द के निकेतन थे उन्हें श्मशान बना दिया है।" जब यूरोप अनार्ष-ज्ञान का गुरु और महान् प्रचारक है तो उसे तो यही करना था, वह कर डाला। अब इसकी एकमात्र चिकित्सा आर्ष शिक्षा प्रणाली है। क्योंकि ऋषि, महर्षि, देवपुरुष, विद्वान्, ज्ञानी और परोपकारी लोग विद्या सदुपदेश के द्वारा मानवमात्र को अविद्या अन्धकार से दूर हटाकर वेद ज्ञान के विस्तृत प्रकाश में लाते हैं। ऐसे निष्काम सेवी ज्ञानी को ऋषि वा देव कहते हैं। वेद भगवान् का इस विषय में यह विधान है—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**संदा गावः शुचयो विश्वधायसः । सदा दवा अरेपसः ॥**

—सामवेद पूर्वार्चिक, अध्याय ४, खण्ड १०, मन्त्र ६ ॥ प्रपाठक ५, अर्ध २, दशति ६, मन्त्र ६ ॥

जिस प्रकार गौवें सदा शुद्ध पवित्र रहती हैं और उनके घी, दूध का सेवन शरीर, मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार और आत्मा आदि को शुद्ध पवित्र करता है उसी प्रकार ऋषि, देवर्षि, परोपकारी, निष्काम, ज्ञानी विद्वानों की ज्ञान गंगा सारे संसार के पाप तथा दोषों को धो डालती है अर्थात् सब को ज्ञानामृत पिलाकर निष्पाप करते हैं और सारे संसार के शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करके सब का धारण पोषण करते हैं। हमारे सभी ऋषि महर्षि ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्यन्त, नहीं—नहीं अब यों कहना चाहिए कि दयानन्द पर्यन्त इसी प्रकार के थे। महर्षि पतञ्जलि अपने महाभाष्य में लिखते हैं—

**अष्टाशीतिः सहस्राण्यूर्ध्वरेतसामृषीणां बभूवुस्तत्रागस्त्याष्टमैर्ऋषिभिः प्रजनोऽभ्युपगतः । तत्रभवतां यदपत्यं तानि गोत्राण्यतोऽन्ये गोत्रावयवाः ।** —महाभाष्य ४।१।७९ ॥

ब्रह्मा से लेकर पतञ्जलि पर्यन्त ८८ हजार ऊर्ध्वरेता अखण्ड ब्रह्मचारी, ऋषि, महर्षि और देवर्षि हुए। ये सभी निर्दोष, निष्पाप, निष्काम सेवी, देवतुल्य, आप्तपुरुष थे। सारी आयु ब्रह्मचर्यपूर्वक तपस्या करते हुए वेद के पवित्र ज्ञान का प्रचार-प्रसार करते रहे। इन्हीं महापुरुषों की कृपा से आर्यावर्त्त देश सारे संसार का गुरु रहा और इसका सम्पूर्ण भूमण्डल पर चक्रवर्त्ती राज्य रहा। उपर्युक्त ८८ सहस्र ऋषियों में से केवल अगस्त्यादि ८ ऋषियों ने विवाह किया। इसी लिये आरम्भ में आठ ही गोत्र थे। पीछे अनेक उपगोत्र इन्हीं के सन्तानों से चल पड़े। जो ऋषि गृहस्थ बने थे, वे भी बड़े संयम से रहते थे। केवल सन्तानोत्पत्ति के लिये ही वीर्यदान देते थे। महर्षि भारद्वाज आदि जो ऋषि सारी आयु भर ब्रह्मचारी रहे उनमें से अनेकों ऋषि बड़े दीर्घजीवी हुए। जैसे महर्षि भारद्वाज ४०० वर्ष की आयु तक जीवित रहे। उन्होंने सारे संसार के कल्याणार्थ 'यन्त्रसर्वस्व' नामक एक ग्रन्थरत्न का निर्माण किया। वह सारा ग्रन्थ यन्त्रों (Machineries) के विषय में ही था। काल के थपेड़ों ने उसे नष्ट कर दिया। उसमें ४० प्रकरण थे। उसका केवल एक विमान सम्बन्धी प्रकरण अभी मिला है। इस वैमानिक प्रकरण में ८ अध्याय, १०० अधिकरण और ५०० सूत्र थे। वे भी सभी प्राप्य नहीं हैं। इसी एक त्रुटित प्रकरण में विमान आदि वैज्ञानिक यन्त्रों सम्बन्धी ९७ ग्रन्थों के तथा ३६ वैज्ञानिक महर्षियों के नाम भी मिलते हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ कितना महत्त्वपूर्ण रहा होगा यह अनुमान पाठक स्वयं लगा सकते हैं। इस ग्रन्थ में आचार्य विश्वम्भर के मत का उद्धरण देते हुए विमान (वायुयान) का लक्षण इस प्रकार लिखा है—

**देशाद्देशान्तरं तद्वत् द्वीपाद् द्वीपान्तरं तथा ।**
**लोकाल्लोकान्तरं चापि योऽम्बरे गन्तुमर्हति ।**
**स विमान इति प्रोक्तः खेटशास्त्रविदांवरैः ॥७॥**

आकाश में एक देश से दूसरे देश में, एक द्वीप से दूसरे द्वीप में और एक लोक से दूसरे लोक में जा सकता हो उसे यानशास्त्रज्ञ उच्च विद्वानों ने विमान कहा है।

विमान के इस लक्षण से स्पष्ट है कि आज से पांच सहस्र वर्ष पूर्व तक हमारे पूर्वज विमानों द्वारा चन्द्रमा, मंगल बुध, शुक्र आदि दूसरे लोकों में भी निर्बाध गति से गमनागमन करते थे। दूसरे लोकों से दैनन्दिन यात्रा और आवागमन का व्यवहार होता था, यह इससे स्पष्ट सिद्ध है। इस ग्रन्थरत्न में रूपाकर्षण, शब्दाकर्षण, भावाकर्षण, गुहागर्भादर्श, स्तम्भनयन्त्र आदि सैंकड़ों अत्यन्त विशिष्ट यन्त्रों का वर्णन और निर्माण विधि भी प्रदर्शित है। यदि विमान दो ग्रहों के मध्यवर्ती आकर्षणशक्ति में फंस जाये तो क्या उपाय किये जायें इत्यादि का अत्यन्त सूक्ष्मता से विशद वर्णन भी इसमें है। त्रिपुर नामक ऐसे विमान का भी वर्णन इसमें है जो कि पृथ्वी, जल और आकाश तीनों स्थानों पर चल सकता था। टेढ़े-मेढ़े पहाड़ों पर भी यह विमान अपने विशेष चक्रों (पहियों) से चल सकता था। इसी ग्रन्थ की सहायता लेकर जर्मन वैज्ञानिकों के सहयोग से अमेरिका और रूस के वैज्ञानिकों ने ऐसे राकेट विमान बनाये जिससे वे चन्द्रमा तक पहुंच गये। यह विद्या भारत-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वर्ष से इसी विमानशास्त्र के द्वारा जर्मन, रूस, अमेरिका आदि में पहुँची है। यह सब आर्ष ज्ञान की ही कृपा है। महाभारत युद्ध के पश्चात् लुप्त प्रायः इस आर्ष ज्ञान के पुनरुद्धारक स्वामी दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द जी थे। आर्षज्ञान ही सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है, आर्ष सिद्धान्त ही सर्वोत्तम सिद्धान्त है, आर्षशिक्षा ही मनुष्य के यथार्थ सुख और शान्ति का हेतु है। समस्त संसार में इस ज्ञान का पुनः प्रचार करने के लिये अपना सम्पूर्ण जीवन न्यौछावर करने वाले गुरुवर विरजानन्द के एकमात्र योग्य शिष्य स्वामी दयानन्द ही थे। महर्षि कृष्ण द्वैपायन व्यास के पीछे वेदादि सत्यशास्त्रों और आर्षज्ञान का पुनरुद्धारक दयानन्द के समान क्या कोई अन्य आचार्य हुआ है ? नहीं, कोई नहीं। क्या दयानन्द के सदृश कोई दूसरा वेदसर्वस्व और वेदप्राण महामानव दिखाया जा सकता है ? श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय इसका उत्तर देते हैं—

आप सुनें वा न सुनें हम विना किसी संकोच और सन्देह के घोषणा करते हैं कि वर्तमान युग में दयानन्द ही एक-मात्र वेदप्राण पुरुष और आर्षज्ञान का अद्वितीय प्रचारक हुआ है। हे मानव ! तू यदि शान्ति का इच्छुक है तो तुझे आर्षज्ञान की महिमा समझनी होगी और आर्षज्ञान की महिमा समझने के लिये तुझे दयानन्द को भी समझना होगा।

महर्षि दयानन्द ने विद्या के सब विषयों में हमारा पथ प्रदर्शन किया है। वे अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में महाराजा युधिष्ठिर से लेकर महाराजा यशःपाल पर्यन्त वंशावली का वर्णन करते हुये लिखते हैं :—

"यदि ऐसे ही हमारे आर्य सज्जन लोग इतिहास और विद्या, पुस्तकों का खोजकर प्रकाश करेंगे तो देश को बड़ा ही लाभ पहुंचेगा।"

महर्षि जी के इस वाक्य से मुझे भारत के इतिहास की खोज करने की प्रेरणा मिली। बाल्यकाल से भी मुझ ऐतिहासिक संस्कार पैतृक दायाद में मिले थे। आर्यसमाज के आदर्श वीर संन्यासी इतिहास के महान् विद्वान् श्रद्धेय पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज से इतिहास सम्बन्धी कुछ लिखने के लिये अनेक वार आदेश और प्रेरणा मिली। उसी के फल स्वरूप यह मुद्रांकों का बृहद्ग्रन्थ लिखने और प्रकाशित करने की शक्ति प्रभु ने प्रदान की। इतिहास का विद्यार्थी होने के नाते भारतीय इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ते समय मुझे यह खटकता रहता था कि जिस आर्य जाति वा आर्यावर्त्त देश का आदि सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था, महाभारत के पश्चात् उसका कुछ भी गौरव नहीं रहा। जिस आर्यावर्त्त देश में उत्पन्न विद्वानों से सारे भूगोल के मनुष्य विद्या और चरित्र की सुशिक्षा लिया करते थे, क्या वहाँ सर्वथा अन्धकार का युग आगया ? क्या यौधय जनपद और यौधेय लोग जहाँ हमने जन्म लिया, जिसकी चर्चा महर्षि पाणिनि ने व्याकरण के ग्रन्थ अष्टाध्यायी में भी की, जो आयुधजीवी क्षत्रिय १८ दिन तक अर्जुन के विरुद्ध जमकर लड़े, उनका नाम लेवा और पानी देवा तक कोई वंशज नहीं बचा ? क्या यदुवंश और कुरुवंश का नाम निशान सर्वथा मिट गया ? यौधेयों के साथी त्रिगर्त्त, मालव, कुणिन्द, आर्जुनायन, केकय और शिवि आदि का कोई अस्तित्व नहीं रहा ? ऐसे ऐसे अनेक प्रश्नों ने मुझे इस विषय में खोज करने के लिये विवश कर दिया। इस जिज्ञासा ने मुझे पागल और दीवाना-सा बना दिया। उत्तरी भारत के जितने उजड़े हुये नगर और दुर्गों के खण्डहर थे उन सब पर वर्षों धक्के खाये, छः जीप गाड़ियाँ समाप्त कर डालीं, अनेक उत्खनन किये, लाखों रुपये व्यय करने पर जो प्राप्ति हुई उसका एक शतांश पाठकों के लाभार्थ प्रकाशित है।

यौधेय प्रदेश से यौधेयगणराज्य से सम्बन्धित एक सहस्र से अधिक मुद्रांक हमें मिले। यदुवंशी योगिराज श्रीकृष्ण जी महाराज के वृष्णिकुल के १० से अधिक मुद्रांक, पांचाल जनपद के लगभग ६० मुद्रांक प्राप्त हुये हैं। इनमें से लगभग ५०० मुद्रांक चित्र और विवरण सहित प्रकाशित करके उत्तर भारत और विशेषकर यौधेय प्रदेश हरयाणा (ब्रह्मर्षि देश) पर शोध कार्य करने के लिये एक पगदण्डी बनादी। प्रथम द्वितीय अध्यायों में इस विषय पर विशेष प्रकाश डाला गया है। जैसा सुन्दर और उपयोगी ग्रन्थ हम छापना चाहते थे, बहुत व्यय तथा अत्यन्त परिश्रम करने पर भी वैसा नहीं छाप सके। इसे मैं अपनी मानवोचित, निर्बलता वा न्यूनता समझता हूँ। जो त्रुटियां इसमें रह गई हैं, पाठकों के उचित सुझावों से अगले संस्करण में उन्हें दूर करने का यत्न करेंगे।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## आर्थिक सहयोग

आदरणीय प्रो० शेरसिंह जी भूतपूर्व शिक्षा और कृषि राज्य मन्त्री तथा उनके निजी सचिव श्री जगन्नाथ जी के विशेष प्रयत्न से भारत के शिक्षा तथा समाजकल्याण मन्त्रालय से हमें जो आर्थिक सहयोग मिला, उसी के कारण हम इस वृहद्-ग्रन्थ के शीघ्र प्रकाशन की योजना बना सके। इसके अतिरिक्त मेरे २५ से अधिक मित्र और साथियों ने जो आर्थिक सहयोग दिया, उसने तो दीपक में तेल का कार्य किया। जिन सज्जनों ने हमें पांच सहस्र तथा इससे अधिक वा न्यून राशि प्रदान की है, उनके चित्र तथा विवरण भी इस पुस्तक में प्रकाशित किये हैं। मैं उन सबका हृदय से आभारी हूं तथा धन्यवाद करता हूं।

## विशेष धन्यवाद

यदि मेरे आदरणीय मित्र डा० लोकेशचन्द्र जी सदस्य राज्य सभा मुझे लिखने के लिये वार-वार साग्रह प्रेरणा नहीं करते और सब प्रकार से अपना पूर्ण सहयोग नहीं देते तो अभी यह पुस्तक पाठकों के हाथों में नहीं आता। सुयोग्य विद्वान् पिता डा० रघुवीर जी के सुयोग्य विद्वान् पुत्र डा० लोकेश जी का मैं वहुत आभारी हूं। उन्होंने इसका अंग्रेजी भाषा में अनुवाद करने में भी भरसक सहयोग दिया और अंग्रेजी भाषा में भूमिका लिखने की तो विशेष कृपा की है। उनका आभार मानते हुये उन्हें वार वार धन्यवाद देता हूं।

इस पुस्तक के लिखने तथा प्रकाशित करने में सवसे अधिक सहयोग अपने प्रिय ब्रह्मचारी विरजानन्द जी व्याकरण-दर्शन-इतिहासाचार्य से मिला। अनेक वर्षों से रात दिन ये मेरे साथ जुटे हुये हैं। मुझे यह अत्यन्त हर्ष है कि मुझे लग्नशील, पुरुषार्थी और अथक कार्यकर्त्ता इतिहास प्रेमी शिष्य और सहयोगी श्री विरजानन्द जी ईश कृपा से मिले हैं, यह मेरा वड़ा सौभाग्य है। इनकी जितनी प्रशंसा की जाये, थोड़ी है। मुद्रांक ढूंढने, पढ़ने-लिखने, प्रमाण ढूंढने, ईक्ष (प्रूफ) देखने चित्र तैयार करने आदि सभी कार्यों में मेरा दायां हाथ बनकर कार्य कर रहे हैं। आशीर्वाद सहित उनका वहुत वहुत धन्यवाद है। यदि ऐसे अच्छे सहयोगी मुझे नहीं मिलते तो यह कार्य करना मेरे लिये असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य था।

वयोवृद्ध नेता प्रो० रामसिंह, ज्ञानवृद्ध श्री पं० जगदेवसिंह जी सिद्धांती, माननीय आचार्य उदयवीर जी, श्री प्रो० योगानन्द जी,श्री पं० राजवीर जी शास्त्री, श्री पं० सुदर्शनदेव जी शास्त्री, श्री पं० वेदव्रत जी शास्त्री, श्री पं० यज्ञदेव जी शास्त्री, स्वामी वेदानन्द जी वेदवागीश, स्व० ब्र० सत्यव्रत जी अग्निवेश, वैद्य रामगोपाल जी, प्रो० साधुराम जी, श्री धर्मपाल जी (महा-राष्ट्र) श्री पं० भारतेन्द्रनाथ जी अध्यक्ष दयानन्द संस्थान तथा उनके परिवार का परामर्श और सहयोग भी मुझे निरन्तर मिलता रहता है। इन सवका मैं आभारी हूं। प्रिंसिपल होश्यारसिंह जी वाजीदपुर तथा वैद्य कर्मवीर जी नरेला ने मुझे सदैव आर्थिक सहयोग दिया तथा अपने मित्रों से भी दिलवाया, इन दोनों का तथा उन सवका जिन्होंने मुझे किसी भी प्रकार का सहयोग इस ग्रन्थ के लिखने और प्रकाशित करने में दिया है उन सवका धन्यवाद सहित आभार प्रकट करता हूं।

इतिहास सम्वन्धी मेरी रूस, जापान, आस्ट्रेलिया, इंगलैंड, पैरिस आदि विदेश यात्राओं के समय गुरुकुल झज्जर तथा कन्या गुरुकुल नरेला के अधिकारियों ने भी आर्थिक सहयोग प्रदान किया है, अतः इन सवका हृदय से धन्यवाद करता हूँ। इस ग्रन्थ के लिखने और तैयार करने में कन्या गुरुकुल नरेला में जो सहयोग, सुविधा और सहायता मिली है, इसके लिये आचार्या सुमित्रा जी तथा सभी ब्रह्मचारिणी पुत्रियां भी साधुवाद की पात्रा हैं।

सैनी प्रिण्टर्स के स्वामी श्री पं० चन्द्रमोहन जी शास्त्री तथा जैय्यद प्रेस के स्वामी मुहम्मद अहमद साहिव तथा इनके सहयोगियों का भी मैं वहुत आभारी हूं जिन्होंने अपने प्रेस में इस ग्रन्थ को शुद्ध और सुन्दर छापने का भरसक प्रयत्न किया है। एतदर्थ इन सवका आभार सहित धन्यवाद।

गुरुकुल झज्जर
माघ कृष्णा १२, सं० २०३१ वि०
दयानन्दाब्द १५०

—ओ३मानन्द सरस्वती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

# पुरातत्त्व संग्रहालय के सम्बन्ध में

भारत सरकार द्वारा अनेक नगरों में पुरातत्त्व संग्रहालय चलाये हुए हैं। परन्तु हरयाणा राज्य के जिला रोहतक के आर्षपाठविधि के केन्द्र विद्यास्थान में जो हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय है, वह अपने ढंग का निराला संग्रह है। इसे केवल भारतीय ही नहीं, विदेशी यात्री भी देखने आते हैं। इसमें बहुमूल्य और महत्त्वपूर्ण अनेक प्रकार की सामग्री एकत्र की हुई है। यहाँ धातुनिर्मित प्राचीन शस्त्रास्त्र, शिलालेख, ताम्रलेख, आहत, यौधेय, आर्जुनायन, कुणिन्द, औदुम्बर, नाग, गुप्त, शक, क्षत्रप, इण्डोग्रीक, इण्डोशसेनियन, इण्डोपार्थियन, गुर्जरप्रतिहार, पल्लव, हूण, चोल, राष्ट्रकूट, भोज, सामन्तदेव, मुसलमानों में गुलाम, खिलजी, तुगलक, सैय्यद, लोधी, तैमूर, मुगल तथा देशी राज्यों की मुद्रायें भी हैं। आहत, यौधेय, कुषाण, इण्डोग्रीक आदि मुद्राओं के ढालने के सांचे (Moulds) भी यहाँ बहुत संख्या में विद्यमान हैं। इसी प्रकार हजारों मोहरें, प्रस्तर और मृन्मय मूर्तियां भारतीय इतिहास को प्रकट करती हैं। यह सामग्री हरयाणा के खोखराकोट, नौरंगाबाद, अगरोहा, स्रुघ्न, सुनेत तथा भिन्न-भिन्न राज्यों से बड़े परिश्रम, खोज और सर्दी-गर्मी, वर्षा तथा भूख-प्यास की चिन्ता किये विना जोड़ी गई है।

हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय की इस अमूल्य सामग्री को एक स्थान पर सुरक्षित करने का श्रेय एकमात्र आर्यजगत् के अनेक शास्त्रों के ज्ञाता, तपस्वी, स्थानीय गुरुकुल महाविद्यालय झज्जर (रोहतक) के संचालक, आचार्य श्री पूज्य स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती (भूतपूर्व आचार्य भगवान्देव जी) अथवा यूं कहिये कि संस्था के प्राण सर्वेसर्वा को दिया जा सकता है। इस रहस्य को प्रकट करने में कुछ भी अतिशयोक्ति तथा अत्युक्ति नहीं कही जा सकती। जहाँ आपने आर्यजगत् को अनेक शास्त्रों के ज्ञाता विद्वान् ब्रह्मचारी दिये वहाँ अद्भुत संग्रहालय भी दिया है। एकाध स्थान पर इनके साथ जाने का हमें भी अवसर मिला है। पूज्य स्वामी जी के साथ मेरा वैयक्तिक सम्पर्क बहुत वर्षों से बना हुआ है।

जहाँ श्री स्वामी जी महाराज ऐतिहासिक गवेषणा में किसी भी विद्वान् से पीछे नहीं रहे हैं, वहाँ सामाजिक और राजनैतिक सुधार कार्यों में भी सदा आग्रणी रहे हैं। १९३९ में हैदराबाद के सत्याग्रह में भाग लेकर वहाँ की जनता को निजाम सरकार की तानाशाही से बचाने में सहयोग दिया। महात्मा गांधी जी द्वारा चलाये गये १९४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। अछूतोद्धार तथा रात्रि पाठशालायें चलाकर जनता में एकता की भावना लाकर शिक्षा का प्रचार किया। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में भी आपने बढ़-चढ़कर योग दिया। १९५७ के हिन्दी रक्षा सत्याग्रह तथा १९६६ के गोरक्षा सत्याग्रह में आपने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। जहाँ आपने महाभाष्य, छन्दःशास्त्र, काव्यालंकार आदि कई दर्जन महत्त्वपूर्ण संस्कृत और हिन्दी के ग्रन्थों का प्रकाशन किया वहाँ ब्रह्मचर्य, समाज सुधार तथा इतिहास-सम्बन्धी लगभग तीन दर्जन नये ग्रन्थों की रचना भी की है। आपने रूस, जापान, आस्ट्रेलिया, थाइलैंड, इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी आदि विदेशों की यात्रा की है।

संस्कृत और हिन्दी के प्रति की गई सेवाओं को देखते हुये हरयाणा राज्य ने सन् १९६८ में आपको सम्मानित किया। भारत के राष्ट्रपति ने भी १९६९ में आपको राष्ट्रिय पंडित की उपाधि से विभूषित किया।

मातृशक्ति में शिक्षा का प्रचार करने के लिये आपने अपनी जन्मभूमि नरेला (दिल्ली) में अपनी सारी सम्पत्ति दान देकर एक कन्यागुरुकुल की भी स्थापना की है। परमात्मा दया करे कि आप चिरायु और यशस्वी हों, तथा आर्यजगत् को अग्रसर करते रहें। यही हमारी भावना और परमात्मा से प्रार्थना है। आपके शिष्य ब्रह्मचारी विरजानन्द जी दैवकरणि व्याकरणाचार्य दर्शनाचार्य इतिहासाचार्य इस संग्रहालय के प्रमुख कार्यकर्त्ता हैं आप भी धन्यवादार्ह हैं।

विनीत

**जगदेवसिंह सिद्धान्ती, शास्त्री, तर्कवाचस्पति**

पूर्व संसत्सदस्य (लोकसभा), पूर्वप्रधान, आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब

पूर्व कुलाधिपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, प्रधान भारतीय सर्वखाप पंचायत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

# हरयाणा प्रान्तीय प्राचीन इतिहास के प्रामाणिक ग्रन्थों का

# प्रकाशन

जिस प्रकार प्राचीन मुद्राङ्कों (मोहरों) का इतिहास छपा है, उसी प्रकार हम इतिहास के अनेक अमूल्य ग्रन्थ प्रकाशित कर रहे हैं, जिनकी सूची निम्न प्रकार है :—

१. हरयाणे के प्राचीन अस्त्रशस्त्र ।
२. हरयाणे के प्राचीन लक्षण (टकसालें) ।
३. हरयाणे की प्राचीन मुद्रायें (सिक्के) १० भागों में ।
४. हरयाणे की प्राचीन मृन्मूर्तियां ।
५. हरयाणे की प्राचीन प्रस्तरमूर्तियाँ ।
६. हरयाणे में रामायण का प्राचीन मन्दिर ।
७. हरयाणे के प्राचीन दस दुर्ग ।
८ हरयाणे के प्राचीन क्षत्रियकुल ।
९ हरयाणे की प्राचीन शिल्पकला ।
१०. हरयाणे के प्राचीन नगर ।

ये सभी ग्रन्थ सचित्र, सुन्दर और बढ़िया कागज पर सजिल्द छपेंगे । जो सज्जन ११११) वा अधिक धन देकर सहायता करेंगे, उन दानियों का नाम ग्रन्थों में प्रकाशित किया जायेगा । ५०००) तथा इससे अधिक राशि दान देने वाले महानुभावों का चित्र सधन्यवाद प्रकाशित किया जायेगा । अतः इस महत्त्वपूर्ण योजना को तन मन और धन से पूर्ण सहयोग देकर सफल बनायें ।

इस प्रकार ये इतिहास के प्रामाणिक बड़े बड़े २० (बीस) ग्रंथ शीघ्रातिशीघ्र पाठकों को भेंट करना चाहते हैं । मेरा मुख्य कार्य शेष जीवन में यही रहेगा, किन्तु इतिहास प्रेमियों के पूर्ण सहयोग के बिना यह कठिन कार्य पूर्ण नहीं हो सकेगा ।

निवेदक :—

**ओमानन्द सरस्वती**

निदेशक :—

**हरयाणा प्रान्तीय पुरातत्त्व संग्रहालय**

गुरुकुल झज्जर, रोहतक (हरयाणा)

दूरभाष ४४

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विषय-सूची


| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| **प्रथम अध्याय** | |
| प्राचीन मुद्राङ्क परिचय | १ |
| मुद्राङ्कों की प्राप्ति | १ |
| मुद्राङ्कों (मोहरों) का निर्माण | २ |
| मिट्टी के मुद्राङ्क (मोहर) | ३ |
| मुद्रांकों का प्रयोजन | ३ |
| प्रवेश हेतु | ३ |
| मुद्रांकों के भेद | ३ |
| राजकीय मुद्रांक | ४ |
| इतिहास का स्रोत | ४ |
| मुद्रांकों की आकृतियां | ४ |
| मुद्रांकित करने के मुद्रांक | ५ |
| ठप्पे बनाने के पदार्थ | ५ |
| मुद्रांक डाइयों का रूप तथा परिमाण | ६ |
| निर्माण विधि | ६ |
| मुद्रांकन कर्त्ता | ७ |
| मुद्रांकों के विशेष लक्षण | ७ |
| मुद्रांकों के अभिलेख | ८ |
| लेखों की विशिष्टतायें | ८ |
| मुद्रांकों की प्राचीनता | ८ |
| **द्वितीय अध्याय** | |
| ब्रह्मर्षि देश के मुद्रांक | ११ |
| **तृतीय अध्याय** | |
| रोहतक | १५ |
| रोहतक का स्थान | १५ |
| रोहतक का संस्थापक | १६ |
| रोहतक का नामकरण | १६ |
| रोहीतक की प्राचीनता | १७ |
| रोहतक का वैशिष्ट्य | १८ |
| रोहतक का यौधेय लक्षणस्थान (टकसाल) | १९ |
| **चतुर्थ अध्याय** | |
| मुद्रांकों की लिपि और भाषा | २१ |
| मध्ययुगीन भाषायें वा बोलियां | २१ |
| प्राचीन मुद्रांकों का विवरण | २२ |
| १. महासेनापतिस्य वीरद्वारे | २२ |
| २. श्रीरुद्रवर्मस्य | २३ |
| ३. विजयते | २५ |
| ४. ब्रह्मा का चित्र | २६ |
| सर्वश्रेष्ठ विद्वान् ब्रह्मा | २६ |
| लिपि निर्माता ब्रह्मा | २७ |
| ५. श्रीमहिजन | २७ |
| ६. नन्दी के चित्र से युक्त मुद्रांक | २७ |
| भद्रमित्रस्य द्रोणिघाटे | ३० |
| सोनीपत | ३० |
| महाराजा हर्षवर्द्धन का समय | ३१ |
| ७. महाराजा हर्ष का ताम्र मुद्रांक | ३३ |
| ८. करवीरेश्वरस्य | ३४ |
| ९. वे वें | ३५ |
| १०. भ ॥ | ३६ |
| **पञ्चम अध्याय** | |
| यौधयों का परिचय | ३७ |
| यौधेय शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ | ३७ |
| क्या यौधेय युधिष्ठिर के सन्तान थे ? | ३९ |
| महाराज युधिष्ठिर का यौधेयों से युद्ध | ४० |
| अर्जुन के साथ युद्ध | ४० |
| नकुल के साथ युद्ध | ४१ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| यौधेयों की मुद्रायें | ४१ |
| **षष्ठ अध्याय** | |
| नौरंगाबाद वामला | ४३ |
| नौरंगाबाद वामला से प्राप्त मुद्रांक | ४५ |
| ११. रैपति यौधेयजनपदप्रकृतानाकनगर | ४५ |
| जनपद का प्रयोग | ५० |
| महर्षि पाणिनि और जनपद | ५१ |
| जनपद और स्त्रियां | ५१ |
| महाभाष्य और जनपद | ५२ |
| संयुक्त जनपद | ५२ |
| जनपदों की संख्या | ५२ |
| जनपदों का महत्त्व | ५३ |
| जनपदों की सीमायें | ५५ |
| यौधेय जनपद | ५५ |
| १२. यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् | ५७ |
| १३-१६. यौधेयानाम् | ६२ |
| आयुधजीवी संघ | ६४ |
| १७. जीवेकुणस भारद्वाजस | ६५ |
| रामायण–महाभारत के भरद्वाज | ६६ |
| १८. नगरभूति | ६६ |
| १९. भूतिनिकाय १९ से २१ मुद्रांक | ६७ |
| २२ से २५ मुद्रांक | ६८ |
| २६ से २८ मुद्रांक | ६९ |
| २९, ३० मुद्रांक | ७० |
| ४७८ वलीयस | ७२ |
| **सप्तम अध्याय** | |
| अगरोहा | ७३ |
| अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक | ७५ |
| ३१. श्रीय्यौधेयगणपुरस्कृतस्य० | ७६ |
| ३२. पितृदत्त | ७७ |
| ३३ से ३८ मुद्रांक | ७८ |
| ३८ से ४५ मुद्रांक | ७९ |
| ४६ से ५० मुद्रांक | ८० |

| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| **अष्टम अध्याय** | |
| राखी गढी | ८१ |
| ५१. सिन्धुलिपि का मुद्रांक | ८१ |
| कुरुक्षेत्र (स्थानेश्वर) | ८२ |
| मुद्रांक ५२ से ५५ | ८५ |
| करनाल | ८६ |
| मुद्रांक ५६, ५७ | ८६ |
| **नवम अध्याय** | |
| सुघ (स्रुघ्न) | ८७ |
| स्रुघ्न के मुद्रांक | ८८ |
| ५८ खरोष्ठी मुद्रांक | ८८ |
| कम्बोज | ८८ |
| मुद्रांक ५९ से ६७ | ८९ |
| मुद्रांक ६८, ६९, ४७६ | ९० |
| नन्दीपुर सिंहोल | ९० |
| मुद्रांक ७० से ७३ | ९२ |
| मुद्रांक ७४ से ७७ | ९३ |
| मुद्रांक ७८, ७९ | ९४ |
| **दशम अध्याय** | |
| सुनेत (सुनेत्र) | ९५ |
| यौधेय मुद्राओं में द्वि त्रि | ९६ |
| वृष्णिगण के मुद्रांक | ९७ |
| शंख, चक्र, गदा और पद्म | ९९ |
| मुद्राङ्कों के चिह्न | ९९ |
| सोमवंश, शर्मवंश, गुप्तवंश, भद्रवंश, देववंश | १०१ |
| दत्तवंश, दासवंश, मित्रवंश, घोषवंश | १०२ |
| ८०. यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् | १०३ |
| ८१-८३. धर्मकर्त्तव्य | १०३ |
| ८४. सत्यवतव्यं | १०६ |
| ८५, ८६. दातव्यं भोतव्यम् | ११० |
| मुद्रांक ८७—८९ | ११३ |
| वैदिक साहित्य में श्री | ११३ |
| ब्राह्मणग्रन्थों में श्री का अर्थ | ११५ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| मुद्रांक ९७—१०० | ११६ |
| मुद्रांक १०४—११२ | ११७ |
| मुद्रांक १२०—१२६ | ११८ |
| मुद्रांक १२८—१३६ | ११९ |
| मुद्रांक १३७—१४० | १२० |
| मुद्रांक १४१,१४२ | १२१ |
| मुद्रांक १४४,१४५ | १२२ |
| शालभञ्जिका | १२२ |
| मुद्रांक १५६—१६० | १२४ |
| मुद्रांक १६२—१६५ | १२५ |
| मुद्रांक १६६—१७२ | १२६ |
| मुद्रांक १७६-१८० | १२७ |
| मुद्रांक १८१ | १२८ |
| सुनेत का वृष्णिगण | १२८ |
| यौधेय और वृष्णिगण राज्य | १२८ |
| मुद्रांक १८७ | १३० |
| मुद्रांक १८८, १८९ | १३१ |
| मुद्रांक १९०—१९५ | १३२ |
| मुद्रांक १९८—२०३ | १४३ |
| मुद्रांक २११—२२६ | १३४ |
| मुद्रांक २२८, २२९ | १३५ |
| मुद्रांकों के विभिन्न चिह्न | १३६ |
| मयूर | १३६ |
| वृश्चिक, शंख | १३७ |
| चक्र, गदा, शक्ति, त्रिशूल | १३८ |

| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| **एकादश अध्याय** | |
| काली बंगा | १४० |
| मुद्रांक २७३—२७५ | १४१ |
| अहिच्छत्रा | १४१ |
| अहिच्छत्रा : नाम और इतिहास | १४२ |
| अहिच्छत्रा की मुद्रायें | १४३ |
| मुद्रांक २७६ | १४५ |
| मुद्रांक २७७—२८३ | १४६ |
| मुद्रांक २८४,२८५ वंगपाल | १४७ |
| मुद्रांक २८६—३२५ | १४९ |
| **द्वादश अध्याय** | |
| कौशाम्बी | १५१ |
| कौशाम्बी की मुद्रायें | १५१, १५२ |
| मुद्रांक ३२६ | १५२ |
| मुद्रांक ३२७—३३९ | १५३ |
| „ ३४५, ३४६ | १५४ |
| „ ३४९—४०७ (लंवतीमितस, हथीपलशो) | १५५ |
| „ ३८६—४७२ | १५६ |
| चित्र ४७९, ४८० | १५७ |
| मुद्रांक ४८१—४८३ | १५८ |
| „ ४८४—४९० | १५९ |
| सहायक नामावली | १६० |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मुद्रांक चित्र सूची


| लेख | | चित्र सं० |
|---|---|---|
| **रोहतक** | | |
| महासेनापतिस्य वीरद्वारे | नन्दी | १ |
| श्रीरुद्रवर्मस्य | | २ |
| विजयते | | ३ |
| ब्रह्मा का चित्र | | ४ |
| श्रीमहिजन | | ५ |
| नन्दी का चित्र | | ६ |
| महाराजा हर्ष का मुद्रांक (सोनीपत) | नन्दी | ७ |
| करवीरेश्वरस्य (अच्छेज) | त्रिशूल | ८ |
| बे वें (अच्छेज) | | ९ |
| भ ॥ (मोहनबाड़ी) | | १० |
| **नौरंगाबाद बामला** | | |
| रैपतियौधेयजनपदप्रकृतानाकनगर यज्ञिययूप (विपरीत) | | ११ |
| यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् | नन्दी | १२ |
| यौधेयानाम् | नन्दी | १३ |
| यौधेयानाम् (रांग विपरीत) | नन्दी | १४ |
| यौधेयानाम् (रांग) | नन्दी | १५ |
| यौधेयानाम् | नन्दी | १६ |
| जीवेकुणस भारद्वाजस | | १७ |
| नगरभूति | वृक्ष | १८ |
| भूतिनिकाय (विपरीत) | शस्त्र ? वि ? | १९ |
| पुष्यहस्थिस्य (ताम्र, विपरीत) | त्रिरत्न, स्वस्तिक | २० |
| ···वपतिलक्ष····गकुमारकस्य | | २१ |
| रमणश्री (विपरीत) | | २२ |
| कक | | २३ |
| हस्ती द्वारा ताड्यमान पुरुष | | २४ |
| सपरशु त्रिशूल | | २५ |
| धार्मिक चिह्न | | २६ |
| यौधेय ? | | २७ |
| श्रीबुद्धस्य | सिंह | २८ |
| रक्क | चक्र | २९ |
| श्रीहरिवरस | शंख | ३० |
| **अगरोहा** | | |
| श्रीय्यौधेयगणपुरस्कृतस्य भट्टारराज० | नन्दी | ३१ |
| पितृदत्त (विपरीत) | मन्दिर | ३२ |
| श्रीसाधुवृद्धिस्य | | ३३ |
| शङ्करमलस्य | नन्दी | ३४ |
| नूनकुसला | | ३५ |
| विसपालकस तपुविदशने (ताम्र, विपरीत) | | ३६ |
| श्रीयाकस | वृक्ष, लता, पुष्प | ३७ |
| हालेत गेया | | ३८ |
| सिंहस | | ३९ |
| भद्रस्य | | ४० |
| पावनेस रुद्रेधर्म | नन्दी | ४१ |
| जु जु | | ४२ |
| श्रीशिवदरजः | | ४३ |
| ददाकस्य | | ४४ |
| श्रीततुण्य (ताम्र, विपरीत) | | ४५ |
| मुच | | ४६ |
| अश्वारोही के सम्मुख प्रसारितबाहु मानवाकृति | | ४७ |
| स्वस्तिक और चक्र के चित्र | | ४८ |
| क्षुप और चक्र के चित्र | | ४९ |
| श्रीध्रुवा···र मित्र ? | | ५० |
| **राखीगढी** | | |
| तथाकथित सिन्धुलिपि का मुद्रांक | | ५१ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | | चित्र सं० |
|---|---|---|
| **थानेसर दौलतपुर** | | |
| स्थानेश्वरस्य | सपरशु त्रिशूल | ५२ |
| तूडिलस म ॥ | | ५३ |
| श्रीबुधस्य | | ५४ |
| अपठित पाठ | | ५५ |
| **करनाल** | | |
| मानवाकृति | | ५६ |
| नन्दी और गोमुख | | ५७ |
| **सुघ (सुघ्न)** | | |
| खहरालपुत्रस कनबुजरस्पग | त्रिरत्न, सर्पाकृति ? | ५८ |
| कानशे | | ५९ |
| हरिदेव (विपरीत) | मन्दिर | ६० |
| सनकस | चिह्न विशेष | ६१ |
| घमय (घर्माय) (विपरीत) | | ६२ |
| श्रीअरुण | | ६३ |
| स्वस्तिक आदि धार्मिक चिह्न | | ६४ |
| धार्मिक चिह्न | | ६५ |
| धार्मिक चिह्न | | ६६ |
| कच्छप और अनेकपदी जीव | | ६७ |
| श्री···व | | ६८ |
| षड्दलकमल | | ६९ |
| **सिंहोल** | | |
| श्रीमंहाराजकपिलस नियुक्तस्याधिकरणस्य | शंख, चक्र | ७० |
| रजतिरजस त्रदतस गुदफरस | देवता | ७१ |
| जीवबलस हस्तिदन्त, (विपरीत) | शंख स्वस्तिक | ७२ |
| श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य | चक्र | ७३ |
| श्रीगोमीश्वरस्य (विपरीत) | शंख, शस्त्र ? सर्पाकृति | ७४ |
| श्रीभूमश्रवसः | | ७५ |
| वियौवनवता ? | मल्ल, सिंह, पुष्प | ७६ |
| हस्तिसिंहयुद्ध | | ७७ |
| श्रीबुद्धिवसुस्य | नन्दी | ७८ |
| ये धर्माः हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत् एवं | | |

| लेख | | चित्र सं० |
|---|---|---|
| वादी महाश्रमणः | बौद्धस्तूप | ७९ |
| **सुनेत** | | |
| यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् | नन्दी | ८० |
| धर्मकर्त्तव्य | | ८१ |
| धर्मकर्त्तव्य (विपरीत) | | ८२ |
| धर्मकर्त्तव्य (विपरीत) | | ८३ |
| सत्यवतव्य (विपरीत) | | ८४ |
| दातव्य भोतव्यम् | | ८५ |
| दातव्यं भोतव्यम् (विपरीत) | | ८६ |
| सिद्धिरस्तु (विपरीत) | | ८७ |
| गोक्षुरक | | ८८ |
| श्रीनन्दशिरिस्य (अकीक) | | ८९ |
| राष्ट्रस्य ? | | ९० |
| श्रीबुद्धिमित्रस्य | | ९१ |
| विष्णुसोम | | ९२ |
| श्रीरामिलस्य | | ९३ |
| श्रीशुद्धिलस्य | | ९४ |
| श्रीदविलस्य | | ९५ |
| श्रीभजिल | | ९६ |
| श्रीकुमार | | ९७ |
| श्रीकुमार (विपरीत) | | ९८ |
| श्रीरवन्तभद्रस्य | | ९९ |
| श्रीगुप्तस्य | | १०० |
| श्रीविष्णुभद्रस्य | | १०१ |
| श्रीमंतिशर्मस्य | | १०२ |
| बुधमित्र | | १०३ |
| महत कटकर | | १०४ |
| श्रीविशण्डिकस्य | | १०५ |
| मित्रदेवस्य | | १०६ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् | | १०७ |
| श्रीविष्णुवोम | | १०८ |
| श्रीस्वामिगुप्त | | १०९ |
| श्रीमुल्लस्य | | ११० |
| द्रोणशूरस्य लदख ? | | १११ |
| श्रीसोमदेवसेधचक्र | | ११२ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| लेख | चित्र सं० | |
|---|---|---|
| श्रीघर्मस्य | | ११३ |
| कुमार कुमार | | ११४ |
| श्रीरार्य्यसोमस्य | | ११५ |
| श्रीर्मातिशर्मस्य | | ११६ |
| श्रीर्मतृभूतस्य | | ११७ |
| श्रीर्जयसोम | | ११८ |
| जयमित्र | | ११९ |
| नौमि | | १२० |
| रवेः | | १२१ |
| श्रीमित्रस्य | | १२२ |
| श्रीस्वामिघोषस्य | | १२३ |
| श्रीवीरयशस्य | | १२४ |
| देवभद्रस्य काण्डेलकाकुमारस्य | | १२५ |
| श्रीस्वामी···हरि···र···स्य | | १२६ |
| जातुवेद ? | | १२७ |
| घोषस्य | | १२८ |
| श्रीर्मातृशर्मस | त्रिशूल | १२९ |
| श्रीभूमश्रवसः | | १३० |
| श्रीश्शर्म्मस्य | | १३१ |
| कमल श्रीमता ? | | १३२ |
| श्री व मस्य | | १३३ |
| ·····मित्र···वि··· | | १३४ |
| अपठित | सिंह, स्वस्तिक | १३५ |
| जितं भगवता | सिंह, पुष्प | १३६ |
| सोमेसरपुत्रस्य श्रीपृथ्वीवर्मस्य ? | सिंह | |
| श्रीपुष्टवर्मस्य ? | | १३७ |
| श्रीनन्दसोमः | सिंह, चक्र | १३८ |
| श्रीसूर्यस्य | अश्व | १३९ |
| श्रीअतिमुक्तक | नन्दी, त्रिशूल | १४० |
| श्रीविष्णुसिंहशपतेः | शंख, सिंह | १४१ |
| श्रीस्वामिगुप्त···य श्रीरु···देव·· | चक्र, सिंह | १४२ |
| मातृशर्मा | नन्दी | १४३ |
| श्री सोमस्य | चक्र, सिंह | १४४ |
| श्रीरुद्रस्य | शालभञ्जिका | १४५ |
| श्रीमातृ सोमस्य | त्रिशूल, सिंह | १४६ |
| श्री·····स्य । श्रीर्मयदत्तस्य | नन्दी | १४७ |

| लेख | चित्र सं० | |
|---|---|---|
| श्रीवाष्णव ? | पुष्प, सिंह | १४८ |
| श्रीकृष्णदत्तस्य (श्रीकृष्णदत्तस्य) | चक्र | १४९ |
| श्रीरीशानभद्रस्य | चक्र, सिंह | १५० |
| श्रीदासकोदिवरः | चक्र, सिंह | १५१ |
| श्रीर्मात्रिशर्मस | त्रिशूल | १५२ |
| श्रीर्मात्रिशर्मस | त्रिशूल | १५३ |
| श्रीर्मात्रिशर्मस | त्रिशूल | १५४ |
| श्रीर्मात्रिशर्मस | त्रिशूल | १५५ |
| गङ्गभद्र | त्रिशुल, सर्प ? | १५६ |
| श्रीशङ्खस्य | त्रिशूल | १५७ |
| गङ्ग | त्रिशूल | १५८ |
| श्रीरतिमुतकस | त्रिशूल | १५९ |
| रुद्रशर्म | त्रिशूल | १६० |
| मातृः | त्रिशूल | १६१ |
| हरिशर्म | शंख | १६२ |
| हरिशर्म्म | शंख | १६३ |
| श्रीसिद्धेश्वरदासस्य | चिह्न विशेष, अर्द्धचन्द्र | १६४ |
| महासेनापति वर्म ? | शंख | १६५ |
| महेश्वर | सरपशु त्रिशूल | १६६ |
| श्रीर्ज्जयसोमस्य | अर्द्धचन्द्र | १६७ |
| रुशम | त्रिशूल | १६८ |
| श्रीनारायणस्य | चक्र, शंख | १६९ |
| श्रीशौम्य (विपरीत) | | १७० |
| श्रीसोमगुप्तः (ताम्र विपरीत) | | १७१ |
| (श्रीर्व)सुभट्टरय (विपरीत) | सिंह | १७२ |
| श्रीनरयणस्य (श्रीनारायणस्य) | | १७३ |
| (श्रीमि)त्रसोमस्य (ताम्र, विपरीत) | | १७४ |
| श्री वमस्य | सिंस | १७५ |
| श्रीर्य्यातृसोमस्य | सिंह, चक्र | १७६ |
| श्रीर्य्यातृसोमस्य (वसुवर्म) | सिंह, चक्र | १७७ |
| श्रीविष्णुदत्तस्य | सिंह | १७८ |
| विष्णुदासस्य श्रीशोणस्य ? | सिंह | १७९ |
| श्रीरिन्द्रगुप्तस्य | शूकर | १८० |
| श्रीराज्यसोमस्य | सिंह | १८१ |
| श्रीबुद्धिवसुस्य | नन्दी | १८२ |
| श्रीव्याघ्रदत्तस्य सैंपिवरस्य | सिंह | १८३ |

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| श्रीविष्णुसिंहस्य सिंह | १८४ |
| श्रीकुमारशर्म(स्य) सिंह | १८५ |
| लेख अस्पष्ट पुष्प, सिंह | १८६ |
| वृष्णि राजन्यगणपुरस्कृतस्य अर्द्धदस्ति सिंह, महासेनापतेर्व्वसुवृद्धपुत्रस्य मूसल गदा, चक्र जयसोमस्य केन्द्रस्थिरस्य ? | १८७ |
| वृष्णिराजन्यमणपुरस्कृतस्य अर्द्धदस्ति सिंह, महासेनापतेः सोमगुप्तपुत्रस्य मूसल गदा, सिंह, सत्यगुप्तस्य भूम्यत्र ? | १८८ |
| जयपचलय अर्द्धहस्तिसिंह चक्र | १८९ |
| (जितं) भगवता अर्द्धहस्तिसिंह मूसल, गदा | १९० |
| (जितं) भगवता अर्द्धहस्तिसिंह मूसल गदा चक्र, पीठ पर शंख | १९१ |
| (जितं) भगवता अर्द्धहस्तिसिंह, मूसल, गदा चक्र, पीठ पर शंख | १९३ |
| अर्द्धहस्तिसिंह, मूसल, पीठ पर शंख | १९४, १९५ |
| नागदेवः शंख | १९६ |
| श्रीनारायणदेवस्य चक्र, शंख | १९७ |
| अपठित अर्द्धचन्द्र | १९८ |
| श्रीविष्णुदासस्य शंख | १९९ |
| श्रीरविङ्कितिद्वास ? शंख | २०० |
| सत्रप्तस्य चक्र | २०१ |
| श्रीकुन्देश्वरस्य त्रिशूल | २०२ |
| देविलपुत्रस्य श्रीसत्यदेवस्य शंख, शास्त्र, शंख | २०३ |
| श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य चक्र | २०४ |
| अस्पष्ट राजा का चित्र | २०५ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् मातृः त्रिशूल | २०६ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् हरिशमं शंख | २०७ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् म शक्ति त्रिशूल | २०८ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् ..... | २०९ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् गङ्ग श्रीविंष्णुदासस्य शंख | २१० |
| रुद्रशर्म श्रीजुज्जस्य त्रिशूल, त्रिशूल | २११, २१२ |
| गङ्गभद्र त्रिशूल त्रिशूल | २१३, २१४ |
| ..... दाम | २१५ |
| श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य-सु चक्र | २१६ |
| बलभद्रस्य ? दामिकस्य चक्र, सिंह | २१७, २१८ |

| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| श्रीक्षेमस्य नन्दी | २१९ |
| हरिशर्म्म त्रिशूल शंख | २२० |
| श्रीयशस सपाश अंकुश | २२१ |
| श्रीरतिमुतकस नन्दी त्रिशूल | २२२, २२३ |
| श्रीस्वामिघोपस्य कृष्णघोष शंख पुष्प | २२४, २२५ |
| श्रीहरि दासस्य देवसेन | २२६, २२७ |
| श्रीसूर्य्यभद्रस्य स्य दाढी वाला राजा, | २२८ |
| श्रीर्व्वन्वाशिकस्य ब्रह्मिलस्य साधिकरणस्य | २२९ |
| यूनानी राजा (अकीक) | २३० |
| प | २३१ |
| नन्दी-परशु | २३२-२३३ |
| त्रिशूल | २३४-२३९ |
| सिंह, धार्मिक चिह्न | २४०, २४१ |
| मयूर | २४२ |
| नन्दी, अंकुश | २४३ |
| नन्दी | २४४ |
| सपरशु त्रिशूल | २४५ |
| वृश्चिक | २४६ |
| राजा का चित्र | २४७ |
| व्यक्ति का चित्र | २४८ |
| नन्दी, त्रिशूल, चक्र | २४९, २५० |
| चक्र, त्रिशूल आदि विविध शस्त्रास्त्र | २५१-२५९ |
| अस्पष्ट लेख तथा नन्दी, सिंह आदि | २६० |
| श्रीहरिगुप्तस्य | २६१ |
| श्रीशङ्खस्य सिंह, शंख | २६२ |
| श्रीदामस्य | २६३ |
| (श्रीमं)हाराज धर्मसारव्य··वधकरण··· नन्दी | २६४ |
| श्री··यशस्य अस्पष्ट चित्र | २६५ |
| श्रीकान्तिस्याधि···· (विपरीत) | २६६ |
| मातिशर्मा—पुष्प | २६७ |
| श्रीर्मातिशर्मस्य | २६८ |
| मातृः—म शक्ति त्रिशूल | २६९ |
| जितं भगवता सिंह | २७० |
| म शक्ति, त्रिशूल | २७१ |
| श्री····· | २७२ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | | चित्र सं० |
|---|---|---|
| **कालीबंगा** | | |
| एकशृङ्गी पशु, पात्र, पीपल का पत्ता | | २७३ |
| बेंहगी वाला व्यक्ति, पुष्प | | २७४ |
| लम्बे मुख वाली मानवाकृति | | २७५ |
| **अहिच्छत्रा** | | |
| धर्मो रक्षति रक्षित (अकीक, विपरीत) परशु और अर्द्धचन्द्र | | २७६ |
| अग्निमुक (ताम्र, विपरीत) | | २७७ |
| शङ्करदत्तस्य (ताम्र, विपरीत), शंख, धार्मिक चिह्न | | २७८ |
| पद्मनंन्दि (ताम्र, विपरीत) | शंख, चक्र | २७९ |
| कविकस्य (ताम्र, विपरीत) | नन्दी | २८० |
| नत्यकस्य (ताम्र, विपरीत) | | २८१ |
| क····कय (ताम्र विपरीत) | | २८२ |
| अफस्य (विपरीत) | चक्र | २८३ |
| गोमिकुलागोत्रमहाराजाह्लिलसुमित्र-महाराजसूर्यमित्रमहाराजश्रीभूमिमित्र-श्रीमहाराजाच्युतस्य | धार्मिक चिह्न, सिंह | २८४ |
| वगपालस (वंगपालस्य) | पाञ्चाल चिह्न | २८५ |
| श्रीवरवीरदेवस्य | शंख, शस्त्र, चक्र | २८६ |
| गोठभूतिस म | (गोमुख ?) स्वस्तिक | २८७ |
| कुमारामात्याधिकरणस्य | गजलक्ष्मी, सिंह | २८८ |
| भद्रस्य | शंख | २८९ |
| सुधर्म्ममहाविहारे ? | गुल्मलता, त्रिशूल | २९० |
| पुत्रिमित्र····ी··ी | चक्र, शस्त्र, शंख | २९१ |
| श्री····· | लक्ष्मी | २९२ |
| स्थावरस्य | चक्र | २९३ |
| ···विश्वमि··· | शंख, धार्मिक चिह्न, चक्र | २९४ |
| जबुलस्य | शंख, त्रिशूल | २९५ |
| (प)शुपतियश | चीता, भेड़िया आदि | २९६ |
| दामिकस्य | त्रिशूल | २९७ |
| ···कु····· | पक्षी ? | २९८ |
| श्रीदीढस्य | चक्र, शंख | २९९ |
| महिलस | म (गोमुख ?) | ३०० |
| वसुजरठिकस | त्रिरत्न | ३०१ |
| महादिन | स्वस्तिक | ३०२ |
| शावादिनकस्य | शस्त्र, त्रिरत्न | ३०३ |
| कुम्हकारसेणायै | | ३०४ |
| कुमारनन्दपुत्रस्य देवनन्दस्य | | ३०५ |
| सिंहस | | ३०६ |
| नागगुप्त | | ३०७ |
| जयते | | ३०८ |
| हरनकरविहारे संघस | | ३०९ |
| नन्दी, हस्ती, चीता, म (गोमुख), सुमेरु पर्वत, शस्त्रास्त्र आदि चिह्न | | ३१०-३१३ |
| धार्मिक चिह्न, सिंह | | ३१४ |
| पाञ्चालों का राज्यचिह्न | | ३१५ |
| चौकी पर ब्रह्मा | | ३१६ |
| कुक्कुट (मुर्गा), ज्योतिस्तम्भ, मयूर | | ३१७ |
| व्यक्ति, सिंह, धार्मिक चिह्न, सुमेरु पर्वत, सिंह, मृग | | ३१८-३२१ |
| दण्डनायक···कन्न···श्रीज···म···।··· | सिंह | ३२२ |
| चौकी पर पुरुष | | ३२३ |
| श्रीवं···(द)ण्डना(यक)मिमु···: धार्मिक चिह्न, सिंह | | ३२४ |
| सुरिकसा···? | व्यक्ति सदृश चित्र | ३२५ |
| **कौशाम्बी** | | |
| सोमस्य (ताम्र, विपरीत) | ध्वज, यूप, नन्दी, ध्वज | ३२६ |
| ईश्वरस्य (विपरीत) | | ३२७ |
| जितं भगवत(ा)वसुदेवेन (विपरीत) | शंख, चक्र | ३२८ |
| अनामकस्य (विपरीत) | शंख, स्वस्तिक | ३२९ |
| पर्णमघः (विपरीत) | | ३३० |
| अयदासस (आर्यदासस्य) | | ३३१ |
| शडतत्यीस्य ? (हस्तिदन्त, विपरीत) | शंख | ३३२ |
| भूयतस (हस्तिदन्त, विपरीत) | | ३३३ |
| वक्रदेवदनु ? (प्रस्तर, विपरीत) | | ३३४ |
| वेडस (हस्तिदन्त, विपरीत) | | ३३५ |
| सिंह (प्रस्तर, विपरीत) | | ३३६ |
| सिंह (विपरीत) | मन्दिर | ३३७ |
| (जितं)भग(वता) (गोमेदक, विपरीत) | देवता | ३३८ |
| वाहस (विपरीत) | | ३३९ |
| महाराज्ञः श्रीचेणुशिवसंघस्य | त्रिशूल, नन्दी | ३४० |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| महादण्डनायक·····स्य स्य श्रिय मयूर | ३४१ |
| ···धि···यक···स्य पुर नन्दी | ३४२ |
| कौशाम्बिविघोषिता (राममहा) विहारे भिक्षु (संघस्य) धर्मचक्र के दोनों ओर मृग | ३४३ |
| कौशाम्बिमहा (विहारे) ···प··· सेविकासहिता लक्ष्मी | ३४४ |
| श्रीमद्यशःकर्णदेवः गजलक्ष्मी, नन्दी | ३४५ |
| (ये धर्माः) हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथाग (तो ह्यव-) दत् तेषां च योनिरोध एवं वादी (महाश्रमण :) बौद्धस्तूप, बुद्धमूर्ति, बोधिसत्त्व | ३४६ |
| महाराजस्य कान्तिपुत्रस्य··· नन्दी, सुमेरु | ३४७ |
| ···वस्य दन्दी | ३४८ |
| लेवतीमितस (रेवतीमित्रस्य) यूप, धार्मिक चिह्न | ३४९ |
| हथीपलशो (हस्तिपालस्य) स्वस्तिक, म, कच्छप, शस्त्र | ३५० |
| राघमितस सिन्थाद्वारे धार्मिक चिह्न, सुमेरु | ३५१ |
| हमतश | ३५२ |
| नन्दिस (विपरीत) म, स्वस्तिक, शस्त्र | ३५३ |
| राजमितस नगरभूते (विपरीत) धार्मिक चिह्न | ३५४ |
| (ज) यघोष (स्य) शंख | ३५५ |
| केशवगुप्त वेदी ? | ३५६ |
| इदमितस धार्मिक चिह्न, म | ३५७ |
| इददिनश शस्त्र, म | ३५८ |
| राजमितस धार्मिक चिह्न, स्वस्तिक | ३५९ |
| सिदेवस म छत्र ? | ३६० |
| शिरिसप्तनं कय · भ ··कणिस चतुस्त्रिशूलमुखी चिह्न | ३६१ |
| कुमारस्य अर्द्धचन्द्र | ३६२ |
| भट्टिमितस गदा, शक्ति, शस्त्र | ३६३ |
| रुद्रहस्तिस्य आद्यन्त में शक्ति | ३६४ |
| (ना) गबलस्य वेल-बूटे, पुष्प | ३६५ |
| भोनु ? पुत्रवर्गघोष पुष्प | ३६६ |
| वर्गघोष शाखा पर उल्लू | ३६७ |
| नागश (र्म) अर्द्धचन्द्र | ३६८ |
| ···टिकव शंख | ३६९ |
| इष्टदत्तस्य—····· कलश | ३७० |
| करटस—वस त्रिशूल | ३७१ |

| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| पण्यलाभ धार्मिक चिह्न | ३७२ |
| पद्मनाभ चक्र | ३७३ |
| अस्पष्ट नाचता मयूर | ३७४ |
| ···परिय···(परिघ ?) सपुष्प क्षुप | ३७५ |
| गोजिपडस | ३७६ |
| उता···कुसनन्दस शस्त्र, सुमेरु (विपरीत) | ३७७ |
| सघै··· | ३७८ |
| सेनसूश्व··· सपरशुत्रिशूल | ३७९ |
| अस्पष्ट धार्मिक चिह्न | ३८० |
| शुमतथश—मतियश स्वस्तिक | ३८१ |
| लाजु अहिमितस (राज्ञो अहिमित्रस्य) | ३८२ |
| यशनपादे | ३८३ |
| भरज्वाजस (भरद्वाजस्य) | ३८४ |
| मघवश | ३८५ |
| कीर्तिभूतिस—लजवतीभूतस | ३८६ |
| राजमितस | ३८७ |
| दीर्घवक्र ? | ३८८ |
| निगमे | ३८९ |
| ·· विसघस (श्रीविश्वघोष) | ३९० |
| · श घव | ३९१ |
| भूतमोदके | ३९२ |
| मारिदत्त ? | ३९३ |
| गिरिभूतिस | ३९४ |
| सावसद ? | ३९५ |
| ये धर्मा हेतुप्रभवा···। | ३९६ |
| ये धर्मा हेतुप्रभवा · । | ३९७ |
| ये धर्मा हेतुप्रभवा···। वज्र | ३९८ |
| ···या · वे मन्दिर | ३९९ |
| रोदकस | ४०० |
| वैष्णवस्य मन्दिर | ४०१ |
| रुद्रपडितस्य | ४०२ |
| अटक | ४०३ |
| दतिकस | ४०४ |
| केशव (गुप्त) | ४०५ |
| धम्म (धर्म्म) | ४०६ |
| ···तरमितस | ४०७ |

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| लेख | | चित्र सं० |
|---|---|---|
| स्री··ष्वर | | ४०८ |
| कडहल | | ४०९ |
| बगरगजपुघ ? | | ४१० |
| ·· र बटव | | ४११ |
| ग···समक··· | | ४१२ |
| भूतस | | ४१३ |
| गमन··· | | ४१४ |
| ···स्वितस | | ४१५ |
| परागि·· वानश··· | पुष्प | ४१६ |
| पटहृद | स्वस्तिक | ४१७ |
| चावठिकः यं | | ४१८ |
| रुशदस्य (हृशदस्य?) | | ४१९ |
| मडकस्य | स्वस्तिक | ४२० |
| धार्मिक चिह्न, धनुर्धर, नन्दी, अश्व आदि | | ४२१-४३५ |
| शस्त्र (हस्तिदन्त) | | ४३६ |
| स्वस्तिक, म हस्तिदन्त | | ४३७ |
| ,, हस्तिदन्त | | ४३८ |
| रजहयस | | ४३९ |
| व्यक्ति, सिंह. यूप, धार्मिक चिह्न आदि | | ४४०-४४९ |

## प्रयाग

| | | |
|---|---|---|
| आनरकस | नन्दी, पुष्पलता | ४५० |
| सिंहवाहिनी (पीतल) | | ४५१ |

## लखनऊ

| | | |
|---|---|---|
| रसिकस्य | दौड़ता सूअर | ४५२ |
| शूरगुप्त | मन्दिर | ४५३ |
| धनदेवस्य | यूप, नन्दी, सुमेरु, शक्ति | ४५४ |
| शूरदम्य ? | शस्त्रधारी योद्धा का सिंह से युद्ध | ४५५ |
| पुष्यसर | चरणमुगल | ४५६ |
| ···ष्वर | सूर्य, चन्द्र | ४५७ |
| ···घहव्यपा ? | मन्दिर | ४५८ |
| व्यक्ति. पात्र, मल्ल | | ४५९,४६० |
| नन्दस्य | | ४६१ |
| भट्टिमितस | गदा, शक्ति, शस्त्र | ४६२ |
| अज्ञात | | ४६३-४६८ |
| ये धर्मा हेतुप्रभवा ·· । (वाराणसी) | बौद्धस्तूप | ४६९ |
| श्रीघोमन्त्रम् (जौनपुर) | | ४७० |

## दिल्ली

| | | |
|---|---|---|
| श्रीअच्युतभद्रः—स्वामिनाग | शंख, पुष्प, चक्र, शंख | ४७१-४७२ |
| भट्टिमितस | गदा, शक्ति, शस्त्र | ४७३ |
| बुद्ध का चित्र | | ४७४ |
| चतुर्भुज देवता | | ४७५ |
| सेवक सेविकाओं सहित कमल पुष्प पर बुद्ध (सुघ) | | ४७६ |
| श्रीभवदेवस्य (विपरीत) (सुनेत) | शालभञ्जिका | ४७७ |
| वल्गीयस (नौरंगाबाद वामला) | म, स्वस्तिक | ४७८ |
| यौधेयमुद्रायें | | ४७९ |
| यौधेय, वृष्णिगण, बलवर्मा, ईश्वर, सरगमपट्टिका, यौधेयशिलालेख, औदुम्बर और कुणिन्द मुद्रायें | | ४८० |

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# मुद्रांक लेखों की अकारादिक्रमसूची


| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| **१. रोहतक (खोखराकोट)** | |
| महासेनापतिस्य वीरद्वारे | १ |
| विजयते | ३ |
| श्रीमहिजन | ५ |
| श्रीरुद्रवर्मस्य | २ |
| **२. सोनीपत** | |
| ···य···श्रीमहाराज(हर्षवर्द्धनः) | ७ |
| **३. अच्छेज (रोहतक)** | |
| करवीरेश्वरस्य | ८ |
| वे वें | ९ |
| **४. मोहनबाड़ी (रोहतक)** | |
| भ ॥ | १० |
| **५. नौरंगाबाद बामला** | |
| कक | २३ |
| जीवेकुणस भारद्वाजस | १७ |
| नगरभूति | १९ |
| पुष्यहस्थिस्य | २० |
| बलीयस | ४७८ |
| भूतिनिकाय | १८ |
| यौधेयानाम् | १३ |
| ,, | १४ |
| ,, | १५ |
| ,, | १६ |
| यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् | १२ |
| रक्क | २९ |
| रमसश्री | २२ |
| रैपतियौधेयजनपदप्रकृतानाकनगर | ११ |
| ···वपतिलक्ष···गकुमारकस्य | २१ |
| श्रीवृद्धस्य | २८ |
| श्रीहरिवरस | ३० |
| **६. अगरोहा** | |
| जुजु | ४२ |
| ददाकस्य | ४४ |
| नूनकुसला | ३५ |
| पावनेस रुद्रे घम | ४१ |
| पितृदत्त | ३२ |
| भद्रस्य | ४० |
| विसपालकस तपुविदशने | ३६ |
| शङ्करमलस्य | ३४ |
| श्रीततुण्य ॥ | ४५ |
| श्रीयाकस | ३७ |
| श्रीध्रुवा···र···मित्र ? | ५० |
| श्रीय्यौधेयगणपुरस्कृतस्य भट्टार-राजमहाक्षत्रपमहासेनापते राज्यमित्र-गृहीतस्य महाराजमहाक्षत्रपसेनापते-रप्रतिहतशासनस्य धर्ममित्रवसुवर्मणः (नयवर्मणः ?) | ३१ |
| श्रीशिवदरज ? | ४३ |
| श्रीसाधुवृद्धिस्य | ३३ |
| सिंहस | ३९ |
| हालेत गेया··· | ३८ |
| **७. राखी गढी** | |
| अशान्तो न पारघा उमा ? | ५१ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| तन स्योन नमः ? | ५१ |
| यधि जुई पुतश ? | ५१ |
| **८. थानेसर (दौलतपुर)** | |
| तूडिलस म ॥ | ५३ |
| श्रीबुधस्य | ५४ |
| स्थानेश्वरस्य | ५२ |
| **९. लुध्न (सुघ, अम्बाला)** | |
| कानशे | ५९ |
| खहरालपुत्रस कनबुज रस्पग ? | ५८ |
| घमय (घर्माय ?) | ६० |
| श्रीअरुण | ६३ |
| श्री··व | ६८ |
| सनकस | ६१ |
| हरिदेव | ६० |
| **१०. नन्दीपुर सिंहोल (लुधियाना)** | |
| जीववलस | ७२ |
| ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत्, तेषां च यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः | ७९ |
| रजतिरजस त्रदतस गुदफरस | ७१ |
| वियौवनवता ? | ७६ |
| श्रीगोमीश्वरस्य | ७४ |
| श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य | ७३ |
| श्रीभूमश्रवसः | ७५ |
| श्रीवुंद्विवसुस्य | ७८ |
| श्रीमंहाराजकपिलस नियुक्तस्याधिकरणस्य | ७० |
| **११. सुनेत्र (सुनेत, लुधियाना)** | |
| कमल श्रीमता ? | १३२ |
| काण्डेलकाकुमारस | १२५ |
| कुमार कुमार | ११४ |
| कृष्णघोष | २२५ |
| गङ्ग | १५८ |
| गङ्ग | २१४ |

| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| गङ्गभद्र | १५६ |
| गङ्गभद्र | २१३ |
| गोक्षुरक | ८८ |
| घोषस्य | १२८ |
| जय पचलय | १८९ |
| जयमित्र | ११९ |
| जातुवेद ? | १२७ |
| जितं भगवता | १३६ |
| (जितं) भगवता | १९० |
| (जितं) भगवता | १९१ |
| (जितं) भगवता | १९३ |
| जितं भगवता | २७० |
| दातव्य भोतव्यं | ८५ |
| दातव्यं भोतव्यं | ८६ |
| दाम | २१५ |
| दामिकस्य | २१८ |
| देवभद्रस काण्डेलकाकुमारस | १२५ |
| देवसेन | २२७ |
| देविलपुत्रस्य श्रीसत्यदेवस्य | २०३ |
| द्रोणशूरस्य लदख ? | १११ |
| धर्मकर्त्तव्य | ८१—८३ |
| नन्दसोमस्य | १३८ |
| नागदेव | १९६ |
| नौमि | १२० |
| वलभद्रस्य ? | २१७ |
| वुधमित्र | १०३ |
| म | २०८, २५७, २५८, २७१ |
| मन्त्रिमित्रघोष···? | १३४ |
| महतकटकर | १०४ |
| महासेनापति वर्म ? | १६५ |
| महेश्वर | १६६ |
| मातृः | १६१, २०५, २६९ |
| मातिशर्मा | २६७ |
| मातृशर्मा | १४३ |
| मित्रदेवस्य | १०६ |
| यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् | ८० |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| रवेः | १२१ |
| रुष्टस्य | ९० |
| राजाधिराज हुविष्क कुषाण | पृ० १५९, ४८७ |
| रुद्रशर्म | पृ० १६०, २११ |
| रुशम ? | १६८ |
| वसुवर्म | १७६, १७७ |
| वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य महासेनापतेर्व्वसुवृद्धपुत्रस्य जयसोमस्य केन्द्रस्थिरस्य | १८७ |
| वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य महासेनापतेः सोमगुप्तपुत्रस्य सत्यगुप्तस्य भृम्यत्रः ? | १८८ |
| विष्णुदासस्य श्रीशोणस्य | १७९ |
| विष्णुसोम | ९२ |
| शङ्करनारायणाभ्याम् | १०७ |
| ,, | २०६—२१० |
| श्री··· | २७२ |
| श्रीअतिमुक्तक | १४० |
| श्रीकान्तिस्याधि··· | २६६ |
| श्रीकृष्णदत्तस्य (श्रीकृष्णदत्तस्य) | १४९ |
| श्रीकुन्देश्वरस्य | २०२ |
| श्रीकुमार | ९७, ९८ |
| श्रीकुमारबोधिः | पृ० १५९, ४८४ |
| श्रीकुमारशर्म··· | १८५ |
| श्रीक्षेमस्य | २१९ |
| श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य | २०४, २१६ |
| श्रीजुज्जस्य | २१२ |
| श्रीदविलस्य | ९५ |
| श्रीदामस्य | २६३ |
| श्रीदासकोदिवरः | १५१ |
| श्रीधर्मस्य | ११३ |
| श्रीनन्दशिरिस्य | ८९ |
| श्रीनारायणदेवस्य | १९७ |
| श्रीनारायणस्य | १७३ |
| श्रीपृथ्वीवर्मस्य | १३७ |
| श्रीभजिल | ९६ |
| श्रीभववदेस्य | ४७७ |
| श्रीभूमश्रवसः | १३७ |
| श्रीमातृसोमस्य | १४६ |
| श्रीमित्रस्य | १२२ |
| श्रीमित्रसोमस्य | १७४ |
| श्रीमुल्लस्य | ११० |
| श्रीयशस | २२१ |
| श्री···यशस | २६५ |
| श्रीरतिमुतकस्य | १५९ |
| श्रीरतिमुतकस्य | २२२ |
| श्रीरवन्तभद्रस्य | ९९ |
| श्रीरविङ्कुतिद्वास ? | २०० |
| श्रीराज्यसोमस्य | १८१ |
| श्रीरामचन्द्रचन्द्रवौरत्रचन्द्रे ? | १९८ |
| श्रीरामिलस्य | ९३ |
| श्रीरार्य्यसोमस्य | ११५ |
| श्रीरिन्द्रगुप्तस्य | १८० |
| श्रीरीशानभद्रस्य | १५० |
| श्रीरुद्रदेवया | १४२ |
| श्रीरुद्रस्य | १४५ |
| श्रीर्गुप्तस्य | १०० |
| श्रीर्ज्जयसोमस्य | १६७ |
| श्रीर्जयसोम | ११८ |
| श्रीश्रार्नारायणस्य | १६९ |
| श्रीर्बुद्धिमित्रस्य | ९१ |
| श्रीर्बुद्धिवसुस्य | १८२ |
| श्रीर्मतिशर्मस्य | १०२ |
| श्रीर्मतिशर्मस्य | २६० |
| श्रीर्मतृभूतस्य | ११७ |
| श्रीर्मयदत्तस्य | १४७ |
| श्रीर्महाराज··· | २६४ |
| श्रीर्मातिशर्मस्य | ११६ |
| श्रीर्मातिशर्मस्य | २६८ |
| श्रीर्मात्रिशर्मस | १२९ |
| श्रीर्मात्रिशर्मस | १५२—१५५ |
| श्रीर्य्यात्रिसोमस्य | १७६, १७७ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| श्रीय्यौमीश्वरस्य | पृ० १५६, ४८६ |
| श्रीर्व्वन्वासिकस्य ब्रह्मिलस्य साधिकरणस्य | २२६ |
| श्रीर्वसुभट्टस्य | १७२ |
| श्रीविशण्डिकस्य | १०५ |
| श्रीविष्णुदासस्य | १६६, २१० |
| श्रीविष्णुसिंहशतपतेः | १४१ |
| श्रीविष्णुसिंहस्य | १८४ |
| श्रीव्याघ्रदत्तस्य सैपिवरस्य | १८३ |
| श्रीविष्णुदत्तस्य | १७८ |
| श्रीविष्णुभद्रस्य | १०१ |
| श्रीविष्णुवोम | १०८ |
| श्रीवीरयशस्य | १२४ |
| श्रीश्शंखस्य | १५७ |
| श्रीशंखस्य | २६२ |
| श्रीश्शर्मस्य | १३१ |
| श्रीशुद्धिलस्य | ६४ |
| श्रीश्रमवतीस्य | पृ० १५८, ४८३ |
| श्रीशोणस्य | १७६ |
| श्रीशौम्य | १७० |
| श्रीसत्यदेवस्य | २०३ |
| श्रीस्सिद्धेश्वरदासस्य | १६४ |
| श्रीसूर्यभद्रस्य स्य | २२८ |
| श्रीसूर्यस्य | १३६ |
| श्रीसोमगुप्तः | १७१ |
| श्रीसोमदेवसेघचक्र | ११२ |
| श्रीसोमस्य | १४४ |
| श्रीस्वामि··· | १२६ |
| श्रीस्वामिगुप्त | १०६ |
| श्रीस्वामिघोषस्य | १२३, २१४ |
| श्रीहरिगुप्तस्य | २६१ |
| श्रीहरिदासस्य | २२६ |
| ष | २३१ |
| सखिए ? सनिए ? | १३५ |
| सत्रप्तस्य | २०१ |
| सत्यवतव्य | ८४ |
| ससभायुज···पत्तन | पृ० १५८, ४८१ |
| सिद्धिरस्तु | ८७ |
| सु | २१६ |
| सोमेसरपुत्रस्य श्रीपृथ्वीवर्मस्य | १३७ |
| स्य | २२८ |
| स्वामिगुप्तभार्या श्रीरुद्रदेवया | १४२ |
| हरिशर्म्म | १६३, २२० |
| हरिशर्म | १६२, २०७ |


## १२. अहिच्छत्रा


| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| अग्निभुक | २७७ |
| अफस्य | २८३ |
| क···कय | २८२ |
| कविकस्य | २८० |
| ···कु··· | २६८ |
| कुमारनन्दपुत्रस्य देवनन्दस्य | ३०५ |
| कुमारामात्याधिकरणस्य | २८८ |
| कुम्हकारसेणायै | ३०४ |
| गोठभूतिस | २८७ |
| गोमिकुलागोत्रगृहीतमहाराजा-ह्लिलसुमित्रमहाराजसूर्यमित्र-महाराजश्रीभूमिमित्रश्रीमहाराजाच्युतस्य | २८४ |
| जवुलस्य | २६५ |
| जयते | ३०८ |
| दण्डनायक·· कत्र·· श्रीज म··· | ३२२ |
| दामिकस्य | २६७ |
| धर्मो रक्षति रक्षित | २७६ |
| नन्यकस्य | २८१ |
| नागगुप्त | ३०७ |
| पद्मनन्दि | २७६ |
| पशुपतिथश | २६६ |
| पुत्रिमित्र··· | २६१ |
| भद्रस्य | २८६ |
| महादिन | ३०२ |
| महिलस | ३०० |
| वंगपालस | २८५ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| वसुजरठिकस | ३०१ |
| विश्वमि ·· | २९४ |
| शङ्करदत्तस्य | २७८ |
| शावादिनकस्य | ३०३ |
| श्री··· | २९२ |
| श्रीदौद्धस्य | २९९ |
| श्रीमंहादण्डनायक ··मिमु | ३२४ |
| श्रीवरवीरदेवस्य | २८६ |
| सिहस | ३०६ |
| सुधर्म्ममहाविहारे | २९० |
| सुरिकसा ·· | ३२५ |
| स्थावरस्य | २९३ |
| हरनकरविहारे संघस | ३०९ |

## १३. कौशाम्बी

| | |
|---|---|
| अटक | ४०३ |
| अनामकस्य | ३२९ |
| अयदासस्य | ३३१ |
| इददिनश | ३५८ |
| इदमितस | ३५७ |
| इष्टदत्तस्य | ३७० |
| ईश्वरस्य | ३२७ |
| उता···कुसनन्दस | ३७७ |
| कडहल | ४०९ |
| करटस | ३७१ |
| कीर्तिभूतिस (लजवतीभूतस) | ३८६ |
| कुमारस्य | ३६२ |
| केशव(गुप्त) | ४०५ |
| केशवगुप्त | ३५६ |
| कौशाम्बिघोषिता(राममहा)विहारेभिक्षु(संघस्य) | ३४३ |
| कौशाम्बिमहा(विहारे) ·· प ·· | ३४४ |
| गमन··· | ४१४ |
| ग···समक | ४१२ |
| गिरिभूतिः | ३९४ |
| गोजिपडस | ३७६ |
| चावठिकः यं | ४१८ |

| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| जयघोषस्य | ३५५ |
| (जितं)भग(वता) | ३३८ |
| जितं भगवता वसुदेवेन | ३२८ |
| ·· टिकव | ३६९ |
| ···तरमितस | ४०७ |
| दतिकस | ४०४ |
| दीर्घवक्र | ३८८ |
| धर्म्म | ४०६ |
| ·· धि·· यकस्यपुर | ३४२ |
| नन्दिस | ३५३ |
| नागबलस्य | ३६५ |
| नागशर्म | ३६८ |
| निगमे | ३८९ |
| पटहद | ४१७ |
| पण्यलाभ | ३७२ |
| पद्मनाभ | ३७३ |
| परागि···वानश | ४१६ |
| ···परिय··· | ३७५ |
| पर्णमघः | ३३० |
| बगरगजपुघ ? | ४१० |
| भट्टिमितस | ३६३ |
| भरज्वाजस | ३८४ |
| भूतमोदके | ३९२ |
| भूतस | ४१३ |
| भूयतस | ३३३ |
| भोनुपुत्रवर्गघोष | ३६६ |
| मघवश | ३८५ |
| मडकस्य | ४२० |
| मतियश | ३८१ |
| महादण्डनायक ·· स्यस्यश्रियः | ३४१ |
| महाराजस्य कान्तिपुत्रस्य भवर ? | ३४७ |
| महाराज्ञः श्रीचेणुशिवसंघस्य | ३४० |
| मारिदत्त ? | ३९३ |
| यशनपादे | ३८३ |
| ·· या वे | ३९९ |
| ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत् | |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri




| लेख | चित्र सं० |
|---|---|
| तेषां च यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः। | ३४६, ३९६—३९८ |
| रजहयस | ४३९ |
| ···र···वस्य | ४११ |
| राजमितस | ३५९, ३८७ |
| राजमितस नगरभूते | ३५४ |
| राजमितस सिन्थाद्वारे | ३५१ |
| रुद्रपडितस्य | ४०२ |
| रुद्रहस्तिस्य | ३६४ |
| रुशदस्य | ४१९ |
| रोदकस्य | ४०० |
| लजवतीभूतस (कीर्तिभूतिस) | ३८६ |
| लाजु अहिमितस | ३८२ |
| लेवतीमितस | ३४९ |
| वक्रदेवदनु ? | ३३४ |
| ···वस | ३७१ |
| वर्गघोष | ३६७ |
| वाहस | ३३९ |
| विसघस | ३९० |
| वेडस | ३३५ |
| वैष्णवस्य | ४०१ |
| ··श घव | ३९१ |
| शडतत्यीस्य | ३३२ |
| शिरि सप्तनं कय···भ कणिस | ३६१ |
| श्रीमद्यशःकर्णदेवः | ३४५ |
| श्री···ष्वरः | ४०८ |
| शुमतयश | ३८१ |
| सघैः··· | ३७८ |
| सिंह | ३३६, ३३७ |
| सिदेवस म | ३६० |
| सेनसूख | ३७९ |
| सोमस्य | ३२६ |
| ··स्वितश | ४१५ |
| हथीपलशो | ३५० |
| हमतस | ३५२ |

**१४. प्रयाग**

| | |
|---|---|
| आनरकस? | ४५० |

**१५. लखनऊ**

| | |
|---|---|
| धनदेवस्य | ४५४ |
| ···धहव्यपा ? | ४५८ |
| नन्दस्य | ४६१ |
| पुष्यसरं | ४५६ |
| भट्टिमितस | ४६२ |
| रसिकस्य | ४५२ |
| ···वर | ४५७ |
| शूरगुप्त | ४५३ |
| शूरदम्य ? | ४५५ |

**१६. दिल्ली**

| | |
|---|---|
| अच्युतभद्रः + स्वामिनाग | ४७१ |
| (स्वामिनाग) | ४७२ |
| भट्टिमितस | ४७३ |

**१७. वाराणसी**

| | |
|---|---|
| ये धर्मा हेतुप्रभवा··· | ४६९ |

**१८. जौनपुर**

| | |
|---|---|
| श्रीघोमन्त्रम् | ४७० |

**१९. मथुरा**

| | |
|---|---|
| महाराजसेनापतिक्षेम ? | पृ० १५९, ४९० |
| रामनन्दि | ४८९ |


CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

## प्रथम अध्याय

# प्राचीन मुद्राङ्क परिचय

किसी भी देश का प्राचीन इतिहास शिलाखण्ड, ताम्रपत्र, मुद्राओं (सिक्कों), मुद्राङ्कों (मोहरों), गुफा, स्तम्भ, स्तूप, प्रतिमा, अवशेषपात्र, आयागपट्ट, ईंट तथा मिट्टी के पात्रों पर लिखे अभिलेखों द्वारा ही सुरक्षित रहता है। प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थ इतिहास की सुरक्षा में सर्वप्रथम स्थान रखते हैं। जैसे आर्यावर्त (भारतवर्ष) का इतिहास रामायण और महाभारत आदि ग्रन्थों द्वारा आज भी कितनी अच्छी प्रकार से हमें अपने पूर्वजों के ऐतिहासिक तथ्यों का प्रत्यक्ष दर्शन कराता है। ऐसा दिखाई देने लगता है कि पुरुषोत्तम राम, लक्ष्मण आदि रामायण के पात्र तथा भीष्मपितामह, योगेश्वर कृष्ण और युधिष्ठिर आदि महाभारत के पात्र हमारे सम्मुख ही खड़े हैं।

विद्या के शत्रु लोग पुस्तकालयों को जलाकर, मन्दिरों, प्रतिमाओं, स्तूपों और स्तम्भों को तोड़कर इन ऐतिहासिक तथ्यों का समूल विध्वंस कर डालते हैं। ऐसी अवस्था में किसी देश के लुप्त हुये इतिहास की टूटी हुई कड़ियों को पुनः जोड़ने वाले भूमि में से उत्खनन करके निकाले हुये अभिलेख ही होते हैं। इतिहास की सुरक्षार्थ जो कार्य ऐसी विकट परिस्थितियों में मुद्राङ्कों (मोहरों) ने किया है, वही इतिहासप्रेमी पाठकों के सम्मुख रखने का मेरा स्वल्प प्रयास है।

### मुद्राङ्कों की प्राप्ति

हमसे पूर्व भारतीय मुद्राङ्कों पर जो कार्य इतिहास के विद्वानों ने किया है, उसे देखकर इसी विषय में कुछ सेवा करने का प्रयत्न मैं भी कर रहा हूँ।

जो मुद्राङ्क (मोहरें Seals) भारत में मिले हैं और जिन पर विद्वानों ने लिखा-पढ़ी की है वह मेरे ज्ञान के अनुसार निम्न प्रकार से है :—श्री हीरानन्द शास्त्री, श्री डा० चक्रवर्त्ती, डा० वासुदेव उपाध्याय, एन० सी० सरकार, डा० किरणकुमार थपलियाल आदि विद्वानों ने मुद्राङ्कों (मोहरों) के विषय में अपने ग्रन्थों में लिखा है। भारतवर्ष में भिन्न-भिन्न स्थानों से जो मुद्राङ्क प्राप्त हुये हैं, उनका ब्यौरा निम्न प्रकार है :—

| | संख्या | स्थान |
|---|---|---|
| (१) | ७१० | वैशाली बसाढ (मुजफ्फरपुर बिहार) |
| (२) | ६९० | [3]नालन्दा विहार सं० ९ (बिहार) |

---

१. Basarh (ASIAR, 1903-D 4. P. 101), २. (Mas I 66. P. 36)

३. Nalanda has now given us thousands of seals and sealings in our excavations during the last 20 or more years (.Religious or monastic Seals) No. 66. Nalanda and its Epigraphic material p. 26 (by Hiranand Shastri)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हमें उत्तर भारत के विभिन्न स्थानों से जो मुद्राङ्क प्राप्त हुये वे गुरुकुल झज्जर और कन्या गुरुकुल नरेला के पुरातत्त्व संग्रहालयों में विद्यमान हैं। उनकी संख्या लगभग सब मिलाकर १४४० है। इनमें से सबसे अधिक मुद्राङ्क लुधियाना के निकट प्राचीन यौधेय दुर्ग सुनेत्र (सुनेत) के खण्डहरों से प्राप्त हुये हैं। हमारे मुद्राङ्कों का विवरण इस प्रकार है :—

| संख्या | स्थान | मण्डल | प्रान्त |
|---|---|---|---|
| ६ | रोहतक (खोखराकोट) (रोहतक नगर के निकट प्राचीन दुर्ग के खण्डहर) | रोहतक | हरयाणा |
| २ | अच्छेज (पहाड़ीपुर) | रोहतक | हरयाणा |
| १ | मोहनबाड़ी | रोहतक | हरयाणा |
| २० | नौरंगाबाद बामला | भिवानी | हरयाणा |
| २४ | अगरोहा | हिसार | हरयाणा |
| १ | राखीगढी | हिसार | हरयाणा |
| १५ | सुघ (स्रुघ्न) | अम्बाला | हरयाणा |
| २ | करनाल | करनाल | हरयाणा |
| ६ | सिंहोल | लुधियाना | पंजाब |
| १०३५ | सुनेत | लुधियाना | पंजाब |
| ५९ | अहिच्छत्रा | बरेली | (उत्तर प्रदेश) |
| १७४ | कुसम (कौशाम्बी) | इलाहाबाद | (उत्तर प्रदेश) |
| ६४ | लखनऊ | लखनऊ | (उत्तर प्रदेश) |
| २ | प्रयाग | इलाहाबाद | (उत्तर प्रदेश) |
| ४ | दिल्ली | दिल्ली | |
| ४ | कालीबंगा | श्री गंगानगर | (राजस्थान) |
| २१ | विविध स्थानों से प्राप्त | | |
| सर्वयोग १४४० | | | |
| ४ | दौलतपुर (ये मुद्रांक हमारे पास नहीं हैं) | कुरुक्षेत्र | (हरयाणा) |

इस प्रकार लगभग २० स्थानों से हमें १४४० मुद्रांक प्राप्त हुए हैं। इनमें से लगभग ५०० हम इस ग्रन्थ में प्रकाशित कर रहे हैं। ये मुद्रांक (मोहरें) बहुत वर्षों में तथा पर्याप्त धन व्यय करके इकट्ठे किये गये हैं। यह कार्य अत्यन्त परिश्रम साध्य है। मैंने सुनेत से प्राप्त मुद्रांक अनेक व्यक्तियों के पास तथा अनेक संग्रहालयों में देखे हैं। उनकी रुचि न स्वयं प्रकाशित करने की है, न वे इस कार्यार्थ किसी को आज्ञा ही दे सकते हैं। कई तो पत्रोत्तर देने में भी कष्ट मानते हैं।

## मुद्रांकों (मोहरों) का निर्माण

अधिकतर मुद्रांक (मोहरें) पकी हुई मिट्टी के मिलते हैं। रांगा, जस्त, ताम्बा, पीतल, कांस्य, प्रस्तर (पत्थर), रत्न, उप-रत्न और हाथीदांत के भी मुद्रांक बनाये जाते थे। सम्भव है पहले सोने, चांदी के भी बनते हों। हमें सोने का मुद्रांक अभी तक प्राप्त नहीं हुआ। हमारे पास चांदी का एक मुद्रांक (मोहर) मुस्लिम काल का है। शेष सब प्रकार के मुद्रांक हमारे संग्रहालय में हैं। जिस प्रकार पहले भी अन्य इतिहासकारों को उत्तरी भारत में वैशाली, कसिया (कुशीनगर), कोसम (कौशाम्बी), नालन्दा, राजघाट, भीटा, झूंसी (प्रयाग के समीप), सुनेत आदि स्थानों से प्राप्त हुये हैं। उसी प्रकार हमें भी उत्तरी भारत में विशेष रूप से प्राचीन हरयाणा के ब्रह्मर्षि देश के अन्तर्गत ही ये मुद्रांक मिले हैं। इनका निर्माण भी इसी प्रदेश में होता था। यौधेयों के मुद्रांक (मोहरें) सुनेत में भी बनते थे क्योंकि यौधेय और कुषाणों की मुद्राओं (सिक्कों) के निर्माणार्थ टकसाल भी सुनेत में थी। सहस्रों सांचे (ठप्पे (Moulds of coins) इस स्थान से हमें प्राप्त हुए हैं। रोहतक तथा नौरंगाबाद में भी यौधेयों की मुद्राओं (सिक्कों) की टकसालें थीं। हो सकता है मुद्रांक (मोहरें) भी यहीं बनते हों, इन खण्डहरों की पूर्ण खुदाई हो, तब ही यथार्थ ज्ञान हो सकता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## मिट्टी के मुद्रांक (मोहर)

हमारी अधिकतर मोहरें मिट्टी की बनी हुई हैं। कच्ची मिट्टी को पानी में भिगोकर उसका गोल, अण्डाकार, चतुष्कोण लम्बा वा किसी भी आकृति का पिण्ड बनाकर उस पर अपना अभीष्ट लेख, चिह्न या खुदा हुआ ठप्पा लगाया जाता था। पुनः उसे सुखाकर अग्नि में पकाया जाता था। विपरीत मुद्रांक (उल्टी मोहरें) गीली मिट्टी में अक्षर कुरेद कर (खोदकर) बनाये जाते थे। इन दोनों (उल्टी-सीधी) का नाम मुद्रांक (मोहर) कहलाता है।

किसी की प्रशस्ति लिखने के लिए भी मुद्रांकों का प्रयोग होता था। किसी व्यक्ति विशेष, समूह, संस्था, स्थान विशेष, शासक, सेनापति, राज्याधिकारी, ग्राम वा नगर जिस किसी का भी मुद्रांक बनाना होता, उसका पूर्ण वा संक्षिप्त विवरण और चिह्न विशेष को मिट्टी, धातु वा पत्थर आदि के मुद्रांक पर खोद देते थे और उसका प्रयोग करते थे।

## मुद्रांकों का प्रयोजन

आवश्यकतानुसार इन्हीं मुद्रांकों की छाप कागज, वस्त्र, चर्म, मोम, लाक्षा (लाख), मिट्टी आदि पर लगाकर प्रमाणित करते थे कि यह उस व्यक्ति वा संस्था से विशेष सम्बन्ध रखता है। हस्ताक्षरयुक्त मुद्रांकों (मोहरों) की छापें लगाकर भी कार्यसिद्धि होती थी। ये प्रमाणित करने तथा सूचना देने के कार्य में भी आते थे। इनका प्रयोग अधिकारी ही कर सकते थे। जिन पत्रों, विशेष गुप्त सूचनाओं वा लेखों को बन्द करके मुद्रांकित (Sealed) कर देते थे, उन्हें अनधिकृत व्यक्ति नहीं पढ़ सकता था। इसी प्रकार किसी वस्तु को किसी व्यक्तिविशेष के पास भेजना होता तो उस वस्तु को कागज वा वस्त्रों में लपेट वा सीकर धागे की गाँठ लगी हुई चिकनी मिट्टी वा लाख पर मुद्रांक की छाप लगा देते थे। जिससे उसके भीतर रक्खी हुई वस्तुओं की सुरक्षा होती थी। ऐसा करने का यह भी प्रयोजन था कि उसमें से कोई वस्तु चुराई अथवा बदली न जा सके तथा सुरक्षित रूप से अधिकारी व्यक्ति को मिल जाये। आज भी डाकघर, रेलवे पार्सल कार्यालय आदि में यह कार्य सभी लोग मोहर लगा कर करते हैं। डाकघर, कचहरी और दफ्तरों में मुद्रांक (मोहरों) का खूब प्रयोग होता है।

व्यापारी भी किसी चिह्न विशेष का मुद्रांक बनाकर अपनी व्यापार की प्रत्येक वस्तु पर लगा देते हैं, उन चिह्नों से युक्त वस्तु ही प्रामाणिक मानी जाती है। इन्हीं प्रामाणिक चिह्नों से व्यापारियों के व्यापार की वृद्धि होती है। अतएव सभी प्रसिद्ध उद्योग-पति और व्यापारी अपने मुद्रांकों का प्रयोग व्यापार वृद्धि के लिए खूब करते हैं।

## प्रवेश हेतु

किसी स्थान विशेष, नगर वा दुर्ग में प्रवेश करने के लिए ये मुद्रांक वा इनकी छापयुक्त पत्र आज्ञापत्र (Pass Port) का भी कार्य करते थे। किसी उच्च अधिकारी से भेंट करने की स्वीकृति भी इन्हीं के द्वारा प्रमाणित होती थी। देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में जाने के लिए आज भी आज्ञापत्र (पासपोर्ट-वीजा) बनाते हैं। इन पर भी उन-उन देशों के मुद्रांक (मोहरें) उन देशों में प्रवेशार्थ लगवाने पड़ते हैं। इसके विना कोई व्यक्ति किसी देश में जा ही नहीं सकता। यह रीति प्राचीन काल में भी थी। इसी भांति देश से बाहर निकलते समय भी मुद्रांक (मोहरें) और आज्ञापत्र प्रमाण रूप में दिखाने होते हैं। अब तो लोग छली, कपटी और झठे हो गये अतः प्रवेश पत्रों पर जाने आने वाले व्यक्तियों के चित्र भी लगाने पड़ते हैं।

## मुद्रांकों के भेद

**धार्मिक मुद्रांक**—धार्मिक मुद्रांक वे कहलाते हैं, जिनका सम्बन्ध धार्मिक संस्थाओं, संगठनों, मन्दिरों और विहारों से था। राज्य की ओर से भी धर्म प्रचारार्थ इस प्रकार के मुद्रांकों का निर्माण तथा प्रयोग किया जाता था। जैसे सुनेत से "धर्मकर्त्तव्य" धर्माचरण करना चाहिए, "सत्य वक्तव्य" सत्य बोलना चाहिए, "दातव्यं भोक्तव्यं" दान देना चाहिए तथा उपभोग भी करना चाहिए, ये मुद्रांक प्राप्त हुए हैं। "धर्मो रक्षति रक्षित" जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है, यह मुद्रांक अहिच्छत्रा से प्राप्त हुआ है। राज्य तथा धर्म प्रचारक संस्थाओं की ओर से इसी प्रकार सहस्रों धार्मिक मुद्रांक बनाकर धर्म प्रचार किया जाता था। इसी प्रकार के धार्मिक मुद्रांकों का प्रयोजन जनता में उच्च चरित्र का प्रचार करना ही था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



धार्मिक संस्थाओं में जाकर इस प्रकार के मुद्रांकों द्वारा धर्माचरण करने, सत्य बोलने और दान देने आदि की प्रतिज्ञायें करते थे, इनका आचरण करने के लिए दृढ़ संकल्प करते थे। उपासकों, यात्रियों और सत्सङ्गियों को स्मृतिचिह्न के रूप में भी ये मुद्रांक प्रदान किये जाते थे अथवा अपने दृढ़ संकल्प और प्रतिज्ञा को प्रकट करने के लिए यात्री लोग धार्मिक स्थानों पर लेकर जाते थे। इन्हीं मुद्रांकों को परस्पर एक दूसरे को उपहार रूप में देकर भी धर्मप्रचार किया जाता था।

आजकल भी प्रचारार्थ इसी भांति मुद्रांकों, मैडिलों और चित्रों पर आदर्श धर्म के उद्बोधक और शिक्षाप्रद मन्त्र, सूत्र आदि अंकित करके धर्म प्रचार किया जाता है। जैसे ओ३म्, गायत्रीमन्त्र तथा धार्मिक श्लोकों को चित्र, अंगूठी, बिल्ले और मैडल आदि पर लिखकर प्रचारार्थ दने का रीतिरिवाज आज भी भारत में ही नहीं अपितु कई देशों में है। अपने धर्म, सभ्यता और संस्कृति के प्रचार के लिए इस प्रकार के यत्न सदैव तथा सर्वत्र होते रहे हैं। प्राचीनकाल में भारत के अतिरिक्त मिश्र, सुमेरिया, बेबीलोनिया असीरिया, यूनान आदि देशों में भी अपने धर्म, संस्कृति और सभ्यता के प्रचारार्थ इसी प्रकार के मुद्रांकों का सर्वत्र प्रयोग होता था।

राजकीय मुद्रांक—गणराज्य, जनपद, निकाय, संस्था, राजा-महाराजा, सेनापति, महासेनापति, सामान्य राज्याधिकारी तथा राजकीय कार्यालयों के मुद्रांक उनके नाम, पद, बीरुद और प्रशस्ति आदि सहित हमें भी पर्याप्त संख्या में मिले हैं। जैसे यौधेयगण वा जनपद, वृष्णिराजन्यगण, मित्रवंशीयराजा, महासेनापति, महाराज और महाक्षत्रप आदि विशेषणों से युक्त मुद्रांक हमारे पुरातत्त्व संग्रहालय में भी हैं। पाठक इनका विवरण यथास्थान पढ़कर अपने ज्ञान में वृद्धि करेंगे। इन मुद्रांकों में "श्रीमद्यशःकर्णदेवः" लेख-युक्त मुद्रांक विशेष महत्त्व रखता है। यह भारी मुद्रांक चार ताम्रपत्रों सहित प्राप्त हुआ है। इस पर महाराजा के हस्ताक्षर भी हैं। मुद्रांक पर गजलक्ष्मी का अति सुन्दर चित्र बना है। इसी प्रकार सामान्य व्यक्तियों और छोटे राजकर्मचारियों आदि के भी पर्याप्त मुद्रांक हमें मिले हैं।

## इतिहास का स्रोत

मुद्रांक और मुद्रांकित पदार्थ प्राचीन इतिहास के स्रोतों वा साधनों में से एक प्रमुख साधन हैं। ये संस्कृति और धर्म की रक्षा के भी साधन थे, यह भी ज्ञात होता है। मुद्रांकों के द्वारा अनेक राजवंशावलियों का ज्ञान होता है। जैसे गुप्त राजा और हर्षवर्द्धन आदि के मुद्रांकों से सिद्ध है। शिलालेखों, ताम्रपत्रों और मुद्राओं (सिक्कों) की भाँति इनका भी महत्त्व कम नहीं है। जहां ये मुद्रांक प्रायः ऐतिहासिक होते थे वहां पौराणिक काल में जादू-टोने के रूप में भी लोग इन्हें गले में बांध लेते थे। जैसे मुद्रांक सं० ३ किसी को युद्धादि में जीतने के लिए बांधने के लिए दिया जाता होगा। अनेक मुद्रांकों के पीठ की ओर मूठ पर[1] छिद्र मिलता है, वे गले में बांधने के काम आती थी। दूसरा प्रयोजन इन का यह भी है कि इनको सुरक्षित रखने के लिए इनमें धागा बांधकर लटका दिया जाता था। तीसरा कारण यह है कि जब इनकी छाप गीली मिट्टी, लाख आदि में लगाई जाती थी, उस समय उठाने में कोई कठिनाई न हो अथवा छपा हुआ गीला लेख बिगड़ न जाये। धागा बंधा होने के कारण अथवा सछिद्र मूठ के कारण छाप लगाकर मुद्रांक को सरलता से उठा लिया जाता था।

कुछ मुद्रांकों पर लेख नहीं मिलते, किन्तु धार्मिक चिह्न[2] शंख, स्वस्तिक और चक्र आदि मिलते हैं। धार्मिक देवताओं के चित्र भी मिलते हैं जैसे शिव, विष्णु, ब्रह्मा, कार्तिकेय और उनके वाहन (ध्वजचिह्न) नन्दी, गरुड़, मयूर आदि। बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ भी महात्मा बुद्ध की मूर्ति तथा उनके उपदेश मुद्रांकों पर अंकित मिलते हैं। इस प्रकार के मुद्रांक हमें भी प्राप्त हुये हैं।

## मुद्रांकों की आकृतियां

मुद्रांकों का परिमाण छोटा-बड़ा अनेक प्रकार का होता है। इनमें बहुत बड़े, बहुत छोटे, भारी-हल्के, लम्बे, गोल,[3] चतुष्कोण, गेंद और नारंगी के आकार वाले मिलते हैं। एक लेख वाले मुद्रांक भी एक समान आकृतिके नहीं मिलते। जैसे "यौधेयानां जयमन्त्र धराणाम्" लेखयुक्त यौधेयगण का प्रसिद्ध मुद्रांक जो नौरंगाबाद बामला से हमें मिला, वह चतुष्कोण है। किन्तु अलक्जैण्डर

---

१. मूठ (हैंडल) और सछिद्र मूठ वाले मुद्रांक हमारे संग्रह में २० से अधिक हैं।
२. चिह्न वाले एक सौ से अधिक मुद्रांक हमारे संग्रहालयों में हैं।
३. हमारे संग्रहालयों में अधिकतर मुद्रांक वृत्ताकार (गोल) ही हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कनिंघम को सुनेत से जो मिला है वह गोल है। यह अब ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में है। "शंकरनारायणाभ्याम्" तथा "धर्मकर्त्तव्य" लख वाले अनेकों मुद्रांक हमें मिले हैं, उनकी भी अनेक आकृतियां हैं। इनके लेख भी एक समान नहीं। इससे ज्ञात होता है कि इनके निर्माता, लेखक तथा ठप्पे अनेक थे। भारत में अधिकतर ठप्पे से निर्मित मुद्रांक मिलते हैं।

मिश्र, यूनान आदि देशों में बेलनाकार मुद्रांक पर्याप्त संख्या में मिले हैं। इस प्रकार के मुद्रांक भारत में शायद ही कहीं मिले हों। ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में घुमाकर लगाने वाले बेलनाकार मुद्रांक पर्याप्त संख्या में विद्यमान हैं, जिन्हें देखकर मुझे बहुत ही आश्चर्य और हर्ष हुआ। भारत में बेलनाकार मुद्रांक मेरे देखने में नहीं आया। इनके अतिरिक्त चपटी गोलाकार, आयताकार, शुण्डाकार, वर्गाकार, बट्टन, बोतल और खम्भे के आकार वाले तथा गहरे खुदे हुए अंगूठी[1] के आकार वाले भी मुद्रांक मिलते है।

भारतीय विपरीत मुद्रांक ( उल्टी मोहरें ) गोल, चतुष्कोण आदि किसी भी आकार के हों ये सभी ठप्पे ( Stamp ) के समान साधारण, हल्के से दबाव से नीचे रखी किसी भी वस्तु पर अपनी छाप लगाते हैं। किन्तु बेलनाकार मुद्रांक चिकनी मिट्टी वा कागज आदि किसी वस्तु पर ऊपर से लपेटे जाते हैं अथवा शनैः शनैः उन पर घुमाने से अपने छाप छोड़ते हैं। मैसोपोटेमिया के निवासियों ने बेलनाकार मुद्राङ्कों को अच्छा माना और ऐसे ही मुद्राङ्क पर्याप्त संख्या में बनाये। किन्तु सीरिया देश ने निश्चय से एक प्रकार के मुद्राङ्कों को नहीं अपनाया। मिश्र, क्रीट तथा भारत में सिन्धुघाटी के लोगों ने ठप्पा ( Stamp ) मुद्राङ्कों को श्रेष्टतर मानकर इन्हीं का प्रयोग किया। भारत में तो एक तथाकथित सिन्धुसभ्यता के ही नहीं, सभी ऐतिहासिक मुद्राङ्क ठप्पा प्रकार के ही चालू रहे।

## मुद्रांकित करने के मुद्रांक

किसी वस्तु पर लेख की छाप लगाने [मुद्राङ्कित करने] वाले विपरीत लेख वाले मुद्राङ्क (Seals) हमें बहुत ही न्यून संख्या में प्राप्त हुए हैं। किन्तु लगाई गई छापें (मोहरें Sealings) बहुत संख्या में मिली हैं। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कि मुद्राङ्क (मोहरें Seals) बहुत कम प्रयुक्त होते थे, नहीं तो ये भी अधिक संख्या में मिलने चाहियें थे। हमें छाप (Stamp) लगाने वाले विपरीत मुद्राङ्क (उल्टी मोहरें) केवल ६३ प्राप्त हुए हैं। इन ठप्पों वाले विपरीत मुद्राङ्कों (Dies) के कम मिलने का एक कारण यह भी हो सकता है कि एक ठप्पा मुद्राङ्क [Seal] अनेक छापें [Stamp=Sealings] लगा सकता था, जिससे अधिक प्रयुक्त होने से घिसकर कार्य योग्य नहीं रहता होगा तो उसे उसका स्वामी वा उसकी मृत्यु के पश्चात् अन्य कोई अनुपयोगी जानकर नष्ट कर देता होगा। जिससे अनधिकारी व्यक्ति उसका अनुचित प्रयोग न कर सकें। इसलिए जो विपरीत मुद्राङ्क (उल्टी मोहरें Seals=Dies) किसी भी कारण से बच गये वा ऐतिहासिक दृष्टि से बचा लिए गए, वे ही अब प्राप्त होते हैं। यह भी सम्भव है कि भावुकता, कला, इतिहासरक्षार्थ अथवा अन्य किसी कारण से ये मुद्राङ्क नष्ट नहीं किये गये हों। सीधे मुद्राङ्क (छापें Sealings) जहां अधिक संख्या मिलते हैं, उनका निर्माण स्थान भी वहीं रहा होगा अथवा शासन व्यवस्था का केन्द्र, राजधानी वा व्यापार का केन्द्र भी वह स्थान हो सकता है। जहां धार्मिक[2] मुद्राङ्क अधिक मिलते हैं, वहां धर्म-प्रचार के केन्द्र मन्दिर, मठ अथवा धार्मिक संस्थाओं का बाहुल्य रहा होगा।

जहां से धर्म प्रचारक देश देशान्तरों और द्वीप द्वीपान्तरों में जाते रहते थे, वहां से इन धार्मिक मुद्राङ्कों को भी साथ ले जाते थे, जिससे वे स्वयं को धर्म प्रचारक प्रमाणित कर सकें। इसी कारण से "धर्मकर्त्तव्य" "सत्यवक्तव्य", "दातव्यं भोक्तव्यं" और "शङ्करनारायणाभ्याम्" आदि मुद्राङ्क अधिक संख्या में मिलते हैं। धार्मिक मुद्राङ्कों का नष्ट करना पाप भी माना जाता होगा, इसलिए भी ये अधिक संख्या में प्राप्त होते हैं। ग्राम, नगर वा देश की जनसंख्या के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति तक धर्म, सत्य और दान का उपदेश पहुँचाने की दृष्टि से भी इनका निर्माण अधिक संख्या में राज्य की ओर से करवाया जाता था।

## ठप्पे बनाने के पदार्थ

विपरीत मुद्राङ्क (उल्टी मोहरें=ठप्पे=Dies) बनाने के लिए चिकनी मिट्टी, ताम्बा, राँगा (जस्त), कांसा, पत्थर,

---

१. अंगूठी वाले भी लगभग दस मुद्रांक हमारे संग्रह में हैं।

२. हमें धार्मिक मुद्राङ्क केवल सुनेत से ही ५०० के लगभग मिले हैं। अहिच्छत्रा और कौशाम्बी के इनसे अतिरिक्त हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हाथी दांत, लकड़ी, रत्न-उपरत्न, चांदी और स्वर्ण आदि धातुवों का प्रयोग होता था। मुद्राङ्क बनाने के लिए अधिकतम प्रयोग चिकनी मिट्टी का ही होता था। क्योंकि मिट्टी से ठप्पे (सांचे) अल्पपरिश्रम तथा विना धन व्यय किए बन जाते हैं।

स्वर्णमुद्राङ्कों के विषय में इतिहास और साहित्य ही साक्षी हैं। किन्तु वे प्राप्त स्यात् ही किसी को हुए होंगे। सुनने में तो आये हैं, देखने में अभी तक स्वर्णमुद्राङ्क नहीं आये। मूल्यवान् धातु होने के कारण उनके स्वामियों की मृत्यु के उपरान्त अन्य उपयोगार्थ पिंघला लिए जाते होंगे। किसी खण्डहर की पूर्ण खुदाई करने से सम्भव है कहीं मिल भी जायें। रजत (चांदी) के मुद्राङ्क बहुत कम मिलते हैं, जो मिलते हैं वे मुस्लिम काल के हैं। प्राचीनकाल के कुमार गुप्त द्वितीय वा तृतीय का जो मुद्राङ्क मिला है, वह चांदी का बताया जाता है। कुछ उसे चांदी और ताम्र मिश्रित मानते हैं।

[1]हाथीदांत के मुद्राङ्क भी बहुत न्यून बनते थे। ऐसे मुद्राङ्क धनी मानी लोग बनवाते होंगे। किसी को हाथी दांत का गोल ऐसा मुद्राङ्क भी मिला है जिस पर ताम्बा लगा है, सम्भव है वह ताम्बे की अंगूठी में लगा हुआ होगा जो अब काल के थपेड़ों से टूट गया है।

[2]अस्थी (हड्डी) और कठोर छिलके वाले पदार्थ (शंख, सीप, मूंगा आदि) के मुद्राङ्क कभी ही मिलते हैं। पीतल के भी मुद्राङ्क बनते थे, किन्तु बहुत ही न्यून। [3]पत्थर और मूल्यवान् रत्नों के भी (मुद्रांक) बनते थे। हमारे संग्रह में भी कुछ ऐसे मुद्राङ्क हैं। [4]ताम्र, सीसा[5] (रांगा=जस्त) के भी कुछ मुद्राङ्क हमें मिले हैं। जिस मसाले से हड़प्पा आदि के मुद्राङ्क (Seals) बने हैं, उस फेइंस (Faience) का बना एक पूर्ण मुद्राङ्क तथा दो अन्य टुकड़े कालीबंगा से हमें प्राप्त हुए हैं। वे तथाकथित सिन्धु सभ्यता से सम्बन्धित हैं। गणराज्यों का कोई मुद्राङ्क वा छाप इस मसाले का बना अभी तक हमें नहीं मिला है। लकड़ी के मुद्राङ्क भी यहां अवश्य बनते होंगे, किन्तु भारतीय जलवायु के कारण उनका अस्तित्व मिट गया है। मध्य एशिया में इस प्रकार के काष्ठमुद्राङ्क मिले हैं।

## मुद्रांक डाइयों का रूप तथा परिमाण

ठप्पे (विपरीत मुद्राङ्क Seals) विभिन्न प्रकार, अनेक रूप और परिमाणों के हमें तथा अन्य लोगों को मिले हैं। ये ठप्पे ½ इञ्च से लेकर ६ इञ्च से अधिक माप तक मिलते हैं। इनके परिमाण में बहुत विभिन्नता है। ये मुद्राङ्क ठप्पे आयताकार, वर्गाकार, झींगुराकार, शुण्डाकार, बट्टनाकार, स्तम्भाकार, गहरी खुदी अंगूठी जैसे, अंगूठी के ऊपर बने विभिन्न आकार के नगों सदृश, गोल, चपटे, बोतल सदृश और नारंगी सदृश आकार वाले देखने में आते हैं।

चिह्न और लेख वाला स्थान प्रायः अण्डाकार होता है। कहीं कहीं गोलाकार, वर्गाकार और आयाताकार भी मिलता है। जिस पदार्थ वा पिण्ड पर छाप वा लेख होते हैं वे किसी भी आकार के हो सकते थे, जैसे अण्डाकार, गेंदाकार, चतुष्कोण, अथवा टेढा-मेढा इत्यादि।

## निर्माण विधि

पत्थर, हड्डी, सीप, शंख, रत्न-उपरत्न और हाथी दांत के सदृश कठोर वस्तुवों वा पदार्थों पर जो मुद्राङ्क बनाये जाते थे, उनके निर्माण में कुछ विशेष क्रियायें करनी होती थीं। जिस पदार्थ का मुद्राङ्क (Seal) बनाते, उसमें से कुछ भाग काट लेते थे। उसी के दूसरे भाग को पीसकर उसका मर्दन (पालिश) करते थे। जो लेख, चित्र, चिह्न आदि उस पर खोदना होता था, उसे हीरे की कणी आदि विशिष्ट साधनों से खोदते थे। उसके पकड़ने की मूठ (Handle) में एक छिद्र कर देते थे, जिससे छाप लगाकर सरलता से उठाया जा सके। उस छिद्र में धागा या कड़ा ( छल्ला ) भी डालते थे, जिससे कार्य करने के पश्चात् उसे यथास्थान

---

१. हाथी दांत के ७ मुद्रांक सिंहोल और कौशाम्बी से हमें मिले हैं।
२. अस्थी (हड्डी) का बना एक मुद्रांक हमें कौशाम्बी से प्राप्त हुआ है।
३. पत्थर तथा मूल्यवान् गोमेदक और अकीक आदि के ६ मुद्रांक कौशाम्बी सुनेत और अहिच्छत्रा से हमें प्राप्त हुये हैं।
४. ताम्र (ताम्बा) तथा कांस्य के १२ से अधिक मुद्रांक नौरंगाबाद, अगरोहा, सुनेत, अहिच्छत्रा और कौशाम्बी से हमें मिले हैं।
५. सीसा (रांगा व जस्त) के दो मुद्रांक नौरंगाबाद से प्राप्त हुये हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सुरक्षित खूंटी आदि पर लटकाया जा सके। जिन लेख और चित्र युक्त नग आदि में कोई छिद्र या मूठ नहीं होती उन्हें अंगूठी में जड़ कर प्रयुक्त करते थे जैसे "धर्मो रक्षति रक्षित"[1] सं० २७६ का मुद्राङ्क।

चिकनी मिट्टी के विपरीत मुद्राङ्क बनाने में अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती थी। हां! लेख खोदने और चित्र वा चिह्न की कलाकारी करने में विशेष सावधानी वर्तनी पड़ती थी। क्योंकि लेखादि उल्टे खोदने पड़ते थे, जिससे छाप लगने पर (मुद्राङ्कित होने पर) ये सीधे दिखायी दें तथा स्पष्ट पढ़े जा सकें। ये छापें मसी (स्याही) के द्वारा कागज वा कपड़ों पर लगाई जाती थी। विना स्याही के गीली मिट्टी, लाख और मोम आदि पदार्थों पर लगाली जाती थीं।

## मुद्रांकन कर्त्ता

मुद्राङ्कों पर जो लोग लेख और चित्रादि खोदते थे, उन शिल्पियों का नाम किसी मुद्राङ्क पर अभी तक देखने में नहीं आया। लगभग डेढ़ सहस्र मुद्राङ्क तो मैंने स्वयं देखे हैं। इसका कारण यह है कि मुद्राङ्क बनाने वाले लोग पेशेवर थे, उनसे राज्याधिकारी आदि मुद्राङ्क बनवाते थे, अतः लेखक अपना नाम उन पर नहीं लिख सकते थे। जैसे आजकल भी मोहरें बनाने वाले कहीं अपना नाम नहीं लिखते। हां! शिलालेख और ताम्रपत्रों में बहुधा लेख खोदने और कुरेदने वाले का नाम मिलता है जैसे आजकल भी चित्रकार चित्रों के कोणों पर छोटे अक्षरों में अपना नाम लिख देते हैं। उस समय के लेखक वा शिल्पी प्रायः अपने नाम की अपेक्षा मुद्राङ्क आदि के गुण, उद्देश्य और निर्माण कार्य को अधिक महत्त्व देते थे, नाम को नहीं।

मुद्राङ्क सं० १७७ के किनारे पर बराबर की ओर छोटे अक्षरों में "वसुवर्म" लिखा है, सम्भव है यह मुद्राङ्क निर्माता का नाम हो, अथवा कोई छोटा अधिकारी रहा होगा।

मुद्राङ्क बनाने वाले शिल्पियों ने विपरीत अक्षर खोदते समय कहीं-कहीं भूल से सीधे अक्षर भी खोद दिए हैं, जिससे छाप लगाने पर अन्य सीधे अक्षरों के मध्य वे उल्टे दिखलाई पड़ते हैं। जैसे मुद्राङ्क सं० ३०५ पर पुत्र शब्द भूल से सीधा खोद दिया गया है।

## मुद्रांकों के विशेष लक्षण

मुद्राङ्क और उनकी छापों (Seals and Sealings) पर अभिलेख, चित्र अथवा दोनों (लेख+चित्र) होते हैं। चित्र एक अथवा अनेक प्रतीकों को प्रकट करते हैं। चित्र प्रायः मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, शस्त्रास्त्र, मन्दिर, चैत्य, शंख, कच्छप, वृश्चिक आदि के मिलते हैं। मानवाकृतियों में शिव, विष्णु, ब्रह्मा आदि विद्वान् और देवों के तथा राजा, रानी और अन्य राज्याधिकारियों के मिलते हैं। जिन मुद्रांकों में लेख और चित्र दोनों होते हैं उनमें प्रायः चित्र ऊपर तथा लेख नीचे होता है। कभी-कभी इससे विपरीत भी देखने में आता है, जैसे ऊपर लेख तथा नीचे चित्र। देखिए मुद्राङ्क सं० १, १२ से १६, १९ और १३७। कहीं कहीं चित्र और लेख को पृथक् करने के लिए एक, दो वा तीन समानान्तर रेखायें दोनों के मध्य डाल दी जाती हैं। जैसे मुद्राङ्क सं० ७, ३२ और १८७ के चित्र और लेखों के मध्य हैं। कभी-कभी लेख का आधा भाग ऊपर तथा आधा भाग चित्र या चिह्न के नीचे होता है जैसे मुद्राङ्क सं० ५८ और ३७७। यह क्रम यौधेयगण की "यौधेयानां बहुधान्यके" लेख वाली मुद्राओं पर भी मिलता है। नन्दी के चित्र के ऊपर "यौधेयानाम्" तथा नीचे "बहुधान्यके" लेख है। यही लेख नन्दी के चारों ओर भी देखने में आया है जैसा कि "यौधेयगणस्य जय" लेख वाली मुद्राओं में है। ऐसी एक मुद्रा हमारे संग्रह में है। किन्हीं मुद्रांकों पर चिह्नों के मध्य लेख लिखा मिलता है, अर्थात् ऊपर नीचे चिह्न हैं और उनके मध्य लेख हैं, जैसे मुद्राङ्क सं० २० और ७२ पर। कुछ मुद्राङ्क ऐसे भी मिलते हैं जिन पर लेख चित्र अथवा चिह्न के चारों ओर लिखा मिलता है, जैसे घड़ियों के अंक होते हैं, उसी प्रकार। देखिए मुद्राङ्क सं० ३५१, ३५४, ३६१, ३८२ से ३८४, ३८६ और ३९४। यही प्रकार कार्तिकेय के चारों और लिखे "यौधेयगणस्य जय" मुद्राओं पर देखा जा सकता है। लेख प्रायः एक और दो, तीन, चार वा पांच समानान्तर रेखाओं में लिखे मिलते हैं जैसे मुद्रांक सं० १८३, १८७, २८४ और ३१ देखिये। एक पंक्ति का लेख प्रायः कहीं भी देखा जा सकता है। किसी मुद्राङ्क पर चारों कोनों में एक-एक अक्षर भी लिखा मिलता है जैसे मुद्राङ्क सं० ३५२ पर। कभी-कभी मुद्राङ्क के चारों पक्षों पर एक-एक अक्षर लिखा मिलता है जैसे सं० ३ पर "वि ज य ते" ये चारों अक्षर

---

१. अकीक का मुद्रांक अहिच्छत्रा से प्राप्त, अंगूठी का नग।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तिकोने मणके सदृश सछिद्र मुद्राङ्क पर पृथक् पृथक् पक्ष में लिखे हैं। एक मुद्राङ्क पर लेख के ऊपर सिंह का चित्र भिन्न प्रकार से बनाया गया है, ऐसा उदाहरण अन्यत्र देखने में नहीं आया, जैसे मुद्रांक सं० १८१ पर।

## मुद्रांकों के अभिलेख

मुद्राङ्कों पर प्रायः लेख एक वा दो पंक्तियों में लिखे मिलते हैं। तीन वा इससे अधिक पंक्तियों वाले लेख प्रायः उन मुद्राङ्कों पर मिलते हैं जिनमें शासकों, पीढियों, विशेष गुणी राज्याधिकारियों, पवित्र मन्त्रों वा सूत्रों का उल्लेख होता है, जैसे मुद्राङ्क सं० २८४, ७, ३१, ३४६ और ३९६ आदि। दो पंक्ति के लेखों में भी पिता पुत्रों के नाम मिलते हैं, जैसे मुद्राङ्क सं० २०३, ३०५ और ३६६। निजी मुद्रांकों पर बहुधा उनके स्वामियों के नाम होते हैं जैसे प्रायः इस ग्रन्थ में देख सकते हैं। कभी-कभी वे अपने पद, उपाधि और बीरुदों से विभूषित होते हैं जैसे मुद्राङ्क सं० १४१, ३१, १८७ और १८८ इत्यादि अनेक मुद्राङ्कों में देखा जा सकता है। किन्हीं अवस्थाओं में मुद्राङ्क पर स्वामी के नाम के साथ-साथ उसके पिता, माता, भ्राता और पत्नी का भी नाम मिलता है जैसे मुद्राङ्क स० ७ पर। कुछेक मुद्राङ्कों पर उस व्यक्ति के नाम के साथ उस क्षेत्र का भी नाम लिखा मिलता है जहाँ का वह निवासी था, जैसे मुद्राक सं० ३६ पर "तपु विदशने" किसी स्थान का वाची हो सकता है जैसे "यौधेयानां बहुधान्यके" और "यौधेयानां भूमधान्यके" इन मुद्राओं पर यौधेयों के बहुधान्यक=भूमधान्यक देश का नाम है।

कुछ मुद्राङ्कों पर उस स्थान और विहार चैत्य आदि का नाम भी मिलता है जहां से वे प्राप्त हुए हैं, जैसे मुद्रांक सं० १, ८, ११, २९०, ३०९, ३४३, ३४४ और ३५१ पर।

## लेखों की विशिष्टतायें

मुद्राङ्कों के लेखों में अनेक स्थानों पर "श और ष" अर्थात् तालव्य और मूर्धन्य के स्थान पर दन्त्य सकार दिखाई देता है और दन्त्य सकार के स्थान पर तालव्य शकार दिखाई देता है जैसे मुद्राङ्क सं० ३५०, ३५८, ३८१ और ३८५। यह प्रकार प्रारम्भिक मौर्य लेखों में मिलता है। इसी प्रकार श और ष का भी विपर्यय मिलता है।

नकार के स्थान पर णकार का प्रयोग भी मिलता है जैसे मुद्राङ्क सं० ३०४ में "सेनायै" के स्थान पर "सेणायै" लिखा है। श्री के स्थान पर श्रीर् का प्रयोग अनेक मुद्राङ्कों में मिलता है। जैसे ३१,[1] १४१, १८०, १८३ और २२२ आदि। रेफ के आगे जकार, मकार, यकार और वकार का द्वित्व भी देखा जाता है, जैसे मुद्रांक सं० १६७, १३१, ३१ और २२९। इकारान्त, उकारान्त और नकारान्त पदों के षठ्यन्त रूप अकारान्त की भांति लिखे मिलते हैं, जैसे मुद्राङ्क सं० १, २०, ३३, ७८ और १२९। ये अशुद्ध नहीं हैं, किन्तु ग्रामीण प्रचलित प्राकृत भाषा के रूप हैं।

इस प्रकार के उदाहरण गुप्तकाल तथा तदनन्तर काल के मुद्रांकों में पर्याप्त मिलते हैं।

## मुद्राङ्कों की प्राचीनता

भारतवर्ष में आदि सृष्टि से ही मुद्राओं और मुद्रांकों का प्रचलन रहा है। उनका एक रूप यह भी था कि उसे अंगुलीयक (अंगूठी) में लगा लिया जाता था। वाल्मीकीय रामायण जो भारतवर्ष का आदि काव्य माना जाता है के समय तो मुद्रांकों का प्रचलन बहुत अच्छी प्रकार से था। मुद्रांकों पर नाम भी होते थे। जब मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने श्री हनुमान् को अपना दूत बनाकर सीता की खोज के लिए लंका में भेजा, उस समय श्री राम ने अपने नाम की अंगूठी श्री हनुमान् को दी थी, वहाँ लिखा है—

ददौ तस्य ततः प्रीतः स्वनामाङ्कोपशोभितम्।
अंगुलीयमभिज्ञानं राजपुत्र्याः परन्तपः॥ रा० कि० काण्ड ४४।१२॥

शत्रुवों को तापित करने वाले श्री राम ने हनुमान् को अपने नाम से अंकित अंगूठी सीता को विश्वास कराने के लिए दी और कहा—

अनेन त्वां हरिश्रेष्ठ चिह्नेन जनकात्मजा।
मत्सकाशादनुप्राप्तमनुद्विग्नानुपश्यति॥१३॥

---

१. श्रीयौधेयगण.....।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हे वानरश्रेष्ठ हनुमान् इस अंगूठी को देखकर सीताजी तुम्हें मेरे पास से आया हुआ जानेंगी और विश्वास करके मिलेंगी।

इसी प्रकार हनुमान् लंका में अशोक वाटिका स्थित सीता जी से मिला और अपना परिचय राम की प्रशंसा करते हुए दिया। पुनः श्री राम का संदेश कह सुनाया और माता सीता को कोई सन्देह न रह जाये, इसलिए विश्वास दिलाने के लिए नम्र हो सीता जी से इस प्रकार कहा—

वानरोऽहं महाभागे दूतो रामस्य धीमतः।
रामनामाङ्कितं चेदं पश्य देव्यंगुलीयकम्॥ सुन्दरकाण्ड ६३।२॥

हे महाभागे! मैं वानर हूँ और बुद्धिमान् श्री रामचन्द्र जी का दूत हूँ। हे देवी! देखो श्री राम के नाम से अंकित यह अंगूठी है।

यहां स्पष्ट लेख है कि मुद्रा पर राम नाम अङ्कित है, वा लिखा हुआ है। श्री हनुमान् स्वयं कहते हैं—

प्रत्ययार्थं तवानीतं तेन दत्तं महात्मना।
समाश्वसिहि भद्रं ते क्षीणदुःखफला ह्यसि॥ सुन्दर काण्ड ६३।३॥

हे माता सीता! तुम्हें विश्वास दिलाने के लिए श्री रामचन्द्र जी ने यह अंगूठी मुझे दी थी। सो मैं लाया हूँ, अब तुम अपने चित्त को सावधान करो और समझलो कि तुम्हारे सब दुःख दूर हो गये हैं।

गृहीत्वा प्रेक्षमाणा सा भर्तुः करविभूषणम्।
भर्तारमिव सम्प्राप्ता जानकी मुदिताऽभवत्॥ सुन्दर काण्ड ६३।४॥

अपने पति की शोभा बढ़ाने वाली उस अंगूठी को अपने हाथ में ले और देख कर जानकी जी को जान पड़ा, मानो श्री रामचन्द्र जी ही उनसे आ मिले हैं। इस से सीता जी बहुत प्रसन्न हुईं॥४॥

महाकवि कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तल में महाराज दुष्यन्त और शकुन्तला की कथा प्रसंग में दुष्यन्त के नाम से अंकित अंगूठी का विशेष स्थान है। नामाङ्कित अंगूठियों का प्रचलन उस समय भी था, यह इससे स्पष्ट सिद्ध है। धीवर को मत्स्य के उदर से जो राजा के नाम युक्त अंगूठी मिली थी उसे देखकर राजपुरुषों ने धीवर से कहा—

अरे कुम्भलिक! कथय कुत्र त्वया एतन्महामणिप्रभासुरमुत्कीर्णनामाक्षरं राजकीयमंगुलीयकं समासादितम्? (अभिज्ञान-शाकुन्तल अङ्क ५) यहां राजा के नाम से युक्त अंगूठी का स्पष्ट उल्लेख है। इसी ग्रन्थ में "नाममुद्रा" पद छठे अङ्क में आया है, जिसका अर्थ टीकाकर ने किया है—भेजने योग्य पत्रादि पर भेजने वाले व्यक्ति की जानकारी के लिए उसके नाम से युक्त अंगूठी लगाई जाती थी। इसी अङ्क में विदूषक राजा दुष्यन्त से पूछता है कि यह नामांकित मुद्रा किस उद्देश्य से शकुन्तला के हाथ में दी थी। इसका उत्तर राजा इस प्रकार देता है—

एकैकमत्र दिवसे दिवसे मदीयं
नामाक्षरं गणय गच्छसि यावदन्तम्।
तावत् प्रिये मदवरोधनिदेशवर्त्ती
नेता जनस्तव समीपमुपैष्यतीति॥ अभि० शा० ६.१२॥

इस तपोवन में रहती हुई तुम एक-एक दिन हमारे नाम के एक-एक अक्षर गिनो। तुम इसके सब अक्षर गिनती ही रहोगी कि इसी बीच हमारा अन्तःपुर का कोई सेवक तुम्हें ले जाने के लिए तुम्हारे पास आएगा। इसी उद्देश्य से मैंने यह अंगूठी शकुन्तला को दी थी।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महाभारत से पूर्व और पश्चात् भी नामांकित अंगुलीयकों (अंगूठियों) का प्रचलन था और वे पत्रादिकों पर भी लगाई जाती थीं।

अमरकोष के अनुसार "साक्षरांगुलिमुद्रा स्यात्।" अंगुलिमुद्रा=अंगूठी अक्षर अर्थात् नाम से युक्त होती है, यह सिद्ध है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्राङ्क से अङ्कित पत्रों के द्वारा नगर और राजद्वार में प्रवेश होता था, यही बात मुद्राराक्षस[1] के पञ्चम अङ्क में लिखी है क्षपणक सिद्धार्थक को कहता है—

कुसुमपुरे न कोऽप्यमुद्रालाञ्छितो निर्गन्तुं प्रवेष्टुं वानुमोद्यते,
तद् यदि भागुरायणस्य मुद्रालाञ्छितस्तदा गच्छ विश्रब्धोऽन्यथा तिष्ठ।

अर्थात् कुसुमपुर में कोई भी व्यक्ति राजमुद्रा से स्वीकृत स्वीकृतिपत्र के विना आ जा नहीं सकता, अतः यदि तुम्हारे पास भागुरायण द्वारा प्रदत्त आज्ञा पत्र है तो निस्संकोच जा सकते हो, अन्यथा नगर से बाहर ही खड़े रहो।

इसी प्रकार उक्त ग्रन्थ में अमात्य राक्षस की मुद्रा से मुद्रित पत्र और आभूषण मञ्जूषा ( पेटी ) की चर्चा है। इसी मुद्राङ्क के बल से नीति द्वारा चाणक्य मुनि ने नन्दवंश का समूल उच्छेद किया था।

---

१. महाकवि विशाखदत्त कृत मुद्राराक्षस नाटक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

## द्वितीय अध्याय

# ब्रह्मर्षि देश के मुद्रांक

हमें जो मुद्राङ्क (मोहर) प्राप्त हुए हैं, वे प्रायः सभी ब्रह्मर्षि देश के पुराणे उजड़े हुये दुर्गों से ही मिले हैं। आर्यावर्त देश का मुख्य और विशेष भाग, जहां आर्यों की प्राचीन वैदिक संस्कृति का सर्वप्रथम प्रादुर्भाव, उत्पत्ति, प्रचार और प्रसार हुवा, वह ब्रह्मर्षि देश ही था। मनु जी महाराज इसके विषय में लिखते हैं :—

**कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पाञ्चालाः शूरसेनकाः।**
**एष ब्रह्मर्षिदेशो वै आर्यावर्त्तादनन्तरः॥** मनुस्मृति अ० २। श्लोक १९॥

कुरुक्षेत्र, मत्स्यदेश अर्थात् अलवर और जयपुर का कुछ भाग, पाञ्चाल (बरेली के निकटवर्ती बदायूं, एटा, मैनपुरी, शाहजहांपुर आदि) जहां पर उत्तर पाञ्चाल की उजड़ी हुई राजधानी अहिच्छत्रा के खण्डहर ऊंचे नीचे टीलों के रूप में पड़े हैं, शूरसेनक (मथुरा, भरतपुर, धौलपुर के आसपास का क्षेत्र) ये चारों मिलकर ब्रह्मर्षि देश कहलाता था। ये सभी प्रदेश प्राचीन हरयाणे के अन्तर्गत ही थे। इनका बहुत-सा भाग तो १८५७ के प्रथम स्वातन्त्र्य युद्ध के पश्चात् अंग्रेजों ने हरयाणे के टुकड़े-टुकड़े करके विलग कर डाला। हरयाणा तो बहुत विशाल प्रदेश था और इसी में ब्रह्मर्षि देश आ जाता था, जिसमें सहस्रों ऋषियों के आश्रम, गुरुकुल[1] और विद्यालय विद्यमान थे। उन ऋषियों के उजड़े हुए आश्रमों के सैंकड़ों खण्डहर आज भी हरयाणा प्रदेश में विद्यमान हैं, जिनकी खोज हम अनेक वर्षों से कर रहे हैं।

जिला रोहतक में एक प्रसिद्ध स्थान बेरीग्राम है, उससे ५, ६ मील की दूरी पर दूबलधन ग्राम है, जहां पर महर्षि दुर्वासा के नाम से आश्रम बना हुआ है। यह दूबलधन ग्राम महर्षि दुर्वासा की तपोभूमि था। वहां के ग्रामीण लोग जब दुर्वासाश्रम में कुंवा खोदने लगे तो उन्हें खोदते-खोदते ३५ हाथ नीचे तक की भूमि में हवन की राख (भस्म) ही मिलती चली गई। यही संभव है कि उस सत्र=बृहद्यज्ञ जिसे पौराणिक भाई कहते हैं कि ८० हजार वर्ष तक महर्षि दुर्वासा यहां करते रहे, का स्थान यही हो। ८० सहस्र वर्षों के स्थान पर ८० वर्ष तक अथवा इससे अधिक लम्बा यज्ञ यहां चलता रहा होगा। खुदाई में निकली हुई यज्ञ की राख इसके लिये साक्षी है।

जिला रोहतक में (अब सोनीपत जिला बनने से इसमें आ गया है) सतकुम्भा नाम का स्थान है, जो बहुत बड़े-बड़े खण्डहरों (टीलों) के रूप में पड़ा हुआ है, वह गन्नौर स्टेशन से पश्चिम में लगभग तीन-चार मील की दूरी पर है। वह स्थान ग्राम अहीर माजरा और गूजरखेड़ी के मध्य में है। वह प्राचीन उजड़ा हुवा दुर्ग है, वहाँ एक शिवालय बना हुआ है तथा एक छोटा-सा

---

१. पुरा कृतयुगे राजन्नार्ष्टिषेणो द्विजोत्तमः।
वसन् गुरुकुले नित्यं नित्यमध्ययने रतः॥ महा० शल्य० ४०।३॥
सरस्वती के तट पर यह गुरुकुल स्थित था, जहां आर्ष्टिषेण ने विद्याध्ययन किया।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सप्तर्षि सरोवर है, जिस पर प्रतिवर्ष मेला लगता है। पौराणिक भाइयों का तीर्थ स्थान है। यहाँ सप्तर्षियों ने तपस्या की थी और उनके आश्रम भी थे। जिनके निम्नलिखित नाम हैं—

मरीचि, वसिष्ठ, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह और ऋतु। ज्योतिषशास्त्र के सप्तर्षि जो सात तारे हैं उनके भी ये ही नाम हैं। सम्भव है एक-एक महर्षि ने एक-एक तारे पर अन्वेषण किया होगा अतः तारों के नाम से महर्षियों के भी वे ही नाम हो गये।

इसी प्रकार जिला महेन्द्रगढ़ में नारनौल से चार मील की दूरी पर ढौसी नदी के तट पर स्थित ढौसी पर्वत पर महर्षि-च्यवन का आश्रम था, जहां आज तक प्रतिवर्ष महर्षि च्यवन के नाम पर वार्षिक मेला (धार्मिक उत्सव) लगता है और स्मारक रूप में च्यवन आश्रम भी बना हुवा है। यह महर्षि च्यवन की तपोभूमि मानी जाती है। महर्षि भृगु के वंश में उत्पन्न हुए इस महर्षि च्यवन को ही हरयाणे के भार्गव अपना आदि पुरुष मानते हैं। हरयाणा में भार्गवों को ढौसेर कहते हैं, इन्हीं में वीर पुरुष हेमू ने जन्म लिया था। महर्षि च्यवन की वंशावली इस प्रकार है—

**भृगु-च्यवन-आप्नवान्-ऊर्व ऋचीक-जमदग्नि-परशुराम इत्यादि।**

भृगु, च्यवन, आप्नवान् और जमदग्नि ये सब प्रसिद्ध ऋषि हुए हैं। इन सभी के आश्रम हरयाणे में थे। महर्षि जमदग्नि का आश्रम जिला हिसार की हाँसी तहसील में राखीगढी ग्राम के पास था। राखीगढी का उजड़ा खेड़ा सहस्रवीर्य अर्जुन की राजधानी था, जो बड़े भारी खण्डहर के रूप में आज भी विद्यमान है, जिस पर सिन्धु सभ्यता सदृश अवशेष भी मिलते हैं। इसी सहस्रवीर्य अर्जुन ने परशुराम के पिता महर्षि जमदग्नि का वध कर डाला था। जिससे कुपित होकर परशुराम ने उसका और अन्य क्षत्रियों का विध्वंस करके बदला लिया और क्षत्रियों के सर्वनाश के पश्चात् जहां अपना परशु (परसा) धोया था, वह स्थान राखीगढी से ७ वा ८ मील की दूरी पर रामराय है, जो कुरुक्षेत्र भूमि के अन्तर्गत है और रामह्रद कहलाता है। हरयाणे में तीर्थ स्थान माना जाता है, प्रतिवर्ष वहां भी मेला भरता है। इसे पौराणिक भाई तीर्थ स्थान मानते हैं।

महर्षि उद्दालक मुनि का आश्रम स्याणा ग्राम (जिला महेन्द्रगढ़) से एक मील की दूरी पर जंगल में था, उसके खण्डहर भी विद्यमान हैं। वहाँ अनेक पुराने कुंवों के अवशेष भी हैं, तथा एक बहुत बड़ा और सुन्दर सरोवर (तालाब) भी है। कदम्ब वृक्षों के बाहुल्य से आज भी वह स्थान बहुत सुन्दर, रमणीय ऋषियों का आश्रम ही प्रतीत होता है। सम्भव है यही महर्षि उद्दालक मुनि थे, जिन्होंने केकय (कश्मीर के) राजा अश्वपति की परीक्षा ली थी और उस राजा का भोजनादि आतिथ्य सत्कार न करके, उसे चेतावनी दी थी। राजा भी महर्षियों की शिक्षा से शिक्षित दीक्षित होने से वैदिक संस्कृति का एक प्रतीक था। उसका राज्य भी एक आदर्श वैदिक राज्य था। उस राजा ने महर्षि से प्रार्थना की कि मेरे राज्य में राजा तथा प्रजा दोनों ही वैदिक मर्यादाओं का पालन करते हैं, मेरे राज्य में कोई पापाचरण नहीं होता, फिर आप भोजन क्यों नहीं स्वीकार करते। उसने अपने राज्य का चित्रण इस प्रकार किया है—

**न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।**
**नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥**[1]

मेरे जनपद में चोर नहीं है और कृपण (कंजूस मक्खीचूस) धनी नहीं है। कोई व्यक्ति शराब आदि नशे वाले पदार्थों का सेवन करने वाला नहीं है। सुरापान आदि मदकारीद्रव्यों का सेवन मेरे राज्य में नहीं होता। ऐसा कोई भी व्यक्ति मेरे राज्य में नहीं है जो प्रतिदिन अग्निहोत्र, सन्ध्यादि नित्यकर्म न करता हो। कोई अनपढ़, अशिक्षित व्यक्ति राज्य भर में नहीं है। सभी लोग विद्या सुशिक्षा जनित वैदिक संस्कृति से सुशिक्षित आचारवान् हैं। कोई आचारहीन पुरुष सारे जनपद में ढूंढने से नहीं मिल सकता फिर यहां व्यभिचारिणी चरित्रहीन स्त्री कैसे हो सकती है।

श्रेष्ठों का यथायोग्य सत्कार और दुष्टों को यथोचित दण्ड मिलने से अश्वपति का केकय जनपद स्वर्ग के सदृश था। उद्दालक मुनि जहां शिक्षा देते थे, वहां ऐसे पवित्र राजाओं से वे ब्रह्मविद्या सीखते भी थे। उद्दालक मुनि का हरयाणा, केकय और मद्रक आदि से विशेष सम्बन्ध था। हरयाणा प्रदेश यौधेयों का देश था। [2]यौधेय नृग के पुत्र तथा उशीनर के पौत्र थे। इसी प्रकार

---

१. छान्दोग्योपनिषद्। ५।११।५
२. हरयाणे के वीर यौधेय १७१ से १७५ पृष्ठ तक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



केकय, मद्रक, सुवीर और वृषादर्भ ये शिबि के पुत्र और उशीनर के पौत्र थे। अतः यौधेय, केकय, मद्रक और सुवीर आदि लोग परस्पर भाई थे। इनके राज्य और जनपदों का भी परस्पर सम्बन्ध था। ये सभी चन्द्रवंशी थे। जहां महर्षि उद्दालक हरयाणा में रहते थे वहां साथ ही केकय, मद्रक और सौवीर आदि प्रदेशों के राजा प्रजा को सम्भालने तथा प्रचार आदि करने से लिए भी आवश्यकतानुसार जाते रहते थे।

महर्षि उद्दालक[1] के आश्रम से ४, ५ मील की दूरी पर एक शुद्ध जलाशय (तडाग) के तट पर बाघोत ग्राम में महर्षि पिप्पलाद का आश्रम था। महर्षि पिप्पलाद महर्षि व्यास जी के शिष्य थे, जिन का यह आश्रम था। यह बाघोत ग्राम भी जिला महेन्द्रगढ में है। यहां पर प्रतिवर्ष शिवजी का मेला भरता है ऋषि के आश्रम के स्थान पर शिवजी का मन्दिर बना हुआ है।

जिला जींद में किलायत नाम का स्थल जो उजड़े हुये खेड़े पर बसा हुआ है, महर्षि कपिल मुनि का आश्रम था। ये महर्षि सांख्यदर्शन के रचियता थे। किलायत को कपिलायत का विकृत रूप मानते हैं। यह स्थान कपिल मुनि की जन्मभूमि वा तपोभूमि था।

इसी प्रकार महर्षि वेदव्यास का आश्रम भी हरयाणे में कुरुक्षेत्र में था। वहीं बैठकर उन्होंने महाभारत ग्रन्थ की रचना की थी। इसी भांति सारे ब्रह्मर्षि देश (हरयाणा=योधेय देश) में ऋषि, महर्षि और मुनियों के सैंकड़ों आश्रम थे। जब महाभारत युद्ध प्रारम्भ हुआ उस समय श्री कृष्ण के भाई बलराम आदि अनेक यदुवंशी लोग सरस्वती नदी के किनारे स्थित ऋषियों के अनेक आश्रमों में सत्संग करने के लिए गये हुए थे। इसी प्रकार के आश्रम इस प्रदेश में आदि सृष्टि से ही रहते आये हैं। उनमें वैदिक संस्कृति का अध्ययन करने के लिए देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर से विद्यार्थी सदैव आया करते थे। मनुजी महाराज ने निम्न-लिखित श्लोक इसी ब्रह्मर्षि देश हरयाणे के विषय में लिखा है—

**एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।**
**स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥मनु० २।२० ॥**

इसी ब्रह्मर्षि देश में उत्पन्न हुए ब्राह्मण विद्वानों से अथवा ऋषि-महर्षियों से भूगोल के सभी मनुष्य (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, दस्यु और म्लेच्छ आदि) अपने-अपने योग्य विद्या और चरित्र की शिक्षा ग्रहण करें। यह आदेश था। इसी के अनुसार वैदिक संस्कृतियों के केन्द्र ऋषियों के आश्रम थे। ये आश्रम अधिकतर हरयाणा प्रदेश=ब्रह्मर्षि देश में ही थे।

यह ब्रह्मर्षिदेश यज्ञिय प्रदेश था। इसके विषय में मुन जी महाराज लिखते हैं—

**कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः।**
**स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्त्वतः परः॥ मनु० २।२३॥**

जिस देश में कृष्णमृग[2] स्वभाव से ही निर्भय होकर विचरण करता है वह यज्ञिय, पवित्र देश है ऐसा समझना चहिए। जो देश इससे विपरीत है, भिन्न है, वह म्लेच्छ देश है। यह प्रदेश यज्ञिय था, इसका प्रमाण एक मुद्रा से भी मिलता है, उस पर "यज्ञभू" यह लेख है। यह मुद्रा अलग्जैण्डर कनिंघम को मिली थी, यह आजकल बृटिश म्यूजियम लन्दन में है। सम्भव है यह मुद्रा भी ब्रह्मर्षि=हरयाणा प्रदेश से ही मिली होगी। इस ब्रह्मर्षि देश की सीमा के लिए एक कोश में यह भी लिखा है—

**धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं द्वादशयोजनावधि।**
**धर्मक्षेत्रं प्रयागञ्च हिमाद्रिविन्ध्यमन्तरा॥ एष हि ब्रह्मर्षि देशः॥**

कुरुक्षेत्र का नाम धर्मक्षेत्र है। इसका विस्तार स्थानेश्वर और कुरुक्षेत्र नगर के चारों ओर १२-१२ योजन अर्थात् ४८-४८ कोश तक था। कुरुक्षेत्र और प्रयाग ( इलाहाबाद ) तथा हिमालय और विन्ध्यपर्वत के मध्यभाग का नाम ब्रह्मर्षि देश था। ब्रह्मर्षि देश प्राचीन हरयाणा के अन्तर्गत था। महाभारत के समय हरयाणा का नाम शिवदेश भी था।

भीष्म पितामह, गुरुद्रोणाचार्य और धर्मात्मा विदुर इन तीनों ने मिलकर महाराज धृतराष्ट्र को समझाया कि द्रुपदपुर से पाण्डवों को बुलाकर आधा राज्य दे दिया जाये। धृतराष्ट्र ने इसे स्वीकार कर लिया और युधिष्ठिर को आधा राज्य देकर खाण्डव-

१. हरयाणा की संस्कृति (आचार्य भगवान्देव) पृ० ८—१० तक।
२. हरयाणा की संस्कृति (आचार्य भगवान्देव) पृ० ११—१२ तक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रस्थ में भेज दिया वहाँ पाण्डवों ने इन्द्रप्रस्थ को अपनी राजधानी बनाया। इसकी चर्चा महर्षि व्यास ने महाभारत के आदिपर्व में विस्तार से की है। श्री कृष्ण जी महाराज की आज्ञा से विश्वकर्मा ने इस इन्द्रप्रस्थ नगर का निर्माण देवराज इन्द्र के नाम पर किया था। जैसे—

**वासुदेव उवाच**

**कुरुष्व कुरुराजाय महेन्द्रपुरसन्निभम्।**
**इन्द्रेण कृतनामानमिन्द्रप्रस्थमहापुरम्॥** (महा० आदिपर्व २०६।२६)

कुरुराज युधिष्ठिर के लिए देवराज इन्द्र की राजधानी महेन्द्रपुर के समान इन्द्र के नाम से युक्त "इन्द्रप्रस्थ" नामक नगर का निर्माण करो, ऐसा श्री कृष्ण जी ने विश्वकर्मा को आदेश दिया। नगर बन जाने पर उसमें जब महर्षि व्यास के नेतृत्व में पाण्डवों ने प्रवेश किया, उसका वर्णन इस प्रकार है—

**ततः पुण्ये शिवे देशे शान्तिं कृत्वा महारथाः।**
**नगरं मापयामासुर्द्वैपायनपुरोगमाः[1]॥ २६॥**

महर्षि वेदव्यास को आगे करके अर्थात् उनके नेतृत्व में पाँचों पाण्डव महारथी इन्द्रप्रस्थ नगर में आकर बसे। बसने से पूर्व उस पुण्य शिव देश अर्थात् शिव (हर=महादेव) के देश में इन महारथियों ने शान्ति की स्थापना की। वहां जो असुर बस गए थे, उनको पराजित करके इस प्रदेश को शान्त, उपद्रव रहित किया।

महाभारत में जहां इन्द्रप्रस्थ की शोभा का वर्णन बड़े विस्तार से किया गया है वहां भी उसे शिवदेश में स्थित कहा गया है। यथा—

**मेघवृन्दमिवाकाशे विद्धं विद्युत्समावृतम्।**
**तत्र रम्ये शिवे देशे कौरव्यस्य निवेशनम्॥ ३७॥**

रम्य, सुन्दर, शिवदेश (हरयाणे) में स्थित इन्द्रप्रस्थ में कुरुराज युधिष्ठिर का सुन्दर राजभवन बना हुआ था। जो आकाश में विद्युत् के प्रभाव से व्याप्त मेघमण्डल की भांति देदीप्यमान था।

इससे सिद्ध है कि इस ब्रह्मर्षि देश का एक नाम महाभारत काल में "शिवदेश" भी था। उसी शिव जी के हर नाम के कारण यह प्रदेश हरयाणा भी कहा जाने लगा।

प्रस्तुत ग्रन्थ में ब्रह्मर्षि देश के रोहतक, आनाकनगर, अग्रोदकजनपद, कुरुक्षेत्र, सुनेत, अहिच्छत्रा और कौशाम्बी आदि नगरों के खण्डहरों से प्राप्त मुद्राङ्कों के विषय में लिखा जायेगा। इस प्रदेश का एक नाम कुरुजांगल भी था, उसकी सीमा में सुनेत (लुध्याना के पास यौधेय दुर्ग) भी आता है अतः उसका भी ग्रहण किया गया है। महाराजा हर्षवर्द्धन के राज्य का एक अंग अहिच्छत्रा भी था, इस कारण अहिच्छत्रा के मुद्राङ्कों का वर्णन इसमें किया है। हर्ष का साम्राज्य कन्नौज तक था, यह यौधेयों का ही सम्राट् था। अतः उसके राज्यान्तर्गत होने से हमने अहिच्छत्र प्रदेश भी यौधेय देश का अङ्ग माना है। कौशाम्बी, प्रयाग आदि का क्षेत्र भी उसके राज्य के अन्तर्गत था।

जब हस्तिनापुर[2] गंगा के जलीय प्रकोप से नष्ट हो गया, तो महाराज कुरु के प्रपौत्र निचक्षु ने अपनी राजधानी प्रयाग (इलाहाबाद) के निकट कौशाम्बी को बनाया। इसकी सन्तति ने भी वहीं अपना राज्य स्थापित किया। इस प्रकार कुरुवंशियों का शासन कौशाम्बी तक विस्तृत हो गया। इसीलिए ब्रह्मर्षि देश के अन्तर्गत कौशाम्बी को मानकर वहां से प्राप्त मुद्राङ्कों का वर्णन इस ग्रन्थ में कर रहे हैं। इस प्रकार ब्रह्मर्षि देश=हरयाणा प्रदेश की विशालता स्वयं सिद्ध है। आगे इस प्रदेश के रोहतक आदि प्राचीन नगरों का सामान्य परिचय देते हुए वहां से प्राप्त मुद्राङ्कों (मोहरों) पर प्रकाश डाला जाएगा।

●

१. शिवदेश और हरयाणा प्रदेश दोनों ही शिवजी के शिव और हर नाम के कारण रक्खे गये थे। महाभारत में हर, शिव और महादेव आदि शिव के एक सहस्र नाम हैं।

२. हस्तिनापुर (ज्योतिप्रसाद जैन) पृ० ६।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

## तृतीय अध्याय

# रोहतक

**रोहतक का स्थान**—रोहतक नगर दिल्ली से पश्चिम दिशा में ४४ मील की दूरी पर बसा हुआ है। यह हरयाणा राज्य का एक अति प्राचीन नगर है, जो बहुत बार उजड़ा और बसा है। आधुनिक नगर के उत्तर की ओर खोखराकोट के उजड़े हुए (खण्डहर के) अनेक ऊंचे-नीचे टीले इसके जीते जागते साक्षात् साक्षी बनकर प्रमाण उपस्थित कर रहे हैं। ये टीले पश्चिम में लालपुरा से प्रारम्भ होकर पूर्व में गढी बोहर और माजरा ग्राम तक चले गए हैं। दक्षिण में बाबरा और डहरी मोहल्लों की बस्तियों से लेकर उत्तर में सुखपुरा, चमारियाँ, लाढौत तथा मकड़ौली तक किसी न किसी रूप में अब भी विद्यमान हैं। इस प्रकार यह नगर १२ मील लम्बा और ८ मील चौड़ा अवश्य था। वैसे तो रोहतक से सम्बन्ध रखने वाली छोटी-छोटी यौधेय गढियों के अवशेष करौंथा, भालोठ, पाकसमा, आसन, किसरैंहटी, मोरखेड़ी, सिमचाणा, नयाबास, अटायल, गान्धरा, बलियाणा, लाढौत, आंवली, चमारियां, मकड़ौली, वसन्तपुर, टोटोली, और भगवतीपुर आदि ग्रामों में रोहतक के चारों ओर विद्यमान हैं। ये ग्राम रोहतक के चारों ओर बसे हुए हैं। इनमें यौधेयगण की प्राचीन मुद्रायें भी मिली हैं। रोहतक भी बहुत काल तक यौधेयों की राजधानी रहा है, जिसे वीरबल साहनी आदि इतिहास प्रेमियों ने स्वीकार किया है।

कौटिलीयार्थशास्त्र में दुर्ग वा नगर के चारों ओर इसी प्रकार की गढियों के निर्माण का विधान है। ये छोटे दुर्ग मुख्य दुर्ग और नगर की रक्षार्थ बनाये जाते थे। वहाँ लिखा है—

**अन्तेष्वन्तपालदुर्गाणि। जनपदद्वाराण्यन्तपालाधिष्ठितानि स्थापयेत्।**[1]

जनपद के सीमान्त एवं जनपद में प्रविष्ट होने और बाहर निकलने के द्वार स्वरूप अन्तपाल का दुर्ग स्थापित करे। उन अन्तपाल दुर्गों का एक अध्यक्ष "अन्तपाल" नामक होना चाहिए। उपर्युक्त ग्रामों में रोहतक नगर में प्रवेशार्थ इसी भांति प्रमुखद्वार, उपद्वार, महान्द्वार आदि अनेक द्वार थे। इनसे स्वीकृति पाकर ही रोहतक नगर में प्रविष्ट हुआ जा सकता था। इसी भांति हस्तिनापुर में प्रवेश के लिए भी मवाना (मुहाना) प्रमुख द्वार, मुजफ्फरनगर सैनी उपद्वार माने जाते हैं।[2]

कभी यह हरयाणा प्रान्त दशार्ण भी कहलाता था। क्योंकि दशार्ण ऐसे प्रदेश वा नगर को कहते हैं जहां दश वा अनेक जलयुक्त दुर्ग विद्यमान हों। हरयाणा प्रान्त में ऐसे अनेक जलयुक्त दुर्ग विद्यमान थे। ऐसे दुर्गों के लिए कौटिलीय अर्थशास्त्र में लिखा है—

**चतुर्दिशं जनपदान्ते साम्परायिकं दैवकृतं दुर्गं कारयेत्। अन्तर्द्वीपं स्थलं वा निम्नावरुद्धमौदकं गुहांवा.....।**[3]

राजा को चाहिए कि अपने देश के चारों ओर युद्धोपयोगी एवं दैवनिर्मित पर्वत आदि स्थानों में या जल से घिरे किसी स्वाभाविक द्वीप वा गहरी खुदी खाई से परिवेष्टित स्थानों में दुर्ग बनाये। ये जलीय (औदक) दुर्ग माने जाते हैं। नकुल ने भी हरयाणा के दशार्ण दुर्गों को जीता था, महाभारत में लिखा है—

---

१. कौटिलीय अर्थशास्त्र अधिकरण २, जनपदनिवेश प्रकरण १९।
२. हस्तिनापुरः ज्योतिप्रसाद जैन, पृ० २।
३. कौटिलीय अर्थशास्त्र अधि० २, अध्याय ३, प्रकरण २१।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मरुभूमिं च कात्स्न्र्येन तथैव बहुधान्यकम् ।
शैरीषकं महेत्थं च वशे चक्रे महाद्युतिः ॥
आक्रोशं चैव राजर्षि तेन युद्धमभून्महत् ।
तान् दशार्णान् स जित्वा प्रतस्थे पाण्डुनन्दनः ॥ महा० सभा० ३२।५-७ ॥

## रोहतक का संस्थापक

आदि सृष्टि में अन्य नगरों के साथ इस नगर को भी शिव जी महाराज तथा उसके पुत्र महासेनापति कुमार कार्तिकेय ने बसाया था। यह रोहतक नगर कार्तिकेय का अति प्रिय भवन (निवास स्थान), शिविर (छावनी) था। महाभारत में लिखा है—

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनधान्यवत् ।
कार्त्तिकेयस्य दयितं (भवनं) रोहितकमुपाद्रवत् ॥ महा० सभापर्व, अ० ३२। श्लोक ४॥

रोहतक को यहां कार्तिकेय[1] का प्रिय भवन=निवास स्थान बताया है।

## रोहतक का नामकरण

महाभारत और सूर्यसिद्धान्त आदि प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में रोहतक का नाम रोहीतक और रोहितक लिखा मिलता है। रोहीतक, रोहितक और रोहतक यह वृक्ष विशेष के नाम हैं, जिसे हिन्दी में रूहीड़ा वा रोहीड़ा कहते हैं। धन्वन्तरि निघण्टु और भाव प्रकाशनिघण्टु[2] में इसके पर्याय रोही, प्लीहशत्रु, दाडिमपुष्पकः, रोहीतक, रोहितः, रोहिणः, कुशाल्मलिः, सदाप्रसूनः विरेचनः, कूटशाल्मलिः, शाल्मलिः रोहतक, लोहितः, लोही आदि दिए हैं।

इसी रोहितक वृक्ष (रूहीड़े) का जंगल काट कर यह नगर बसाया गया था। इसीलिए इसका नाम रोहितक वा रोहतक रक्खा गया। अब भी इस प्रदेश में रोहीतक (रूहीड़े) के वृक्ष मिलते हैं। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता है कि जहां भी जिन वृक्षों को काटकर वा उनके पास कोई नगर वा देश बसाया गया उसी के नाम पर उस प्रदेश वा नगर का नाम रख दिया गया। जैसे शैरीषक, खाण्डवप्रस्थ, पाटलिपुत्र, रोहीतक, करवीरनगर, जम्बूद्वीप, शाल्मलिद्वीप और शाकद्वीप आदि नाम रक्खे गये।

आज से ५११० वर्ष पूर्व महाभारत युद्ध के समय रोहतक नगर के आस पास रोहितकारण्य (रूहीड़े के जंगल) में दुर्योधन की सेना के शिविर थे। महाभारत में लिखा है—

ततः पञ्चनदं चैव कृत्स्नं च कुरुजाङ्गलम् ।
तथा रोहितकारण्यं मरुभूमिश्च केवला ॥ महाभारत, उद्योगपर्व, अ० १६।

पञ्चनद (पंजाब) प्रदेश, सम्पूर्ण कुरुजाँगल देश, रोहितकारण्य (रोहतक के वन) और मरुभूमि आदि सुविस्तृत प्रदेश जो प्रचुर धन धान्य से सम्पन्न था, कौरवों की सेना से भली भांति घिर गया था। इन प्रमाणों से रोहतक नाम की सार्थकता और ऐतिहासिकता सिद्ध है।

जिस प्रदेश में रूहीड़े के वृक्ष होते हैं वहां का जलवायु अत्युत्तम होता है। वहाँ के लोग सुदृढ़, स्वस्थ और सुन्दर होते हैं। वहां उदर रोग नहीं होते। जहाँ रोग नहीं होंगे, वहीं अच्छा स्वास्थ्य और प्रसन्नता होगी, क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा निवास करता है।

---

१. रोहितके कार्तिकेयाह कुमारो लोकविश्रुताह कार्तिकेय इति कथ्यते—महामायूरी।
रोहतक में लोकप्रसिद्ध कुमार कार्तिकेय राजा रहता था।
स्कन्दाह कुमाररूपाह शक्तिधरो बर्हिकेतुस्का—बृहत्संहिता।

२. रोहीतको रोहीतको रोही दाडिमपुष्पकः।
रोहीतकः प्लीहघाती रुच्यो रक्तप्रसाधनः ॥ भाव० नि० वटादिवर्ग ३१ ॥
रोहीतक (रोहीड़ा) प्लीहा (बढ़ी हुई तिल्ली) का नाशक, रुचिकर तथा रक्त शोधक है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हरयाणावासियों के विषय में यहाँ के प्रसिद्ध सन्त श्री गरीबदास के पुत्र ब्रह्मचारी जैतराम [ये ग्राम करौंथा (रोहतक) में रहते थे] ने अपनी वाणी ग्रन्थ साहेब[1] में लिखा है—

दूध दही मन मान्या होई, कोई जन विरला खाली,
अति सुन्दर नीकी नर काया, सबके मुख पर लाली।
कुट चलनी त्रिया कोई नांहीं, मरजाद रूप व्योहारा,
जैतराम ऐसा हरयाना, सब देशों से न्यारा॥

## रोहीतक की प्राचीनता

महाभारत के प्रमाण से सिद्ध है कि यह रोहतक नगर अति प्राचीन वैदिक काल में अर्थात् सृष्टि के आरम्भ में आर्यों के पूर्वज शिवजी महाराज तथा उनके पुत्र महासेनापति, शूरवीर कुमार कार्तिकेय ने बसाया था। उन्होंने इसी प्रकार बहुत से नगर मयूरपुर, स्थानेश्वर और नन्दीपुर आदि बसाये थे। महर्षि अग्निष्वात्त का आदि अमैथुनी सृष्टि में जन्म हुआ था, उनके पुत्र शिवजी महाराज थे तथा शिवजी के पुत्र कुमार कार्त्तिकेय तीसरी पीढ़ी में थे। आदि सृष्टि से अब तक १९६०८५३०७४ वर्ष होते हैं। इस प्रकार रोहतक नगर को भी लगभग १९६०८५२९७४ वर्ष तो बसे हुये को अवश्य बीत गये।

सूर्यसिद्धान्त ज्योतिष का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। उसमें लिखा है—

"अल्पावशिष्टे तु कृते मयनामा महासुरः।" अ० १। श्लोक २॥

अर्थात् जब कृत=सतयुग समाप्त होने में कुछ समय शेष था, उस समय मय नामक महाविद्वान् ने इस ग्रन्थ को बनाया। यदि इस वैवस्वत मन्वन्तर की इसी अट्ठाईसवीं चतुर्युगी के सतयुग में ही इस ग्रन्थ का निर्माण मान लें, तो भी कम से कम समय यह निकलता है :—

कृतयुग का समय थोड़ा शेष था (कितना शेष था, यह अनुमान लगाना कठिन है)

| | | |
|---|---|---|
| त्रेतायुग | (व्यतीत समय) | १२९६००० वर्ष |
| द्वापरयुग | ( " ) | ८६४००० वर्ष |
| सं० २०३१ वि० तक कलियुग | ( " ) | ५०७४ वर्ष |
| | | २१,६५,०७४ वर्ष |

इस प्रकार सूर्यसिद्धान्त ग्रन्थ कम से कम इक्कीस लाख, पैंसठ हजार, चोहत्तर वर्ष पुराना है। उसमें रोहतक का नाम आया है। यथा—

राक्षसालयदेवौकः शैलयोर्मध्यसूत्रगाः।
रोहीतकमवन्ती च यथा सन्निहितं सरः॥ अ० १। श्लोक ६२॥

इसमें लंका, कश्मीर, रोहतक, अवन्ती और कुरुक्षेत्र के नाम स्पष्ट लिखे हैं और इनको एक सीध में बताया गया है। इससे सिद्ध होता है कि रोहतक नगर २१६५०७४ वर्षों से पूर्व भी विद्यमान था और उस समय भी अति प्रसिद्ध होने से उपर्युक्त ग्रन्थ में इसका नाम लिया गया है।

महाभारत में कर्ण की दिग्विजय में भी रोहतक[2] निवासियों की चर्चा आई है—

भद्रान् रोहितकांश्चैव आग्रेयान्मालवानपि।
गणान् सर्वान् विनिर्जित्य नीतिकृत्प्रहसन्निव॥[3]

---

१. ग्रन्थ साहिब पृ० ३९५, सं० २०११ विक्रमी।
२. अये न खलु रोहितकीयैर्भार्दिगिकैः कांस्यपत्रवेणुमिश्रैर्यौधेयकवरुणैरुपगीयमानः।—चतुर्भाणी (डा० वासुदेवशरण अग्रवाल एवं श्री मोतीचन्द्र द्वारा सम्पादित)
३. महाभारत वनपर्व २५४।२०॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



भद्र, रोहीतक, आग्रेय और मालव आदि समस्त गणराज्यों को सूतपुत्र कर्ण ने परास्त किया। इससे सिद्ध होता है कि उस समय भी रोहीतक प्रदेश में गणों का राज्य था तथा उनके निकट ही अग्रोहा का आग्रेयगण भी था। उनसे लगता हुवा मालवों का गणराज्य था, मालवों के पीछे शक और यवनों के गणराज्य थे, उन सबको कर्ण ने जीता।

इसी रोहतक के प्राचीन खण्डहरों को खोखराकोट भी कहते हैं। इस क्षेत्र का प्रत्येक व्यक्ति आबालवृद्धवनिता इसे इसी नाम से जानता है। कोट्ट शब्द संस्कृत में दुर्ग का वाची है। खोकर वा खोखर गोत्र क्षत्रियों का एक प्रसिद्ध गोत्र है। इस गोत्र वाले लोग स्वभावतः वीर प्रकृति के होते हैं। इन्हीं खोखर क्षत्रियों ने मुहम्मद गौरी, बाबर और शेरशाह से टक्कर ली थी। इसी खोखर गोत्र वाले क्षत्रिय आज भी कंसाला ग्राम (जिला रोहतक) में बसते हैं। इनके भाई इसी गोत्र के जिला मेरठ में छपरौली के आसपास बसते हैं। आज भी ये लोग अपने क्षत्रिय स्वभाव के लिए प्रसिद्ध तथा सबसे निराले हैं। अन्याय के विरुद्ध टक्कर लेने के लिए सदैव तैयार रहते हैं। अभी कुछ ही वर्ष पूर्व की घटना है कि कंसाला ग्राम के ये वीर खोखर क्षत्रिय हरयाणा राज्य से टक्कर ले बैठे। बहुत वर्षा होने से सारे क्षेत्र में वर्षा का जल भर गया था। हरयाणा सरकार उसे नाला खोदकर निकालना चाहती थी। वह नाला कंसाला ग्राम के पास खोदना आरम्भ कर दिया। ग्राम के लोग नहीं चाहते थे कि ग्राम के बहुत निकट से नाला खोदा जाये। क्योंकि इस नाले के स्थायी होने से ग्राम के डूबने का सदा भय बना रहता। इसका विरोध करने के लिए सारा ग्राम लाठी, जेली लेकर निकल पड़ा। लड़ाई के लिए तैयार हो गये। खुदा हुआ नाला बन्द कर दिया और आगे नाले की खुदाई भी बन्द कर दी। पुलिस तथा ग्राम वालों को चोटें आई। ग्राम के सभी समर्थ व्यक्ति तथा यहां तक कि सैंकड़ों देवियां भी इस लड़ाई के कारण गिरफ्तार कर लिए गये। हरयाणा राज्य की पुलिस भारी संख्या में आ गई। कई दिन रात यह झगड़ा रहा। कुछ विचारशील नेताओं के बीच में पड़ने से बड़ी कठिनाई से झगड़ा शान्त हुआ। पुरुष और देवियां कई दिन तक जेलों में रहे।

इसी प्रकार महमूद गजनवी जब सोमनाथ मन्दिर को लूट रहा था, उस समय सिन्ध के खोखर जाटों ने उसे बहुत क्षति पहुँचाई। उस पराजय का बदला लेने के लिये अगले वर्ष सन् १०२७ ई० में उसने सिन्ध के जाटों पर पुनः आक्रमण किया। यह उसका अन्तिम आक्रमण था।[1] इस युद्ध में भी वीर खोखरों से लड़ते हुए महमूद को लेने के देने पड़ गये। इसके पश्चात् उसका कोई आक्रमण भारत पर नहीं हुआ। इसी प्रकार मुहम्मद गौरी और बाबर से भी इन खोखर क्षत्रियों ने भयंकर युद्ध किये थे।

शेरशाह सूरी के शासन काल में कुछ खोखर (गक्खर) लोग झेलम और सिन्धु नदी के उत्तर में एक पहाड़ी प्रदेश में रहते थे। शेरशाह ने इन पर आक्रमण किया किन्तु उन्हें पूरी तरह वश में नहीं कर पाया। राय सारंग जैसे खोखर सरदारों ने उसकी सत्ता स्वीकार करने से निषेध कर दिया और उसके शत्रु बने रहे। शेरशाह ने इनका दमन करने के लिए वहां एक दुर्ग बनवाना चाहा। जब वह दुर्ग बनवाना प्रारम्भ करता, खोखर लोग उसे नष्ट कर देते थे। इसी प्रकार अनेक वर्ष व्यतीत हो गये। अन्त में दुर्ग तो बन गया किन्तु शेरशाह सूरी को वहां से हटना पड़ा।[2] इस प्रकार इन खोखर (गक्खर) लोगों की वीरता इतिहास प्रसिद्ध रही है।

कुछ काल तक इस प्रकार यह खोखराकोट्ट भी इन्हीं खोखर क्षत्रियों का दुर्ग रहा है। इसी से इसका नाम सर्वत्र खोखराकोट्ट (खोखरों का दुर्ग) ही आज तक प्रसिद्ध है। ये खोखर क्षत्रिय यौधेयगण की शाखा उपशाखा से सम्बन्ध रखते हैं।

## रोहतक का वैशिष्ट्य

हरयाणा प्रान्त में महाभारत के समय सैंकड़ों विशेष दुर्ग, सहस्रों छोटे दुर्ग और लाखों ग्राम थे। अनेक दुर्ग खण्डहरों के रूप में अभी तक विद्यमान हैं। जैसे रोहतक, महम, हांसी, अगरोहा, सिरसा, मेरठ, हस्तिनापुर अहिच्छत्रा, सतकुम्भा, स्थानेश्वर, मोहनबाड़ी, प्रकृतानाकनगर (आनाकनगर), पटननगर, हवननगर, मालव, करवीरनगर और नन्दीपुर आदि। स्कन्दपुराण में लिखा है—

हरयाणे च ग्रामाणां लक्षपञ्चकसम्मितम्।

हरयाणा प्रदेश में पांच लाख ग्राम थे। क्योंकि गंगा, यमुना, सरस्वती आदि अनेक नदियां इस प्रदेश में से होकर बहती

---

१. दिल्ली सल्तनत (आशीर्वादीलाल) पृ० ७०, सं० तीसरा १९५९ ई०।
२. मुगलकालीन भारत (आशीर्वादीलाल) पृ० ९९, सं० तीसरा १९५९ ई०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



थीं, अतः यह प्रान्त धनधान्य से भरपूर था। सारे प्रान्त की ऐसी सुदशा होते हुए भी रोहतक का स्थान विशेष था। यह नगर यौधेयों की राजधानी था। महाभारत काल में सभी तरह से सम्पन्न था। महर्षि व्यास ने महाभारत में लिखा है—

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं (गवाश्वं) धनधान्यवत्।
कार्तिकेयस्य दयितं रोहितकमुपाद्रवत् ॥ सभापर्व अ० ३२।

यौधेयों की राजधानी रोहतक नगर बहुत ही रमणीय और सुन्दर था। गायों (और घोड़ों) का खजाना था। गायों के कारण घी, दूध की नदियां बहती थीं। धन-धान्य से भरपूर था। इस प्रदेश का नाम इसी कारण बहुधान्यक[1] भी हो गया। महाभारत में इस नाम का उल्लेख है—

मरुभूमिं स कार्त्स्न्येन तथैव बहुधान्यकम्। सभापर्व अ० ३२।

मरुभूमि और बहुधान्यक हरयाणा के इन दो भागों का यहां स्पष्ट वर्णन है। रोहतक बहुधान्यक प्रदेश की राजधानी था। इस नगर में यौधेयों की मुद्राओं के ढालने का लक्षण (टकसाल) भी था। उन मुद्राओं पर लेख है—"यौधेयानां बहुधान्यके"। "यौधेयों के बहुधान्यक देश में चलने वाली मुद्रा।" इस प्रकार मुद्रा और साहित्य दोनों के साक्ष्य से हरयाणा प्रान्त का नाम बहुधान्यक सिद्ध हो जाता है। रोहतक में स्थित यौधेयों की टकसाल उस युग की सर्वश्रेष्ठ टकसाल थी। यहां जितनी मुद्रायें एक साथ एक समय में बनती थीं, उतनी मुद्रायें एक साथ बनाने का वैज्ञानिक ढंग यूनान आदि देशों को भी नहीं आता था। श्री वीरबल साहनी ने रोहतक दुर्ग के छोटे से भाग की खुदाई १९३५-३६ ई० में करवाई थी। उसकी रिपोर्ट में भी उन्होंने उक्त बात की पुष्टि की है।

## रोहतक का यौधेय लक्षणस्थान (टकसाल)

श्री वीरबल साहनी ने रोहतक (खोखराकोट) में खुदाई करायी थी उन्हें वहां यौधेय मुद्राओं (सिक्कों) का लक्षण स्थान (टकसाल) मिला उसके विषय में उनकी सम्मति देता हूं।

### ROHTAK

The Rohtak material represents by far the richest find of its kind yet recorded from any part of the world. It consists of reveral thousand fragments clay moulds which, thanks to their fine preservation, have enabled us to reconstruct in detail the technique employed in India over 2000 years ago (pp. 18-29, Pl. VII, fig 146) We now know that at Rohtak, a hundred years before the Christian more complex in structure than any yet discoverd any where, and indicating a high degree of skill and intelligence.[2]

सारे संसार में जो अब तक टकसालों में मुद्राओं के बनाने की प्राचीन सामग्री प्राप्त हुई है उन सब में रोहतक से प्राप्त सामग्री सर्वोत्तम सबसे मूल्यवान् और महत्त्वपूर्ण है। इसमें मुद्रायें (सिक्के) ढालने के कई हजार मिट्टी के सांचे प्राप्त हुए हैं, जो आज तक इतने अच्छे सुरक्षित हैं कि बनाने वालों का हमें विवश होकर धन्यवाद करना पड़ता है, क्योंकि इसी ने हमें पुनः सामर्थ्य प्रदान कर दिया कि हम इनको फिर जोड़कर इसका विस्तृत ज्ञान करने के योग्य बन सकें कि भारतवर्ष में दो सहस्र वर्ष से पूर्व भी सिक्के ढालने की इतनी अच्छी शिल्पकला विद्यमान थी। अब हम जान गए कि ईस्वी सन् से कई सौ वर्ष पूर्व रोहतक में मुद्राओं (सिक्कों) के ढालने की इतनी अच्छी टकसाल थी जो आज तक कहीं भी किसी को प्राप्त नहीं हुई। इतनी उच्च शिल्पकला और बुद्धि का इतना उत्कर्ष अन्य स्थानों पर देखने को नहीं मिला। इससे यही सिद्ध होता है कि रोहतक की टकसाल सबसे प्राचीन और सर्वोत्तम थी। वे आगे लिखते हैं—

From a comparison of the technique of the Rohtak moulds with that of some Roman moulds described from England, France and elsewhere, several interesting points emerge. I have had no occasion to examine any Roman moulds, but to judge from published accounts the Rohtak technique, which was of distinctly earlier date, was comparatively finer and more effcient.[3]

---

१. महामायूरी ग्रन्थ में भी बहुधान्यक नाम मिलता है। जैसे—वरुणायां दृढधनुः, कपिलो बहुधान्यके—महामायूरी।

2. The Technique of casting coins in Ancient India, P.58 By Birbal Sahni.

3. The Technique of casting coins in Ancient India P. 57-58 by Birbal Sahni.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जिन सांचों वा ठप्पों से रोमन सिक्के बनाये गये थे, वे ठप्पे इग्लैंड, फ्रांस अथवा किसी अन्य स्थान पर विद्यमान हैं। जब रोहतक के ठप्पों तथा यहां के सिक्कों की निर्माण कला का परीक्षण वा स्पर्द्धा करते हैं (यह तो ठीक है कि मैंने रोमन सिक्कों के सांचे नहीं देखें, किन्तु उनके विषय में प्रकाशित सामग्री के आधार पर तुलना करता हूं) तो ज्ञात होता है कि रोहतक से प्राप्त सामग्री रोमन सांचों से अधिक पुरानी है तथा रोमन सांचों से रोहतक के सांचे (ठप्पे) अधिक अच्छे और सन्तोषप्रद हैं।

श्री वीरबल साहनी आगे लिखते हैं—

On the other hand the Rohtak moulds which were in use at least a couple of hudred years earlier, were of distinctly finer construction and were capable of producing a much large number of coins at a single casting. We have not enough date to theorise, but on the evidence at hand it would not seem rash to suggest that the general similarity of the Roman moulds with the Rohtak once indicates Indian influence on the Roman technique.[1]

जब दूसरे पक्ष पर विचारते हैं तो रोहतक के सांचे दूसरे रोमन आदि देशों (जिनमें मुद्राओं का निर्माण हुआ) के ठप्पों से बनावट में भी बहुत बढ़िया हैं तथा उनसे भी दो सौ वर्ष पूर्व के हैं। और एक साथ एक ही बार में सबसे अधिक सिक्के इनमें ढाले जाते थे। हम बहुत अधिक तो प्रमाण आदि नहीं दे सकते, किन्तु यह हमारे सम्मुख प्रत्यक्ष है कि जब रोहतक के सांचों की रोमन सांचों से तुलना करते हैं तो स्पष्ट सिद्ध होता है कि रोमन मुद्रा बनाने की कला पर भारतीय प्रभाव है अर्थात् रोमन वालों ने भारत से सिक्के बनाने सीखे हैं। इस विषय में अधिक जानकारी करनी हो तो श्री वीरबल साहनी की पुस्तक[2] देख सकते हैं।

रोहतक के इसी खोखराकोट दुर्ग में श्रीमद् आदिवराह मिहिरभोज, श्री विग्रहपाल, श्री सामन्तदेव भीम, इण्डोशसेनियन और गधैय्या प्रकार की मुद्राओं के ठप्पे (सांचे) प्राप्त हुए हैं। इससे ज्ञात होता है कि रोहतक नगर उक्त राजाओं की भी राजधानी रहा है। ये ठप्पे गुरुकुल झज्जर तथा कन्या गुरुकुल नरेला के पुरातत्त्व संग्रहालयों में विद्यमान हैं।

प्रायः देखा जाता है कि जहां धन-धान्य की अधिकता होती है, वहां के लोग आलसी और विलासी हो जाते हैं। किन्तु हरयाणा प्रदेश धन-धान्य से भरपूर होते हुए भी यहां के निवासी क्षत्रिय, पराक्रमी और शूरवीर थे। रोहतक निवासियों के लिए महाभारत में लिखा है—

तत्र युद्धं महच्चासीच्छूरैर्मत्तमयूरकैः।

पाण्डुपुत्र नकुल का मत्तमयूरक=मस्त मयूरध्वजधारी शूरवीर यौधेय क्षत्रियों से बहुत बड़ा युद्ध हुआ। अतः रोहतक-वासियों की सदा से यह विशेष बात रही है कि अन्न-धन से भरपूर होते हुए भी ये सदैव शूरवीर और पराक्रमी रहे हैं। अब आगे इन्हीं शूरवीरों के मुद्राङ्कों का वर्णन पढ़ने को मिलेगा जो वीर भूमि हरयाणा के इन रोहतक आदि प्राचीन दुर्गों से हमें प्राप्त हुए हैं।

---

1. The Technique of casting coins in Ancient India p. 59, by Birbal Sahni.
2. " " " "

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

## चतुर्थ-अध्याय

# मुद्रांकों की लिपि और भाषा

हमारे अधिकतर मुद्राङ्क ब्राह्मीलिपि तथा संस्कृत और प्राकृत भाषा में हैं। कुछ मुद्राङ्क खरोष्ठी लिपि और प्राकृतभाषा के भी हैं जैसे मुद्राङ्क सं० ५८, ७१, १३५ और १८९। आधुनिक विद्वानों ने प्राकृत भाषा के तीन भेद माने हैं। वैसे मध्ययुग में जिसे आर्यभाषा का मध्ययुग कहना चाहिये, जो नानाभाषायें नाना प्रदेशों में विकसित हुईं, उनका सामान्य नाम प्राकृत है। उन भाषाओं में जिस साहित्य की रचना हुई, उसको समुच्चय रूप से प्राकृत साहित्य कहा गया है। भाषा वैज्ञानिकों ने भारत में आर्य-भाषा के तीन भेद प्राचीन, मध्यकालीन और अर्वाचीन माने हैं। प्राचीन स्तर की भाषायें वैदिक और संस्कृत हैं। जिनका विकास-काल आदिसृष्टि से लेकर विक्रमी संवत् ५०० से पूर्व तक माना जाता है। कुछ इसका समय ई० पू० २००० से ६०० ई० पू० तक मानते हैं, किन्तु यह सर्वथा अशुद्ध है।

**मध्ययुगीन भाषायें वा बोलियाँ**—मागधी, अर्धमागधी, शौरसैनी, पैशाची और अपभ्रंश इनका विकासकाल आधुनिक विद्वान् ५०० विक्रमपूर्व से विक्रमी संवत् १००० तक मानते हैं। इनके पश्चात् हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला आदि उत्तर भारत की आधुनिक आर्यभाषाओं (बोलियों) का विकास प्रारम्भ हुआ, जो आज तक चला आ रहा है।

प्राकृतभाषा के वररुचि आदि वैयाकरणों ने प्राकृतभाषाओं की प्रकृति (मूलकारण) संस्कृत को मानकर उसी से प्राकृत शब्दों की व्युत्पत्ति की है। "प्रकृतिः संस्कृतं, तत्रभवं, तत आगतं वा प्राकृतम्"। महर्षि पाणिनि के समय तक संस्कृत भाषा का पूर्ण विकास हो चुका था। उनका समय महाभारत के पश्चात् अर्थात् आज से लगभग ५००० वर्ष पूर्व का है। महर्षि पाणिनि ने अष्टाध्यायी (संस्कृत व्याकरण) बनाकर संस्कृत भाषा को स्थिर रूप दिया। प्राकृत भाषा में अनेक शब्द ऐसे भी हैं जो संस्कृत भाषा में नहीं मिलते, किन्तु वैदिक भाषा में वे विद्यमान हैं। प्राकृत की अनेक प्रवृत्तियों के लिये हमें बहुत से शब्द वेदों में पाये जाते हैं, जो वर्त्तमान संस्कृत व्याकरण के अनुकूल नहीं हैं। यही मानना उचित है कि बहुत से शब्द प्राकृत भाषा में सीधे वैदिक भाषा से आये हैं। यथार्थ वार्ता यह है कि सर्वत्र ही अनेक कारणों से भाषा और बोलियों के बीच भेद पाया जाता है। बारह-बारह कोस पर पानी और वाणी (बोली) बदल जाते हैं। इसीलिये भाषाओं वा बोलियों में सदा भेद रहा है और भविष्यत् में भी रहेगा।

हमें उत्तर भारत के आधुनिक हरयाणा, पञ्जाब, राजस्थान, और उत्तर प्रदेश के अनेक स्थानों से प्राचीन मुद्रांक (मोहरें Seals) मिले हैं। उन पर लिखित अनेक लेख संस्कृत व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध प्रतीत होते हैं। जैसे उदाहरण की दृष्टि से कुछ मुद्रांकों के लेख उद्धृत किये जाते हैं—

| मुद्रांकों का मूललेख | संस्कृतव्याकरण के अनुसार जो चाहिए | मुद्रांकों का मूल लेख | संस्कृत व्याकरण के अनुसार जो चाहिए |
|---|---|---|---|
| महासेनापतिस्य वीरद्वारे | महासेनापतेर्वीरद्वारे। | धर्म कर्तव्य | धर्मः कर्त्तव्यः। |

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| | | | |
|---|---|---|---|
| श्रीरुद्रवर्मस्य | श्रीरुद्रवर्मणः। | दातव्यं भोतव्यम् | दातव्यं भोक्तव्यम्। |
| जीवेकुणस भारद्वाजस | जीवेकुणस्य भारद्वाजस्य। | रष्टस्य | राष्ट्रस्य। |
| पुष्यहस्थिस्य | पुष्यहस्तिनः। | श्रीनन्दशिरिस्य | श्रीनन्दशिरेः। |
| सिंहस | सिंहस्य। | रुद्रहस्तिस्य | रुद्रहस्तिनः। |
| श्रीसाधुवृद्धिस्य | श्रीसाधुवृद्धेः। | गोठभूतिस | गोष्ठभूतेः। |
| सनकस | सनकस्य। | इदमितस | इन्द्रमित्रस्य। |
| धमय | धर्माय। | कीर्तिभूतिस | कीर्तिभूतेः। |
| जीवबलस | जीवबलस्य। | लजवतीभूतस | लज्जावतीभूतस्य। |
| श्रीबुंद्धिवसुस्य | श्रीबुंद्धिवसोः। | लाजु अहिमितस | राज्ञो अहिमित्रस्य। |
| सत्य वतव्य | सत्यं वक्तव्यम्। | भट्टिमितस | भट्टिमित्रस्य। |

प्रस्तुत ग्रन्थ से इसी प्रकार अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं।

इन उदाहरणों से ज्ञात होता है कि उस समय व्यवहार में इसी प्रकार की संस्कृतभाषा प्रचलित थी। इसे उस समय की प्राकृत भाषा कहना चाहिए। यह अशुद्ध संस्कृत नहीं है। कुछ विद्वानों का यह मत है कि प्रकृति का अर्थ लोक वा जनता है इसीलिए जनसाधारण की भाषा होने से ही यह प्राकृत कहलाई। बौद्ध और जैनकाल में इसका खूब प्रचार हुआ है। विशेषकर महाभारत के पश्चात् से विक्रम की ५वीं वा छठी शती तक इसका प्रचार व्यावहारिक रूप से खूब बढ़ा। इसीलिए इसका प्रयोग प्राचीन ताम्रलेख, शिलालेख, मुद्राङ्क (मोहर) और मुद्राओं (सिक्कों) पर पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। यह उस समय की व्यावहारिक संस्कृत (प्राकृत) भाषा है।

## प्राचीन मुद्राङ्कों का विवरण

मुद्राङ्कों की लिपि और भाषा का वर्णन करके क्रमशः मुद्राङ्कों का विवरण लिखा जाता है। रोहतक (खोखराकोट) के प्राचीन खण्डहरों से हमें ६ प्राचीन मुद्राङ्क मिले हैं। ये गुरुकुल झज्जर के पुरातत्त्व संग्रहालय में हैं। इसी खण्डहर से एक मुद्राङ्क श्री वीरबल साहनी को २४ मार्च १९३६ में मिला था। उस पर लिखा था—"भद्रमित्रस्य द्रोणिघाटे।" इस मुद्राङ्क का वर्णन आगे किया जाएगा।

## १. महासेनापतिस्य वीरद्वारे : समय आज[1] से ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलिसंवत्)

हमारे प्रथम मुद्राङ्क पर प्राचीन ब्राह्मीलिपि में "महासेनापतिस्य वीरद्वारे" लिखा है। लेख के नीचे दायीं ओर मुख करके चलते हुए नन्दी का चित्र दिखाया गया है। यह मुद्राङ्क आज[1] से लगभग ३२०० वर्ष पुराना (उत्तर मौर्यकालीन) है। इसकी भाषा प्राकृत (ग्रामीण संस्कृत) है। इसका अर्थ है—महासेनापति के वीरद्वार पर=वीर द्वार में। यह रोहतक नगर महासेनापति के वीरों का द्वार था। सेनापति, महासेनापति, महासेन और सर्वसेनापति आदि शब्द शिवजी महाराज तथा उनके पुत्र कुमार कार्तिकेय के पर्यायवाची हैं। जैसे हलायुध कोश में—महासेनः (=महती सेना यस्य) कार्तिकेयः, शिवः, महासेनापतिः। शब्दकल्पद्रुमकोश में—

महासेनः (महती सेनाऽस्य) कार्तिकेयः शिवः। महाभारत में शिव के सहस्र नामों में से एक नाम। मेदिनीकोश भी महासेनापति को शिव का वाची मानता है। वाचस्पत्यम्—

महासेनः (महती सेनाऽस्य) कार्त्तिकेय इत्यमरः। वृहत्सेनाधिपतिर्वा। सेनानीः—सेनां देवसेनां वा नयति कार्त्तिकेयः। सेनापतिः कार्त्तिकेयः, सेनाध्यक्षे वा।

इस प्रकार अनेक कोशों और महाभारतादि ग्रन्थों के देखने से यह प्रमाणित होता है कि महासेनापति, महासेन, सेनापति, देवसेनापति और सर्वसेनापति आदि ये सब नाम सृष्टि के आरम्भ में शिवजी और उनके पुत्र कार्तिकेय के पर्यायवाची थे। देवासुर

---

१. कलिसंवत् ५०७४। विक्रमसंवत् २०३१। ईस्वी सन् १९७४। शक संवत् १८९६। दयानन्दाब्द १५०।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सग्राम में देवताओं ने इनको ही अपना महासेनापति चुना था। अतः इन्हीं शिवजी और कार्त्तिकेय के ये महासेनापति आदि शब्द पर्यायवाची समझे जाते हैं। सेनापति आदि के गुण मनु जी महाराज के अनुसार इस प्रकार होने चाहियें—

सैनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च।
सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदर्हति ॥ मनुस्मृति १२।१०० ॥

सब सेना और सेनापतियों के ऊपर राज्याधिकार, दण्ड देने की व्यवस्था के सब कार्यों का आधिपत्य और सब के ऊपर सर्वाधीश राज्याधिकार इन चारों अधिकारों में सम्पूर्ण वेद शास्त्रों में प्रवीण पूर्ण विद्यावाले, धर्मात्मा, जितेन्द्रिय, सुशील जनों को स्थापित करना चाहिए अर्थात् मुख्यसेनापति, मुख्यराज्याधिकारी, मुख्यन्यायाधीश, प्रधान और राजा ये चार सब विद्याओं में पूर्ण विद्वान् होने चाहियें। क्योंकि दण्ड बड़ा तेजोमय होता है, उसको मूर्ख, अविद्वान्, पापी, अधर्मात्मा धारण नहीं कर सकता। आप्त पुरुषों के सहाय से युक्त बुद्धिमान् यथोचित न्याय कर सकता है। अतः मनु महाराज के आदेशानुसार विद्वान्, धर्मात्मा राज्याधिकारी होने चाहियें। तभी देश सुरक्षित होकर वीरों से रक्षित, सुखी, सुदृढ़ राष्ट्र बन सकता है। भारत देश और इसमें भी ब्रह्मर्षि देश हरयाणा भूमि विशेष वीर प्रसूता रहे हैं। रोहतक नगर तो वीरों का द्वार ही था। इसमें घुसते ही वीरों के दर्शन होते थे, अब भी होते हैं। क्योंकि हरयाणावासियों में अब भी अपने पूर्वज यौधेयों के गुण बहुत अंशों में ज्यों के त्यों विद्यमान हैं।

'महासेनापतिस्य वीरद्वारे' इस लेख के नीचे शिव के वाहन=ध्वजचिह्न नन्दी[1] का चित्र बना है। इससे भी महासेनापति से शिवजी का ग्रहण होता है अर्थात् महासेनापति शिवजी महाराज के वीरों का द्वार रोहीतक नगर था। शिवजी महाराज के आशीर्वाद से सभी देवताओं ने कार्तिकेय को महासेनापति बनाया और उसने रोहतक को अपना शिविर, रहने का भवन=स्थान बनाया। महासेनापति कार्तिकेय को यह रोहतक नगर अत्यन्त प्रिय था। महर्षि व्यास ने भी महाभारत में लिखा है—

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनधान्यवत्।
कार्त्तिकेयस्य दयितं रोहीतकमुपाद्रवत् ॥ सभापर्व अ० ३२ ॥

शिवजी महाराज स्वयं वीर थे तथा उनके पुत्र देवसेनापति भी शूरवीर थे, अतः यह वीरों का द्वार रोहतक दोनों ही पिता पुत्रों ने प्रिय मानकर अपना निवास स्थान बनाया। शिव और उसके पुत्रों का सम्बन्ध रोहीतक आदि से बहुत गहरा था, जिससे सिद्ध होता है कि यह नगर उन्हीं ने बसाया था, क्योंकि इन्होंने आदि सृष्टि में इसी प्रकार के अनेक नगर बसाये थे।

प्राचीनकाल में प्रत्येक दुर्ग में इसी प्रकार चारों दिशाओं में चार द्वार हुआ करते थे। इसके लिए कौटिलीय अर्थशास्त्र में लिखा है—

ब्राह्मैन्द्रयाम्यसैनापत्यानि द्वाराणि। अधिकरण २, अध्याय ४।

नगर की चारों दिशाओं में क्रमशः ब्राह्मद्वार (ब्रह्म अथवा ब्रह्मा का द्वार), ऐन्द्रद्वार (इन्द्र का द्वार), याम्यद्वार (यम का द्वार) और सैनापत्यद्वार (सेनापति अथवा स्वामिकार्तिकेय का द्वार) बनाने चाहियें। यहां मुद्राङ्क पर उल्लिखित 'महासेनापतिस्य वीरद्वारे' महासेनापति का वीर द्वार लेख इस साहित्य प्रमाण की पुष्टि करता है। रोहतक का यह द्वार महासेनापति शिव अथवा कार्तिकेय के नाम से यौधेयों द्वारा बनाया गया था। सभी दुर्गों में इसी प्रकार द्वार होते थे। उनकी पूर्ण खुदाई होने से अन्य दुर्गों तथा द्वारों के भी मुद्राङ्क मिल सकते हैं।

## २. श्रीरुद्रवर्मस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्राङ्क श्री रुद्रवर्मा नाम के विशेष व्यक्ति से सम्बन्ध रखता है। यहां षष्ठी का एक वचन 'श्रीरुद्रवर्मणः' होना चाहिए था, किन्तु अजन्त पुलिङ्ग के समान 'श्रीरुद्रवर्मस्य' रूप बना दिया, यह उस समय की प्रचलित संस्कृत (प्राकृत) भाषा का प्रयोग है। श्री शब्द आदरार्थ प्रयुक्त हुआ है। श्री रुद्रवर्मा यौधेयगण का रोहतक में रहने वाला विशेष राज्याधिकारी, सेनापति वा दुर्गाधिपति हो सकता है। रुद्र शिवजी महाराज का नाम है और क्षत्रियों का पर्यायवाची भी है। रुद्र वह कहलाता है, जो दूसरों को रुलाने में में समर्थ हो, दुष्टों की जिसके आगे कुछ नहीं चलती, उनकी दुष्टता का दण्ड देकर खूब रुलाता है। जिसने ४४ वर्ष तक अर्थात्

१. गरुत्मांस्तु ध्वजो विष्णोरीश्वरस्य ध्वजे वृषः।
मयूरः कार्तिकेयस्य हेरम्बस्य च मूषकः ॥
कुञ्जरो देवराजस्य यमस्य महिषो ध्वजे ॥
सिंहो ध्वजे तु दुर्गाया इत्येषा ध्वजकल्पना।
यस्य यो वाहनः प्रोक्तो ध्वजस्तस्य स एव तु ॥
—साम्बपुराण ३३।७-१० ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मध्यम श्रेणी के ब्रह्मचर्य का पालन करके रुद्र ब्रह्मचारी की संज्ञा प्राप्त करके सच्चा क्षत्रिय बनने का यत्न किया है, सांगोपांग वेदों को पढ़ने के लिए ४४ वर्ष तक ब्रह्मचर्यपूर्वक घोर तपस्या की है, जो एक-एक वेद के सांगोपांग पढ़ने में १२-१२ वर्ष तक तीनों वेदों के सांगोपांग पढ़ने में ३६ वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालन करके सच्चा क्षत्रिय बना हो। यथा गुण तथा नाम रुद्रवर्मन् रखकर क्षत्रिय धर्म को चार चाँद लगाये हों। यहां अपने नाम के साथ वर्मन् शब्द जोड़कर सोने पर सुहागे का कार्य किया गया है। वर्मा शब्द प्राचीन काल में गुरु से दीक्षा लेकर=विद्याव्रत स्नातक बनकर केवल सच्चे क्षत्रिय ही अपने नाम के साथ लगाते थे। यह गुरु के द्वारा प्रदत्त उपाधि वा प्रमाण-पत्र होता था।

महर्षि दयानन्द जी महाराज इस युग के एक महान् आदर्श ब्रह्मचारी हुए हैं, वे लिखते हैं "कोई २५ वर्ष के ब्रह्मचारी को विवाह वा विषयभोग का उपदेश करे, उसको ब्रह्मचारी यह उत्तर देवे कि देख, यदि मेरे प्राण, मन और इन्द्रिय २५ वर्ष तक बलवान् न हुए, तो मध्यम सवन जो कि आगे ४४ वर्ष तक का ब्रह्मचर्य कहा है, उसको पूर्ण करने के लिए मुझ में सामर्थ्य न हो सकेगा, किन्तु प्रथम कोटि का ब्रह्मचर्य मध्यम कोटि के ब्रह्मचर्य को सिद्ध करता है। इसलिए क्या मैं तुम्हारे सदृश मूर्ख हूं कि जो इस शरीर प्राण, अन्तःकरण और आत्मा के संयोग रूप सब शुभ, गुण, कर्म और स्वभाव के साधन करने वाले इस संघात को शीघ्र नष्ट करके अपने मनुष्य देह धारण के फल से विमुख रहूं और सब आश्रमों के मूल सब उत्तम कर्मों में उत्तमकर्म और सबके मुख्य कारण ब्रह्मचर्य को खण्डित करके महादुःखसागर में कभी डूबूं ? किन्तु प्रथम प्रकार के ब्रह्मचर्य का पालन, विद्या प्राप्त करके निश्चित रोग रहित हो जाऊंगा। इसलिए तुम मूर्ख लोगों के कहने से ब्रह्मचर्य का लोप कभी नहीं करूंगा। क्योंकि जो ४४ वर्ष तक के मध्यम ब्रह्मचर्य को करता है, वह ब्रह्मचारी रुद्ररूप प्राणों को प्राप्त होता है कि जिसके आगे किसी की दुष्टता नहीं चलती और वह सब दुष्ट कर्म करने वालों को सदा रुलाता रहता है।"[1]

वही सच्चा क्षत्रिय रुद्र ब्रह्मचारी होता है, जो माता-पिता से ८ वर्ष शिक्षा प्राप्त कर फिर सच्चे गुरु के चरणों में ३६ वर्ष तक आगे और ब्रह्मचर्यव्रत धारण करके ४४ वर्ष की आयु का सच्चा रुद्र ब्रह्मचारी क्षत्रिय बन जाता है। यदि कोई ऐसे ब्रह्मचारी को ब्रह्मचर्यव्रत तोड़ने को कहे तो वह यह उत्तर देवे कि जो सुख अधिक ब्रह्मचर्याश्रम के सेवन से होता है, वह ब्रह्मचर्य के न करने से स्वप्न में भी प्राप्त नहीं होता है। क्योंकि सांसारिक और परमार्थ सम्बन्धी पूर्ण सुख को ब्रह्मचारी ही प्राप्त होता है, अन्य कोई नहीं, इसलिए मैं इस सर्वोत्तम सुखप्राप्ति के साधन ब्रह्मचर्य का लोप न करके विद्वान्, बलवान्, आयुष्मान्, धर्मात्मा होके सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होऊंगा। तुम्हारे निर्बुद्धियों के कहने से शीघ्र विवाह करके स्वयं और अपने कुल को नष्ट-भ्रष्ट कभी न करूंगा। सच्चा क्षत्रिय बनने के लिए ४४ वर्ष से भी अधिक ब्रह्मचर्य पालन करने का आदेश हमारे पूर्वज ऋषि लोगों ने दिया है। मनुजी लिखते हैं:—

**ब्राह्मं प्राप्तेन संस्कारं क्षत्रियेण यथाविधि।**
**सर्वस्यास्य यथान्यायं कर्त्तव्यं परिरक्षणम्॥ मनु० ७।२॥**

जैसा परम विद्वान् ब्राह्मण होता है वैसा विद्वान् सुरक्षित होकर क्षत्रिय को योग्य है कि इस सब राज्य की रक्षा न्याय से यथावत् करे। अर्थात् विशेष राज्याधिकारी को ब्राह्मण के समान चारों वेदों का विद्वान् बनने के लिये ४८ वर्ष का ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिये। जब ऐसे राज्याधिकारी होते थे, तभी देश सर्व प्रकार से सुखी और सम्पन्न होता था। राजा के लिए वेद भगवान् का भी ऐसा ही आदेश है—

**ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति। अथर्व० काण्ड ११। सू० ५। मं० १७॥**

ब्रह्मचर्य रूपी तप से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है। क्योंकि—

**क्षत्रियस्य परो धर्मः प्रजानामेव पालनम्।**
**निर्दिष्टफलभोक्ता हि राजा धर्मेण युज्यते॥मनु० ७।१४४॥**

प्रजा का पालन करना ही राजा वा राज्याधिकारियों का परमधर्म है। शास्त्रानुसार कर आदि लेकर भोक्ता जीवनयापन करने वाला राजा वा राज्याधिकारी धर्म से युक्त होकर सुख पाता है। इससे विपरीत आचरण करने वाला दुःख पाता है। इसलिये जो राजा आदि दुष्टों पर तीक्ष्ण रुद्र रूप धारण करे और श्रेष्ठों पर कोमल रह कर प्रजा का पालन करता है, वह राजा अति माननीय होता है।

पहले के राज्याधिकारी रुद्रवर्मा आदि नाम इसी दृष्टि से रखते थे, कि यथा योग्य न्याय करके राष्ट्र को सुखी कर सकें।

१. संस्कारविधि, वेदारम्भसंस्कार।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ३. विजयते : समय ३२०० वर्षपूर्व (१८७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस तिकोने मुद्राङ्क पर चारों पक्षों पर एक-एक अक्षर वि, ज, य, ते, खुदा हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि चारों दिशाओं में हमारा विजय हो, हमारे राष्ट्र का विजय हो। नहीं तो एक ही पक्ष में विजयते लिखा जा सकता था। पाठकों को भी इससे पढने में सुविधा होती। एक-एक पक्ष में एक-एक अक्षर को मिलाकर पढने तथा समझने में जो असुविधा होती है, वह एक पक्ष में इकट्ठा 'विजयते' लिखने से न होती। पृथक्-पृथक् लिखने में कुछ कारण[1] और वैशिष्ट्य था, वह यह कि हमारे यौधेयगण-राज्य का विजय चहुँ ओर सदैव होता रहे। "यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्" मुद्राङ्क सं० १२, ८० और "यौधेयगणस्य जय" लेख वाली मुद्राओं का लेख इस विचार को पुष्ट करता है। जैसे युद्ध काल में युद्ध में भाग लेने और न लेने वाले सभी अपने विजय की कामना करते हैं। सभा, समाचार पत्र, डाकटिकट, पत्र, प्रत्येक ग्राम और नगर की भित्तियों पर विजय शब्द अंकित कर डालते हैं। इससे सभी मनुष्यों के हृदय और मस्तिष्क विजय की भावना से ओत-प्रोत हो जाते हैं। जैसे १९६५ ई० के भारत-पाक युद्ध में पं० लाल बहादुर शास्त्री का 'जय जवान, 'जय किसान' यह उद्घोष सर्वत्र प्रसरित हो गया था, जो आज तक प्रचलित है। इससे सिद्ध है विजय ही राजा वा क्षत्रिय का धर्म है। हारने पर उसका एक कौड़ी मूल्य नहीं रहता। मनुजी महाराज भी कहते हैं—

स्वधर्मो विजयस्तस्य नाहवे स्यात्पराङ्मुखः।
शस्त्रेण वैश्यान् रक्षित्वा धर्म्यमाहारयेद् बलिम् ॥मनु० १०-११९॥

विजय राजा का निज धर्म है, इसलिये युद्ध में मुख न फेरे, शस्त्र से वैश्यों की रक्षा करके उचित कर लेवे।

जिस प्रकार सभा और उत्सव आदि में अपने धर्म, राष्ट्र और नेता आदिकों का जयघोष करते हैं, इसी प्रकार युद्धकाल में भी विजयार्थ उत्साह भरने के लिए विजय का वातावरण बनाया जाता है। पिछले महायुद्ध में हम जहां भी देखते थे, (Victory) शब्द पूर्ण वा इसका प्रारम्भ का अक्षर विजय सूचक V. सर्वत्र दिखायी देता था। आगे पीछे, नीचे ऊपर, दायें बायें जहां भी दृष्टि पड़ती थी, Victory शब्द के ही दर्शन होते थे। यह हमारी आर्यों की प्राचीन पद्धति है। जिसे यह 'विजयते' मुद्राङ्क हमें बता रहा है। विदेशी लोगों ने भी इसी का अनुकरण किया है। 'यतो धर्मस्ततो जयः' जहां धर्म है, कर्त्तव्य पालन की भावना है, वहां जय स्वयं आकर पादस्पर्श करता है, पैर चूमता है। अपने कर्त्तव्य का डट कर जी जान से प्राणों की बाजी लगाकर पालन करो, फिर विजय आप के बायें हाथ का कार्य है। वेद भगवान् भी कहता है—

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः। अथर्व० ७.५०.८ ॥

पुरुषार्थ और कर्म मेरे दायें हाथ में है और उसका फल विजय मेरे बायें हाथ में है। वेद में और भी कहा है—

अजैष्माद्य। अथर्व० १६.६.१ ॥

हम आज अवश्य जीतेंगे, क्योंकि हम धर्म पर आरूढ हैं, कर्त्तव्य पालन में तत्पर हैं, विजय हमें अवश्य मिलेगा, आज ही मिलेगा, इसमें सन्देह करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि जहां धर्म है, वहां विजय है, यह अटल सिद्धान्त है। किसी संस्कृत के कवि ने कितना अच्छा कहा है—

जीवनेच्छा संघशक्तिः चारित्र्यं कायिकं बलम्।
सदैवोद्यतभावश्च पञ्चैते जयहेतवः ॥

जीने की इच्छा, संगठन, उच्चचरित्र, शारीरिक बल और कर्त्तव्य पालनार्थ सदैव उद्यत रहना=तत्पर रहना ये पांच

---

१. व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिर्न हि सन्देहादलक्षणम्—महाभाष्यम् 'लण्' सूत्र पर परिभाषा। जहां सन्देह हो, वहां व्याख्यान, ऊहापोह से विशेष बात का निश्चय कर लेना चाहिये, किन्तु सन्देह मात्र होने से उस स्थल और वाक्य आदि को अन्यथा=निरर्थक नहीं जान लेना चाहिये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जय के साधन हैं, कारण हैं। ये गुण जिस जाति, राष्ट्र, राजा, सेनापति वा व्यक्ति में होंगे, उनका विजय अवश्य ही होगा।

आर्य जाति में विजय के भाव आज भी अनेक रूपों में दिखाई देते हैं। जैसे मिलते समय अनेक लोग अभिवादन के स्थान पर अपने पूर्वजों का जयघोष करते हैं। जैसे—जय सीताराम, जय सियाराम, जयश्रीकृष्ण, जयहनुमान्, जयदुर्गा, जयमाता, जयभोले आदि। वैदिक धर्म का जय, सनातन धर्म का जय, स्वामी विरजानन्द का जय, महर्षि दयानन्द का जय, स्वामी श्रद्धानन्द का जय आदि अनेकों जयघोष सभा, उत्सव, शोभायात्रा आदि में सभी सम्प्रदायों के लोग अपने पूर्वजों तथा पूज्य पुरुषों के प्रति श्रद्धा भक्ति प्रकट करने के लिए करते रहते हैं।

## ४. ब्रह्मा का चित्र : समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर चतुर्मुख ब्रह्मा का चित्र है। एक मुख पीछे होने के कारण दिखाई नहीं देता। ब्रह्मा की जो मूर्तियां मिट्टी, प्रस्तर आदि की बनी हुई प्राचीन खण्डहरों की खुदाई से मिलती हैं, तथा आजकल भी मन्दिर और नगरों में ब्रह्मा के जितने चित्र मिलते हैं, वे प्रायः सभी चतुर्मुख=चार मुख वाले मिलते हैं। यह सब सृष्टि नियम के विरुद्ध होने से सर्वथा असम्भव है।

सभी महापुरुषों के साथ कुछ न कुछ विचित्र चमत्कारिक बातों को जोड़ देना, पौराणिक युग की कल्पनायें हैं। कहीं-कहीं आलंकारिक रूप देकर यह व्याख्या भी करते हैं, जैसे ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा चारों ऋषियों से चारों वेदों का अध्ययन किया था और "चतुर्वेदाद् ऋषिः" चारों वेदों का ज्ञान होने तथा मन्त्रों के अर्थद्रष्टा होने से ऋषि सञ्ज्ञा की प्राप्ति होती है। इसी कारण चारों वेदों के ज्ञाता होने से ब्रह्मा के चार शिरों की कल्पना कर पौराणिकों ने चार शिर वाली मूर्ति की रचना कर डाली, जिससे भ्रम ही फैला है लाभ कुछ नहीं हुआ। उसी आदि पुरुष, महाविद्वान् ब्रह्मा की मूर्ति का यह चित्र है। ऐसी ही चतुर्मुख ब्रह्मा की एक प्रस्तर मूर्ति सतकुम्भा (गूजर खेड़ी) से मिली थी, जो अहीर माजरे में है, उसका चित्र "हरयाणे के वीर यौधेय" पुस्तक के ७६ वें पृष्ठ पर दिया है।

सब जगत् का रचयिता होने से परम पिता परमात्मा का नाम भी ब्रह्मा है। ब्रह्मादि महर्षियों को एक अरब, छियानवे करोड़, आठ लाख, तरेपन हजार, चौंहत्तर वर्ष व्यतीत होने पर भी आर्य जाति के आबाल वृद्ध वनिता आज तक इतने आदर और श्रद्धा से याद करते हैं, जैसे ये इसी युग में हम सबके सम्मुख हुए हों। कारण यही है कि इन देव पुरुषों के किए उपकार हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। आदि सृष्टि में हुए विद्वानों में ब्रह्मा सर्वश्रेष्ठ विद्वान् थे।

## सर्वश्रेष्ठ विद्वान् ब्रह्मा

निरुक्तकार यास्क मुनि ने लिखा है—"ब्रह्मा सर्वविद्यः, सर्वं वेदितुमर्हति, ब्रह्मा परिवृढः श्रुततः। (अ०१, खण्ड ८) अर्थात् ब्रह्मा सब विद्याओं को जानने में समर्थ होता है। ज्ञान से बढ़ा हुआ होने से ब्रह्मा (बृहत्) कहलाता है।

ब्रह्म वा वेद सब सत्य विद्याओं के ज्ञान का नाम है। ईश्वर प्रदत्त वेद ज्ञान की शिक्षा अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा ऋषियों से आदि सृष्टि में ब्रह्मा को मिली। ब्रह्मा ने यह ज्ञान ऋषियों को दिया। इसलिए उपनिषदों के अन्त में तथा अनेक प्राचीन पुस्तक और ताम्र लेखों के प्रारम्भ में "ब्रह्मणे नमः" लिखा मिलता है। ऐसा करके आदि गुरु ब्रह्मा को नमस्कार किया जाता है। मुण्डकोपनिषद् का आदि वचन इस प्रकार है—

**ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्य गोप्ता।**
**स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह ॥१।१॥**

ब्रह्मा जी सब देवों से अधिक विद्वान् होने के कारण प्रथम माने जाते हैं। इन्होंने अपने समय के सभी प्राणियों के नामकरण आदि किये थे। इसलिए लोगों ने इन्हें विश्व का कर्त्ता कह दिया। सब संस्था आदि के निर्माण के कारण ये ही सब भुवनों के संरक्षक कहलाये।[1] इन्होंने सर्वश्रेष्ठ विद्या का उपदेश अपने ज्येष्ठ पुत्र अथवा शिष्य के लिए किया। ब्रह्मा का एक नाम हिरण्यगर्भ भी था। हिरण्यगर्भ के बनाये योगशास्त्र के दो श्लोक विष्णुपुराण २-१३ में मिलते हैं, जिनका भावार्थ यह है—

---

१. सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे ॥ मनु० १।२१॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



"योगी कभी अपनी साधना का अहंकार नहीं करता, वह मान को हानिकारक और अपमान को हितकर समझता है, इसलिए वह लोकैषणा से सदैव दूर रहता है।"

ब्रह्मा जी आयुर्वेद और धनुर्वेद के प्रवक्ता थे। ब्रह्मास्त्र और पुष्पक विमान के आदि निर्माता भी ब्रह्मा ही थे।

## लिपि-निर्माता ब्रह्मा

अपने अन्तर्गत भावों को किसी दूरस्थ व्यक्ति के आगे प्रकट करने तथा ज्ञान को सुदीर्घ काल तक सुरक्षित रखने के लिए लिखने की आवश्यकता हुआ करती है। वह लिखावट 'लिपि' कहाती है। सृष्टि के आरम्भ में सबसे पहले लिपि के आविष्कर्त्ता ब्रह्मा जी ही थे। इसी कारण उस लिपि का नाम 'ब्राह्मी लिपि' प्रसिद्ध हुआ। सर्ग के आदि से लेकर आज से १५०० वर्ष पूर्व तक यही ब्रह्मी लिपि प्रयुक्त होती रही है। बनावट बदलती रही, किन्तु नाम ब्राह्मी ही रहा। वेद भी इसी ब्राह्मी लिपि में लिपिबद्ध हुए थे। ब्रह्म नाम वेद का है, जिस लिपि में वेद ग्रन्थ रूप में निबद्ध हुए, इसलिए भी इसका नाम ब्राह्मी हो गया। प्राचीन शिलालेख भी इसी लिपि में मिलते हैं। कोई समय था जब कि देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तरों में भी ब्रह्मा द्वारा निर्मित यही ब्राह्मी लिपि प्रचलित थी। दोशाम्बे (मध्य एशिया) में ताड़पत्र पर लिखी ब्राह्मीलिपि की पुस्तक का एक पृष्ठ मैंने देखा। ब्राह्मीलिपि में मैंने स्वयं "विनयधारिणे नमः" यह वाक्य पढ़ा। बौद्ध मत से सम्बन्धित गिलगित से प्राप्त अनेक पुस्तकें आदरणीय डा०लोकेशचन्द्र जी ने प्रकाशित की हैं ये सभी ब्राह्मीलिपि में लिखी हैं। हमारी इस मुद्रांकों की पुस्तक में जो आपके हाथ में हैं, प्रायः सभी लेख देवपुरुष ब्रह्मानिर्मित ब्रह्मीलिपि में ही हैं।

इस प्रकार व्याकरण, ज्योतिषशास्त्र, वास्तुशास्त्र, गणितशास्त्र, अश्वशास्त्र, नाट्यशास्त्र, इतिहास (पुराण), मीमांसा आदि का आदिप्रणयन भी ब्रह्मा ने ही किया था।

## ५. श्रीमहिजन : समय वि० सं० ८०० (३८४४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर लिखा 'श्रीमहिजन' यह किसी विशेष व्यक्ति का नाम है अथवा पद भी हो सकता है। जैसे महीपाल राजा होता है। इसी भांति महिजन भूमि सम्बन्धी कार्य करने वाला पटवारी, गिरदावर, जिलाधीश, तहसीलदार, मालअफसर आदि कोई भी अधिकारी हो सकता है। पूजार्थक मह धातु से महि=मही शब्द बनता है। "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"[1] भूमि हमारी माता है और हम इस विस्तृत भूमि माता के पुत्र हैं। आदि सृष्टि में सभी प्राणी पृथ्वी माता के गर्भ से ही उत्पन्न होते हैं। हमारा धारण पोषण करने से यह पूजा के योग्य मानी जाती है। अपनी मातृभूमि का आदर कौन नहीं करता। "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"[2] जननी माता और जन्मभूमि स्वर्ग से बढ़कर होती है। माता के समान इस भूमि माता की रक्षा करनी चाहिये।

## ६. नन्दी के चित्र से युक्त मुद्राङ्क : समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस मुद्राङ्क पर केवल नन्दी का चित्र खुदा हुआ है। नन्दी, सांड, बैल और वृषभ ये पर्यायवाची हैं। नन्दी शिवजी महाराज का वाहन[3]=ध्वजचिह्न है। महाभारत में शिवजी के एक सहस्र नाम दिये हैं। जैसे नन्दीश्वर, नन्दिन, नन्दिवर्द्धन, गोवृषोत्तमवाहन, नन्दिध्वजः; नन्दिवाहन, वृषाङ्क, वृषध्वज, वृषभध्वज, वृषवाहन इत्यादि। इन सभी शब्दों का भाव एक ही है कि शिवजी महाराज के झंडे का चिह्न नन्दी था। वे गोवंश की सदा वृद्धि किया करते थे। उनकी सेना में बैलों के यानों रथों आदि का भी बाहुल्य से प्रयोग होता था। इससे यह भी सिद्ध होता है कि शिवजी महाराज का गौ, बैल आदि उपकारी पशुओं के साथ विशेष प्रेम था। इस प्रकार इस नन्दी के चित्रयुक्त मुद्राङ्क से यह स्पष्ट है कि रोहतक की प्रशंसा में महाभारत में जो गवाढ्यम् विशेषण दिया है वह सर्वथा उपयुक्त है। महाभारत से पूर्व तथा पश्चात् भी यह रोहतक नगर गौओं से सर्वथा भरपूर था तथा शिवजी महाराज के गोप्रेम को इन्होंने वंश परम्परा से अब तक चालू रक्खा है। अनेक उथल पुथल होने पर आज भी हरयाणा-

---

१. अथर्ववेद १२.१.१२

२. उद्धृतः ३. यस्य यो वाहनः प्रोक्तो ध्वजस्तस्य स एव तु ॥ साम्ब पुराण ३३।१०॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जाति (नस्ल) के बैल और गाय सम्पूर्ण भारत ही नहीं, सारे विश्व में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। अपने गाय बैल आदि पशुओं को सर्वोत्कृष्ट बनाने के लिये जो सेवा शुश्रूषा उत्तम से उत्तम पुष्टिकारक भोजन देकर हरयाणे का किसान करता है, वह अन्यत्र देखने में नहीं आती। यहां का किसान घी, दूध को भी हृदय खोल कर पशुओं को प्रसन्नता से देता है। इसी कारण हरयाणा प्रदेश से प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये के बैल, गाय आदि श्रेष्ठ पशु अन्य प्रदेशों के लोग क्रय करके (खरीद कर) ले जाते हैं। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि हरयाणावासियों ने अपने पूर्वज शिवजी महाराज से ही दायाद में गोमाता के प्रति यह प्रेम और श्रद्धा प्राप्त की है। अब भी इसी कारण 'देशों में देश हरयाणा, जहां दूध, दही का खाना' यह लोकोक्ति सर्वत्र प्रसिद्ध है। किन्तु दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि अंग्रेजी शिक्षा के कुप्रभाव के कारण इस पवित्र प्रान्त हरयाणा के वासियों में भी गोमाता के प्रति प्रेम और श्रद्धा में न्यूनता अवश्य आई है। यह इस प्रान्त और देश के दौर्भाग्य की बात है।

सम्पूर्ण हरयाणे में किसी मांसभक्षी मुसलमान वा ईसाई को गाय नहीं बेची जाती थी। पंचायत की ओर से इस नियम का बड़ी कट्टरता से पालन किया जाता था। इस नियम को तोड़कर यदि कोई मांसाहारी को गाय दे देता तो ऐसे पापी व्यक्ति को पंचायत कठोर दण्ड देती थी, और उस गाय आदि पशु को उस कसाई से वापिस मंगवाती थी। अंग्रेजी राज्य में भी इसी प्रेम वा श्रद्धा के कारण हरयाणावासियों ने यहां के ग्राम और नगरों में गोहत्या के लिये कोई बूचड़खाना नहीं खोलने दिया। जब कभी गन्नौर, नांगलोई, कुंडली आदि स्थानों पर गोहत्या वा अन्य पशुवध के निमित्त सरकार की ओर से कोई बूचड़खाना खोलने का प्रसंग आया तो यहां के गोभक्त लोगों ने डट कर उसका विरोध किया और गोमाता तथा अन्य पशुओं की रक्षा के लिए प्राणों की बलि चढाने के लिये तैयार हो गये।

हरयाणे के हरफूलसिंह आदि वीरों ने तो अनेक गोहत्यारे बूचड़ों को अपने इस गोप्रेम के कारण ही गोली का निशाना बनाया और स्वयं भी इसी प्रेम के कारण फांसी के तख्ते पर झूल गये। हरयाणे के वीर लोटण और रामस्वरूप खलीफा आदि ने भी अनेक बार दिल्ली आदि नगरों में सशस्त्र संघर्ष करके गोमाता की बूचड़ों से रक्षा की और अपनी श्रद्धा के कारण गोमाता की प्राणरक्षा के लिये अनेक कष्ट सहे। श्रद्धेय हुतात्मा स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के सत्प्रयत्नों से उत्तर प्रदेश, राजस्थान आदि अनेक राज्यों में गोहत्या निषेध का राजनियम बना। उसी प्रकार पंजाब में भी पूज्य स्वामीजी महाराज का आदेश पाकर प्रो०शेरसिंह आदि हरयाणे के आर्य वीरों ने पंजाब सरकार से भी वह गोहत्या निषेध का राजनियम बनवाया। गोमाता के अनन्यभक्त स्व० लाला हरदेवसहाय जी सांतरोद (हिसार) निवासी ने तो अपना सर्वस्व ही गोमाता की रक्षा के लिये बलिदान कर दिया था। यह भारत के सभी गोप्रेमियों को विदित ही है।

आदि सृष्टि में शिवजी महाराज से लेकर महाभारत काल में योगिराज श्री कृष्णजी पर्यन्त 'पुष्ट्यै गोपालम्'[1] वेद की इस आज्ञा का श्रद्धापूर्वक पालन होता रहा और क्या राजा, क्या प्रजा सभी व्यक्ति और समाज को पुष्ट बनाने के लिये गोमाता की निरन्तर रक्षा करते रहे। जब विदेशी मांसाहारी मुसलमान और ईसाइयों का राज्य हमारे इस पवित्र आर्यावर्त्त पर हुआ, उसीकाल में हमारे दुर्भाग्य से गोजाति के गले पर कसाइयों की कटारी चलने लगी। उस समय भी हरयाणावासियों ने गोमाता की रक्षा के लिये सब प्रकार का संघर्ष किया।

ऐसे विपत्ति काल में महर्षि दयानन्द सरस्वती के इस आदेश को कि गौ आदि पशुओं के नाश से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है, हरयाणे के प्रसिद्ध आर्य वीर राव राजा युधिष्ठिर रामपुरा रेवाड़ी निवासी ने शिरोधार्य किया और महर्षि दयानन्द जी महाराज के आदेशानुसार उनके योग्य शिष्य स्वामी आत्मानन्द जी की सहायता से सर्वप्रथम रेवाड़ी में गोशाला की स्थापना की। महर्षि दयानन्द जी की शिक्षा से प्रभावित होकर ब्रह्मचारी जयराम ने बेरी, भिवानी आदि अनेक स्थानों में गोशालायें खुलवाईं। इस प्रकार अंग्रेजों के समय में महर्षि दयानन्द जी की कृपा से गो रक्षा आन्दोलन ने गोशालाओं के रूप में सर्वप्रथम अपना प्रकटीकरण किया। महर्षि दयानन्द जी ने इसी पवित्र कार्य के लिये 'गोकरुणानिधि' पुस्तक गोरक्षा के महत्त्व पर लिखकर जनता की आंखें खोलदीं। महर्षि जी अंग्रेजी राज्य से गोवधनिषेध का राजकीय नियम बनवाना चाहते थे। इसके लिये उन्होंने लाखों गण्यमान्य व्यक्तियों से प्रार्थनापत्र पर हस्ताक्षर करवाये थे और वे इस हस्ताक्षरयुक्त प्रार्थनापत्र को तत्कालीन राजेश्वरी महारानी विक्टोरिया के पास विलायत में भेजना चाहते थे। जिससे ऐसा राज नियम बनाया जाये कि इस ऋषियों की पवित्रभूमि भारत से गोवध का कलंक सर्वथा मिट जाये। किन्तु देश का दौर्भाग्य था कि उसी समय एक महापापी ने ऋषिवर को भयङ्कर

१. यजुर्वेद ३०।११॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



विष दे दिया, जिससे उनका देहान्त हो गया और गोमाता की रक्षार्थ राजनियम नहीं बन सका। स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् सबको आशा बंधी थी कि हमारी स्वतन्त्र भारतसरकार गोवधनिषेध का राजनियम अवश्य बनायेगी। एतदर्थ गोप्रेमी सज्जनों ने अनेक आन्दोलन भी किये, जिनमें प्रमुख व्यक्ति श्रद्धेय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज तथा हरयाणे के सुपूत लाला हरदेवसहाय जी थे। उन्होंने पूर्णशक्ति लगाकर गोवधनिषेध का राजनियम बनवाने का प्रयत्न किया, उन्हें इस कार्य में आंशिक सफलता भी मिली। कुछ प्रान्तीय सरकारों ने अपने राज्यों में गोवधनिषेध का नियम नहीं बनाया। ये दोनों महापुरुष भी भगवान् के प्यारे हो गये। इनके परलोक गमन के पश्चात् अभी कोई महापुरुष इस पुण्य कार्य के लिये कार्यक्षेत्र में नहीं आया, जिससे गोहत्या निरोध का राजनियम बनकर गोमाता की रक्षा हो जाती। अभी प्रजा और राजा दोनों के ही सुदिन नहीं आये हैं। इन्होंने महर्षि दयानन्द के इस कथन को कि गो आदि पशुओं के नाश से राजा और प्रजा दोनों का नाश हो जाता है, समझा ही नहीं। महर्षि दयानन्द ने स्वयं विषपान करके हमें अमरता का सन्देश दिया है। महर्षि की चेतावनी से हमारे देशवासी यदि चेत जायें तो समझो देश के सुदिन आ गये। अथवा इस गोभक्त हरयाणा प्रान्त में ही अपने पूर्व पुरुष 'हर' के समान जिसके नाम पर इस प्रदेश का नाम 'हरयाणा' है, पुनः गोमाता के प्रतिश्रद्धा और प्रेम की भावना जागृत हो और गोरक्षा के लिये यहां के निवासी प्राणों की बलि चढाने के लिये कटिबद्ध हो जायें तो किस माई के लाल की शक्ति है जो ऋषियों के इस पवित्र देश आर्यावर्त में गोहत्या कर सके।

पाठक ! आप भली भांति समझ गये होंगे कि जिस प्रकार देवाधिदेव विद्वच्छिरोमणि श्री महादेव (शिव जी) को गोमाता से इतना प्रेम था कि उन्होंने अपना ध्वजचिह्न भी नन्दी को ही बनाया, जिससे उनका नाम ही 'नन्दीध्वज' पड़ गया। अपनी सेना में भार ढोने और रथ तथा गाड़ियों को खींचने के लिए नन्दी=बैल को ही चुना। शारीरिक और आत्मिक बल के संचार के लिए गोमाता के अमृत रूपी दुग्धपान के लिए घर-घर में गोमाता का पालन करवाया। कृषि के लिये वृषभ=बैलों को उपयोग में लाकर देश को धन-धान्य से परिपूर्ण किया। इन प्रियगुणों को अपनाने वाले उस अपने पूर्वज पर इस प्रदेश के लोग इतने मुग्ध हो गये कि प्रजा के सब प्रकार के दुःखों का हरण करने वाले हर=महादेव ही थे, ऐसा मानने लगे। अतः शिवजी के इस प्रिय नाम "हर" से यहां के निवासियों ने इतना प्रेम किया कि उनके नाम पर ही इस प्रदेश का नाम 'हरयाणा' रख दिया।

शिवजी के नाम गणकर्त्ता, गणपति, गणाध्यक्ष और परिषत्प्रिय भी हैं[1]। इन नामों से सिद्ध होता है कि इस सृष्टि में गणराज्य वा पंचायती राज्य के संस्थापक शिवजी महाराज ही थे। उनको गणराज्य से इतना स्नेह था कि उनका नाम ही परिषत्प्रिय हो गया। उनके इस प्रेम के कारण ही उस समय जनता ने उनको गणराज्य का अध्यक्ष चुना, जिससे उनका नाम गणपति वा गणाध्यक्ष हो गया। इस गणराज्य की रक्षा के लिए उन्होंने सेनापति बनकर असुरों से युद्ध किया। प्रथम देवासुर संग्राम के योद्धा सेनापति शिवजी महाराज ही थे। प्रजा ने इनको यथा गुण तथा नाम के अनुसार गणपति आदि नाम देकर सदा के लिए अमर कर दिया। इनके प्रियनाम हर को युद्ध का जयघोष बनाकर अर्थात् 'हर हर महादेव' इसको ऐसा प्रचलित कर दिया कि सारे आर्यावर्त देश का यह अमर युद्धघोष बन गया। जिस समय जिस स्थान पर इस आर्यजाति के शस्त्रधारी सच्चे आर्यवीर क्षत्रिय पहुँचे और जहां कोई युद्ध हुआ, वहीं यह जीवन देने वाला जयघोष 'हर हर महादेव' सुनाई देने लगा। कश्मीर से कन्या कुमारी तक और अटक से कटक तक सर्वत्र ही इस घोष से सहस्रों वर्ष यह पवित्र आर्यावर्त्त गूंजता रहा है।

इतना ही नहीं, शिवजी महाराज ने इस गणराज्य के संरक्षण का कार्य अपने पुत्र कार्त्तिकेय को सबकी प्रार्थना पर देवताओं का सेनापति बनाकर और गणेश द्वारा प्रजा को अथवा सैनिकों को व्यूह रचना आदि सैनिक प्रशिक्षण दिलाकर अपने कर्त्तव्य की पूर्ति की और गणराज्य वा पंचायती राज्य की पद्धति को सदा के लिए अमर बना दिया। अपने इस प्रिय और आदर्श पुरुष शिवजी महाराज की शिक्षा को हरयाणे की प्रजा ने ऐसे क्रियात्मक रूप से अपनाया कि भारतवर्ष में सिकन्दर आदि यूनानी, कुषाण, हूण, शक, मुसलमान तथा अंग्रेजों के अनेक राज्य आए और चले गए, अनेक प्रकार की उथल-पुथल हुई, किन्तु यहां की जनता में जो गणराज्य शिवजी महाराज के समय उपस्थित हुआ था, अद्यावधि किसी न किसी रूप में चल ही रहा है। इस प्रदेश का पंचायती राज्य आज तक अपने निर्णय देता है। सत्यासत्य का निर्णय करने के लिए अपराधी से गौ का पूंछ पकड़वाते हैं। अपराधी गोमाता का स्पर्श करके सब सच-सच बता देता है। वही गोजाति का प्रतीक नन्दी आप इस मुद्रांक पर देख रहे हैं।

---

१. महाभारत अनुशासनपर्व, अ० १७।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## भद्रमित्रस्य द्रोणिघाटे

श्री वीरबल साहनी २४ मार्च १९३६ को रोहतक (खोखराकोट्ट) के प्राचीन खण्डहरों को देखने गये थे, उस समय उन्हें वहां से मिट्टी का एक मुद्रांक मिला था, जिस पर निम्नलिखित लेख था—

भद्रमित्र—
स्य द्रोणिघाटे

यह भद्रमित्र का मुद्रांक है, जो द्रोणिघाट पर निवास करता था। द्रोणिघाट भी स्थान विशेष का नाम है। महाभारतयुद्ध में महाराज द्रोणाचार्य का महासेनापति पद पर अभिषेक रोहतक में ही हुआ था। आज तक यह जनश्रुति प्रचलित है कि लाढौत में शंख बज रहे हैं और हस्तिनापुर खाली पड़ा है। लाढौत ग्राम रोहतक से लगभग ५ मील उत्तर में है। यहां भी यौधेयकालीन प्राचीन लम्बी ईंटों से बने भवनों के अवशेष मिलते हैं, इससे सिद्ध होता है कि यह रोहतक नगर का ही भाग था। महाभारत के समय यहां भी रोहतक नगर की रक्षार्थ गढी (चौकी) विद्यमान थी। इसी रोहतक के निकटवर्ती क्षेत्र रोहितकारण्य में महाराज दुर्योधन की सेनायें युद्ध-समय डेरा डाले हुए थीं। यहीं उनका शिविर (छावनी) था। द्रोण के पुत्र का नाम द्रोणि (अश्वत्थामा) है। उसके नाम पर रोहतक में किसी सरोवर वा नदी पर घाट था। इसे यौधेयों के राज्याधिकारी भद्रमित्र ने बनवाया होगा।

प्राचीन काल में यौधेय देश में मित्रान्तनाम वाले अनेक व्यक्ति हुये हैं। काशीप्रसाद जायसवाल इसे देहरादून का मुद्रांक लिखते हैं।[1] किन्तु यह उनकी कल्पना मात्र है। रोहतक से प्राप्त इस मुद्रांक का देहरादून से कोई सम्बन्ध नहीं है।

## सोनीपत

यह नगर दिल्ली से उत्तर दिशा में २७ मील की दूरी पर तथा रोहतक से उत्तर पूर्व दिशा में ३२ मील की दूरी पर स्थित है। कुछ महीने पहले यह रोहतक की एक तहसील थी, किन्तु अब पृथक् मण्डल (जिला) बना दिया गया है।

सोनीपत नगर यौधेयों का एक अति प्राचीन दुर्ग था। आज भी उस दुर्ग के बहुत ऊंचे खण्डहर विद्यमान हैं। इसका प्रचीन नाम शोणाप्रस्थ था। प्रस्थनामान्त ग्राम और नगर कुरुक्षेत्र और कुरुजनपद में पहले बहुत थे। पाणिनि मुनि ने भी अष्टाध्यायी में प्रस्थनामान्त नगरों की चर्चा की है—

प्रस्थोत्तरपदपलद्यादिकोपधादण्। ४।२।११०॥
प्रस्थपुरवहान्ताच्च। ४।२।१२२॥
प्रस्थेऽवृद्धमकर्क्यादीनाम्। ६।२।८७॥
मालादीनां च। ६।२।८८॥

कर्क्यादिगण में प्रस्थान्त निम्न नाम दिये हैं—

कर्कीप्रस्थ। मधीप्रस्थ। मकरीप्रस्थ। कर्कन्धुप्रस्थ। शमीप्रस्थ। करीरप्रस्थ। कटुकप्रस्थ। बदरप्रस्थ।

मालादिगण के नाम—

मालाप्रस्थ। शालाप्रस्थ। शोणाप्रस्थ (सोनपत-सोनीपत)। द्राक्षाप्रस्थ। क्षौमप्रस्थ। क्षामाप्रस्थ। काञ्चीप्रस्थ। एकप्रस्थ। कामप्रस्थ। इसी प्रकार इन्द्रप्रस्थ, कुण्डप्रस्थ, ह्रदप्रस्थ, सुवर्णप्रस्थ, दाक्षिप्रस्थ, माहकिप्रस्थ, माद्रीप्रस्थ, पातानप्रस्थ आदि।

प्रस्थ समतल स्थान को कहते हैं। उपर्युक्त ग्राम और नगर समतल स्थान पर ही बसे हुये थे। प्रतीत होता है कि प्राचीन प्रस्थ का वर्तमान पत बन गया है। जैसे पानीपत, बाघपत, सोनीपत, मारीपत और तिलपत आदि।

इसी सोनीपत में महाराजा हर्षवर्द्धन का एक बहुत बड़ा ताम्र मुद्राङ्क मिला था।

---

1. Current Science, May 1936 vol. IV P. 796 p. 80-81 by B. Sahni.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## महाराजा हर्षवर्द्धन का समय

चीनी यात्रियों के विवरण तथा अन्य प्रमाणाभासों के आधार पर प्रायः सभी इतिहासकारों ने हर्षवर्द्धन का समय ६०६ ई० से ६४७ ई० तक निश्चित माना हुआ है। साथ ही यह भी मान लिया गया है कि आन्ध्रवंशी महाराज सत्याश्रय पुलिकेशी द्वितीय ने हर्षवर्द्धन को दक्षिण विजय के अभियान से बलपूर्वक रोका था। इससे दोनों की समकालिकता सिद्ध है। पुलकेशी द्वितीय के अपहोल शिलालेख में उसका अपना समय दिया हुआ है तथा हर्ष की पराजय की भी चर्चा है।[1] उसी समय के अनुसार हर्ष का भी समय निश्चित हो जाता है। अपहोल शिलालेख में संवत् विषयक श्लोक इस प्रकार हैं—

त्रिंशत्सु त्रिसहस्रेषु भारतादाहवादितः।
सप्ताब्दशतयुक्तेषु गतेष्वब्देषु पञ्चसु ॥३३।
पञ्चाशत्सु कलौ काले षट्सु पञ्चशतासु च।
समासु समतीतासु शकानामपि भूभुजाम् ॥३४॥

कीलहार्न, पं० भगवद्दत्त रिसर्चस्कालर तथा पं० गुरुदत्त उपन्यासकार आदि विद्वानों ने इन श्लोकों का अर्थ इस प्रकार किया है—जब महाभारत युद्ध को ३७३५, ३३७५, ३६८७ अथवा ३६३७ वर्ष बीत चुके थे, उस समय शकनृपतियों का संवत् ५५६ अथवा ५०६ था।

३०+३०००+७००+५=३७३५ वर्ष। ५०+६+५००=५५६ वर्ष
३०+३०००+१०७+५००+५०=३६८७ वर्ष। ६+५००=५०६ वर्ष
३०+३०००+१०७+५००=३६३७ वर्ष। ५०+६+५००=५५६ वर्ष

गम्भीरता से विचार करने पर इन श्लोकों के उपर्युक्त अर्थ उपयुक्त नहीं जंचते। वैसे पं० भगवद्दत्त जी ने भी इन अर्थों में सन्देह प्रकट किया है।[2] हमारे विचार से इन दोनों श्लोकों का सही अर्थ इस प्रकार है—

३०+३०००+१०७+५=३१४२ वर्ष। ५०+६+५००=५५६ वर्ष

अर्थात् ३१४२ वर्ष जब महाभारत युद्ध से इधर=पश्चात् बीत चुके थे, तब ५५६ वर्ष शकनृपतियों के व्यतीत हुये थे।

स्मरण रहे उक्त श्लोकों में "भारतादाहवादितः" भारतयुद्ध से इधर और "कलौ काले" दोनों पाठ हैं। इससे सिद्ध है कि भारत युद्ध द्वापर युग में हुआ था, नहीं तो "भारतादाहवादितः" लिखना व्यर्थ हो जाता। महाभारत में भी द्वापर युग के अन्त में ही युद्ध होना लिखा है।[3] कलियुग प्रारम्भ होने से ३६ वर्ष पूर्व महाभारत युद्ध समाप्त होकर युधिष्ठिर राज्य शासन करने लगा था। जिस दिन कलियुग प्रारम्भ हुआ, उसी दिन श्रीकृष्णजी महाराज ने भौतिक देह त्यागा था।[4]

---

१. युधिपतितगजेन्द्रानीकबीभत्सभतो भयविगलित हर्षो येन चाकारि हर्षः।
—पुलिकेशी द्वितीय का अपहोल शिलालेख, श्लोक २३।

२. भारतवर्ष का बृहद् इतिहास प्रथम भाग पृ० १५; पं० भगवद्दत्त रिसर्चस्कालर

३. (क) अन्तरे चैव सम्प्राप्ते कलिद्वापरयोरभूत्।
समन्तपञ्चके युद्धं कुरुपाण्डवसेनयोः ॥आदिपर्व २।१३॥
(ख) द्वापरस्य युगस्यान्ते आदौ कलियुगस्य च।
सात्वतं विधिमास्थाय गीतः संकर्षणेन च ॥
(ग) संक्षेपो वर्तते राजन् द्वापरेऽस्मिन् नराधिप ॥भीष्मपर्व १०।१५॥
(घ) एतत्कलियुगं नाम अचिराद्यत्प्रवर्तते ॥वनपर्व १४९।३८।

४. यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदा दिने।
प्रतिपन्नः कलियुगस्तस्य संख्यां निबोधत ॥वायुपुराण।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



५५० ई० पू० भारतीय नरेशों की सहायता से ईरान (शकद्वीप) के राजा साईरस ने ईरानी साम्राज्य की स्थापना की थी। उस अवसर पर एक शकसंवत् भी चलाया गया था, जिसे भारत में भी अपनाया गया। आचार्य वराहमिहिर ने भी इस शक संवत् की चर्चा अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ बृहत्संहिता (वाराही संहिता) में की है—

आसन्मघासु मुनयः शासति पृथ्वीं युधिष्ठिरे नृपतौ।
षड्द्विकपञ्चद्वियुतः शककालस्तस्य राज्ञश्च॥
—बृहत् (वाराही) संहिता १३।३॥

महाराज युधिष्ठिर के शासन काल में सप्तर्षि मघा नक्षत्र में थे। युधिष्ठिर और शकराज के काल में २५२६ वर्षों का अन्तर है। इस प्रमाण से भी यह शक संवत् लगभग ५५० ई० पू० ही निश्चित होता है।

प्रसिद्ध ज्योतिषी भास्कराचार्य ने भी सिद्धान्तशिरोमणि में अपना समय १०३६ शककाल दिया है। यह भी वही ५५० ई० पूर्व अर्थात् ४९३ वर्ष विक्रम पूर्व वाला शककाल है। इससे भास्कराचार्य का समय ५४३ विक्रमी संवत् और ४८६ ईस्वी सन् निश्चित है। आधुनिक विद्वान् इसे वर्तमान प्रचलित शक संवत् मानकर भास्कराचार्य का काल ११५० ई० पश्चात् मानते हैं। उन विद्वानों से प्रश्न है कि १०३० ई० में आया अल्बेरुनी यात्री भास्कराचार्य की चर्चा किस प्रकार कर सकता है? दो भास्कराचार्य मानकर उत्तर देना निरर्थक है। इससे सिद्ध है कि यहां भी विक्रम पूर्व ४९३ में चले शकसंवत् का ही निर्देश है।

इस प्रकार इन प्रमाणों से निश्चित है कि महाभारत युद्ध के ३१४२ वर्ष बीत जाने पर शक सं० ५५६ बीत चुका था। तदनुसार विक्रमी संवत् ६३ तथा ईस्वी सन् ६ में महाभारत युद्ध को ३१४२ वर्ष व्यतीत हो चुके थे।[1] उस समय महाराज पुलिकेशी द्वितीय का युद्ध महाराज हर्षवर्द्धन से हो चुका था। अतः हर्षवर्द्धन का भी वही काल माना जाये जो पुलिकेशी द्वितीय का है।

इस भांति हर्षवर्द्धन का काल यह निश्चित हुआ—

३११४ कलि संवत् से ३१५५ कलि संवत् तक
५२८ ईरानी शक संवत् से ५६९ शक संवत् तक
३५ विक्रमी संवत् से ७६ विक्रमी संवत् तक
२२ ईस्वी पूर्व से १९ ईस्वी सन् तक

कालिदास ने ज्योतिर्विदाभरण ग्रन्थ ३०६८ कलिसंवत् अर्थात् २४ वि० सं० और ३४ ई० पूर्व में बनाया था। उसमें प्राचीन ईरानी शक संवत् की चर्चा आती है। वे लिखते हैं—

शक संवत् में से ४४५ घटाकर शेष में ६० का भाग देने से अयनांश निकल आते हैं। पं० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने "भारतीय प्राचीन लिपिमाला" पुस्तक के पृष्ठ १६९ की पाद टिप्पणी में कालिदास के इस वर्णन को असत्य बताया है। तर्क यह दिया है कि "शकसंवत् विक्रम सं० से १३५ वर्ष बाद चला है, यदि यह ग्रन्थ विक्रमी संवत् २४ में बना होता तो उसमें शकसंवत् का नाम भी नहीं आना चाहिए। वास्तव में यह पुस्तक शक संवत् ११६४ के आस पास का बना हुआ है।"[2]

वस्तुतः कालिदास ने भी भारत में ४९३ वि० पू० प्रचलित वही ईरानी शक संवत् दिया है जिसे श्री ओझा जी आदि विद्वान् समझ नहीं सके।

उक्त ग्रन्थ में कालिदास ने अपने समकालीन विद्वानों का भी उल्लेख किया है—

धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशंकु—
वेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां
रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य॥

---

१. आज वि० सं० २०३१ में महाभारत युद्ध को ५११० वर्ष व्यतीत हो गये हैं।
२. भारतीय ज्योतिःशास्त्र, पृ० ४७६; शंकर बालकृष्ण दीक्षित।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



महाराज विक्रम की राज सभा में नवरत्न (विद्वत् शिरोमणि) थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं—

धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेतालभट्ट, घटखर्पर, कालिदास, वराहमिहिर और वररुचि।

कालिदास और भारवि कवियों के नाम पुलिकेशी द्वितीय के अपहोलशिलालेख में श्री रविकीर्ति ने भी दिये हैं[1]। यह रविकीर्ति कवि श्री पुलिकेशी का प्रशस्तिनिर्माता था।

प्रसिद्ध विद्वान् वासुदेव उपाध्याय[2] और डा० डी० ऐस० त्रिवेद[3] ने भी महाराजा हर्ष के काल को ६०६ ई० से ६४७ ई० तक माना है, यह भी अयुक्त है। इस प्रकार हर्षवर्द्धन के समय में ६२८ वर्षों की भयङ्कर भूल इतिहास के विद्वानों ने की हुई है, उसका संशोधन करके अन्य सन्दिग्ध और अनिर्णीत समयों के विषय में अन्वेषण करना चाहिए।

## ७. महाराज हर्ष का ताम्र मुद्रांक : समय वि० सं० ३५ से वि० सं० ७६ तक

सोनीपत के श्री मोहरसिंह रामरतन महाजन नामक वैश्य परिवार को यह ताम्र मुद्रांक प्राप्त हुआ था[4]। मैंने इस परिवार का पता लगाने का बहुत प्रयत्न किया, किन्तु कोई पता नहीं चला। महाराजा हर्षवर्द्धन का यह मुद्रांक कहां गया, इसका भी कोई ज्ञान नहीं। इस दुर्लभ मुद्रांक के लुप्त होने का मुझे बहुत दुःख हुआ। ताम्र के इस बड़े मुद्रांक से हर्षवर्द्धन की वंशावली तथा उसके राज्य पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। इसका चित्र तथा लेख स्पष्ट नहीं है। जैसा पहले इतिहासकारों ने पढ़ा, वैसा ही हमने संस्कृत-भाषा में दिया है। अनेक स्थलों से यह लेख टूटा हुआ है। अतः इस सोनीपत वाले ताम्र मुद्रांक से हर्षवर्द्धन के आदि पुरुष का भी ज्ञान नहीं होता। इस मुद्रांक में लेख के ऊपर बायीं ओर मुख करके बैठे हुए नन्दी का चित्र दिखाया है। नन्दी शिवजी का वाहन= ध्वजचिह्न था। इससे सिद्ध है कि महाराजा हर्षवर्द्धन शैव था। महाराजा हर्ष यौधेयों का अन्तिम प्रसिद्ध सम्राट् था। उसका साम्राज्य बहुत विशाल था, इसीलिये उसको सुव्यवस्थित रखने के लिए उसने दो राजधानियां बनाईं। एक स्थानेश्वर (कुरुक्षेत्र) में तथा दूसरी कन्नौज में। प्रयाग तथा कौशाम्बी भी उसके राज्य के अन्तर्गत थे। पंजाब को छोड़कर समस्त उत्तरी भारत में इसका राज्य फैला हुआ था। शशांक की मृत्यु के उपरान्त वह बंगाल को भी जीतने में सफल हुआ। हर्षवर्द्धन के शासन काल का इतिहास मगध से प्राप्त दो ताम्रपत्रों, राजतरंगिणी, चीनीयात्री हुएन्त्सांग के विवरण और हर्ष तथा बाणभट्टरचित संस्कृतकाव्य ग्रन्थों से प्राप्त होता है। इसका शासनकाल ६०६ ई० से ६४७ ई० तक मानते हैं किन्तु यह सर्वथा अयुक्त है जैसा कि पीछे दर्शाया जा चुका है। इसका शासनकाल विक्रमी संवत् ३५ से ७६ अर्थात् २२ ई० पू० से १९ ई० सन् तक था।

प्रभाकरवर्द्धन की मृत्यु के पश्चात् राज्यवर्द्धन राजा हुवा, पर मालवनरेश देवगुप्त तथा गौड़नरेश शशांक की दुरभिसन्धिवश वह मारा गया। हर्षवर्द्धन ने अपनी बहन राज्यश्री का विन्ध्याटवी से उद्धार किया था। उसने थानेसर और कन्नौज साम्राज्यों का एकीकरण किया, देवगुप्त से मालवा छीना और शशाङ्क को गौड़ भगा दिया। पुनः दक्षिण पर भी अभियान किया, किन्तु आन्ध्र पुलिकेशिन् द्वितीय द्वारा रोक दिया गया। हर्ष के साम्राज्य में शासन व्यवस्था बहुत सुन्दर थी। उसने विभिन्न मतों के विषय में उदार नीति बरती। विदेशी यात्रियों का सम्मान किया। चीनी यात्री हुएन्त्सांग ने उसकी बहुत प्रशंसा की है। हर्ष प्रति पांचवें वर्ष एक विशाल धार्मिक समारोह करके अपना सर्वस्व दान करता था। कन्नौज और प्रयाग के समारोहों में हुएन्त्सांग भी उपस्थित था। हर्ष कला और साहित्य का पोषक था। कादम्बरीकार बाणभट्ट उसका अनन्य मित्र था। हर्ष स्वयं भी पण्डित था। वह वीणा भी बजाता था। उसके लिखे तीन नाटक (नाटिकायें) नागानन्द, रत्नावली और प्रियदर्शिका संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधियां हैं। बांसखेड़ा (शाहजहानपुर उ० प्र०) से प्राप्त ताम्रपत्र पर हर्ष के हस्ताक्षर सुन्दर कलायुक्त बने हैं। वहां लिखा है—"स्वहस्तो मम महाराजाधिराजश्रीहर्षस्य"—मुझ महाराजाधिराज श्री हर्ष के अपने हाथ का लेख। इससे उसका कलाप्रेम प्रकट होता है।

हर्ष ने नालन्दा विश्वविद्यालय का पुनरुद्धार किया था। उसकी खुदाई में निकला महाराजा हर्ष का एक मुद्रांक (मोहर)

---

१. स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः—अपहोल शिलालेख, श्लोक ३७॥

२. प्राचीन भारतीय अभिलेखों का अध्ययन : प्रथम संस्करण, पृ० २३४ वासुदेव उपाध्याय।

3. Indian chronology : page 34, by Dr. D. S. Trived.

4. Corpus Inscriptionum Indicarum vol. III. The Gupta Inscriptions, No. 52, plate XXXII B. P. 231 by Johan Faithfull Fleet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



नालन्दा में मैंने भी देखा था। बहुत यत्न करने पर भी वहां के अधिकारियों ने उसका चित्र इस पुस्तक में प्रकाशनार्थ नहीं दिया। उसके लेख से ज्ञात होता है कि महाराजा हर्षवर्द्धन ने बहुत धन व्यय करके नालन्दा विश्वविद्यालय का उद्धार किया था।

नालन्दा से प्राप्त महाराज हर्ष के एक अन्य मुद्रांक का लेख इस प्रकार है—

महाराजश्रीनर(वर्द्धनस्तस्य)पुत्रस्तत्पादानुध्यात(:) श्रीवज्रिणी-
देव्यामुत्पन्नः परमादित्यभ(क्तो महा)राजश्रीराज्य-वर्द्धनः-तस्य पुत्रस्तत्पा-
दानुध्यातः श्रीअप्सरोदेव्यामुत्पन्न(: पर)मादित्यभक्तो महाराजश्रीमदादित्य-
वर्द्धनः। तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः श्री(महा)सेनगुप्तायामु(त्प)न्नः चतुःसमु-
द्रातिक्रान्तकीर्तिः प्रतापानुरागोप(नतान्य)राजो वर्ण्णाश्रमव्यवस्थापनप्रवृत्त-
चक्र एक चक्करथ इव प्रजानामार्त्तिह(रः) परमादित्यभक्तः परमभट्टारक-
महाराजाधिराजश्रीप्रभाकरवर्द्धनः। तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः अतिशयित-
पूर्व्वराजचरितो देव्याममलयशोमत्यां श्रीयशोमत्यामुत्पन्नः परमसौगतः सुग-
(त इ)व परहितानुरतः परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीराज्यवर्द्धन(:)त-
स्यानुजस्तत्पादानुध्यातः परमभ(ट्टा)रिकामहादेवीयशोम(त्यां) दे-
व्यामेवोत्पन्नः परममा(हे)श्वरः महेश्वर इव सर्व्वस-
त्त्वानुकम्पकः परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीहर्षः॥

हर्षवर्द्धन का वंश थानेसर का पुष्यभूति वंश कहलाता है। सोनीपत और नालन्दा के मुद्रांकों को मिलाकर देखने से हर्ष की वंशावली इस प्रकार निश्चित होती है:—

महाराज नरवर्द्धन (पत्नी-वज्रिणीदेवी)

परमादित्यभक्त महाराज राज्यवर्द्धन (प्रथम) (पत्नी-अप्सरोदेवी)

परमादित्यभक्त महाराज आदित्यवर्द्धन (पत्नी-महासेनगुप्तादेवी)

परमादित्यभक्त परमभट्टारक महाराजाधिराज प्रभाकरवर्द्धन (पत्नी-यशोमती देवी)

परमभट्टारक महाराजाधिराज राज्यवर्द्धन (द्वितीय) — परमभट्टारक महाराजाधिराज हर्ष(वर्द्धन)

इन मुद्रांकों के लेखों से निम्नलिखित बातें प्रकाश में आती हैं—

१. हर्ष की माता यशोमती हर्ष के जन्म समय में परमभट्टारिका बन गई थी, जबकि हर्ष के ज्येष्ठ भ्राता राज्यवर्द्धन (द्वितीय) के जन्म समय में नहीं थी।

२. परममाहेश्वर पद से सिद्ध होता है कि हर्ष यौधेयों की परम्परा के अनुकूल शिवजी महाराज को अपना आदर्श तथा पूज्य मानता था।

३. सोनीपत के ताम्र मुद्रांक में लेख के ऊपर बना नन्दी का चित्र भी यही सिद्ध करता है।

४. महाराज प्रभाकरवर्द्धन ने शिथिल हुई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की वर्णव्यवस्था तथा ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास इन की आश्रम व्यवस्था का पुनरुद्धार किया था।

## ८. करवीरेश्वरस्य : समय २८०० वर्ष पूर्व (२२७४ कलि संवत्)

यह मुद्रांक अच्छेज (पहाड़ीपुर) ग्राम से श्री पण्डित ओम्प्रकाश जी सिद्धान्त शिरोमणि के सौजन्य से प्राप्त हुआ है। इस पर लेख के अन्त में त्रिशूल का चित्र है। करवीरेश्वरस्य यह लेख ब्राह्मीलिपि में लिखा है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अच्छेज ग्राम जिला रोहतक के झज्जर उपनगर से पश्चिम में १० मील और दिल्ली से पश्चिम में ४६ मील दूर है। यहां यौधेयों का एक उजड़ा हुआ दुर्ग है। यहां यौधेय और वासुदेव कुषाण मुद्रायें लगभग ६ किलो मिली थीं, जिनकी संख्या १४०० के लगभग थी। ये मुद्रायें भी पण्डित ओम्प्रकाश जी की कृपा और पुरुषार्थ से हमें मिली हैं।

प्राचीनकाल में करवीरनगर गंगा के तट पर वसा हुआ था। करवीर कनेर को कहते हैं। करवीर के जंगल को काटकर यह नगर वसाया था। जैसे रोहीतक (रूहीड़े) के जंगल को काटकर कुमार कार्त्तिकेय ने रोहतक नगर की स्थापना की थी, इसी प्रकार करवीरनगर भी गंगा के तट पर हमारे पूर्वजों ने वसाया था। इस समय गंगा गढ़मुक्तेश्वर के पास से वहती है। गंगा, यमुना और सरस्वती ये तीनों नदियां कभी आधुनिक हरयाणा प्रान्त में से होकर वहती थीं। सरस्वती तो अव भी अपनी छोटी-सी शाखा वरसाती नदी के रूप में इधर ही वहती है। कुछ लोग घग्घर नदी को ही सरस्वती कहते हैं यह अभी खोज (शोध) का विषय है। गंगा और यमुना तो हटते-हटते पूर्व की ओर जाती जा रही हैं। पहले झज्जर से १० मील पश्चिम में अच्छेज ग्राम के पास से होती हुई सरूपगढ़ शांत्तौड़, कालियावास और विरहोड़ आदि ग्रामों के निकट से गुजरती थीं। अव भी इस क्षेत्र में कुयें आदि खोदते समय नदी (दरिया) की मोटी रेती के स्तर निकलते हैं। ये इस वात का ठोस प्रमाण हैं कि कभी यहां नदियाँ वहती रही हैं। सरूपगढ ग्राम के पास गंगा नाम का कच्चा तालाव (जोहड़) है। जनश्रुति के अनुसार अव तक लोग यही कहते हैं कि पहले यहां से गंगा वहती थी। यहां पुराने नगर के खण्डहर भी विद्यमान हैं। जिनमें यौधेयकालीन लम्वी-चौड़ी ईंटें निकलती हैं। यहां भी यह जनश्रुति है कि इस स्थान पर पाण्डु के दादा महाराजा शान्तनु का शान्तनुगढ नामक नगर वा दुर्ग था। उसका विकृत रूप शांत्तौड़ नामक ग्राम अव उसकी स्मृति दिला रहा है। यहां एक दाधिया (दाहदिया) नाम का खेड़ा (खण्डहर) है जिसके विषय में यह जनश्रुति प्रचलित है कि चित्रांगद और विचित्रवीर्य का दाह संस्कार (अन्त्येष्टि क्रिया) यहीं हुआ था तथा खाचरौली ग्राम के पास से गंगा नदी वहती थी। उसमें मल्लाह की कन्या सत्यवती धर्मार्थ नाव चलाती थी। यहीं पर महाराजा शान्तनु ने उसके दर्शन किये, जिससे उसकी विवाह करने की इच्छा हुई। खाचरौली के स्थान पर महारानी सत्यवती के पिता बसते थे।

जनश्रुति की इन सब वातों से इसकी पुष्टि होती है कि गंगा वा उसकी कोई शाखा ग्राम अच्छेज के पास से होती हुई कभी सहस्रों वर्ष पूर्व अवश्य वहती थी और उसी के तट पर यह करवीरनगर वसा हुआ था।

उसी करवीरनगर के स्वामी का यह मुद्रांक है। इसीलिए इस पर "करवीरेश्वरस्य" यह लिखा है। इसका स्वामी, यौधेयों का कोई सेनापति था। इन्द्रप्रस्थ के पश्चिम में बसे यौधेयों के दशार्णों (दस दुर्गों) में से एक दुर्ग यह भी था। यहीं से मिलीं यौधेय मुद्रायें यौधेय दुर्ग को प्रमाणित करती हैं।

इस मुद्रांक पर लेख के अन्त में त्रिशूल का चित्र है। यह गणकर्त्ता और गणराज्यों के आदि संस्थापक शिवजी महाराज का "विजय" नामक प्रिय शस्त्र है। यह शस्त्र यौधेयों के मुद्रांकों तथा मुद्राओं पर भी प्रायः मिलता है। इसके विषय में आगे नौरंगावाद (वामला) तथा सुनेत प्रकरण में विस्तार से लिखा जायेगा।

प्राचीनकाल में करवीर आदि नाम पुरुषों के भी होते थे। जैसे रामायण के अनुसार खर के एक सेनापति का नाम करवीराक्ष था। इसने राम पर आक्रमण तथा उससे युद्ध किया था। महाभारत के अनुसार करवीर एक प्रमुख नाग का नाम था (आदिपर्व ३५।१२)। करवीर द्वारका के समीपवर्ती एक वन का नाम। करवीरपुर एकतीर्थ जहां स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मरूप हो जाता है (अनुशासन पर्व २५।४४)। वस्तुतः स्नान करने मात्र से ब्रह्मरूपता नहीं हो सकती उसके लिए तो योगांगानुष्ठान आदि परिश्रम साध्य घोर तप करना पड़ता है, तव कहीं सफलता मिलती है। प्राचीन काल में तीर्थनाम गुरुकुलों का भी था, वहां से स्नान करके=स्नातक वनकर जो ब्रह्मचारी निकलते थे वे अवश्य योगसाधना करने से ब्रह्मरूप=ब्रह्म को प्राप्त किए हुए होते थे।

## बे बें : समय २८०० वर्ष पूर्व (२२७४ कलि संवत्)

यह मुद्रांक अच्छेज ग्राम से पं० ओम्प्रकाश जी सिद्धान्त शिरोमणि के सौजन्य से प्राप्त हुआ है। यह विपरीत (उल्टा खुदा हुआ) मुद्रांक है, इसकी मूठ में छिद्र है। इस पर दो अक्षर "बे बें" खुदे हैं। अक्षरों के चारों ओर गोल घेरा भी खुदा है। इस मुद्रांक पर संक्षेप में लेख लिखा है। इसका भाव क्या हो सकता है यह विचारणीय है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १०. भ ।। : समय = वीं शती विक्रमो संवत्

यह मुद्रांक ग्राम मोहनबाड़ी (छोटा झांसवा) से श्री पृथीसिंह जी आर्य के सौजन्य से हमें मिला है। इस पर ब्रह्मीलिपि में एक अक्षर "भ ।।" खुदा है। इसके आगे दो खड़ी रेखायें भी खुदी हुई हैं। "भ" भगवान् वा भगवतः का प्रारम्भिक अक्षर है। यह विष्णु=सर्वव्यापक प्रभु का नाम है।

### भग एव भगवां अस्तु (ऋग्वेद ७।४१।५)

वेद भगवान् के इस निर्देशानुसार ऐश्वर्य के भण्डार को ही भगवान् कहते हैं। सामान्यतया धन-सम्पत्ति, रूप-यौवन, शक्ति और विद्या ये सभी गुण ऐश्वर्य में समा जाते हैं। इन सबका दाता वही भगवान् है। अमूल्य स्वर्ण और रत्नादिकों से लेकर चक्रवर्त्ती राज्य तक का देने वाला वही है। जो व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र उस भगवान् को नहीं भूलता, वह सब प्रकार के ऐश्वर्य को प्राप्त करके सुख भोगता है।

"भ" यह महासेनापति अथवा राज्यकर्मचारी के नाम का आद्यक्षर भी हो सकता है।

मोहनबाड़ी वा छोटा झांसवा रोहतक मण्डल की झज्जर तहसील का एक छोटा-सा ग्राम है। यह झाड़ली रेलवे स्टेशन से दक्षिण-पूर्व के कोने में २ मील की दूरी पर विद्यमान है। वहां के लोग इसे कोट्ट=दुर्ग भी कहते हैं। संस्कृत में यह कोट्ट दुर्ग का वाची है। यथार्थ में यह यौधेयों का एक बहुत बड़ा और प्राचीन दुर्ग था। इसके खण्डहर बहुत विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए हैं। इस दुर्ग में एक बहुत बड़ा सरोवर भी था। इसमें प्रस्तर की खण्डित मूर्तियां बहुत मिलती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि विदेशी आक्रमण-कारियों ने अच्छे-अच्छे मन्दिरों का विध्वंस किया है। इस दुर्ग से गुर्जरप्रतिहार सम्राट् आदिवराह और महाराजा सामन्तदेव भीम की मुद्रायें पर्याप्त संख्या में मिली हैं। श्री सामन्तदेव भीम की मुद्रायें ढालने का एक ठप्पा (सांचा) भी मिला है, सम्भव है यहां उसका लक्षण स्थान (टकसाल) था। इससे ज्ञात होता है कि विक्रमी दसवीं शती के आरम्भ तक यह दुर्ग अपने अच्छे रूप में विद्यमान था। यहाँ से निकला एक अर्धलिखित शिलालेख (अष्टम-नवम शती वि०) श्री सत्यदेव जी के प्रयत्न से हमें मिला है। यह शिलालेख ग्राम लूलोढ में चला गया था। यहां से प्राप्त मूर्तियों के भग्नावशेषों से यहां की उत्कृष्ट शिल्पकला का बोध होता है। यदि इस दुर्ग का विधिवत् उत्खनन कराया जाये तो बहुत महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध हो सकती है। इस दुर्ग से निकले दो बड़े-बड़े मटके मिले हैं जिनमें ५-५ मन अन्न समा सकता है। इनमें से एक मटका झाड़ली ग्राम से श्री बलवान्सिंह एस० डी० ओ० के प्रयत्न से मिला है। इस यौधेय दुर्ग के चारों ओर पक्की ईंटों से बनी सात हाथ चौड़ी बाहर की चारदीवारी भी थी जो अब भी अनेक स्थानों पर प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ती है। मोहनबाड़ी के श्री मा० रामचन्द्र आदि अनेक सज्जनों ने मुझे सदैव सहयोग देने की कृपा की है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

पञ्चम अध्याय

# यौधेयों का परिचय

यौधेय कौन थे तथा इनका जनपद कहाँ और कैसा था, इस पर प्रकाश डालना आवश्यक है।

**यौधेय शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ**—'युध् सम्प्रहारे' दिवादिगण के इस धातु से 'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः" (अष्टाध्यायी ३.१.१३५) इस सूत्र के द्वारा 'क' प्रत्यय करके युध शब्द उपपन्न हुआ। स्त्री विवक्षा में 'अजाद्यतष्टाप्' (अष्टा० ४.१.४) से टाप प्रत्यय करके युधा, पुनः 'द्व्यचः' (अष्टा० ४.१.१२१) से अपत्यार्थक ढक् प्रत्यय करके युधाया अपत्यं 'यौधेयः' शब्द बना। इसी शब्द से 'पर्श्वादियौधेयादिभ्यामणञौ' (अष्टा० ५.३.११७) सूत्र से स्वार्थ (अपने ही अर्थ) में 'अञ्' प्रत्यय होकर भी यौधेय शब्द बना। संघ की विवक्षा में 'संघाङ्कलक्षणेष्वञ्यञिञामण्' (अष्टा० ४.३.१२७) सूत्र से अञन्त प्रातिपदिक से अण् प्रत्यय भी किया जाता है।

युधाया अपत्यं यौधेयः, बहुवचने—यौधेयाः।

युधा नाम की माता से उत्पन्न पुत्र यौधेय कहलाया, उसकी सन्तति तथा उस प्रसिद्ध व्यक्ति के देश में रहने वाले सभी यौधेय कहलाये। जिनकी माता भी युद्ध करने वाली वीराङ्गना हो, उसके पुत्र यौधेय क्यों न शूरवीर क्षत्रिय होंगे? महर्षि पाणिनि मुनि ने भी यौधेयगण को आयुधजीविगण[1] अर्थात् सच्चे शूरवीर क्षत्रियों का गण माना है, वैसे तो यौधेय पिता के रक्त से भी वंश परम्परा के अनुसार सच्चे शूरवीर क्षत्रिय हैं।

क्षत्रियों के दो वंश प्रसिद्ध हैं—सूर्यवंश और चन्द्रवंश। दोनों वंश वैवस्वत मनु से सम्बन्धित हैं। सूर्यवंश मनु के पुत्र से तथा चन्द्रवंश मनुपुत्री इला से चला। यौधेयवंश मनु की सत्रहवीं पीढी और इला (पति-बुध) की सोलहवीं पीढी से प्रारम्भ होता है। इनकी वंशावली इस प्रकार है—

१. वैवस्वत मनु[2]
|
२. इला कन्या (पति-बुध)
|
३. पुरूरवा ऐल
|

१. पर्श्वादियौधेयादिभ्यामणञौ (अष्टा०५.३ ११७)।

२. वैवस्वत मनु को आज सं० २०३१ वि० में १२०५३३०७३ वर्ष हो चुके हैं। ४३२०००० वर्षों की चतुर्युगी होती है। २७ चतुर्युगियां तथा सतयुग, त्रेतायुग और द्वापरयुग सम्पूर्ण बीत चुके हैं। वर्तमान अट्ठाईसवीं चतुर्युगी के कलियुग के भी ५०७३ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



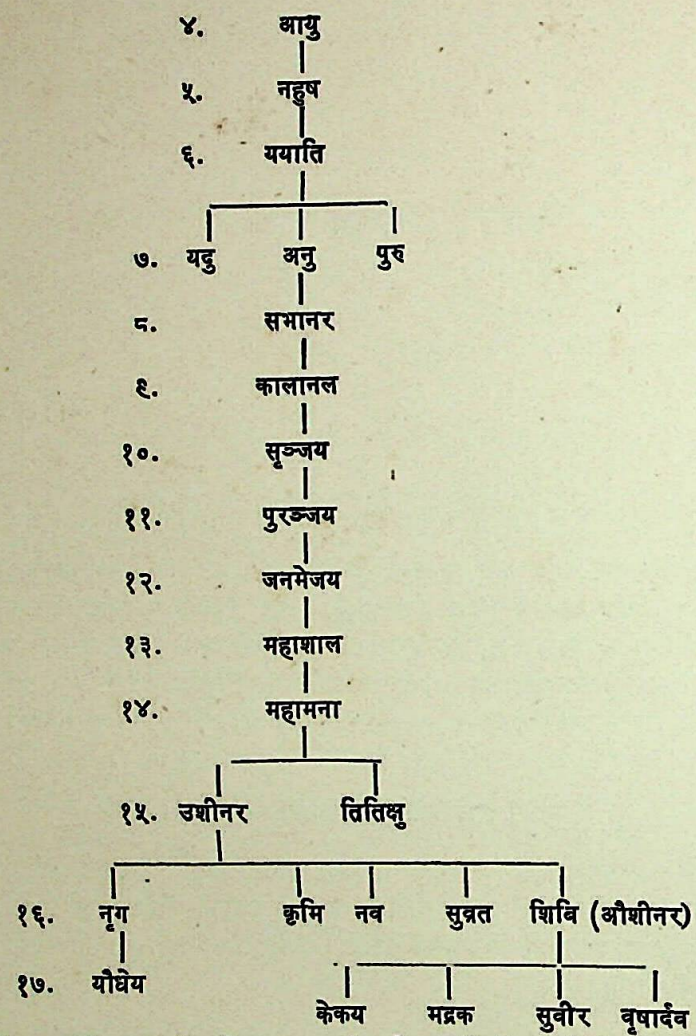


दक्ष के दौहित्र विवस्वान् के समय ही अत्रि नामक ऋषि हुये, उन्हीं की सन्तति से यौधेयवंश चला।

जिस महाराज बुध का विवाह मनुपुत्री इला से हुवा, उसकी वंशावली इस प्रकार है—

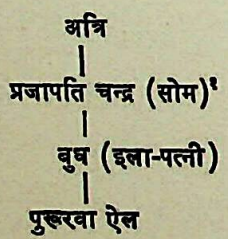


१. सोमः प्रजापतिः पूर्वं कुरूणां वंशवर्द्धनः।
सोमाद् बभूव षष्ठोऽयं ययातिर्नहुषात्मजः॥

कुरु वंश का वृद्धिकारक आदि पुरुष सोम हुवा। सोम की छठी पीढी में नहुषपुत्र ययाति उत्पन्न हुवा। सोम का नाम चन्द्र भी था। इसी के कारण चन्द्रवंश चला।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सोम अपर नाम चन्द्र एक श्रेष्ठ राजा हुआ है। इसका राज्य हिमालय के उत्तर-पश्चिम में था। इसी राजा सोम के पुत्र बुध का विवाह मनुकी पुत्री इला से हुआ। इन दोनों का पुत्ररत्न सम्राट् पुरूरवा ऐल हुवा है। इसका राज्य पहले असुर प्रदेश में था, किन्तु मनु का दौहित्र होने के कारण प्रतिष्ठान (प्रयाग) का राज्य मिला। पुरूरवा को सप्तद्वीपपति=सातों द्वीपों का अधिपति लिखा है। यह मद्र देश का स्वामी तथा राजर्षि भी था। इसे महाभारत में ब्रह्मवादी, तेजस्वी, सत्यवाक् और दानशील लिखा है। यह अनेक यज्ञाग्नियों का आविष्कर्त्ता था। इसके छः पुत्र थे, किन्तु आयु नामक पुत्र के द्वारा ही यह वंश प्रसिद्ध हुआ।

इस प्रकार यौधेयों के पूर्वजों में मनु, पुरूरवा, ययाति, यदु, उशीनर और नृग[1] आदि बड़े प्रतापी राजा हुये हैं। यौधेय के चचेरे भ्राता केकय और मद्रक भी बड़े-बड़े राज्यों के स्वामी और निर्माता बने। छान्दोग्योपनिषद् में चर्चित धर्मात्मा राजा अश्वपति इसी केकय वंश में हुवा है जिसकी चर्चा जगत्प्रसिद्ध है। उसका राज्य आदर्श राज्य था।[2] मद्रकवंश भी महाभारत का प्रसिद्ध क्षत्रिय वंश है। इसी वंश में मद्रों का प्रसिद्ध राजा शल्य हुवा, उसी की बहिन माद्री के पुत्र वीर नकुल और सहदेव थे। शल्य स्वयं महारथी था। वह कुरुवों का महासेनापति तथा कर्ण का सारथि बना था। यदुवंश भी इसी का वंशज है जिसमें जगत्प्रसिद्ध योगिराज श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज हुये। इसी प्रकार पुरुषोत्तम राम तथा कौरव पाण्डव आदि भी यौधेय वंश की शाखा-उपशाखाओं में उत्पन्न हुये हैं। वैसे तो क्षत्रियों के सभी प्रसिद्ध वंश ऋषियों की ही सन्तान हैं।[3] किन्तु वैवस्वत मनु के वंश में होने से यौधेयों का बहुत उच्च स्थान है। इतिहास प्रसिद्ध राजा शिवि (औशीनर) यौधेयों का चचा था। प्रसिद्ध गणकर्त्ता अम्बष्ठ भी इनका चचेरा भाई था। सार्वभौम ययाति के पुत्र अनु के वंशज होने से यौधेय 'आनव' भी कहलाते थे। सप्तद्वीपों का स्वामी चक्रवर्त्ती सम्राट् महामना यौधेयों का प्रपितामह (परदादा) था। इन्हीं विशिष्टताओं के कारण यौधेयवंश सहस्रों वर्षों तक भारतीय इतिहास में प्रकाशमान रहा। इनमें वीरता का गुण विशेष होने से आगे चलकर वीर शब्द यौधेयों का पर्यायवाची हो गया। इनके शत्रुओं को भी विवश होकर इनकी वीरता की प्रशंसा करनी पड़ी थी।[4] यौधेयों का दादा उशीनर सारे पञ्चनद प्रदेश (पञ्जाब) का एकमात्र राजा था। उसने पांच विवाह किये। पाँच रानियों से पांच पुत्र उत्पन्न हुए। वे पृथक्-पृथक् पांच राज्यों के स्वामी बने। उशीनर के अधिकार में शतद्रु (सतलुज) नदी के दोनों तटों पर विद्यमान प्रदेश था। वर्तमान बहावलपुर राज्य की सीमा के साथ इसका राज्य था। यही प्रदेश उसके पौत्र यौधेय के भाग में आया। नृग की रानी का नाम युधा था। उसके अपत्य (सन्तान) अपनी माता के नाम के कारण यौधेय कहलाये। माता में वीरता तथा युद्ध पराक्रम इन दोनों गुणों के विशेष होने से माता के नाम से ही यौधेय वंश प्रचलित हो गया।

## क्या यौधेय युधिष्ठिर की सन्तान थे ?

यौधेयों को किसी-किसी लेखक ने युधिष्ठिर का पुत्र लिखा है। यह भ्रम ही है। इसका कारण केवल यही है कि पाण्डु-पुत्र महाराज युधिष्ठिर के एक पुत्र का नाम यौधेय था। यह पुत्र युधिष्ठिर की रानी देविका जो गोवासन शैब्य की पुत्री थी, से उत्पन्न हुवा था।

**युधिष्ठिरस्तु गोवासनस्य शैब्यस्य देविकां नाम कन्यां स्वयंवरे लेभे। तस्यां पुत्रं जनयामास यौधेयं नाम।**

**—महाभारत आदिपर्व ९५।७६**

---

१. नृगो नाम नरेन्द्रोऽहमिक्ष्वाकुतनयः प्रभो! —भागवतपुराण।

२. न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥ छान्दोग्य० ५.११.५॥

३. अष्टाशीतिः सहस्राण्यूर्ध्वरेतसामृषीणां बभूवुस्तत्रागस्त्याष्टमैर्ऋषिभिः प्रजनोऽभ्यपगतः।
—गोत्रावयवात् ४.१.७९ सूत्र पर व्याकरणमहाभाष्य पृ० ५३९, गुरुकुल झज्जर संस्करण।
अट्ठासी हजार ऊर्ध्वरेता आदित्य ब्रह्मचारी ऋषि हुये हैं, जिनमें से बोधायन के अनुसार विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गौतम, अत्रि, वसिष्ठ, कश्यप और अगस्त्य केवल इन आठ महर्षियों ने सन्तान उत्पन्न करना स्वीकार किया था।

४. सर्वक्षत्राविष्कृतवीरशब्दजातोत्सेकविधेयानां यौधेयानां प्रसह्योत्सादकेन·····।
—रुद्रदामन् प्रथम का गिरनार शिलालेख।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इसी भांति मत्स्यपुराण में भी लिखा है—

सुभद्रायां रथीपार्थादभिमन्युरजायत ।
यौधेयं देवकी चैव पुत्रं जज्ञे युधिष्ठिरः ॥ मत्स्यपुराण ५०।५६॥

अर्जुन ने सुभद्रा में अभिमन्यु को उत्पन्न किया और युधिष्ठिर ने देवकी नाम की रानी में यौधेय नामक पुत्र उत्पन्न किया ।

विष्णु पुराण ने दूसरे प्रकार से लिखा है—
यौधेयी युधिष्ठिराद्देवकं पुत्रमवाप । ४।२०-४४॥

युधिष्ठिर का विवाह यौधेयों की एक कन्या यौधेयी से हुवा था, जिससे देवक नामक पुत्र उत्पन्न हुवा ।

यह पुराणों में परस्पर मतभेद है, कुछ इतिहासकारों को इसी से भ्रम हो गया कि यौधेयगण से सम्बन्धित सभी यौधेय युधिष्ठिर की सन्तान थे । इसका प्रतिवाद महाभारत से स्वयं ही हो जाता है, क्योंकि पाण्डवों के अनेक युद्ध यौधेयों के साथ हुये हैं ।

## महाराज युधिष्ठिर का यौधेयों से युद्ध

यौधेयान् मालवान् राजन् मद्रकानां गणान् युधि ।
प्राहिणोन्मृत्युलोकाय शूरान् बाणैर्युधिष्ठिरः ॥ १५७।३०॥

युद्ध में महाराज युधिष्ठिर ने अपने बाणों से शूर यौधेय, मालव, और मद्रकों के गणों को मृत्यु लोक में भेज दिया ।

इस प्रकार युधिष्ठिर के साथ वीर यौधेयों का युद्ध हुवा और स्वयं युधिष्ठिर ने यौधेयों को युद्ध में मारा था ।

## अर्जुन के साथ युद्ध

अथ प्रहस्य वीभत्सुर्ललित्थान् मालवानपि ।
मावेल्लकांस्त्रिगर्त्तांश्च यौधेयांश्चार्दयच्छरैः ॥ द्रोणपर्व १९।१६१॥

अर्जुन भयङ्कर ललित्थ आदिकों को देखकर हंसा और फिर अपने तीखे बाणों के द्वारा मालव, त्रिगर्त्त, यौधेय आदि गणों को पीड़ित कर दिया । दुर्योधन के पक्ष की जो सेना युद्ध में मारी गई, उसकी चर्चा करते हुये महाभारत के कर्णपर्व में लिखा है :—

मालवा मद्रकाश्चैव द्राविडाश्चोग्रकर्मिणः ।
यौधेयाश्च ललित्थाश्च क्षुद्रकाश्चाप्युशीनराः ॥ ५।४७॥

मालव, मद्रक, द्राविड़ और यौधेय आदि उग्रकर्म करने वाले तथा ललित्थ और उशीनर आदि गणों को महारथी अर्जुन ने समर में मार गिराया ।

## नकुल के साथ युद्ध

तत्र युद्धं महच्चासीच्छूरैर्मत्तमयूरकैः ।

पश्चिम दिग्विजय में वीर नकुल का मस्त मयूरध्वजधारी शूरवीर यौधेयों के साथ रोहतक में घोर युद्ध हुवा । इस प्रकार यौधेयों ने युधिष्ठिर, अर्जुन और नकुल आदि पाण्डुपुत्रों के साथ अनके युद्ध किये । यह सब होने पर यौधेय युधिष्ठिर के पुत्र कैसे हो सकते हैं ? यह केवल भ्रम ही है जो कि युधिष्ठिर के यौधेय नामक पुत्र के कारण ही हुवा ।

डा० बुद्धप्रकाश इतिहास के तथ्य के विरुद्ध कल्पना किया करते थे । इसी प्रकार की कल्पना और दुराग्रह श्री महेश कुमार शरण ने गणराज्यों की मुद्रायें[1] नामक अपने अंग्रेजी के पुस्तक में किया है । वहां बहुत झूठी और हास्यास्पद युक्तियां तथा हेतु दिये हैं । जैसे—

1. Tribal Coins Page. 69—71.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



१. भाषा विज्ञान की दृष्टि से युधिष्ठिर और यौधेयों में समानता है। इसलिये ये पिता-पुत्र थे और यौधेयगण का वंश युधिष्ठिर से चला।

यह तो ऐसा हेत्वाभास है जैसे कोई कहे कि राम-रावण मिलते-जुलते शब्द हैं, अतः ये दोनों एक ही वंश के हैं।

२. यौधेयों का निवास स्थान पञ्जाव था तथा पाण्डवों का जन्म स्थान भी पंजाव था, अतः इनका एक ही वंश हुवा।

यह भी सर्वथा मिथ्या कल्पना है क्योंकि युधिष्ठिर आदि पाण्डवों का जन्म हस्तिनापुर में हुवा था, पंजाब में नहीं। यह महाभारत से सिद्ध है।

३. यौधेयों की मुद्राओं के सभी प्राप्तिस्थान पंजाव में हैं, जहां यौधेयों ने राज्य किया तथा ये ही इस प्रदेश के स्वामी थे।

यह युक्ति भी ठीक नहीं है, क्योंकि यौधेयों की मुद्रायें पंजाब में इतनी नहीं मिलीं जितनी कि हरयाणा प्रान्त में मिली हैं। उत्तरप्रदेश के मेरठ, मुरादनगर, लांस डाऊन, देहरादून, बिजनौर, सहारनपुर, अहिच्छत्रा आदि स्थानों पर सब प्रकार की यौधेय मुद्रायें सबसे अधिक संख्या में मिली हैं।

उक्त पुस्तक में इसी प्रकार की अनेक ऊटपटांग बातें लिखी हैं। अपनी लेखनी है, चाहे कुछ भी लिख डालें। उल्टी-सीधी बातों को ऐतिहासिक तथ्य कहने लगें, यह किसी विद्वान् को शोभा नहीं देता। सारे प्रमाण श्री महेशकुमार जी के विरुद्ध ही पड़ते हैं। महाभारत, पुराण आदि प्राचीन साहित्य तथा प्राचीन मुद्राओं और मुद्राङ्कों की खोज से यही सिद्ध होता है कि यौधेय लोग बहुत प्राचीन हैं। वे वैवस्वत मनु की १७ वीं पीढ़ी में श्री राजा उशीनर के पौत्र तथा राजा नृग की सन्तान हैं। महाराज युधिष्ठिर के पुत्र यौधेय की सन्तान ये यौधेय नहीं हैं, जैसा कि हम पहले दर्शा चुके हैं।

## यौधेयों की मुद्रायें

भूगोल की दृष्टि से जिसे पंजाव माना गया है, वहाँ तो यौधेयों की मुद्रायें ढूंढने से भी वड़ी कठिनाई से मिलती हैं। यौधेयों की सभी प्रकार की मुद्राओं का प्राप्तिस्थान हरयाणा तथा पश्चिमी उत्तर-प्रदेश है। मैं लिख चुका हूँ कि "यौधेयगणस्य जय" लेखवाली सहस्रों मुद्रायें हरयाणे से मिली हैं और "यौधेयानां बहुधान्यके" लेख वाली मुद्रायें अब तक हरयाणा की अपेक्षा पश्चिमी उत्तर-प्रदेश में अधिक मिली हैं। षण्मुखकार्तिकेय प्रकार वाली मुद्रायें प्रायः उत्तर प्रदेश से ही मिली हैं। अनेक प्रकार की यौधेय मुद्राओं का संग्रह जितना मुझे ज्ञात है, सबसे अधिक हमारे पास ही है। अतः बिना ज्ञान के श्री महेश कुमार जी [1]ने कैसे लिखने का साहस किया कि यौधेयों की अधिक मुद्रायें पंजाब के विभिन्न स्थानों से मिली हैं। विद्वानों को इस प्रकार धींगा-मुस्ती और खींचा-तानी नहीं करनी चाहिये।

यौधेय लोग [2]कुषाणों से पूर्व भी ई० पू० की ७ वीं शताब्दी में विस्तृत भूभाग पर बसे हुये थे। उनके जीवन में चढ़ाव-उतार आते रहे। निस्सन्देह वे भाग्यवादी न होकर पुरुषार्थी थे। पौरुष पराक्रम ही उनका एक मात्र बन्धु था। कुषाण, गुप्त, हूण, यवन, शक और मुस्लिम आक्रमणकारी कोई भी यौधेयों को नष्ट नहीं कर सके। सोमदेव सूरि जैन विद्वान् ने यौधेयों के इतिहास का सच्चा चित्रण "यशस्तिलकचम्पूमहाकाव्य" नामक अपने पुस्तक (९५९ ई०) में किया है। इस ग्रन्थ में समृद्ध यौधेय देश की राजधानी राजपुर का स्पष्ट वर्णन प्राप्त होता है। क्या वीर यौधेय उसके पश्चात् सदा सर्वदा के लिये लुप्त हो गये? नहीं। इसका उत्तर एक विद्वान् इतिहासकार के अपने शब्दों में पढ़िये:—

---

1. Trible Coins P. 70 :—
The find spots of the Coins are setuated in different places in Punjab. Which is not only presumed ratheer tablshed to have been administend by the Yaudheyas.
२. जरनल यू० पी० हिस्टोरिकल सोसायटी १६ जुलाई १९४३, भाग १, पृ० ५२ से ५७ तक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



"मुलतान[1] के आस पास जिन जाटों ने महमूद गजनवी को परेशान किया था, वे जोध[2] ही थे। उनके भीषण युद्ध कौशल से इसमें जरा भी सन्देह नहीं है। शिवालिक, हाँसी, सरसुती और मेवात तथा हरियान में इन्हीं प्राचीन यौधेयों के वंशज मुस्लिम सुलतानों को चैन से नहीं बैठने देते थे। हरियान, शिवालिक और बयाना के जिन कृषकवीरों ने बलवन को नाकों चने चबा दिये थे, वे यौधेय लोग ही थे। इस युग में यौधेय-साम्राज्य हरियाणा देश में परिवर्तित हो गया था। यह केवल नाम परिवर्तन था, न कि उनके वीररूप का। उनकी स्त्रियों में भी हम वीर क्षत्राणियों के ही दर्शन करते हैं, जिन्हें पगड़ी और टोपी की लाज तथा कुलमर्यादा प्राणों से भी प्रिय थी। अपभ्रंश भाषा के कवि पुष्पदन्त ने भी अपने यशोधर-चरित में यौधेय भूमि का वर्णन किया है। अस्तु: ! स्पष्ट है कि यौधेय वीर-परम्परा मध्य युग तक धर्म और धरा के संरक्षकों को अनुप्राणित करती रही।"

आज भी यौधेयों की सन्तान में अपने पूर्वजों के संस्कार उनके समान ही दृष्टिगोचर होते हैं, सदियां बीत गईं, अनेक राज्य इस आर्यभूमि की रंगस्थली पर अपना अभिनय करके चले गये, किन्तु यौधेयों की सन्तान हरयाणावासियों में आज भी पूर्वजों की विशेषतायें शेष हैं। आहार, व्यवहार, सरलता, आचार, विचार सात्त्विक हैं। अल्हड़पन से युक्त वीरता और भोलेपन से मिश्रित उद्दण्डता आज भी इनके भीतर विद्यमान है। इन्हें प्रेम से वश में लाना जितना सरल है, आंखें दिखाकर दबाना उतना ही कठिन है। इनका शिर कट तो सकता है, किन्तु अन्याय के आगे झुक नहीं सकता। हरयाणा में वैश्यवर्ग (दुकानदार) को निर्बल समझा जाता है, किन्तु जब वह हरयाणे के स्वभाव को प्रकट करता है, तो उसमें भी क्षात्र धर्म का तेज झलकने लगता है। सभी वर्गों के लोग थोड़े बहुत क्षात्र तेज को धारण किये रहते हैं। क्योंकि अपने पूर्वज आयुधजीवी यौधेयों के समान युद्ध करना इनका मुख्य कार्य है। इसका मुख्य कारण इनकी सदा से चली आई क्षात्र धर्म की परम्परा है। आयुधजीवी का अर्थ ही यह है कि अन्याय के विरुद्ध आयुध (शस्त्र) उठाने के लिये जो सदैव उद्यत रहता है, इसी को जीवन समझता है। वह पेट के लिए नहीं जीता, उदर पूर्ति के लिये हथियार नहीं उठाता, किन्तु अन्याय के विरुद्ध लड़ता है। राष्ट्र और निर्बलों की रक्षार्थ उसके आयुध उठते हैं। इसी को जो जीवन समझता है वही आयुधजीवी है। हमारे पूर्वज यौधेय लोग भारत के इसी प्रकार के गणमान्य राच्चे वीर क्षत्रिय योद्धा थे। उन्हीं पूर्वजों के संस्कार और परम्परागत क्षत्रियोचित गुण हरयाणावासियों में दिखाई देते हैं।

अब आगे नौरंगाबाद बामला का सामान्य परिचय देते हुये वहाँ से प्राप्त यौधेयगण के मुद्रांकों का वर्णन किया जायेगा।

---

१. यौधेयों का इतिहास: अवध विहारीलाल अवस्थी, पृष्ठ २।

2. After the break up of the kingdom of Lahore the Jats had grown very powerfull, and begun to make devastating raids into the neighbouring districts. They had molested Mahmud's army on its reutrn journey from Somanatha.
Dr- Ishwari Prasad. History of medieval India1 945, Page 99.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ओ३म्

## षष्ठ-अध्याय

# नौरंगाबाद-बामला

नौरङ्गाबाद (बामला) जिला हिसार की तहसील भिवानी[1] का एक बड़ा ग्राम है। यह ग्राम रोहतक-भिवानी राजमार्ग पर रोहतक से लगभग २२ मील तथा भिवानी से लगभग ७ मील दूर है। इस सड़क पर नौरंगाबाद से बिल्कुल लगे हुये प्राचीन नगर के खण्डहर ऊंचे-नीचे टीलों के रूप में पड़े हुये हैं। यहां की भाषा में इन्हें थेह कहते हैं। ये खण्डहर न्यून से न्यून २०० एकड़ अर्थात् १ सहस्र बीघे भूमि में फैले हुये हैं। कुछ अवशेष तो इस दुर्ग के चारों ओर गढ़ियों के रूप में भी दिखाई पड़ते हैं। दक्षिण में दो-तीन मील की दूरी पर सांगा ग्राम में भी एक छोटा-सा दुर्ग था, वहां से हमें तुगलकवंश की मुद्रायें मिली हैं। इस दुर्ग के चारों ओर जोहड़ वा कच्चे तालाब हैं। कुछेक तो नाम भी प्राचीन ही हैं। जैसे दुर्ग के पश्चिम में स्थित कच्चे सरोवर को 'राजसर' (राजा का तालाब) कहते हैं। उत्तर दिशा के तालाब को 'देवसर' (देव वा विद्वानों का तालाब) कहते हैं। अब इसे तोड़कर खेत बनाये जा रहे हैं। पूर्व और दक्षिण में भी इसी प्रकार के बड़े-बड़े और कच्चे तालाब हैं। वर्षा ऋतु में इनमें पर्याप्त जल भर जाता है। महाभारतकालीन दशार्णों (दश जलयुक्त दुर्गों) में से यह भी एक है, जिसे पाण्डुपुत्र नकुल ने जीता था। इस दुर्ग से प्राचीन इतिहास की जो सामग्री मिली है उससे यही सिद्ध होता है कि यह बहुत प्राचीन नगर है। नौरंगाबाद बामला ग्राम का ही एक भाग है। अब नौरंगाबाद पृथक् बस्ती बन गया है। इसमें राजपूत कुल के क्षत्रिय बसते हैं, तथा बामला में जाट कुल के क्षत्रिय बसते हैं।

इस प्राचीन दुर्ग की खोज का सारा श्रेय मा० भरतसिंह जी आर्य बामला निवासी को है। ये नौरंगाबाद के प्राईमरी स्कूल में बहुत वर्षों तक अध्यापक रहे हैं। वहां इस उजड़े हुये दुर्ग से इतिहास की पर्याप्त सामग्री मिलती थी, क्योंकि लोग इस दुर्ग की खुदाई करके प्रतिवर्ष पक्की ईंटें खोद-खोद कर इस दुर्ग की भित्तियों से निकालते थे और अपने मकान बनाते थे। नौरंगाबाद ग्राम का बहुत-सा भाग इसी प्राचीन दुर्ग की पक्की ईंटों से बना हुआ है। जो ऐतिहासिक सामग्री बालकों के द्वारा वा यहां के लोगों से कभी-कभी मास्टर भरतसिंह आर्य को मिलती थी वे उसे लोगों को दिखाकर यह जानने का यत्न करते थे कि यह खण्डहर कब का और किसका है? समाचार पत्रों के कई संवाददाताओं और स्कूल इन्सपैक्टरों को यह सामग्री देते रहे, किन्तु इस प्राचीन दुर्ग के विषय में कोई ज्ञान नहीं हो सका। मैं भी अनेक वर्षों से हरयाणे के इतिहास की खोज में लगा हुआ था। इसका ज्ञान कुछ समय पीछे मा० भरतसिंह जी को भी हो गया और इन्होंने पकी हुई मिट्टी की कुछ प्राचीन सामग्री पूज्य स्वामी नित्यानन्द जी आर्य भजनोपदेशक के द्वारा मेरे पास भिजवाई। मैं दयानन्द मठ रोहतक में गया तो स्वामी जी ने मुझे वह सामग्री दी। मुझे

१. अब भिवानी पृथक् जिला बना दिया गया है। ये ग्राम भी इसी के अन्तर्गत हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सामग्री देखकर बहुत प्रसन्नता हुई और मैं उसी समय अपनी जीप द्वारा मा० भरतसिंह जी के पास अविलम्ब पहुँच गया। उन्होंने शेष सामग्री भी हर्ष पूर्वक मुझे दे दी। मैंने मास्टर जी को उसी समय बता दिया कि ये हमारे पूर्वज यौधेयों की मुद्रायें (सिक्के) बनाने के ठप्पे (साँचे) हैं। इन पर "यौधेयानां बहुधान्यके" लेख लिखा है। इस नौरंगाबाद (बामला) के दुर्ग से यौधेयों की टकसाल (लक्षण) की अमूल्य निधि प्राप्त करके जहाँ मेरा शोध कार्य करने का साहस बढ़ा, वहां मास्टर जी की प्रसन्नता की भी कोई सीमा नहीं थी। वे भी रात-दिन नई-नई ऐतिहासिक वस्तुयें जुटाने में लग गये। जो कुछ उन्हें मिलता, सर्वथा निष्काम भाव से मुझे देते रहते थे। एक बार डाक द्वारा भी सिक्कों का एक पार्सल उन्होंने मेरे पास भेजा। वे मुझे बार-बार प्रेरणा करने लगे कि इसकी खुदाई होनी चाहिये। इनके उत्साहित करने से मैं अपने ब्रह्मचारियों को लेकर वहाँ पहुँच गया और सड़क के पास नौरंगाबाद की एक धर्मशाला में अपना शिविर लगा दिया। खुदाई का सब सामान अपनी जीप तथा ट्रैक्टर द्वारा ले गये थे। यह खुदाई हमने ६ अगस्त १९६४ से २० अगस्त १९६४ तक की थी। इस खुदाई में ब्रह्मचारियों सहित लगभग २० व्यक्तियों ने भाग लिया था। बामला और नौरंगाबाद के लोगों ने भी पर्याप्त सहयोग दिया।

उस खुदाई में हमें कुषाण[1], यौधेय[2], भारतीय यवन (इण्डोक) राजा[3] और आहत (पंचमार्क्ड) मुद्राओं के ठप्पे (सांचे) पर्याप्त संख्या में मिले। प्राचीनकाल में मकान किस प्रकार बनाये जाते थे यह भी नींव (आधारशिला) तक खुदाई करके देखा। मा० भरतसिंह जी, पहलवान रूपचन्द जी (बामला) तथा ठाकुर बगड़ावतसिंह (नौरंगाबाद) के परिवारों ने हमें बहुत सहयोग दिया। मा० भरतसिंह जी तो रात-दिन हमारे सहयोग में ही जुटे रहे। पहलवान रूपचन्द जी के भ्राता केदारसिंह, मनोहरलाल, मा० फतहसिंह आदि ने भी सब प्रकार से अच्छा सहयोग दिया।

खुदाई में यौधेय और आहत मुद्राओं के जो साँचे हमें मिले, उन्हें सभी इतिहासकार विक्रमादित्य से दो-तीन सौ वर्ष पूर्व के मानते हैं। इण्डोग्रीक सिक्कों का समय तो सिकन्दर के आक्रमण के कारण निश्चित ही है। किन्तु यौधेय और आहत ठप्पों का समय विक्रम से एक वा डेढसहस्र वर्ष पूर्व तो अवश्य होना चाहिये। क्योंकि कुषाण राजा कनिष्क प्रथम[4] का समय १३५६ बी. सी. (ईसा पूर्व) है। इस प्रकार आज से १३५६+१९७४=३३३० वर्ष पूर्व कनिष्क का समय है। "यौधेयानां बहुधान्यके" मुद्रायें इससे भी पूर्व की हैं। कुषाणराजा बिमकडफिस, कनिष्क प्रथम, हुविष्क और वासुदेव प्रथम इन चारों के साथ यौधेयों का निरन्तर युद्ध संघर्ष चलता रहा है। वासुदेव प्रथम के काल में यौधेयगण इस कुषाण राजा को पराजित करके कुषाण राज्य को अपने प्रदेश से सर्वथा समाप्त करके अपने विजय के उपलक्ष्य में "यौधेयगणस्य जय" लेख युक्त मुद्रायें अत्यधिक संख्या में बनवाता है।

"यौधेयानां बहुधान्यके" मुद्रायें मौर्यकालीन[5] लिपि में हैं। जिनका समय १५३६ वर्ष ईसापूर्व का है। अर्थात् आज से १५३६+१९७४=३५१० वर्षों से पूर्व का है। "यौधेयगणस्य जय" लेख वाली मुद्राओं की लिपि गुप्तकालीन[6] है। गुप्तों का समय ३२७ ईसा पूर्व से ८२ ईसा पूर्व तक है। चन्द्रगुप्त प्रथम का समय ३२७ वर्ष ईसापूर्व है। इस प्रकार ३२७+१९७४=२३०१ वर्ष होते हैं। आज से ३५१० वर्ष पूर्व मौर्यकाल तथा २३०१ वर्ष पूर्व गुप्तकाल है। दोनों का अन्तर १२०९ वर्ष का है। इससे यही सिद्ध होता है कि साढ़े तीन सहस्र वर्षों से पूर्व भी यह नौरंगाबाद (बामला) यौधेयों का दुर्ग था। यहाँ "यौधेयानां बहुधान्यके" मुद्रायें ढालने की टकसाल भी थी। कुषाणकाल और गुप्तकाल में कितना अन्तर है यह विचारणीय विषय है। कुषाणराजा वासुदेव प्रथम

---

१. कुषाण राजा कनिष्क और हुविष्क।

२. "यौधेयानां बहुधान्यके" प्रकार।

३. मिनेण्डर, अपोलोडोटस्, ऐण्टी अल्कीदास, एरमेयस्, लीसीयस्, एमण्टस्, फिलाक्सनस् और ऐण्टीमाक्स।

4. (A) The date of Kaniska 1356 B. C., Anrals of Bhandarkar Otriental Research, Institute, Poona, Vol. XXX 316-25

(B) Sahitya Patna. Vol. v. Part 1-(1745 kali Samvat)—Indian Chronology P. 20, by Dr. D. S. Trived.

5. Maurya. Dynasty B.C, 1536—B.C. 1220. Chandra Gupta Maurya 1536 B. C.—Indian Chronology P.18

6. Gupta Dynasty B.C. 327 to B.C. 82, Chandra Gupta I 327 B. C.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तथा "यौधेयगणस्य जय" लेख वाली यौधेय मुद्रायें नौरंगाबाद, सुनेत, अच्छेज, रोहतक, सीदीपुर लोवा, आंवली, करौंथा आदि सभी स्थानों पर एक ही पात्र में एक साथ मिली हैं। इन दोनों की टकसाल भी सुनेत के प्राचीन यौधेय दुर्ग में एक साथ ही मिली है। वासुदेव को पराजित करके यौधेयों ने सुनेत में वासुदेव कुषाण की टकसाल के पास ही अपनी "यौधेयगणस्य जय' प्रकार वाली मुद्राओं की टकसाल भी बनाई, इसमें कोई सन्देह नहीं है। कुषाण काल से लेकर गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि तक कितना समय व्यतीत हो गया यह शोध का विषय है। डा० त्रिवेद के अनुसार दोनों के समय में १२०९ वर्ष का अन्तर है। सम्भव है इसमें कोई भूल भी हो सकती है।

इस दुर्ग की पूर्ण रूप से खुदाई करायी जाये तो इतिहास के बहुत से लुप्त रहस्य हमारे आगे आ सकते हैं। इस प्राचीन दुर्ग से हमें २१ मुद्रांक मिले हैं, देखिये मुद्रांक सं० ११ से ३० तथा ४७८। इन में ११ से १६ संख्या तक के ६ मुद्रांकों पर "यौधेय" नाम का स्पष्ट उल्लेख है। यौधेय लेख वाला एक मुद्रांक अगरोहा से प्राप्त हुआ है, देखिये सं० ३१ पर। सुनेत से प्राप्त एक यौधेय मुद्रांक ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में है, देखिये चित्र सं० ८०। इस प्रकार सब मिलाकर हमारे ज्ञान के अनुसार यौधेय अभिलेख के ८ मुद्रांक अभी तक प्राप्त हुये हैं। जिनका वर्णन पाठक लोग अनुपद ही पढ़ सकेंगे।

## नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

११. रैपति
यौधेयजनपद समय = उत्तर मौर्यकालीन ३१९४ वर्ष पूर्व
प्रकृतानाकनगर (१८८० कलि संवत्)

मिट्टी का यह मुद्रांक हमें मा० भरतसिंह जी के सौजन्य से वानप्रस्थी रामपत जी आर्यभजनोपदेशक के द्वारा प्राप्त हुआ था।

लेख से पूर्व यज्ञियूप का चिह्न है। लेख इस प्रकार है—रैपति यौधेयजनपद प्रकृतानाकनगर = धन ऐश्वर्य से युक्त यौधेय जनपद के प्रकृतानाक नगर का मुद्रांक अथवा यौधेयजनपद की राजधानी आनाकनगर का मुद्रांक। नौरंगाबाद के इस दुर्ग का प्राचीन नाम प्रकृतानाकनगर अथवा आनाकनगर था।

यह यौधेय जनपद यज्ञिय प्रदेश था इसलिये इस विपरीत[1] मुद्रांक पर लेख से पूर्व यज्ञ के यूप का चित्र बना है। यूप के चित्र के पश्चात् रैपति शब्द खुदा है। रैपति का अर्थ है—धन ऐश्वर्य का स्वामी। रै वा रयि शब्द धन-ऐश्वर्य का वाची है। वेद में लिखा है—वयं स्याम पतयो रयीणाम्[2]। हम सब लोग तथा हमारा राष्ट्र वा देश धन-ऐश्वर्य के स्वामी होवें। इस युग के महाविद्वान् महर्षि दयानन्द सरस्वती रयि का अर्थ इस प्रकार करते हैं—

अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवे दिवे। यशसं वीरवत्तमम्[3] ॥

व्याख्यान—हे महादातः ईश्वराग्ने! आप की कृपा से स्तुति करने वाला मनुष्य "रयिम्" उस विद्यादि धन तथा सुवर्णादि धन को अवश्य प्राप्त होता है कि जो धन प्रतिदिन "पोषमेव" महापुष्टि करने और सत्कीर्ति को बढ़ाने वाला तथा जिससे विद्या, शौर्य्य, धैर्य्य, चातुर्य्य, बल, पराक्रम और दृढाङ्ग, धर्मात्मा, न्याययुक्त अत्यन्त वीर पुरुष प्राप्त हों, वैसे सुवर्ण रत्नादि तथा चक्रवर्त्ती राज्य और विज्ञानस्वरूप धन को मैं प्राप्त होऊं, तथा आपकी कृपा से सदैव धर्मात्मा हो के अत्यन्त सुखी रहूँ। रयि का अर्थ विद्यादि धन तथा सुवर्णादि धन है, यह धन सुवर्ण रत्नादि से लेकर चक्रवर्त्ती राज्य तक होता है। यह सबकी महापुष्टि करने वाला तथा सत्कीर्ति को बढ़ाने वाला होता है। जिससे विद्या, शौर्य्य, धैर्य्य, चातुर्य्य, बल, पराक्रम, दृढाङ्ग आदि सच्चे क्षत्रियों के

---

१. इस मुद्रांक पर लेख विपरीत खुदा है। यह मुद्रांक राज्याधिकारी की आज्ञा से राजाज्ञाओं, आदेश पत्रों आदि पर महत्त्वपूर्ण राज्य कार्यों की सिद्धि हेतु लगाया जाता था।
२. ऋग्वेद, मण्डल १० अनुवाक १०। सूक्त १२१। मन्त्र १०॥ अष्टक ८, अध्याय ७, वर्ग ४, मन्त्र ५॥
३. ऋग्वेद, १.१.१.३॥ आर्याभिविनय प्रथम भाग, मन्त्र ३, महर्षि दयानन्द।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सभी गुण प्राप्त होते हैं उससे राजा और प्रजा दोनों न्याययुक्त तथा अत्यन्त शूरवीर बनते हैं; जिससे राष्ट्र चक्रवर्त्ती राज्य का स्वामी बनकर सदैव धर्मात्मा होके अत्यन्त सुखी होता है। यौधेयजनपद इसी प्रकार का "रैपति" था।

यौधेयदेश, गण वा जनपद का नाम प्राचीन साहित्य में अनेक स्थलों पर मिलता है। अनेक प्रमाण पहले भी दिये जा चुके हैं। लगभग ९६ वर्ष विक्रम पूर्व से १७ विक्रमी संवत् तक होने वाले श्री आचार्य वराहमिहिर ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ वाराही (बृहत्) संहिता में यौधेयों तथा यौधेय देश का अनेक वार उल्लेख किया है। यथा—

यौधेयान् सचिवान् सकौरवान् प्रागीशानथ चार्जुनायनान् ॥४।२५॥
कुर्यादायुधजीविविनाशम्·····॥४।२७॥
अलिन्यथोदुम्बरभद्रचोलान् द्रुमान् सयौधेयविषायुधीयान्[1] ॥५।४०॥
दासेरकाः कैकयाः सयौधेयाः। आर्यावर्त्ताः शिबयः०·····।५।६७॥
इक्ष्वाकुयौधेयशकाः कलिंगाः सोपद्रवाः किन्तु सुभिक्षमस्मिन् ॥५।७५॥
भद्राश्वशूरसेनकयौधेयककोटिवर्षनृपान् ॥९।११॥
यौधेयकार्जुनायनशिविचैद्यान् वैश्वदेवे च ॥११।५९॥
यौधेयदासमेयाः श्यामकाः क्षेमधूर्त्ताश्च ॥१४।२८॥
त्रैगर्तपौरवाम्बष्ठपारतवाटधानयौधेयाः।
सारस्वतार्जुनायनमत्स्यार्द्धग्रामराष्ट्राणि ॥१६।२२॥
प्रस्थमालवकैकयदशार्णोशीनराः शिबयः ॥१६।२६॥[2]
आर्जुनायनवसातियौधेयशिविविप्राः ॥१७।१९॥
सौराष्ट्रककुरुमगधदशार्णमत्स्याश्च ॥३२।११॥

वाराही संहिता के इन प्रमाणों से सिद्ध है कि यौधेय देश उस समय अत्यन्त प्रसिद्ध था। यौधेयों के साथ इनके पड़ौसी देश तथा भाई-बन्धुवों के भी नामों का उल्लेख किया है। जैसे—आर्जुनायन, शूरसेनक, मत्स्य, शिबि, केकय, उशीनर, कुरु, दासमेय इक्ष्वाकु, और मालव आदि।

प्राचीन संस्कृत साहित्य[3] में अनेक स्थानों पर यौधेयों की चर्चा मिलती है। जैसे मार्कण्डेयपुराण में भी यौधेयों की चर्चा है—

यौधेया दासमेयाश्च राजन्याः श्यामकास्तथा।
क्षेमधूर्ताश्च कूर्मस्य वामकुक्षिमुपाश्रिताः ॥५८।४७॥

यौधेय, दासमेय, राजन्य, श्यामाक और क्षेमधूर्त इन देशों को भगवान् के तथाकथित कूर्मावतार की बाईं कोख में स्थित बताया गया है।

ब्रह्मपुराण में भी यौधेयों का उल्लेख है—

---

१. आयुधजीवी यौधेयों को यहां विषायुधीय लिखा है अर्थात् उनके शस्त्रास्त्र विषयुक्त = विषमें बुझे हुये होते थे। जिनके लगने पर प्राणी जीवित नहीं रह सकता था।

२. यहां मालव, कैकय, उशीनर, शिबि, कुरु, मत्स्य आदि देशों के साहचर्य से दशार्ण देश से यौधेयदेश का ही ग्रहण करना चाहिये। महाभारत में भी यौधेय देश के एक भाग विशेष के लिये दशार्ण शब्द प्रयुक्त हुआ है।

३. राधे कलिंगान् हन्ति चेक्षवाकुजान्।
ज्यैष्ठे साल्वान्निषादांश्च सस्यं वृष्टिं च नाशयेत् ॥२४९॥
दासेरकाश्च कैकेया यौधेयाः शिवयोजनाः।
आर्यावर्त्ताश्च पीड्यन्ते शुक्रे राहुमुपागते ॥२६८॥
मधुसूदन ओझा विद्यावाचस्पति ने कादम्बिनी में पृ० १८३-८४ पर ये प्रमाण किसी प्राचीन ग्रंथ से दिये हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



शिबेस्तु शिबयो विप्रा यौधेयास्तु नृगस्य ह ॥१३।२४॥

यहां यौधेयों को निश्चय से नृग की सन्तान कहा है। यह श्लोक हरिवंश ३१।२५ में भी मिलता है।

विष्णुधर्मोत्तर महापुराण अध्याय ८ में यौधेयों को मध्य देशवासी लिखा है। गरुड़ पुराण के प्रथम अध्याय में भी यह श्लोक मिलता है—

पाञ्चालाः कुरवो मत्स्या यौधेयाः सपटच्चराः।
कुन्त्याः शूरसेनाश्च मध्यदेशे जनाः स्मृताः॥

अर्थात् पांचाल, मत्स्य, यौधेय, यौधेय देश के समीपस्थ उच्छृंखल (चोर) लोग, कुन्त्य और शूरसेन ये देश मध्यदेश में परिगणित होते हैं।

महाभारत में अनेक स्थलों पर यौधेयों का उल्लेख हुआ है। महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यौधेय भी सम्मिलि हुये थे। उसका वर्णन महाभारत में इस प्रकार दिया है—

काश्मीराश्च कुमाराश्च घोरका हंसकायनाः।
शिबित्रिगर्तयौधेया राजन्या भद्रकेकयाः॥ सभापर्व ५२।१४॥

अर्थात् कश्मीर, कुमार, घोरक, हंसकायन, शिबि, त्रिगर्त, यौधेय, राजन्य, भद्र और केकय देशों के राजा लोग महाराज युधिष्ठिर के लिये सैकड़ों उपायन (भेंट) लाये।

आज से लगभग ४८०० वर्ष प्राचीन महामुनि पाणिनि ने भी अपने व्याकरणग्रन्थ अष्टाध्यायी और गणपाठ में यौधेयों की चर्चा की है—

न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः॥ अष्टाध्यायी ४-१-१७८॥
पर्श्वादियौधेयादिभ्यामणञौ॥अष्टा० ५-३-११७॥
आयुधजीविभ्यश्छः पर्वते॥४-३-९१॥
आयुधजीविसंघाञ्ञ्यङ् वाहीकेष्वब्राह्मणराजन्यात्॥ ५-३-११४॥

इस सूत्र में यौधेयादि गणों को आयुधजीवी संघ माना गया है। यौधेयादि गण में निम्नलिखित गणों का पाठ है—

यौधेय। कौशेय। क्रौशेय। शौक्रेय। शौभ्रेय। धार्तेय। वार्तेय। जाबालेय। त्रिगर्त। भरत। उशीनर॥

शाकटायन व्याकरण में भी यौधेयों की चर्चा है—

वामिनीयौधेयपार्श्वादिवृकाच्छाऽणटेन्यण्॥३-४-१४५॥

यहां भी यौधेयगण को शस्त्रजीविसंघ वाची माना है।

जैमिनीय ब्राह्मण में यौधेयों के राजा का नाम मिलता है—

पुण्यकेशो यौधेयिरीजे शैव्यो राजा।

यौधेयों के राजा शैव्य पुण्यकेश ने यज्ञ किया।

महाराजा समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तम्भ लेख में भी यौधेयों की चर्चा है—

गणपतिनागनागसेनाच्युतनन्दिबलवर्म्माद्यनेकार्य्यावर्त्त राज···कामरूपनेपालकर्तृपुरादिप्रत्यन्तनृपतिभिर्म्मालवार्जुनायनयौधेय-मद्रकाभीरप्रार्जुनसनकानीककाकखरपरिकादिभिश्च सर्वकरदानाज्ञाकरणप्रणामागमनपरितोषित·····।

इसी भांति चष्टन के पौत्र और जयदामन् के पुत्र शकराज रुद्रदामन् ने अपने गिरिनार शिलालेख में भी यौधेयों की वीरता की प्रशंसा की है—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



"...सर्वक्षत्राविष्कृतवीरशब्दजातोत्सेकविधेयानां यौधेयानाम्"...।

सब क्षत्रियों में प्रकट की हुई अपनी वीर पदवी के कारण अभिमानी बने हुये और किसी भांति वश में न आने वाले यौधेयों को मैंने उखाड़ फैंका। यहां रुद्रदामा ने अपने विजय का मिथ्याभिमान किया है, यह आगे स्पष्ट हो जायेगा।

विक्रम की नवमशती में श्री सोमदेव सूरि नामक एक जैन साधु हुये हैं। वे संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे। उन्होंने अपने यशस्तिलक चम्पूमहाकाव्य[1] में यौधेय देश का वर्णन इस प्रकार किया है—

स यौधेय इति ख्यातो देशः क्षेत्रेऽस्ति भारते।
देवश्रीस्पर्धया स्वर्गः स्रष्ट्रा सृष्ट इवापरः ॥४२॥

भारत देश में प्रसिद्ध यौधेयदेश अत्यधिक मनोहर होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है, मानो ब्रह्मा ने दिव्य श्री से स्पर्द्धा करके दूसरे स्वर्ग की रचना कर डाली हो ॥४२॥
क्योंकि—

वपत्रक्षेत्रसंजातशस्यसम्पत्तिबन्धुराः।
चिन्तामणिसमारम्भाः सन्ति यत्र बन्धुराः ॥४३॥

वहां की भूमि अत्यधिक उपजाऊ, खेतों में भरपूर उत्पन्न होने वाली धान्यसम्पत्ति से मनोहर और चिन्तित वस्तु देने के कारण चिन्तामणि के समान आरम्भशाली है अर्थात् मनोवाञ्छित फल देने वाली है ॥४३॥

लवने यत्र नो तस्य लूनस्य न विगाहने।
विगाढस्य च धान्यस्य नालं संग्रहणे प्रजाः ॥४४॥

वहां इतनी अधिक मात्रा में धान्य-सम्पत्ति होती है कि प्रजा के लोग बोई हुई खेती को काटने में, काटे हुये धान्य को गाहने में तथा गाहे हुये अनाज को इकट्ठा करने में समर्थ नहीं होते ॥४४॥

दानेन वित्तानि धनेन यौवनं यशोभिरायूंषि गृहाणि चार्थिभिः।
भजन्ति सांकर्यमिमानि देहिनां न यत्र वर्णाश्रमधर्मप्रवृत्तयः ॥४५॥

वहाँ की प्रजा दान-पुण्य के कार्यों में पुष्कल धनव्यय करती है। युवावस्था में वहां के मनुष्य न्यायपूर्वक वित्तोपार्जन करते हैं। इसीलिये सम्पूर्ण आयु तक यशोलाभ प्राप्त करते हैं। भिक्षुओं के लिये भिक्षा भी इच्छानुसार मिलती है। वहाँ चारों वर्ण तथा चारों आश्रम अपने-अपने कर्त्तव्य पालन में सदा तत्पर रहते हैं। एक वर्ण वा आश्रम का व्यक्ति दूसरे वर्ण वा आश्रम के कर्त्तव्य (जीविका) आदि नहीं करता।

सोमदेव सूरि (विद्वान्) का समय राष्ट्रकूट सम्राट् कृष्ण तृतीय[2] के राज्यकाल के समय माना जाता है। इस ग्रन्थ में प्राचीन यौधेय देश के एक राजा मारिदत्त का भी वर्णन मिलता है।

अपभ्रंश भाषा के कवि पुष्पदन्त (दशमशती) ने भी अपने जसहर चरिउ (यशोधर चरित) में समृद्ध यौधेयदेश का वर्णन किया है—

यौधेय नाम का एक देश है, जहाँ धरती ने दिव्यवेष धारण किया हुवा है। वहां के ग्राम और नगर जन, धन एवं अन्न से भरपूर हैं। ग्राम, नगर और पुरों की सीमाओं पर सुन्दर उद्यान=बाग लगे हुये हैं। उसकी राजधानी रायउरु=राजपुर बहुत सुन्दर

---

१. इसी पुस्तक का दूसरा नाम "यशोधरमहाराजचरित" भी है, क्योंकि इसमें उज्जयिनी के सम्राट् महाराज यशोधर के चरित्र का वर्णन है।

२. ९२९ ई० से ९५९ ई० तक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



और मनोहर घरों से युक्त है। उसके दुर्गों की परिखायें जल से भरी हुई हैं। उसके दो, तीन, पांच और सात मंजिल के भवन बहुत सुन्दर, सफेदी से पुते और मांगलिक हैं, कल्याणकारी हैं।[1] इस ग्रन्थ में यौधेयदेश का वर्णन बहुत विस्तार से दिया हुवा है।

इन सब प्रमाणों से सिद्ध है कि यौधेयदेश कभी अत्यन्त प्रसिद्ध और समृद्धिशाली रहा है। इसी कारण सारे प्राचीन साहित्य में इसकी चर्चा बहुधा मिलती है। इस प्रदेश के एक बहुत बड़े भाग का नाम बहुधान्यक तथा दूसरे का नाम मरुभूमि[2] था। अपभ्रंश भाषा के महाकवि स्वयंभू[3] (अष्टमशती) ने भी मरुभूमि की चर्चा की है। मरुभूमि के निकटवर्ती क्षेत्र शूरसेन (वर्तमान अलवर, भरतपुर, मथुरा आदि) का भी वर्णन दिया हुवा है। इससे ज्ञात होता है कि यहां मरुभूमि से यौधेय प्रदेश के भाग का ही ग्रहण होता है।

बहुधान्यक प्रदेश की कांसे और ताम्बे की सैंकड़ों मुद्रायें हमें प्राप्त हुई हैं, जिनपर "यौधेयानां बहुधान्यके" लेख लिखा है, इसी प्रकार "बहुधन यौधेय" लेख वाली मुद्रायें भी उपलब्ध हुई हैं, देखिये पृ० ४७६ मुद्रा सं० १ और २। एक मुद्रा "यौधेयानां भूमधान्यके" लेखवाली भी मिली है अर्थात् यौधेयों का ऐसा प्रदेश जिसमें बहुत अधिक धान्य=अन्न उत्पन्न होता है। "बहुधान्यक" और "भूमधान्यक" ये पर्यायवाची हैं।

महाभारत में यौधेयों के एक दुर्ग रोहीतक के विशेषण इस प्रकार दिये हैं—

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनधान्यवत्।

यौधेयों का दुर्ग रोहतक बहुत सुन्दर तथा धन और धान्य से सम्पन्न था। गौवों का घर (खजाना) था। यौधेयों के इस बहुधान्यक प्रदेश के दस दुर्गों को नकुल ने जीता था। रोहीतक=रोहतक, महेत्थ=महम और शैरीषक=सिरसा ये तीन नाम तो महाभारत में लिखे हैं। शेष सात दुर्ग ये हो सकते हैं—१. प्रकृतानाकनगर (आनाकनगर नौरंगाबाद बामला), २. आशी=हांसी, ३. अगरोहा (अगरोदक जनपद), ४. सांगवन, ५. दुर्जनपुर, ६. जींद, ७. अच्छेज पहाड़ीपुर वा मोहनबाड़ी। अभी यह शोध का विषय है। अन्वेषण करने पर ठोस प्रमाण भी मिल सकते हैं। ये सभी दुर्ग इन्द्रप्रस्थ से पश्चिम दिशा में हैं।

तान् दशार्णान् स जित्वा च प्रतस्थे पाण्डुनन्दनः।
शिबींस्त्रिगर्तानम्बष्ठान् मालवान् द्विजानथ॥
—महाभारत सभापर्व अ० ३२।

उपर्युक्त इन दस दुर्गों को जीतकर वीर नकुल आगे बढ़ा और आगे चलकर यौधेयों के भाई शिबि, त्रिगर्त, अम्बष्ठ, मालव तथा द्विज आदि मित्रगणराज्यों को जीता।

इस प्रकार यह सिद्ध है कि मुद्रांक पर उल्लिखित यौधेय जनपद सदा ही रैपति=धन ऐश्वर्य का स्वामी रहा है।

---

१. जोहेयउ णामि अत्थि देसु। एं धरणिएं धरियउ दिव्व वेसु।
जहिं जण-धण-कण परिपुण्ण गाम। पुर-णयर सुसीमाराम साम।
घत्ता रायउरु मणोहरु रयणंचिय घरु। ता हि पुरवरु पवणुद्धयहि।
जं णिय-भुयासि-वर णिम्मलेण। अण्णु वि दुग्गउ परिहा-जलेण।
जहिं धवल-मंगलुच्छव सराइं। दुतिपंच सत्त भोमइं माणुसाइं॥
—कवि पुष्पदन्त : जसहर चरिउ, पृ० ४-५॥

२. मरुभूमि स कात्स्न्येन तथैव बहुधान्यकम्—महाभारत। पृ० ४७६ पर मुद्रांक सं० १ पर भी बहुधान्यक ही नाम लिखा है।

३. मरुकण्णाडलाटजालन्धर। टक्कहीरकीरखस बब्बर॥३०.२॥
सकशूरसेणमरुपत्थिवावि॥८२।६॥
—महाकवि स्वयंभू रचित पउम चरिउ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इस मुद्रांक पर जनपद का उल्लेख विशेष प्रयोजन से किया है। जनपद का अर्थ कोषग्रन्थों में इस प्रकार लिखा है—

जनपद—जनस्य लोकस्य पदम् आश्रयस्थानं यत्र। जनः पदं वस्तु यस्येति वा। देशः, राष्ट्रं वा।[1]

जन=मनुष्यों का आश्रय स्थान जहां हो, अथवा जन=मनुष्य हैं वस्तु जिस स्थान की, वह जनपद कहलाता है। देश और राष्ट्र का भी नाम जनपद है। कौटिलीय अर्थशास्त्र में भी जनपद का अर्थ राष्ट्र है। वहां 'जनपद सम्पत्'—राष्ट्र का उत्कृष्ट समुदाय यह अर्थ किया है।

चतुर्दिशं जनपदान्ते साम्परायिकं दैवकृतं वा दुर्गं कारयेत्।[2]

राजा को चाहिये कि अपने देश के चारों ओर स्थित युद्धोपयोगी दैवनिर्मित (पर्वतादि) विकटस्थानों को दुर्गरूप में परिणत कर दे।

आपद्यपसारो वा जनपदमध्ये समुदायस्थानं स्थानीयं निवेशयेत्।[3]

राजा जनपद के मध्य में आठसौ ग्रामों के बीच बनने वाले स्थानीय नाम का एक नगर विशेष बसाये। यहां सर्वत्र देश वा राष्ट्र का नाम जनपद है। चाणक्यनीति में भी लिखा है :—

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्॥[4] अ० ३, श्लोक १०।

एक व्यक्ति का कुल के हित के लिये त्याग करदे। ग्राम के कल्याण के लिये कुल को छोड़ दे। ग्राम का परित्याग जनपद की भलाई के लिये कर दे तथा आत्मा के कल्याणार्थ पृथ्वी के राज्य को भी छोड़ दे। छान्दोग्योपनिषद् में भी जनपदशब्द देश वाची आया है—

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥[5]

महाराजा अश्वपति महर्षि उद्दालक को कह रहे हैं कि हे महर्षिवर्य! मेरे जनपद[6]=देश, राष्ट्र वा राज्य में कोई चोर, कंजूस धनी और शराबी व्यक्ति नहीं है। ऐसा भी कोई व्यक्ति नहीं है जो प्रतिदिन यज्ञ न करता हो, कोई मूर्ख नहीं है, सभी पढे लिखे विद्वान् लोग हैं, कोई भी व्यक्ति दुराचारी नहीं है, पुनः दुराचारिणी स्त्रियां कैसे हो सकती हैं?

दशपुर (मन्दसौर) में पट्टवायश्रेणी=जुलाहों के संगठन द्वारा निर्मित सूर्य मन्दिर की प्रशस्ति में भी जनपदशब्द राष्ट्रवाची ही आया है—

...कल्पद्रुमः प्रणयिनामभयप्रदश्च, भीतस्य यो जनपदस्य च बन्धुरासीत्॥२५॥

अर्थात् मालवदेश का राजा विश्ववर्मा स्नेहीजनों के लिये कल्पवृक्ष के समान, डरे हुओं को अभय देने वाला और जनपद=राष्ट्र का बन्धु था।

---

१. शब्दकल्पद्रुमः।
२. कौटिलीय अर्थशास्त्र, अधि० २, अध्याय ३, प्रकरण २१।
३. कौटिलीय अर्थशास्त्र।
४. विष्णुशर्मा : पंचतन्त्र, मित्रभेदः, श्लोक ३८६। काकोलूकीयम्, श्लोक ८२॥
५. छान्दोग्योपनिषद् ५-११-५॥
६. जनपदो हि देशः। देशावयवश्च देशः। काशिकावृत्ति, विशिष्टलिङ्गो नदीदेशोऽग्रामाः २-४-७ सूत्र। जनपद देश का वाची है और देश के अवयव=भाग भी देश कहलाते हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



श्री यशःकर्णदेव के ताम्रपत्रों[1] में जनपद शब्द से जनपदवासियों का भी ग्रहण किया गया है। यथा—

"·····महाश्वसाधनिक, महाभाण्डागारिक, महाध्यक्षपतानन्यांश्च प्रदास्यमानग्रामनिवासिजनपदांश्चाहूय यथार्हं सम्मानयति बोधयति समाज्ञापयति यथा विदितमेतवस्तु·····।

जब महाराजा यशःकर्णदेव ने हरिशर्म्मादि ब्राह्मणों को ग्रामदान दिया था, उस समय महारानी, राजकुमार, महासेनापति, महाश्वसाधनिक, महाभाण्डागारिक, अध्यक्ष, ग्रामवासी और जनपदवासियों को समारोह में बुलाकर यथायोग्य किसी को सम्मानित किया, किसी को बताया, किसी को आज्ञा दी कि आज इस समारोह में इस-इस प्रकार कार्य किये जायेंगे···।

## महर्षि पाणिनि और जनपद

पाणिनि मुनि रचित संस्कृत व्याकरण के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ अष्टाध्यायी के आधार पर अनेक विद्वानों ने जनपदों की चर्चा की है। श्री वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं—[2]

"वैदिक युग में जन की सत्ता प्रधान थी। एक ही पूर्वज के वंश की परम्परा में उत्पन्न कुलों का समुदाय जन कहलाता था। शनैः शनैः जन का अनियत वास समाप्त होने लगा और जन एक-एक स्थान में बद्ध मूल हो गये। ऐसे प्रदेश वा स्थान जनपद कहलाये। मूल जन के अन्तर्गत जो क्षत्रिय कुल सम्मिलित थे, जनपद में भी राजसत्ता प्रायः उन्हीं के हाथ में रही। राजाधीन तथा गणाधीन दो प्रकार के जनपद थे। इन जनपदों में भी अनेक प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध प्रचलित थे। एक जनपद के निवासी एक ही भाषा बोलते थे। उनमें पारस्परिक भ्रातृभाव था। एक समान इष्ट देवता वा धार्मिक सिद्धान्तों की मान्यता थी। एक जनपद के लोग परस्पर सजनपद[3] कहे जाते थे अर्थात् वे सब एक ही जनपद के निवासी कहलाते थे। प्रत्येक व्यक्ति का एक नाम उसके अपने जनपद के अनुसार भी पड़ता था, जैसे अङ्ग जनपद का निवासी आंगक कहलाता था तथा यौधेय जनपद का वासी यौधेय कहलाता था। इस विषय में महर्षि पाणिनि ने ब्यौरे वार नियम दिये हैं। प्रायः स्त्रियों के लिये भी वे विशेषण प्रयुक्त होते थे। जैसे यौधेयी, आङ्गी, वाङ्गी, माद्री आदि।[4] स्त्रियां जब विवाहिता होकर पतिकुल में पहुँचती थीं, तो वहां उनका जनपदीय नाम बना रहता था। कुन्ती, माद्री, गान्धारी, कौशल्या और कैकेयी आदि सुप्रसिद्ध स्त्री नाम जनपद-सम्बन्ध से ही थे।"

## जनपद और स्त्रियां

गोत्र, जनपद और वैदिक चरणों के नाम से स्त्रियों के नामकरण की प्रथा का अष्टाध्यायी में पर्याप्त उल्लेख हुआ है। इससे स्त्रियों की सामाजिक प्रतिष्ठा का संकेत मिलता है। एक जनपद में उत्पन्न राजकुमारियां वा स्त्रियां विवाह के पश्चात् जब दूसरे जनपद में जाती थीं तो वे पतिगृह में अपने जनपदीय अभिधान से पुकारी जाती थीं। राजस्थान के राजघरानों में प्रायः यह प्रथा विद्यमान थी। जैसे हाढौती वा ढूंढोरी रानी। इसी प्रकार महाभारतकाल के नाम माद्री, कुन्ती, गान्धाजी आदि हैं। महर्षि पाणिनि जी ने इन नामों का उल्लेख अष्टाध्यायी के सूत्रों में भी किया है।[5] अवन्ति जनपद की कन्या अवन्ती, कुन्ति जनपद वा कौन्तार देश की राजकुमारी कुन्ती, कुरुराष्ट्र की लड़की कुरू और भर्ग जनपद की राजपुत्री भार्गी आदि। पाञ्चाली, वैदेही, आंगी, वांगी,

---

१. कौशाम्बी (प्रयाग उ० प्र०) से प्राप्त ये ताम्रपत्र हमारे पुरातत्त्व संग्रहालय गुरुकुल झज्जर में विद्यमान हैं। इन पर संवत् ८२३ और संवत् ८२७ दिया हुआ है।

२. पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृ०१०५।

३. ज्योतिजनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानवर्णवयोवचनबन्धुषु—अष्टाध्यायी ६-३-८४॥

४. स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च ॥ अतश्च ॥
न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः—अष्टाध्यायी ४-१-१७६ से १७८॥
पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृ० १०३।

५. स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च—अष्टाध्यायी ४-१-१७६।
अतश्च—अष्टाध्यायी ४-१-१७७॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मागधी ये नाम प्राच्यदेश के जनपदों की स्त्रियों के थे। पाणिनि ने यौधेय नामक गणराज्य की स्त्री के लिये यौधेयी शब्द का उल्लेख किया है। भारतवर्ष के पूर्वी भागों में स्त्रियों के नामों में "आयन्"[२] प्रत्यय का प्रयोग होता था जैसे गर्ग गोत्र की स्त्री पूर्व में गार्ग्यायणी और दूसरे स्थानों पर गार्गी कहलाती थी।

## महाभाष्य और जनपद

महर्षि पतञ्जलि जी महाभाष्य में जनपद, विषय, निवास और देश शब्दों का प्रयोग भिन्न-भिन्न अर्थों में करते हैं। जनपद किसी न किसी क्षत्रिय जाति के नाम पर बसे थे। कोई क्षत्रिय जाति जितने प्रदेश पर अधिकार करके वहां बस गई, उतना प्रदेश उसी क्षत्रियजाति के नाम पर पुकारा जाने लगा। कम्बोज, गान्धार, कश्मीर, अंग, वंग, चोल, केरल, अवन्ति आदि जनपद इसी अर्थ में थे। कभी-कभी एक जन की स्थिति दुर्बल हो जाती थी और दूसरा जन उसके प्रदेश पर अधिकार कर लेता था, ऐसी स्थिति में प्रथम लोगों का वह निवासमात्र रह जाता था और द्वितीय जन का विषय वा विषयाभिधान जनपद बन जाता था। महाभाष्य में किसी प्रदेश को किन्हीं लोगों का निवास कहा है, वहां उनका तात्पर्य केवल निवास से है। यह आवश्यक नहीं कि उनका वहां आधिपत्य भी हो। उदाहरणार्थ मालावत् लोगों का निवास मालावत् प्रदेश था। विषय का अर्थ अधिकृत देश था। यह आवश्यक नहीं कि अधिकारी जन उस प्रदेश के निवासी भी हों। उदाहरणार्थ अंग, वंग, सुह्म, पुण्ड्र, गान्धार, वासात, शैब, राजन्य, दैवयातव आदि।[३] ये विषय इन प्रदेशों पर सम्बद्ध जातियों के अधिकार को सूचित करते हैं। सम्भव है इनमें किसी जाति का ऐसा विषय भी हो, जिसमें वह रहती न हो। देश शब्द केवल स्थान का द्योतक था।

## संयुक्त जनपद

जनपदों में कभी-कभी दो वा अधिक भी संयुक्त हो जाते थे। तब वे जनपद-समुदाय कहलाते थे। क्षुद्रक-मालव[४] या काशी-कोसल[५] इसी प्रकार के जनपद समुदाय थे। किसी-किसी जनपद के अन्तर्गत कई छोटे-छोटे जनपद उसके प्रान्त रूप में होते थे। उन्हें जनपदावयव कहते थे। कुछ जनपद साल्वावयव के नाम से प्रसिद्ध थे। वे सभी साल्व जनपद के ही भाग थे। जैसे अष्टाध्यायी के प्रमुख वृत्तिकार श्री जयादित्य ने इन जनपदावयवों की गणना इस प्रकार की है—

उदुम्बरास्तिलखला मद्रकारा युगन्धराः।
भुलिङ्गाः शरदण्डाश्च साल्वावयवसंज्ञिताः॥[६]

उदुम्बर, तिलखल, मद्रकार, युगन्धर, भुलिङ्ग, और शरदण्ड, ये सभी छोटे जनपद साल्वजनपद के अवयव=अंग थे। इसी भाँति यौधेयगण के भी अवयव थे, जो तीन भागों में बँटे हुये थे। उनकी मुद्राओं पर लिखित द्वि, त्रि शब्द तथा, पूर्णघट और त्रिरत्न आदि चिह्न इस बात के प्रमाण हैं कि यौधेयों के भी भाग थे। देखिये चित्र सं० ४७६ पर मुद्रा सं० ८। सुनेत का वृष्णिराजन्यगण[७] और अगाचजनपद (अगरोहे) का आग्रेयगण भी यौधेयों के अन्तर्गत छोटे घटक=गण वा अवयव के रूप में थे।

कुछ जनपद मिल कर एक संघ बना लेते थे। त्रिगर्तषष्ठ[८] इसी प्रकार का जनपदसंघ था। पीछे जाकर यौधेय, मालव, आर्जुनायन, कुणिन्द और औदुम्बर आदि गणों का भी एक संघ बन गया था। एक बड़े जनपद के प्रान्तों की सीमा पर स्थित छोटे जनपद जनपदावधि[९] कहलाते थे। आवश्यकता होने पर इस प्रकार की व्यवस्था परिवर्तित भी होती रहती थी।

---

१. न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः—अष्टाध्यायी ४-१-१७८॥
२. प्राचां ष्फस्तद्धितः—अष्टा० ४-१-१७॥ आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम् ॥अष्टा० ७-१-२॥
३. विषयो देशे : महाभाष्य ४-२-५२, पृ० ६४८, गुरुकुल झज्जर संस्करण।
४. क्षौद्रकमालवी सेना, क्षौद्रकमालवकम्। ५ खण्डिकादिभ्यश्च—काशिका ४-२-४।
५. काशिकोसलीया—महाभाष्य ४-१-५४, पृ० ५१४, गुरुकुल झज्जर संस्करण।
६. साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिञ् ४-१-१७३ सूत्र पर काशिकावृत्ति।
७. देखिये मुद्रांक सं० १८७ और १८८।
८. वामन्यादित्रिगर्त्तषष्ठाच्छः—अष्टाध्यायी ५-३-११६।
९. जनपदतदवध्योश्च—अष्टाध्यायी ४-२-१२४।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वैदिक युग अर्थात् आदि सृष्टि (१९६०८५३०७४ वर्ष पूर्व) से ही सारे संसार में आर्यों का एकछत्र चक्रवर्त्ती राज्य था। उसके अधीन माण्डलिक गणराज्य भी प्रबन्ध की दृष्टि से पर्याप्त संख्या में थे। किन्तु वे सब एक सूत्र में बँधे हुये थे, संगठित थे। महाभारत के समय जनपदों की संख्या बहुत अधिक बढ़ गई थी। महाभारत में महर्षि व्यास ने तथा अष्टाध्यायी में महर्षि पाणिनि ने जनपदों की पर्याप्त चर्चा की है। आधुनिक विद्वान् मुनिवर पाणिनि से एक सहस्र वर्ष पूर्व से लेकर पाणिनि तक के समय को जनपदों के विकास और अभ्युदय का युग मानते हैं। भारतीय इतिहासकार इसे महाजनपद युग भी कहते हैं। गृह्यसूत्र, महाभारत और पाणिनि के समय जनपद संस्था का पूर्ण विकास हो गया था। ब्राह्मण ग्रन्थों में जनपदों की नाम मात्र ही चर्चा है। शतपथ ब्राह्मण[1] और ऐतरेय ब्राह्मण[2] के अन्तिम अध्यायों में भी जनपद शब्द आता है। वैदिक संहिताओं और शाखाग्रन्थों में जनपद शब्द नहीं मिलता, क्योंकि ये सब तो सार्वभौम चक्रवर्त्ती राज्य को ही संसार के लिये हितकर समझते हैं।

## जनपदों की संख्या

महाभारत भीष्म पर्व[3] में २२४ जनपदों के नाम आये हैं। कुछ नाम उनमें दो-दो बार भी पढ़े हैं, उन्हें कम कर दिया जाये तो भी २०० से अधिक ही होते हैं। महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि महाभारत से एक सहस्र वर्ष पूर्व भारत देश का पतन आरम्भ हो चुका था।[4] इतनी भारी संख्या में जनपदों का बढ़ना भी महाभारत के युद्ध का एक कारण बना। जनपदों की चर्चा करते हुये महर्षि व्यास ने उनके दोषों का भी वर्णन किया है।[5] कुरुपाञ्चाल से प्रारम्भ करके करभञ्जक तक २०४ जनपदों के नाम गिनवा कर महर्षि व्यास लिखते हैं—

यथा गुणबलं चापि त्रिवर्गस्य महाफलम्।
दुह्येत धेनुः कामधुग् भूमिः सम्यगनुष्ठिता ॥७१॥

अपने गुण और बल के अनुसार यदि अच्छी तरह इस भूमि का पालन किया जाये तो यह कामनाओं की पूर्ति करनेवाली कामधेनु बनकर धर्म, अर्थ और काम तीनों के महान् फल की प्राप्ति कराती है।

तस्यां गृद्धन्ति राजानः शूरा धर्मार्थकोविदाः।
ते त्यजन्त्याहवे प्राणान् वसुगृद्धास्तरस्विनः ॥७२॥

धर्म और अर्थ को जानने वाले शूरवीर राजा लोग उस भूमि के लिये लालच करते हैं। उसे ग्रहण करने के लिये धन के लोभ से युद्ध में लड़ कर प्राण तक भी छोड़ देते हैं।

देवमानुषकायानां कामं भूमिः परायणम्।
अन्योऽन्यस्यावलुम्पन्ति सारमेया यथामिषम् ॥७३॥

देव और मनुष्य देह धारियों के लिये यथेष्ट फलदायक यह भूमि ही निश्चय से उनका परम आश्रय है। इसी के लिये राजालोग परस्पर इस प्रकार लोभ लालच करते हैं जैसे कुत्ते मांस के टुकड़े की ओर लपकते हैं।

राजानो भरतश्रेष्ठ भोक्तुकामा वसुन्धराम्।
न चापि तृप्तिः कामानां विद्यतेऽद्यापि कस्यचित् ॥७४॥

संजय ने कहा—हे भरत श्रेष्ठ धृतराष्ट्र! राजालोग इस धरती के सभी सुखोपभोगों को भोगने की कामना करते हैं, यह उनकी भूल ही है, क्योंकि आज तक किसी की भी कामनाओं की=इच्छाओं की तृप्ति नहीं हुई है।

---

१. स यथा महाराजो जानपदान् गृहीत्वा स्वे जनपदे यथाकामं परिवर्तेत—काण्ड १४, प्रपाठक ४, ब्राह्मण १, (अध्याय ५) कण्डिका २०॥

२. एतस्यामुदीच्यां दिशि ये के च परेण हिमवन्तं जनपदा उत्तरकुरव इति उत्तरमद्रा इति वैराज्यायैव तेऽभिषिच्यन्ते—
—अष्टमपंचिका, अध्याय ३, कंडिका १४॥

३. महाभारत, भीष्मपर्व अ० ९, श्लोक ३८ से ७० तक।

४. सत्यार्थप्रकाश, एकादश समुल्लास।

५. महाभारत, भीष्म पर्व अ० ९, श्लोक ७१ से ७४ तक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तस्मात्परिग्रहे भूमेर्यतन्ते कुरुपाण्डवाः ।
साम्ना भेदेन दानेन दण्डेनैव च भारत ॥७५॥

हे महाराजा धृतराष्ट्र ! इसीलिये भूमि का राज्य ग्रहण करने के लिये कौरव-पाण्डव साम, दाम, दण्ड और भेद इन नीतियों का आश्रय लेकर युद्ध कर के भूमि को हथियाने का प्रयत्न कर रहे हैं ।

पिता भ्राता च पुत्राश्च खं द्यौश्च नरपुंगव ।
भूमिर्भवति भूतानां सम्यगच्छिद्रदर्शना ॥७६॥[1]

हे नरश्रेष्ठ ! यदि भूमि के यथार्थ स्वरूप का सम्पूर्ण रूप से ज्ञान हो जाये तो यह प्राणियों के लिये स्वयं ही पिता, भ्राता, पुत्र, आकाशस्थ पुण्यलोक और स्वर्ग भी बन जाती है ।

महाभारत में महर्षि व्यास लिखते हैं—

त्रेतायां क्षत्रिया राजन् सर्वे वै चक्रवर्त्तिनः ।[2]

त्रेतायुग में सभी क्षत्रियराजा चक्रवर्त्ती थे । यह जनपदों का विस्तार पीछे आकर ही हुआ है । पुराणों के आधार पर जनपदों की संख्या १७५ संकलित की गई है, जो पुराणों के भुवनकोशों में सुरक्षित है ।[3] महर्षि पाणिनि के काल तक यह पूर्ण विकास तक पहुँच चुकी थी । जनपद के सम्बन्ध में पाणिनीय सामग्री अष्टाध्यायी के निम्नलिखित सूत्रों में पाई जाती है—

१. जानपदकुण्डगोणस्थल···केशवेशेषु । ४-१-४२॥
२. जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ् । ४-१-१६८॥
३. जनपदे लुप् । ४-२-८१॥
४. जनपदतदवध्योश्च । ४-२-१२४॥
५. ग्रामजनपदैकदेशादञ्ठञौ । ४-३-७॥
६. जनपदिनां जनपदवत्सर्वं जनपदेन समानशब्दानां बहुवचने ।४-३-१००।
७. ब्रह्मणो जानपदाख्यायाम् । ५-४-१०४॥
८. दिक्शब्दा ग्रामजनपदाख्यानचानराटेषु । ६-२-१०३॥
९. ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानवर्णवयोवचनबन्धुषु । ६-३-८५॥
१०. सुसर्वार्द्धाज्जनपदस्य । ७-३-१२॥

इनके अतिरिक्त गणपाठ के अनेक गणों में जनपदों के नामों की सूची पाई जाती है । भर्गादि (४-१-१७८); अवृच्छादि (४-२-१३३); सिन्ध्वादि (४-३-९३) । इस सब सामग्री पर विचार करने से मूल्यवान् जानकारी प्राप्त होती है ।

महर्षि यास्करचित निरुक्त में भी जनपद शब्द मिलता है । वहां जनपद निवासियों में विशेष विद्यावाले पुरुष को श्रेष्ठ कहा गया है ।[4] महाभारत के पश्चात् सोलह महाजनपद अति प्रसिद्ध थे, जो इस प्रकार हैं—मगध, अंग, काशी, कोसल, वृजि, मल्ल, वत्स, चेदि, कुरु, पांचाल, शूरसेन, मत्स्य, अवन्ति, अश्मक, गान्धार और कम्बोज । इनका उल्लेख बौद्ध और जैन साहित्य में मिलता है । कुरु जनपद में ही यौधेय जनपद आ जाता था ।

---

१. महाभारत, भीष्मपर्व अ० ९, श्लोक ७१-७६ तक
२. महाभारत, भीष्मपर्व १०.११॥
३. वायु पुराण अध्याय ४५, मत्स्य अ० ११५, ब्रह्माण्ड अ० ४६, वामन अ० १३, मार्कण्डेय अ० ५०, गरुड अ० ५५ इत्यादि ।
४. यथा जानपदीषु विद्यातः पुरुषविशेषो भवति, पारोवर्यवित्सु तु खलु वेदितृषु भूयोविद्यः प्रशस्यो भवति ।
निरुक्त अध्याय १, पाद ५, खण्ड २ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## जनपदों का महत्त्व

इस महाजनपद युग में सारे देश में एक सिरे से दूसरे सिरे तक जनपदों का ताँता फैल गया था। एक प्रकार से जनपद राजनैतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन की इकाई बन गये थे। जिस प्रदेश में जनपदीय जीवन संगठित रूप में ऊपर उभर कर आया, वहीं शान्ति, सुव्यवस्था और नीतिधर्म की स्थापना हो गई और वह प्रदेश अराजकता की स्थिति से ऊपर उठ गया। स्थानीय जीवन के विविध प्रकारों में जनपदों ने अच्छा प्रभाव डाला और प्रभावशाली प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य किया। "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"[1] वेद की यह उदात्त भावना जन-जीवन में अभिव्यक्त हो गई और पृथिवी के साथ स्थानीय जनपदों की जनता प्रगाढ मातृत्व के स्नेह से ओत-प्रोत हो गई। "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"[2] यह भावना जन-जन के हृदय में घर कर गई। राष्ट्र भक्ति वा जनपद के प्रति मर मिटने की भावना उस समय पराकाष्ठा तक पहुँच गई थी। उस समय जनपदों का विस्तार पृथिवी कहलाता था।

प्रत्येक जनपद की भूमि वहाँ के निवासियों की सच्ची धात्री थी। जन, भाषा, धर्म, अर्थव्यवस्था और संस्कृति ये सब जनपदीय जीवन की दृढ इकाइयां थीं। समस्त देश में जनपदों की लम्बी शृङ्खला फैली हुई थी। उनका कालकृत स्थायित्व भी कम न था। अनेकों जनपदों के अवशेष अपने-अपने क्षेत्र में आज भी पहचाने जा सकते हैं। यद्यपि उनके राजनैतिक वैभव को समाप्त हुये सहस्रों वर्ष बीत गये हैं।

जिस प्रकार यूनान देश की संस्कृति का सर्वोत्तम विकास वहां के जनपदों वा पुरराज्यों (City States) द्वारा हुआ, उसी प्रकार भारतीय जनपदराज्यों का प्रयोग यूनान देश से अधिक विस्तृत और महान् था। क्योंकि भारतीय जनपद बहुत बड़े भूभाग में विस्तृत थे और इनका स्थायित्व एवं राजनैतिक प्रभाव लम्बे समय तक तथा दूर तक व्याप्त रहा। सांस्कृतिक दृष्टि से भी जनपद युग में भारतीय संस्कृति की जो मूल प्रतिष्ठा हुई, उसका जो स्वरूप उस युग में सम्पन्न हुआ, उसी के आधार पर कालान्तर में जनपद संस्कृतियों के मिलने से राष्ट्रिय संस्कृति का स्वरूप विकसित हुआ।[3]

## जनपदों की सीमायें

वैसे तो जनपदों की सीमायें सदैव बढती-घटती रही हैं, फिर भी एक जनपद को दूसरे जनपद से पृथक् करने वाली कुछ निश्चित सीमायें थीं। भारतीय जनपदों की सीमाओं के विषय में महर्षि पाणिनि जी ने 'तदवधि'[4] का प्रयोग किया है। काशिका[5] में भी कहा है एक जनपद अपने चारों ओर के दूसरे जनपदों से घिरा रहता था, जो उसकी सीमा बनाते थे। कुछ जनपद विस्तार में इतने बड़े होते थे कि वे स्वभावतः ही कई भागों में बँटे हुये थे, जिनके नाम लोक में पृथक्-पृथक् विख्यात हो जाते थे, जैसे पांचाल जनपद का पूर्वी भाग 'पूर्वपाञ्चालाः' और पश्चिमी भाग 'अपरपाञ्चालाः'[6] कहलाता था। 'यौधेयगणस्य जय' लेखयुक्त यौधेय मुद्राओं पर द्वि, त्रि शब्द पृथक् पृथक् अंकित हैं, उनसे भी यही सिद्ध होता है कि वह भी बहुत विशाल जनपद था तथा तीन भागों में तो अवश्य बँटा हुवा था।

## यौधेय जनपद

महाभारत, अष्टाध्यायी, महाभाष्य, यौधेयगण के मुद्रांकों (मोहरों) तथा मुद्राओं (सिक्कों) के देखने से पता चलता है कि यौधेयों के जनपद, गण और संघ तीनों ही थे। इस विषय के अनेक प्रमाण हम पहले दर्शा चुके हैं।

---

१. अथर्ववेद १२-१-१२। यह भूमि मेरी माता है और मैं इस विस्तृत पृथिवी का पुत्र हूँ।

२. उद्भट=लोकप्रसिद्धेऽज्ञातकर्तृके पद्ये उद्भटशब्दः प्रयुज्यते। जिस श्लोक आदि के निर्माता का पता न हो, किन्तु वह पद्य लोक में प्रसिद्ध हो; उस श्लोक वा पद्य के लिये उद्भट शब्द का प्रयोग किया जाता है।

३. पाणिनिकालीन भारतवर्ष पृ० ४५९, वासुदेव शरण अग्रवाल।

४. जनपदतदवध्योश्च—अष्टाध्यायी ४-२-१२४॥

५. तदवधिरपि जनपद एव गृह्यते, न ग्रामः—४.२.१२४ सूत्र पर काशिकावृत्तिः॥ ग्रामसमुदायो जनपदः—काशिका ४.२.८१॥

६. जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ्—अष्टाध्यायी ४-१-१६८। विशोऽमद्राणाम्—अष्टा० ७-३-१३।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रसिद्ध जैन विद्वान् श्री सोमदेव सूरि अपने यशस्तिलकचम्पू महाकाव्य के प्रथम आश्वास में लिखते हैं—

अस्ति खल्विहैव सकलाश्चर्यैकपात्रे भरतक्षेत्रे चतुर्वर्गमार्गणोपकरणप्रसूतः समस्तमहीवलयालंकरणभूतः सुरलोकमनोरथ-विधेयो यौधेयो नाम धाम सम्पदो जनपदः।·····अमरभवनैर्महाभागभवनैरुपशोभितं राजपुरं नाम नगरम्।

निश्चय से इसी जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरतक्षेत्र (आर्यखण्ड) में जो कि समस्त आश्चर्यों का एकमात्र अद्वितीय स्थान है, ऐसा यौधेय नाम का देश है, जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इस पुरुषार्थ चतुष्टय को प्राप्त कराने वाली कारण सामग्री की उत्पत्ति पाई जाती है, जो समस्त प्रशंसनीय पृथिवी मण्डलों का आभूषण सदृश है एवं समस्त सुखसामग्री से भरपूर होने के फलस्वरूप जहाँ पर प्रजाजनों द्वारा स्वर्ग प्राप्ति की कामना नहीं की जाती और जो धनादि लक्ष्मी का निवास स्थान है·····ऐसे यौधेयप्रदेश में ·····अत्यन्त ऊंचे और मणियुक्त दरवाजों की मणियों की किरणों से देवविमानों को पीतवर्ण करने वाला सुशोभित राजपुर नाम का नगर है।

·····चण्डमहासेनस्य नृपतेः सूनुः पराक्रमापहसितनृगनलनहुषभरतभगीरथभगदत्तो मारिदत्तो नाम राजा।

उस राजपुर नगर में महान् पराक्रमी चण्डमहासेन नामक राजा का पुत्र मारिदत्त नाम का राजा था, जिसने अपने महान् पराक्रम द्वारा नृग, नल, नहुष (यादवों का राजा), भरत, भगीरथ (सगरपुत्र) और भगदत्त आदि पराक्रमी राजाओं को तिरस्कृत किया था।

इस वर्णन से यौधेयजनपद की सर्वविध महत्ता स्पष्ट सिद्ध है।

हमारे इस प्रस्तुत मुद्रांक पर भी "रैपतियौधेयजनपद" लिखा है। साहित्य तथा पुरातत्त्व दोनों मिलकर एक ही बात की अक्षरशः पुष्टि कर रहे हैं। यौधेयानां जनपदः, यौधेयजनपदः। यौधेयों का जनपद। यौधेयों का सदा बहुवचनान्त प्रयोग मिलता है। जहाँ एक वचन आता है, वहाँ गण=संगठन के कारण है, जैसे यौधेयगणस्य जय। यहां एकछत्रात्मक राज्य नहीं था। इस यौधेय जनपद की सीमायें भी समय-समय पर बढ़ती-घटती रही हैं। महाभारत के पश्चात् गुप्तकाल तक इनकी प्रभुसत्ता सारे उत्तरी भारत पर अक्षुण्ण रूप से बनी रही थी। शतद्रु (सतलुज) के दोनों कांठों तक पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली सहित सारा हरयाणा, शूरसेन और मत्स्य प्रदेश का भाग भी यौधेय जनपद में सम्मिलित था। यह उत्तर भारत का सबसे बड़ा गणराज्य था। इसे जनपद कहें अथवा आयुधजीवी संघ कहें, बात एक ही है। इस प्रकार इस विशाल यौधेय जनपद की सीमा यह सिद्ध होती है। बहावलपुर राज्य (वर्तमान पश्चिमी पाकिस्तान) से लेकर बीकानेर राज्य के उत्तरी प्रदेश गंगानगर आदि, हिसार, जींद, करनाल, अम्बाला, रोहतक, गुड़गावां, महेन्द्रगढ़, दिल्ली राज्य, उत्तरी-दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान का अलवर, भरतपुर, धौलपुर आदि, देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, अलीगढ़, मथुरा, आगरा, मैनपुरी, एटा, बदायूं, बरेली, बिजनौर, पीलीभीत, मुरादाबाद, शाहजहाँपुर, रामपुर ज़िला आदि सारा पश्चिमी उत्तर प्रदेश यौधेय गणराज्य की सीमा के अन्तर्गत था। एक समय ऐसा भी आया जबकि मुलतान के पास क्रोडपक्का दुर्ग तथा मन्दसौर भी यौधेयों के राज्य में सम्मिलित था। इन उपर्युक्त सभी स्थानों से यौधेयों की अनेक प्रकार की मुद्रायें, मुद्रांक, शिलालेख, टकसाल आदि मिले हैं। एकाध सिक्का तो व्यापार आदि के कारण गया मान लिया जाय, किन्तु सैकड़ों और सहस्रों की संख्या में प्राप्ति होने से यह सिद्ध होता है कि यौधेयों का राज्य वास्तव में इतना ही विशाल था, जितना कि हम लिख चुके हैं।

इसी यौधेय जनपद का उल्लेख इस मुद्रांक पर हुआ है। यौधेय तथा जनपद इन दोनों शब्दों पर पूर्व पृष्ठों में पर्याप्त प्रकाश डाला जा चुका है। इस मुद्रांक पर आगे लिखा है—'प्रकृतानाकनगर'। इस मुद्रांक के प्राप्ति स्थान नौरंगाबाद बामला का यह प्राचीन नाम है। जनपद की राजधानी नगर होती थी। सम्भव है यहां भी कभी राजधानी रही होगी। इण्डोनेशिया आदि देशों में आज तक राजधानी को 'प्रकृत' कहते हैं, उससे भी इस आनाकनगर का राजधानी होना सिद्ध है, अथवा इस नगर का नाम प्रकृतानाकनगर ही होगा, अर्थात् विशेष यत्न और पुरुषार्थ से बनाया हुआ नाक (स्वर्ग) के समान नगर। "क इति सुखनाम। न कः, अकः, न अकः, नाकः। नाक इव नगरं नाकनगरम्। आ समन्तान् नाकनगरम्, आनाकनगरम्, प्रकृष्टेन कृतम् आनाकनगरं प्रकृतानाकनगरम्। प्रकृतं (राजधानं) च तद् आनाकनगरं प्रकृतानाकनगरम्। यहां प्रकृत का अर्थ राजधानी है। क सुख का नाम है, अक दुःख को कहते हैं। अक(=दुःख) का निषेध नाक=सुख=स्वर्ग कहलाया। नाकनगर=स्वर्ग के समान नगर। आ=सब ओर से। जहां सभी ओर स्वर्ग के समान आनन्द, सुख मिलता हो वह स्थान आनाकनगर कहाता है। प्रकृष्टता से, विशेष

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रकार से जिसे सभी ओर से स्वर्ग के समान बनाया गया हो वह स्थान प्रकृतानाकनगर कहलायेगा। न गच्छतीति नगः। नग; पर्वत इव (दूरतः) रमणीयं नगरम्।[1] जो दूर से पर्वत की भांति सुन्दर विशाल और ऊंचा दिखाई दे, वह नगर कहलाता है। ग्राम छोटे होते हैं, नगर बड़े होते हैं।

यौधेयों की राजधानी यह आनाकनगर (प्रकृतानाकनगर) इसी प्रकार का सुन्दर और विशाल नगर था, जिसका संकेत यह मुद्रांक कर रहा है।

जिस प्रकार खांड की रोटी सब ओर से मीठी होती है उसी भांति सर्व सुखसाधनसम्पन्न यह नगर था। इसमें सब प्रकार से आगे-पीछे, दायें-बायें, नीचे-ऊपर सभी दिशाओं में सुख की ही वर्षा होती थी। पाँचों क्लेशों और तीनों दुःखों से यहां के निवासी मुक्त थे। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश[2] ये पांच क्लेश हैं। तीन प्रकार के दुःख वा ताप हैं। १. आध्यात्मिक जो शारीरिक ज्वर आदि पीड़ा से होता है। २. आधिभौतिक जो शत्रु, सर्प, व्याघ्र और चौरादिकों से होता है। ३. आधिदैविक जो मन, इन्द्रिय, अग्नि, वायु, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अतिशीत, अत्युष्णता इत्यादि से होता है। जिस स्थान पर इन क्लेशों और तापों से छुटकारा हो जाये, उसी स्थान का नाम स्वर्ग है। ऐसा ही स्थान यह प्रकृतानाकनगर (आनाकनगर) था। "रैपतियौधेयजनपदप्रकृतानाकनगर" इस पद में रैपति यह शब्द समास भेद से यौधेय जनपद तथा प्रकृतानाकनगर दोनों का विशेषण बन सकता है।

१. रायः पतिः=रैपतिः। यौधेयानां जनपदः=यौधेयजनपदः। रैपतिश्चासौ यौधेयजनपदः, रैपतियौधेयजनपदः, रैपतियौधेयजनपदस्य प्रकृतानाकनगरं, रैपतियौधेयजनपदप्रकृतानाकनगरम्।[3]

२- यौधेयजनपदस्य प्रकृतानाकनगरं, यौधेयजनपदप्रकृतानाकनगरम्। रैपतिश्चासौ यौधेयजनपदप्रकृतानाकनगरं रैपतियौधेयजनपदप्रकृतानाकनगरम्।[4] पहले समास में रैपति यौधेय जनपद का विशेषण है तथा दूसरे में प्रकृतानाकनगर का।

## १२. यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् : समय १२०० वर्ष विक्रम पूर्व (१८४३ कलि संवत्)

यह प्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण मुद्रांक नौरंगाबाद (बामला) से श्री चन्दगीराम नापित के सौजन्य से मिला है। अब तक उपलब्ध यौधेयगण के मुद्रांकों में यह बहुत विशेष स्थान रखता है। इसी लेख वाला एक मुद्रांक (मोहर) कर्नल कनिंघम[5] को सुनेत (लुधियाना) से प्राप्त हुआ था। जो इस समय ब्रिटिशम्यूजियम लन्दन में है। उसका चित्र भी हमने बहुत प्रयत्न से श्री डब्ल्यू० ज्वाल्फ के सौजन्य से प्राप्त किया है। देखिये मुद्रांक संख्या ८०। दोनों के लेख तथा नन्दी के चित्र समान हैं। अन्तर केवल इतना है, हमारा मुद्रांक चतुष्कोण (चौकोर) है तथा कर्नल कनिंघम वाला मुद्रांक गोल है।

इस मुद्रांक की यह विशिष्टता है कि इस पर यौधेयगण का एक विशेष गुण अंकित है कि यौधेयगण जयमन्त्रधर था, अर्थात् यौधेयों के मन्त्र में=विचारों में जय कूट-कूट कर भरा हुआ था। वे सदैव विजयी होते थे। उनकी प्रसिद्धि थी कि यौधेयों

---

१. "ऊषसुषिमुष्कमधो रः" (अष्टा० ५.२.१०७) सूत्रस्थ 'नगपांसुपाण्डुभ्यश्चेति वक्तव्यम्' इस वार्तिक से (वृक्ष और पर्वतवाची) नग शब्द से मत्वर्थ में र प्रत्यय होकर नगर शब्द सिद्ध होता है।

२. अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः—पातञ्जल योगदर्शन, समाधिपाद, सू० ३।

३. कर्मधारयगर्भित षष्ठीतत्पुरुषसमास।

४. षष्ठीतत्पुरुषगर्भित कर्मधारयसमास।

5. Hoernle has given (Proc. A. S. B; 1884, PP. 137-141) an account of a number of clay seals from Sonait in Ludhiana, some of which bore impressions from Yaudheya coins of class 6. One very large one had as type a bull as on the Coins of the Yaudheyas and the legend 'Yodheyanam Jayamantradharanam' (Seal) 'of the Yaudheyas councillors of victory'.—John Allan : Catalogue of the Coins of Ancient India P. cliii.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ने जयमन्त्र को धारण किया हुआ है। उनको इस संसार में कोई हरा नहीं सकता। मन्त्र का अर्थ विचार है, जिनके विचारों में हीनता, नपुंसकता वा निर्बलता की भावनायें हों, वह चाहे व्यक्ति हो या समाज, राजा हो चाहे प्रजा, सैनिक हो वा सेनापति, छोटा देश हो वा विशाल राष्ट्र वह कभी सफलता के दर्शन नहीं कर सकता। उसे कभी विजय के दर्शन नहीं हो सकते। विजयी वह होता है, जिसकी यह भावना हो कि "अजैष्माद्य"[1] हम आज अवश्य जीतेंगे। निश्चय से विजयी होंगे। हमें हराने वाला सारे विश्व में कोई है ही नहीं। वेद भगवान् की इस उदात्त भावना को मन में जिसने दृढता से धारण किया है, सफलता उसके पैर चूमती है। सारा संसार उसी को विजयमाला पहनाता है, मन में विजय का दृढ़ संकल्प हो, विजय के लिये वाणी से वीररस से ओत-प्रोत शब्दों का उच्चारण करे, स्वस्थ, सुन्दर, सुदृढ़, सुडौल वज्रसम तपाया हुआ शरीर हो, युद्ध विद्या में निपुण अस्त्र-शस्त्र विद्या का निष्णात पण्डित हो, इस प्रकार के सैनिक सर्वथा निपुण सेनापति के नेतृत्व में अनेक भयंकर युद्धों में भी सदैव विजयी होते हैं। क्षत्रिय योद्धा के उपर्युक्त यथोचित गुणों से यौधेय गण के सभी सैनिक युक्त थे। पुनः विजय तो उनके बायें हाथ का खेल था। इसीलिये लोगों को विवश होकर यह कहना पड़ा कि यौधेय तो जयमन्त्र धारण किये हुये हैं। "जादू वह जो सिरचढ़ बोले" वीरता तो वह है जिसकी शत्रु भी प्रशंसा करें। जब यौधेयों का राज्य बहुत विशाल हो गया था, उस समय इनकी किसी वीर सैनिक टुकड़ी ने राजस्थान को पार करके गुजरात में महाक्षत्रप रुद्रदामन् के राज्य पर आक्रमण कर दिया। वहाँ किन्हीं कारणों से यौधेय सैनिक विजयी नहीं हुये और उन्हें उल्टा हटना पड़ा तो महाक्षत्रप रुद्रदामन् ने वहीं गुजरात में गिरनार पर्वत पर अपनी प्रशंसा में लेख उत्कीर्ण करवाया। लेख इस प्रकार है—

"...सर्व्वक्षत्राविष्कृतवीरशब्दजातोत्सेकविधेयानां यौधेयानां प्रसह्योत्सादकेन..."।[2]

सब क्षत्रियों में आविष्कृत वीरशब्द को वे अपना विशेष विशेषण मानते थे। सब क्षत्रियों में वे स्वयं को सबसे अधिक वीर मानते थे और उन यौधेयों को अपनी वीरता का अभिमान हो गया था, मैंने उनको उखाड़ कर फैंक दिया। यहाँ रुद्रदामा स्वयं यह स्वीकार करता है कि यौधेय सब क्षत्रियों में सबसे अधिक वीर माने जाते थे। वीर शब्द उनका पर्यायवाची हो गया था। यह तो सम्भव है कि यौधेयों की कोई छोटी-मोटी हार गुजरात की ओर हो गई होगी, इसी से अभिमान में आकर रुद्रदामा ने यह लिखवा दिया हो, किन्तु रुद्रदामन् यदि यौधेयों को उखाड़ कर फैंक देता तो यह लेख जूनागढ़ (काटियावाड़) में अपने ही राज्य में क्यों खुदवाता? उसका यह लेख यौधेयों के प्रदेश में होना चाहिये था। न तो कोई उसका लेख ही यौधेय प्रदेश में मिला है और न ही उसकी तथा उसकी सन्तति (पुत्र-पौत्र आदि) की कोई मुद्रा (सिक्का) यौधेय प्रदेश में मिली है।

रुद्रदामन् स्वयं मिथ्याभिमानी होते हुये यौधेयों को अभिमानी लिखता है। अन्य इतिहासकार भी इसका खण्डन करते हैं। श्री वासुदेव उपाध्याय लिखते हैं—"सन् १५० ई० में गिरिनार के रुद्रदामन् महाक्षत्रप के लेख से ज्ञात होता है कि यौधेयों का नाम सबसे (अधिक) वीरक्षत्रियों में गिना जाता था। इनका अस्तित्व मौर्यशासन, क्षत्रप तथा कुषाणकाल में भी ज्यों का त्यों बना रहा।...ईस्वी सन् की दूसरी शती में यौधेय जाति उन्नति के शिखर पर पहुँच गई थी।"[3] यहां विचारणीय है कि यदि रुद्रदामन् ने यौधेयों को समूल नष्ट कर दिया होता तो प्रथमतः उनका अस्तित्व ही कैसे बना रहता? दूसरी ओर इतिहासवार दूसरी ईस्वी शती में यौधेयों को उन्नति के शिखर पर पहुँचा हुआ मानते हैं। यह रुद्रदामन् का गिरिनार वाला लेख सम्भव है अधिकतर मिथ्या कल्पना युक्त और अतिशयोक्तिपूर्ण है।

जोहन एलन M.A, F. S. A. लिखते हैं—

In the Junagarh inscription of Rudradaman of the year 72=A. D. 150, the Mahaksatrapa claims to have destroyed the Yaudheyas, 'Who would not submit because they were proud of their title of heroes among the Ksatriyas'(E. I. viii, pp. 44 and 47). This reference suggests that their lands in the second century extended into Western Rajputana. The Vijayagadh inscription confirms this.[4]

---

१. अथर्ववेद १६-६-१॥

२. प्राचीन भारतीय अभिलेखों का अध्ययन: पृष्ठ ३०१ द्वितीय संस्करण, डा० वासुदेव उपाध्याय।

३. वासुदेव उपाध्याय : भारतीय सिक्के, पृ० ८०।

4. Catalogue of the Coins of Ancient Ind'a Clii by J. Allen.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



यह रुद्रदामन् महाक्षत्रप के लेख का अनुवादमात्र है। इस अभिलेख का समय इसने भी ईसा पश्चात् १५० सन् ही माना है। यह इस लेख के आधार पर अपनी सम्मति देता है कि दूसरी सदी ईस्वी में यौधेयों का राज्य सुदूर पश्चिमी राजस्थान तक फैल गया था। इसकी पुष्टि विजयगढ (बयाना) का लेख भी करता है। अतः वीर यौधेयों के इस विशाल राज्य को रुद्रदामन् कैसे नष्ट कर सकता था। वह तो यौधेयों के राज्य का उत्कर्ष का काल था। श्री रामप्रकाश ओझा लिखते हैं—यौधेयों का अस्तित्व मौर्य-शासन, क्षत्रप तथा कुषाणकाल में ज्यों का त्यों बना रहा। ईस्वी सन् की दूसरी सदी में यौधेय जाति उन्नति के शिखर पर पहुंच गई थी।[1] इतिहास के विद्वान् अवधविहारीलाल जी अवस्थी लिखते हैं—

सभी क्षत्रियों ने यौधेयों को वीर शब्द से विभूषित किया था अर्थात् यौधेय अपने प्रेम, अदम्य साहस और राष्ट्रभक्ति के कारण ही राष्ट्रवीर मान लिये गये थे। रुद्रदामन् के आघात से उनके उत्साह में कमी नहीं हुई। वे अवसर की ताक में थे। ईसा की द्वितीय शताब्दी के अन्त होते-होते उन्होंने क्षीण प्रायः कुषाण सम्राट् कनिष्क तृतीय के समय अपने प्रदेशों से उन्हें निकालने में सफलता प्राप्त की। अब वे पूर्ण स्वतन्त्र तथा शक्तिशाली हो गये थे।[2]

डा० अनन्त सदाशिव अल्तेकर का मत है—सिक्कों के आधार पर स्पष्ट सिद्ध होता है कि यौधेयों ने कुषाण शक्ति को समाप्त कर उनसे अपने देश को स्वतन्त्र कर लिया। कनिष्क तृतीय (१८० ई० तक) के सिक्के सतलुज नदी के पूर्व में नहीं प्राप्त होते। उनके उत्तराधिकारी वासुदेव द्वितीय तथा पश्चात् के कुषाण राजाओं के सिक्के यौधेय प्रदेश में कहीं भी नहीं मिलते। क्योंकि उनका शासन यौधेयों ने सर्वथा समाप्त कर डाला था।[3]

दूसरे विद्वानों का भी ऐसा ही मत है कि यौधेयों ने कुषाणों को निकाल कर यमुना और सतलुज के बीच के प्रदेश पर अधिकार कर लिया। इस पक्ष में निम्नलिखित बातें कही जाती हैं—[4]

१. अन्तिम कुषाण नरेशों—कनिष्क तृतीय और वासुदेव द्वितीय-की मुद्रायें सतलुज और यमुना के बीच में नहीं मिलतीं। परन्तु इसी प्रदेश में यौधेयों की मुद्रायें मिलती हैं।

२. यौधेयों की मुद्रायें कुषाणों की मुद्राओं से मिलती जुलती हैं।

३. इन मुद्राओं पर 'यौधेयगणस्य जय' लिखा मिलता है। इन पर देवों के सेनापति कार्त्तिकेय की मूर्ति भी बनी है।

४. कुछ यौधेय मुद्राओं के ऊपर "द्वि" और "त्रि" शब्द भी मिलते हैं।

इनसे डा० अल्तेकर ने अनुमान किया है कि यौधेयों ने कुषाणों के विरुद्ध एक संघ बनाया था, जिसमें कुणिन्द और आर्जुनायन नामक पड़ौसी जातियों को सम्मिलित किया था।

जो भी हो, इतिहास में जब से यौधेयगण का अस्तित्व देखते हैं, तभी से ये स्वभावतः वीर और सच्चे क्षत्रिय हैं। जब नकुल पश्चिम दिग्विजय के लिये निकलता है तो बड़े-बड़े योद्धा श्रीकृष्ण, बलराम अर्थात् सभी यादव तथा मद्रदेश का राजा वीर शल्य आदि तो नकुल से बिना युद्ध किये ही स्वागत करके कर प्रदान कर देते हैं, किन्तु यौधेयों के साथ भयंकर युद्ध होता है। वीर नकुल पूर्ण दल-बल के साथ उन पर आक्रमण करता है। महाभारत में इसकी चर्चा विस्तार से की है।[5] वहां लिखा है—

नकुलस्य तु वक्ष्यामि कर्माणि विजयं तथा।
वासुदेवजितामाशां यथासावजयत्प्रभुः॥

---

१. प्राचीन सिक्के, पृ० २ : रामप्रकाश ओझा।
२. यौधेयों का इतिहास पृ० ९,१०।
३. डा० अल्तेकर : J. U. P. H. S. Vol. Xvi Pt. I PP. 54.
४. प्राचीन सिक्के, पृ० २, : रामप्रकाश ओझा।
५. महाभारत, सभापर्व, अध्याय ३२, श्लोक १ से ७२ तक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वैशम्पायन जी कहते हैं—हे जनमेजय ! अब मैं नकुल के पराक्रम और विजय का वर्णन करूंगा । शक्तिशाली नकुल ने जिस प्रकार भगवान् वासुदेव द्वारा अधिकृत पश्चिमदिशा पर विजय पाई थी, वह सुनो—

निर्याय खण्डवप्रस्थात् प्राचीमभितो दिशम् ।
उद्दिश्य मतिमान् प्रायान्महत्या सेनया सह ॥

बुद्धिमान् माद्रीकुमार ने विशाल सेना के साथ खाण्डवप्रस्थ से निकल कर पश्चिम दिशा में जाने के लिये प्रस्थान किया ।

सिंहनादेन महता योद्धानां गर्जितेन च ।
रथनेमिनिनादैश्च कम्पयन् वसुधामिमाम् ॥

वे अपने सैनिकों के महान् सिंहनाद, गर्जना तथा रथ के पहियों की घर्घराहट के तुमुलध्वनि से इस पृथिवी को कम्पित करते हुये जा रहे थे ।

ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनधान्यवत् ।
कार्त्तिकेयस्य दयितं रोहीतकमुपाद्रवत् ॥[1]

जाते-जाते वे बहुत धनधान्य से सम्पन्न गौओं की बहुलता से युक्त, स्वामी कार्तिकेय के अत्यन्त प्रिय रमणीय (भवन) रोहीतक नगर में पहुँच गये ।

तत्र युद्धं महच्चासीच्छूरैर्मत्तमयूरकैः ।
मरुभूमिं स कार्त्स्न्येन तथैव बहुधान्यकम् ॥
शैरीषकं महेत्थं च वशे चक्रे महाद्युतिः
आक्रोशं चैव राजर्षि तेन युद्धमभून्महत् ॥

रोहतक में नकुल का मत्तमयूर नाम वाले शूरवीर क्षत्रियों के साथ घोर संग्राम हुआ । उस पर अधिकार करने के पश्चात् महान् तेजस्वी नकुल ने समूची मरुभूमि, बहुधान्यक प्रदेश, शैरीषक (सिरसा) और महेत्थ (महम) के अधिपतियों को जीत कर अपने अधिकार में कर लिया । वहीं राजर्षि आक्रोश के साथ नकुल का बड़ा भारी युद्ध हुआ ।

ऊपर लिखित महाभारत के प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि इन मत्त (मस्त) मयूरक=मयूरध्वजधारी=यौधेयों का जो मयूरध्वज कार्त्तिकेय के अनन्य भक्त थे शूरवीर नकुल से महान् युद्ध हुआ था । वह युद्ध सारी मरुभूमि तथा यौधेयों के बहुधान्यक प्रदेश में हुआ । कहले कार्तिकेय के प्रिय नगर रोहतक में, पुनः महम तथा सिरसा में वह भयंकर युद्ध हुआ था । इस समय यौधेयों के महासेनापति तपोनिष्ठ राजर्षि आक्रोश थे, उनके साथ भी नकुल को घोर युद्ध करना पड़ा । इतना ही नहीं नकुल को आगे के भी सभी यौधेय दुर्गों से युद्ध करना पड़ा ।

तान् दशार्णान् स जित्वा च प्रतस्थे पाण्डुनन्दनः ।
शिबींस्त्रिगर्त्तानम्बष्ठान्मालवान् पञ्चकर्पटान् ॥

तत्पश्चात् दशार्ण देश पर विजय प्राप्त करके पाण्डुपुत्र नकुल ने शिबि, त्रिगर्त्त, अम्बष्ठ, मालव और पञ्चकर्पट आदि देशों को प्रस्थान किया ।

इस प्रकार यह सिद्ध है कि यौधेय प्रदेश के दशार्ण दस जलयुक्त दुर्गों को जीतने के लिये वीर नकुल को पग-पग पर युद्ध करना पड़ा । इनको जीत कर नकुल यौधेयों के भाई तथा मित्र गणराज्य शिबि, त्रिगर्त्त, अम्बष्ठ, मालव और पञ्चकर्पट देशों की ओर बढ़ा ।

---

१. कार्तिकेयस्य भवनं रोहीतकमुपाद्रवत्—यह पाठ भेद भी मिलता है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



महाभारतकार ने यौधेयों को शूर लिखा है तथा सभी क्षत्रियों ने भी उनको शूरवीर माना था। इनमें वीरता का विशेष गुण था, जिसे सभी ने निस्संकोच स्वीकार किया है। 'वीर भोग्या वसुन्धरा' वीर लोग ही पृथ्वी पर राज्य करते हैं। सभी लेखक यौधेयों की वीरता की सराहना करते हैं। विद्वान् लेखक अवध बिहारीलाल अवस्थी लिखते हैं[1]—परन्तु यौधेयों की ख्याति भारतीय इतिहास में मुख्यतः इनके वीर चरितों (अवदानों) में है। वे लड़ाकू सिपाही थे। सदैव दासता के पाशों को अपनी शक्ति से काटना ही परम धर्म मानते रहे। मुद्राओं के परीक्षण और परिशीलन से भी यही सिद्ध होता है कि गुप्तकालीन स्वर्णयुग की पूर्व पीठका में स्वातन्त्र्य आन्दोलन के वे ही वीर नायक थे। उन्हीं ने ही कुषाणसत्ता को उसके अवनति काल में उलट फैंका। डा० अल्तेकर[2] का यही विश्वास था कि कुषाण-साम्राज्य के पूर्वी प्रान्तों से उनके प्रभुत्व को नष्ट करने का श्रेय यौधेयों को ही था। फिर आश्चर्य है कि आधुनिक इतिहासकार इतने गौरववृत्त की उपेक्षा करते हैं।

"सत्य ही साहित्य, अभिलेख और मुद्राओं से हमें यौधेयों की गौरव गाथा का परिचय मात्र होता है। पाणिनि के अनुसार यौधेय (पश्वादि यौधेयादिभ्यामणञौ ५-३-११७) आयुधजीवी गण ही था। सिकन्दर के आक्रमण काल में मालव-क्षुद्रकों और कठ इत्यादि को हम विदेशी आक्रान्ता का उग्र विरोध करते हुये पाते हैं। परन्तु वहां यौधेयों का निश्चित रूप से उल्लेख नहीं हुआ है। मौर्योत्तर-युग में भारत में पुनः विदेशी सत्ता के विरुद्ध संघर्ष करते हुये हमें इन देश-वीरों का दर्शन होता है। कनिष्क प्रथम ने उनकी शक्ति और प्रभुता का दमन कर बनारस तक विस्तृत साम्राज्य स्थापित किया था। इस प्रकार यद्यपि यौधेयों का पराभव हो गया था, परन्तु उनके स्वातन्त्र्य प्रेम को यह कुषाण-सत्ता न दबा सकी। उन्हें गुलामी करना आता ही नहीं था, इसलिये वे इस दासता के पाश को काट फैंकने की ताक में ही थे। ज्यों ही कनिष्क और हुविष्क के बाद कुषाण शक्ति क्षीण होने लगी, उन्होंने भी अपने आपको स्वतन्त्र करने की चेष्टायें आरम्भ करदीं।"

इनसे यही सिद्ध होता है कि सभी क्षत्रियों ने यौधेयों को जो वीर शब्द से विभूषित किया था, वह यौधेयों के अपने विशेष प्रेम और उत्कृष्ट राष्ट्रभक्ति के कारण ही था। इसी से वे राष्ट्रवीर माने गये। यौधेय अपनी वीरता के कारण सदैव विजयी होते हैं इस सर्वसम्मत निर्णय को यौधेयों ने "यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्" इस रूप में अपने मुद्रांक पर अंकित कर डाला। ब्राह्मी लिपि और संस्कृत भाषा में तीन पंक्तियों में लिखे इस लेख के नीचे हरयाणा जाति के ककुद्वान् सांड का दायें मुख करके चलती हुयी अवस्था का चित्र प्रदर्शित है। सांड का चित्र दो भावनाओं को प्रकट करता है। एक तो यह कि यौधेय गोमाता के अनन्य भक्त थे। दूसरे यह कि गणराज्य प्रिय होने के कारण गणराज्य के आदि संस्थापक महादेव जी के प्रति उनके वाहन (ध्वजचिह्न) वृषभ (सांड) का चित्र देकर अपनी कृतज्ञता वा श्रद्धा प्रकट करते हैं। क्योंकि गोजाति की उन्नति अच्छे सांड के विना नहीं हो सकती और गोजाति की उन्नति के विना मनुष्य जाति पुष्ट, स्वस्थ, सुदृढ़ और दीर्घजीवी नहीं हो सकती। 'पुष्टयै गोपालम्'[3] वेद की आज्ञा को क्रियान्वित करने के लिये गोजाति के निर्माता सांड का चित्र यौधेयों ने अपने मुद्राङ्कों पर चित्रित किया। इस गोपालन के कारण ही यौधेयगण सारे भारत में बलिष्ठता और वीरता के लिये प्रसिद्ध हुवा। 'घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व'[4] इस वेदवचनानुसार गोमाता का घी, दूध खा-पीकर व्यायाम द्वारा उसे पचाकर, शरीर को बलिष्ठ बनाकर युद्धविद्या में निष्णात बन यौधेय सारे संसार के उत्कृष्ट योद्धाओं में अग्रगण्य बने। जो इनसे टकराया, वही चकनाचूर हो गया। सिकन्दर महान् की सेना ने यौधेयगण की वीरता और श्रेष्ठता की प्रशंसा सुनी तो भयभीत हो गई और सारी सेना ने व्यास नदी को पार करने से ही निषेध कर दिया। सिकन्दर तीन दिन तक शिविर में भूखा बैठा रहा, व्यास में डूब मरने की धमकी भी दी, तब भी सेना ने सिकन्दर की आज्ञा नहीं मानी। वह भारत दिग्विजय की इच्छा को अधूरी लेकर लौटने को विवश हुवा। मार्ग में यौधेयों के परममित्र मालव और क्षुद्रकों के साथ सिकन्दर की टक्कर हुई। उन्होंने रही-सही शेखी झाड़ दी, इस युद्ध में सिकन्दर का पराजय हुवा। मालवों के तीर से सिकन्दर बुरी

---

१. यौधेयों का इतिहास पृष्ठ ८।
२. जरनल यू० पी० हिस्टोरिकल सोसायटी, अंक Xvi, पृष्ठ ५२-५७।
३. यजुर्वेद ३०-११।
४. यजुर्वेद १२.४४।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



तरह घायल हुवा। उनसे सन्धि करके लौटता हुवा सिकन्दर मार्ग में अकाल काल के गाल में समा गया। अपने देश के दर्शन भी उसके भाग्य में नहीं थे। सभी इतिहासकार यह मानते हैं कि चार पीढियों तक यौधेय और कुषाणों का निरन्तर युद्ध होता रहा। कभी एक पक्ष जीत जाता तो कभी दूसरा। दोनों पक्षों की इन युद्धों में बड़ी हानि हुई। अन्त में चौथी पीढ़ी में वासुदेव को यौधेयों ने मार भगाया और अपनी उत्तर पश्चिमी सीमा का अन्तिम दुर्ग सुनेत्र (=सुनेत, जिला लुधियाना) को उससे छीन लिया और अपने इस विजय के उपलक्ष्य में सुनेत में ही "यौधेयगणस्य जय" लेखयुक्त विजयमुद्रा ढाली, जिसके सहस्रों ठप्पे यहां से हमें भी प्राप्त हुये हैं। सदा शिवराव अल्तेकर तथा अन्य इतिहासकारों ने भी यह स्वीकार किया है कि भारत से कुषाणों को उखाड़ फैंकने का श्रेय यौधेयों को ही है।

इसी प्रकार यौधेयों की टक्करें यूनानी, शक, हूण आदि अनेक विदेशी जातियों से हुईं, किन्तु सबने इनसे मुँह की खाई, इसी कारण 'यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्' यह मुद्रांक सर्वथा यथार्थ सिद्ध हुवा। उस समय इनके राज्य की सीमायें बहुत दूर-दूर तक फैल गई थीं। मुलतान के निकट क्रोड़ के दुर्ग से लेकर बरेली के निकट पाञ्चालों की राजधानी अहिच्छत्रा तक तथा गंगानगर से लेकर देहरादून तक का भाग यौधेयों के अधिकार में था। कभी जयपुर में बैराट नगर, अलवर, भरतपुर तथा गवालियर के पार भी यौधेय छाये हुये थे। एक समय तो इनके महासेनापति यशोधर्मा का अधिकार स्यालकोट से लेकर मन्दसौर तक हो गया था। इन सीमाओं का विस्तार यौधेयों की मुद्रायें सिद्ध करती हैं, जो उपर्युक्त स्थानों पर खुदाई आदि में प्राप्त हुई हैं। इनकी वीरता की उपमा "सिंहवत् पराक्रमेत्"[1] सिंह के साथ दी जा सकती है। अर्थात् वीर यौधेय सिंह के समान पराक्रमी थे। यह इनकी मृन्मूर्ति, प्रस्तर मूर्ति और मुद्रांकों (मोहरों) से भी सिद्ध होता है। यौधेयों के इसी प्रकृतानाकनगर (आनाकनगर=नौरंगाबाद वामला) से एक मृन्मूर्ति मिली है, जिस पर एक ओर यौधेयों का एक सेनापति सिंह के ऊपर सवार है, एक हाथ में वज्र है तथा दूसरे में सिंह की पूंछ पकड़े हुये है। इस मृन्मूर्ति के दूसरे पक्ष में शांति का प्रतीक कमलपुष्प का सुन्दर चित्र बना है। यह वैदिक संस्कृति के इस सत्य का प्रतीक है कि "शस्त्रेण रक्षिते देशे शास्त्रचर्चा प्रवर्त्तते" शस्त्र विद्या में निपुण वीर सैनिकों से सुरक्षित देश में ही शास्त्रों चर्चा=पठन-पाठन उत्तम रीति से हो सकता है।

इसी प्रकार सिंहों की अनेक प्रस्तर प्रतिमायें मोहनबाड़ी, अगरोहा आदि अनेक यौधेयदुर्गों से प्राप्त हुई हैं। इसी भांति बहुत से मुद्रांकों (मोहरों Seals) पर सिंहों के सुन्दर चित्र अंकित हैं। जिनसे यह सिद्ध होता है कि यौधेय सिंह के समान वीर थे तथा सिंह की भांति ही अपने शत्रु का विनाश किये बिना शान्त नहीं होते थे। इसी कारण इनका गणराज्य बहुत विस्तृत तथा विशाल था जो सुख शान्ति के साथ सहस्रों वर्षों तक चलता रहा। रोहतक, सुनेत, प्रकृतानाकनगर (नौरंगाबाद) भी इनकी राजधानी रही है। इसी भांति, महम, हांसी, अगरोहा, सिरसा, स्थानेश्वर, शतकुम्भा, मोहनबाड़ी, हवननगर, पटननगर, मालव, हस्तिनापुर, मेरठ, इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली), अहिच्छत्रा आदि यौधेयों के सैकड़ों विशाल नगर वा दुर्ग थे।

इतने लम्बे चौड़े प्रदेश पर सहस्रों वर्षों तक शासन करने का विशेष कारण यही है कि यौधेय जयमन्त्रधर थे, वे सदा विजयी होते थे, कभी पराजित नहीं होते थे। इसी विजय भावना का प्रतीक यह मुद्रांक है।

## १३, १४. यौधेयानाम् : ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलिसंवत्)
## १५, १६. यौधेयानाम् : ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलिसंवत्)

इन चारों मुद्राकों पर "यौधेयानाम्" (यौधेयों का मुद्रांक) यह लेख उल्लिखित और उत्कीर्ण है। मुद्रांक संख्या १३ मिट्टी का है। १४वां मुद्रांक रांग का है, इस पर लेख विपरीत खुदा है। १५ वां मुद्रांक भी रांग का ही है, किन्तु इस पर लेख सीधा खुदा है। संख्या १६ पर मिट्टी के एक गोले पर "यौधेयानाम्" इस लेख वाली मोहर अनेक वार लगाई गई थी। गोले के टूटने से अब केवल चार स्थानों पर ही लेख दिखलाई पड़ रहा है।

---

१. मनुस्मृति ७.१०६।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



यौधेय मुद्रांकों पर "यौधेयानाम्" यह पद प्रायः करके बहुवचन में प्रयुक्त मिलता है। जो यह सिद्ध करता है कि यौधेय लोग एक व्यक्ति विशेष के अधीन न रहकर संगठन प्रिय थे। यह इन की मुद्राओं के लेखों से भी सिद्ध है, जैसे— यौधेयानां बहुधान्यके, यौधेयानां भूमधान्यके, यौधेयानाम् इत्यादि। यही प्रकार अन्य गणराज्यों में भी दिखलाई पड़ता है, जैसे—"अर्जुनायनानां जय,मालवानां जय, अगाचमित्रपदाभिष्ठायिनाम्।" ये लेख आर्जुनायन, मालव और आग्रेय गण की मुद्राओं पर लिखे हैं। जहां कहीं एकवचन का प्रयोग मिलता है वहां गण[1] शब्द का प्रयोग किया गया है, वह भी समूह=बहुवचन का ही द्योतक है। रुद्रदामन् क्षत्रप के गिरिनार शिलालेख में भी यौधेयों का बहुवचनान्त प्रयोग है, जैसे—सर्वक्षत्राविष्कृतवीरशब्दजातोत्सेकविधेयानां यौधेयानाम् इत्यादि। इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि यौधेय सदा संघ प्रणाली को महत्त्व देते आये हैं। महर्षि पाणिनि ने भी यौधेयों को आयुधजीवी संघ के गणगाठ में पढ़कर संघ को प्रमाणित कर दिया है। श्री वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं[2]—

**पर्श्वादियौधेयादिभ्यामणञौ (अष्टाध्यायी ५-३-११७)**

इस सूत्र में पठित यौधेय संघ के सम्बन्ध में महर्षि पाणिनि कृत यह उल्लेख भी प्राचीन है। विभिन्न युगों के उनके सिक्के और लेख मिले हैं। महर्षि पाणिनि से समुद्रगुप्त के काल तक तो प्रत्यक्ष उनकी सत्ता स्वयंसिद्ध है। ई० पू० २०० से २०० ई० के बीच ये सतलुज के पूर्व और यमुना के पश्चिम में फैले हुये थे। किन्तु महाभारत के अनुसार बहुधान्यक प्रदेश में रोहीतक उनकी राजधानी थी। सुनेत वा सुनेत्र जिसका संकलादिगण (अष्टा० ४-२-७५) में पाठ है, यौधेयों का दूसरा केन्द्र था, जहाँ उनकी मुद्रायें मिली हैं। रोहीतक के पहले सम्भवतः सुनेत ही उनकी राजधानी थी। पूर्व में होने के कारण सिकन्दर से यौधेयों का संघर्ष नहीं हो सका। प्राचीन यौधेयों के वंशज पंजाब में आधुनिक जोहिए राजपूत हैं।"

इस उद्धरण के लेखक श्री वासुदेवशरण जी इतिहास आदि विषयों के बड़े विद्वान् थे। किन्तु यौधेयों के विषय में उनका ज्ञान बहुत थोड़ा था। उनकी कुछ धारणायें भी सर्वथा भ्रान्त थीं। क्योंकि इस यौधेय विषय पर उन्होंने ही क्या, भारतीय इतिहास के प्रायः सभी विद्वानों ने (चाहे वे भारतीय हों अथवा विदेशी हों) नाम मात्र कार्य किया है। क्योंकि जैसा अग्रवाल जी का विचार है कि यौधेयों की राजधानी पहले सुनेत थी तथा उसके पीछे रोहीतक बनी। यह सर्वथा मिथ्या और भ्रममूलक है। क्योंकि यौधेयों की "यौधेयानां बहुधान्यके" लेख वाली मुद्रायें सबसे प्राचीन मानी जाती हैं। इनका लक्षण स्थान (टकसाल) रोहतक में था। बीरबल साहनी ने रोहतक की खुदाई करके यौधेयों के ठप्पे निकाल कर यह सिद्ध कर दिया है कि रोहीतक राजधानी सुनेत से बहुत पहले ही बन चुकी थी। इन्हीं मुद्राओं की टकसाल नौरंगावाद वामला (हिसार) की खुदाई में हमने भी निकाली है। सुनेत्र में 'यौधेयगणस्य जय' लेख वाली मुद्राओं के ठप्पे मिले हैं (ये हमारे पास भी सहस्रों हैं)। ये मुद्रायें वासुदेव कुषाण राजा को हराकर ढाली गई थीं। अतः सुनेत को रोहतक से पहली राजधानी मानना अयुक्त है।

"यौधेयानां बहुधान्यके" लेख वाली मुद्रायें आज तक मुरादनगर (मेरठ) से ही अधिक मिली हैं। अतः यौधेयों की सीमा को शतद्रु और यमुना के मध्य बतलाना श्री अग्रवाल की सर्वथा मिथ्या धारणा है। यह तो ठीक है कि सुनेत्र तथा रोहीतक दोनों ही यौधेयों के केन्द्र अथवा राजधानी थे, किन्तु रोहीतक पीछे बनी तथा सुनेत्र पहले से है, यह ठीक नहीं। अभी तक तो रोहीतक की प्राचीनता के ही अधिक प्रमाण मिल रहे हैं। रोहीतक से प्राप्त यौधेय ठप्पे इसके ठोस तथा प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। महाभारत का 'बहुधान्यक', रोहितक प्रदेश और रोहतक से प्राप्त "यौधेयानां बहुधान्यके" मुद्राओं के ठप्पे एक टूटी हुई कड़ी को जोड़ते हैं। महाभारत के समय यौधेयों के बहुधान्यक प्रदेश की राजधानी रोहतक ही थी। यह नगर रम्य, गवाढ्य, धनधान्ययुक्त और कार्तिकेय का प्रिय था।[3]

---

१. जैसे (क) श्रीव्यौधेयगणपुरस्कृतस्य·····,देखिये मुद्रांक सं० ३१।
(ख) यौधेयगणस्य जय, चित्र सं० ४७९ पर मुद्रा सं० ८।
(ग) सिद्धम् यौधेयगणपुरस्कृतस्य महाराज·····चित्र सं० ४८० पर सं० ८ का विजयगढ़ स्थित प्रस्तर लेख।

२. पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृष्ठ ४५९।

३. ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनवान्यवत्।
कार्त्तिकेयस्य वयितं रोहीतकमुपाद्रवत् ॥—महाभारत सभापर्व, अ० ३२।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हरयाणे की सभी क्षत्रिय जातियां अहीर, गूजर, जाट, राजपूत, रवे, रोड़, सैनी आदि, यही नहीं यहां के अग्रवाल और ब्राह्मण भी वीर यौधेयों की सन्तान हैं। इस यौधेय प्रदेश में बसने वाले भङ्गी से लेकर ब्राह्मण तक सभी यौधेयों के वंशज है। जोहिये राजपूत भी उनकी सन्तान हो सकते हैं। इसके लिये आज तक किसी ने कोई प्रमाण नहीं दिया। किन्तु हरयाणे के उपर्युक्त क्षत्रियकुल आज भी यौधेयों के गुण, कर्म और स्वभाव से युक्त हैं। ये यौधेय भूमि के सहस्रों वर्षों से स्वामी हैं और यहीं रहते हैं, उनको छोड़कर जोहिये राजपूतों को विना प्रमाण के यौधेयों की सन्तान बताना अनभिज्ञ इतिहासकारों की खींचातानी है। जोहिया शब्द की अपेक्षा दहिया तथा ढेय वा धेय यौधेय शब्द से अधिक मेल खाता है। फिर दहिया गोत्र के अहीर और जाट यौधेयों के अधिक निकट होने चाहियें। ढेय तथा यौधेय में अन्तर ही नाम मात्र का है। इस कुल के जाट क्षत्रियों के ताजूपुर, दयालपुर (जिला गुड़गावां) में तथा जिला मेरठ में ततारपुर आदि सैकड़ों ग्राम हैं, इन्हें यौधेयों की सन्तान क्यों नहीं माना जाये? इतिहास के विद्वानों को राहुल सांकृत्यायन के समान झूठी खैंचातानी वा अटकलपच्चू नहीं लिखना चाहिये। प्रमाण वा साक्षी विना कोई बात मान्य नहीं हो सकती।

अस्तु! यौधेय जनपद की सीमायें बढ़ती-घटती रही हैं। महाभारत के पश्चात् गुप्तकाल तक इनका सिक्का सारे उत्तरी भारत पर बैठा हुवा था। शतद्रु (सतलुज) के दोनों कांठों तक पञ्जाब, पश्चिमी उत्तरप्रदेश, दिल्ली समेत सारा हरयाणा, शूरसेन और मत्स्य प्रदेश का भाग भी यौधेयों के जनपद में सम्मिलित था। यह उत्तर भारत का सबसे बड़ा गणराज्य था। इसे जनपद कहें या आयुधजीवी संघ कहें, बात एक ही है।

## आयुध जीवी संघ

यौधेयगण के समान पर्याप्त संघ आयुधजीवी थे। महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि ने संघ शब्द का प्रयोग समुदाय वा समूह[1] के अर्थ में किया है। ये यौधेयादि गणतन्त्रात्मक राजनीतिक संघ थे। शासन की दृष्टि से एक राजपद्धति से सर्वथा विपरीत थे। ऐसे संघों में शासन की डोर एक राजा के हाथ में न रहकर जनपद के मूल निवासी क्षत्रिय जाति के अनेक प्रभावशाली लोगों के हाथ में रहती थी। ये प्रभावशाली जन क्षत्रियवंशीय होते थे और किन्हीं गणों में इनको राजन्य भी कहते थे।

महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि अन्धक-वृष्णि, क्षुद्रक-मालव, यौधेय, पाञ्चाल और विदेह आदि संघों को समुन्नत संघ मानते हैं। कुछ अविकसित संघ भी आयुध जीवी थे। अष्टाध्यायी के ३.३.५८ सूत्रस्थ "धन्नर्थे कविधानं स्थास्नापाव्यधिहनियुध्यर्थम्" इस वार्तिक से "आयुध्येतेऽनेनेत्यायुधम्" आयुध शब्द सिद्ध होता है। ये आयुधिक लोग योद्धा क्षत्रिय जातियों के थे और सैनिक का कार्य करते थे। कौटिल्य ने आयुधजीवियों को शस्त्रोपजीवी लिखा है। डा० काशीप्रसाद जायसवाल के मत से जिनके शासनविधान में युद्ध कला का सर्वोपरि महत्त्व था, वे ही आयुधजीवी वा शस्त्रोपजीवी कहलाते हैं। उनके विधान में राजा उपाधि धारण करने का अधिकार साधारण जनों को था। वे जनपदराजशब्दोपजीवी कहे जाते थे। सच्चे क्षत्रिय जो बाहुबल के धनी हों, अस्त्र-शस्त्र विद्या में निष्णात हों, वे ही आयुधजीवी संघ वा गण थे। इनमें यौधेगण प्रमुख था।

महर्षि पाणिनि के अनुसार आयुधिकों के संघ आयुधजीवी कहलाते थे। इनमें ब्राह्मण क्षत्रिय[2] तथा अन्य लोग भी थे। क्षत्रियों में भी राजन्य तथा सामान्य क्षत्रिय ये दो भेद थे, किन्तु यौधेयों में यह भेद था या नहीं, स्पष्टतया पता नहीं चलता। वैसे यौधेय आदि आयुध जीवी संघों से इतना ही स्पष्ट होता है कि इन संघों की सत्ता आयुधजीवियों के हाथ में थी। शुद्ध सच्चे क्षत्रिय ही आयुधजीवी कहलाते थे। यौधेय ऐसे ही आयुधजीवी थे।

ये यौधेय मालव आदि गणराज्य उच्चकोटि की संघ प्रणाली के अनुयायी थे। ये चारों मुद्रांक भी उन्हीं आयुधजीवी वीर यौधेयों के ही हैं। लेख के नीचे सर्वत्र चलते हुये नन्दी (सांड) का चित्र दिखलाया गया है। नन्दी पर विशेष प्रकाश मुद्रांक विवरण सं० ६ में पृ० २७ से २९ पर डाला जा चुका है।

---

१. मानुषाणां संघः —महाभाष्य ४.१.१२१। स्त्रैणानां संघः महाभाष्य ४.१.८३॥

२. आयुधजीविसंघाञ्ञ्यङ् वाहीकेष्वब्राह्मणराजन्यात् (अष्टा० महाभाष्य ५.३.११४)।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



यौधेय लोग मनु की सत्रहवीं पीढ़ी से लेकर पृथ्वीराज चौहान तक किसी न किसी रूप में वर्त्तमान रहे ही हैं। पृथ्वीराज के साथ भदानकों का युद्ध हुवा था। ये भदानक लोग बहुधान्यक वासी ही थे। बहुधान्यक से बिगड़कर कालान्तर में भदानक शब्द बन गया। मुस्लिम काल में भी यौधेय लोग पञ्चायती राज्य के रूप में अपना अस्तित्व बनाये हुये थे। इन्हीं के कारण दिल्ली के चारों ओर के लोग मुसलमान नहीं बन पाये। वर्तमान में सर्वखाप पञ्चायत उन्हीं यौधेयों की संघ प्रणाली का ही परिवर्तित रूप है।

इस प्रकार इन मुद्रांकों से यौधेयों की संघ प्रणाली, अन्न और धन की समृद्धिशालिता, गोमाता के प्रति अटूट प्रेम, अदम्य साहस, सदा ही विजय की भावना, पौरुष और पराक्रमिता आदि विशेष गुण स्पष्ट सिद्ध हैं।

## १७. जीवेकुणस भारद्वाजस : समय ३३०० वर्ष पूर्व (१७७४ कलि संवत्)

मिट्टी का यह मुद्रांक भारद्वाज गोत्र में उत्पन्न जीवेकुण नामक व्यक्ति का है। "जीवेकुणस भारद्वाजस" यह प्राकृत भाषा का रूप है। संस्कृत में इसका रूपान्तर "जीवेकुणस्य भारद्वाजस्य" बनता है।

वाचस्पत्य कोश में भारद्वाज शब्द के अर्थ इस प्रकार किये हैं—भारद्वाजः, भरद्वाजस्य गोत्रापत्यम्, गोत्रप्रवर्त्तके मुनिभेदे, द्रोणाचार्ये, अगस्त्यमुनौ, बृहस्पतिपुत्रे। भरद्वाज का गोत्रापत्य=गोत्र से उत्पन्न पुत्र भारद्वाज कहलाता है। गोत्र प्रवर्त्तक मुनि, द्रोणाचार्य,[1] अगस्त्य मुनि और बृहस्पति के पुत्र का नाम भी भारद्वाज है।

महर्षि पाणिनि ने भारद्वाज को देश का वाची भी माना है—कुकणपर्णाद्भारद्वाजे (अष्टाध्यायी ४.२.१४५)। इसके लिये काशिकाकार श्री जयादित्य ने लिखा है=देश इत्येव, भारद्वाजशब्दोऽपि देशवचन एव न गोत्रशब्दः। इस सूत्र में भारद्वाज शब्द देश का ही वाचक है, गोत्र का नहीं। प्रसिद्ध विद्वान् श्री वासुदेव शरण लिखते हैं[2]—

भारद्वाज (कुकणपर्णाद्भारद्वाजे ४.२.१४५)—काशिका ने निश्चित रूप से इस सूत्र में भारद्वाज को देशवाची माना है, गोत्रवाची नहीं। पाणिनि ने भारद्वाजों की शाखा आत्रेय कही है।[3] मार्कण्डेय पुराण की जनपद सूची में भी आत्रेय और भारद्वाज साथ-साथ पढ़े गये हैं। (अध्याय ५७) पारजीटर ने भारद्वाज देश की पहचान गढ़वाल प्रदेश से की है। (मार्कण्डेय पुराण का अंग्रेजी अनुवाद पृ० ३२०)।"

"भारद्वाज आत्रेये" (अश्वादि० ४.१.११० का गण सूत्र) से यह भी सिद्ध है कि यदि भारद्वाज गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति अत्रि गोत्र में उत्पन्न को पुत्र के नाते ग्रहण कर लेता है, उस समय फञ् प्रत्यय का विधान किया गया है।

भारतीय इतिहास में भारद्वाज नाम के अनेक व्यक्ति हुये हैं। रामायण में एक भारद्वाज के विषय में इस प्रकार लिखा है—

भारद्वाज नाम का एक व्यक्ति वाल्मीकि मुनि का शिष्य था, जो तमसा नदी के तट पर अपने गुरु के साथ था।

रामायण के समय महर्षि भरद्वाज एक बहुत उच्चकोटि के महात्मा थे। पुरुषोत्तम राम ने महर्षि भरद्वाज के परामर्श से अपना आश्रम चित्रकूट में बनाया था। श्री रामचन्द्र जी जब लंका से लौटकर आये तो महर्षि भरद्वाज के आश्रम में ही ठहरे और वहीं से ही हनुमान् को भरत के पास अपने आने का समाचार देकर भेजा (१.१.८७)। श्री राम ने जिस समय महर्षि के आश्रम (पर्णशाला-झोंपड़ी) में प्रवेश किया, उस समय महर्षि अपने शिष्यों से घिरे हुये आसन पर बैठे थे। महर्षि की तपस्या और योग का

---

१. (क) ततः प्रयाते सहसा भरद्वाजे महारथे।
आर्त्तनादेन घोरेण वसुधा समकम्पत॥
(ख) द्रोणाय वेदविदुषे भारद्वाजाय धीमते।

२. पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृ० ७०।

३. अश्वादिभ्यः फञ्, आत्रेय भारद्वाजे (४.१.११०)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



प्रभाव श्री राम पर भी दर्शन करने के पश्चात् इतना पड़ा कि उन्हें तीनों कालों की समस्त बातों को देखने की दिव्य दृष्टि वा शक्ति मिल गई (२.५४.११-१२) इसमें हमें अतिशयोक्ति ज्ञात होती है।

वनवास में जाते समय तथा लौटते समय श्री रामचन्द्र जी महर्षि भरद्वाज के आश्रम में सत्संगति के लिये ठहरे। महर्षि ने राम के कल्याणार्थ स्वस्त्ययन किया (२.५५.१२)। चित्रकूट का मार्ग दिखाने के लिये महर्षि भरद्वाज दूर तक गये तथा ठीक मार्ग पर छोड़कर वे लौट आये। जिस समय भरत राम से मिलने के लिये महर्षि वसिष्ठ आदि को साथ लेकर वन में गये तो इन्हीं के आश्रम में राम का पता लगाने का यत्न किया। जब भरत ने महर्षि भरद्वाज के चरणों में प्रणाम किया तो महर्षि ने भरत को पहचान लिया (२.९०.५)। महर्षि भरद्वाज ने अपने आसन से उठकर महर्षि वसिष्ठ और भरत को अर्घ्य, पाद्य और फल आदि देकर उन दोनों के परिवार का कुशल समाचार पूछा (२.९.६)। महर्षि भरद्वाज ने भरत से राम से मिलने के उद्देश्य के विषय में अनेक प्रश्न पूछे। भरत के उत्तरों से प्रसन्न होकर महर्षि ने भरत को अपनी सेना सहित जिसे वे पीछे छोड़ आये थे, अपने आश्रम में रात्रि बिताने के लिए आग्रहपूर्वक ठहराया। (२.९०.९-२३)। सब का भोजन आच्छादन से यथायोग्य सत्कार किया। राजकुमार भरत का सेना सहित निवास तथा भोजन का यथायोग्य प्रबन्ध करने में महर्षि भरद्वाज सब प्रकार से समर्थ थे। प्रातःकाल भरत को चित्रकूट का मार्ग बताया। प्रातःकाल जब भरत की माताओं ने महर्षि को प्रणाम किया तो महर्षि ने इनका परिचय पूछा और भरत को समझाया कि उन्हें अपनी माता कैकेयी पर आक्षेप नहीं करना चाहिये और कहा कि राम का वनवास ऋषि, देवता और दानवों के कल्याणार्थ हुवा है (२.९२.२९)। राम से मिलकर भरत जब लौटकर आये तो पुनः आश्रम में आकर महर्षि भरद्वाज के दर्शन किए। महर्षि ने भरत के श्रेष्ठ विचारों की प्रशंसा की और श्री राम के कुशल समाचार भी पूछे (२.११३.१६-१७)।

लौटते समय श्री रामचन्द्रजी महर्षि भरद्वाज के आश्रम में ही ठहरे तथा वहीं रात्रि में विश्राम किया। अयोध्या के सब कुशल समाचार महर्षि से श्री राम ने जान लिये। सीता के शपथ ग्रहण के समय महर्षि भरद्वाज राम की सभा में उपस्थित थे। (७. ९६. ४)।

इस प्रकार रामायण के उक्त वर्णन से ज्ञात होता है कि महर्षि भरद्वाज महातपस्वी, योगी, अतिथिसेवक, सुशील और शिष्ट थे। राजा-महाराजा आदि सभी उनके दर्शन और सत्सङ्ग से पूर्ण लाभान्वित होते रहते थे। इनका आश्रम धन-धान्य से भरपूर और समृद्धिशाली था। सेना सहित राजाओं के निवास और भोजन के प्रबन्ध की सुव्यवस्था थी। बहुत शिष्यों के साथ वे अपने आश्रम में रहते थे। भारद्वाज गोत्र इन्हीं महर्षि भरद्वाज से चला है।

## महाभारत के भरद्वाज

महाभारतकार महर्षि व्यास लिखते हैं कि भरद्वाज ऋषि ने सत्यवान् के जीवित होने का विश्वास दिलाकर राजा मुमत्सेन को आश्वासन दिया था (वन पर्व २९८·१६) इस ऋषि के नाम पर भारत में भारद्वाजी नाम की एक नदी भी है जिसका जल भारतीय जनता पीती है। (भीष्म पर्व ९·२९) इस ऋषि के नाम पर भारद्वाज तीर्थ था। वहाँ अर्जुन सत्सङ्ग तथा तीर्थयात्रा करने गया था (आदि पर्व २१५.४)।

यह प्रस्तुत मुद्रांक भी भारद्वाज गोत्रोत्पन्न व्यक्ति से ही सम्बन्धित है।

## १८. नगरभूति : समय ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलि संवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर "नगरभूति" यह लेख लिखा है। लेख के ऊपर गमले या बाड़ के भीतर वृक्ष का चित्र बना है। जैसे आजकल नगर निगम (Corporation) या नगर पालिका आदि संस्था हैं, उसी प्रकार प्राचीन काल में जो संस्था वा विभाग सारे नगर की प्रत्येक व्यवस्था का प्रबन्ध करती थी, वह नगरभूति कहलाती थी। उसी संस्था का यह मुद्रांक है। भूति का अर्थ है—धन-ऐश्वर्य, सम्पत्ति, लक्ष्मी, सत्ता, भस्म, उत्तरोत्तर वृद्धि, हस्ती का शृंगार आदि।

वृक्ष का चित्र नगर की शोभा, समृद्धि और हरी-भरी खेती का राजकीय प्रतीक है। इन्हीं से नगर की शोभा होती है। जलवायु शुद्ध रहता है। जैसे आजकल भी नगरों में स्थान-स्थान पर छोटे-छोटे रमणीय उद्यान और वाटिकायें बनी हुई हैं। उन्हीं की शोभा और सुन्दरता का चिह्न यह वृक्ष इस मुद्रांक पर बना है। पूरे यौधेय जनपद वा प्रकृतानाकनगर की शस्यश्यामलता और अनाज की अधिकता का प्रतीक भी हो सकता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १९. भूतिनिकाय : समय ३३०० वर्ष पूर्व (१७७४ कलि संवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर "भूतिनिकाय" यह लेख विपरीत खुदा है। यह मुद्रांक राज्य की ओर से दिये जाने वाले आदेशों पर छाप लगाने के लिये प्रयुक्त किया जाता था। इसकी पीठ में पकड़ने की मूठ भी बनी है। लेख के नीचे शस्त्र का चित्र वा विजय का आद्यक्षर "वि" बना है।

भूति के ऐश्वर्य आदि अर्थ पूर्व मुद्रांक में दर्शा चुके हैं। निकाय का अर्थ है—निचीयते इति घञ् प्रत्ययः संघे, संहतानां समुच्चयः निलयः, गृहम्। समूह[1] संघ, संगठन (संघठन) अनेक संगठनों का समूह और घर ये निकाय कहलाते हैं। धन, ऐश्वर्य,[2] सम्पत्ति, लक्ष्मी, हाथी, घोड़े, उत्पत्ति, सत्ता, जन्म-मरण, रहन-सहन, आहार-विहार, शिक्षा, न्याय, शासन आदि का सुप्रबन्ध करने वाली एक वा अनेक संस्थाओं का नाम "भूति" है। इन अनेक प्रकार की संस्थाओं के संगठन को "भूतिनिकाय" कहते हैं। जो किसी भी नगर वा जनपद को सम्पत्तिशाली बनाने में उत्तरोत्तर वृद्धि की ओर ले जाकर सुखी और सम्पन्न करके स्वर्ग समान बनाये, उन संस्थाओं का समूह "भूतिनिकाय" कहलाता है।

लेख के नीचे किसी शस्त्र का चित्र बना है। इसी प्रकार का चित्र आहत (पंचमार्क्ड), उज्जयिनी, कौशाम्बी, कुणिन्द, अयोध्या, एरण, कन्नौज, तक्षशिला, कुलूत, पाञ्चाल (सूर्यमित्र) तथा प्राचीन ढली हुई ताम्र मुद्राओं पर बहुधा मिलता है। इनको दृष्टि में रखते हुये प्रतीत होता है यह भी शस्त्र का ही चिह्न होगा अथवा इसे विजय का सूचक "वि" भी मान सकते हैं। यदि विभूति के साथ "वि" का मेल करें तो विभूति धनैश्वर्य वाची है ही। अतः धन, ऐश्वर्य, सम्पत्ति, लक्ष्मी आदि की वृद्धि के लिये भी निकाय अर्थ हो जाता है। राजा का धनैश्वर्य बढ़ाने वाला राजकीय विभाग अथवा व्यापारियों का संघ भी हो सकता है।

## २०. पुष्यहस्थिस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

ताम्र के इस मुद्रांक पर 'पुष्यहस्थिस्य' यह लेख विपरीत खुदा है। लेख के ऊपर त्रिरत्न तथा नीचे स्वस्ति का चिह्न बना हुआ है। यह अंगूठी रही होगी। पीठ में इस प्रकार का चिह्न है जैसे कि अंगूठी का छल्ला पृथक् हो गया हो। यहाँ 'पुष्य-हस्थिस्य' पद प्राकृतभाषा में लिखा है। संस्कृत में 'पुष्यहस्तिनः' बनता है। अर्थात् पुष्यहस्थी वा पुष्यहस्ती का मुद्रांक। यह पुष्यहस्थी कोई राज्याधिकारी होगा अथवा यह किसी सामान्य व्यक्ति का निजी मुद्रांक है। त्रिरत्न का चिह्न समृद्धि का द्योतक है और स्वस्तिक कल्याण का परिचायक है। पुष्य विष्णु का भी नाम है। जो पुष्य=विष्णु के हाथी के समान बली हो वह व्यक्ति भी पुष्यहस्थी कहलायेगा।

## २१. .....
## .....वपतिलक्ष [प ?] : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)
## .....ग कुमारकस्य

यह मुद्रांक 'कुमारक' नाम के व्यक्ति का है। सम्भव है इस मुद्रांक पर पूर्ण लेख तीन पंक्तियों में होगा। प्रथम पंक्ति के टूटे हुये दिखने वाले तीन अक्षरों में मध्य का अक्षर 'र' हो सकता है। द्वितीय पंक्ति में अवशिष्ट पठित पाठ "वपति लक्ष" की संगति ठीक नहीं लगती। तृतीय पंक्ति में 'ग' के आगे 'कुमारकस्य' पढ़ा जाता है। यहाँ "कुदारकस्य" यह पाठ भी सम्भावित है। यह

---

१. देवान् देवनिकायांश्च ब्रह्मर्षींश्चामितौजसः—मनुस्मृति १.३६।
तथा देवनिकायानां सेन्द्राणां च दिवौकसाम्—महाभारत १. १२३. ४५।
मनुस्मृति तथा महाभारत के इन श्लोकों में निकाय का अर्थ समूह ही है। देवनिकाय=देवों का समूह।

२. यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥ गीता १८.७८।
गीता के इस श्लोक में भूति का अर्थ ऐश्वर्य है। जहाँ योगेश्वर कृष्ण हैं और जहाँ धनुर्धारी अर्जुन है, वहाँ ही लक्ष्मी, विजय और ऐश्वर्य है। यह मेरा विचार निश्चल नीति है।—स्वामी आत्मानन्द सरस्वती : वैदिक गीता १८.५७॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कुमारक वा कुदारक कोई राज्याधिकारी रहा होगा। दूसरी पंक्ति में "वपतिलक्ष" से "अश्वपतिलक्षपति" की भी सम्भावना की जा सकती है।

## २२. रमशश्री : समय २६०० वर्ष पूर्व (२४७४ कलि संवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर "रमशश्री" यह लेख खुदा हुवा है। लेख के चारों ओर अण्डाकार रेखा भी खुदी हुई है। यह मुद्रांक छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। इस की पीठ पर छिद्र युक्त मूठ बनी है। छिद्र में धागा डालकर टांगने में सुभीता होता था। 'रमशश्री' इस प्राकृत पद का संस्कृत रूप 'रमेशश्री' बन सकता है। 'रमेशस्य श्रीः=रमेशश्रीः' अर्थात् रमेश की श्री=मोहर (मुद्रांक)। रमेश का अर्थ है रमा+ईश=लक्ष्मीपति। विष्णु को भी लक्ष्मीपति कहा जाता है। यह रमेश कोई यौधेय राज्याधिकारी सम्भावित है। यहां "रामस्य श्री"=राम का मुद्रांक यह पाठ भी सम्भव है।

## २३. कक : समय ३००० वर्ष पूर्व (२०७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर 'कक' ये दो अक्षर खुदे हैं। कक किसी का नाम भी हो सकता है जैसे 'चच, लल्ल' और जुज्ज[1]। ये किसी नाम के सांकेतिक अक्षर भी हो सकते हैं। यदि इन्हें वर्ण (अक्षर) न माना जाय तो शस्त्रों के चित्र भी मान सकते हैं। यौधेय लोग आयुधजीवी अथवा शस्त्रोपजीवी तो थे ही, अतः शस्त्रों के चित्र भी हो सकते हैं।

## २४. हस्ती द्वारा ताड्यमान पुरुष : समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर हाथी के साथ युद्ध करते हुए योद्धा का चित्र है। युद्ध में हाथी का वश चल गया और उसने सैनिक को अपनी सूंड में लपेट कर उठा लिया। वीरता की पराकाष्ठा है। यह भी सम्भव है कि किसी युद्ध में यौधेयों के शत्रु विशेष को हाथी ने मार गिराया होगा, उस युद्ध का यह दृश्य होगा। यह भी हो सकता है कि बुद्धिमान् हाथी अपने घायल और विशेष सेनापति वा स्वामी को युद्ध स्थल से उठाकर सुरक्षित स्थान पर ले जा रहा हो। नौरंगाबाद से एक ऐसा खिलौना भी मिला है जिस पर एक शूरवीर यौधेय सैनिक को वज्र हाथ में लिये सिंह पर सवार दिखाया है। दूसरे हाथ से सिंह की पूंछ लपेटी हुई है। सिंह ने योद्धा के वज्र वाले हाथ की कोहनी मुख में ले रक्खी है। योद्धा उसके मुख पर वज्र से प्रहार कर रहा है। उसी की भांति यहां हाथी और सैनिक का दृश्य चित्रित है।

## २५. सपरशु त्रिशूल का चित्र : समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर शिव जी महाराज का 'विजय' नामक प्रिय शस्त्र त्रिशूल चित्रित है। इसी त्रिशूल में परशु (कुल्हाड़ा) भी लगा हुआ है। इसी भांति के अनेक मुद्रांक सुनेत से भी प्राप्त हुये हैं, उनमें भी परशुयुक्त त्रिशूल का चित्र बना है।

त्रिशूल की गणना महाभारत में शस्त्रास्त्रों में की गई है—

चक्राणि परिघाश्चैव त्रिशूलानि परश्वधान् ॥[2]

चक्र, परिघ=गदा, त्रिशूल और कुठार ये अस्त्रशस्त्र हैं। सदा त्रिशूल साथ में रखने के कारण शिवजी महाराज का नाम ही त्रिशूली हो गया था। त्र्यक्षोऽमेद्यस्त्रिशूली च वृषकेतुर्महाबलः।[3] यहां शिव को त्र्यक्ष=ज्ञानी और महायोगी, अपराजेय, त्रिशूलधारी, नन्दी के चित्र से युक्त झंडे वाला और महा बलवान् लिखा है। शिव के लिये अन्यत्र कहा है—त्रिशूलडमरुकरं व्याघ्रकृत्ति वसानम् अर्थात् शिव त्रिशूल और डमरू हाथ में लिये हुये और व्याघ्र चर्म को धारण किये हुये हैं। दुर्गा को भी त्रिशूलधारिणी लिखा है—

---

१. जुज्ज नाम के लिये देखिये मुद्रांक सं० २१२ सुनेतप्रकरण।

२. महाभारत २.३०.४६ ॥

३. स्कन्दपुराणे नीलकण्ठस्तुतिः ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



त्रिशूलं दक्षिणे हस्ते खड्गं चक्रं क्रमावधः ।

दुर्गा के ऊपर वाले दायें हाथ में त्रिशूल है, उसने नीचे के दायें हाथ में खड्ग=तलवार है, और उससे नीचे के दायें हाथ में चक्र है।[1] हरिवंश अध्याय १६६ में लिखा है—

त्रिशूलिनीं नमस्यामि महिषासुरघातिनीम् ।

महिषासुर का वध करने वाली त्रिशूलधारिणी दुर्गा को मैं नमस्कार करूंगा। हमें महिषासुर मर्दिनी दुर्गा की अनेक प्रस्तर तथा मृन्मूर्तियां मिली हैं, सभी में दुर्गा को त्रिशूल से युक्त दिखलाया गया है।

परशु का अर्थ है कुठार=कुल्हाड़ा। यह परशुराम का प्रिय शस्त्र माना जाता है, किन्तु आदि सृष्टि में हुये शिवजी महाराज के साथ भी इसका सम्बन्ध मुद्रांकों (मोहरों) द्वारा प्रमाणित होता है। परशु के पर्यायवाची शब्द इस प्रकार हैं—परशु, पर्शु, परश्वधः, पर्श्वधः, स्वधिति, कुठार इत्यादि। परशुधर का अर्थ गणेश भी है। इस मुद्रांक में शिव का अस्त्र त्रिशूल तथा गणेश का कुठार दोनों एकत्रित कर दिए हैं। शिव परिवार से यौधेय लोग सदा सम्बन्धित रहे हैं, अतः उनके शस्त्रास्त्रों को भी यौधेयों ने अपनाया है। अभी नौरंगाबाद से एक ऐसा मुद्रांक मिला है जिस पर एक योद्धा के पास ऐसा शस्त्र दिखाया है, जो ऊपर से त्रिशूल है, नीचे से शक्ति भाला है, और पार्श्व में परशु-कुठार लगा हुवा है। इसमें शिव, गणेश तथा कार्त्तिकेय तीनों के प्रिय शस्त्र एकत्रित कर दिये। इस प्रकार इस सपरशु त्रिशूल के चित्र वाले मुद्रांक का सीधा सम्बन्ध यौधेयों से जुड़ जाता है।

## २६. एक धार्मिक चिह्न : समय ३००० वर्ष पूर्व (२०७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर मन्दिर, स्तूप अथवा सुमेरु पर्वत का चित्र बना है। इस प्रकार का चिह्न अन्यत्र किसी मुद्रांक अथवा मुद्रा पर देखने में नहीं आया। यह कोई धार्मिक चिह्न भी हो सकता है।

## २७. यौधेयानाम् ! : समय ३००० वर्ष पूर्व (२०७४ कलिसंवत्)

सम्भव है इस मुद्रांक पर "यौधेयानाम्" लेख लिखा है। इस प्रकार के अनेक मुद्रांक नौरंगाबाद से प्राप्त हुये हैं। इसी नौरंगाबाद का प्राचीन नाम प्रकृतानाकनगर था। यौधेयों का यह नगर स्वर्ग के समान तथा वैभव से परिपूर्ण था। यहाँ लम्बे समय तक यौधेयों का एकछत्र राज्य रहा है।

## २८. श्रीबुद्धस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर "श्रीबुद्धस्य" यह लेख लिखा है, जिसका अर्थ है बुद्धस्य श्रीः=बुद्ध का मुद्रांक। श्रीः का अर्थ मुद्रांक (मोहर) है। यह बुद्ध नामक व्यक्ति यौधेयगणराज्य का कोई विशेष राज्याधिकारी होगा। लेख के ऊपर सावधान अवस्था में बैठे हुये सिंह का चित्र बना है। सिंह पराक्रम का प्रतीक है। यह बुद्ध नामक सेनापति सिंह की भांति पराक्रमी रहा होगा। इसी लिये उसने अपने मुद्रांक पर सिंह को चित्रित करवाया है। ( मनु ७।१०६ )[2] में राजा के गुणों में शत्रु को जीतने के लिये सिंह के समान पराक्रम करना भी एक विशेष गुण बतलाया है। सिंह के आगे भी शंख, चक्र जैसे किसी युद्ध सम्बन्धी उपकरण का चित्र था जो टूट गया है। लेख के ऊपर सिंह के चित्र से युक्त बहुत से मुद्रांक सुनेत से भी प्राप्त हुये हैं, जिनका विवरण आगे सुनेत प्रकरण में पढ़ने को मिलेगा।

---

१. यहां दुर्गा को अनेक हाथों वाली मानकर पुराण निर्माता ने वर्णन किया है। हमें भी दुर्गा की एक मूर्ति मिली है, जिसमें अठारह हाथ दिखाये गये हैं। वैसे यह सब लोकविरुद्ध होने से अमान्य है। इनके भाव ही लिये जाने चाहियें।

२. बकवच्चिन्तयेदर्थान् सिंहवच्च पराक्रमेत् ।
वृकवच्चावलुम्पेत शशवच्च विनिष्पतेत् ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## २९. रक्क : समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८८४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर गढे की भाँति गहराई वाले स्थान में "रक्क" लेख उभारकर लिखा गया है। लेख से पूर्व चक्र बना है। रक्क किसी व्यक्ति का नाम ही है। जैसे कक, चच, लल्ल और जुज्ज[1] आदि। चक्र युद्धोपयोगी अस्त्र है, इसका प्रयोग करने वाला रक्क भी राज्य से सम्बन्धित व्यक्ति रहा होगा। चक्र का चिह्न बतलाता है कि रक्क का चक्र अन्य लोगों पर चलता होगा।

## ३०. श्रीहरिवरस : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक श्री हरिवर का है। "श्रीहरिवरस" यह लेख प्राकृत भाषा में है, इसका संस्कृत रूप "श्रीहरिवरस्य" बनता है। यहाँ श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है, न कि मुद्रांक के लिये। लेख के ऊपर शंख का चित्र बना है। शंख युद्धों में जयघोष, हर्षध्वनि, युद्धारम्भ तथा युद्ध समाप्ति के लिये प्रयुक्त होता था।

श्री का अर्थ कान्ति, शोभा, लक्ष्मी है। शब्दकल्पद्रुम कोष में लिखा है—देवादिनाम्नः पूर्वं श्रीशब्दप्रयोगः कर्त्तव्यः। यथा—

देवं गुरुं गुरुस्थानं क्षेत्रं क्षेत्राधिदेवताम्।
सिद्धं सिद्धाधिकारांश्च श्रीपूर्वं समुदीरयेत्॥[2]

देव, गुरु, गुरुस्थान, क्षेत्र (तीर्थ), तीर्थाधिष्ठित देवता, सिद्ध, और सिद्धाधिकारियों के नामों से पूर्व श्री का प्रयोग करना चाहिये। श्री शब्द को विशेष आदरणीय मानकर कोश में आगे लिखा है—

स्वर्गगामित्वादिना सिद्धोऽधिकारो येषां नराणामित्यनेन जीवतां
श्रीशब्दादित्वं नाम्नः। न तु मृतानां तथेति शिष्टाचारः।[3]

अभिप्राय यह है कि श्री शब्द का प्रयोग जीवित व्यक्ति के नाम के प्रारम्भ में करना चाहिये। मरे हुये मनुष्यों के नामारम्भ में श्री का प्रयोग नहीं करना चाहिये, यह शिष्टाचार है।

वेद भगवान् श्री के विषय में इस प्रकार वर्णन करता है—

इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम्।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा॥ यजुर्वेद ३२.१६॥

(मे इदं ब्रह्म) मेरा यह ज्ञान तेज (च मे इदं क्षत्रं) और मेरा यह क्षात्रतेज (च उभे) ये दोनों (श्रियं) शोभा को (अश्नुतां) प्राप्त हों। (देवाः) विद्वान् अथवा दिव्य गुण (मयि) मुझ में (उत्तमां श्रियं) उत्तम शोभा को (दधतु) धारण करें। (तस्यै ते) उस तेरे लिये (स्वाऽऽहा) स्वार्थ त्याग करता हूँ।[4]

हे महाविद्य महाराज सर्वेश्वर! मेरा "ब्रह्म" (विद्वान्) और "क्षत्र" राजा, महाचतुर, न्यायकारी, शूरवीर राजादि (क्षत्रिय) ये दोनों आपकी अनन्त कृपा से यथावत् अनुकूल हों। "श्रियम्" सर्वोत्तम विद्यादि लक्षणयुक्त महाराज्य श्री को हम प्राप्त हों। हे "देवा" विद्वानो! दिव्य ईश्वर गुण परमकृपा आदि, उत्तम विद्यादि लक्षण समन्वित श्री को मुझ में अचलता से धारण

---

१. जुज्ज नाम के लिये देखिये, सुनेत प्रकरण, मुद्रांक सं० २१२
२. राघवभट्टकृत प्रयोगसार।
३. संस्कारतत्त्वम्।
४. स्वामी वेदानन्द तीर्थ : वेदामृत पृष्ठ १४५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कराओ। उसको मैं अत्यन्त प्रीति से स्वीकार करूं और उस श्री को विद्यादि सद्गुण वा सर्व संसार के हित के लिये तथा राज्यादि प्रबन्ध के लिये व्यय करूं।[1]

वेद मन्त्र में इस श्री के लिये प्रार्थना की है कि हमारे ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों इस श्री को प्राप्त हों और मैं भी इस श्री को धारण करूं।

सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयताम्।
—आश्वलायन गृह्यसूत्र १.२४.२२॥

ब्राह्मण की श्री शोभा सत्य, विद्या, तप, त्याग है। क्षत्रिय की श्री यश, कीर्ति, न्याय, बल, शक्ति, शौर्य, धैर्य आदि है। वैश्य की श्री अन्न, धन, ऐश्वर्य, सम्पत्ति, विभूति और स्वर्णादि रत्न है। महर्षि दयानन्द जी महाराज ने एक ही वाक्य में श्री का सर्वश्रेष्ठ अर्थ कर दिया कि सर्वोत्तम विद्यादि लक्षण युक्त महाराज्य श्री को हम प्राप्त हों। इसमें श्री के सभी अर्थ दे दिये। गागर में सागर भर दिया। जितने गुण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य में होने चाहियें वे सब श्री के अन्तर्गत समाविष्ट हैं। महाराज्य श्री उत्तम राज्य की श्री चक्रवर्त्ती राज्य भी इसी में आ जाता है। यदि कोई श्री को धारण करना चाहे तो यह त्याग से ही धारण की जाती है। वेद ने इसका यही एक मात्र उपाय बताया है। हम अपनी उत्तम विद्या, बल और धनैश्वर्य के द्वारा प्रभु के अमृत पुत्रों अर्थात् सभी प्राणियों की सेवा करें। हमारा सर्वस्व औरों की सेवा में काम आये। इससे ही हमें यश (कीर्ति) की प्राप्ति होगी, इसी में हमारी शोभा है।

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं न पु-र्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्त्तिनाशनम्॥

मुझे राज्य नहीं चाहिये। मैं स्वर्ग और मोक्ष की कामना नहीं करता। मैं तो दुःखी प्राणियों के सन्ताप और कष्टों को अपनी सेवा से दूर करना चाहता हूँ

न दातुं नोपभोक्तुं वा शक्नोति कृपणः श्रियम्॥

कृपण कंजूस व्यक्ति न किसी को श्री धन, सम्पत्ति कीर्ति (यश) और विद्यादि का दान कर सकता है और न वह स्वयं ही उसका भोग कर सकता है। क्योंकि यह कार्य स्वार्थ त्यागी ही कर सकता है। यह श्री हमें वेदभगवान् की आज्ञानुसार विद्यादि सद्गुण वा सर्व संसार के हितार्थ तथा राज्यादि प्रबन्ध के लिये व्यय करनी चाहिये। जो व्यक्ति अपने विद्या, बल और धनैश्वर्य आदि श्री का प्रयोग सारे संसार के लिये करता है, ऐसा व्यक्ति समाज के द्वारा श्री पूर्वक नाम से उच्चारित किया जाता है। अर्थात् ऐसे व्यक्ति के नाम से पहले सभी व्यक्ति आदरपूर्वक श्री का प्रयोग करते हैं। ऐसा व्यक्ति समाज और राष्ट्र की शोभा होता है। हमें भी ऐसे सज्जनों के आदर के लिये नाम से पूर्व श्री का प्रयोग करना चाहिए।

देवादिनाम्नः पूर्वं श्रीशब्दप्रयोगः कर्त्तव्यः।

देवादि के नाम से पूर्व श्री शब्द का प्रयोग करना चाहिए। देव का अर्थ निरुक्तकार महर्षि यास्क इस प्रकार करते हैं—

देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीति वा,
यो देवः सा देवता—निरुक्त अ० ७, पाद ४, खण्ड १५॥

दान देने से देव नाम पड़ता है और दान कहते हैं अपनी वस्तु को दूसरे के लिए देना। दीपन कहते हैं प्रकाशन करने को द्योतन का अर्थ है सत्योपदेश करना। इनमें से दान का मुख्य दाता ईश्वर है, जिस ने कि जगत् के सब पदार्थ दे रक्खे हैं। विद्वान् मनुष्य भी विद्यादि धनों =द्रव्यों के देने वाले होने से देव कहलाते हैं। सब मूर्तिमान् द्रव्यों का प्रकाश करने से सूर्यादि लोकों का भी देव नाम है। माता, पिता, आचार्य और अतिथि भी पालन, विद्या और सत्योपदेशादि करने से देव कहलाते हैं। इन सूर्य आदि लोकों का भी प्रकाशक देवों का देव महादेव वह ईश्वर ही हम सब मनुष्यों का उपास्य और इष्ट देव है अन्य कोई नहीं।

---

१. महर्षि दयानन्द : आर्याभिविनय- द्वितीय प्रकाश, मन्त्र ५५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ४७८. बलीयस : समय २६०० वर्ष पूर्व (२४७४ कलिसंवत्)

नौरंगाबाद से प्राप्त इस मुद्रांक पर "बलीयस" यह लेख खुदा हुवा है। मुद्रांक के मध्य स्वस्तिक चिह्न तथा घड़ी के अक्षरों की भांति गोलाई में लिखे नाम के आद्यन्त में एक गोमुख सदृश चिह्न बना है। प्राकृत रूप "बलीयस" का संस्कृत रूप "बलीयस्य" बनेगा। इसका अर्थ है—बलीय नामक व्यक्ति का (मुद्रांक—मोहर)। बलीय शब्द बलवान् का वाचक है।

स्वस्तिचिह्न कल्याण का द्योतक है। वेद में भी कल्याण पथ पर चलने का विधान है—

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि॥ ऋग्वेद ५-५१-१५।

सूर्य और चन्द्र के समान हम सब स्वयं उत्तम मार्ग का अनुसरण करें और पश्चात् हम दानी, घातपात न करने वाले और ज्ञानी सज्जनों की संगति करे।

सूर्य और चन्द्र जिस प्रकार जनता को प्रकाश का मार्ग बताते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक ज्ञानी मनुष्य अन्य अज्ञानी जनों का मार्ग दर्शक बने तथा परोपकार, अहिंसा और ज्ञानमय कर्म करने वालों के संघ बनावे। परोपकार, अहिंसा और ज्ञान ये तीनों मानव हृदय की उन्नति करने वाले हैं, अतः इन गुणों को धारण करने वालों के साथ रहकर साधारण मनुष्यों को भी अपने भीतर इनका आधान करना चाहिए। स्वस्ति के प्रतीक से सर्वत्र इसी प्रकार के भाव लिये जाने अभीष्ट हैं।

नन्दीमुख का चिह्न ब्राह्मी लिपि के 'म' अक्षर सदृश बनता है। इसे गोमुख का प्रतीक कहें तो यौधेय लोग गोभक्त सदा से ही रहते आये हैं। उनके प्रत्येक मुद्रांक पर नन्दी का चित्र है। यहां भी नन्दी के मुख का चित्र माना जा सकता है। अथवा 'म' से महासेनापति का भी ग्रहण हो सकता है। यौधेयों के महासेनापति बलीय का यह मुद्रांक है जो सदा सब के कल्याण की कामना किया करता होगा। सैनिकों के युद्ध में प्रस्थान से पूर्व पुरोहित और विद्वान् लोग क्षत्रियों के कल्याणार्थ वेद के स्वस्ति सूक्तों का पाठ किया करते थे। इस मुद्रांक की पीठ में सछिद्र मूठ बनी हुई है। धागा डालकर टांगने के लिये मूठ में छिद्र बना है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

## सप्तम-अध्याय

# अगरोहा

ग्राम अगरोहा हिसार से फतेहाबाद सिरसा जाने वाले राजमार्ग पर हिसार से १४ मील की दूरी पर स्थित है। अगरोहे का प्राचीन नगर वा दुर्ग उजड़े हुये अनेक ऊँचे-नीचे टीलों के रूप में अपनी प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री को संजोये हुये खण्डहरों के रूप में विद्यमान है। इन खण्डहरों की ऊँचाई एक समान नहीं है। अधिक से अधिक ऊँचाई ८७ फीट है। ये टीले लगभग ६५० एकड़ भूमि पर फैले हुए हैं। आजकल जो अगरोहा ग्राम है, उससे दो-तीन फर्लांङ्ग की दूरी पर उत्तर-पश्चिम दिशा में यह खण्डहर स्थित है। यहाँ यह जनश्रुति है कि राजा अग्र जो अग्रसेन के नाम से जाना जाता है, यहाँ राज्य करता था। खण्डहर पर दुर्ग के जो अवशेष दिखाई देते हैं वे उसके निवास स्थान से सम्बन्ध रखते हैं।[1]

यह तो निश्चय से कहा जा सकता है कि इस नगर का प्राचीन नाम अग्रोदक था। यहां खुदाई में मिली मुद्राओं पर यह नाम मिलता है। अगरोहा का सम्बन्ध अग्र नामक गण विशेष से था। जो अवशेष इन खण्डहरों के ऊपर बने हुए दुर्ग के दिखाई देते हैं वे बहुत पुराने नहीं हैं। दीवान नान्नूमल अग्रवाल ने १७६५ से १७८१ ई० में इस दुर्ग को बनवाया था। यह पटियाला के राजा अमरसिंह का राज्याधिकारी था।[2] प्टोलेमी (Ptolemy) आदि ने अगरोहा को उत्तर प्रदेश के आगरा और उज्जैन के निकट बसे अगर के साथ जोड़ने का यत्न किया है।[3] यह उनका सर्वथा भ्रम है।

जियाऊद्दीन बरनी और शमसे सीराज अफीफ[4] आदि मुस्लिम इतिहासकारों ने अगरोहा को अच्छा धन-धान्य से परिपूर्ण नगर (कस्बा) लिखा है। मुहम्मद तुगलक बादशाह के समय पड़े अनेक दुर्भिक्षों का मरुभूमि के इस नगर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। यह इबनबतूता ने भी माना है।[5] फीरोजशाह तुगलक ने इस अगरोहा नगर के हिन्दू मन्दिरों और धार्मिक स्थानों को तोड़ डाला और यहाँ से ईंट, पत्थर आदि सामान लेकर अपने नाम से बसाये नये शहर हिसार फीरोजा में उस सारी सामग्री का प्रयोग किया। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है हिसार स्थित गूजरी महल, फीरोजशाह की मस्जिद और जहाज कोठी। फतेहाबाद की मस्जिद में भी अगरोहा से ले जाई गई सामग्री का उपयोग किया हुवा है। यह सच्चाई तो साफ है और सबको दिखाई देती है।

---

१. अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास : डा० सत्यकेतु विद्यालंकार।

2. Griffin, Punjab Rajas & Punjab State Gazetteers, Vol. XVII A.

3. J.W.Mc Crindle, Ancient India as described by Ptolemy. P. 154.

4. Elliot, The History of India, Vol. III, P. 245. Ibid. P. 300.

5. Cambridge History of India, Vol. III, P. 153.

६. सन् १९३८-३९ में भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग ने अगरोहा की खुदाई कराई थी। उसमें एक मृत्पट्टिका ऐसी मिली जिस पर गानविद्या के सात स्वरों के आदिम अक्षर तत्कालीन लोकप्रचलित भाषा और लिपि में लिखे हैं। वे इस प्रकार हैं—सा, नि, ध, पा, मा, ग, रे, स। स का दो वार पाठ किया गया है। क्योंकि गान का अभ्यास करते समय सरगम वार-वार दोहराया जाता है। इन लौकिक स्वरों के विधायक वैदिक छन्दों के लिये छन्दःशास्त्र का सूत्र इस प्रकार है—स्वराःषड्जादयः। पिङ्गलछन्दः शास्त्रम् ३-६४।

षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद इन वैदिक छन्दों के आदिम अक्षरों का ग्रहण करके लौकिक स्वरों के क्रमशः सा, रे, गा, मा, पा धा, नि ये नाम रख लिये गये हैं। इन्हीं स्वरों को अगरोहा से इस प्राप्त मृत्पट्टिका पर उत्कीर्ण किया गया है। इस मृत्पट्टिका का चित्र पृष्ठ ४८० पर प्रकाशित है। इससे यौधेय प्रदेश की गानविद्या में रुचि और योग्यता अभिलक्षित होती है। जैसे आजकल सरवर गाने के लिये बाजे आदि साधन होते हैं, उसी प्रकार पुरातन काल में ऐसे साधन अवश्य रहे होंगे, किन्तु कालवशात् नष्ट होने से अब अप्राप्य हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पुरातत्त्व की खोज करने वाले अंग्रेज विद्वान् मिस्टर सी. जे. रोडजरस[1] ने १८८८-८९ में अगरोहे में थोड़ी-सी खुदाई कराई थी। वह छोटा-सा टीला १६ फीट की गहराई तक खोदा गया था। उस उत्खनन में पक्की ईंटों की भित्ती और फर्श निकले। वह खुदाई १५ दिन तक चली थी। उससे वह इसी परिणाम पर पहुँचा कि नगर का वह भाग अग्नि से जला हुवा था। वहाँ से प्राप्त मुद्रायें, मणके, टूटी हुई प्रस्तर मूर्तियाँ और मृन्मूर्तियाँ भी यही सिद्ध करती हैं कि यह स्थान जला हुवा है। हरयाणे के प्राचीन नगर रोहतक, अगरोहा, महम, सिरसा, हांसी आदि विदेशी आक्रमणकारियों ने भस्मसात् कर दिये थे।

१९३८-३९ में इस खण्डहर का सबसे ऊँचा टीला परीक्षण के रूप में खुदाई के लिये चयन किया गया। यह टीला सड़क से दक्षिण की ओर था। उत्खनन से यह सिद्ध हो गया कि नगर बहुत विचारपूर्वक योजनाबद्ध बसाया गया था। नगर बहुत सम्पन्न था। सभी भवन आग से पकी ईंटों से बनाये गये थे। निवास के भवनों का परस्पर एक दूसरे के साथ स्पष्ट, सरल और अच्छा सम्बन्ध था। जो कमरे निवास के लिये बनाये गये थे, उनकी खुदाई लगभग १२ फीट नीचे तक की गई थी। कमरे चौकोर मुरब्बे में बने हुये थे। सभी कमरों में प्रवेश के लिये अच्छे खुले द्वार बने थे। उनके किवाड़, चौखट आदि अवश्य लकड़ी के रहे होंगे, क्योंकि द्वारों पर लगी लोहे की कीलें, पत्तियाँ आदि यही सिद्ध करती हैं। जितने भी भवन खोदे गये, सभी नीचे तक अग्नि से जले हुए ही मिले। इनमें जली हुई पाण्डुलिपि (पुस्तक), मिट्टी की मोहर, अभिलेख वाले सांचे (ठप्पे), जली हुई खण्डित प्रस्तर मूर्तियाँ, सोने का मणका, राख वा मिट्टी बने हुए गेहूँ निकले। जली और टूटी हुई मूर्तियाँ ढाँचों के रूप में मिली थीं। ऊपर के स्तर पर वस्तुयें प्रायः नहीं मिलीं। दूसरे स्तर पर कमरों से पर्याप्त सामान प्राप्त हुवा। ४०१ वस्तुयें प्राप्त हुईं जो १२ फीट के अन्तर्गत ही मिलीं। मिट्टी के पात्र, पत्थर, मणके, शंख की चूड़ियाँ, मुद्रायें (सिक्के), लोहे की वस्तुयें जो लकड़ी की चौखट और किवाड़ों में प्रयुक्त की गई थीं, एक मिट्टी का सांचा (Claydie), एक जली हुई पाण्डुलिपि और एक मिट्टी का मुद्रांक (Seal) भी प्राप्त हुवा। इसका चित्र इस ग्रन्थ में चित्र सं० ४१ पर छपा है। मिट्टी के अनेक प्रकार के छोटे-बड़े घड़े, प्याले आदि बहुत संख्या में मिले। इसका विवरण अगरोहा की खुदाई[2] वाली पुस्तक में देख सकते हैं। टूटे हुए मन्दिर के अवशेष तथा शस्त्रादि भी इस उत्खनन में प्राप्त हुए।

यहाँ से प्राप्त मिट्टी के मुद्रांक पर दायें मुख करके बैठे हुए नदी के चित्र के नीचे "पाचनेस रुद्रे धम" लिखा हुवा है। कौशाम्बी, भीटा, वसाढ और बेसनगर से प्राप्त मुद्रांकों तथा यौधेयगण के अनेक[3] मुद्रांकों पर भी इसी प्रकार के नन्दी का चित्र मिलता है। इस खुदाई में एक जलकूप (कुआं) भी मिला, जिसमें एक साथ चार अंगूठियाँ मिलीं। इस खुदाई में[4] सूर्य और वृक्ष के चित्र से युक्त एक आहत मुद्रा और अन्ती अलकीदास, अपोलोडोटस्, स्ट्रेटो[5] एमण्टस् इन चार भारतीय यूनानी-राजाओं की एक-एक मुद्रा मिली। ये चाँदी के पाँचों सिक्के मिट्टी के छोटे से पात्र में मिले थे। इसी प्रकार एक दूसरे मिट्टी के पात्र में ताम्बे की चौकोर ५१ मुद्रायें मिली थीं। इन सभी मुद्राओं पर "अगोदके अगाच जनपदस" लेख लिखा है। ये आग्रेयगण के अग्रोदक जनपद की मुद्रायें हैं। इनके लेख के साथ वृक्ष का चित्र है। दूसरे पक्ष में नन्दी, सिंह और कुत्ते के चित्र बने हैं। ये मुद्रायें इस अगरोहा का सम्बन्ध प्राचीन अग्रोदक जनपद से जोड़ती हैं। इसकी स्थापना प्राचीन काल में अगर वा आग्रेयगण ने की थी, ये उसी की मुद्रायें हैं, ये आग्रेय लोग ही अग्रवाल के प्रपितामह (परदादा) थे। यही एक प्रमाण है जिससे यह सिद्ध होता है कि यह अगरोहा अग्रवालों[6] का है। यह नगर राज्य (City state) अगरोहा किसी समय कुछ काल के लिये अवश्य ही इनके हाथों में रहा

---

1. Report of the Punjab Circle of the Archaeological Suarvey for 1888-89 P. 41-43.
2. Excavation at Agroha, Punjab No. 61, by H. L. Srivastava.
3. ,, ,, ,, p. 4, Also on several Yaudheya clay seals.
4. ,, ,, ,, p. 5.
5. यह मुद्रा हमें 'मिनेण्डर' की लगती हैं, क्योंकि खरोष्ठी लिपि में मेनेन्द्रस नाम स्पस्ट दिखाई पड़ता है। पता नहीं श्रीवास्तव जी ने इसे स्ट्रेटो की मुद्रा कैसे लिख दिया।
6. These coins establish the identity of Agroha with the ancient Agrodaka, perhaps founded by Agra, the reputed fore-father of the Agrawals.

—Excavation at Agroha, Punjab, p.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



होगा। मुद्राओं के लेख 'अग्रोदक जनपद' से यह सिद्ध है। जो मुद्रायें अग्रोदक जनपद की खुदाई में मिली थीं, उनका विवरण खुदाई की पुस्तक में दिया है, पाठक वहाँ देख लें।

खुदाई में तो अग्रोदक जनपद की केवल ५१ मुद्रायें चतुष्कोण ही मिली थीं, किन्तु हमें १५ वर्ष के निरन्तर घोर परिश्रम से तथा सहस्रों रुपये व्यय करके अगरोहा से 'अग्रोदक जनपद' के अनेक प्रकार के कई सौ सिक्के मिले हैं। उन पर "अगोदका अगाच जनपदस्य" और "अगाच मित्रपदाभिष्ठायिनाम्" इत्यादि अनेक प्रकार के लेख लिखे हैं। यौधेय, कुषाण और मुस्लिम बादशाहों की भी पर्याप्त मुद्रायें मिली हैं। ताम्रमूर्तियाँ, प्रस्तरमूर्तियाँ, मृन्मूर्तियाँ, मणके इत्यादि अनेकविध सामग्री जो हमें अगरोहा से मिली है, उसके आधार पर अनेक बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। इस ग्रन्थ में तो अगरोहा से प्राप्त मुद्रांकों का वर्णन किया जायेगा। कभी समय मिलने पर अगरोहा के विषय में कई बड़े ग्रन्थ लिखने का प्रयास करूंगा, जो इसके लुप्त इतिहास पर बहुत महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालेंगे।

अगरोहा के खण्डित दुर्ग के उत्खनन से जो सामग्री मिली है, उसके आधार पर आधुनिक इतिहासकार इस नगर का समय विक्रमपूर्व ही आँकते हैं।[1] उनका यह भी अनुमान है कि इस खण्डहर की नीचे तक खुदाई की जाये तो यह और भी प्राचीन सिद्ध हो सकता है। हमारी सामग्री के अनुसार भी यह दुर्ग विक्रम पूर्व का तो सिद्ध है ही, महाभरत से पूर्व का भी सम्भावित है। महाभारत कालीन दशार्णों (दस दुर्गों) में से एक दुर्ग अगरोहा भी अवश्य था। यह यौधेयगण का एक अति प्राचीन दुर्ग है। यहाँ से प्राप्त यौधेय मुद्रायें तथा मुद्रांक इस बात का ठोस प्रमाण हैं। यौधेय गण के महासेनापतियों का यह निवास स्थान था। अगरोहा के चतुर्दिक अवस्थित यौधेय गण राज्य के इस क्षेत्र की यह राजधानी भी हो सकती है। इस दुर्ग पर यौधेय तथा कुषाणों में कई पीढ़ी तक संघर्ष रहा है, राजा रिसालू (विमकडफिस), कनिष्क, हुविष्क तथा वासुदेव इन कुषाण राजाओं की सहस्रों मुद्रायें यहाँ से मिली हैं। भारतीय ग्रीक राजाओं का प्रभाव और सम्बन्ध भी अगरोहा के साथ किसी न किसी रूप में कुछ समय तक रहा है। इण्डोग्रीक राजाओं की मुद्रायें भी हमें यहां से मिली हैं। यहाँ से प्राप्त अनेक प्रकार के मुद्रांकों से पाठक स्वयं जानने का यत्न करें कि यह दुर्ग किसी समय कितना महत्त्वपूर्ण रहा होगा। यह दुर्ग (नगर) अनेक बार बसा और उजड़ा है, इस दुर्ग से प्राप्त सामग्री इसकी साक्षी है।

## अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

मुद्रांक सं० ३१ यौधेय महासेनापति, ३२ पितृदत्त, ३३ श्रीसाधुवृद्धि, ३४ शंकरमल, ३५ नूनकुसला, ३६ विश्वपाल, ३७ श्रीयाक, ३८ हालेत गेया, ३९ सिंह, ४० भद्र, ४१ पावनेस रुद्रे धर्म, ४३ श्रीशिवदरज, ४४ ददाक, ४५ श्रीततुण्य, ५० श्रीधुव्रा-र-मित्र ये १५ मुद्रांक व्यक्ति विशेषों से सम्बन्ध रखते हैं। ये सभी राज्य के अधिकारी, सेनापति और कर्मचारी आदि हो सकते हैं। जिन नामों से पूर्व श्री का प्रयोग है, वे निश्चय से राज्य के माननीय व्यक्ति थे। पितृदत्त, पावनेस रुद्रे धर्म आदि गुरु, आचार्य वा राज्य के पुरोहित भी हो सकते हैं। नूनकुसला और हालेत गेया ये दोनों नाम देवियों के हो सकते हैं। हालेत गेया यह विदेशी नाम प्रतीत होता है। मुद्रांक सं० ४२ पर "जु जु" लेख संक्षिप्त है। मुद्रांक सं० ४६ धार्मिक हो सकता है, मुच (मुंच) का अर्थ है छोड़ना अर्थात् दोष दुर्गुणों को छोड़ने के लिये उपदेश है अथवा मुच किसी का नाम भी हो सकता है। हमें ऐसे चार मुद्रांक मिले हैं, एक मुद्रांक पर यही नाम दो बार लिखा है। ४६ से ४९ संख्या तक के मुद्रांकों पर धार्मिक और राजनीतिक चिह्न हैं। अब इन्हीं मुद्रांकों का क्रमशः वर्णन किया जायेगा।

---

1. The recovery of Indo-Greek coins and the Agodaka coins in the pit have so far established the antiquity of the place to about the 2nd Century B. C. It is therefore possible that excavations on a large scale at this place may yield important antiquities of an earlier period.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



३१. श्रीय्यौधेयगणपुरस्कृतस्य भट्टारराजमहाक्षत्रपमहासेनापते राज्यमित्रगृहीतस्य महाराजमहाक्षत्रपसेनापतेरप्रतिहतशासनस्य धर्ममित्रनयवर्मणः (धर्ममित्रवसुवर्मणः?) ।समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

यौधेय गण का यह अतिमहत्त्वपूर्ण मुद्रांक है। इस पर बायें मुख करके चलते हुए नन्दी का चित्र दिखाया गया है। अन्य यौधेय मुद्रांकों से इसमें विशेष बात यह है कि इस पर नन्दी का चित्र लेख के ऊपर दिया है। लेख के प्रारम्भ में "श्रीः" शब्द भी था, जो कि घिसने से स्पष्ट दिखलाई नहीं देता। श्री के विसर्जनीय सम्बन्धित रेफ के कारण यौधेय के यकार को द्वित्व हो गया है,[1] यही "श्रीर्" की विद्यमानता का प्रमाण है।

प्रस्तुत मुद्रांक में "नयवर्मणः" के स्थान पर "वसुवर्मणः" नाम अधिक उपयुक्त जंचता है। लेख घिसा हुवा होने के कारण सुस्पष्ट दिखाई नहीं देता।

यहां यौधेयगण के द्वारा राज्यमित्र को भट्टारराज, महाक्षत्रप और महासेनापति के रूप में पुरस्कृत किया गया है। इस राज्यमित्र ने धर्ममित्र (धर्म के मित्र) वसुवर्मा को महाराज, महाक्षत्रप तथा सेनापति के रूप में अपना सहायक अथवा स्थानापन्न चुना। इस वसुवर्मन् के शासन=आज्ञा का उल्लंघन कोई नहीं कर सकता था। ऐसे धर्ममित्र के पुत्र अथवा धर्म के मित्र वसुवर्मा का यह "श्रीः" मुद्रांक (मोहर) है।

राज्यमित्र यौधेयगण द्वारा पुरस्कृत (मान्य) भट्टारराज, महाक्षत्रप और महासेनापति है।

वसुवर्मा राज्यमित्र द्वारा गृहीत (स्वीकृत) महाराज, महाक्षत्रप और सेनापति है।

दोनों की महाक्षत्रप उपाधि समान है। भट्टारराज और महासेनापति से छोटा पद महाराज और सेनापति है। राज्यमित्र को सारे यौधेयगण ने चुना, किन्तु वसुवर्मा को राज्यमित्र ने चुना। अतः यह सिद्ध है कि वसुवर्मा राज्यमित्र के नीचे रहने वाला छोटा अधिकारी था। सभी प्रजा इस की आज्ञानुवर्तिनी थी, इसकी आज्ञा भंग करने का साहस कोई नहीं कर सकता था। यह वसुवर्मा धर्म का मित्र था।

[एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः—मनुस्मृति ८.१७।

मनुष्य का धर्म ही एक ऐसा मित्र है जो मरणोपरान्त भी साथ जाता है, इसी वचन के अनुसार वसुवर्मा ने धर्म को ही अपना मित्र बनाया हुवा था।

इस मुद्रांक में दो वार महाक्षत्रप पद का प्रयोग हुवा है। क्षत्रप और महाक्षत्रप शब्द का प्रयोग राजुवुला, चष्टन, नहपान, रुद्रदामन्, रुद्रसिंह, विश्वसिंह, भर्तृदामन् आदि अनेक विदेशी शक और क्षत्रप राजाओं ने भी अपने सिक्कों पर किया है। छोटे राज्य का स्वामी क्षत्रप तथा बड़े राज्य का स्वामी महाक्षत्रप होता था। अथवा स्वाधीन राजा महाक्षत्रप और अधीनस्थ राजा क्षत्रप होता था। क्षत्रप मुद्राओं में एक ही शासक की कुछ मुद्राओं पर क्षत्रप तथा कुछ पर महाक्षत्रप लेख मिलता है इससे ज्ञात होता है कि अधीन अवस्था वाला क्षत्रप राजा स्वतन्त्र होने पर महाक्षत्रप उपाधि धारण करलेता था। कहीं-कहीं अपवाद भी मिलता

---

१. अचो रहाभ्यां द्वे-अष्टाध्यायी ८.४.४६। अच् (स्वर) के उत्तर में (आगे) यदि र और ह हों तो र और ह से परवर्ती यर् (हकार को छोड़कर सभी व्यञ्जन, अन्तस्थ और ऊष्मों सहित ३२ वर्ण) को द्वित्व होता है जैसे श्रीय्यौधेयगण···मुद्रांक सं० ३१, श्रीय्यातृसोमस्य, मुद्रांक सं० १७६, १७७ ॥
श्रीर्ज्जयसोमस्य, मुद्रांक १६७।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



है। स्वतन्त्र शासक "क्षत्रप" तथा परतन्त्र शासक "महाक्षत्रप" का प्रयोग भी करते थे। जैसे नहपान ने स्वतन्त्र होते हुए भी क्षत्रप शब्द अपनाया जैसे नासिक और कार्ले गुहा लेख में। और कनिष्क का अधीनस्थ होते हुए भी खरपल्लान "महाक्षत्रप" कहलाता था जैसे सारनाथ प्रतिमा लेख में। प्राकृत भाषा में क्षत्रप को खतप कहते हैं।

उक्त राजाओं द्वारा प्रयुक्त विरुदों के कारण आधुनिक भारतीय तथा विदेशी इतिहासकार यह मानते और कहते हैं कि क्षत्रप और महाक्षत्रप शब्द विदेशी हैं। उन्हीं से भारतीयों ने अपनाया है। हम इसका सप्रमाण प्रत्याख्यान करते हैं। क्षत्र शब्द राष्ट्र का वाचक है। उसका जो पालन रक्षण करे वह क्षत्रप ( क्षत्रं पाति इति क्षत्रपः ) कहलायेगा। महांश्चासौ क्षत्रपः=महाक्षत्रपः।

प्राचीन काल में राज्यसिंहासन पर आसीन होने से पूर्व राजसूय आदि यज्ञ होते थे। उनमें एक का नाम 'क्षत्रधृतियज्ञ'[1] भी था। जिस यज्ञ में राज्य को धारण किया जाये वह क्षत्रधृति कहलाता था। यहां भी क्षत्र का अर्थ राष्ट्र वा राज्य है। "क्षत्राद्घः" अष्टा० ४.१.१३८ सूत्र से जाति वाचक क्षत्र शब्द से घ प्रत्यय करने से क्षत्रिय शब्द बनता है। क्षत्रिय से यहां क्षत्रिय जाति=क्षत्रिय वर्ण का ग्रहण होता है। क्षतं क्षताद् वा त्रायते यः स क्षत्रियः। जो पीड़ित का त्राण करे अथवा जो क्षत चोट से बचाये वह क्षत्रिय कहलाता है। इस प्रकार प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में क्षत्र और इससे सम्बन्धित शब्दों का विशाल भण्डार है। इससे क्षत्रप और महाक्षत्रप शब्दों को विदेशी राजाओं से ग्रहण किया हुवा मानना संस्कृत और इतिहास ज्ञान से शून्यता प्रकट करना है। वीर यौधेयों ने कुषाण, शक, हूण आदि सभी विदेशी आक्रान्ताओं से युद्ध किये थे। अतः इन यौधेयों के भट्टारक, भट्टारराज, महाराज, क्षत्रप और महाक्षत्रप आदि प्रसिद्ध शब्दों को शक आदि लोगों ने स्वयं को वीर सिद्ध करने के लिये अपना लिया। ये शब्द विशुद्ध वैदिक और लौकिक संस्कृत भाषा के हैं तथा प्राचीन भारत में सर्वत्र प्रचलित थे। यहीं से उन विदेशी लोगों ने ले लिये। जैसे भारत की मुद्रा निर्माणकला, वास्तुकला, स्थापत्यकला, संगीत, विज्ञान, ज्योतिष और लेखन कला आदि का ग्रहण विदेशियों ने किया था, उसी प्रकार इन शब्दों को भी अपना लिया। यौधेय लोग विदेशी आक्रान्ताओं के आगमन से सहस्रों वर्ष पूर्व भी यहां विद्यमान थे। उन्हीं की परम्परा से ये शब्द चलते आये हैं। इस मुद्रांक में भी ये शब्द उसी प्राचीन परम्परा के अनुसार लिखे गये हैं। कालक्रम की दृष्टि से भी यह मुद्रांक विक्रम से कम से कम चार शती पूर्व का है। उस समय तो विदेशियों के आक्रमण इस आर्यावर्त पर हुये भी नहीं थे, उस समय भारतीयों ने ये शब्द कैसे विदेश वालों से अपना लिये? भारत की परतन्त्रता के दिनों में तथा अब भी अंग्रेज और उनके मानसिक दास भारतीय इतिहास लेखकों का सदा यह प्रयत्न रहता आया है कि भारत और भरतीय संस्कृति को हीन, अल्प समय से प्रचलित और दूसरों से ग्रहण की हुई बताया जाये। जिससे भारतीय उभर न सकें और ये सदा हमारे अधीन रहें तथा स्वतन्त्रता की भावनायें कुचली जाती रहें। किन्तु भूमि माता के गर्भ से कभी-कभी ऐसे सुदृढ़ और ठोस प्रमाण निकल आते हैं जिनका उत्तर ऐसे इतिहासकारों से देते नहीं बनता। ये प्रमाण इनके कल्पना और झूठ से निर्मित किताबी भवनों की नींव तक हिला देते हैं। ऐसे समय बौखला कर ये लोग इन प्राचीन वस्तुओं को नकली कहने लग जाते हैं। अथवा उसे छपा लेते हैं, प्रकट नहीं होने देते।

इसी प्रकार के अकाट्य प्रमाणों से युक्त हमारा यह मुद्रांक है। यौधेयों के मुद्रांकों पर जहां भी नन्दी ( सांड ) का चित्र बना हुआ है, वहां उसे सर्वत्र चलती हुई अवस्था में दिखाया गया है। जो निरन्तर गतिशील रहने का प्रतीक है। जितना लम्बा, लगातार, जल्दी और लम्बे समय तक बैल चल सकता है, उतना अन्य प्राणी नहीं। इसीलिये इस सर्वश्रेष्ठ पशु को यौधेयों ने अपने सिक्कों और मुद्रांकों पर अपनाया है। "गच्छतीति गौः" जो गमन करता है, गतिशील है, चलायमान है वह सब गौ नाम से पुकारा जाता है। जैसे गौ, वाणी, सूर्य की किरण और पृथिवी। ये सब गतिशील हैं। गति से ही इनकी स्थिरता है। हम में भी गति न रहने से आलस्य और ढीलापन आ जाता है, अतः मुद्रांकों पर स्फूर्ति और उत्साह की प्रेरणा के लिये यौधेयों ने सदा और सर्वत्र नन्दी बैल को चलता हुवा ही दिखाया है।

## ३२. पितृदत्त: समय २६०० वर्ष पूव (२४७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर "पितृदत्त" यह लेख विपरीत खुदा है। लेख के ऊपर यज्ञशाला अथवा मन्दिर का चित्र बना है। यह मुद्रांक छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। इसकी पीठ में छिद्र भी बना हुवा है। लेख और चित्र के मध्य एक मोटी रेखा भी बनी

---

१. आश्वला० ६.२.२५।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



हुई है, उसके दोनों सिरों पर इसी प्रकार का उठाव दिखाया है जैसे कि इस यज्ञशाला के ऊपर दिखा रक्खा है। ये चबूतरे के दोनों ओर के दो लघु स्तम्भ भी हो सकते हैं। यह पितृदत्त इस मन्दिर वा यज्ञशाला का निर्माता, पुरोहित अथवा संरक्षक होगा। पितृदत्त नाम किसी पुरोहित वा ब्राह्मण का ही होना चाहिये। उस समय ब्राह्मणों के नाम पितृदत्त, देवदत्त यज्ञदत्त आदि होते थे।

## ३३. श्रीसाधुवृद्धिस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह साधुवृद्धि नाम के राज्याधिकारी का मृन्मुद्रांक है। नाम से पूर्व श्री का प्रयोग सम्मानार्थ है। 'श्रीसाधुवृद्धिस्य' यह पद प्राकृत भाषा का है, संस्कृत में 'श्रीसाधुवृद्धे:' रूप बनता है। हमें इस प्रकार के दो मुद्रांक मिले हैं।

## ३४. शङ्करमलस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यस मुद्रांक शंकरमल नामक किसी राज्याधिकारी का है। इसमें श्री शब्द का प्रयोग नहीं है। सम्भवत: घिसने के कारण भी दिखाई न देता हो। लेख के ऊपर बायें मुख करके विश्राम अवस्था में बैठे हुए नन्दी का चित्र बना है। नन्दी के चित्र के कारण लगता है कि शंकरमल (शङ्करमल्ल) यौधेयगण का कोई राज्याधिकारी था। क्योंकि नन्दी को यौधेयगण ने अपने राजकीय प्रतीक के रूप में अपनाया हुवा था।

## ३५. नूनकुसला : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस वर्गाकार छोटे-से पात्र के एक ओर 'नूनकुसला' यह नाम लिखा है। सम्भव है यह किसी पात्र निर्माता कुम्भकार अथवा उसके परिवार की किसी सदस्या का नाम हो सकता है। यह भी सम्भावना की जा सकती है कि यह राज्य से सम्बन्धित किसी व्यक्ति विशेष का भी नाम हो।

## ३६. विसपालकस तपुविदशने : ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलिसंवत्)

ताम्बे के इस अंगुलीयक (अंगूठी) पर 'विसपालकस तपुविदशने' यह लेख विपरीत खुदा है। जिसे संस्कृत में 'विश्वपालकस्य तपुविदर्शने' लिखा जा सकता है। 'तपुविदर्शने' पाठ के स्थान पर 'विप्रविदर्शने' की भी सम्भावना की जा सकती है। तपुविदर्शन किसी स्थान, नगर वा प्रदेश का नाम भी हो सकता है। जैसे 'यौधेयानां बहुधान्यके' यौधेयों के बहुधान्यक देश में (चलने वाली मुद्रा)। इसी प्रकार विश्वपालक के तपुविदर्शन अथवा विप्रविदर्शन में। अधिक अन्वेषण करने से सम्भव है इसकी ठीक संगति लगाई जा सके। हम अभी इसे पूर्णतया स्पष्ट नहीं कर सके हैं। आदेश तथा स्वीकृतिपत्रों पर छाप लगाने के लिये इसका प्रयोग होता था।

## ३७. श्रीयाकस : समय ३३०० वर्ष पूर्व (१७७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के छोटे-से चतुष्कोण पात्र के तल के नीचे 'श्रीयाकस्य' नाम खुदा है। प्राकृत भाषा में लिखे इस नाम का संस्कृत रूप 'श्रीयाकस्य' बनता है। भीतर से यह पात्र दो भागों में विभक्त है। इस पात्र के पांच ओर क्रमश: श्रीयाकस (तल के नीचे), सम्मुख और पीठ में सपुष्पलता और रेखाचित्र, बाईं ओर दक्षिणमुखी स्वस्तिक तथा दायीं ओर गमले में वृक्ष बने हैं। दायें-बायें पक्षों के दोनों किनारों पर दो-दो छिद्र बने हैं। छिद्रों का क्या प्रयोजन था, यह विचारणीय है। श्रीयाक कोई राज्य से सम्बन्धित व्यक्ति रहा होगा। स्वस्तिक चिह्न कल्याण की भावना का द्योतक है। वृक्ष तथा पुष्प सहित बेल बूटे का चित्र हरेभरे प्रदेश और यौधेयों के कला प्रेम को प्रकट करता है। हम पुष्पों की भांति फूलें फलें और उत्तरोत्तर उन्नति के मार्ग का अनुगमन करें। इन चित्रों से इसी प्रकार के भाव लिये जा सकते हैं।

## ३८. हालेतगेया : समय ३४०० वर्ष पूर्व (१६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर हालेत गेया यह किसी स्त्री का नाम हो सकता है। यह नाम विदेशी प्रतीत होता है। सम्भव है यूनानी (ग्रीक) स्त्री का नाम हो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ३९. सिंहस : समय ३३०० वर्ष पूर्व (१७७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक सिंह नामक किसी व्यक्ति विशेष का है। प्राकृत में लिखे इस नाम का संस्कृत में 'सिंहस्य' रूप बनेगा। इसका अर्थ है सिंह नामक व्यक्ति का (मुद्रांक)। यह मुद्रांक सिंह नामक व्यक्ति ने अपने निजी प्रयोग के लिये बनवाया होगा।

## ४०. भद्रस्य : ३४०० वर्ष पूर्व (१६७४ कलिसंवत्)

यह ठप्पा मिट्टी के घड़े आदि पात्रों पर फूल-पत्ती छापने के लिये प्रयुक्त होता था। इसके दोनों सिरों पर पुष्प खुदे हुये हैं। जो गीले मटकों पर छाप लगाने से उभर आते थे। इस पर 'भद्रस्य' लिखा है। इससे सिद्ध है कि यह भद्र नामक किसी कुम्भकार का चित्रण साधन है। इसी प्रकार के फूलों से छपे मिट्टी के पात्रों के अवशेष भी मिले हैं। उनसे ठप्पे की उपयोगिता प्रमाणित होती है।

## ४१. पावनेस रुद्रे धम : २८०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

सन् १९३८-३९ ई० में पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग ने अगरोहा की कुछ खुदाई करवाई थी, उसी समय यह मुद्रांक मिला था, हमने उन्हीं की पुस्तक से यह चित्र लिया है।[1] अतः यह मुद्रांक हमारे पास नहीं है। यह 'पावनस्य' पावन नामक व्यक्ति का मुद्रांक है। पावन और रुद्र ये शिव के नाम हैं। धम के स्थान पर धर्म पाठ होना चाहिये। मुद्रांक के लेख की संगति ठीक नहीं लगती। लेख के ऊपर दायें मुख करके बैठे हुये नन्दी का चित्र है। शिव के पर्यायवाची नाम तथा नन्दी के चित्र के कारण यह मुद्रांक यौधेयों से सम्बन्धित हो सकता है। मुद्रांक में पावनेस रुद्रे धम पाठ न होकर अन्य पाठ भी हो जिससे संगति ठीक-ठीक लग सकती है। यह मुद्रांक हमारे देखने में नहीं आया अतः निश्चयात्मक कुछ नहीं कहा जा सकता।

## ४२. जु जु : समय ३००० वर्ष पूर्व ( २०७४ कलिसंवत् )

इस मुद्रांक के दोनों पक्षों पर 'जु जु' यह एक-एक अक्षर लिखा है। यह 'जुह्यात्' का संक्षिप्त रूप हो सकता है, जिसका अर्थ है—यज्ञ करना चाहिये। प्रातः सायं यज्ञ का उपदेश देने वाला यह यौधेयों का धार्मिक (Votive) मुद्रांक है। जु का अर्थ वेग पूर्वक गति करना भी है।

## ४३. श्रीशिवदरज : समय चतुर्थशती विक्रमी ( ३४०० कलिसंवत् )

यह मुद्रांक श्रीशिवदरज नामक व्यक्ति का है। श्री का प्रयोग यहाँ आदर के लिये हुआ है। इसें श्रीगवदरजः वा श्रीश्रवदरजः भी पढ़ा जा सकता है। नाम का उचित स्पष्टीकरण नहीं हो पा रहा।

## ४४. ददाकस्य : समय ८वीं शती विक्रमी ( ३८०० कलिसंवत् )

इस मुद्रांक पर 'ददाकस्य' लेख लिखा है। इसका अर्थ है ददाक (नामक व्यक्ति) का (मुद्रांक)। यह ददाक कोई साधारण राज कर्मचारी रहा होगा। नाम भी विचित्र है।

## ४५. श्रीततुण्य ।। : समय चतुर्थशती विक्रमी ( ३४०० कलिसंवत् )

ताम्बे के इस मुद्रांक पर 'श्रीततुण्य' यह लेख विपरीत खुदा है। यह मुद्रांक आज्ञा और स्वीकृति पत्रों पर छाप लगाने के लिये प्रयुक्त किया जाता था। नाम से पूर्व श्री का प्रयोग सम्मान के लिये किया गया है। यह किसी विशेष राज्याधिकारी वा विभागाध्यक्ष का मुद्रांक है। पूर्ण विराम की सूचक दो खड़ी रेखायें नाम के अन्त में बनी हैं। मुद्रांक में छिद्र भी बना हुवा था, जिसमें धागा डालकर इसे सुरक्षित लटका दिया जाता था। छिद्र आधा टूटा हुवा है।

---

1. Excavation at Agroha, Punjab, by H. L. Srivastava, Pt. XIII 2, Page 4.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ४६. मुच : समय १२वीं शती विक्रमी ( ४२०० कलिसंवत् )

इस मुद्रांक पर 'मुच' शब्द ऊपर से नीचे की ओर लिखा हुवा है। यही रूप इस ग्रन्थ के मुद्रांक सं० ११४ पर भी देखा जा सकता है। चन्द्रगुप्त प्रथम, समुद्रगुप्त, काचगुप्त, चन्द्रगुप्त द्वितीय, कुमारगुप्त, नरसिंहगुप्त आदि गुप्त राजाओं में स्वर्ण मुद्राओं पर नाम लिखने का यही रूप प्रचलित था। मुच (मुंच) का अर्थ छोड़ना मानकर यह अभिप्राय निकाला जा सकता है कि दुर्गुण, दुर्व्यसन आदि दोषों का त्याग करना चाहिये। यह धार्मिक मुद्रांक है। हमें इसी प्रकार के चार मुद्रांक मिले हैं। उनमें से एक पर 'मुच' शब्द की छाप दो बार लगाई हुई है। जैसा कि प्रस्तुत मुद्रांक के चित्र में भी प्रदर्शित है।

## ४७. अश्वारोही का चित्र : समय ३००० वर्ष पूर्व ( २०७४ कलिसंवत् )

इस मुद्रांक पर अश्वारोही के सम्मुख बाहु फैलाये हुये एक व्यक्ति का चित्र कुरेद कर बनाया हुवा है। घुड़सवार के बायें हाथ में एक ढाल सदृश वस्तु है तथा दायें हाथ में तलवार (खाण्डा) जैसा कोई शस्त्र भी है। इसी हाथ से घोड़े की रशना (लगाम) भी पकड़े हुये है। अश्वा (अश्व) के नीचे एक अन्य पशु की आकृति भी बनी हुई है। सम्भव है बछेरे का चित्र अंकित किया गया हो। यहां अश्वारोही सैनिक के साथ पदाति (पैदल) सैनिक के युद्ध का दृश्य दिखाया गया है।

## ४८. स्वस्तिक और चक्र : समय ३००० वर्ष पूर्व ( २०७४ कलिसंवत् )

इस मुद्रांक पर स्वस्तिक और चक्र के चित्र बने हैं। स्वस्तिक चिह्न कल्याण का प्रतीक है तथा चक्र का प्रयोजन चक्रवर्त्ती राज्य की स्थापना का सूचक है। अर्थात् सार्वभौम चक्रवर्त्ती राज्य की स्थापना के बिना विश्व का कल्याण नहीं हो सकता, शान्ति की स्थापना नहीं हो सकती। चक्र रथ आदि वाहनों का प्रतीक भी है। जिसके पास विमान और अग्नि+जल के संयोग से चलने वाले रथ आदि श्रेष्ठ वाहनों का सुप्रबन्ध है, वही चक्रवर्त्ती राज्य की स्थापना करके कल्याण कर सकता है। चक्र का भी प्रतीक है। इसका अभिप्राय यह भी है कि जब तक सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण के समान नीतिनिपुण योद्धा नहीं होंगे, तब तक राष्ट्र का चक्र नहीं चल सकता। इसके बिना चक्रवर्त्ती राज्य की स्थापना तथा विश्व कल्याण नहीं हो सकता। इसी प्रकार के श्रेष्ठ भावों के प्रतीक स्वरूप स्वस्तक और चक्र के चित्र इस मुद्रांक पर बनाये गये हैं। यहाँ दक्षिणमुखी स्वस्तिक बना हुवा है।

## ४९. शस्त्र एवं स्वस्तिकादि चिह्न : समय ३६०० वर्ष पूर्व ( १४७४ कलिसंवत् )

इस चपटे गोले पर एक ओर एक क्षुप (पौधे) का चित्र कुरेद कर बनाया हुवा है। बराबर के किनारों पर स्वस्तिक, गोमुख वा पाश और शस्त्र के चित्र बने हैं। यह शस्त्र मुद्रांक सं० १९ पर भी बना है। इसी भाँति के शस्त्र ताम्र की ढली प्राचीन मुद्राओं, आहत, कौशाम्बी, एरण, अयोध्या, कुणिन्द, कुलूत, तक्षशिला, कन्नौज, पाञ्चाल (सूर्यमित्र) आदि अनेक मुद्राओं पर भी बने हैं। इसका यह आशय लिया जा सकता है कि शस्त्रास्त्रों से सुरक्षित राष्ट्र का ही कल्याण (स्वस्ति) सम्भव है। इस चपटे बाट सदृश गोले पर इन शस्त्रादि के चिह्न एक बार तो रेखाचित्र से बनाये गये हैं तथा दूसरी बार बिन्दु चित्र से बनाये गये हैं। पौधे का चित्र यौधेय प्रदेश की हरियाली का प्रतीक है। पौधे के मूल में दो आँखों के सदृश चित्र बने हैं। उनके चारों ओर एक रेखा भी खिंची हुई है जो पानी डालने के लिये बनाये गये स्थान को द्योतित करती है।

## ५०. श्रीर्ध्रुवा···र···मित्र : समय २४०० वर्ष पूर्व ( २६७४ कलिसंवत् )

ताम्बे के इस मुद्रांक पर नाम विपरीत खुदा हुवा है। यह मुद्रांक छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। इसकी पीठ में चौड़े छिद्र वाली मूठ भी बनी हुई है। यह किसी राज्याधिकारी का मुद्रांक है। मुद्रांक जंग से खाया हुआ होने के कारण नाम पूर्णतया स्पष्ट नहीं है। श्रीर् यहां मुद्रांक (मोहर) का वाचक है।

अगरोहा से प्राप्त मुद्रांकों का उल्लेख कर दिया है। अब आगे राखी गढ़ी, स्थानेश्वर और करनाल से प्राप्त मुद्रांकों का विवरण लिखा जायेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अष्टम अध्याय

# राखी गढ़ी

जिला हिसार की हांसी तहसील के नारनौंद ग्राम से चार वा पांच मील दूर राखी और गढ़ी ये दो ग्राम हैं। ये ग्राम एक अत्यन्त प्राचीन खण्डहर पर बसे हुये हैं। यह खण्डहर तथाकथित सिन्धुसभ्यता कालीन है। यहां से विविध प्रकार के मिट्टी के छोटे बड़े पात्र, जालीदार बर्तन, मिट्टी की चूड़ियां, मिट्टी के गोले, तिकोने और चपटे गोल बाटसदृश अवशेष, लाल और सफेद रंग के पतले मणके, पत्थर विशेष से बने ब्लेड सदृश तीक्ष्णधार के साधन इत्यादि पर्याप्त संख्या में मिले हैं।

यहां यह जनश्रुति है कि सहस्रबीर्य अर्जुन यहां राज्य करता था। उसका झगड़ा जमदग्नि से हो गया। अर्जुन ने जमदग्नि ऋषि का सिर काट लिया। इसी से क्रुद्ध होकर जामदग्न्य परशुराम ने सहस्रबीर्य अर्जुन को मार दिया तथा क्षत्रियों का अनेक वार विध्वंस करके अपना परशु (कुल्हाड़ा) रामह्रद (तालाब) में धोया था। यही रामह्रद आजकल रामराय तीर्थ स्थान कहलाता है। राखीगढ़ी इससे पांच-छः मील दूर है। इसी प्राचीन खण्डहर से मिट्टी का यह मुद्रांक मिला है। जब यह मिला तो हमने इसे बच्चों के खेलने की ईंट समझा था। उस समय अन्धकार हो गया था। अतः सभी सामान एकत्रित करके रख दिया। पुनः दिन में देखने से ज्ञात हुआ कि यह तो तथाकथित सिन्धु सभ्यता की लिपि में खुदा हुआ मृन्मुद्रांक है। हरयाणा प्रान्त में इसी प्रकार के खण्डहर मित्ताथल (मितस्थल), बनावाली और पौली (जींद) आदि अनेक ग्रामों में हैं। यह सभ्यता केवल सिन्धुघाटी में ही नहीं थी, किन्तु कालीबंगा, लोथल (गुजरात), रोपड़ (पंजाब) आदि में भी प्राप्त हुई है। अतः इसे सिन्धु सभ्यता कहना अयुक्त और असंगत है। यह वास्तव में भारतीय आर्यों की अति प्राचीन सभ्यता है। इसे द्रविड़सभ्यता कहना भी ठीक नहीं है। भारत के आदिवासी आर्यलोग थे, इसी से इस देश का नाम आर्यावर्त हुआ। आर्यों से पूर्व भारत में ही क्या सारे संसार में भी अन्य कोई लोग नहीं थे। अतः आर्यलोग ही संसार के आदि पुरुष हैं। भारतीयों में हीन भावना भरने के लिये अंग्रेजों ने यह प्रयास किया कि इसे द्रविड़ों का देश सिद्ध कर दिया जाये। साथ ही उनका यह भी कथन था कि जैसे द्रविड़ों के देश पर आर्यों (भारतीयों) ने अधिकार कर लिया, इसी प्रकार हम अंग्रेजों ने भी भारत पर अधिकार कर लिया है। हमें निकालने का भारतवासियों को क्या अधिकार है। इस प्रकार का भ्रामक प्रचार करके वे भारत को पराधीन रखना चाहते थे। खेद का विषय है कि उनकी इस चाल को अभी तक भारतवासी नहीं समझ पाये और अब तक पाठ्यग्रन्थों में आर्यों को मध्यएशिया आदि से आया हुआ लिखते हैं। इसका सुधार होना चाहिये।

## ५१. तथाकथित सिन्धुलिपि का मुद्रांक : समय लगभग ५००० वर्ष पूर्व

यह मुद्रांक सम्भवतः विपरीत है क्योंकि अक्षर खुदे हुये हैं। इस का लेख हम अभी तक पढ़ नहीं सके हैं। भारत के तीन विद्वानों ने घोषणा की है कि हमने इस लिपि को पढ़ लिया है। हमने उनसे भी पत्र व्यवहार किया। उन्होंने इस मुद्रांक को जैसा पढ़ा, वह नीचे दिया जा रहा है—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



१. श्री शङ्करानन्द जी कलकत्ता—यधि जुइ पुतश ।

२. श्री ऐम० वी० ऐन० कृष्णराव, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)—तन स्योन मह=तन स्योन नमः ।

३. श्री फतहसिंह जी कोटा (राजस्थान)—अशान्नौ न पारधा उमा ।

इन विद्वानों ने अपने-अपने पठित पाठों का अर्थ इस प्रकार किया है—

१. यधि का पुत्र जुई था । सिन्धुलिपि में 'पुत्रस्य' शब्द का प्रयोग नहीं मिलता । यहां इसका प्रयोग होने से लगता है कि यह मुद्रांक सिन्धुलिपि के कुछ बाद का है ।

२. तन स्योन मह=तन स्योन नमः । यहाँ दो नकार जो लगातार हैं उनमें से एक का सिन्धुलिपि में लोप हो जाता है । इसका अर्थ है, तन=सूर्य । स्योन=सूर्य । प्रकाशस्वरूप सूर्य को नमस्कार । ज्ञानरूपी ईश्वर को नमस्कार । भारत के एक राजा का "तन" नाम मिलता है । उस ओर अर्थ होगा—राजा तन को नमस्कार । तन नाम का एक राजा मिश्र में भी हुआ है । हकार को विसर्जनीय हो गया । स्योन नमह् में नमह् के नकार का लोप हो गया ।

३. इस मुद्रांक में भोग और भोजन की निन्दा करते हुये कहा गया है कि ये दोनों पार लगाने वाले (तारने वाले) उमा अथवा ऊ नामक तत्व नहीं हैं । इसी प्रकार का लेख लोथल में भी मिला है जिसमें एक शृङ्गी पशु का चित्र भी है ।

४. कोपनहैगन के विद्वान् श्री ऐरिक ग्रीन स्टैड और असको परपोला के पास भी हमने इस मुद्रांक का चित्र भेजा था । उनके मतानुसार यह द्रविड भाषा का मुद्रांक है । इस पर मातृका देवी=पार्वती तथा उसके पुत्र मुरुकान=स्कन्द कार्तिकेय को पास-पास चित्रमय लिपि में दिखाया गया है । दूसरे अर्थ में ये इसको नाचने गाने वाली सेविका भी मानते हैं ।[1]

इस प्रकार ये चारों विद्वान् परस्पर इस लेख के पढ़ने में एकमत नहीं है । ऐसी अवस्था में हम नहीं कह सकते कि किस विद्वान् का पाठ ठीक है । यह तो भावी अन्वेषण से ही निश्चित हो सकेगा । जब सभी विद्वान् लेख को पढ़ने में एकमत हो कर स्थिर हो जायेंगे तभी सन्देह दूर होकर ठीक संगति लग जायेगी । समयाभाव और इतिहास सम्बन्धी अन्य कार्यों के कारण हम इस लिपि के पढ़ने का अवसर प्राप्त नहीं कर पाये हैं, पुनरपि हमारा यह निश्चित मत है कि यह लिपि ब्राह्मीलिपि का ही अति प्राचीन और पूर्व रूप है । कभी ऐसे प्रमाण भी मिल सकते हैं जो ब्राह्मीलिपि तथा इस लिपि के मध्य की टूटी कड़ी को जोड़ देंगे ।

## कुरुक्षेत्र

धर्मक्षेत्र और पुण्यक्षेत्र ये कुरुक्षेत्र के ही नाम हैं । इसे प्रजापति की उत्तरवेदी भी कहा गया है । क्योंकि प्रजापति ने सृष्टि सर्वप्रथम त्रिविष्टप (तिब्बत) में ही की थी । वहां से लोग आकर सर्वप्रथम उत्तर भारत में कुरुक्षेत्र आदि स्थानों में बस गये । इसलिये कुरुक्षेत्र को प्रजापति की उत्तरावेदि (दूसरा स्थान) कहा गया । यहाँ प्राचीनकाल में देवों ने बड़े-बड़े यज्ञ किये थे । इसके लिये शतपथ ब्राह्मण में लिखा है—

देवा ह वै सत्रं निषेदुः । अग्निरिन्द्रः सोमो मरुतो विष्णुर्विश्वेदेवा अन्यत्रैवाश्विभ्याम् ॥१॥ तेषां कुरुक्षेत्रं देवयजनमास । तस्मादाहुः कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनमिति तस्माद्यत्र क्व च कुरुक्षेत्रस्य निगच्छति तदेव मन्यत इदं देवयजनमिति तद्धि देवानां देवयजनम् ॥२॥ —शतपथ ब्राह्मण १४.१.१.१—२ ॥

---

1. Acta orientalia. Vol xxxv (1973) P. 103-114

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अग्नि, इन्द्र, सोम, मख, विष्णु और अश्विनौ के अतिरिक्त सभी विश्वदेवों ने कुरुक्षेत्र में यज्ञ किया। इसीलिये कुरुक्षेत्र को देवयजन कहते हैं। अतः जो कुछ कुरुक्षेत्र से निकलता है वही देवयजन=देवों का पूजनीय माना जाता है।

राजर्षि प्रवर महात्मा कुरु ने इस क्षेत्र में अनेक वर्षों तक हल चलाया था। इसके अस्तव्यस्त जंगल, झाड़झंखाड़, वृक्ष आदि को काट कर खेती तथा बसने के योग्य बनाया। ऐसा करते समय देवराज इन्द्र ने कुरु को बार-बार निराश करना चाहा किन्तु कुरु महाराज धैर्य्य से लगे रहे और इसे दूसरे स्वर्ग (त्रिविष्टप) के समान बना दिया। इसी कारण इसका नाम कुरुक्षेत्र हो गया। पौराणिक भाइयों के अनुसार तरन्तुक, अरन्तुक, रामह्रद तथा मचक्रुक के बीच का जो भूभाग है वही समन्तपञ्चक[1] वा कुरुक्षेत्र कहलाता है। ऋषियों के बहुत से आश्रम भी इसी क्षेत्र में थे, इसीलिये यह ब्रह्मर्षि देश का एक भाग माना जाता है। कोशग्रन्थों में लिखा है—

धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं द्वादशयोजनावधि।

कुरुक्षेत्र धर्मक्षेत्र भी कहलाता है। कुरुक्षेत्र नगर के चारों ओर बारह-बारह योजन अर्थात् ४८-४८ कोश तक का स्थान कुरुक्षेत्र कहलाता है। गीता में कुरुक्षेत्र का विशेषण धर्मक्षेत्र ही लिखा है।[2] मनुस्मृति २.१९ में कुरुक्षेत्र को ब्रह्मर्षि देश का एक भाग बताया है—

कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पाञ्चालाः शूरसेनकाः।

कुरुक्षेत्र, मत्स्य (अलवर आदि), पाञ्चाल (बरेली का समीपवर्ती क्षेत्र) और शूरसेन (मथुरा का निकटवर्ती प्रदेश) ये सब ब्रह्मर्षि देश के अन्तर्गत हैं। प्राचीन काल में कुरुक्षेत्र=कुरुप्रदेश के दो भाग थे। उत्तरकुरु और दक्षिणकुरु। हिमालय के दक्षिण में अवस्थित पाञ्चाल आदि देश दक्षिण कुरु में थे और हिमालय से उत्तर में स्थित प्रदेश फारस, तिब्बत आदि उत्तर कुरु में सम्मिलित थे।

शब्दकल्पद्रुम में लिखा है—

कुरुक्षेत्रं देशविशेषः, तत्त धर्मक्षेत्रम्। कुरुणा चन्द्रवंशोद्भवेन राजविशेषेण भूरितपसोपार्जितं धर्मक्षेत्रनाम्ना प्रसिद्धं कुरुदेशान्तर्गतं क्षेत्रम्।

देश विशेष का नाम कुरुक्षेत्र है वह धर्मक्षेत्र भी कहाता है। चन्द्रवंशी राजा सोम ने घोर तपस्या के द्वारा इसका निर्माण किया था। कुरुदेश के अन्तर्गत यह भाग धर्मक्षेत्र नाम से प्रसिद्ध है। महाभारत में अन्यत्र भी कहा है—

पुरा च राजर्षिवरेण धीमता बहूनि वर्षाण्यमितेन तेजसा।
प्रकृष्टमेतत्कुरुणा महात्मना ततः कुरुक्षेत्रमितीह पप्रथे॥ शल्य पर्व ५३.२॥

अर्थात् प्राचीन काल में बुद्धिमान् राजर्षि महात्मा कुरु ने अपने अमित तेज (शक्ति) से बहुत वर्षों तक हल चलाकर इसे बसने योग्य बनाया, इसी लिये इस क्षेत्र को कुरुक्षेत्र कहते हैं। जैन ग्रन्थों में भी लिखा है—

कुरुक्षेत्रमिति ख्यातं राष्ट्रमेतत्तवाख्यया।
कुरोः पुत्रोऽभवद् हस्ती तदुपज्ञमिदं पुरम्॥

---

१. समन्तपञ्चके युद्धं कुरुपाण्डवसेनयोः—महाभारत आदिपर्व २.१३॥
कौरव पाण्डवों का युद्ध समन्तपञ्चक में हुआ था। यहां समन्तपञ्चक का अर्थ कुरुक्षेत्र ही है।
२. धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः—गीता १.१॥
कौरव और पाण्डव युद्ध की कामना से धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में एकत्रित हुये हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कुरुराष्ट्र वा कुरुजांगल के निर्माता महात्मा कुरु थे। कुरुक्षेत्र नामक नगर उनके पुत्र हस्ती ने बसाया। पिता और पुत्र दोनों ही का इनके निर्माण में सहयोग था। इसी कुरुपुत्र हस्ती के नाम से हस्तिनापुर नगर प्रसिद्ध हुआ।

कुरुप्रदेश का एक नाम कुरुजांगल भी था। महाभारत में लिखा है—

सुखेनागमनं कच्चिद् भगवान् कुरुजाङ्गलम्।
कच्चित् कुशलिनो वीरा भ्रातरः पञ्चपाण्डवाः॥—वन पर्व १०.९॥

महाराज धृतराष्ट्र ने मुनिश्रेष्ठ मैत्रेय से पूछा—इस कुरुदेश में आपका आगमन सुखपूर्वक तो हुआ है? वीर-भ्राता पांचों पाण्डव कुशल से तो हैं न? मुनि मैत्रेय ने उत्तर दिया—

तीर्थयात्रामनुक्रामन् प्राप्तोऽस्मि कुरुजाङ्गलान्।
यदृच्छया धर्मराजं दृष्टवान् काम्यके वने॥ —वनपर्व १०.११॥

मैं तीर्थयात्रा के प्रसंग से घूमता हुवा अकस्मात् कुरुजांगल देश में चला आया। काम्यकवन में धर्मराज युधिष्ठिर से भेंट हुई थी।

कवि पुष्पदन्त के ग्रन्थ में भी कुरु प्रदेश की चर्चा मिलती है।

मागहजट्टभोट्टणेवालवि। उड्डपुण्डहरिकुरुभंगालवि—आदिपुराण पृ० ८८॥
अहीरकीरगन्धारगऊडणेवालचोड।
कोंकणकोलकुरुकामरूवसिंहल पहूय—आदिपुराण पृ० २३०-३१॥

यहां आभीर, कीर, गान्धार, गौड, नेपाल, चोल, कोंकण, कोल, कुरु, कामरूप, सिंहल आदि प्रान्त और देशों में कुरु का भी ग्रहण किया है। कुरु से यहां कुरुप्रदेश, कुरुजांगल वा कुरुक्षेत्र कोई भी लिया जा सकता है।

प्रसिद्ध विद्वान् वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं[1]—

"कुरुराष्ट्र, कुरुक्षेत्र और कुरुजांगल ये तीन इलाके एक दूसरे से सटे हुये थे। थानेश्वर, हस्तिनापुर, हिसार अथवा सरस्वती, गंगा, यमुना के बीच का प्रदेश इन तीन भौगोलिक भागों में बँटा हुआ था। गंगा यमुना के बीच का लगभग मेरठ कमिश्नरी का इलाका असली कुरुराष्ट्र था। इसकी राजधानी हस्तिनापुर थी।"

हमारे विचार से कुरुजांगल, कुरुप्रदेश, ब्रह्मर्षिदेश और हरयाणा ये सब एक ही प्रान्त के विभिन्न समयों में नाम परिवर्तित होते रहे हैं। इसी प्रदेश में एक स्थान कुरुक्षेत्र भी था।

कुरुक्षेत्र और थानेसर दोनों पास-पास बसे हुये हैं। दोनों नाम प्राचीन हैं। कुरुक्षेत्र बड़े प्रदेश का नाम था तथा स्थानेश्वर नगर का नाम था। यह स्थानेश्वर महाराज हर्षवर्द्धन की राजधानी थी। इसी कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण जी महाराज ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था, यहीं कौरव-पाण्डवों का युद्ध हुआ था।

पहले स्थानेश्वर के निकट कुरुक्षेत्र नामक तीर्थस्थान था। अब कुरुक्षेत्र नामक नगर भी बस गया है। कुरुक्षेत्र को अब जिला बना दिया गया है, पहले यह करनाल जिले में अवस्थित था। स्थानेश्वर[2] का विकृत रूप अब थानेसर हो गया है। महाभारत

---

१. पाणिनिकालीन भारतवर्ष पृ० ७०।

२. 'स्थानेश्वर' नाम की भांति 'करवीरेश्वर वा करवीर' भी नगर का नाम था। देखिये पृ० ३५ पर मुद्रांक ८ का विवरण अष्टाध्यायी के बुच्छणकठजिलसे···कुमुदादिभ्यः ४.२.८० सूत्रस्थ सख्यादिगण में करवीर शब्द पढ़ा है। वहाँ देश, निर्वृत्त= बनाना, निवास और अदूरभव=निकट इन चार अर्थों में ढक् प्रत्यय का विधान है। सभी अर्थों में करवीर का नगर होना सिद्ध है। करवीर हैं जिस देश में, करवीर द्वारा बनाया हुवा, करवीरों का निवास, करवीर के निकटवर्ती इन अर्थों में प्रत्यय विधान किया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



शल्यपर्व ४२.४—७ में लिखा है कि सरस्वती के पूर्वी तट पर वशिष्ठाश्रम था। यहीं स्थाणु ने तप किया था। इसी स्थान पर देवों ने स्कन्द कार्तिकेय का सेनापति पद पर अभिषेक किया था।[1]

## ५२. स्थानेश्वरस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक थानेसर के निकट दौलतपुर की खुदाई में[2] प्राप्त हुवा था। इस पर 'स्थानेश्वरस्य' यह लेख लिखा है। इसका अर्थ है—स्थानेश्वर का मुद्रांक। यह मुद्रांक हमारे पास नहीं है। हमें इसका चित्र मिला है। इस मुद्रांक में लेख से पूर्व सपरशु त्रिशूल बना है। ये गणेश और शिवजी के शस्त्र हैं। स्थाणु नाम शिवजी का है। उसके नाम पर स्थाण्वीश्वर= स्थानेश्वर यह नाम रख दिया होगा। इस खुदाई में 'स्थानेश्वरस्य' लेख युक्त चार मुद्रांक मिले थे। एक का वर्णन यहाँ कर दिया है। एक मुद्रांक में लेख के ऊपर त्रिशूल बना है, त्रिशूल के नीचे का भाग गोलाई लिये हुये है। उसके नीचे एक सर्पाकृति सदृश टेढ़ी-मेढ़ी रेखा तथा उसके नीचे सीधी रेखा बनी है। दो मुद्रांकों पर 'स्थानेश्वरस्य' लेख लिखा है। उन पर किसी प्रकार का कोई चिह्न नहीं है। इनके अतिरिक्त चार मुद्रांक और मिले थे, जिनमें से एक अस्पष्ट है तथा शेष तीन का वर्णन आगे किया जायेगा। ५२ से ५५ सं० तक के चारों मुद्रांकों के चित्र श्री डा० सूरजभान जी के सौजन्य से प्राप्त हुये हैं।

## ५३. तूडिलस म ।। : समय ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'तूडिलस म' यह लेख खुदा है। इसका संस्कृत रूप 'तूडिलस्य म' बनता है। अर्थात् तूडिल महासेनापति का मुद्रांक। 'म' महासेनापति का संक्षिप्त रूप है। मकार के आगे दो खड़ी रेखायें पूर्ण विराम की सूचक हैं। मुद्रांक सं० १० में भी इसी प्रकार की दो रेखायें खुदी हैं। इस मुद्रांक की मूठ में छिद्र बना हुवा है। मूठ की गर्दन पर गोमूत्रिकावत् टेढ़ी-मेढ़ी रेखा भी खुदी हुई है। यह मुद्रांक हमारे संग्रह में नहीं है।

## ५४. श्रीबुधस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'श्री बुधस्य' यह लेख लिखा है। सम्भवतः लेख से पूर्व चक्र का चित्र बना है। यहाँ श्री का प्रयोग सम्मान के लिये किया गया है। यह किसी राज्याधिकारी का मुद्रांक है। चक्र का चित्र बतलाता है कि श्रीबुध का शासन अन्य लोगों पर चलता था। यह मुद्रांक हमारे संग्रहालय में नहीं है।

## ५५. अपठित : समय ५००० वर्ष पूर्व

इस मुद्रांक पर कोई लेख खुदा हुवा है। तथाकथित सिन्धुलिपि सदृश लिपि प्रतीत होती है। दायीं ओर नीचे का एक अक्षर 'म' प्रतीत होता है। इस मुद्रांक से ज्ञात होता है कि स्थानेश्वर अत्यन्त प्राचीन नगर है। यह मुद्रांक भी हमारे पास नहीं है।

---

१. आश्रमो वै वसिष्ठस्य स्थाणुतीर्थोऽभवन्महान् ॥४॥
यत्र स्थाणुर्महाराज तप्तवान् परमं तपः ॥५॥
यत्रेष्ट्वा भगवान् स्थाणुः पूजयित्वा सरस्वतीम् ।
स्थापयामास तत्तीर्थं स्थाणुतीर्थमिति प्रभो ॥६॥
तत्र तीर्थे पुराः स्कन्दमभ्यषिञ्चन्नराधिप ।
सेनापत्येन महता सुरारिविनिबर्हणम् ॥७॥

२. यह खुदाई कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय ने करवाई थी।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## करनाल

करनाल हरयाणा प्रान्त का एक प्रसिद्ध नगर है। इसका प्राचीन नाम कर्णालय प्रतीत होता है। यहाँ महाभारत युद्ध के महारथी कर्ण ने अपनी सेना का शिविर लगाया हुवा था। इसी से इसका नाम कर्णालय हो गया होगा। कुरुक्षेत्र के निकट 'कर्ण का टीला' नाम से प्रसिद्ध एक स्थान है। वहाँ खुदाई में कुछ प्राचीन मुद्रांक भी मिले थे, किन्तु वे हमारे देखने में नहीं आये। अर्जुन और कर्ण की जीत हार पर ही सारे महाभारत के युद्ध का निर्णय था। सम्भव है 'कर्ण का टीला' नामक स्थान पर ही अर्जुन द्वारा कर्ण का वध हुवा हो। इसी कारण कर्ण का टीला नाम प्रसिद्ध हो गया होगा।

### ५६. मानवाकृति : समय लगभग २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलि संवत्)

यह मुद्रांक करनाल से प्राप्त हुवा है। प्रस्तर (पत्थर) सदृश किसी उपरत्न से बने इस मुद्रांक पर एक लम्बे होठों वाले भयंकर व्यक्ति का चित्र खुदा है। व्यक्ति धोती बांधे है तथा सिर पर एक पगड़ी बंधी है। मस्तिष्क की ओर से एक शूल निकला हुवा दिखाया गया है। धोती का कुछ भाग बायें हाथ के नीचे से और छाती तथा दायें कन्धे पर से होता हुवा दायें हाथ में लिपटा हुवा है। दहिना हाथ कटि पर रक्खा है तथा बायें हाथ की मुट्ठी बन्द की हुई है। इस मुद्रांक की पीठ के पीछे स्वस्तिक चिह्न बना है। इस मुद्रांक का विशेष प्रयोजन अभी अन्वेषणीय है।

### ५७. नन्दी और मकार युक्त चित्र : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलि संवत्)

करनाल से प्राप्त प्रस्तर सदृश उपरत्न के इस मुद्रांक पर दायें मुख करके बैठे हुये नन्दी का चित्र उत्कीर्ण है। नन्दी की पीठ पर मकार खुदा है। मकार महासेनापति का संक्षिप्त रूप जान पड़ता है। कई विद्वान् ब्राह्मी लिपि के इस मकार सदृश चित्र को गोमुख मानते हैं। सो गो के चित्र की विद्यमानता में गोमुख को भी उत्कीर्ण करना कोई महत्त्व प्रदर्शित नहीं करता। अतः महासेनापति का संक्षेप मानना अधिक जंचता है। नन्दी हरयाणा प्रान्त के प्राचीन शासक यौधेयों का राजकीय चिह्न था। उनके मुद्रांकों और मुद्राओं पर सर्वत्र नन्दी का चित्र दिखाई देता है। नन्दी के विषय में मुद्रांक सं० ६ पर पृष्ठ २७ से २९ में लिखा जा चुका है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

## नवम अध्याय

# सुघ (सुघ्न)

प्राचीन काल में भारतवर्ष में सुघ्न अत्यन्त प्रसिद्ध नगर था। यह यमुना नदी के तट पर स्थित था। इसके खण्डहर अम्बाला जिले की तहसील जगाधरी में दयालगढ़, मादलपुर, सुग आदि ग्रामों के पास हैं। मादलपुर का स्कूल इन्हीं खण्डहरों पर बना हुवा है। इस खण्डहर का पर्याप्त भाग खेत बनकर समतल कर दिया गया है। पञ्जाब विश्वविद्यालय ने सन् १९६५ में इस खण्डहर की नाममात्र खुदाई कराई थी। उस खुदाई में मिट्टी के एक छोटे-से पात्र में आहत (पंचमार्क्ड) मुद्रायें, मिनेण्डर तथा अगोलोडोटस् की गोल रजत मुद्रायें मिली थीं। जिन मृन्मूर्तियों को लोग शुङ्गकालीन कहते हैं, वे यहाँ पर पर्याप्त मिलती हैं। मौर्य, कुषाण तथा गुप्तकालीन मातृकायें यहाँ बहुत मिलती हैं। इस खण्डहर की विशेष उपलब्धि यह है कि प्राचीन ब्राह्मी लिपि के अक्षरों से युक्त मिट्टी की तख्ती लिये एक बच्चे की मूर्ति मिली है। इस पर 'अं' के अतिरिक्त ११ स्वर (अच्) चार-चार बार लिखे हैं। यह मृन्मूर्ति अब राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली में है। इससे भिन्न प्रकार की लगभग २० तख्तियाँ हमारे पास भी हैं, जिन पर स्वर और व्यञ्जन दोनों लिखे हैं। आजकल के विद्यालयों की भाँति विक्रम से कई सौ वर्ष पूर्व भी बालक इसी प्रकार लेखनी और मसी (स्याही) से तख्तियों पर स्वर व्यञ्जन लिखते थे। बाल्यकाल में सुशिक्षा का बहुत उत्तम प्रबन्ध था, यह इसके प्रमाण का अच्छा प्रतीक है। हमें यहाँ से कुछ ताम्र की ढली प्राचीन मुद्रायें (Cast Copper Coins) मिली हैं। एक उत्तरवर्ती कुषाण स्वर्ण मुद्रा भी प्राप्त हुई है।

इस नगर की खुदाई देखने से हमें भी इतना ज्ञान तो हुवा ही कि यह नगर बहुत विशाल, महत्त्वपूर्ण और प्राचीन था। इसके विषय में श्री प्रभुदयाल अग्निहोत्री लिखते हैं :—[1]

"पतञ्जलि ने बार-बार सुघ्न का उल्लेख किया है। यह स्थान हस्तिनापुर से ४० मील की दूरी पर उत्तर में स्थित था। मथुरा से इसका निकट सम्बन्ध रहा होगा। कई स्थानों पर भाष्य में सुघ्न और मथुरा का इस ढंग से उल्लेख मिलता है मानो उनमें दैनन्दिन यातायात सम्बन्ध रहता हो। उन्होंने सुघ्न जाने वाले मार्ग का उस पर खड़े होकर उल्लेख किया जान पड़ता है।[2] सम्भवतः मथुरा से सुघ्न को सीधा मार्ग जाता था। अश्वादि पशु इसी मार्ग से सुघ्न ले जाये जाते होंगे।[3] सुघ्न के प्रासादों और प्राकारों की भी भाष्य में चर्चा है, जिससे स्पष्ट है कि सुघ्न बड़ी सम्पन्न नगरी थी।[4] स्रौघ्नी स्त्रियों के लिये भी

---

१. पतञ्जलिकालीन भारतवर्ष पृ० ११८।
२. अयं पन्थाः सुघ्नमुपतिष्ठते।—महाभाष्य १.३.२५ गुरुकुल झज्जर संस्करण भाग २, पृ० २५४।
३. नेताश्वस्य सुघ्नम्, नेताऽश्वस्य सुघ्नस्य।—महाभाष्य १.४.५१ ,, ,, पृ० ४२८।
४. स्रौघ्नाः प्रासादाः। स्रौघ्नाः प्राकाराः।' —महाभाष्य ४.३.३९ ,, भाग ३, पृ० ७०३।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



भाष्यकार ने श्रेष्ठ विशेषणों का प्रयोग किया है।[1] स्रुघ्न जिसे अब सुघ कहते हैं, स्रुघ्न जनपद की राजधानी थी। कनिंघम के अनुसार स्रुघ्न चारों ओर से प्राकृतिक सीमाओं द्वारा दृढ़ता से सुरक्षित था और इस प्रकार वह वास्तव में दुर्ग था। स्रुघ्न का घेरा लगभग चार मील था। आज सुघ, मण्डलपुर, दयालगढ़ और बुरिया ये गाँव प्राचीन स्रुघ्न की ही भूमि पर बसे हैं, जिनकी कुल जनसंख्या लगभग २००० है। इन स्थानों में दिल्ली के तोमर राजाओं से बुद्धकाल (५०० ई० पू०) तक के सिक्के प्राप्त हुये हैं। स्रुघ्न नगरी मेरठ, सहारनपुर, अम्बाला होकर उत्तर पञ्जाब जाने वाले मुख्य मार्ग पर स्थित थी। यहीं होकर यमुना के लिये मार्ग जाता था। महमूद गजनवी, तैमूर लंग और बाबर कन्नौज, हरद्वार और दिल्ली की लूट एवं विजय के बाद इसी मार्ग से वापिस लौटे थे। काशिकाकार के कथन से भी ज्ञात होता है कि स्रुघ्न पाटलिपुत्र से तक्षशिला जाने वाले उत्तरापथ के मुख्य मार्ग पर स्थित था।"[2]

## स्रुघ्न के मुद्रांक

अस्तु! इस प्राचीन स्रुघ्न के वर्तमान खण्डहरों से हमें १३ मुद्रांक प्राप्त हुये हैं। उनमें एक खरोष्ठी लिपि में तथा छः ब्राह्मी लिपि में हैं। छः मुद्रांकों पर केवल धार्मिक चिह्न प्रतीत होते हैं। अब इनका वर्णन किया जाता है।

### ५८. खहरालपुत्रस कन···बुज···रस्पग··· ? समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर खरोष्ठीलिपि[3] में 'खहरालपुत्रस कन-बुज-रस्पग-' यह लेख दो पंक्तियों में लिखा है। दोनों पंक्तियों के मध्य त्रिरत्न का चिह्न बना है। इस चिह्न के नीचे एक सर्पाकार टेढी मेढी पड़ी हुई रेखा भी बनी है। यह नदी का प्रतीक भी हो सकता है। यह खहराल के पुत्र कनबुज रस्पग का मुद्रांक है। यह नाम पूर्णतया स्पष्ट नहीं है, सम्भवतः और कुछ भी हो। यह व्यक्ति कम्बोज प्रदेश का वासी वा कम्बोज वंश का होगा। सुघ के आस-पास जिन किसानों के ग्राम हैं, वे सभी आज भी कम्बोज हैं। कभी इन्हीं कम्बोजों में से कोई यहां सुघ का स्वामी वा राज्याधिकारी रहा होगा। कम्बोजों का सम्बन्ध खरोष्ठी लिपि से क्या हो सकता है यह विचारणीय है। मुद्रांक पर बना त्रिरत्न का चिह्न वैभव का प्रतीक है।

### कम्बोज

अष्टाध्यायी में पढ़े गये जनपदों में कम्बोज जनपद[4] का भी उल्लेख मिलता है। यहां कम्बोज शब्द से क्षत्रियों के कम्बोज जनपद का ग्रहण किया है। पाणिनि मुनि के समय में यह एकराज जनपद था। यहां का राजा और क्षत्रियकुमार दोनों कम्बोज कहलाते थे। कम्बोज की ठीक पहचान भारत के उत्तर-पश्चिमी भूगोल के लिये महत्त्वपूर्ण है। गन्धार, कपिश, बाल्हीक और कम्बोज इन चार महाजनपदों का एक चौगुट्टा था। मध्य एशिया और अफगानिस्तान के नक्शे में इनकी भौगोलिक स्थिति स्पष्ट हो जाती है। हिन्दुकुश के उत्तर-पूर्व में कम्बोज, उत्तर-पश्चिम में बाल्हीक, दक्षिण-पूर्व में गन्धार और दक्षिण-पश्चिम में कपिश था। आधुनिक पामीर और बदख्शां का सम्मिलित प्राचीन नाम कम्बोज जनपद था। कम्बोज के दक्षिण में पूर्व-पश्चिम फैली हुई हिन्दुकुश की ऊंची पर्वत शृंखला कम्बोज को भारतवर्ष से अलग करती है। कभी यह भारत का ही भाग था। महाभारत[5] में द्वयक्ष, त्र्यक्ष और ललाटाक्ष इन तीन जनपदों के नाम आते हैं। यह द्वयक्ष (बदख्शां) कम्बोज ही था। ललाटाक्ष लद्दाख का प्राचीन नाम

---

१. स्रौघ्नवृन्दारिका, स्रौघ्नजातीया, स्रौघ्नदेशीया —महाभाष्य ६.३.४२ गुरुकुल भज्जर संस्करण भाग ४ पृ० ६१७।
२. अन्तरा तक्षशिलां पाटलिपुत्रं च स्रुघ्नस्य प्राकाराः —काशिका २.३.४।
३. खरोष्ठी लिपि दायें से बायें को लिखी जाती है जैसे अरबी, फारसी, उर्दू आदि।
४. कम्बोजाल्लुक्—अष्टा० ४.१.१७५।
५. द्वयक्षान्त्र्यक्षान्ललाटाक्षान् नानादिग्भ्यः समागतान्—सभा पर्व ५१.१७२॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



है।[1] कम्बोज लोग इसी प्रदेश के थे। वर्तमान में बसे हुये अम्बाला और करनाल जिलों के कम्बोज भी उन्हीं से सम्बन्धित हो सकते हैं।

## ५९. कानशे : समय ३२०० वर्ष पूव (१८७४ कलिसंवत्)

'कानशे' यह लेख हाथी की मृन्मूर्ति के सूंड पर खुदा हुवा है। कानशे वा कानशी नामक कोई व्यक्ति होगा, उसने खिलौने पर अपना नाम उत्कीर्ण कर दिया है। यह किसी स्त्री का भी नाम सम्भावित है। यह भी सम्भव है कि मूर्ति निर्माता ने अपना नाम खोद दिया हो।

## ६०. हरिदेव : समय २३०० वर्ष पूर्व (२७७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस विपरीत मुद्रांक पर "हरिदेव" यह लेख खुदा है। यह मुद्रांक आदेशपत्रों पर छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। यह हरिदेव नामक व्यक्ति राज्य का कोई अधिकारी होगा। अथवा यह धार्मिक मुद्रांक हो सकता है। हरिदेव किसी मन्दिर का पुरोहित वा धर्माध्यक्ष होगा। मन्दिर का चित्र धार्मिक भावों का सूचक है।

## ६१. सनकस : समय ३००० वर्ष पूर्व ( २०७४ कलि संवत् )

इस मुद्रांक पर प्राकृत भाषा में 'सनकस' यह लेख लिखा है। इसका संस्कृत रूप 'सनकस्य' बनता है। 'सनकस्य' का अर्थ है सनक वा सेनक नामक व्यक्ति का (मुद्रांक)। लेख के ऊपर एक चिह्न विशेष बना हुवा है। पाणिनि मुनि ने अष्टाध्यायी में आचार्य सेनक नामक एक वैय्याकरण का भी निर्देश किया है।[2]

## ६२. धमय : ३५०० वर्ष पू (१५७४ कलि संवत्)

इस विपरीत मुद्रांक पर 'धमय' लेख खुदा हुवा है। प्राकृत भाषा के इस शब्द का संस्कृत रूप 'धर्माय' बनता है अर्थात् धर्म के लिये। यह मुद्रांक छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। शासकों की ओर से प्रजा में धर्मार्थ दी जाने वाली वस्तुओं पर धमय = धर्माय यह मुद्रांक लगाया जाता होगा। अथवा यह मुद्रांक धर्म प्रचार के लिये होगा। हमारा सब कुछ धर्म प्रचार के लिये होना चाहिये। तन, मन और धन वेदविहित धर्म और कर्तव्य पालन के लिये न्यौछावर कर देना चाहिये। इस मुद्रांक की पीठ में मूठ भी बनी थी, जो टूट गई है।

## ६३. श्रीअरुण : समय नवम विक्रमशती (३९०० कलि संवत्)

यह मुद्रांक श्री अरुण नामक किसी व्यक्ति विशेष वा राज्याधिकारी का है। श्री का प्रयोग यहाँ आदर के लिये किया गया है। इस मुद्रांक से ज्ञात होता है कि भारत में मुस्लिम आक्रमणों के समय तक लुध्न अपने अच्छे व्यवस्थित रूप में विद्यमान था।

## ६४—६७. विविध धार्मिक चिह्न : समय ३७०० वर्ष पूर्व (१३७४ कलिसंवत्)

मुद्रांक ६४ में सुमेरु पर्वत, गमले में वृक्ष, स्वस्तिक तथा दो अन्य धार्मिक चिह्न बने हैं। पर्वत पर अर्द्ध चन्द्र सदृश चित्र भी बना है। सुमेरु पर्वत से यह अभिप्राय निकाला जा सकता है कि पर्वतों से नदियां निकलती हैं। नदियों से पृथ्वी शस्य-श्यामला बनती है। पहाड़ों से सुवर्णादि रत्नों की प्राप्ति भी होती है। पर्वतों पर ऋषि-मुनि तपस्या और योगाभ्यास करते हैं। पर्वत की उपत्यकाओं और नदियों के संगम पर ज्ञानी, ध्यानी, बुद्धिमान् और वेद के विद्वान् उत्पन्न होते है।[3] वृक्ष हरियाली और फल फूलों

---

१. वासुदेवशरण अग्रवाल : पाणिनिकालीन भारतवर्ष पृ० ६१।
२. गिरेश्च सेनकस्य ५.४.११२।
३. उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत—यजुर्वेद २६.१५।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के बाहुल्य का प्रतीक है। स्वस्तिक चिह्न कल्याण को अभिप्रत करता है। शेष दो चिह्नों का अभिप्राय अन्वेषणीय है। इस प्रकार के चिह्न ताम्र की ढली हुई प्राचीन मुद्राओं पर भी बहुतायत से मिलते हैं। सुमेरु पर्वत सदृश चित्र किसी मन्दिर वा चैत्य का प्रतीक भी हो सकता है।

मुद्रांक सं० ६५ पर सुमेरु पर्वत वा मन्दिर का चित्र बना है। इसके वामपक्ष में तथा ऊपर बने अर्द्धचन्द्र में एक-एक पड़ी हुई रेखा भी बनी है। दायीं ओर एक गोल चिह्न बना है।

मुद्रांक सं० ६६ पर सुमेरु पर्वत वा मन्दिर का चित्र, यज्ञिय यूप तथा अन्य चिह्न बना है। यही चिह्न मुद्रांक ६४ पर भी है। यज्ञिय यूप के अन्तिम सिरे पर गोमुख वा ब्राह्मी लिपि के मकार सदृश आकृति बनी हुई है। यौधेयों की 'यौधेयानां बहुधान्यके' प्रकार मुद्राओं पर भी कहीं-कहीं इसी प्रकार का यूप मिलता है।

मुद्रांक सं० ६७ पर कच्छप और एक अनेक पदी जीव के चित्र हैं। ये चित्र भी किसी विशेष अभिप्राय से बने हैं।

मुद्रांक सं० ६८ पर नाम के प्रारम्भ का एक अक्षर 'श्री' और अन्तिम अक्षर 'व' दिखाई देता है। शेष बीच के अक्षर घिसने के कारण स्पष्ट नहीं दिखाई देते। श्री का प्रयोग आदर का सूचक है।

मुद्रांक सं० ६९ पर पद्दल कमल का चित्र बना हुवा है। पुष्प प्रसन्नता का द्योतक है। प्राचीन साहित्य में कमल की बहुत महत्ता बताई गई है। पौराणिक गाथाओं में ब्रह्मा की उत्पत्ति कमल पुष्प से ही मानी गई है। किन्तु सृष्टि क्रम के विरुद्ध होने से यह अमान्य है।

### ४७६. कमलपुष्प पर बुद्ध का चित्र : समय २६०० वर्ष पूर्व (२४७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर बीच के मुख्य कमल पुष्प पर महात्मा बुद्ध का चित्र है। इस चित्र के दोनों ओर दो गौण कमल पुष्पों पर महात्मा बुद्ध के दो शिष्यों की मूर्ति बनी हुई है। शिष्यों के दोनों ओर के दो गौण कमल पुष्पों पर दो देवियों (सेविकाओं) के चित्र बने हुये हैं। कमल के पुष्प के नीचे सीधी पड़ी रेखा ( आधार ) के नीचे ग्यारह स्तम्भ दिखाई दे रहे हैं। शेष दोनों ओर के स्तम्भ टूटे हुये हैं। लेख भी टट गया है।

इन मुद्रांकों से सुघ्न की प्राचीनता स्वयं सिद्ध है। यदि इस दुर्ग की नियमित खुदाई कराई जाये तो बहुत महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हो सकती हैं, जो भारत के प्राचीन इतिहास में अनेक नये अध्यायों को स्थान देंगी।

## नन्दीपुर सिंहोल

सिंहोल नामक ग्राम चण्डीगढ़ से लुधियाना जाने वाले राजमार्ग पर बाईं ओर चण्डीगढ़ से लगभग ३० मील दूर स्थित है। इसे वहाँ के लोग उच्चा पिण्ड (ऊँचा ग्राम) के नाम से भी पुकारते हैं। यहाँ एक बहुत प्राचीन दुर्ग के खण्डहर हैं। इसका उत्खनन पञ्जाब सरकार ने करवाया है। इसकी खुदाई को देखने के लिये मैं भी कई वार गया। इसमें तथाकथित सिन्धु सभ्यता के अवशेष भी मिले हैं। यहाँ यौधेय प्रथम प्रकार, कुषाण, हूण, गोंडोफरनिस तथा मुस्लिम वादशाहों की मुद्रायें भी मिलती हैं। हमें भी इस स्थान से पर्याप्त मुद्रायें मिली हैं।

इस नगर का प्राचीन नाम नन्दीपुर था। पञ्जाव राज्य के पुरातत्त्व विभाग द्वारा कराई गई खुदाई में कई मुद्रांक (मोहर) मिले थे। उनके लेख इस प्रकार हैं—

१. नन्दीपुरस्य, २. श्रीरातीश्वरस्य, ३. प्रियाशर्मस्य, ४. देवमित्र, ५. श्रीरुद्रमित्रस 'वा' श्रीपुष्यमित्रस, ६. भालू, मृग, सिंह और पक्षी के चित्र, ७. अश्व के चित्र के ऊपर लेख। नन्दीपुरस्य लेख वाले मुद्रांक पर लेख के ऊपर शिव के नन्दी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(बैल) का बहुत सुन्दर चित्र बना हुवा है। शिव के वाहन (ध्वजचिह्न) नन्दी के नाम से इस नगर का नाम नन्दीपुर हो गया। महर्षि पाणिनि की अष्टाध्यायी के 'प्रस्थपुरवहान्ताच्च' ४.२.१२२ सूत्र के पुरशब्दान्त उदाहरणों में नान्दीपुरक उदाहरण दिया है। महाभाष्य में उक्त सूत्र पर लिखा है—"नान्दीपुरं नाम वाहीकग्रामस्तस्मादुभयं प्राप्नोति—नान्दीपुरकः" नान्दीपुर को यहाँ पञ्जाब प्रदेश का ग्राम बताया है। पाणिनि के समय पञ्जाब का नाम वाहीक था।[1] महाभारत के अनुसार सिन्धु और उसकी सहायक पाँच नदियों के बीच के प्रदेश को वाहीक कहा गया है।[2] आगे पाँचों नदियों के नाम गिनवाकर वाहीकों का एक नाम आरट्ट भी लिखा है। पाँच नदियाँ ये हैं—शतद्रु ( सतलुज ), विपाशा ( व्यास ), इरावती ( रावी ), चन्द्रभागा ( चिनाव ), और वितस्ता ( झेलम )[3]। चन्द्रभागा आधुनिक चिनाव नदी का नाम पाणिनि ने बह्वादिभ्यश्च (४.१.४५) सूत्र के गणसूत्र 'चन्द्रभागान्ङीष्' में पढ़ा है। वाहीक प्रदेश बाह्लीक से भिन्न था। महाभारत कर्णपर्व ४४.१० में कहा है—

शाकलं नाम नगरमापगा नाम निम्नगा।
जर्तिका नाम वाहीकास्तेषां वृत्तं सुनिन्दितम्॥

इससे स्पष्ट है कि वाहीकों को जार्तिक भी कहते थे। इनकी राजधानी शाकल (स्यालकोट) थी। इसी वाहीक (पंजाब) का एक नगर नन्दीपुर भी था। हो सकता है अष्टाध्यायी (महाभाष्य) का नन्दीपुर यही सिंहोल वाला प्राचीन नगर हो। यौधेय प्रदेश पंजाब के बहुत से भाग को अपने अन्दर संजोये हुये था। शतद्रु (सतलुज) नदी के दोनों किनारों तथा बहावलपुर राज्य का भी सारा क्षेत्र इसके अन्तर्गत था। पुनः सिंहोल वा नन्दीपुर के यौधेय प्रदेश के भीतर होने में क्या सन्देह है? साथ ही नन्दीपुर के समीप ही दूसरे यौधेय दुर्ग सुनेत में यौधेयों का मुद्रा ढालने का लक्षण स्थान (टकसाल) था। एक बात विशेष है कि यौधेय प्रदेश में यदि कहीं हूण राजाओं का अधिकार हुवा तो वह यह सिंहोल वा नन्दीपुर दुर्ग ही था। यहाँ तोरमाण, मिहिरकुल, भीमसेन आदि हूण राजाओं की मुद्रायें मिली हैं। हूणों के राजा को पराजित करने वाला यशोधर्म्मा नाम का जननेता यौधेयों का एक महासेनापति था।

सुनेत प्रकरण में मुद्रांक सं० २१७ और २१८ पर एक उभय पक्षीय मुद्रांक प्रकाशित है। उस पर पूर्व पक्ष में 'बलभद्रस्य' लेख है। लेख के ऊपर सिंह के आगे घूमते हुये चक्र का चित्र है। दूसरे पक्ष में 'दामिकस्य' लेख है। श्री गंगाविष्णु शर्मा के अनुसार यह मुद्रांक सिंहोल (नन्दीपुर) से प्राप्त हुवा है। इसकी शैली सुनेत के मुद्रांकों से मिलती है। बलभद्र व्यक्ति सिंह के समान पराक्रमी होगा। उसका शासन चक्र अन्य लोगों पर चलता होगा। इसी 'बलभद्र' के नीचे 'दामिक' नामक व्यक्ति कार्य करता होगा। इसी कारण यहाँ प्रथम विभक्ति है। बलभद्रस्य दामिक=बलभद्र का दामिक अर्थात् बलभद्र से छोटा अधिकारी दामिक। इसका कोई दूसरा भाव भी हो सकता है।[4]

इस नन्दीपुर वा सिंहोल से दस मुद्रांक प्राप्त हुये थे। इनमें से आठ मुद्रांक हमारे संग्रह में हैं। ये मुद्रांक पं० गंगाविष्णु शर्मा ऐम० ए० के सौजन्य से प्राप्त हुये हैं। इनका विवरण अनुपद ही प्रस्तुत किया जा रहा है।

---

१. पाणिनिकालीन भारतवर्ष पृ० ५२ : वासुदेवशरण अग्रवाल।

२. पञ्चानां सिन्धुषष्ठानां नदीनां येऽन्तरा स्थिताः।
तान् धर्मबाह्यानशुचीन् वाहीकानपि वर्जयेत् —कर्णपर्व ४४.७॥

३. शतद्रुश्च विपाशा च तृतीयैरावती तथा।
चन्द्रभागा वितस्ता च सिन्धुषष्ठा बहिर्गिरेः —४४.३२॥
आरट्टा नाम ते देशा नष्टधर्मा न तान् व्रजेत् —४४.३३॥
आरट्टा नाम वाहीका वर्जनीया विपश्चिता —४४.३८॥

4. Kiran Kumar Thaplyal : Studies in Ancient Indian Seals. P. 314. JNSI. XX. P. 220.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



**७०. श्रीमहाराजकपिल-**
**स नियुक्तस्याधि- : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)**
**करणस्य**

मिट्टी के इस मुद्रांक पर 'श्रीमहाराजकपिलस(स्य) नियुक्तस्याधिकरणस्य' यह लेख तीन पंक्तियों में लिखा है। इसका भाव है—महाराज कपिल ने अपने किसी विभाग के अधिकरण (कार्यालय) का किसी व्यक्ति को अध्यक्ष नियुक्त किया था। उस विभागाध्यक्ष का यह मुद्रांक है। श्री का अर्थ यहाँ मुद्रांक है। इसी प्रकार के अधिकरणों=कार्यालयों के मुद्रांक सुनेत, अहिच्छत्रा, वैशाली, राजघाट, बसाढ, धलिया (हनुमानगढ़), एरण, नालन्दा आदि अनेक स्थानों से प्राप्त हुये हैं। कपिल नाम के साथ महाराज का विशेषण दिया है, वे यहाँ के महाराज, सेनापति वा प्रधान थे। इसी महाराज कपिल ने अपने किसी सहायक व्यक्ति को अधिकरण (कार्यालय) को सम्भालने के लिये अपना सहायक नियुक्त किया हुवा था। अथवा यह भी सम्भव है कि यौधेयादि किसी गण ने अपने किसी राज्यकार्य को सम्भालने के लिये महाराज कपिल को ही कार्यालयाध्यक्ष नियुक्त किया हो। उस महाराज कपिल का यह मुद्रांक है। यह मुद्रांक हमारे संग्रह में नहीं है।

**७१. रजतिरजस त्रदतस गुदुफरस: समय २६०० वर्ष पूर्व (२४७४ कलि संवत्)**

इस मुद्रांक पर खरोष्ठी लिपि में 'रजतिरजस त्रदतस गुदुफरस' लिखा है। इसमें घड़ी के अंकों की भांति लेख लिखा है। "रजतिरजस त्रदतस" यह लेख दायें से बायें ऊपर की ओर पाँच बजे से प्रारम्भ होकर दस बजे समाप्त होता है। "गुदुफरस" यह लेख उसी भांति दायें से बायें नीचे की ओर ६ बजे से प्रारम्भ होकर नौ बजे समाप्त होता है। प्राकृत भाषा के इस लेख का संस्कृत रूप 'राजाधिराजस्य त्रातारस्य गुदुफरस्य' बनता है अर्थात् राजाधिराज रक्षक गुदुफर का मुद्रांक। लेख के मध्य देवता का चित्र है।

प्रतीत होता है कि सिक्के ढालने के ठप्पे तैयार करने के लिये इस मुद्रांक का प्रयोग होता था। इसकी बनावट, आकार, विशेष उभरे हुये अक्षर और लेख के मध्य खड़े देवता के चित्र से उपर्युक्त बात की पुष्टि होती है। इण्डोग्रीक शासकों ने भी राजाधिराज और त्राता वा त्रातार आदि उपाधियों का प्रयोग अपनी मुद्राओं पर किया है। यहाँ त्राता का बहुवचन रूप त्रातारः=त्रातारस् का प्रयोग किया है। अथवा त्रातार शब्द मानकर षष्ठी में त्रातारस=त्रातारस्य शब्द भी लिखा हो सकता है। यह गुदुफर भारतीय पार्थियन (Indo Parthian) राजा था।

**७२. जीवबलस : समय २४०० वर्ष पूव (२६७४ कलि संवत्)**

हस्तिदन्त से बने इस विपरीत मुद्रांक पर 'जीवबलस' यह लेख खुदा है। प्राकृतभाषा के इस पद का संस्कृत रूप 'जीवबलस्य' बनता है अर्थात् जीवबल का मुद्रांक। लेख के ऊपर शंख तथा नीचे स्वस्तिक चिह्न बना है। यह मुद्रांक छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। नाम से पूर्व श्री का प्रयोग न होने पर भी हाथी दांत का मुद्रांक होने से यह भी सम्भव है कि यह किसी विशेष राज्याधिकारी वा धनी व्यक्ति का भी मुद्रांक हो। शंख का चित्र युद्ध आदि में उद्घोष करने का प्रतीक है। शंख की ध्वनि सावधान करने के लिये भी होती है। शंख प्रचार का भी सूचक है अर्थात् धर्म प्रचार, समाचार प्रसारण, डाक और तार विभाग की सुव्यवस्था से राज्य की भी सुव्यवस्था सुचारु रूप से चलती है। इसी से राजा और प्रजा दोनों का कल्याण होता है, इसी निमित्त नीचे स्वस्तिक चिह्न बनाया है। स्वस्तिक दक्षिणमुखी बना है। इस मुद्रांक के पीछे मूठ भी बनी थी, वह टूट गई है। मुद्रांक के चारों ओर सुन्दर कलाकृति खुदी हुई है।

**७३. श्रीजितंभग-**
**वता स्वामिना- : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६६४ कलि संवत्)**
**रायणस्य**

इस मुद्रांक पर 'श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य' लेख तीन पंक्तियों में लिखा है। लेख के ऊपर चक्र बना है। चक्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



के ऊपर भी एक खुदा हुवा चिह्न मिलता है। लेख का अभिप्राय है कि ऐश्वर्यशाली, सर्वव्यापक, संसार के स्वामी भगवान्, नर और जल के आश्रय स्थान नारायण ने सारे संसार को जीता हुवा है। उसी की कृपा से दिग्विजय प्राप्त किया जा सकता है, जो प्रभु को अपना एकमात्र स्वामी, रक्षक तथा सहायक मानकर पुरुषार्थ और पराक्रम करता है, उसका सारे संसार में चक्रवर्त्ती राज्य होता है। उसी भगवान् स्वामी नारायण का जय ही हमारा जय है। यह मानकर प्रभु की आज्ञानुसार आचरण करना चाहिये। चक्र का चिह्न विष्णु का भी प्रतीक हो सकता है और चक्रवर्त्ती शासन की कामना भी इससे अभिप्रेत हो सकती है। इसी प्रकार के छः मुद्रांक सुनेत से भी प्राप्त हुये हैं।

## ७४. श्रीगोमीश्वरस्य : समय २४०० वष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इस मृन्मुद्रांक पर 'गोमीश्वरस्य' यह लेख विपरीत खुदा है। यह श्री गोमीश्वर का मुद्रांक है। यहाँ श्री का प्रयोग सम्मान के लिये किया गया है। लेख के ऊपर मोटे सिरों वाली एक सीधी रेखा भी बनी है। इसके ऊपर शंख का चित्र तथा दो खड़े हुये सर्पों जैसा चिह्न विशेष बना है। यह श्री गोमीश्वर कोई शासनाधिकारी था। विपरीत मुद्रांक शासनादेशों पर स्वीकृति आदि के लिये प्रयुक्त होता था। शंख विष्णु के साथ सम्बन्ध रखता है। सर्प का सम्बन्ध विष्णु तथा शिव दोनों से है। शैव और वैष्णव दोनों सम्प्रदायों के मेल की भावना के प्रतीक भी ये चिह्न हो सकते हैं। जैसे 'शंकरनारायणाभ्याम्' मुद्रांक का भी यही प्रयोजन है।

## ७५. श्रीभूमश्रवस : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक श्रीभूमश्रवाः नामक व्यक्ति का है। यहाँ श्री का प्रयोग आदर के लिये किया है। सम्भवतः यह भूमश्रवाः कोई राज्याधिकारी होगा। भूमश्रवाः का अर्थ है बहुत अधिक सुनने वाला। यह लोगों की प्रार्थनायें अधिक सुनता होगा अथवा सूक्ष्म से सूक्ष्म ध्वनि को भी तत्काल सुन लेता होगा। श्रवण शक्ति अधिक होगी, इस कारण भी यह नाम रख दिया होगा। ऐसे दो मुद्रांक सुनेत से भी मिले हैं।

## ७६. वियौवनवता ? : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक का लेख घिसा हुवा है अतः ठीक नहीं पढ़ा जा सका। हमारे विचार से इस पर 'वियौवनवता' लेख है अर्थात् विशेष यौवन वाले के द्वारा। लेख के ऊपर निर्भयता से बैठे हुये सिंह का चित्र बना है। सिंह के आगे खम्भ ठोककर एक योद्धा खड़ा है। जैसे सिंह के साथ मल्लयुद्ध (कुश्ती) करना चाहता हो। विशेष यौवन से भरपूर युवक ही सिंह के साथ मल्लयुद्ध कर सकता है। क्षत्रिय लोग सिंह के समान पराक्रमी होते थे। मनु जी महाराज का उपदेश है—सिंहवच्च पराक्रमेत् अर्थात् क्षत्रिय को सिंह की भांति पराक्रम करना चाहिये। दुष्यन्त पुत्र राजकुमार भरत सिंह, हाथी और जंगली शूकरों से इसी प्रकार मल्ल युद्ध करता था। ऐसे ही वीर युवक सैनिक का यह चित्र है। लेख और चित्रों को पृथक् करने के लिये दो सीधी पड़ी रेखायें भी बनी हैं। ऊपर की रेखा मल्ल सैनिक तथा सिंह की आधार भूमि है तथा नीचे की रेखा चित्र और लेख में पार्थक्य दिखाने के लिये बनाई गई है। मुद्रांक के दूसरे पक्ष में चतुर्दल कमल का पुष्प बना है। फूल प्रसन्नता का द्योतक है। यदि सिंह से भी लड़ना पड़े तो फूलों की भांति हँसते हुये और प्रसन्नता से लड़ना चाहिये। किसी प्रकार की भीरुता वा हीन भावना नहीं होनी चाहिये। यह मुद्रांक हमारे संग्रह में नहीं है।

## ७७. सिंहहस्ती का युद्ध : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक का लेख टूट गया है। लेख के न पढ़े जाने से इतिहास का एक बहुमूल्य रहस्य अज्ञात ही रह गया। लेख के ऊपर एक विशालकाय हाथी पैरों के नीचे सिंह को कुचलता हुवा दिखाया गया है। हाथी के भार को सहन न करके सिंह ने मुंह खोल दिया है। प्रतीत होता है कि सिंह थक कर पराजित हो गया है और दम तोड़ने वाला है। यहाँ शाकाहारी हाथी का मांसाहारी सिंह पर विजय दिखाया गया है। सिंह कहीं अवसर पाकर सूंड को मुख से न पकड़ ले अतः हाथी ने सूंड को ऊपर लपेट रखा है। चित्र और लेख को पृथक् करने के लिये दो रेखायें बनी हैं। चित्र और लेख के चारों ओर भी एक उभरी हुई वर्तुलाकार रेखा बनाई हुई है। इस प्रकार की रेखा मुद्रांकों पर प्रायः करके बनी होती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ७८. श्रीबुद्धिवसुस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर तत्कालीन प्रचलित लोकभाषा में 'श्रीबुद्धिवसुस्य' लेख लिखा है। इसका संस्कृत रूप 'श्रीबुद्धिवसोः' बनता है अर्थात् बुद्धिवसु नामक व्यक्ति की श्री शोभा वा मुद्रांक (मोहर)। लेख के ऊपर बायें मुख किये हुये बैठा हुवा बलवान् नन्दी प्रदर्शित है। नन्दी यौधेयगण का राजकीय प्रतीक था। संभव है बुद्धिवसु भी यौधेयों का कोई राज्याधिकारी होगा। इसी प्रकार के दो मुद्रांक सुनेत से भी प्राप्त हुये हैं। सुनेत मुद्रांकों का निर्माण स्थल था। अतः समान आकृति और लेख वाले एक ही सांचे से बने जो मुद्रांक सुनेत और सिंहोल से मिलते हैं, वे सम्भवतः सुनेत से ही सिंहोल पहुँचे हों। कोई राज्यकर्मचारी अपने अधिकारियों का सन्देश लेकर सुनेत्र (सुनेत) से नन्दीपुर (सिंहोल) गया होगा। वे किसी युद्धादि के कारण वहीं रह गये जो अब यदा-कदा मिलते रहते हैं। नन्दी के चित्र और लेख को पृथक् करने के लिये एक सीधी रेखा भी दोनों के मध्य बनी हुई है। अथवा यह नन्दी के बैठने की आधार भूमि भी हो सकती है। नन्दी और लेख के चारों ओर एक अण्डाकार उभरी हुई रेखा भी बनी हुई है।

## ७९. ये धर्मा हेतुप्रभवा हे–<br>तुं तेषां तथागतो ह्यवदत्तेषां च : ५वीं शती विक्रमी (३५०० कलिसंवत्)<br>यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः

यह बौद्धमत का धार्मिक मुद्रांक है। इस पर बौद्धों का एक प्रसिद्ध श्लोक लिखा है—

ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत्।
तेषां च यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः॥

अर्थात् जो धर्म कारण से उत्पन्न होते हैं, उनकी उत्पत्ति का कारण और निरोध इन दोनों के उपाय महाश्रमण द्वारा बताये गये हैं।

इसी लेख वाले अनेक प्रकार के मुद्रांक कौशाम्बी, नालन्दा, राजघाट आदि स्थानों से बहुत संख्या में मिले हैं। बौद्ध-विहार और संघारामों की ओर से बौद्ध मत का प्रचार करने के लिये इस प्रकार के सहस्रों मुद्रांक वितरित किये जाते थे। आजकल इस प्रकार के मुद्रांक नकली भी बहुत मिलते हैं। इस मुद्रांक के पृष्ठभाग में यह लेख लिखा है। उसके ऊपर तीन बौद्ध विहारों वा संघारामों के चित्र बने हैं। दूसरी ओर के मुखभाग पर महात्मा बुद्ध की पद्मासनस्थ मूर्ति बनी हुई है। महात्मा बुद्ध को यहाँ कमल पुष्प बैठा दिखाया गया है। मूर्ति के चारों ओर चार प्रभामण्डल अथवा कलाकृति बनाई हुई हैं। सम्भव है कभी यहाँ भी बौद्धों का प्रचार रहा होगा। आगे सुनेत (सुनेत्र) से प्राप्त मुद्रांकों का वर्णन किया जायेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

## दशम अध्याय

# सुनेत (सुनेत्र)

●

लुधियाना से जगरांवां जाने वाले राजमार्ग पर बाईं ओर लुधियाना से तीन मील दूर सुनेत नामक ग्राम स्थित है। इसमें सिक्ख जाट बसते हैं। यहां के लोग इसे 'उच्चा पिण्ड' ( ऊचा गाँव ) भी कहते हैं। राजमार्ग के दायीं ओर पंजाब कृषि-विश्वविद्यालय का कृषि-फार्म है। सुनेत का प्राचीन नाम 'सुनेत्र' है। पाणिनीय अष्टाध्यायी के 'संकलादिभ्याश्च' ४.२.७५ सूत्र के गणपाठ में सुनेत्र शब्द पढ़ा है। वहाँ चार अर्थों में प्रत्यय का विधान किया है। सोम वंश में एक सुनेत्र नामक राजा हुये हैं जो जनमेजय के पौत्र तथा धृतराष्ट्र के पुत्र थे। यह धृतराष्ट्र दुर्योधन का पिता नहीं था। सम्भव है यह नगर भी उसी ने बसाया हो। चातुरर्थिक प्रत्ययों से यही आभास मिलता है। यह सोमवंश कुरुवंश भी कहलाता था।

यह सुनेत नगर महाभारत से भी पूर्व का है। कभी यह नगर यौधेय, कुषाण और वृष्णियों का महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा है। यहाँ 'यौधेयगणस्य जय' प्रकार वाली मुद्राओं का लक्षण स्थान (टकसाल) मिला है। इसी प्रकार वासुदेव कुषाण राजा की टकसाल भी यहीं मिली है।[1] ये दोनों प्रकार के सांचे हमें यहाँ से सैकड़ों की संख्या में मिले हैं। इन्हीं सांचों में बनी यौधेय तथा कुषाण राजा वासुदेव की मुद्रायें हरयाणा और उत्तर प्रदेश से मनों के तौल में मिली हैं। रोहतक से यौधेय और कुषाण मुद्रायें एक-एक सहस्र से अधिक मिली हैं। चार सौ से अधिक यौधेय मुद्रायें मेरठ से मिली हैं। सोनीपत के पास मल्हाणा ग्राम में १ मन ३७ सेर से अधिक यौधेय और वासुदेव कुषाण मुद्रायें मिली थीं। वे सभी पुलिस ने लेकर देहरादून भेज दीं। कुछ मुद्रायें मुझे भी मिलीं थीं। जब सिक्के इतनी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं तो इन खण्डहरों में इनकी टकसाल कहीं नहीं मिलती, यह आश्चर्य की बात है। टकसाल अब तक सुनेत में ही मिली है। 'यौधेयगणस्य जय' प्रकार मुद्रायें सुनेत से बहुत कम मिली हैं, किन्तु वासुदेव तथा गोंडोफर्निस की मुद्रायें बहुत मिलती हैं।

'यौधेयगणस्य जय' तथा वासुदेव कुषाण की मुद्रायें हमें २५-३० स्थानों पर एक ही मिट्टी के पात्र में एक साथ ही मिली हैं। जैसे सिद्धीपुर लोवा, आंवली, करौंथा, अच्छेज पहाड़ीपुर, मल्हाणा, अटायल आदि स्थानों पर दोनों मुद्रायें इकट्ठी ही मिली हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि दोनों का निर्माण काल एक ही था। यथार्थ बात यह है कि यौधेयों का संघर्ष कई पीढ़ी तक कुषाण राजाओं के साथ रहा है। अनेक युद्धों में इनकी परस्पर हार जीत होती रही। किन्तु अन्तिम युद्ध में यौधेयों ने वासुदेव को पराजित करके कुषाण वंश की अन्त्येष्टि कर डाली। अन्तिम युद्ध सुनेत में ही हुवा प्रतीत होता है। यहीं पर

---

१. यहाँ से वासुदेव कुषाण की एक स्वर्णमुद्रा तथा स्वर्ण मुद्रायें ढालने ठप्पे के भी बहुत मिले हैं। उनसे स्पष्ट है कि ताम्रमुद्राओं के साथ-साथ स्वर्णमुद्रायें भी यहीं बनाई जाती थीं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वासुदेव कुषाण की राजधानी और टकसाल थी। वासुदेव की पराजय के अनन्तर यौधेयगण ने अपने विजय के उपलक्ष्य में सुनेत में ही लाखों विजय मुद्रायें ढालीं। ये मुद्रायें तीन प्रकार की मिलती हैं, प्रथम में 'यौधेयगणस्य जय' दूसरे में जय के आगे 'द्वि' तथा तीसरे में 'त्रि' लिखा मिलता है।

## यौधेय मुद्राओं में द्वि, त्रि

१. हमारे ब्रह्मचारी विरजानन्द जी का यह दृढ़ और सुनिश्चित मत है कि यौधेयों ने कुषाणराजाओं को तीन बार हराया और तीनों बार के विजयोपलक्ष्य में तीन ही प्रकार के सिक्के ढाले। इनके तर्क ये हैं कि सुनेत से वासुदेव के अतिरिक्त कनिष्क तृतीय और वासुदेव द्वितीय के भी ठप्पे (सांचे) मिलते हैं। जब उनके ठप्पे हैं तो उन्होंने शासन किया होगा और सिक्के ढलवाये होंगे। शासन चाहे अल्पकालीन ही रहा हो।

२. प्रथम विजय में यौधेयगणस्य जय लेखयुक्त मुद्रायें ढालीं, इनमें अधिकतर मुद्राओं के जय का यकार शक्ति (भाला) तथा कार्तिकेय के सिर के बीच मिलता है। द्वि और त्रि लेख वाली मुद्राओं में यकार का स्थान द्वि और त्रि ने ले लिया है। उस समय यह कल्पना नहीं रही होगी कि दूसरी और तीसरी बार भी युद्ध होगा।

३. प्रथम प्रकार में पृष्ठ भाग में देवी के दोनों ओर कोई चिह्न नहीं है, जब कि द्वि प्रकार वाली मुद्रा में देवी के पास कुशायुक्त जलकलश तथा त्रिरत्न के चिह्न बने हैं। त्रि प्रकार वाली मुद्राओं में देवी वाले पक्ष में शंख और किसी शस्त्र विशेष के चित्र हैं। दूसरे जय में जलकलश अभिषेक का तथा त्रिरत्न कुषाणों की लक्ष्मी को लूट कर लाने का प्रतीक हो सकता है। तृतीय जय में शस्त्र विशेष से शत्रुओं का पराभव करके शंख के द्वारा पूर्ण विजय की ध्वनि गुञ्जित करने के कारण शंख और शस्त्र के चित्र दिये होंगे।

४. यौधेयगणस्य जय द्वि, त्रि में द्वि और त्रि जय के ही विशेषण हैं और किसी विभाग आदि के नहीं, इससे भी सिद्ध है कि यौधेयों ने कुषाणों पर तीन बार विजय पाया था।

५. यदि ये द्वि और त्रि राज्य के भागों के परिचायक होते तो प्रथम के लिए एक का सूचक 'ए' अक्षर अवश्य लिखा मिलता। अस्तु यह अभी विचारणीय विषय है।

यौधेयों का यह सुदृढ़ दुर्ग कभी शतद्रु (सतलुज) नदी के पूर्वी तट पर स्थित था। सतलुज हट कर दूर चला गया है। सुनेत्र के खण्डहर अभी तक विद्यमान हैं, जिनकी स्मृति आधुनिक सुनेत ग्राम ने जीवित रक्खी हुई है। सुनेत में यौधेयों की केवल मुद्रा बनाने की ही टकसाल नहीं थी, अपितु इस दुर्ग में यौधेय आदि गणों के मुद्रांकों (मोहरों) का भी निर्माण होता था। इसी कारण हमें तथा अन्य लोगों को इस खण्हर से बहुत अधिक मुद्रांक मिले हैं। १०७५ मुद्रांक[1] तो यहां से हमें ही प्राप्त हुये हैं, सभी मुद्रांक हमारे संग्रहालयों में विद्यमान हैं। इन सुनेत के मुद्रांकों में से इस ग्रन्थ में केवल २१० मुद्रांक प्रकाशित कर रहे हैं।

घोर परिश्रम करके भारतीय इतिहास पर शोधकार्य करने वाले आदरणीय श्री कर्नल अलैग्जेण्डर कनिंघम को सुनेत से सर्व प्रथम यौधेयों का 'यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्' लेखवाला प्रसिद्ध मुद्रांक प्राप्त हुवा था। इसके कारण यौधेयगण की बहुत प्रसिद्धि हुई तथा इतिहासकारों ने यौधेयों की सत्ता को भी स्वीकारना प्रारम्भ किया। इस मुद्रांक को आधार बनाकर राहुल सांकृत्यायन ने अपने स्वभावानुसार सत्य के सर्वथा विरुद्ध और कपोलकल्पित 'जय यौधेय' नामक उपन्यास लिख मारा। उस ग्रन्थ में यौधेयगण तथा उसकी सन्तति का निरादर एवं उपहासमात्र किया है। ऐतिहासिक तथ्यों के विपरीत इस प्रकार की पुस्तकें किसी लेखक को नहीं लिखनी चाहियें। राहुल ने जब भी लेखनी उठाई, तभी आर्यों की प्राचीन विश्ववारा संस्कृति, पवित्र वैदिक धर्म तथा पूज्य पूर्वज ऋषि महर्षियों के सर्वथा विपरीत ही लिखा। मानो उस व्यक्ति ने सत्य का खून करने का ठेका ही ले रक्खा था। उसने जीवन के अन्तिम क्षणों में जो भयंकर कष्ट और दुर्गति सही, वह सम्भव है उसी का फल हो।

---

१. ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ करने के उपरान्त ४० मुद्रांक और मिले हैं अतः पृ० २ पर लिखित १०३५ संख्या में ४० मुद्रांक नये जोड़ कर यहां १०७५ संख्या लिखी गई है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अस्तु ! कनिंघम को प्राप्त यह मुद्रांक अब इंगलैण्ड के ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में है। इस मुद्रांक का चित्र बड़ा यत्न करके मैंने मंगवाया। मेरे मित्र आदरणीय डा० लोकेशचन्द्र जी ने इस चित्र के लिये अनेक बार इंगलैण्ड से पत्रव्यवहार किया। ब्रिटिश म्यूजियम के अत्यन्त सज्जन व्यक्ति श्री डा० डब्ल्यू० ज्वाल्फ का मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने इस मुद्रांक का चित्र मेरे कई बार आग्रह करने पर भेज ही दिया। मैं इस विद्वान् से ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में जाकर डा० लोकेशचन्द्र जी के साथ मिला। इनकी सुजनता तथा कृपा से भारतीय प्राचीन दुर्लभ मुद्राओं के दर्शन का सौभाग्य मुझे तथा प्रियवर पं० योगानन्द जी शास्त्री को मिल गया। उस यौधेय मुद्रांक का चित्र सर्वप्रथम हम ही प्रकाशित कर रहे हैं। यह चित्र इस ग्रन्थ की मुद्रांक सं० ८० पर छपा है। यह मुद्रांक गोल आकृति का है। इसी लेख वाला मुद्रांक हमें नौरंगाबाद बामला (भिवानी) से मिला है, वह चतुष्कोण है। लेख तथा नन्दी का चित्र दोनों में समान-से हैं।

## वृष्णिगण के मुद्रांक

सुनेत से प्राप्त होने वाले मुद्रांकों में वृष्णिराजन्यगण के दो महासेनापतियों के मुद्रांक बहुत महत्वपूर्ण हैं। इनमें से १८८ संख्या पर प्रकाशित मुद्रांक श्री सरदार लछमनसिंह सुनेत निवासी के सौजन्य से मिला है। बहुत से मुद्रांकों की प्राप्ति श्री बलवेन्द्रसिंह के सहयोग से हुई है। हम इन दोनों के आभारी हैं।

वृष्णिगण श्रीकृष्ण जी महाराज का अपना निजी कुल वा गण था। इसी में इस महापुरुष ने जन्म लिया था। महाभारत तथा गीता में इनको बार-बार वार्ष्णेय कहा है। वार्ष्णेय कुल वा नाम के लोग अब भी चन्दौसी आदि स्थानों पर पर्याप्त संख्या में बसते हैं। महाभारत में कहा है—

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसङ्करः॥ भीष्मपर्व २५.४१॥

हे कृष्ण ! अधर्म से कुल के दबाये जाने पर कुल की स्त्रियां बिगड़ जाती हैं। हे वार्ष्णेय ! वृष्णिसन्तान कृष्ण ! स्त्रियों के दूषित हो जाने पर वर्णसंकर पैदा हो जाते हैं।

अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः॥ भीष्म पर्व २७.३६॥

हे वृष्णि सन्तान ! यह पुरुष न चाहता हुवा भी, बल से लगाया हुवा जैसा, किससे प्रेरिता हुआ पाप करता है, सकाम कर्म मे लगता है ? इन श्लोकों में वार्ष्णेय पद से श्रीकृष्ण जी को ही सम्बोधित किया गया है।

गणों में एक पद्धति थी, कुलों के जो विशेष व्यक्ति होते थे, उनको प्रतिनिधि रूप में चुनते थे। वे ही राज्य के अधिकारी बन सकते थे, उन्हें 'राजन्य' कहते थे।

राजन्यबहुवचनद्वन्द्वेऽन्धकवृष्णिषु—अष्टाध्यायी ६.२.३४॥

महामुनि पाणिनि जी के इस सूत्र पर काशिकाकार श्री वामन लिखते हैं—

राजन्य इति किम् ? द्वैप्यहैमायनाः।...अन्धकवृष्णय एते, न तु राजन्याः। राजन्यग्रहणमिहाभिषिक्तवंश्यानां क्षत्रियाणां ग्रहणार्थम्। एते च नाभिषिक्तवंश्याः॥

अर्थात् उपर्युक्त सूत्र में राजन्य पद का ग्रहण इसलिये किया गया है कि कहीं 'द्वैप्यहैमायनाः' इस पद में पूर्व पद प्रकृति-स्वर न हो जाये। क्योंकि द्वैप्य और हैमायन अन्धकवृष्णि तो हैं, किन्तु राजन्य नहीं हैं। राजन्य उसको कहते हैं कि वंश के जिस प्रमुख क्षत्रिय व्यक्ति को राज्य सम्बन्धी किसी पद से अभिषिक्त (विभूषित=पुरस्कृत) किया जाये। सामान्य सैनिक तथा चुने हुये अभिषिक्त राज्याधिकारी में यही अन्तर था कि राजन्य गणराज्यों के बड़े अधिकारी बन सकते थे, वे वंशों के प्रतिनिधि वा चौधरी

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



होते थे। उन्हें वंशों की ओर से परामर्श तथा मतदान का अधिकार होता था। ये ही राजन्य सेनापति और महासेनापतियों का चुनाव करते थे। इसीलिये दोनों मुद्रांकों के लेख में स्पष्ट लिखा है—"वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य" वृष्णिगण में जो चुने हुये राजन्य (क्षत्रिय) प्रतिनिधि थे, उन्होंने गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार सर्वथा योग्य व्यक्ति को महासेनापति पद से विभूषित किया, पुरस्कृत किया। वह वसुवृद्ध[1] नाम का राजन्य था, उसके पुत्र जयसोम का यह मुद्रांक है। वह जयसोम केन्द्र में स्थिर था। केन्द्र (राजधानी) में स्थिर रूप से ठहर कर राज्यसेवा करता था। इसका पिता वसुवृद्ध महासेनापति था।

दूसरे मुद्रांक में वृष्णिगण के राजन्यों ने अपने गण के महासेनापति सोमगुप्त[2] का आदर पूर्वक चयन किया। उस महासेनापति सोमगुप्त के पुत्र सत्यगुप्त का मुद्रांक है। जो भृम्यत्र ? था। सम्भव है यह भ्रमण करके प्रवन्ध करता होगा। यह अन्तिम लेख कुछ स्पष्ट नहीं पढ़ा जाता क्योंकि अक्षर घिस गये हैं। वृष्णिगण के किसी जयसेन. व्याघ्रसत्र, और सत्रगुप्त की अनेक चतुष्कोण मुद्रायें भी यहां से हमें प्राप्त हुई हैं। इन सबके पृष्ठ भाग में चक्र का चित्र बना है। वृष्णि का एक मुद्रांक खरोष्ठी लिपि का भी मिला है। हस्तिसिंह और सुदर्शन चक्र के नीचे 'जय पचलय'=जय पंचालय लेख लिखा है। अर्थात पञ्चालय का जय हो। पंचालय का अर्थ पांच नदियों का घर पंजाब हो सकता है। खरोष्ठी लिपि सीमाप्रान्त अर्थात मद्र, अभिसार और गान्धार देश में प्रचलित थी। वृष्णियों का राज्य दूर तक विस्तृत होगा। किसी समय सुनेत का दुर्ग भी इनके अधिकार में आ गया होगा। अथवा विदेशी यवन, शक, कुषाण वा हूणों के आक्रमण-समय यौधेयों ने अपने इस चन्द्रवंशी भाई वृष्णिगण को आश्रय स्थान दे दिया होगा। वृष्णि गण के चिह्नों से युक्त कई मुद्रांक ऐसे भी मिले हैं जिन पर 'जितं भगवता' लिखा मिलता है। इनका भी यही भाव है कि भगवान् की कृपा से ही विजय सम्भव है। अथवा यह सारा जगत् भगवान् के द्वारा जीता हवा है। ये वृष्णिगण के धार्मिक मुद्रांक हैं। वृष्णिराज्य गण की एक रजत मुद्रा ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में है। उस पर ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपि में 'वृष्णिराजन्यगणस्य त्रातारस्य' लिखा है। इस पर एक ओर हस्तिसिंह तथा दूसरी ओर चक्र का चित्र बना है। ये ही चिह्न मुद्रांकों पर भी पाये जाते हैं।

वृष्णिकुल के मुद्रांकों पर चक्र, गदा, मूसल, शंख और अर्द्ध हस्तिसिंह के चित्र मिलते हैं। गदा और मूसल तो क्षत्रियों के शस्त्र हैं। वृष्णि वंश में उत्पन्न श्री बलराम जी गदा युद्ध में सबसे अधिक माने हुये निष्णात योद्धा थे। दुर्योधन और भीम को गदा युद्ध इन्हीं ने सिखाया था।[3] महाभारत के युद्ध समाप्ति के समय ये अपने शिष्यों के गदा युद्ध को देखने के लिये स्वयं उपस्थित भी हुये थे। हल और मूसल भी वृष्णियों के विशेष शस्त्र थे। बलराम का एक नाम हलायुध तो इसी कारण हो गया, क्योंकि वे हलसदृश शस्त्र को सदा अपने पास रखते थे। ये बलराम जी श्रीकृष्ण जी के बड़े भाई थे। शंख, गदा, मूसल, चक्र (सुदर्शन चक्र) तथा हल ये वृष्णियों के विशेष और युद्धोपयोगी आयुध थे। श्रीकृष्ण जी महाराज का सुदर्शन चक्र तो जगत्प्रसिद्ध है। इस सुदर्शनचक्र का महाभारत[4] में अच्छा वर्णन किया है। इसी सुदर्शन चक्र के द्वारा श्री कृष्णजी ने शिशुपाल का वध किया था।[5] इसी सुदर्शनचक्र के द्वारा सौभविमान का विध्वंस और शाल्व का संहार किया था।[6] श्रीकृष्ण जी महाराज ने अर्जुन को अपने दिये हुये सुदर्शनचक्र से कर्ण का सिर काटने की प्रेरणा भी की थी। वृष्णिकुल के ये विशेष आयुध थे। इसीलिये वृष्णिकुल के प्रायः सभी मुद्रांकों पर इन आयुधों के चित्र बने मिलते हैं। हमें वृष्णिकुल के दस से अधिक मुद्रांक प्राप्त हुये हैं। प्रायः सभी पर उपर्युक्त चिह्न मिलते हैं। हाथी और सिंह बल एवं वीरता के प्रतीक हैं। क्षत्रिय योद्धाओं को हाथी के समान बलवान् और सिंह की भांति वीर पराक्रमी[7] होना चाहिये। ये ही वृष्णिवंश के वीरों के आदर्श थे, अत एव इन्हें अपना प्रतीक चुना।

---

१. देखिये मुद्रांक सं० १८७।

२. देखिये मुद्रांक सं० १८८।

३. उभौ शिष्यौ गदायुद्धे रौहिणेयस्य धीमतः।
उभौ सदृशकर्माणौ यमवासवयोरिव ॥ शल्य पर्व ५५.२८ ॥
रोहिणीपुत्र बलराम के दोनों शिष्य (भीम और दुर्योधन) गदायुद्ध में यम और वासव की भांति थे।

४. आदि पर्व १९.२०-२९। आदि पर्व २२४.२३.२७ ॥

५. सभापर्व ४५.२१-२५ ॥

६. वनपर्व २२.२५-३७ ॥

७. सिंहवच्च पराक्रमेत्—मनुस्मृति ७.१०६ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



शंख तो प्रत्येक महारथी युद्ध में अपने साथ रखता था। समय पड़ने पर शंखनाद करते थे। श्री कृष्ण तथा अर्जुन के पृथक्-पृथक् शंख थे।

माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौशंखौ प्रदध्मतुः—गीता १.१४॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः।

पौण्ड्रं दध्मौ महाशंखं भीमकर्मा वृकोदरः—गीता १.१५॥

श्रीकृष्ण और पाण्डव ने अपने दिव्य शंख बजाने आरम्भ किये।

हृषीकेश श्रीकृष्ण ने पाञ्चजन्य नामक, धनञ्जय अर्जुन ने देवदत्त नामक और भयंकर कर्म करने वाले वृकोदर भीमसेन ने अपना पौण्ड्र नामक शंख बजाया। इसी भांति सब योद्धाओं ने अपने-अपने शंख बजाये। सब शंखों के नाम पृथक्-पृथक् थे। युद्ध के आरम्भ में अथवा यथोचित समय पर शंखध्वनि की जाती थी। शंख का बहुत महत्व था।

## शंख, चक्र, गदा और पद्म

महाराज विष्णु की चतुर्भुज मूर्तियों में एक-एक हाथ में शंख, चक्र, गदा और पद्म मिलते हैं। इनके विषय में महान् वैदिक विद्वान् श्री स्वामी समर्पणानन्द जी (पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार) ने[1] प्रकाश डाला है—

इस विष्णु की मूर्त्ति का मर्म इस प्रकार है, यहाँ विष्णुशक्ति के विषय में कुछ मनोरञ्जक बातों का उल्लेख अप्रासङ्गिक न होगा। यज्ञ का अर्थ है संगतिकरण। यज्ञ और विष्णु शब्द शतपथ ब्राह्मण में पर्यायवाची रूप से आये हैं। इसलिये विष्णु का अर्थ है व्यापक होकर संगतिकरण करने की शक्ति। इस संगठन शक्ति को ही पुराणों में भी 'विष्णु' के नाम से कहा गया है। परन्तु उस मूल को न समझ कर पुराणकारों ने गपोड़ों से तथा अश्लील कथाओं से ऐसा लाद दिया है कि ऋषि दयानन्द का विषसम्पृक्तान्न' शब्द इनके लिये पूर्णरूप से चरितार्थ होता है। पुराण का विष्णु शंख, चक्र, गदा और पद्मधारी है। मर्म की बात यह है कि यहां अलंकार से संगठन का स्वरूप दिखाया गया है। वह संगठन संसार में सबल होता है जिसके पास शंख अर्थात् अपनी आवाज को संसार में अधिक से अधिक मनुष्यों तक पहुँचाने के साधन समाचारपत्र, व्याख्यानदाता, उपदेशक आदि साधन अधिक हों। दूसरे जिसके पास 'चक्र' अर्थात् बैलगाड़ी, घोड़ा गाड़ी, रेल गाड़ी, मोटर, व्योमयान आदि चक्र अधिक हों। तीसरे 'गदा' अर्थात् शत्रुओं के ताडन का दण्ड अर्थात् युद्ध सामग्री अधिक हो। चौथे पद्म अर्थात् लक्ष्मी का निवास स्थान फलतः कोष अधिक हो। इन चार के बल पर संगठन चलता है साथ ही वह संगठन लक्ष्मीपति हो अर्थात् धनवानों को दबा कर रखता हो।"

ऐसी संगठन शक्ति के बिना गणराज्य तो कोई चल ही नहीं सकता। इस प्रकार इन वृष्णि और यौधेय गणों के राज्य का मूलाधार तो यह संगठन ही था। अतः इस भांति भी ये शंख, चक्र और गदा आदि चिह्न इन गणों के मुद्रांकों पर सार्थक ही हैं।

## मुद्रांकों के चिह्न

कुछ मुद्रांकों पर अर्द्धचन्द्र का चित्र मिलता है यह चिह्न राजा वा अन्य किसी बड़े अधिकारी का चिह्न है। इनके अतिरिक्त परशु, अनेक प्रकार के त्रिशूल, अंकुश, शक्ति ( भाला ), सांकुशपाश, डमरु, पुष्प, कलश, स्वस्तिक, मयूर, वृश्चिक, व्यक्ति, नन्दी (बैल), सिंह, शूकर, अश्व आदि के चित्र भी सुनेत से प्राप्त मुद्रांको पर मिलते हैं। ये सभी चिह्न सेना की पृथक्-पृथक् टुकड़ियों के चिह्न है। जैसे आजकल भी सेना के प्रत्येक रेजिमेण्ट (यूनिट) के अपने पृथक्-पृथक् चिह्न होते हैं। साथ ही स्थान विशेषों में भी सैनिकों के चिह्न भिन्न-भिन्न होते हैं। इसी प्रकार प्राचीन काल में भी अवश्य होते थे, यह इन मुद्रांकों के चिह्नों से सिद्ध है।

इस ग्रन्थ में प्रकाशित सुनेत के मुद्रांकों पर बने विभिन्न चिह्नों की तालिका इस प्रकार बनती है। सुविधा के लिये चित्र के आगे मुद्रांक संख्या भी दे दी गई है।

---

१. पं० बुद्धदेव विद्यालङ्कार : तीन देवता पृष्ठ २४-२५।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



दायें मुख करके चलता हुवा नन्दी—८०,१४०।
बायें मुख किये बैठा हुवा नन्दी —१४३,१४७,१८२,२२३,२४९।
दायें ,, ,, —१८३,२१९,२४४।
बायें मुख बैठे सिंह के आगे पुष्प —१३६,१४८,१८६,२४०।
,, ,, चक्र —१४२,१४४,१५०,१५१,२१७।
दायें ,, ,, —१३८,१७६।
,, ,, शंख —१३७,२६२।
बायें ,, ,, —१४१।
,, ,, त्रिशूल —१४६।
,, चलते ,, नीचे स्वस्तिक—१३५।
बायें मुख बैठा हुवा सिंह —१७२,१७८,१८१,२७०।
दायें ,, ,, —१७५,१७९,१८४,१८५।
शंख—१६२,१६३,१६५,१९६ (दो बार), १९९,२००,२०३,२०७,२१०,२२४।
चक्र—१४९,२०१,२०४,२१६,२५१।
त्रिशूल—१५२,१५७-१६१,१६६ (बायें परशु), १६८,२०२,२०६,२११,२१३,२१४,२२०,२२२, २३४—२३९, २४५ (दायें परशु), २५६,२५७,२६७,२६९।
शंख+चक्र—१६९,१९७। शक्ति (भाला)+त्रिशूल—२०८,२५८,२६९,२७१।
त्रिशूल+सर्पाकृति ?—१५६। कलश+त्रिशूल—२५३,२५५।
त्रिशूल+चक्र—२५०,२५२। परशु+कलश ?+सांकुशत्रिशूल—२५४।
(दायें) सपरशु त्रिशूल+कलश ?—२५९। (दायें) नन्दी+परशु—२३२,२३३। नन्दी+अंकुश—२४३।
अंकुश—२२१। पुष्प—२२४,२६७। डमरु ?—२२८। सिंह २४१। मयूर—२४२।
अश्व—१३९। शूकर—१८०। अर्द्धचन्द्र—१६४,१६७,१९८,२२८।

मुद्रांक सं० २०३ पर मध्य में बना चिह्न 'यौधेयगणस्य जय त्रि' लेख वाले मुद्रांकों पर भी मिलता है। सम्भव है यह कोई शस्त्र होगा। मुद्रांक सं० २८६ और ३१३ में भी यही चित्र बना है। मु० सं० ३१३ में तो शस्त्रास्त्रों के साथ बना होने से निश्चित रूप से यह शस्त्र है। मुद्रांक संख्या २०३ में प्रथम चिह्न शंख न होकर चक्र भी हो सकता है।

चित्र संख्या २६० में नवम मुद्रांक पर बारहसिंगे पर आक्रमण करता हुवा चीता दिखाया गया है। ऊपर निर्दिष्ट चिह्न शिव और विष्णु से सम्बन्धित हैं। शंख, त्रिशूल, परशु, अंकुश, शक्ति, चक्र ये सैनिकों के युद्धोपयोगी शस्त्रास्त्र हैं। नन्दी, सिंह और मयूर क्रमशः शिव, पार्वती और कार्तिकेय के ध्वज चिह्न हैं। शंख, चक्र, पद्म ये विष्णु के चिह्न है। ये चिह्न परस्पर इतने घुल-मिल गये हैं जिससे प्रतीत होता है कि शैव और वैष्णव लोग एक हो गये थे। इसकी पुष्टि 'शंकरनारायणाभ्याम्' लेख वाले सैकड़ों मुद्रांकों से भी होती है। इससे शंकर और नारायण (विष्णु) के लिये नमस्कार आदि करने का अभिप्राय भी हो सकता है।

अभी सुनेत से तीन नये मुद्रांक मिले हैं। एक पर 'श्रीबुधस्य' लेख है। दूसरे पर 'श्रीकुमारबोधि' लिखा है। नाम के ऊपर अर्द्धचन्द्र का चित्र बना है। इस मुद्रांक पर यह नाम दोबार लिखा है। तीसरा ताम्र का विपरीत मुद्रांक है। उस पर 'श्रीश्रमवतीस्य' नाम लिखा है। लेख के ऊपर चक्र और शंख (कलश ?) का तथा नीचे त्रिशूल का चित्र बना है। सम्भवतः श्रमवती नाम किसी स्त्री राज्याधिकारिणी का हो। सुनेत के कुछ नये मुद्रांकों की चर्चा श्री किरणकुमार थपलियाल[1] ने भी की है।

---

1. Studies in Ancient Indian Seals P. 308, 311, 315.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वे नाम इस प्रकार हैं—पराक्रम, सोमदत्त और विष्णुत्रात। दो मुद्रांकों के लेख उन्होंने 'जज्ज' और 'मान्य' पढ़े हैं। हमारे विचार से शुद्ध पाठ 'जुज्ज' और 'मातृः' है। देखिये इसी ग्रन्थ के मुद्रांक सं० २१२, १६१ और २६९।

सुनेत से प्राप्त अनेक मुद्रांकों के अन्त में सोम, शर्म, देव, भद्र, गुप्त, मित्र, दत्त, दास और घोष शब्द मिलते हैं। इन सबको मिलाकर देखने से ज्ञात होता है कि तत्-तत् शब्दान्त वाले नामों का परस्पर सम्बन्ध है। इनसे कुल परम्परा भी ज्ञात हो सकती है। इन नामों से निर्मित सम्भाव्य वंश परम्परा की तालिका नीचे दी जाती है।

### सोम वंश

| | |
|---|---|
| १. विष्णुसोम | ९२ |
| २. श्रीराय्यसोमस्य | ११५ |
| ३. श्रीर्जयसोम | ११८ |
| ४. नन्दसोमः—सिंह, चक्र | १३८ |
| ५. श्रीसोमस्य—चक्र, सिंह | १४४ |
| ६. श्रीमातृसोमस्य—त्रिशूल, सिंह | १४६ |
| ७. श्रीर्ज्जयसोमस्य अर्द्धचन्द्र | १६७ |
| ८. श्रीमित्रसोमस्य | १७४ |
| ९. श्रीर्य्यात्रिसोमस्य—सिंह, चक्र | १७६ |
| १०. श्रीराज्यसोमस्य—सिंह | १८१ |

इनके अतिरिक्त वृष्णिमुद्रांक १८७ में भी वसुवृद्ध का पुत्र जयसोम लिखा है। इनका परस्पर सम्बन्ध है वा नहीं, यह तो भावी अन्वेषणों से ही ज्ञात हो सकेगा।

### गुप्त वंश

| | |
|---|---|
| १. श्रीगुप्तस्य | १०० |
| २. श्रीस्वामिगुप्त | १०९ |
| ३. सोमगुप्तः | १७१ |
| ४. श्रीरिन्द्रगुप्तस्य—शूकर | १८० |
| ५. श्रीहरिगुप्तस्य | २६१ |

इनके अतिरिक्त वृष्णिगण के मुद्रांकों में भी सोमगुप्त के पुत्र सत्यगुप्त का उल्लेख है। उपर्युक्त गुप्तनामान्त वालों से इनका सम्बन्ध विचारणीय है।

मुद्रांक १४२ में भी श्रीस्वामिगुप्त नाम लिखा है। ऊपर चक्र और सिंह का चिन्ह बना है।

### शर्म वंश

| | |
|---|---|
| १. श्रीर्मातिशर्मस्य | १०२ |
| २. श्रीर्मात्रिशर्मस्य—त्रिशूल | १२९ |
| ३. श्रीशशर्मस्य | १३१ |
| ४. मातृशर्मा—नन्दी | १४३ |
| ५. रुद्रशर्म—त्रिशूल | १६० |
| ६. ,, +श्रीजुज्जस्य-त्रिशूल | २११,२१२ |
| ७. हरिशर्म (हरिशर्म्म)—शंख | १६२,१६३ |
| ८. ,, +शंकरनारायणाभ्याम्—शंख | २०७ |
| ९. श्रीकुमारशर्म—सिंह | १८५ |
| १०. मातिशर्मा—त्रिशूल, पुष्प | २६७ |

### भद्र वंश

| | |
|---|---|
| १. गंग—त्रिशूल | १५८ |
| २. गंगभद्र—त्रिशूल, सर्प ? | १५६ |
| ३. गंग+गंगभद्र—त्रिशूल | २१३,२१४ |
| ४. श्रीरवन्तभद्रस्य | ९९ |
| ५. श्रीविष्णुभद्रस्य | १०१ |
| ६. देवभद्रस्य काण्डेलकाकुमारस्य | १२५ |
| ७. श्रीरीशानभद्रस्य—चक्र, सिंह | १५० |
| ८. श्रीसूर्य्यभद्रस्य—अर्द्धचन्द्र, डमरु ? | २२८ |

### देव वंश

| | |
|---|---|
| १. मित्रदेवस्य | १०६ |
| २. श्रीसोमदेव सेधचक्र | ११२ |
| ३. नागदेव—दो शंख | १९६ |
| ४. श्रीनारायणदेवस्य—चक्र, शंख | १९७ |
| ५. देविलपुत्रस्य श्रीसत्यदेवस्य—चक्र, शंख, शस्त्र | २०३ |

मुद्रांक १४२ में भी श्रीरुद्रदेवी नाम की सम्भावना हो सकती है। लेख अस्पष्ट-सा है। वहाँ चक्र और सिंह का चिन्ह है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



### दत्त वंश

| | |
|---|---|
| १. श्रीमंयदत्तस्य[1] | १४७ |
| २. श्रीकिण्णदत्तस्य (श्रीकृष्णदत्तस्य)-चक्र | १४९ |
| ३. श्रीविष्णुदत्तस्य—सिंह | १७८ |
| ४. श्रीव्याघ्रदत्तस्य सेपिवरस्य[2]—सिंह | १८३ |
| ५. सोमदत्त[3] | |

### मित्र वंश

| | |
|---|---|
| १. श्रीमित्रस्य | १२२ |
| २. श्रीबुद्धिमित्रस्य | ९१ |
| ३. जयमित्र | ११९ |
| ४. बुधमित्र | १०३ |

### शिव वंश

| | |
|---|---|
| १. श्रीभजिल | ९६ |
| २. श्रीरामिलस्य | ९३ |
| ३. श्रीदविलस्य | ९५ |
| ४. शुद्धिलस्य | ९४ |
| ५. श्रीव्वंन्वासिकस्य ब्रह्मिलस्य साधिकरणस्य | २२९ |

### अज्ञात वंश

| | |
|---|---|
| १. श्रीसिद्धेश्वरदासस्य—अर्द्धचन्द्र... | १६४ |
| २. विष्णुदासस्य श्रीशोणस्य—सिंह | १७९ |
| ३. श्रीविष्णुदासस्य—शंख | १९९ |
| ४. श्रीविष्णुदासस्य—शंख शंकरनारायणाभ्याम् | २१० |
| ५. श्रीहरिदासस्य—देवसेन | २२६, २२७ |

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित नामों के विषय में भी अन्वेषण करना आवश्यक है।

### घोष वंश

| | |
|---|---|
| १. घोषस्य | १२८ |
| २ श्रीस्वामिघोषस्य | १२३ |
| ३. श्रीस्वामिघोषस्य—शंख | |
| ४. कृष्णघोष—पुष्प | २२४,२२५ |

### बल वंश

| | |
|---|---|
| १. बलभद्रस्य—चक्र, सिंह | २१७, २१८ |
| २. दामिकस्य | |
| ३. दाम | २१५ |
| ४. श्रीदामस्य | २६३ |

| | |
|---|---|
| १. श्रीविष्णुसिंहशतपतेः—शंख, सिंह | १४१ |
| २. श्रीविष्णुसिंहस्य—सिंह | १८४ |

इस प्रकार इन नामों की परस्पर साम्यता से सम्भव है भावी अन्वेषणों से अनेक महत्त्वपूर्ण पीढ़ियों की जानकारी हो सके। उपर्युक्त नामों से प्रतीत होता है या तो ये सब किसी वंशविशेषों से सम्बन्धित हैं अथवा कुछ आगे-पीछे समयानुसार राज्य के छोटे बड़े कर्मचारी और अधिकारी आदिकों के नाम हैं।

---

१. इस मुद्रांक पर श्रीमंयदत्तस्य नाम के पास एक दूसरा भी नाम है, जो अस्पष्ट है, उस पर नन्दी का चित्र है।

२. इसी लेख वाला एक मुद्रांक इलाहाबाद संग्रहालय में भी है, किन्तु उस पर सिंह का चित्र नहीं है।

3. K. K. Thaplyal : Studies in Ancient Indian Seals. P. 311.
Indian museum, no. A. 11393—Ns. 9136.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ८०. यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम् : समय ३२०० वर्ष पूर्व (१८७४ कलि संवत्)

यौधेयों का यह प्रसिद्ध मुद्रांक श्री जनरल अलैग्जैण्डर कनिंघम को सुनेत (लुधियाना) से प्राप्त हुवा था।[1] इस गोलाकार मुद्रांक पर दायें मुख करके चलते हुये नन्दी के चित्र के ऊपर 'यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्' लिखा है। अर्थात् यौधेय लोग सदा जय मन्त्र को धारण किये हुये रहते थे। वे कभी पराजित नहीं होते थे। उनमें विजय की भावना कूट-कूट कर भरी हुई रहती थी। सदा अपराजेय होने के कारण ही यौधेय जयमन्त्रधर कहलाये। इनकी वीरता की प्रशंसा इनके शत्रु रुद्रदामन् महाक्षत्रप ने भी अपने गिरिनार शिलालेख में की है। 'यौधेयगणस्य जय' लेख वाली मुद्रायें भी यौधेयों की इसी विजय-भावना को पुष्ट कराती हैं। शक और कुषाणों को भारत भूमि से सदा के लिए समाप्त करने वाले ये वीर यौधेय ही थे। इसका प्रमाण यह है कि वासुदेव कुषाण की राजधानी सुनेत्र में उसी की टकसाल में ही यौधेयों ने अपनी विजय मुद्रायें ढालीं। उनके सहस्रों ठप्पे इसके जीवन्त उदाहरण हैं। यौधेयों का विस्तार से वर्णन मुद्रांक सं० १२ में कर दिया है। पाठक वहाँ देख सकते हैं।

इसी लेख वाला एक चतुष्कोण मुद्रांक हमें नौरंगाबाद बामला से भी मिला है। इस सुनेत वाले मुद्रांक के नन्दी (बैल) की अपेक्षा नौरंगाबाद से प्राप्त मुद्रांक पर बना नन्दी अधिक बलिष्ठ दिखाई देता है। लेख दोनों में समान हैं। दोनों में तीन-तीन पंक्तियों में लेख लिखा है। जैसे—

| नौरंगाबाद—बामला | सुनेत |
|---|---|
| यौधेयानां | यौधेया- |
| जयमन्त्रधरा- | नां जयमन्त्रध- |
| णाम् | राणाम् |

सुनेत से अभी तक हमें इस लेख वाला मुद्रांक नहीं मिला है। यह मुद्रांक अब ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में है। इसका चित्र हमें श्री डब्ल्यू० ज्वाल्फ के सौजन्य से प्राप्त हुवा है। इसके लिये हम उनके अत्यन्त आभारी हैं।

## ८१—८३. धर्मकर्तव्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इन मुद्रांकों पर 'धर्म कर्तव्य' यह प्राकृत भाषा में लिखा है। इसका संस्कृत रूप 'धर्मः कर्त्तव्यः' और 'धर्मं कर्त्तव्यम्' बनता है। धर्म शब्द पुल्लिङ्ग और नपुंसकलिङ्ग दोनों प्रकार का है। मुद्रांक सं० ८२ पर 'धर्मकर्तव्य' लेख विपरीत खुदा है। यह मुद्रांक बनाने का ठप्पा प्रतीत होता है। मुद्रांक सं० ८३ पर 'धर्मकर्तव्य' यह लेख विपरीत किन्तु उभरा हुवा लिखा है। यदि इसे ठप्पा वा सांचा मानें तो इससे बनने वाले मुद्रांक पर लेख सीधा एवं खुदा हुवा आयेगा। ठप्पे (सांचे) से बने मुद्रांकों में सीधा लेख और वह भी खुदा हुवा अभी तक केवल एक ही मुद्रांक में देखने में आया है, वह है 'श्रीकुमार' देखिये मुद्रांक सं० ९७। इस 'धर्म कर्तव्य' विपरीत ठप्पे ? से बना सीधा मुद्रांक अभी तक देखने में नहीं आया। सम्भव है भावी अन्वेषण में कोई मिल जाय। इस विपरीत और उभरे हुये लेख वाले मुद्रांक का स्पष्ट प्रयोजन अभी ज्ञात नहीं हो सका है। हमें 'धर्म कर्तव्य' लेख वाले २७२ मुद्रांक सुनेत से मिले हैं।

---

1. (A) Hoernle has given an account of a number of clay seals from Sonait in Ludhiana, some of which bore impressions from yaudheya coins of class 6. One very large one had as type a bull as on the coins of the Yaudheyas and the legend, Yadheyanam Jayamantradharanam (seal) of the Yaudheyas Councillors of victory.
John Allan : Catalogue of the Cions of Ancient India. Clii. (B.) Proc. A.S.B; 1884. P. P. 137-141. (C) Imperial Unity. P. 162-163.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अस्तु ! तीनों मुद्रांकों पर 'धर्म कर्तव्य' लेख लिखा है। इसका भाव यह है—धर्म करना चाहिये, धर्म का आचरण करना चाहिये। धर्म का अर्थ कर्त्तव्य है अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिये। कर्त्तव्य पालन अथवा धर्माचरण से मानव सुख और शान्ति को प्राप्त होता है। मुनिवर चाणक्य ने लिखा है—'सुखस्य मूलं धर्मः'[1] अर्थात् सुख शान्ति का मूलाधार धर्म है। धर्माचरण वा कर्त्तव्य पालन करने वाले व्यक्ति को विशेष उल्लास, उत्साह और हर्ष होता है। पापी और कर्त्तव्यहीन जन सदैव दुःखी रहता है।

यौधेयगण द्वारा इस प्रकार के धार्मिक मुद्रांक सहस्रों की संख्या में बनवाकर जनता में धर्मप्रचारार्थ बंटवाये जाते थे। जिससे जनता सदा धर्माचरण करती रहे और कभी पापाचरण के द्वारा दुःख सागर में न डूबे।

प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में धर्म का बहुत महत्त्व दर्शाया है। मनुस्मृति में धर्म के लक्षण इस प्रकार बताये हैं—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥—६.९२

इस श्लोक में अहिंसा को मिलाकर महर्षि दयानन्द सरस्वती इसका अर्थ इस प्रकार करते हैं—

धर्म न्याय नाम पक्षपात छोड़कर सत्य ही का आचरण और असत्य का सर्वथा परित्याग रखना। इस धर्म के ग्यारह लक्षण हैं (अहिंसा) किसी से वैर बुद्धि करके उसके अनिष्ट करने में कभी न वर्तना। ( धृतिः ) सुख-दुःख हानि-लाभ में भी व्याकुल होकर धर्म को न छोड़ना किन्तु धैर्य से धर्म ही में स्थिर रहना। (क्षमा) निन्दा-स्तुति मानापमान का सहन करके धर्म ही करना। (दमः) मन को अधर्म से सदा हटाकर धर्म ही में प्रवृत रखना। ( अस्तेयम् ) मन कर्म वचन से अन्याय और अधर्म से पराये द्रव्य का स्वीकार न करना। ( शौचम् ) रागद्वेषादि त्याग से आत्मा और मन को पवित्र और जलादि से शरीर को शुद्ध रखना। (इन्द्रियनिग्रहः) श्रोत्रादि बाह्य इन्द्रियों को अधर्म से हटा के धर्म में ही चलाना। ( धीः ) वेदादिसत्यविद्या ब्रह्मचर्य सत्सङ्ग करने और कुसंग दुर्व्यसन मद्यपानादि त्याग से बुद्धि को सदा बढ़ाते रहना। ( विद्या ) जिससे भूमि से लेके परमेश्वर पर्यन्त का यथार्थ बोध होता है, उस विद्या को प्राप्त होना। ( सत्यम् ) सत्य मानना सत्य बोलना सत्य करना। ( अक्रोधः ) क्रोधादि दोषों को छोड़कर शान्त्यादि गुणों का ग्रहण करना धर्म कहाता है, इसका ग्रहण और अन्याय पक्षपात-सहित आचरण अधर्म, जो कि हिंसा=वैरबुद्धि, अधैर्य, असहन, मन को अधर्म में चलाना, चोरी करना, अपवित्र रहना, इन्द्रियों को न जीतकर अधर्म में चलाना, कुसंग=दुर्व्यसन मद्यपानादि से बुद्धि का नाश करना, अविद्या जो कि अधर्माचरण अज्ञान है उसमें फंसना, असत्य मानना, असत्य बोलना, क्रोधादि दोषों में फंसकर अधर्मी दुष्टाचारी होना, ये ग्यारह अधर्म के लक्षण हैं। इनसे सदा दूर रहना चाहिये। मनुस्मृति में अन्यत्र कहा है—

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥—२.१२
अर्थकामेष्वसक्तानां धर्मज्ञानं विधीयते।
धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ॥—२.१३

श्रुति=वेद, स्मृति=वेदानुकूल आप्त मनुस्मृत्यादि शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार और अपने आत्मा में प्रिय अर्थात् जिसको आत्मा चाहता है जैसा कि सत्य भाषण, ये चार धर्म के साक्षात् लक्षण कहे गये हैं अर्थात् इन्हीं से धर्माधर्म का निश्चय होता है। परन्तु जो द्रव्यों के लोभ और काम अर्थात् विषय सेवन में फँसा हुवा नहीं होता, उसी को धर्म का ज्ञान होता है। जो धर्म को जानने की इच्छा करें उनके लिये वेद ही परम प्रमाण है।

---

१. चाणक्यसूत्र १।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



१. धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत् ॥

२. वृषो हि भगवान् धर्मस्तस्य यः कुरुते ह्यलम् ।
वृषलं तं विदुर्देवास्तस्माद् धर्मं न लोपयेत् ॥

३. एक एव सुहृद् धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः ।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति ॥—मनु० ८.१५—१७

जो पुरुष धर्म का नाश करता है उसी का नाश धर्म कर देता है और जो धर्म की रक्षा करता है, उसकी धर्म भी रक्षा करता है। इसलिये मारा हुवा धर्म कभी हमको न मार डाले, इस भय से धर्म का हनन अर्थात् त्याग कभी न करना चाहिये। जो सुख की वृष्टि करनेहारा सब ऐश्वर्य का दाता धर्म है, उसका जो लोप करता है, उसको विद्वान् लोग वृषल अर्थात् नीच समझते हैं, इसलिये किसी मनुष्य को धर्म का लोप करना उचित नहीं।

इस संसार में एक धर्म ही ऐसा सुहृद् है जो मृत्यु के पश्चात् भी साथ चलता है और सब पदार्थ वा संगी शरीर के नाश के साथ ही नाश को प्राप्त होते हैं अर्थात् सबका संग छूट जाता है परन्तु धर्म का संग नहीं छूटता।

आचार्य वेद पढ़ाकर समीप रहने वाले शिष्य और शिष्याओं को उपदेश करता है :—

**धर्मं चर। धर्मान्न प्रमदितव्यम्।**[1] धर्म का आचरण कर। प्रमाद से धर्म का त्याग मत कर। ऐसे शिष्य-शिष्यायें जीवन भर धर्म का पालन करते थे। महाभारत में कहा है—

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद् धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥—उद्योग पर्व ४.११.१२

मनुष्यों को योग्य है कि काम से अर्थात् झूठ से कामना सिद्ध होने के कारण से वा निन्दा स्तुति आदि के भय से भी धर्म का त्याग कभी न करें और न लोभ से। चाहे झूठ अधर्म से चक्रवर्ती राज्य भी मिलता हो, तथापि धर्म को छोड़कर चक्रवर्ती राज्य को ग्रहण न करें। चाहे भोजन-छादन जलपान आदि की जीविका भी अधर्म से हो सके वा प्राण जाते हों परन्तु जीविका के लिये भी धर्म को कभी न छोड़ें। क्योंकि जीव और धर्म नित्य हैं, तथा सुख-दुःख दोनों अनित्य हैं। अनित्य के लिये नित्य का छोड़ना अतीव दुष्ट कर्म है। इस धर्म का हेतु कि जिस शरीर आदि से धर्म होता है वह भी अनित्य है। धन्य वे मनुष्य हैं जो अनित्य शरीर और सुख-दुःखादि के व्यवहार में वर्तमान होकर नित्य धर्म का त्याग कभी नहीं करते। महर्षि कणाद लिखते हैं—

यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।—वैशेषिक दर्शन १.१.२ ॥

जिसके आचरण करने से संसार में उत्तम सुख और निःश्रेयस अर्थात् मोक्षसुख की प्राप्ति होती है, उसी का नाम धर्म है।

चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः।—मीमांसा १.१.२ ॥

प्रेरणा-वाक्यबोधित क्रिया वा अनुष्ठान धर्म कहलाता है।[2] अर्थात् वेदादि सत्य शास्त्रोक्त के अनुसार जो क्रिया वा आचरण किया जाता है वह धर्म है। ईश्वर ने वेदों में मनुष्यों के लिये जिसके करने की आज्ञा दी है, वही धर्म और जिसके करने की प्रेरणा नहीं की है, वह अधर्म कहाता है। परन्तु वह धर्म अर्थयुक्त अर्थात् अधर्म का आचरण जो अनर्थ है, उससे अलग होता है। इसलिये धर्म का ही जो आचरण करता है, वह मनुष्यों में मनुष्यपन है।[3]

---

१. तैत्तिरीयोपनिषद् प्रथमावल्ली, प्रथमाध्याय, अनुवाक ११, कंडिका १ ॥
२. आचार्य उदयवीर शास्त्री : वैशेषिकदर्शनम् पृष्ठ ४।
३. ऋषि दयानन्द : ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदोक्तधर्मविषय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



महर्षि दयानन्द जी सरस्वती धर्म की व्याख्या इस प्रकार करते हैं—

जो पक्षपात रहित न्यायाचरण सत्यभाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है उसको धर्म और जो पक्षपात सहित अन्यायाचरण मिथ्याभाषणादि ईश्वराज्ञा भंग वेदविरुद्ध है, उसको अधर्म मानता हूँ।[1]

श्री महाराजा यशःकर्णदेव के कौशाम्बी से प्राप्त ताम्रपत्रों[2] में भी धर्म की महत्ता दिखाते हुये कहा है—

वाताभ्रविभ्रममिदं वसुधाधिपत्य—
मापातमात्रमधुरो विषयोपभोगः।
प्राणास्तृणाग्रजलबिन्दुसमा नराणां
धर्मः सखा परमहो परलोकयाने॥

इस पृथ्वी का राज्य ऐसा है जैसे कि वायु के झोंके से छिन्न-भिन्न हुये बादल, अर्थात् अनिश्चित है। कभी किसी के पास है तो कभी किसी के पास। विषयभोग तभी तक सुखदायी प्रतीत होते हैं जब तक उनका भोग किया जाता है। उपभोग के पश्चात् तो पश्चात्ताप ही हाथ लगता है। मनुष्यों के प्राण ऐसे हैं जैसे कि घास के तिनकों के अग्रभाग पर ठहरे हुये ओस के कण हों। वायु का थोड़ा-सा झोंका लगते ही नीचे गिर सकते हैं। इन सब अस्थिर वस्तुओं को देखते हुये सदा धर्म का पालन करना चाहिये, क्योंकि इस शरीर के छूटने के उपरान्त परलोक में=दूसरे शरीर में जाते हुये एक धर्म नामक मित्र ही साथ जाता है, दूसरा कोई नहीं। बन्धु-बान्धव और आत्मीयजन सब यहीं रह जाते हैं। नीति ग्रन्थों में भी कहा है—

धर्मः शर्म परत्र चेह नृणां धर्मोऽन्धकारे रविः,
सर्वापत्प्रशमः क्षमः सुमनसां धर्मो निधिर्मूल्यवान्।
धर्मो बन्धुर्बान्धवे पृथुपते! धर्मः सुहृन्निश्चलः;
संसारोरुमरुस्थले सुरतरुर्नास्त्येव धर्मात्परः॥

इस लोक और परलोक में धर्म ही कल्याण करने वाला है, अज्ञानान्धकार में धर्म सूर्य का काम करता है, मार्गदर्शक है, सब आपत्तियों को शमन करने में समर्थ है, सज्जन मनुष्यों का धर्म ही एक बहुमूल्य खजाना है, बन्धु-बान्धवों के विशाल परिवार के होते हुये भी धर्म ही वास्तव में बन्धु है, धर्म ही एक स्थायी मित्र है। इस संसार रूपी मरुस्थल में धर्म रूपी देववृक्ष ही ऐसा है जिसकी शीतल छाया में शान्ति मिल सकती है। अतः धर्म से बढ़कर और कोई वस्तु ग्राह्य नहीं है, सदा इसी का पालन करना चाहिये।

इसी प्रकार के धर्म का आचरण करने के लिये यौधेयगण इन मुद्रांकों पर उपदेशात्मक वाक्य लिखवा कर प्रचार किया करता था। जिससे जनता धर्माचरण में रत रहे और पाप आदि दुष्कर्मों से सदा दूर रहे।

## ८४. सत्य वतव्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर प्राकृत भाषा में 'सत्य वतव्य' पद उभरा हुवा किन्तु विपरीत लिखा है। इसका संस्कृत रूप 'सत्यं वक्तव्यं' बनता है। सम्भव है यह मुद्रांक बनाने का ठप्पा हो। इससे मुद्रांक सीधा और खुदे हुये अक्षरों वाला बनेगा। इस प्रकार का

---

१. सत्यार्थप्रकाशस्थस्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश सं० ३।
२. ये ताम्रपत्र हमारे संग्रहालय में हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक अभी तक हमारे देखने में नहीं आया। यह मुद्रांक धार्मिक है। इसका अर्थ है—सत्य बोलना चाहिये। जनता में सत्य भाषण का प्रचार करने के लिये यीवेयों द्वारा इस प्रकार के सहस्रों मुद्रांक बनवाकर वितरित किये जाते थे।

वेदादि सत्यशास्त्रों में धर्म की भांति सत्य का भी बहुत महत्त्व दिखाया है।

वेद भगवान् कहता है—

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयस्तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत्॥ —ऋग्वेद ७.१०४.१२॥

उत्तम ज्ञान के अभिलाषी जन के सामने सत्य और असत्य वचन एक दूसरे को दबाते हुए आते हैं। समझदार मनुष्य असत्य को अमङ्गल मान त्याग देता है। उनमें जो सत्य है जो अधिक सरल है, शान्ति का अभिलाषी उसे पसन्द करता है और असत्य को त्याग देता है। यहाँ सत्य की पहचान भी भगवान् ने बता दी। सत्य ऋजु होता है, सरल होता है। असत्य टेढ़ा होता है, कुटिल होता है। इसलिए असत्य को त्यागकर सत्य को ग्रहण करना चाहिये।

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि। —यजुर्वेद १.५॥

परमेश्वर ने सब मनुष्यों को नियम से सेवन करने योग्य धर्म का उपदेश किया है जो कि न्याययुक्त परीक्षा किया हुवा, सत्य लक्षणों से प्रसिद्ध और सबका हितकारी तथा इस लोक अर्थात् संसारी, परलोक अर्थात् मोक्ष सुख का हेतु है, यही सबका आचरण करने योग्य है और उससे विरुद्ध जो कि अधर्म कहाता है, वह किसी को ग्रहण करने योग्य कभी नहीं हो सकता, क्योंकि सर्वत्र उसी का त्याग करना है। इसी प्रकार हमको भी प्रतिज्ञा करनी चाहिये कि हे परमेश्वर! हम लोग वेदों में आपके प्रकाशित किये सत्य धर्म का ही ग्रहण करें तथा हे परमात्मन्! आप हम पर ऐसी कृपा कीजिये कि जिससे हम उक्त सत्य धर्म का पालन करके अर्थ, काम और मोक्ष रूप फलों को सुगमता से प्राप्त हो सकें। जैसे सत्यव्रत के पालने से आप व्रतपति हैं, वैसे ही हम लोग भी आपकी कृपा और अपने पुरुषार्थ से यथाशक्ति सत्यव्रत के पालने वाले हों तथा धर्म करने की इच्छा से अपने सत्कर्म के द्वारा सब सुखों को प्राप्त होकर सब प्राणियों को सुख पहुँचाने वाले हों, ऐसी इच्छा सब मनुष्यों को करनी चाहिये।[1]

इसी मन्त्र का अर्थ शतपथ ब्राह्मण में भी लिखा है—

सत्यमेव देवा अनृतं मनुष्याः। एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यम्।—शतपथ १.१.१.४-५॥

जो मनुष्य सत्य के आचरण रूप व्रत को करते हैं, वे 'देव' कहाते हैं और जो असत्य का आचरण करते हैं उनको 'मनुष्य' कहते हैं। इससे मैं उस सत्य व्रत का आचरण किया चाहता हूँ।[2] अर्थात् मनुष्यों का आचरण दो प्रकार का होता है एक सत्य और दूसरा झूठ का अर्थात् जो पुरुष वाणी, मन और शरीर से सत्य का आचरण करते हैं वे देव कहाते हैं और झूठ का आचरण करने वाले हैं वे असुर, आदि नामों के अधिकारी होते हैं।[3]

सत्येनोत्तभिता भूमिः।—ऋग्वेद १०.८५.१। अथर्ववेद १४.१.१॥

सत्य के आश्रय से यह भूमि टिकी हुई है अथवा सत्यस्वरूप परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से भूमि और सूर्य्य आदि लोकों को धारण किया हुवा है।

---

१. महर्षि दयानन्द सरस्वती : यजुर्वेदभाष्य।
२. महर्षि दयानन्द सरस्वती : ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदोक्तधर्मविषय।
३. महर्षि दयानन्द सरस्वती : यजुर्वेदभाष्य १.५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुण्डकोपनिषद् में लिखा है—

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः ।
येनाक्रामन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम् ॥—३.६.४६ ॥

जो सत्य का आचरण करने वाला है, वही मनुष्य सदा विजय और सुख को प्राप्त होता है, और जो मिथ्या आचरण और झूठे कामों का करने वाला है, वह सदा पराजय और दुःख ही को प्राप्त होता है। विद्वानों का जो मार्ग है, सो भी सत्य के आचरण से ही खुल जाता है। जिस मार्ग से आप्तकाम, धर्मात्मा विद्वान् लोग चलके सत्य सुख को प्राप्त होते हैं, जहाँ ब्रह्म ही का सत्यस्वरूप सुख सदा प्रकाशित होता है, सत्य से ही उस सुख को वे प्राप्त होते हैं, असत्य से कभी नहीं। इससे सत्य धर्म का आचरण और असत्य का त्याग करना सब मनुष्यों को उचित है।

प्राचीन संस्कृत वाङ्मय के किसी ग्रन्थ में कहा है—

न हि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम् ।
न हि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात्सत्यं समाचरेत् ॥

सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बड़ा कोई पाप नहीं। सत्य से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं, अतः सदा और सर्वथा सत्य का ही आचरण करना चाहिये। सत्य और धर्म को पर्यायवाची मानकर बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा है—

तदेतत् क्षत्रस्य क्षत्रं यद्धर्म्मस्तस्माद्धर्मात्परं नास्त्यथो अबलीयान् बलीयांसमाशंसते धर्म्मेण यथा राज्ञा, एवं यो वै स धर्मः सत्यं वै तत्तस्मात् सत्यं वदन्तमाहुर्धर्म्मं वदतीति धर्म्मं वा वदन्तं सत्यं वदति ।—१.४.१४ ॥

वह यह धर्म बलों का बल है, इसलिये धर्म से बढ़कर कुछ नहीं। इसी धर्म के द्वारा निर्बल भी राजा की भाँति बलवानों पर शासन किया करता है। निश्चय से जो धर्म है वही सत्य है। इसीलिये सत्य बोलने वाले को कहते हैं कि यह धर्म की बात कहता है और धर्म की बात कहने वाले को कहते हैं कि यह सत्य की बात कहता है। अतः सत्य और धर्म समानार्थक हैं। सत्यता के अतिरिक्त धर्म और कुछ नहीं है। महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं[1]—जो वेदोक्त न्याय से युक्त होके, पक्षपात को छोड़ के सत्य ही का सदा आचरण और असत्य का त्याग करना है, तथा जो सबका उपकार करने वाला और जिसका फल इस जन्म और परजन्म में आनन्द है, उसी को धर्म और उससे उल्टा करने को अधर्म कहते हैं।

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमनुशास्ति । सत्यं वद । सत्यान्नप्रमदितव्यम् —तैत्तिरीय आरण्यक प्रपाठक ७.११.१ ॥

जो आचार्य अर्थात् विद्या और शिक्षा का देने वाला है, वह विद्या पढ़ने के समय और जब तक न पढ़ चुके तब तक अपने पुत्र और शिष्यों को इस प्रकार उपदेश करे कि हे पुत्रो वा शिष्य लोगो ! तुम सदा सत्य ही बोला करो तथा सत्य धर्म को कभी मत छोड़ो। सत्य को उत्तम इसलिए कहते हैं कि सत्य जो ब्रह्म है, उससे सब लोगों का प्रकाश और वायु आदि पदार्थों का रक्षण होता है। सत्य से ही सब व्यवहारों में प्रतिष्ठा और परब्रह्म को प्राप्त होके मुक्ति सुख भी मिलता है, तथा सत्पुरुषों में सत्याचरण ही सत्पुरुषपन है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज का चौथा और पांचवां नियम इस प्रकार बनाया था—

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।

---

१. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदोक्तधर्मविषय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



महर्षि पतञ्जलि ने अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इन्हें महाव्रत कहा है अर्थात् इनके पालन में जाति, देश, काल और समय का कोई व्यवधान नहीं है। सब स्थानों पर, सभी परिस्थितियों में और सर्वदा इनका पालन अवश्य करना चाहिये। इन यमों के न करने की कभी छूट नहीं दी जा सकती।[1]

ऐसे सत्य का आचरण करने से जो फल मिलता है उसके लिये महर्षि पतञ्जलि लिखते हैं—

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम् —योगदर्शन १.२.३६ ॥

सत्याचरण का ठीक-ठीक फल यह है कि जब मनुष्य निश्चय करके केवल सत्य ही मानता, बोलता और करता है, तब वह जो-जो योग्य काम करता और करना चाहता है, वे वे सब सफल हो जाते हैं।

स्वधया परिहिता श्रद्धया पर्य्यूढा दीक्षया गुप्ता यज्ञे प्रतिष्ठिता लोको निधनम् —अथर्ववेद १२.५.३ ॥

सब प्रकार से मनुष्य लोग स्वधा अर्थात् अपने ही पदार्थों को धारण करें। इस अमृत रूप व्यवहार से सदा युक्त हों। (श्रद्धया पर्य्यूढाः) सब मनुष्य सत्य व्यवहार पर अत्यन्त विश्वास को प्राप्त हों। क्योंकि जो सत्य है वही विश्वास का मूल तथा सत्य का आचरण ही उसका फल और स्वरूप है, असत्य कभी नहीं। (दीक्षया गुप्ताः) विद्वानों की सत्य शिक्षा से रक्षा को प्राप्त हों और मनुष्य आदि प्राणियों की रक्षा में परम पुरुषार्थ करें। ( यज्ञे प्रतिष्ठिताः ) यज्ञ जो सब में व्यापक अर्थात् परमेश्वर अथवा सब संसार का उपकार करने वाला अश्वमेधादि यज्ञ, अथवा जो शिल्प विद्या सिद्ध करके उपकार लेना जो यज्ञ है, इस तीन प्रकार के यज्ञ में सब मनुष्य यथावत् प्रवृत्ति करें (लोको नि०) जब तक तुम लोग जीते रहो, तब तक सदा सत्य कर्म में ही पुरुषार्थ करते रहो, किन्तु इसमें आलस्य कभी मत करो। ईश्वर का यह उपदेश सब मनुष्यों के लिये हैं।[2]

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः ॥ मनुस्मृति ४.१३८ ॥

मनुष्य सदैव सत्य बोलें और दूसरे को कल्याणकारक उपदेश करें। काणे को काणा और मूर्ख को मूर्ख आदि अप्रिय वचन उनके सम्मुख कभी न बोलें और जिस मिथ्या भाषण से दूसरा प्रसन्न होता हो, उसको भी न बोले, यह सनातन धर्म है।

जब रावण ब्राह्मण का छद्मवेश बनाकर सीता के पास आया, उस समय सीता अपने वनागमन का वृत्तान्त सुनाती हुई, राम का वर्णन करते हुये कहती है कि रामचन्द्र जी ने माता कैकेयी के वचन को नहीं टाला, क्योंकिः—

दद्यान्न प्रतिगृह्णीयात् सत्यं ब्रूयान्न चानृतम्।
एतद् ब्राह्मण रामस्य ध्रुवं व्रतमनुत्तमम् ॥ वाल्मीकीय रामायण अरण्यकाण्ड २४.१८ ॥

सीता ने कहा—हे ब्राह्मण ! (रावण ने सीता को धोखा देने के लिये ब्राह्मण का परिवेश धारण किया हुवा था) मेरे पति श्रीराम दान देते हैं, लेते नहीं, वे सदा सत्य बोलते हैं, असत्य नहीं। श्रीराम का यह अटल एवं सर्वोत्तम व्रत है। इसी भांति रामायण में राम को अनेक स्थानों पर सर्वगुणोपेतः=अनेक प्रशंसनीय गुणयुक्त, धर्मज्ञ, दृढ़व्रत, धर्म इव सत्ये स्थितः=धर्म की भांति सत्य का पालन करने वाला, सत्यवाक् आदि श्रेष्ठ विशेषणों से स्मरण किया गया है। इससे राम का सत्यप्रिय होना स्पष्ट है।

---

१. जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम् —योगदर्शनम् १.२.३१।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती : ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदोक्तधर्म विषय।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वेद, शास्त्र, स्मृति और ऋषि मुनियों द्वारा वर्णित इसी सत्य का प्रचार-प्रसार करने के लिये यौधेय लोग 'सत्यं वक्तव्यं' लेख वाले धार्मिक मुद्रांक बनवाकर जनता में वितरण किया करते थे। ऐसे मुद्रांकों से उनकी धार्मिकता पर भी प्रकाश पड़ता है। यौधेय लोग वीर तो स्वभाव से थे ही, साथ-साथ धार्मिक, सत्यवादी और दानी भी थे। ये सभी गुण इनके मुद्रांकों से सिद्ध हैं।

## ८५-८६. दातव्यं भोतव्यं : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

मुद्रांक सं० ८५ पर 'दातव्य भोतव्यं' यह लेख प्राकृत भाषा में सीधा लिखा है। इसका संस्कृत रूप 'दातव्यं भोक्तव्यम्' बनता है। सं० ८६ के मुद्रांक पर उभरे हुये और विपरीत अक्षरों में 'दातव्यं भोतव्यं' लिखा है। पूर्व मुद्रांक में 'दातव्य' तथा इसमें 'दातव्यं' लेख है। अनुस्वार मात्र का भेद है। विपरीत और उभरे हुए अक्षरों वाला मुद्रांक किस विशेष प्रयोजन से बनाया गया है, यह विचारणीय है। यदि इससे सीधे अक्षरों वाला मुद्रांक बनाया जायेगा तो उसमें अक्षर खुदे हुये आयेंगे, यह प्रकार मुद्रांकों में प्रायः देखने में नहीं आता। सम्भव है धातु के मुद्रांक पर की गई खुदाई की श्रेष्ठता को जांचने के लिये यह छाप लगाकर देखी गई होगी। 'दातव्यं भोतव्यं' लेख वाले हमें ६ मुद्रांक प्राप्त हुये हैं।

'दातव्यं भोक्तव्यं' का अर्थ है दान करना चाहिये और भोग करना चाहिये अर्थात् पहले दान करना चाहिये और बचे हुए का=यज्ञ शेष का अपने लिये भोग करना चाहिये। वेद में कहा है—

ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥ यजुर्वेद ४०.१॥

हे मनुष्य! जो कुछ इस संसार में जगत् है, उस सब में व्याप्त होकर जो नियन्ता है, वह ईश्वर कहाता है। उससे डर कर तू अन्याय से किसी के धन की आकांक्षा मत कर। उस अन्याय के त्याग और न्यायाचरण रूप धर्म से अपने आत्मा को भोग। भाव यह है कि पराये धन का लोभ न करके उस ईश्वर द्वारा अपने लिये दिया जो धन है उसी का भोग करो और उसी में से दान देना चाहिये। 'दातव्यं भोक्तव्यम्' का दूसरा अर्थ यह भी हो सकता है—'दातव्यं (कीदृग्, यद्) भोक्तव्यम् अथवा भोक्तव्यम् (एव) दातव्यम्' उपयोग में लाने योग्य वस्तु का ही दान करना चाहिये। ऐसी चीज का ही दान करना चाहिये, जिसे हम भी प्रयोग कर सकें। अर्थात् गला, सड़ा, बासी भोजन, फटे-पुराने और गन्दे कपड़े तथा टूटी-फूटी वस्तुओं का दान नहीं होता। जिस वस्तु को हमने व्यर्थ मान लिया हो उसे दान करके पुण्य का उपार्जन नहीं किया जा सकता।

वैदिक वाङ्मय में दान देने का अतिशय महत्त्व दिखाया गया है। दान न देने वाले को अराति=समाज का शत्रु बताया गया है। तैत्तिरीयोपनिषद् में लिखा है—

ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणास्तेषां त्वयासनेन प्रश्वसितव्यम्।
श्रद्धया देयम्, अश्रद्धया देयम्, श्रिया देयम्, ह्रिया देयम् भिया देयम्, संविदा देयम्।—१.११.३॥

जो कोई हमारे मध्य में उत्तम विद्वान् धर्मात्मा ब्राह्मण हैं, उन्हीं के समीप बैठ और उन्हीं का विश्वास किया कर। श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना, शोभा से देना, लज्जा से देना, भय से देना और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिये। भाव यह है कि प्रत्येक अवस्था में दान करना चाहिये। जो मानव दान न देकर केवल अकेला खाता है, अकेला भोग करता है, वह पाप खाता है। वेद कहता है—

मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्स तस्य।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी॥ ऋग्वेद १०.११७.६॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जो धनवान् होता हुवा भी श्रेष्ठ मन वाले धर्मात्मा पुरुष की तथा अपने मित्र की भी सहायता नहीं करता, मैं सच कहता हूँ कि ऐसे धनी का धन निश्चय से उसकी मौत ही है। केवल अकेला खाने वाला पाप को खाता है, पापी बनता है। ऐसा दुष्ट बुद्धि वाला पुरुष अन्न को व्यर्थ ही प्राप्त करता है।

दुष्टों के पास भोग बढ़ने से उनका ही नाश होता है, इसलिये सज्जनों की सहायता अवश्य करनी चाहिये। दूसरों को दान न देते हुये जो स्वयं ही भोग भोगता है, उसका वह अन्न सच्चा अन्न नहीं है, परन्तु वह अन्न सचमुच उसके नाश का हेतु है। इसीलिये असमर्थ, अशक्त के लिये अन्न, धनादि का दान अवश्य करना चाहिये और दान करने के पश्चात् ही अन्न का भोग करना चाहिये।

वेद कहता है—

न स सखा यो न ददाति सख्ये सचाभुवे सचमानाय पित्वः।
अपास्मात्प्रेयान्न तदोको अस्ति पृणन्तमन्यमरणं चिदिच्छेत् ॥ ऋग्वेद १०.११७.४ ॥

अन्न की इच्छा करने वाले समान विचार के मित्र को भी जो नहीं देता, वह सच्चा मित्र नहीं है। ऐसे मनुष्य से बहुत दूर चला जाना चाहिए, क्योंकि वह घर मित्र का घर नहीं है। दान देने वाले और सरलता से आश्रय देने वाले किसी दूसरे मित्र की इच्छा करनी चाहिये। वेद के अनुसार सच्चा मित्र वही है 'सखा सखायमतरद् विषूचीः'—ऋ० ७.१८.६ जो मित्र अपने मित्र को विषमावस्था से बचाता है, वही वस्तुतः मित्र है। महर्षि दयानन्द जी ने कहा है—

अन्न जल का दान कोई भी भूखा प्यासा मिले, उसे दे देना चाहिये। ऐसा दान पहले अपने दीन-दुःखी पड़ौसी को देना चाहिये। पास के रहने वाले का दारिद्र्य दूर करने में सच्ची अनुकम्पा और उदारता को अवकाश मिलता है। इससे वाह-वाह नहीं मिलती, इसलिये अभिमान को भी अवकाश नहीं मिलता। समीपस्थ दुःखी और पीड़ित को अवलोकन करके ही दया, अनुकम्पा और सहानुभूति आदि हार्दिक भाव प्रकट होते हैं। जो समीपवर्त्ती जन पर तो दया, अनुकम्पा और सहानुभूति आदि भावों को नहीं दिखलाता, किन्तु दूरस्थ मनुष्यों के लिये उनका प्रकाश करता है, उसे दयावान् अनुकम्पाकर्त्ता और सहानुभूतिप्रकाशक नहीं कह सकते। ऐसे मनुष्यों का दान बाहर का दिखावा और ऊपर का आडम्बर है। दान आदि वृत्तियों का विकास दीपक की भांति समीप से दूर तक फैलना उचित है।[1]

वेद कहता है—सर्मी पणेरजति भोजनं मुषे (ऋ० ५.३४.७) धर्म्मकार्य में भी व्यापार बुद्धि रखने वाले पणि=बनिये के भोजन की गति चोरी है अर्थात् ऐसे व्यक्ति का भोजन, अन्न, स्वर्णादि चोरों द्वारा चुरा लिया जाता है। महाराज भर्तृहरि जी लिखते हैं—

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥ नीतिशतकम् ४३ ॥[2]

दान देना, भोग करना और नष्ट हो जाना धन की ये तीन गतियाँ होती हैं। जो व्यक्ति न दान करता है और न ही भोग करता है उसके धन की तीसरी गति हो जाती है अर्थात् ऐसे व्यक्ति का धन नष्ट हो जाता है।

दान के विषय में महर्षि दयानन्द जी लिखते हैं—

---

१. स्वामी वेदानन्द तीर्थ : स्वाध्यायसन्दोह, मन्त्र सं० २६१।
२. पञ्चतन्त्र, मित्रसम्प्राप्ति श्लोक १५७।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



सुपात्रों को परोपकारियों को परोपकारार्थ सोना, चांदी, हीरा, मोती, माणिक, अन्न, जल, स्थान इत्यादि दान अवश्य करना उचित है। किन्तु कुपात्रों को कभी न देना चाहिये।····· जो छली-कपटी स्वार्थी विषयी, काम क्रोध लोभ मोह से युक्त, परहानि करने वाले, लम्पटी, मिथ्यावादी, अविद्वान्, कुसङ्गी, आलसी, जो कोई दाता हो उसके पास बारम्बार मांगना, धरना देना, ना किये पश्चात् भी हठता से मांगते ही जाना, सन्तोष न होना, जो न दे उसकी निन्दा करना, शाप और गाली प्रदानादि करना। अनेक वार जो सेवा करे और एक वार न करे, तो उसका शत्रु बन जाना। ऊपर से साधु का वेश बना लोगों को बहका कर ठगना और अपने पास पदार्थ हो तो भी मेरे पास कुछ भी नहीं है कहना। सबको फुसला-फुसलूकर स्वार्थ सिद्ध करना। रात-दिन भीख मांगने ही में प्रवृत्त रहना। निमन्त्रण दिये पर यथेष्ट भंगादि मादक द्रव्य [खा-पीकर बहुत-सा पराया पदार्थ खाना। पुनः उन्मत्त होकर प्रमादी होना। सत्य का विरोध और झूठ मार्ग में अपने प्रयोजनार्थ चलना। वैसे ही अपने चेलों को केवल अपनी ही सेवा करने का उपदेश करना, अन्य योग्य पुरुषों की सेवा करने का नहीं। सद्विद्यादि प्रवृत्ति के विरोधी। जगत् के व्यवहार अर्थात् स्त्री-पुरुष माता-पिता सन्तान राजा-प्रजा इष्ट मित्रों में अप्रीति कराना कि ये सब असत्य हैं, और जगत् भी मिथ्या है इत्यादि दुष्ट उपदेश करना आदि कुपात्रों के लक्षण हैं।

और जो ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, वेदादि विद्या के पढ़ने पढ़ाने हारे सुशील, सत्यवादी, परोपकार प्रिय, पुरुषार्थी, उदार, विद्या धर्म की निरन्तर उन्नति करने हारे। धर्मात्मा, शान्त, निन्दा-स्तुति में हर्ष शोक रहित। निर्भय, उत्साही, योगी, ज्ञानी, सृष्टिक्रम, वेदाज्ञा ईश्वर के गुण-कर्म-स्वभावानुकूल वर्त्तमान करने हारे। न्याय की रीति युक्त, पक्षपात रहित, सत्योपदेश और सत्यशास्त्रों के पढ़ने-पढ़ाने हारे के परीक्षक। किसी की लल्ली-पत्तो न करें, प्रश्नों के यथार्थ समाधान कर्त्ता। अपने आत्मा के तुल्य अन्य का भी सुख-दुःख हानि-लाभ समझने वाले। अविद्यादि क्लेश-हठ दुराग्रहाभिमान रहित। अमृत के समान अपमान और विष के समान मान को समझने वाले। सन्तोषी—जो कोई प्रीति से जितना देवे उतने ही से प्रसन्न। एक वार आपत्काल में मांगे भी न देने वा वर्जने पर भी दुःख वा बुरी चेष्टा न करना, वहां से झट लौट जाना, उसकी निन्दा न करना। सुखी पुरुषों के साथ मित्रता, दुःखियों पर करुणा, पुण्यात्माओं से आनन्द और पापियों से उपेक्षा अर्थात् रागद्वेष रहित रहना। सत्यमानी, सत्यवादी, सत्यकारी निष्कपट, ईर्ष्या द्वेष रहित, गम्भीराशय, सत्पुरुष, धर्म से युक्त और सर्वथा दुष्टाचार से रहित। अपने तन, मन, धन को परोपकार करने में लगाने वाले। पराये सुख के लिये अपने प्राणों को भी समर्पित कर्त्ता, इत्यादि शुभ लक्षण युक्त सुपात्र होते हैं। परन्तु दुर्भिक्षादि आपत्काल में अन्न, जल, वस्त्र और औषधि पथ्य स्थान के अधिकारी सब प्राणीमात्र हो सकते हैं।

उत्तम दाता उसको कहते हैं जो देशकाल पात्र को जानकर सत्यविद्या धर्म की उन्नतिरूप परोपकारार्थ देवे। मध्यम वह है जो कीर्ति वा स्वार्थ के लिये दान करे। नीच वह है कि अपना वा पराया कुछ उपकार न कर सके, किन्तु वेश्यागमनादि वा भांड भाटों आदि को देवे। देते समय तिरस्कार अपमानादि भी कुचेष्टा करे। पात्र कुपात्र का कुछ भी भेद न जाने। किन्तु 'सब अन्न बारह पसेरी' बेचने वालों के समान विवाद-लड़ाई, दूसरे धर्मात्मा को दुःख देकर सुखी होने के लिये दिया करे, वह अधम दाता है।[1]

महाराजा यशःकर्णदेव के कौशाम्बी से प्राप्त ताम्रपत्रों में भी दान की बहुत प्रशंसा लिखी है। इस प्रकार उपर्युक्त प्रमाणों के विवेचन से स्पष्ट है कि दान का बहुत महत्त्व है। पात्र-कुपात्र की परीक्षा करके ही दान करना चाहिये। पुनः शेष का अपने लिये भोग करें।

इसी प्रकार के सात्त्विक दान का प्रचार करने के लिये ही पुराकाल में यौधेय लोग 'दातव्यं भोक्तव्यं' लेख वाले मुद्रांक बनवाकर प्रजा में बंटवाया करते थे। ऐसा करने से सारी प्रजा सुख पूर्वक रहती थी। किसी वस्तु की न्यूनता के कारण कोई दुःखी नहीं रहता था।

---

१. सत्यार्थप्रकाश : एकादशसमुल्लास।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## ८७. सिद्धिरस्तु : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर उभरे हुये विपरीत अक्षरों में 'सिद्धिरस्तु' यह लेख लिखा है। अभी हमें सुनेत से एक ताम्र मुद्रांक मिला है[1] उस पर सीधे अक्षरों में 'सिद्धिरस्तु' यह लेख खुदा हुवा है। इसी ताम्र मुद्रांक से यह उपर्युक्त विपरीत लेख वाला मृन्मुद्रांक बनाया गया है। 'सिद्धिरस्तु' इस वाक्य का अर्थ है -- सिद्धि होवे। गुरुजनों अथवा वृद्धजनों की ओर से यह आशीर्वचन दिया हुवा है कि आपको कार्य में सफलता मिले, आपका कार्य सिद्ध हो। किसी व्यक्ति को कार्य विशेष के लिये भेजते समय भी यह आशीर्वाद वाला मुद्रांक देते होंगे। अथवा धार्मिक संस्थान या मन्दिर की ओर से धर्मगुरु, पुरोहित इन्हें अपने शिष्यों वा भक्तों को उपहार रूप में देते होंगे। यह भी सम्भव है कि राज्य के विशेष अधिकारी शासन के किसी कार्य सिद्धि की स्वीकृति हेतु भी इस मुद्रांक को आदेश पत्रों पर लगाते हों कि अमुक कार्य कर दिया जाये। अमुक व्यक्ति के कार्य को सिद्ध कर दिया जाये। इस प्रकार यह मुद्रांक धार्मिक तथा शासकीय उभय प्रकार का हो सकता है।

## ८८. गोक्षुरक : समय २६०० वर्ष पूर्व (२४७४ कलि संवत्)

मिट्टी के लम्बे और छिद्रयुक्त चपटे तथा चतुष्कोण मणके पर 'गोक्षुरक' यह लेख लिखा है। संस्कृत भाषा में गोक्षुरक का अर्थ गोखरू होता है। यह ओषधि विशेष का नाम है। बहुत अंकुश (कांटों) वाले शस्त्र विशेष को भी गोक्षुरक कहते हैं। यहाँ सम्भवतः किसी व्यक्ति का भी नाम हो। इसका स्पष्ट प्रयोजन अभी अन्वेषणीय है।

## ८९. श्रीनन्दशिरिस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

अकीक के इस मुद्रांक पर 'श्री नन्दशिरिस्य' यह लेख उभार कर लिखा गया है। इस लेख के उभारने में बहुत बुद्धिमत्ता से कार्य लिया गया है। आधे श्वेत और आधे लाल रंग का एक अकीक प्रस्तर लेकर उसके श्वेत भाग को तराश-तराश कर केवल उतना ही अंश शेष रक्खा गया है, जिससे कि नीचे के लाल अकीक पर श्वेत अकीक से उभरा हुवा 'श्री नन्दशिरिस्य' लेख स्पष्ट दिखाई दे सके। इस प्रकार का लेख उभारने में अति सावधानी और परिश्रम की आवश्यकता है। इस प्रकार का मुद्रांक अभी तक के ज्ञात मुद्रांकों में अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिला है। अपने रूप का यह अद्भुत और अभी तक एकमात्र ही मुद्रांक प्राप्त हुवा है।

'श्रीनन्दशिरिस्य' प्राकृत भाषा के इस शब्द का संस्कृत रूप 'श्रीनन्दशिरेः' अथवा 'श्रीनन्दश्रियः' बनता है। यह नन्दशिरि यौधेयगणराज्य का कोई विशेष व्यक्ति रहा होगा। यह मुद्रांक अंगूठी में जड़ा हुवा था। इसका रूप अंगूठी के नग के सदृश है। नाम से पूर्व श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है।

श्री का प्रयोग प्राचीन वैदिक साहित्य में बहुधा किया गया है। इसके लिये पं० राजवीर जी शास्त्री स्नातक गुरुकुल झज्जर ने इस प्रकार लिखा है—

वैदिक तथा लौकिक संस्कृत साहित्य में जितना सन्मान 'श्री' शब्द को मिला है, उतना किसी अन्य को नहीं मिला है। इसका प्रचुर प्रयोग देखकर वैयाकरणों का यह वाक्य अनायास ही याद आ जाता है— एकः शब्दः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुग्भवति।' भारतीय जन-मानस में इसका ऐसा प्रभाव है कि इसके बिना किसी कार्य का प्रारम्भ ही नहीं होता। सरस्वती के उपासक 'श्री' का प्रयोग सर्वप्रथम करके अपने कार्यों को निर्विघ्न-पूर्ण होने की आशा करते हैं। मंगलाचरण के लिये 'श्री' शब्द ने एकमात्र आधिपत्य स्थापित कर लिया है। शिष्ट आर्यजन पारस्परिक व्यवहार में श्री का प्रयोग करके एक दूसरे का हृदय से सन्मान करते हैं। भारतीय अपने गुरुजनों का सम्बोधन श्री शब्द से करके उनको आदर प्रदान करते हैं।

---

१. यह ताम्रमुद्रांक पं० गंगाविष्णु जी शर्मा के सौजन्य से मिला है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya-Samaj Foundation Chennai and eGangotri



ऐसे विश्व-विख्यात 'श्री' शब्द का प्रयोग भारतीय प्राचीन शासकों के लिये भी प्रचुर रूप से किया गया है। वर्तमान में उपलब्ध होने वाले प्राचीन मुद्रांकों पर 'श्री' शब्द का प्रयोग अत्यधिक हुआ है। प्राचीन-मुद्रांकों पर इसका प्रयोग दो रूपों में मिलता है—(१) प्राचीन शासकों के नाम के साथ समास करके जो 'श्री' शब्द का प्रयोग किया है, वह रेफान्त नहीं है। क्योंकि संस्कृत भाषा में व्याकरण के नियमानुसार समास में विभक्ति का लुक् ( अदर्शन ) हो जाता है। (२) 'श्री' शब्द का दूसरा प्रयोग रेफान्त वाला है। रेफान्त प्रयोग का अभिप्राय है—विभक्त्यन्त रूप। श्री शब्द से स्त्री प्रत्ययान्त न होने से विभक्ति को लोप नहीं हो सकता है। अतः 'श्री' शब्द स्वयं ईकारान्त है, रेफान्त नहीं।

व्याकरण के अनुसार 'श्री' शब्द की सिद्धि इस प्रकार है—'श्रिञ् सेवायाम्' (भ्वा.) धातु से 'क्विप् वचिप्रच्छायतस्तुकट-प्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणं च' ( वार्तिक सूत्र ३।२।१७८ ) से कर्तृ-वाच्य में 'तच्छील, तद्धर्म, तत्साधुकारी' इन तीन कर्तृ-विशिष्ट अर्थों में 'क्विप्' प्रत्यय और दीर्घ होता है। इस प्रकार 'श्री' का अर्थ होगा—सेवा करने का जिसका स्वभाव है, जिसका फल की इच्छा न रखते हुए भी सेवा का शील है; और जो मानव मात्र की सेवा करने के काम में सर्वश्रेष्ठ है, ऐसा महामानव 'श्री' शब्द से विशेषित किया जा सकता है।

उणादिकोष २।५७ में भी 'श्री' शब्द की सिद्धि श्रिञ् सेवायाम् धातु से क्विप् प्रत्यय करके की है और धातु को दीर्घादेश किया है। महर्षि दयानन्द ने उणादि कोष में श्री का अर्थ किया है—'श्रयति श्रीयते वा सा श्रीः। ईश्वररचना शोभा वा॥

वैदिक मन्त्रों में 'श्री' का प्रयोग और महर्षि दयानन्द कृत अर्थ— वैदिक मन्त्रों में 'श्री' का प्रयोग अनेक स्थानों पर हुआ है, वेदमन्त्रों में इसका क्या अर्थ है, यह जानने के लिये वर्तमान युग के वैदिक महान् विद्वान महर्षि दयानन्द कृत कुछ अर्थों को यहाँ दिखाया जाता है।

(१) "श्रीश्च धर्मश्च" अथर्व० कां० १२ अनु० ५। मं० ७।
इसका अर्थ है=श्रीश्च=सम्राड्राज्य श्रीः अर्थात् चक्रवर्ती राज्य की सामग्री। (ऋग्वेदा० भा० भू० वेदोक्त धर्म विषय)

(२) "श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च।" यजु० अ० ३१ मं० २२॥
इसका अर्थ है—श्रीः=सर्वा शोभा अर्थात् अनन्त शोभा रूप श्री॥ ( ऋग्वेदादि० भा० भू० सृष्टि विद्या विषय )

(३) श्रिये=विद्याशिक्षाराज्यधनप्राप्तये ( ऋ० १।८८।३ )

(४) श्रिये=विद्याराज्यलक्ष्मीप्राप्तये ( ऋ० १।९२।६ )

(५) श्रिया=शुभलक्षणया लक्ष्म्या ( ऋ० १।११६।१७ )

(६) श्रिया=लक्ष्म्या शोभया विद्यया सेवया वा ( ऋ० १।११७।१३ )

(७) श्रियम्=विद्याराज्यैश्वर्यशोभाम् ( ऋ० १।७२।१० )

(८) श्रियम्=विद्याराजलक्ष्मीम् ( ऋ० १।४।६।१४ )

(९) श्रियम्=लक्ष्मीं विद्यां भोगान् धनं वा ( ऋ० १।४३।७ )

(१०) श्रियः=चक्रवर्त्यादिलक्ष्मीः ( ऋ० १।८५।२ )

(११) श्रिये=लक्ष्मीप्राप्तये ( ऋ० ४।१०।५ )

(१२) श्रिये=सेवायै धनाय वा ( ऋ० ४।२३।६ )

(१३) श्रियः=शोभा धनानि वा ( ऋ० ३।१।५ )

(१४) श्रियः=शोभाः सम्पत्तयः ( ऋ० ३।४४।२ )

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(१५) श्रिया=शोभायुक्तया राजलक्ष्म्या वेदीप्यमानया रारया वा (यजु० ९।८)
(१६) श्रिये=शोभार्थं (यजु० १२।२५)
(१७) श्रियम्=राजलक्ष्मीम् ( यजु० २०।७२)
(१८) श्रियम्—शोभायुक्तम् ( यजु० ३३।२१)

## ब्राह्मण ग्रन्थों में 'श्री' का अर्थ

(१) इयं ( पृथिवी) वै श्रीः ( ऐ० ८।५)
(२) श्रीर्वै पशवः (ता० १३।२।२)
(३) श्रीर्वै स्वरः ( श० ११।४।२।१०)
(४) श्रीर्वै राष्ट्रम् (श० ६।७।३।७)
(५) श्रीर्वै राष्ट्रस्य भारः (श० १३।२।९।३ )
(६) श्रीर्वै राष्ट्रस्याग्रम् ( श० १३।२।९।७)
(७) श्रीर्वै वरुणः (कौ० १८।९)
(८) श्रीर्वै विराड् यशोऽन्नाद्यम् (गो० पू० ५।२०)
(९) अन्नमु श्रीः (श० ८।६।२।१)
(१०) श्रीर्वै राष्ट्रस्य मध्यम् ( श० १३।२।९)

उपर्युक्त ब्राह्मण ग्रन्थों में किये गये 'श्री' शब्द के अर्थ को बताने वाले कुछ वाक्यों की महर्षि दयानन्द ने इस प्रकार व्याख्या की है—(श्री वै राष्ट्रम्) या विद्याद्युत्तमगुणरूपा नीतिः सैव राष्ट्रं भवति।" (श्रीर्वै राष्ट्रस्य भारः) सैव राज्यश्री राष्ट्रस्य संभारो भवति। (श्रीर्वै राष्ट्रस्य मध्यम्) राष्ट्रस्य मध्यभागोऽपि श्रीरेवास्ति॥ (ऋग्वेदादि. भा० भू० राजप्रजाधर्मविषय) यहाँ महर्षि दयानन्द ने 'श्री' शब्द के अर्थों को इस प्रकार खोला है—"श्री जो लक्ष्मी है, वही राज्य का स्वरूप सामग्री और मध्य है तथा राज्य का जो रक्षण करना है वही शोभा अर्थात् श्रेष्ठ भाग कहाता है।"

उपर्युक्त विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि जिन मुद्रांकों पर 'श्री' का प्रयोग विशेषण के रूप में हुआ है, वहाँ उसका अर्थ होगा— 'श्रयति सेवते सः श्रीः' अर्थात् जो सेवा करता है, अथवा जिसका सेवा करने का निष्काम स्वभाव है, वह पुरुष 'श्री' शब्द से विशेषित किया है। और जब 'श्री' का अर्थ 'श्रीयते-सेव्यते या सा श्रीः' इस विग्रह से लक्ष्मी, सम्राट् राज्य श्री, ईश्वर रचना, विद्या, शोभा, राष्ट्र, पृथिवी आदि होता है, तब भी श्री का प्रयोग मत्वर्थ में 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्याः' (अ०४।४।१२८) वार्त्तिक सूत्र से हुए प्रत्यय का लुक् (अदर्शन) करके विशेषण के रूप में होता है। तब 'श्री' का अर्थ होगा— 'श्रीरस्यास्मिन् वास्ति सः' जो राज्यलक्ष्मी आदि से युक्त है उसे श्री शब्द से विशेषित किया गया मानना चाहिये।

और जिन मुद्रांकों पर 'श्रीः' ऐसा असमस्त प्रयोग है, वहाँ उसका अर्थ 'श्रीयते सेव्यते यः श्रीः' इस व्युत्पत्ति के अनुसार जिसका सेवन किया जाय, उस सम्राट् राज्य लक्ष्मी से है। अथवा 'श्रीर्वै स्वरः' इस ब्राह्मण वचन के अनुसार 'श्री' का अर्थ उद्घोष भी है, जो इस बात को बता रहा है कि इस मुद्रांक वाले राजा वा अधिकारी का यहां शासन था।

वैसे मोहरों की अपेक्षा सिक्कों पर श्री शब्द का प्रयोग बहुत कम मिलता है। श्रीर् का तो प्रयोग कहीं देखने में ही नहीं आया। इससे सिद्ध है कि सिक्कों में श्री आदर सूचक है और मुद्रांकों (मोहरों) में श्रीर् का प्रयोग मुद्रांक (मोहर) का वाचक है। आदर के लिये श्रीर् का प्रयोग होता तो सिक्कों पर भी मिलना चाहिये था। अतः सिद्ध है कि केवल श्री शब्द सम्मानार्थ है और रेफान्त श्रीर् मोहर के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक सं० ९३ से ९६, २२९ तथा ३०० पर श्रीरामिलस्य, श्रीशुद्धिलस्य, श्रीदविलस्य, श्रीभजिल, ब्रह्मिलस्य और महिलस नाम लिखे हैं। इन नामों में संस्कृत व्याकरण के अनुसार उत्तरपद का लोप करके इलच् प्रत्यय किया हुवा है। इसके लिये पाणिनि मुनि ने अष्टाध्यायी में निम्नलिखित सूत्रों का विधान किया है—

अनुकम्पायाम् ॥ नीतौ च तद्युक्तात् घनिलचौ च ॥ ५. ३. ७६ से ७८

बह्वचो मनुष्यनाम्नष्ठज्वा ॥ ५. ३. ७९ ॥ ठाजादूर्ध्वद्वितीयादचः ५. ३.८३ ।

अनेक अचों से युक्त मनुष्य नाम के वाचक प्रातिपदिक से विकल्प से ठच् प्रत्यय होता है। पक्ष में घन् और इलच् प्रत्यय भी हो जाते हैं। इस नियम से जिन शब्दों से ठ अथवा अजादि प्रत्यय किये गये हैं, उनमें उक्त प्रत्यय के परे रहने पर पूर्व स्थित प्रातिपदिक के दूसरे अच् से आगे के सारे शब्द रूप का लोप हो जाता है। जेसे देवक, देविलः। यज्ञिकः, यज्ञिलः। यहां देवदत्त और यज्ञदत्त शब्दों से ठ और इलच् करने पर देव और यज्ञ के उत्तरवर्त्ती दत्त पद का लोप होकर देविकः, देविलः, यज्ञिकः और यज्ञिलः रूप बन गये। यह लोप अनुकम्पा और नीति अर्थों में ही होता है। अनुकम्पा का अर्थ है कृपा, स्नेह और प्रेम आदि। स्नेह वश भी पूरा नाम न बोलकर आधा नाम लिया जा सकता है। जैसे आजकल भी यह प्रथा प्रचलित है। नीति—साम और दान, रूपी नीति के कारण भी पूरे नाम का प्रयोग न करके आधे नाम से सम्बोधित किया जाता है। साथ ही यह नीति अनुकम्पा=कृपा से युक्त होनी चाहिये। यहां नीति का एक अर्थ फुसलाना भी है अर्थात् फुसलाने बहकाने में भी आधा नाम लिया जाता है।

मुद्रांकों पर उल्लिखित रामिल, शुद्धिल, दविल, भजिल, ब्रह्मिल और महिलस इसी भांति के नाम हैं। सम्भव है ये नाम किसी एक कुल विशेष से सम्बन्धित हों। अथवा एक ही समय में अवस्थित विभिन्न पदाधिकारियों के भी नाम हों। इनमें मुद्रांक ९६ पर लिखित 'श्रीभजिल' नाम लिपि की दृष्टि से अन्य नामों से पुराना प्रतीत होता है। अन्य नाम इसी व्यक्ति की कुल परम्परा से भी सम्बन्धित माने जा सकते हैं। काल की दृष्टि से ये नाम २६०० से २४०० वर्ष पूर्व तक के प्रतीत होते हैं।

## ९७,९८. श्रीकुमार : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत् )

मुद्रांक ९७ पर 'श्रीकुमार' नाम सीधे अक्षरों में खोदकर लिखा गया है। जबकि सं० ९८ पर यही नाम उभरे हुये किन्तु विपरीत अक्षरों में लिखा है। साधारणतया होना यह चाहिये था कि सीधा नाम उभरा हुआ तथा विपरीत नाम खुदा हुआ होता। यह श्रीकुमार नामक राज्य का कोई अधिकारी होगा। कुमार शब्द कार्तिकेय का पर्याय भी है। श्री का प्रयोग यहां आदर के लिये किया गया है। मुद्रांक ११४ पर भी कुमार लेख दो वार लिखा है। वहाँ लेख ऊपर से नीचे की ओर लिखा है जैसे चन्द्र, काच, समुद्रगुप्त, कुमार आदि गुप्त राजाओं की स्वर्ण मुद्राओं पर लिखा होता है।

## १००. श्रीगुप्तस्य : २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक गुप्त नामक किसी राज्याधिकारी का है। श्री का प्रयोग यहां मुद्रांक (मोहर) के लिये किया गया है। यह लेख एक गहरे गड्ढे सदृश स्थान में लिखा है। गीली मिट्टी में किसी अण्डाकार अँगूठी सदृश वस्तु पर खुदे लेख से यह छाप लगाई गई है। ऐसे पांच मुद्रांक हमें प्राप्त हुये हैं।

इस गुप्त वा श्रीगुप्त नाम के कारण कई विद्वानों का यह मत है कि यह वही गुप्त राजा है, जिसने गुप्त साम्राज्य की स्थापना की थी। किन्तु हमें इसमें कोई तथ्य दिखाई नहीं देता क्योंकि यौधेयप्रदेश में गुप्तों के राज्य के कोई प्रमाण नहीं मिलते। यौधेय सदा स्वतन्त्रताप्रिय रहे हैं। ये कभी किसी शासक की पराधीनता में नहीं रहे। कभी रहे भी तो संघर्ष में ही रत रहे। यौधेय प्रदेश में गुप्तों के शिलालेख भी एक, दो हैं तथा मुद्राएँ भी नहीं मिलतीं। इनसे भी स्पष्ट है कि गुप्तों का शासन यौधेय प्रदेश में नहीं रहा। समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तम्भ लेख में यौधेयों द्वारा कर दान, प्रणाम करने और गुप्त राजसभा में उपस्थित होने का उल्लेख है। यथा—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



..... .....मालवार्जुनायनयौधेयमद्रकाभीरप्रार्जुनसनकानीककाकखरपरिकादिभिश्च सर्वकरदानाज्ञाकरणप्रणामागमन-परितोषितप्रचण्डशासनस्य..... ।

इस स्तम्भ लेख से ज्ञात होता है यहां अतिशयोक्ति के कारण ही ऐसा लेख खुदवाया गया है। यौधेयों की मुद्रायें क्रमबद्ध चलती आई हैं। उनमें किसी की पराधीनता के कारण कोई व्यवधान आया प्रतीत नहीं होता। यौधेय प्रदेश की सीमा पर गुप्तों से हुई मुठभेड़ में यौधेयों की छोटी-मोटी पराजय के कारण ही यह स्तम्भ प्रयाग में उत्कीर्ण करवाया गया है। नहीं तो यह स्तम्भ लेख यौधेय प्रदेश में स्थापित किया होता। प्रस्तुत मुद्रांक वाला गुप्त तो सुनेत में स्थित यौधेय राज्य का कोई राज्याधिकारी प्रतीत होता है इसके साथ ही सुनेत से हरिगुप्त, सोमगुप्त, इन्द्रगुप्त, स्वामिगुप्त, रुद्रगुप्त आदि यौधेय राज्याधिकारियों के तथा सोमगुप्त और सत्यगुप्त वृष्णिगण के महासेनापतियों के नामों से युक्त मुद्रांकों की भी प्राप्ति हुई है। केवल गुप्त नाम या गुप्त नामान्त सादृश्यता से किसी महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य का निश्चय नहीं किया जा सकता। इस श्रीगुप्त मुद्रांक पर गुप्तों के राजकीय चिह्न लक्ष्मी का भी अभाव है। ऐसी अवस्था में यह नहीं कहा जा सकता कि यह गुप्त वही गुप्त राजा है जिसने कि गुप्त साम्राज्य की स्थापना की थी।

## १०४. महतकटकर : ३००० वर्ष पूर्व (२०७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर दो पंक्तियों में 'महत कटकर' लेख लिखा है। इसका अर्थ इस प्रकार लगाया जा सकता है—महत्= महान्, बड़ा। कटकर=चटाई बनाने वाला संस्थान। चटाई, आसन आदि बनाने वाली व्यापारियों की कोई बड़ी संस्था वा श्रेणी रही होगी, उसका यह मुद्रांक हो सकता है। उस संस्था में प्रवेशार्थ अथवा उसके प्रचारार्थ इसका उपयोग किया जाता होगा। यह भी सम्भव है कि इसका कोई अन्य प्रयोजन हो। व्यक्ति विशेष का नाम तो यह प्रतीत नहीं होता।

## १०७. शङ्करनारायणाभ्याम् : २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर दो पंक्तियों में 'शङ्करनारायणाभ्याम्' लेख लिखा है। शङ्कर (शिव) और नारायण (विष्णु) के लिये अपनी श्रद्धा, आस्था वा नमस्कार की भावना प्रकट की गई है। तत्कालीन जनता में शैव और वैष्णव सम्प्रदायों में परस्पर मेल की भावना के लिये भी इस प्रकार के मुद्रांकों का निर्माण किया गया होगा। विभिन्न सम्प्रदायों के मानने से विद्वेष और वैमनस्य की भावना उत्पन्न न हो जाये अतः उसे समाप्त करने की भावना से दोनों का ऐक्य करने का प्रयत्न किया गया है। 'शङ्करनारायणाभ्याम्' लेख वाले २०० से अधिक मुद्रांक हमें मिले हैं। इस प्रकार के सहस्रों मुद्रांकों का निर्माण करवाकर धार्मिक संस्था, मन्दिर वा राज्य की ओर से जनता में प्रचार किया जाता था। शिव और विष्णु अपने इन दोनों पूर्वजों के प्रति श्रद्धा प्रकट करने की भावना से भी इनका निर्माण सम्भव है। कुछ ऐसे मुद्रांक भी मिले हैं, जिनके एक पक्ष पर 'शङ्करनारायणाभ्याम्' लेख है तथा दूसरे पक्ष में हरिशर्मा, श्रीविष्णुदासस्य, मातृः ये लेख और भाला, त्रिशूल के चित्र मिलते हैं। यह धार्मिक मुद्रांक है।

## १११. द्रोणशूरस्य लदख : समय २६०० वर्ष पूर्व ( २४७४ कलिसंवत् )

मिट्टी की एक गोली पर द्रोणशूरस्य लदख ? यह लेख उत्कीर्ण किया गया है। गीली मिट्टी पर लेख कुरेदकर पुनः उसे पकाया गया है। द्रोणशूर किसी व्यक्ति विशेष का नाम है। लदख का अभिप्राय स्पष्ट ज्ञात नहीं हो सका है। सम्भव है यह किसी स्थान विशेष का वाचक हो। उसका सम्बन्ध द्रोणशूर नामक व्यक्ति से होगा। वैसे तो भारतवर्ष में वर्तमान में लद्दाख नामक एक प्रदेश भी है। किन्तु इस लेख वाले लदख नामक स्थान को उससे सम्बन्धित करना अभीष्ट नहीं है। इस लेख का अभिप्राय अभी अन्वेषणीय है।

## ११२. श्रीसोमदेवसेधचक्र : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

प्रस्तुत मुद्रांक श्री सोमदेव का है, यह कोई राजकीय अधिकारी होगा। श्री सोमदेव का विशेषण सेधचक्र=सिद्धचक्र है। जिसकी शक्ति वा राज्य का चक्र सिद्ध हो, सफलता से चलता हो। श्री सोमदेव का शासन इसी प्रकार का था, इसका यही अभिप्राय निकाला जा सकता है। ऐसे चार मुद्रांक हमें मिले हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १२०. नौमि : समय २५०० वर्ष पूर्व ( २५७४ कलिसंवत् )

यह धार्मिक मुद्रांक है, इस पर 'नौमि' पद लिखा है, इसका अर्थ है नमामि=मैं नमस्कार करता हूँ। अपने पूज्यों का आदर सत्कार, सन्मान करने की भावना, जनता में बनी रहे, इसीलिये इस प्रकार के मुद्रांकों का निर्माण किया जाता होगा। वेद का आदेश है—

**नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥**
यजुर्वेद १६.३२ ॥

परस्पर मिलते समय सत्कार करना हो तब नमस्ते इस वाक्य का उच्चारण करके छोटे बड़ों, बड़े छोटों, नीच उत्तमों, उत्तम नीचों और क्षत्रियादि ब्राह्मणों, ब्राह्मणादि क्षत्रियादिकों का निरन्तर सत्कार करें। सब लोग इसी वेदोक्त प्रमाण से सर्वत्र शिष्टाचार में इसी वाक्य का प्रयोग करके परस्पर एक दूसरे का सत्कार करने से प्रसन्न होवें।

इस प्रकार नित्य नमस्कार करने का फल मनुजी महाराज लिखते हैं—

**अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।**
**चत्वारि तस्य वर्द्धन्त आयुर्विद्या यशो बलम् ॥** मनु २. १२१ ॥

जो सदा नम्र, सुशील, विद्वान् और वृद्धों की सेवा करता है, उसका आयु, विद्या, कीर्ति और बल ये चार सदा बढ़ते हैं और जो ऐसा नहीं करते उनके आयु आदि चार नहीं बढ़ते। अर्थात् अभिवादन करने का जिसका स्वभाव, और विद्या वा अवस्था में वृद्ध पुरुषों का जो नित्य सेवन करता है, उसकी अवस्था, विद्या, कीर्ति और बल इन चारों की नित्य उन्नति हुवा करती है। जनता में इसी प्रकार के भावों के प्रचारार्थ ऐसे मुद्रांकों का निर्माण किया जाता था।

## १२५. देवभद्रस काण्डेलकाकुमारस : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर तीन पंक्तियों में प्राकृत भाषा में देवभद्रस काण्डेलकाकुमारस लेख लिखा है। इसका संस्कृतरूप 'देवभद्रस्य काण्डेलकाकुमारस्य' बनता है। इसका अर्थ यह हो सकता है—काण्डेलका के कुमार देवभद्र का मुद्रांक। काण्डेलका सम्भवतः देवभद्र की माता का नाम हो अथवा किसी स्थान विशेष का वाचक भी हो सकता है। नाम के ऊपर रत्नमाला की पंक्ति बनी हुई है।

## १२६. श्रीर्म्महासेनापतिब-
## ल [भ$_{व}$ ···] व हरिगृ- : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

## हीतस्य···र···स्य

महासेनापति बलभद्र वा बलभट्ट द्वारा गृहीत=स्वीकृत किसी विशेष राज्याधिकारी का यह मुद्रांक है। मुद्रांक चित्र के नीचे श्रीस्वामि···पाठ लिखा गया है, उस समय लेख ठीक नहीं पढ़ा गया था। अतः श्रीर्म्महासेनापति इत्यादि पाठ ही ठीक है। इस महत्त्वपूर्ण मुद्रांक का लेख पर्याप्त घिसा और टूटा हुवा है, इसी लिये गृहीत किये गये व्यक्ति का नाम नहीं पढ़ा जाता। श्रीः का प्रयोग यहां मुद्रांक के लिये किया है। इस मुद्रांक के पृष्ठभाग पर तीन अक्षर कुरेद कर ऊपर से नीचे लिखे गये हैं, जिनमें से प्रथम अक्षर टूट गया है, दूसरा अक्षर 'ष्णि' है तथा नीचे 'ठी' वा 'थी' दिखाई पड़ता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १२८. घोषस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

यह किसी घोष नामक व्यक्ति का मुद्रांक है। सुनेत से अन्य भी ऐसे मुद्रांक मिले हैं जिनपर घोषान्त नाम लिखे हैं। जैसे —श्रीस्वामिघोषस्य+कृष्णघोष, श्रीस्वामिघोषस्य। आजकल भारतवर्ष के बंगाल प्रान्त में घोषान्त नाम रखने की प्रथा है। सम्भव है प्राचीन काल में इस प्रकार के नामों की प्रथा सर्वत्र प्रचलित हो। कौशाम्बी और अहिच्छत्रा से ऐसी मुद्रायें मिलती हैं, जिनपर घोषान्त नाम हैं, यथा—अश्वघोष और भद्रघोष।

## १२९. श्रीमात्रिशर्मस : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

'श्रीमात्रिशर्मस' इस लेख वाले अनेक आकार-प्रकारों के कई मुद्रांक मिले हैं। जैसे मुद्रांक सं० १५२ से १५५ तक। एक-एक मुद्रांक पर इसी लेख की दो-दो और तीन-तीन छापें लगाई हुई हैं। यहां श्री का अर्थ मुद्रांक (मोहर) है। लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र बना है। त्रिशूल शिवजी महाराज का शस्त्र है। यौधेय लोग शिव तथा उसके परिवार को अपना पूज्य मानते थे, अतः शिव, कार्तिकेय, पार्वती, नन्दी, मयूर, त्रिशूल, शक्ति, परशु आदि को अपने मुद्रांक और मुद्राओं पर अंकित करते आये हैं। यह मात्रिशर्मा भी यौधेय राज्य का ही कोई अधिकारी रहा होगा। मुद्रांक सं० ११६ और २६८ पर 'श्रीर्मातिशर्मस्य' लेख है। सम्भव है यह कोई दूसरा व्यक्ति होगा। मुद्रांक २६७ पर 'मातिशर्मा' लेख लिखा है। लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र बना है। यह मातिशर्मा भी इन दोनों से पृथक् व्यक्ति है। मुद्रांक सं० १४३ पर बैठे हुये विशालकाय नन्दी के नीचे भी 'मातृशर्मा' लेख लिखा है। यह भी यौधेय गण का कोई राज्य से सम्बन्धित व्यक्ति होगा। नन्दी यौधेयों का राजकीय चिह्न था, यहां भी नन्दी चित्रित है अतः यह मातृशर्मा यौधेयों से ही सम्बन्धित मानना युक्तिसंगत है।

## १३४. मन्त्रिमित्रघोष : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक का लेख टूटा हुआ है। लेख के ऊपर कम से कम तीन चित्र बने थे। जिनमें यज्ञवेदि सदृश प्रारम्भ का चित्र दिखाई दे रहा है। इसका आकार प्रकार ऐसा है जैसा कि कौशाम्बी आदि से घोषिताराम जैसे महाविहारों के मुद्रांक मिलते हैं 'मन्त्रिमित्रघोष···' लेख हमने भी अनुमान से ही पढ़ा है, सम्भवतः इसी से मिलता-जुलता अन्य कोई लेख हो। हां ! घोष शब्द में तो हमें कोई सन्देह नहीं है।

## १३५. सखिए ? सनिए ? : समय २७०० वर्ष पूर्व (२३७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर बायें मुख करके चलते हुए सिंह के ऊपर खरोष्ठी लिपि में नाम लिखा है, नाम स्पष्ट नहीं हो पा रहा, पुनरपि 'सखिए' अथवा 'सनिए' लेख का अनुमान किया जा सकता है। सिंह के नीचे वामावर्ती स्वस्तिक बना हुवा है। सिंह पूंछ उठाये हुये तथा मुख खोले हुये दिखाया गया है जैसे किसी शत्रु पर गुर्राया हुवा हो। यह खरोष्ठी लिपि गान्धार, कांबुल की ओर प्रयुक्त होती थी। सुनेत से भी हमें खरोष्ठी लिपि के २ मुद्रांक मिले हैं। सम्भव है सीमाप्रान्त के राज्यों के दूत वा राजकर्मचारी इधर किसी कारण वश आये हों, उन्हीं का यह मुद्रांक हो। वृष्णिगण का भी खरोष्ठी लिपि से युक्त एक मुद्रांक मिला है।

## १३६. जितं भगवता : समय २६०० वर्ष पूर्व (२४७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर बायें मुख करके पूंछ उठाये बैठे हुये सिंह के नीचे 'जितं भगवता' लेख लिखा है। लेख टूटा हुवा है, सम्भव है नीचे कुछ और भी लिखा हो। सिंह के सम्मुख प्रज्वलित अग्नि वा पौधे का चित्र बना है। उसके आगे एक खड़ी रेखा बनी है जैसे त्रिशूल आदि किसी शस्त्र का दण्ड हो। सिंह की गर्दन के पीछे पूंछ के ऊपर एक पुष्प भी बना है। सिंह वीरता और साहस का प्रतीक है। हमें भी सिंह के समान पराक्रमी और साहसी बनकर शत्रुओं से अपने देश की रक्षा करनी चाहिये। 'जितं भगवता का भाव यह है कि सर्वव्यापक, ऐश्वर्य युक्त विष्णु भगवान् द्वारा यह सारा संसार जीता हुवा है, वश में किया हुवा है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १३७. सोमेसरपुत्र-स्य श्रीपृथ्वीवर्मस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

यह मुद्रांक सोमेसर अथवा सोमेश्वर के पुत्र श्री पृथ्वीवर्मा का है। सम्भव है पिता सोमेसर साधारण व्यक्ति होगा तथा पुत्र विशेष राज्याधिकारी। इसीलिये पुत्र के नाम से पूर्व श्री का प्रयोग किया गया है। लेख के नीचे पूंछ उठाये हुये सिंह का ऐसा चित्र बना है जैसे कि वह किसी पर आक्रमण करनेवाला हो। सिंह के आगे शंख का चित्र बना है। शंख युद्ध में विजयघोष करने के लिये प्रयुक्त किया जाता था। पहले महारथी और अतिरथी अपने अपने शंखनाद किया करते थे, पुनः सभी सैनिक शंख बजाते थे। युद्धारम्भ तथा युद्ध समाप्ति के लिये भी शंख ध्वनि की जाती थी। सिंह वीरभावना को द्योतित करता है। सैनिकों को सिंह की भांति वीर, साहसी और पराक्रमी होना चाहिये तभी शत्रु का साम्मुख्य किया जा सकता है। पृथ्वीवर्मा के नाम के स्थानपर पुष्टवर्मा की भी सम्भावना हो सकती है।

## १३८. नन्दसोमः समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

यह मुद्रांक 'नन्दसोम' नामक व्यक्ति का है। लेख के ऊपर पूछ उठाकर बैठे हुये सिंह का चित्र है। सिंह के सम्मुख घूमता हुवा चक्र बना है। प्रस्तुत चित्र घिसे हुये मुद्रांक का दिया है, कारण कि उस समय हमें एक ही मुद्रांक प्राप्त हुवा था, इसी लिये उसका लेख भी सन्देहात्मक दृष्टि से नन्दसोम वा मित्रसोम लिखा गया था। किन्तु अब इसी प्रकार का उससे अच्छी अवस्था का एक मुद्रांक और मिलने से यह निश्चय हो गया है कि मुद्रांक पर 'नन्दसोमः' ही लेख है, अन्य नहीं। वैसे यह मुद्रांक भी सम्भवतः आद्यन्त से घिसा हुआ है अतः प्रतीत होता है कि श्री और स्य दिखाई न देते हों, उनकी विद्यमानता में पूरा लेख 'श्रीनन्दसोमस्य' बनेगा। इसका पूर्ण निश्चय अन्य पूरे लेख वाले मुद्रांक मिलने से ही हो सकेगा। अभी तक हमारे मत से 'नन्दसोमः' यही लेख उचित है।

## १३९. श्रीसूर्य्यस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत)

यह मुद्रांक श्री सूर्य्य का है। लेख के ऊपर बायें मुख किये खड़े हुये अश्व (घोड़े) का चित्र है। अब तक प्राप्त मुद्रांकों के अनुसार इसके अतिरिक्त अन्य किसी राज्याधिकारी ने अपने मुद्रांकों पर अश्व को नहीं अपनाया। अश्व बहुत स्वामी भक्त होता है। भुवन भास्कर सूर्य का वाहन भी सप्ताश्व ( सात घोड़े ) माने गये हैं। वस्तुतः वे उसके सात प्रकार के किरण हैं। पौराणिक गाथाओं के अनुसार बनी हुई सूर्यमूर्तियों में सूर्य को सप्ताश्वयुक्त रथ पर आरूढ दिखाया जाता है। इस मुद्रांक पर उल्लिखित सूर्य कोई शासनाधिकारी था। यह भी सम्भव है कि यह अश्वारोही सेना का सेनापति हो। इसीलिये अश्व का चित्र अपनाया हो। हमें इस प्रकार के दो मुद्रांक मिले हैं।

## १४०. श्रीअतिमुत्तक : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'श्रीअतिमुत्तक' लेख लिखा है। लेख के ऊपर अपस्किरण[1] क्रिया करता हुआ बहुत सुन्दर नन्दी (बैल) चित्रित है। यह 'अतिमुत्तक' किसी व्यक्ति विशेष का नाम है। लेख के ऊपर तथा नन्दी के नीचे सपरशु त्रिशूल का चित्र भी बना हुवा है। नन्दी और त्रिशूल यौधेयों से विशेष सम्बन्धित रहे हैं अतः यह राज्याधिकारी भी यौधेयों से ही सम्बन्धित हो सकता है। यहां श्री का प्रयोग आदर के लिये हैं। मुद्रांक २२२ और २२३ भी इसी से मिलता-जुलता है। वहां एक ओर 'श्रीरतिमुतकस्य' लेख है तथा दूसरी ओर बैठा हुवा विशालकाय नन्दी चित्रित है। लेख का अभिप्राय है अतिमुत्तक का मुद्रांक। श्री का प्रयोग मुद्रांक

---

१. आनन्दित और मस्त सांड (बैल) द्वारा सींगों और पैरों से भूमि कुरेदने की क्रिया को अपस्किरण कहते हैं। अपाच्चतुष्पाच्छकुनिष्वालेखने—अष्टाध्यायी ६.१.१४२ पर किरतेर्हर्षजीविकाकलायकरणेष इस महाभाष्यस्थ वार्तिक का उदाहरण—अपस्किरते वृषभो हृष्टः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(मोहर) के लिये किया गया है। लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र भी बना है। मुद्रांक सं० १५९ पर भी 'श्रीरतिमुतकस्य' लेख है अर्थात् अतिमुक्तक का मुद्रांक। वहाँ भी लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र बना है। मुद्रांक के पृष्ठ भाग में कोई चित्र नहीं है। लेख और चित्रादि की साम्यता से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि तीनों मुद्रांक एक ही व्यक्ति के होंगे। यह भी सम्भावित है कि विभिन्न समयों में पृथक्-पृथक् तीन व्यक्ति रहे हों।

## १४१. श्रीविष्णुसिंहशतपतेः : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर "श्रीविष्णुसिंहशतपतेः" लेख लिखा है। लेख के ऊपर बैठे हुए सिंह का चित्र है, सिंह के आगे शंख बना है। श्री का अर्थ मुद्रांक है। विष्णुसिंह नाम है। शतपति विशेषण है। यह विष्णुसिंह सौ ग्रामों अथवा सौ सैनिकों का पति= स्वामी (अध्यक्ष) होगा। इसलिए नाम के साथ यह विशेषण पद प्रयुक्त किया गया है। दशपति, शतपति आदि के लिये मनुस्मृति में लिखा है—

द्वयोस्त्रयाणां पञ्चानां मध्ये गुल्ममधिष्ठितम्। तथा ग्रामशतानां च कुर्य्याद्राष्ट्रस्य संग्रहम्॥
ग्रामस्याधिपतिं कुर्य्याद्दशग्रामपतिं तथा। विंशतीशं शतेशं च सहस्रपतिमेव च॥
ग्रामदोषान् समुत्पन्नान् ग्रामिकः शनैकः स्वयम्। शंसेद् ग्रामदशेशाय दशेशो विंशतीशिनम्॥
विंशतीशस्तु तत्सर्वं शतेशाय निवेदयेत्। शंसेद् ग्रामशतेशस्तु सहस्रपतये स्वयम्॥ मनुस्मृति ७.११४-११७॥

इन श्लोकों के अर्थ महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश षष्ठसमुल्लास में इस प्रकार किये हैं—

दो, तीन, पांच और सौ ग्रामों के बीच में एक राजस्थान रक्खे जिसमें यथायोग्य भृत्य अर्थात् कामदार आदि राजपुरुषों को रखकर सब राज्य के कार्यों को पूर्ण करे। एक-एक ग्राम में एक-एक प्रधान पुरुष को रक्खे, उन्हीं दश ग्रामों के ऊपर दूसरा, उन्हीं बीस ग्रामों के ऊपर तीसरा, उन्हीं सौ ग्रामों के ऊपर चौथा, और उन्हीं सहस्र ग्रामों के ऊपर पांचवां पुरुष रक्खे अर्थात् जैसे आजकल एक ग्राम में एक पटवारी, उन्हीं दशग्रामों में एक थाना और दो थानों पर एक बड़ा थाना और उन पांच थानों पर एक तहसील और दश तहसीलों पर एक जिला नियत किया गया है, यह वही अपने मनु आदि धर्मशास्त्र से राजनीति का प्रकार लिया है। इसी प्रकार प्रबन्ध करे और आज्ञा देवे कि वह एक-एक ग्रामों का पति ग्रामों में नित्यप्रति जो-जो दोष उत्पन्न हों, उन-उन को गुप्तता से दश ग्राम के पति को विदित करदे और वह दश ग्रामाधिपति उसी प्रकार बीस ग्राम के स्वामी को दश ग्रामों का वर्तमान नित्यप्रति जना देवे। और बीस ग्रामों का अधिपति बीस ग्रामों के वर्तमान को शतग्रामाधिपति को नित्यप्रति निवेदन करे वैसे सौ-सौ ग्रामों के पति आप सहस्राधिपति अर्थात् हजार ग्रामों के स्वामी को सौ-सौ ग्रामों के वर्तमान को प्रतिदिन जनाया करें। और बीस-बीस ग्रामों के पाँच अधिपति सौ-सौ ग्राम के अध्यक्ष को और वे सहस्र-सहस्र के दश अधिपति दश सहस्र के अधिपति को और वे दश-दश हजार के दश अधिपति लक्षग्रामों की राज सभा को प्रतिदिन का वर्तमान जनाया करें और वे सब राज सभा महाराजसभा अर्थात् सार्वभौम चक्रवर्तिमहाराजसभा में सब भूगोल का वर्तमान जनाया करें।

उपर्युक्त मन्वादि के प्रमाण से सिद्ध है कि राज्य-व्यवस्था सुचारू रूप से चलाने के लिये अधिपतियों को एक, तीन, पाँच दश, बीस, सौ और सहस्र ग्रामों का स्वामी नियुक्त कर दिया जाता था। उसी प्रकार की व्यवस्था के अन्तर्गत विष्णुसिंह को शतग्राम =सौ ग्रामों का पति=स्वामी बनाया गया होगा। उसी का यह मुद्रांक है। अथवा इसे सौ सैनिकों का अध्यक्ष भी माना जा सकता है। सिंह वीरता और शौर्य का प्रतीक है तथा शंख युद्धोपयोगी उपकरण है। विशेष सूचना आदि देने के लिये शंख नाद करके सबको एकत्रित करने के लिए भी शंख का उपयोग होता था। शंख और सिंह सेना के ही चिह्न हैं। हमें इस प्रकार के ११ मुद्रांक मिले हैं।

## १४२. स्वामिगुप्तभार्य्या श्रीरुद्रदेवया : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

सुनेत के स्वामिगुप्त की भार्या=पत्नी श्रीरुद्रदेवी वा श्रीरुद्रदेवा का यह मुद्रांक है। स्त्री अधिकारिणी का अभी तक हमें

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



एक ही मुद्रांक मिला है। इससे सिद्ध है कि पुरुषों की भांति स्त्रियों को भी राज्यकार्य में सम्मिलित किया जाता था। लेख के ऊपर बैठे हुए सिंह के आगे घूमता हुवा चक्र बना है। इन चिह्नों से इस रुद्रदेवी का सेना विभाग में होना सिद्ध है। यह वीरांगना होगी, युद्धादि का संचालन भी करती होगी। शंख का चित्र भी यही दर्शाता है। हमें ऐसे दो मुद्रांक मिले हैं। मुद्रांक की दूसरी पंक्ति में **श्रीरुद्रदेवया** पद कुछ सन्देहात्मक है। यहाँ **श्रीरुद्रदेव्याः** अथवा प्राकृतभाषा में **श्रीरुद्रदेवायाः** अथवा **श्रीरुद्रदेवीयाः** पद होना चाहिये। दोनों मुद्रांकों के लेख घिसे हुए होने के कारण निश्चयात्मक नहीं कहा जा सकता। हमारे पास ऐसे दो मुद्रांक हैं।

## १४४. श्रीसोमस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक श्री सोम नामक सेनाधिकारी का है। सिंह के आगे चक्र बना है। चक्र तथा सिंह के चित्र सैनिक टुकड़ियों के हैं। चक्र-शासन का प्रतीक है तथा सिंह वीरता का द्योतक है। सुनेत से सोमान्त नाम वाले अनेक मुद्रांक मिले हैं। यथा--विष्णुसोम, श्रीमातृसोम, जयसोम, श्रीर्जयसोम, श्रीराज्यसोम, श्रीर्य्यात्रिसोम और नन्दसोम आदि। इन नामों से सम्भावित वंशावली निर्मित की जा सकती है जैसा कि हम पूर्व निर्देश कर चुके हैं, इनके पूर्वापर के विषय में तो हम निश्चय से कुछ नहीं कह सकते। नामान्त साम्य के कारण कुछ परम्परा का अनुमान किया जा सकता है सो हमने कर दिया है। नाम साम्य के साथ-साथ चित्र और चिह्नों से भी वंश परम्परा की जानकारी हो सकती है। जैसे सोमान्त नाम वालों के साथ, त्रिशूल, चक्र, सिंह, अर्द्धचन्द्र आदि के चिह्न दिये हैं। इस विषय में भावी अन्वेषण सम्भव है कुछ और अधिक जानकारी दे सके।

## १४५. श्रीरुद्रस्य : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक श्रीरुद्र नामक व्यक्ति का है। इस पर शालभञ्जिका क्रीडा का एक दृश्य दिखाया गया है। एक स्त्री को पुष्पों से लदे वृक्ष के नीचे खड़े होकर पुष्प तोड़ते हुए दिखलाया गया है। लेख एवं चित्र अत्यन्त सुन्दर और भावपूर्ण बने हैं।

### शालभञ्जिका

यह मुद्रांक यौधेय कालीन कला का उत्कृष्ट उदाहरण है। प्राचीन भारतीय क्रीडाओं का वर्णन करते हुये श्री वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं—[1] **प्राच्यक्रीडा**—भारतवर्ष के पूर्वी भाग में अनेक प्रकार की उद्यान-क्रीडाएं अत्यन्त प्राचीन काल से चली आती थीं। उनका विषय पाणिनि के निम्नलिखित तीन सूत्र हैं—

**१. प्राचां क्रीडायाम् (६.२.७४); २. नित्यं क्रीडाजीविकयोः (२.२.१७); ३. संज्ञायाम् (३.३.१०९)।**

पहले सूत्र से क्रीडावाची शब्दों में स्वर, दूसरे से उनके नाम और तीसरे से उनके समास का विधान है। काशिका में इन के निम्नलिखित उदाहरण हैं, उद्यालकपुष्पभञ्जिका, वीरणपुष्पप्रचायिका, वरणपुष्पप्रवाहिका, शालभञ्जिका, तालभञ्जिका, अम्यूषखादिका (आचोषखादिका)। कामसूत्र में इन्हें देश्य क्रीडा कहा है, जिसका तात्पर्य हुवा कि ये खेल परम्परा से लोगों में चले आते थे। वात्स्यायन में कुछ और भी नाम हैं जैसे सहकारभञ्जिका, बिसखादिका, अशोकोत्तंसिका, पुष्पावचायिका, इक्षुभक्षिका, दमनभञ्जिका, उदकक्ष्वेडिका आदि। अंतिम के विषय में जयमङ्गला ने लिखा है कि वह मध्यदेश के लोगों की क्रीडा थी।

**प्राच्य क्रीडाओं का स्वरूप**—इस देश के साहित्य में दो प्रकार की क्रीडाओं की परम्परा जातक कहानियों से लेकर मध्य कालीन काव्यों तक पाई जाती है। एक उद्यानक्रीडा दूसरी सलिलक्रीडा। मातङ्ग जातक में उल्लेख है कि वाराणसी के सेठ की दिट्ठ-मङ्गलिका नाम की दुहिता महीने दो महीने पर अपनी सखियों को लेकर उद्यान क्रीडा के लिए जाया करती थी[2]। उद्दालक जातक के अनुसार वाराणसी के राजा का पुरोहित उद्दालक वृक्षों के बगीचे में अपनी गणिका को उद्यानक्रीडा के लिये ले जाता था। अश्वघोष,

---

१. पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृष्ठ १६३-१६४

२. तदावाराणसिसेट्ठिनो धीता दिट्ठमङ्गलिका नाम एक मास द्वे मासवारेण महापरिवारा उय्यानकीलिकं गच्छति। (जातक ४.३७६)।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कालिदास, माघ, भारवि आदि सभी कवियों ने उद्यान क्रीडा और सलिलक्रीडाओं का रोचक वर्णन किया है। फूले हुए अशोक वृक्ष या शालवृक्षों के नीचे खड़ी होकर और उनकी टहनियों से पुष्प चुनकर परस्पर क्रीडा करने की मनोरम उत्सव विधि इस देश के स्त्री समाज के वातातपिक जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती थी। अवदान शतक में आया है,"एक बार जब बुद्ध श्रावस्ती के जेत्तवन में ठहरे हुए थे. उसी समय सारी श्रावस्ती में शालभञ्जिका का उत्सव मनाया जा रहा था। कई हजार व्यक्ति उसमें भाग लेने के लिये एकत्र हुये और पुष्पित शालवृक्षों के फूल चुनकर वे एक दूसरे के साथ क्रीडा और विनोद करते हुये इधर-उधर मन बहलाने लगे (अवदान पृष्ठ २०१)।" शालवन में शालभञ्जिका क्रीडा करने का सबसे अच्छा वर्णन पालिनिदान कथा में आया है, "उन दोनों नगरों (कपिलवस्तु और देवदह) के बीच में लुम्बिनीवन नामक मङ्गल शालवन था, जो उभयनगर वासियों के उपभोग में आता था। उस समय में मूल से लेकर फुनगी तक सारा वन फूलों से अकस्मात् लद गया था। शाखाओं और पुष्पों के बीच पंचरंगी तितलियों और नाना प्रकार के पक्षी मधुर स्वर से कूजते हुये विचर रहे थे। सारा लुम्बिनी वन रंग-बिरंगी लताओं के वन के समान या किसी वैभवशाली राजा के सुसज्जित हाट के समान हो गया था। उसे देखकर रानी माया देवी के मन में शालवन की क्रीडा करने की कामना उत्पन्न हुई ( सालवन कीलितुकामता उदपादि ) अमात्य देवी के साथ शालवन के भीतर आये। रानी ने माङ्गलिक शाल के नीचे जाकर उसको पकड़ने की इच्छा की। शाल की शाखा भपारा दिये हुये बेंत के समान झुककर देवी के हाथ की पहुँच में आ गई। उसने हाथ बढ़ाकर शाखा को पकड़ लिया। उसी समय उसे प्रसव पीड़ा आरम्भ हुई।[1]

शालभञ्जिका शब्द क्रीडा का नाम भी था और शालवृक्ष के नीचे उसकी डाल झुकाने की मुद्रा में खड़ी हुई स्त्री का वाचक भी हो गया। भरहुत, सांची शुङ्गकला और मथुरा की कुषाणकला में शालभञ्जिका और पुष्पप्रचायिका में संलग्न स्त्रियों के अनेक दृश्य अंकित मिलते हैं। यह पूर्व भारत की क्रीड़ा थी। उत्तर-पश्चिम या गान्धार में जहाँ शाल या अशोक वृक्षों का अभाव है, इस क्रीडा का न साहित्य में उल्लेख मिलता है, न कला में अंकन। काशिका ने प्रत्युदाहरण के रूप में **जीवपुष्पप्रचायिका** नाम की क्रीडा (इंगुदी या जीवतिया के फूल चुनने की क्रीडा) को उत्तर-पश्चिमी भाग की क्रीडा कहा है (**इयमुदीचां क्रीडा** ६.२.७४) वीरणपुष्पप्रचायिका का उत्सव वैशाखपूर्णिमा को मनाया जाता था, जिसमें वीरण (हिन्दी बेना या खस ) के पुष्पों का चयन होता था।

इन पुष्प क्रीडाओं की यह सामान्य विशेषता थी कि पुष्पों का चयन हाथ की पहुँच के भीतर आई हुई शाखा से अपने ही हाथ से करना चाहिये। उसी अवस्था में पुष्पप्रचाय यह शब्द रूप बनता था, जिससे क्रीडा का नाम पुष्पप्रचायिका पड़ता था (**हस्तादाने चेरस्तेये** —अष्टाध्यायी ३.३.४०)।"

भरहुत, सांची और मथुरा की शुङ्ग तथा कुषाणकला की भांति हरयाणा प्रान्त की यौधेय कला में शालभञ्जिका का अत्युत्तम और अनुकरणीय चित्र मिलता है। श्री वासुदेवशरण लिखते हैं कि उत्तर-पश्चिम में शालभञ्जिका का कला में अंकन नहीं मिलता। किन्तु सुनेत में इस शालभञ्जिका के चित्र से युक्त अनेक मुद्रांक प्राप्त हुये हैं। अतः वहां भी इसका अभाव नहीं माना जा सकता। सुनेत का दुर्ग पश्चिमोत्तर भारत में ही है।

प्रस्तुत मुद्रांक पर पुष्पित (शाल) वृक्ष के नीचे उसकी डाल झुकाने की मुद्रा में खड़ी हुई स्त्री चित्रित है। उसके पार्श्व भाग में '**श्रीरुद्रस्य**' लेख लिखा है। हमें इस प्रकार के ८ मुद्रांक मिले हैं। इसी प्रकार के शालभञ्जिका चित्र से युक्त एक अन्य मुद्रांक हमें मिला है, उस पर विपरीत अक्षरों में '**श्रीभवदेवस्य**' खुदा है। अर्थात् श्रीभवदेवका ( मुद्रांक )। देखिए मुद्रांक चित्र संख्या ४७७। यह मुद्रांक छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था।

कालिदास के मेघदूत में इन दोनों मुद्रांकों पर चित्रित स्त्री और पुष्पित वृक्ष का साक्षात् वर्णन मिलता है। यथा—

(क) **हस्तप्राप्यस्तबकनमितो बालमन्दारवृक्षः ॥ उत्तरमेघ १५ ॥**

---

१. जातकट्ठकथा, भाग १, पृ० ४१, भारतीय ज्ञानपीठ काशी का देवनागरी संस्करण।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(ख) तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी,
मध्ये क्षामा चकितहरिणीप्रेक्षणा निम्ननाभिः।
श्रोणीभारादलसगमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः ।।उत्तरमेघ २२।।

हाथ में आ सकने योग्य पुष्पगुच्छों से युक्त बालमन्दार वृक्ष के नीचे चकित हरिणी तुल्य नेत्र, स्तन भारावनत ऊर्ध्व भाग, मुष्टिग्राह्यकटिप्रदेश, गहरी नाभि, श्रोणीभार से मन्दगति वाली ब्रह्मा की आदर्श रचनायुक्त श्यामा युवति का चित्रांकन।

## १५६. गंगभद्र : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'गङ्गभद्र' लेख लिखा है। लेख के ऊपर त्रिशूल तथा सर्पाकृति सदृश चित्र बने हैं। गङ्गभद्र नाम यहां प्रथमा विभक्ति में प्रयुक्त हुवा है। आजकल तो सभी मोहरों पर नाम प्रथमा विभक्त्यन्त ही मिलते हैं। षष्ठीविभक्त्यन्त सहित नाम की मोहर कोई नहीं बनवाता, इसी प्रणाली का यह प्राचीन रूप है। इस मुद्रांक में स्व-स्वामी सम्बन्ध प्रत्यक्षतया नहीं घटता। हमें ऐसे दो मुद्रांक मिले हैं। एक उभयपक्षीय मुद्रांक २१३-२१४ सं० पर प्रकाशित है। उसके एक ओर 'गङ्गभद्र' लेख है तथा ऊपर चित्र बना है। दूसरे पक्ष में 'गङ्ग' लेख है तथा लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र बना है। यह विचारणीय है कि 'गङ्गभद्र' तथा 'गङ्ग' एक ही व्यक्ति है अथवा भिन्न-भिन्न। अधिक सम्भावना यही है कि गङ्गभद्र का ही संक्षिप्त नाम गङ्ग लिख दिया होगा। सं० १५६ के मुद्रांक से इसका मेल करने से ज्ञात होता है कि यह गङ्ग भद्र एक ही व्यक्ति होगा। वहाँ केवल सर्प सदृश चित्र की भिन्नता है। लेख तथा त्रिशूल के चित्र समान हैं। इसी प्रकार मुद्रांक सं० १५८ पर केवल 'गङ्ग' लेख है। लेख से पूव त्रिशूल बना है। हमारे विचार से यह गङ्ग, गङ्गभद्र, गङ्ग+गङ्गभद्र एक ही व्यक्ति विशेष के संक्षिप्त तथा पूर्ण नाम प्रतीत होते हैं। विशेष निश्चय तो अधिक अन्वेषण करने पर ही किया जा सकता है। हमें उभयपक्षीय तीन मुद्रांक प्राप्त हुये हैं।

## १५७. श्रीशङ्खस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक शंख नामक व्यक्ति का है। श्रीः का प्रयोग यहां मुद्रांक (मोहर) के लिये किया गया है। लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र बना हुवा है। त्रिशूल के चित्र से ज्ञात होता है कि शंख नामक व्यक्ति सेना से सम्बन्धित रहा होगा। मुद्रांक सं० २६२ पर भी 'श्रीशंखस्य' लेख है। लेख के ऊपर दायें मुख करके बैठे हुये सिंह का चित्र है, उसके आगे शंख बना है। सिंह पूंछ ऊपर उठाये हुये है। सिंह और शंख दोनों सेना से सम्बन्धित चिह्न हैं। अतः यह श्री शंख भी सैनिक अधिकारी प्रतीत होता है। श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है। यह शंख नामक व्यक्ति पूर्ववर्ती शंख से भिन्न है।

## १६०. रुद्रशर्म : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'रुद्रशर्म' लिखा है। लेख के ऊपर त्रिशूल बना है। 'रुद्रशर्म' प्रयोग विभक्ति रहित है। प्रथमा विभक्ति में 'रुद्रशर्मा' होना चाहिये और षष्ठी में 'रुद्रशर्मणः' चाहिये। यहां प्रथमान्त पद प्राकृत भाषा में मान लिया जायेगा रुद्रशर्मनाम=रुद्रशर्मा नामक व्यक्ति। त्रिशूल सेना का चिह्न है अतः इस व्यक्ति को सेना से सम्बन्धित मानना चाहिये। इस प्रकार के २२ मुद्रांक हमें मिले हैं। एक उभय पक्षीय मुद्रांक २११, २१२ सं० पर छपा है। उसके एक ओर 'रुद्रशर्म' लिखा है, ऊपर त्रिशूल बना है। दूसरे पक्ष में लिखा है—"श्रीजुज्जस्य।" अर्थात् श्रीजुज्ज का मुद्रांक। यहां भी लेख के ऊपर त्रिशूल बना है। ये दोनों लेख एक ही सांचे से बने हैं। यहां श्रीजुज्ज के साथ षष्ठी विभक्ति प्रयुक्त होने से प्रतीत होता है कि श्रीजुज्ज सेना का प्रमुख अधिकारी था और रुद्रशर्मा उसके नीचे रहता था। जैसे रुद्रशर्म के पृथक् स्वतन्त्र मुद्रांक मिले हैं, वैसे श्रीजुज्ज का अभी तक कोई पृथक् स्वतन्त्र मुद्रांक नहीं मिला। हमे ये उभय पक्षीय लेख वाले ५ मुद्रांक मिले हैं। यह जुज्ज नाम भारतीय नामों से मेल नहीं खाता। पुनरपि यल्लार्य, चच, कक, जैय्यट, कैय्यट, उव्वट आदि नामों को दृष्टिगत रखते हुये जुज्ज को भी भारतीय नाम स्वीकार कर सकते हैं। श्री किरणकुमार थपलियाल ने[1] इसे 'जज्ज' पढ़ा है, किन्तु ब्राह्मीलिपि में 'श्रीजुज्जस्य' नाम इतना स्पष्ट लिखा है कि वहां सन्देह करने का कोई कारण ही उपस्थित नहीं होता।

1. Studies in Ancient Indian Seals, P. 303.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १६२. हरिशर्म : २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'हरिशर्म' लेख लिखा है। लेख के ऊपर शंख का चित्र बना है। शंख सेना का चिह्न है। अथवा इसे प्रचार विभाग का भी चिह्न माना जा सकता है। यह हरिशर्मा नामक व्यक्ति राजपुरोहित वा प्रचाराध्यक्ष आदि पद पर कार्य करता होगा। हमें हरिशर्म लेख वाले १६ मुद्रांक मिले हैं। १६३ वें मुद्रांक पर 'हरिशर्म्म' लेख है। ऊपर शंख का चित्र भी बना हुआ है यहां शर्म के मकार को रेफ के कारण द्वित्व होकर शर्म्म बन गया है।[1] ऐसे द्वित्वभूत मकार वाले भी तीन मुद्रांक मिले हैं। मुद्रांक २०७ पर एक ओर 'शंकरनारायणाभ्याम्" लिखा है तथा दूसरी ओर शंख के चित्र से युक्त 'हरिशर्म'। ऐसे १८ मुद्रांक मिले हैं। मुद्रांक २२० पर एक ओर शंख के नीचे हरिशर्म्म' लेख है तथा दूसरी ओर त्रिशूल का चित्र बना है। त्रिशूल सेना का चिह्न है। यह शिवजी का भी प्रिय शस्त्र था। शंख और त्रिशूल विष्णु और शिव के प्रतीक हैं। एक ही मुद्रांक पर दोनों चिह्नों की विद्यमानता से अनुमान किया जा सकता है कि वैष्णव और शैव लोग परस्पर एक परिवार की भांति मिलकर रहते होंगे। शिव और विष्णु दोनों ही आर्यजाति के पूज्य राजा हुये है। महाभारत युद्ध के २००० वर्ष पश्चात् अज्ञानियों ने इनको आराध्य देव भगवान् मानकर ईश्वर के स्थान पर इनकी प्रतिमा पूजा प्रारम्भ करदी और वैष्णव तथा शैव दो सम्प्रदाय बना दिये। यौधेयों ने दोनों में पुनः एकता लाने का महान् प्रयास किया। उसी एकता के चिह्न सुनेत से प्राप्त अनेक मुद्रांकों पर दिखलाई पड़ते हैं। हरिशर्म और हरिशर्म्म ये दोनों प्रकार के नाम एक ही व्यक्ति के सम्भावित हैं।

## १६४. श्रीसिद्धेश्वरदासस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक का लेख अस्पष्ट-सा है, पुनरपि हमारे विचार से इस पर 'श्रीसिद्धेश्वरदासस्य' लिखा है। श्रीः का अर्थ मुद्रांक (मोहर) है अर्थात् सिद्धेश्वरदास का मुद्रांक (मोहर)। लेख के ऊपर एक चिह्न विशेष के पास अर्द्धचन्द्र का चित्र बना है। हमारे विचार से अर्द्धचन्द्र का चित्र राज्य के किसी बड़े अधिकारी का चिह्न होता था, अतः सिद्धेश्वरदास भी विशेष राज्याधिकारी रहा होगा। इस मुद्रांक के अतिरिक्त अर्द्धचन्द्र के चित्र मुद्रांक सं० १६७, १९८, २२८, २७६, ३६२ और ३६८ पर भी बने हैं। इस मुद्रांक पर अर्द्धचन्द्र से पूर्व एक चिह्न विशेष बना है। इसकी आकृति ऐसी है जैसे कि हलवाइयों की दुकानों पर दूध ठंडा करने के पात्र को उलटकर रख दिया गया हो। इस चिह्न का अभिप्राय अन्वेषणीय है।

## १६५. महासेनापति वर्म ? : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर महासेनापति का नाम स्पष्ट नहीं पढ़ा जाता, क्योंकि नाम के स्थान से कुछ अक्षर घिस गये हैं पुनरपि 'वर्मा' नाम की सम्भावना की जा सकती है। लेख के ऊपर शंख का चित्र है। शंख सैनिक चिह्न है। महासेनापति के साथ शंख का चित्र सापेक्ष है। युद्ध समय महासेनापति ही सर्वप्रथम अपना शंखनाद करता है। उसी की आज्ञा में सारी सेना चलती है। सेना में अनुशासन का ही सबसे अधिक महत्त्व है। यह वर्मा नामक व्यक्ति सेना का महासेनापति था। अनेक सेनापतियों पर एक महासेनापति नियुक्त होता था। महासेनापति वीरुद का प्रयोग प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रकाशित अन्य मुद्रांकों पर भी किया गया है। यथा मुद्रांक सं० १, १२६, १८७ और १८८। गुप्तकालीन कुछ मुद्रांकों पर महासेनापति के पर्यायवाची शब्द 'महाबलाधिकृत' का भी प्रयोग मिलता है। यह सेना का सर्वोच्च अधिकारी कहलाता था। महासेनापतिवर्म·····लेख वाले दो मुद्रांक हमें प्राप्त हुये हैं। दोनों का लेख अस्पष्ट है। पूर्ण लेख वाला मुद्रांक मिलने पर ही वास्तविक लेख का ज्ञान हो सकता है। महासेनापति पद के सम्बन्ध में मुद्रांक सं० १ के विवरण में पृष्ठ २२-२३ पर विस्तार से लिखा जा चुका है। शिवजी पुत्र कार्त्तिकेय का भी एक नाम महासेनापति प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध होता है।

---

१. पाणिनीय अष्टाध्यायी के 'अचो रहाभ्यां द्वे' (८.४.४६.) सूत्र से द्वित्व होता है। अच् ( स्वर ) से उत्तर में (परे) रेफ और हकार हो, उन रेफ हकारों से परे यदि यर् प्रत्याहार ( हकार के अतिरिक्त सभी व्यञ्जन, अन्तस्थ और ऊष्म ) हों तो उसे विकल्प से द्वित्व हो जाता है। जैसे शर्म्मा, शर्मा। चर्म्म, चर्म। अर्क्कः, अर्कः। ब्रह्मा, ब्रह्म्मा। उपह्न्नुते आदि।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## १६६. महेश्वर : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर सपरशु त्रिशूल के नीचे 'महेश्वर' नाम लिखा है। यह महेश्वर कोई सैन्य अधिकारी होगा। शिव जी का भी एक नाम महेश्वर है। परशु और त्रिशूल सेना से सम्बन्धित शस्त्र हैं। परशु गणेश तथा परशुराम का शस्त्र है। त्रिशूल शिवजी का शस्त्र है। शिव, गणेश आदि यौधेयगण के पूज्य पुरुष थे। उन्हीं के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करने के लिये तथा उपयोगी होने के कारण इन शस्त्रास्त्रों का भी प्रचलन परम्परा से चलता आया है। परशु युक्त त्रिशूल का चित्र मुद्रांक संख्या २४५, २५६ और ३७६ पर भी बना है। इन मुद्रांकों में परशु दायें पक्ष में जुड़ा हुवा है, मुद्रांक संख्या ५२ तथा इस मुद्रांक में परशु त्रिशूल के बायें भाग में जुड़ा हुवा है। इस मुद्रांक संख्या १६६ का चित्र मेरे लिखे 'हरयाणें के वीर यौधेय' (प्रथम खण्ड) के पृष्ठ १४८ पर भी प्रकाशित है।

## १६६. श्रीनारायणस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

यह मुद्रांक नारायण नामक किसी राज्याधिकारी का है। श्रीर् का अर्थ यहाँ मुद्रांक (मोहर) है। लेख के ऊपर चक्र तथा नीचे शंख का चित्र है। चक्र और शंख दोनों ही राज्य और सेना से सम्बन्धित चिह्न हैं। शासन चक्र सुचारु रूप से चलता रहे इसका प्रतीक चक्र का चिह्न है। राज्य का प्रचार विभाग सदा कार्यरत रहे तथा सेना का विजय घोष होता रहे, इसके लिये शंख का प्रतीक दिया है। मुद्रांक सं० १७३ पर भी विपरीत अक्षरों में 'श्रीनारायणस्य' लेख खुदा है। यह मुद्रांक आदेश पत्रों पर छाप लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। यहां श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है। नारायण नाम वाले ये दोनों व्यक्ति पृथक्-पृथक् थे। मुद्रांक १६७ पर 'श्रीनारायणदेवस्य' लेख है। लेख के ऊपर चक्र और शंख के चित्र बने हैं। श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है। यह श्रीनारायण नामक व्यक्ति पूर्वोक्त दोनों व्यक्तियों से भिन्न है। साथ ही घूमते हुये चक्र तथा शंख के चित्र के कारण यह भी कोई राज्याधिकारी ही प्रतीत होता है।

## १७०. श्रीशौम्य : समय २८०० वर्ष पूर्व (२२७४ कलिसंवत्)

इस चतुष्कोण मुद्रांक पर 'श्रीशौम्य' यह लेख विपरीत खुदा हुवा है। मुद्रांक का एक कोना टूटा हुवा है। पीठ की ओर छिद्रयुक्त मूठ भी बनी हुई है। यह शौम्य नामक व्यक्ति का मुद्रांक है। श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है। मुद्रांक पर लेख विपरीत होने से अनुमान किया जाता है कि राज्य की ओर से दिये जाने वाले आदेश पत्रों पर स्वीकृति के लिये इस मुद्रांक की छाप लगाई जाती थी।

## १७१. श्रीसोमगुप्त : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

ताम्र के इस मुद्रांक पर 'श्रीसोमगुप्तः' यह लेख विपरीत अक्षरों में खुदा हुवा है। श्री का प्रयोग यहां सन्मान के लिये किया है। इस मुद्रांक का प्रयोग राजशासनों पर स्वीकृति हेतु किया जाता होगा। सुनेत से प्राप्त गुप्त नामों की सूची पृष्ठ १०१ पर दी जा चुकी है। वृष्णिगण के मुद्रांक १८८ पर भी एक महासेनापति सोमगुप्त का नाम लिखा है। किन्तु ये दोनों सोमगुप्त पृथक्-पृथक् दो व्यक्ति प्रतीत होते हैं। क्योंकि इस मुद्रांक पर वृष्णिमुद्रांक की भांति कोई चिह्न नहीं है। अतः इस सोमगुप्त के लिये स्पष्ट नहीं कहा जा सकता कि यह राज्य के किस विभाग से सम्बन्धित था। यह वृष्णिगण से सम्बन्धित न होकर यौधेयगण से सम्बन्धित हो सकता है क्योंकि सुनेत में यौधेयों का बाहुल्य रहा है।

## १७२. श्रीर्वसुभट्टस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर "····सुभट्टस्य" लेख विपरीत खुदा हुवा है। प्रारम्भ का लेख टूटा हुवा है। 'श्रीर्व' ये दो अक्षर अनुमान से लगा कर पूरा नाम 'श्रीर्वसुभट्टस्य' पढ़ा है अर्थात् वसुभट्ट का मुद्रांक। लेख के ऊपर बैठे हुये सिंह का चित्र है। सिंह वीरता, साहस और पराक्रम का प्रतीक है अतः यह मुद्रांक सेना के किसी अधिकारी का प्रतीत होता है। यह विपरीत

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक आदेश पत्रों पर प्रतिकृति (छाप) लगाने के लिये प्रयुक्त होता था। यह सम्भावना की जा सकती है कि सिंह के सम्मुख शंख चक्र आदि कोई चिह्न अवश्य रहा होगा जो अब मुद्रांक टूटने के कारण दिखाई नहीं देता। क्योंकि ऐसे मुद्रांकों पर इस प्रकार के चिह्न प्रायः देखे जाते हैं।

## १७६, १७७. श्रीर्य्यात्रिसोमस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इन मुद्रांकों का लेख स्पष्ट नहीं हो पा रहा, पुनरपि हमारे विचार से इन पर 'श्रीर्य्यात्त्रिसोमस्य' अथवा 'श्रीर्य्यात्रि-सोमस्य' लेख है अर्थात् यात्रिसोम की श्रीः=मोहर। श्रीः मुद्रांक (मोहर) वाची है। लेख के ऊपर बैठे हुये सिंह का चित्र बना है, सिंह के आगे चक्र का चित्र है। सिंह और चक्र के चित्र से मुद्रांक सेना से सम्बन्धित जान पड़ता है। दोनों मुद्रांकों के किनारों पर 'वसुवर्म' यह लेख भी छोटे अक्षरों में उभार कर लिखा हुवा है। यह वसुवर्मा यात्रिसोम से छोटा अधिकारी होगा अथवा मुद्रांक निर्माता ने अपने नाम की मुहर लगा दी होगी। 'श्रीर्य्यात्रिसोमस्य' अथवा श्रीर्य्यात्त्रिसोमस्य' इस लेख में पाणिनीय सूत्र 'अचो रहाभ्यां द्वे' (अष्टाध्यायी ८.४.४६) से यकार को द्वित्वभूत करके दिखाया गया है। इस प्रकार का द्वित्वभूत प्रयोग अनेक मुद्रांकों में देखा जा सकता है।

## १७८. श्रीविष्णुदत्तस्य : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक श्री विष्णुदत्त का है। श्री सम्मान के लिये प्रयुक्त हुवा है। लेख के ऊपर सिंह का ऐसा चित्र बना है जैसे वह किसी पर आक्रमण करने की तैयारी में हो। यह मुद्रांक सेना से सम्बन्धित हो सकता है। वीरता और पराक्रम के गुण सेना में विशेष रूप से होते हैं। दत्तान्त नामों की सूची पृष्ठ १०२ पर दी जा चुकी है। मुद्रांक सं० १८३ पर भी दत्तान्त नाम है यथा—'श्रीव्याग्रदत्तस्य सैपिवरस्य' अर्थात् व्याघ्रदत्त सैपिवर का मुद्रांक। श्री का अर्थ यहां मुद्रांक है। इस मुद्रांक के लेख पर विश्राम अवस्था के सिंह का चित्र बना हुवा है। सुनेत से प्राप्त 'श्रीव्याग्रदत्तस्य सैपिवरस्य' लेख युक्त एक मुद्रांक इलाहाबाद संग्रहालय में भी है, किन्तु उस मुद्रांक पर सिंह का चित्र नहीं है। सैपिवर व्याघ्रदत्त का विशेषण है, किन्तु इसका अर्थ ज्ञात नहीं हो पाया है, यह अभी विचारणीय है। सिंह का चित्र वीरता और सैनिक मुद्रांक की पुष्टि करता है।

## १७९. विष्णुदासस्य श्रीशोणस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलि संवत्)

इस मुद्रांक पर दो नाम हैं। सम्भवतः पिता पुत्रों के नाम हों। यद्यपि यहां पुत्र शब्द का उल्लेख नहीं है पुनरपि अनुमान है कि विष्णुदास के पुत्र श्रीशोण का यह मुद्रांक है। पिता विष्णुदास साधारण व्यक्ति होगा तथा पुत्र श्रीशोण विशेष अधिकारी आदि। इसीलिये शोण से पूर्व सम्मानार्थक श्री शब्द का प्रयोग किया गया है। लेख के ऊपर विश्राम करते हुये सिंह का चित्र बना हुवा है। मुद्रांक सं० १९९ पर 'श्रीविष्णुदासस्य' लेख उल्लिखित है। लेख के ऊपर शंख का चित्र है। श्रीः का प्रयोग मुद्रांक (मोहर) के लिये किया है। इस प्रकार के तीन मुद्रांक मिले हैं। दोनों मुद्रांकों का विष्णुदास एक ही व्यक्ति है अथवा पृथक्-पृथक्, यह विचारणीय है। हमारे विचार से दोनों भिन्न-भिन्न हैं। मुद्रांक २१० पर एक ओर 'श्रीविष्णुदासस्य' तथा दूसरी ओर 'शंकर-नारायणाभ्याम्' लेख उल्लिखित है। लेख तथा मुद्रांक के आकार-प्रकार से यह निश्चय होता है कि यह विष्णुदास तथा मुद्रांक १९९ वाला विष्णुदास एक व्यक्ति है। शंख का चित्र दोनों पर समान है। सम्भव है इसने शैव और वैष्णवों में एकता करने में विशेष योगदान दिया हो, इसीलिये मुद्रांक के पीछे 'शंकरनारायणाभ्याम्' लेख लिखा गया हो। भावी अन्वेषण से इस विषय पर और अधिक प्रकाश डाला जा सकता है।

## १८०. श्रीरिन्द्रगुप्तस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर दाय मुख करके दौड़ते हुये शूकर (सूअर) के चित्र के नीचे श्रीरिन्द्रगुप्तस्य लेख उल्लिखित है। श्रीः अर्थ मुद्रांक (मोहर) है अर्थात् इन्द्रगुप्त की मोहर। हमें इस प्रकार के सात मुद्रांक प्राप्त हुये हैं। जंगली सूअर युद्ध में पीछे नहीं हटता, इसी प्रकार यह वीर इन्द्रगुप्त भी युद्ध से मुख नहीं मोड़ता होगा। शूकर के चित्र का अन्य अभिप्राय भी हो सकता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



यह भी सम्भव है कि इन्द्रगुप्त विष्णुभक्त हो और विष्णु को पृथ्वी के उद्धारक वराह अवतार के रूप में अपने मुद्रांक पर स्थान दिया हो। गुप्तान्त नामों की सूची पृष्ठ १०१ पर दे चुके हैं।

## १८१ श्रीराज्यसोमस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

प्रस्तुत मुद्रांक पर 'श्रीराज्यसोमस्य' लेख लिखा है। लेख के ऊपर सिंह का चित्र अन्य मुद्रांकों की अपेक्षा विशेष प्रकार से बना है। मुद्रांक का चित्र देखने पर सिंह का मुख नाम के ऊपर दिखाई देता है, पैर दायीं ओर तथा पूंछ ऊपर की ओर बनी है। जैसे-जैसे चित्र वा मुद्रांक को बायें घुमाते जायेंगे, वैसे-वैसे लम्बे आकार में पुस्तक वा मुद्रक को सामने रखने पर सिंह का चित्र ठीक दिखाई दे जायेगा। लेख के ऊपर तिरछी प्रकार से बना हुआ इस प्रकार का चित्र अन्यत्र देखने में नहीं आया। हमारी दृष्टि में यह अपूर्व उदाहरण है। यह मुद्रांक श्रीराज्यसोम का है। श्री का प्रयोग यहां मुद्रांक तथा आदर दोनों के लिये माना जा सकता है। क्योंकि श्री को आदर के लिये मानकर राज्यसोम व्यक्ति विशेष का नाम मान लिया, इसमें कुछ विशेष नहीं कहना है। यदि श्रीः को मुद्रांक वाची मानकर राज्यसोम नाम माना जाये तो पाणिनि मुनि के 'रो रि' सूत्र (अष्टाध्यायी ८-३-१४) से पदादि रेफ के परे होने पर पूर्ववर्ती पदान्त रेफ का लोप हो जाता है। यहाँ राज्यसोम के रेफ के परे रहने पर पूर्ववर्ती श्रीर् के रेफ का लोप मान लेंगे। अथवा श्रीर् को मुद्रांक वाचक मानकर राज्यसोम नाम की अपेक्षा 'आज्यसोम' नाम भी स्वीकार किया जा सकता है अर्थात् आज्यसोम का मुद्रांक आज्य घृत का वाचक भी हैं। किन्तु हमारे विचार से राज्यसोम नाम अधिक उपयुक्त जंचता है। ताम्र मुद्रांक सं० १७४ पर '... त्रसोमस्य' लेख दिखाई देता है। हमने इसे श्रीमित्रसोमस्य माना है अर्थात् श्रीमित्रसोम का मुद्रांक। 'श्रीमि' ये दो अक्षर जंग ने नष्ट कर दिये हैं। सम्भवतः लेख के ऊपर कोई चित्र भी था जो कि कालवशात् जंग लगने से नितान्त नष्ट हो चुका है। सोमान्त नामों से बनी सम्भावित वंशावली की चर्चा हम पृष्ठ १०१ पर कर चुके हैं। इसी प्रकार मुद्रांक सं० १८२ विषयक जानकारी पृष्ठ ९४ पर मुद्रांक ७८ के विवरण में दे दी गई है। लेख, चित्र और आकार-प्रकार सभी समान हैं केवल स्थान भेद हैं। वह मुद्रांक सिंहोल (नन्दीपुर) से प्राप्त हुवा है और यह सुनेत (सुनेत्र) से मिला है।

### सुनेत का वृष्णिगण

भारतीय प्राचीन परम्परा के अनुसार यह मान्यता है कि महाराजा ययाति के ज्येष्ठ पुत्र यदु से जो वंश चला, वह यदुकुल कहलाया। कालान्तर में इसके तीन कुल प्रसिद्ध हुये—अन्धक, वृष्णि और भोज। इसी कारण कोशग्रन्थों में यादव और वृष्णि को पर्यायवाची माना है। इसी वृष्णिकुल में महात्मा श्री कृष्ण जी का जन्म हुआ था, अतः एव महाभारत में उन्हें वार्ष्णेय तथा वृष्णिगर्भ आदि शब्दों से स्मरण किया गया है। महाभारत युद्ध से पूर्व वृष्णियों का समृद्ध गणराज्य मथुरा में था। तदनन्तर वे लोग द्वारका में रहने लगे। कुछ समय पश्चात् आपस के विरोध और कलह के कारण वृष्णि लोग इधर-उधर फैल गये। इसी भांति घूमते-फिरते इनकी कोई एक शाखा वर्तमान पंजाब के लुधियाना प्रदेश में बस गई और वहां उसने अपना एक गणराज्य स्थापित कर लिया। इसी गणराज्य के मुद्रांक हमें प्राप्त हुये हैं, जिनका वर्णन आगे किया जा रहा है।

### यौधेय और वृष्णिगण राज्य

यहाँ एक प्रश्न विचारणीय है कि कुषाणों के अन्तिम राजा वासुदेव को परास्त करने के उपरान्त यौधेयों का सुनेत तक एकमात्र राज्य था। उस समय यौधेय प्रदेश में वृष्णिगण की सत्ता किस प्रकार सम्भावित है। हमारे विचार से इसका समाधान इस प्रकार किया जा सकता है कि जिस समय यौधेयों ने कुषाण साम्राज्य का उन्मूलन करने के लिये आर्जुनायन, मालव और कुणिन्द आदि गणराज्यों का संगठन किया, उस समय वृष्णिगण भी साथ रहा होगा। कुषाण पराजय के पश्चात् गान्धार तक का प्रदेश वृष्णियों ने अपने अधिकार में कर लिया। इसी पश्चिमी प्रदेश को कभी श्री कृष्ण जी महाराज ने भी जीता था। महाभारत में नकुल की पश्चिम दिग्विजय के वर्णन में लिखा है:—

नकुलस्य तु वक्ष्यामि कर्माणि विजयं तथा। वासुदेव जितामाशां यथासावजयत्प्रभुः।
सर्वं विजित्य नकुलो दिशं वरुणपालिताम्। प्रतीचीं वासुदेवेन निर्जितां भरतर्षभ॥
—सभापर्व अ० ३२, श्लोक, १,२० ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वैशम्पायन जी कहते हैं—हे जनमेजय ! अब मैं नकुल के पराक्रम और विजय का वर्णन करूंगा। शक्तिशाली नकुल ने जिस प्रकार भगवान् वासुदेव द्वारा अधिकृत पश्चिम दिशा पर विजय पाई थी, वह सुनो। इस प्रकार इस अध्याय में दिग्विजय का वर्णन कर अन्तिम श्लोक में कहा है— हे भरतश्रेष्ठ ! इस प्रकार भगवान् वासुदेव के द्वारा अपने अधिकार में की हुई वरुणपालित पश्चिम दिशा पर विजय पाकर नकुल इन्द्रप्रस्थ लौट आये।

इन श्लोकों से सिद्ध है कि वासुदेव कृष्ण जी ने कभी पश्चिम दिशा को जीत कर अधिकृत किया था। अपने पूर्वज श्री कृष्ण जी द्वारा विजित उसी पश्चिम दिशा पर कुषाण पराजय के उपरान्त वृष्णियों ने अधिकार कर लिया था। उनकी मुद्रा और मुद्रांकों (सिक्के और मोहरों) पर खरोष्ठी लिपि में लिखे लेख इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। खरोष्ठी लिपि पश्चिमी सीमा प्रान्त गान्धार की ओर प्रचलित थी। वर्तमान पंजाब प्रदेश का भी कुछ भाग वृष्णियों के अधिकार में था, इसलिये खरोष्ठी के साथ-साथ ब्राह्मी लिपि में भी सिक्कों और मोहरों पर लेख लिखा। यह सुनेत का दुर्ग यौधेयों ने वृष्णियों को भाई चारे के नाते दे दिया होगा। क्योंकि यौधेय और वृष्णि एक ही पूर्वज ययाति के सन्तान हैं। वृष्णिकुल के कुछ मुद्रांकों पर 'जितं भगवता' लेख मिलता है। यह भी इसी का परिचायक है कि भगवान् वासुदेव श्री कृष्ण की कृपा से हमने जीत लिया। यह चाहे कुषाणों को जीतने की ओर संकेत हो अथवा अन्य किसी शत्रु के पराजय के विषय में हो। सुनेत का दुर्ग पश्चिम दिशा से वृष्णिगण राज्य की पूर्वी सीमा पर अन्तिम दुर्ग था। यहीं से यौधेयगण राज्य की सीमा प्रारम्भ होती थी जो कि सुदूर पूर्व दिशा की ओर फैला हुआ था। इस प्रकार निष्कर्ष यह निकलता है कि कुषाण पराजय के तत्काल बाद सुनेत यौधेयों के हाथ में था, उसके सौ-दो सौ वर्ष उपरान्त वृष्णियों ने ले लिया होगा। चाहे भाई-चारे के नाते से ही लिया हो। यह निश्चित है कि लगभग २५०० कलि संवत् के आस-पास अर्थात् गुप्तों से कुछ पूर्व सुनेत वृष्णिगणराज्य के आधिपत्य में रहा है। क्योंकि मुद्रायें (सिक्के) तो व्यापार के कारण भी गये हुये मान लिये जायें किन्तु मोहरें (मुद्रांक) तो राज्य के विशेष केन्द्रों में ही निर्मित होती हैं और प्रायः वहीं मिल सकती हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर गई हुई मोहरें मिलने के उदाहरण अत्यल्प मिलेंगे।

वृष्णिगण के मुद्रांकों के अतिरिक्त सुनेत से वृष्णिराजाओं की चतुष्कोण मुद्रायें भी मिली हैं। एक ओर वृष्णिकुल के राजा का नाम जयसेन, जयसत्र, व्याघ्रसत्र और सत्रगुप्त[1] आदि लिखा मिलता है तथा दूसरी ओर सुदर्शन चक्र का चित्र बना रहता है। ब्रिटिशम्यूजियम लन्दन में वृष्णिगण की एक रजत मुद्रा है। उस पर एक ओर सुदर्शन चक्र तथा दूसरी ओर अर्द्ध हस्तिसिंह का चित्र बना हुवा है। इसके अतिरिक्त मुद्रांकों पर गदा, मूसल, सुदर्शन चक्र और शंख भी चित्रित हैं। ये सभी वृष्णियों के राजकीय चिह्न हैं। किन्हीं विद्वानों का यह मत है कि वृष्णिमुद्रांकों पर शंख, पहिया (चक्र) आदि चिह्न राजकीय न होकर धार्मिक हैं। किन्तु हमारा दृढ़मत है कि ये उपर्युक्त समस्त चिह्न राज्य और सेना से सम्बन्धित विशुद्ध राजकीय हैं। हाथी, सिंह, चक्र, शंख, गदा और मूसल आदि से धीरता, वीरता, पराक्रम, शस्त्र और रथ आदि युद्धोपयोगी सामग्री, शंख आदि तूर्यनाद जो युद्ध का विशेष उपकरण है, तथा शस्त्रास्त्रों का ग्रहण होता है, अतः ये सब राजकीय चिह्न हैं, न कि धार्मिक। किसी व्यक्ति विशेष ने बाद में चलकर शंख, चक्र आदि को धार्मिक चिह्न के रूप में अपना लिया हो तो वह पृथक् बात है। किन्तु वृष्णिमुद्रा और मुद्रांकों में यह परिणाम निकालना अनुचित है। मुद्रांकों के ऊपर चिह्न हैं तथा नीचे महासेनापति आदि विशेषणों से युक्त नाम हैं, फिर वे धार्मिक चिह्न किस प्रकार सम्भावित हैं ? यह तो हो सकता है कि धार्मिक मुद्रांकों पर राजकीय चिह्न हों, जैसा कि 'जितं भगवता' लेख वाले मुद्रांक का एक अर्थ यह भी कर सकते हैं कि यह जगत् भगवान् विष्णु (वा कृष्ण) के द्वारा जीता हुवा है। दूसरे पक्ष में यह अर्थ किया जा सकता है कि भगवान् विष्णु वा कृष्ण की कृपा से हमने यह विजय पाया है, इसे जीत लिया है। हमने क्या जीता है, भगवान् ने ही जीता है।

वृष्णि के साथ लगा राजन्य पद स्वतन्त्र राजन्य जनपद वा राजन्यगण का वाचक नहीं है, किन्तु यहां अभिषिक्त क्षत्रिय का वाचक है। अर्थात् राज्यकार्य में भाग लेने वाले वृष्णि कुल के क्षत्रिय से अभिप्राय है। इस विषय में अधिक विवेचन विवरण पृष्ठ ९७ पर कर दिया गया है।

---

१. देखिये चित्र संख्या ४८०, उपसंख्या २ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



वृष्णिकुल का सामान्य परिचय देकर अब उसके मुद्रांकों का विवरण लिखा जाता है। इनमें से कुछ मुद्रांकों का विवरण भारतीय मुद्रा परिषद् (वाराणसी) के वार्षिक विवरण भाग ३५ सन् १९७३ (Vol XXXV 1973) के पृष्ठ ९५-९७ पर भी प्रकाशित हो चुका है। उसी अंक के फलक सं० १०, ११ पर छः मुद्रांकों के चित्र भी प्रकाशित हैं।

**१८७. वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य**
**महासेनापतेर्व्वसुवृद्धपुत्र-** : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)
**इय जयसोमस्य केन्द्रस्थिरस्य**

इसका समास और अन्वय इस प्रकार है—वृष्णयश्च ते राजन्याः, वृष्णिराजन्याः, वृष्णिराजन्यानां गणो वृष्णिराजन्यगणः, तेन पुरस्कृतो वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतः, तस्य वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य।[1] वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य वसुवृद्धपुत्रस्य केन्द्रस्थिरस्य महासेनापतेर्जयसोमस्य। अर्थात् राजन्य=क्षत्रिय वृष्णियों के गण द्वारा पुरस्कृत=सम्मानित,[2] वसुवृद्ध के पुत्र, केन्द्र में स्थिर रूप से रहने वाले, महासेनापति जयसोम का मुद्रांक। मुद्रांक के लेख के ऊपर वृष्णिगण के शासकीय चिह्न अर्द्ध हस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शनचक्र बने हैं। चित्र और लेख के मध्य तीन बिन्दुपंक्तियाँ बनी हैं जो दोनों को पृथक् करती हैं। बिन्दु पंक्तियों को रत्नों की माला का भी प्रतीक माना जा सकता है। इससे वृष्णिगण की समृद्धि का भी अनुमान लगा सकते हैं। सुन्दरता की दृष्टि से भी सीधी रेखा न बनाकर बिन्दु वाली पंक्तियां बना दी गई होंगी।

उपर्युक्त लेख में विभक्ति की दृष्टि से महासेनापति शब्द जयसोम का विशेषण है। महासेनापति जयसोम का पिता वसुवृद्ध साधारण व्यक्ति होगा, इसी से उसके लिये कोई विशेषण प्रयुक्त नहीं किया गया। यहां एक मान्यता यह भी है कि महासेनापति वसुवृद्ध का विशेषण है। इस प्रकार की प्रणाली क्षत्रप सिक्कों और यौधेयों की मोहर में भी देखी जा सकती है। जैसे उदाहरण के लिये कुछेक लेख दिये जाते हैं—

राज्ञो महाक्षत्रपस दामसेनपुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस विजयसेनस।
राज्ञो महाक्षत्रपस दामसेनपुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस दामजदश्रियः।
राज्ञः क्षत्रपस वीरदामपुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रसेनस।
राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रसेनपुत्रस राज्ञः क्षत्रपस विश्वसिंहस।

---

१. कर्मधारयगर्भितषष्ठीतत्पुरुषसमास।

२. गणराज्यों द्वारा व्यक्ति विशेषों को गुणकर्मानुसार नेता के रूप में पुरस्कृत करने की प्राचीन प्रणाली रही है। जैसे यौधेयगण के मुद्रांक संख्या ३१ में भी यही प्रकार अपनाया गया है। तथा विजयगढ़ स्थित यौधेयों के शिलालेख में भी यही परिपाटी दिखाई देती है। यथा—

सिद्धम्। यौधेयगणपुरस्कृतस्य महाराजमहासेनापतेः पु···

ब्राह्मणपुरोगं चाधिष्ठानं शरीरादिकुशलं पृष्ट्वा लिखत्यस्तिरस्मा···

इस त्रुटित प्रस्तर लेख में भी यौधेयगण द्वारा पुरस्कृत, महाराज और महासेनापति ये विशेषण इन मुद्रांकों (मोहरों) से साम्यता रखते हैं। दुर्भाग्य से यह अति महत्त्वपूर्ण शिलालेख खण्डित हो गया है। प्रतीत होता है कि किसी महत्त्वपूर्ण पत्र को प्रस्तर पर उत्कीर्ण किया गया है। क्योंकि शरीर आदि का स्वास्थ्य विषयक कुशल क्षेम पूछने के उपरान्त सूचना लिखी जा रही है। यह प्रकार आजकल भी पत्रलेखन कला में प्रचलित है। इस विषय में विद्वान् गवेषकों को विचार करना चाहिये।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



इन लेखों में पिता के विशेषण महाक्षत्रप तथा क्षत्रप पदों में षष्ठी विभक्ति है और पुत्रशब्द में भी षष्ठी विभक्ति है, पुनरपि ये विशेषण पिता के ही हैं न कि पुत्रों के। यद्यपि आगे पुत्रों के भी विशेषण पढ़े हैं, किन्तु शैली की दृष्टि से उदाहरण दिये गये हैं। यौधेय मुद्रांक सं० ३१ में भी पूर्व लिखित नाम राज्यमित्र के भट्टारराज, महाक्षत्रप और महासेनापति विशेषण दिये हैं जब कि राज्यमित्र और वसुवर्मा दोनों नामों में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग किया गया है। यहां भी साहचर्य के कारण क्षत्रप सिक्कों की भांति जिस नाम के पास जो शब्द पढ़ा है वह उसी का विशेषण लगाना उचित है। इसी प्रकार के प्राचीन लेखों को ध्यान में रखते हुये इसी शैली के अनुसार हमने पृष्ठ ९८ पर महासेनापति पद को वसुवृद्ध और सोमगुप्त का भी विशेषण स्वीकार किया है। क्योंकि क्षत्रप मुद्राओं की भांति यहां भी महासेनापति शब्द वसुवृद्ध और सोमगुप्त के साथ-साथ पढे हैं। यद्यपि संस्कृत भाषा के गद्य पद्यों में स्थान की अपेक्षा विभक्ति और विशेषण-विशेष्यों के अनुसार अर्थ की संगति अधिक लगती है, पुनरपि साहचर्य की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती, क्योंकि प्राचीन प्रयोग ऐसे देखे जाते हैं। एक मत यह भी है कि यह महासेनापति पद वसुवद्ध और जयसोम दोनों का विशेषण हो सकता है। अनेक सेनापतियों पर एक महासेनापति नियुक्त होता था। वृष्णिकुल के ऐसे ही महासेनापति जयसोम का यह मुद्रांक है। यह जयसोम सुनेत में स्थायी रूप से रह कर सेना तथा राज्य का प्रबन्ध किया करता था। मुद्रांक पर उल्लिखित 'केन्द्रस्थिर' शब्द से यह स्पष्ट सिद्ध है। केन्द्रस्थिर शब्द स्पष्ट नहीं पढ़ा गया था, अतः एव मुद्रांक चित्र में इस पद के आगे प्रश्नवाचक चिह्न लगाया गया है। अब हमारे मत से 'केन्द्रस्थिरस्य' पद ही उपयुक्त है। शासन सम्बन्धी इस प्रकार का विशेष शब्द अब तक अन्यत्र किसी मुद्रांक पर देखने में नहीं आया। वृष्णिगण की शासनरीति की जानकारी के लिये यह शब्द अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस शब्द को देखने पर अर्थापत्ति से यह आया कि कोई ऐसा भी महासेनापति होगा जो केन्द्र में स्थिररूप से न रह कर भ्रमण करके बाह्यशासन की व्यवस्था करता होगा। इसी बात की पुष्टि महासेनापति सत्यगुप्त वाला अगला मुद्रांक कर रहा है।

### १८८. वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य महासेना—पतेः सोमगुप्तपुत्रस्य सत्यगुप्तस्य : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्) भृम्यत्रः ?

इस मुद्रांक का लेख और अन्वय पूर्व मुद्रांक की भांति ही है। इसका अर्थ है—वृष्णि राजन्य गण के द्वारा पुरस्कृत= सम्मानित=नेतृत्व के लिये अभिपूजित, भृम्यत्र ?=भ्रमण करके राज्य प्रबन्ध करने वाले, सोमगुप्त के पुत्र महासेनापति सत्यगुप्त का मुद्रांक। यहां भी महासेनापति पद सोमगुप्त के पुत्र सत्यगुप्त का ही विशेषण है। पक्ष में सोमगुप्त का भी विशेषण सम्भावित है। इस मुद्रांक पर भी पूर्व की भांति अर्द्धहस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शनचक्र के चित्र बने हैं। ये सभी वृष्णिगण के शासकीय चिह्न हैं। सारे वृष्णिराजन्यगण ने क्षत्रियोचित गुण, कर्म और स्वभावानुसार श्रीसत्यगुप्त को महासेनापति नियुक्त किया था। महासेनापति आदि का चुनाव सारा गण मिलकर किया करता था। मुद्रांक के अन्त में भृम्यत्र अथवा इसी जैसा कोई अन्य शब्द उल्लिखित था, जो कि घिसने से स्पष्ट दिखलाई नहीं देता। इस पद का आशय यह प्रतीत होता है कि महासेनापति सत्यगुप्त एक नगर से दूसरे में, दूसरे से तीसरे में इसी भांति भ्रमण करके व्यवस्था किया करता था। वृष्णिगण की शासन व्यवस्था में महासेनापति जयसोम जहां एक स्थान पर रहता हुवा शासनसूत्र सम्हालता था वहां महासेनापति सत्यगुप्त इतस्ततः भ्रमण करता हुवा राज्य और सेना व्यवस्था सञ्चालित करता था।

इस मुद्रांक पर भी चित्र और लेख को पृथक् करने के लिये बिन्दुनिर्मित तीन पंक्तियां बनी हुई हैं। इसी प्रकार के बिन्दु वृष्णिमुद्रांकों में चित्रित सुदर्शनचक्र के चारों ओर भी बने हुये हैं।

### १८९. जयपचलय : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर खरोष्ठी लिपि और प्राकृतभाषा में दायें से बायें 'जय पचलय' लेख लिखा है। इसका अर्थ है—जय पंचालय=पञ्चालय का जय हो। अथवा पञ्चालय में जय हुवा। पञ्च च ता आपः पञ्चापः, पञ्चापामालयः पञ्चालयः

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



(मध्यपदलोपीसमास)। हमारे विचार से पञ्चालय का अर्थ यहां पांच नदियों का घर पंजाब है। कभी वृष्णियों ने पञ्जाब पर अधिकार किया होगा अथवा पंजाब प्रदेश ने किसी पर विजय पाया होगा उसी विजय के उपलक्ष्य में यह मुद्रांक बनाया होगा। यहां यह प्रश्न विचारणीय है कि पंजाब में यह जय कब तथा किसके साथ हुआ होगा। एक पक्ष तो यह स्थापित किया जा सकता है कि कुषाणों को पञ्जाब से परास्त करके वहां वृष्णियों ने अधिकार कर लिया होगा और उसी उपलक्ष्य में इस मुद्रांक का निर्माण हुवा होगा। दूसरा पक्ष यह है कि वृष्णि लोग पश्चिमी पंजाब में रहते थे, उन्होंने गान्धार की ओर यूनानी आदिकों पर कोई विजय पाया होगा, उसकी स्मृति हेतु यह मुद्रांक बनाया गया होगा। यौधेयों से युद्ध का कोई प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि उन्हीं के भाई बन्धु वृष्णि थे। परस्पर समझोता करके दोनों गण मेल-जोल से रहते होंगे। यह युद्ध और जय किसी विदेशी शक्ति से ही सम्बन्ध रखता है।

इस खरोष्ठी मुद्रांक पर लेख के ऊपर एक-एक स्तम्भ पर हस्तिसिंह तथा सुदर्शन चक्र बने हुये दिखाये गये हैं। दोनों स्तम्भ लेख के नीचे तक आकर एक वर्गाकार कठघरे के भीतर ऐसे गड़े हुये हैं, जैसे ध्वज (झंडे) गड़े हों। वृष्णियों द्वारा खरोष्ठी लिपि अपनाने का प्रयोजन स्पष्ट है, कि ये सुदूर पश्चिम तक अपना प्रभुत्व जमाये हुये थे। ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन स्थित वृष्णियों की एक मात्र रजत मुद्रा पर ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपि में 'वृष्णिराजन्यगणस्य त्रतरस्य' लिखा है। इसका भी यही अभिप्राय है कि वृष्णिगण के शासित प्रदेश की एक सीमा ब्राह्मी लिपि वाले यौधेय प्रदेश से लगती थी तथा दूसरी सीमा गान्धार की ओर खरोष्ठी लिपि वाले प्रदेश में थी। सतलुज नदी के पूर्व की ओर तो वृष्णियों की स्थिति थी ही नहीं।

हमारा विचार है कि यौधेय, वृष्णि, आर्जुनायन, कुणिन्द, मालव, औदुम्बर आदि ये सब परस्पर भाई चारे से मांडलिक राज्य बनाकर रहते थे। आवश्यकता होने पर एक दूसरे की सहायता करते रहते थे, अन्यथा अपने-अपने स्थानों पर सुख शांति से प्रजापालन करते थे। हां ! जब-जब यूनानी, शक, हूण आदि विदेशी लोगों ने आर्यावर्त की ओर मुंह उठाया, तब-तब ये लोग परस्पर एकजुट होकर उनका सामना करते थे। विदेशी आक्रमण के समय ये लोग एकछत्र राज्य की भाँति आचरण करते थे और यथाशक्ति, यथामति उन्हें मातृभूमि से खदेड़कर ही दम लेते थे।

## १९०.–१९५. जितं भगवता : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

मुद्रांक संख्या १९०, १९१ और १९३ पर 'जितं जगवता' लेख उल्लिखित है। मुद्रांक सं० १९० पर ऊपर '(जि) तं भगवता' लेख नीचे अर्द्धहस्तिसिंह, मूसल और गदा के चित्र बने हैं। यह एक पक्षीय मुद्रांक है। मुद्रांक १९१ पर एक ओर अर्द्ध-हस्तिसिंह, मूसल, गदा और चक्र के चित्र बने हैं तथा नीचे '(जितं) भगवता' लेख है। इसी मुद्रांक के दूसरे पक्ष में १९२ सं० पर शंख का चित्र बना है। मुद्रांक १९३ पर अर्द्धहस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शनचक्र के चित्र के नीचे '(जितं) भगवता' लेख लिखा है। यह भी एक पक्षीय मुद्रांक है। मुद्रांक १९४ पर एक ओर अर्द्धहस्तिसिंह तथा मूसल के चित्र दिखाई दे रहे हैं। सम्भवतः नीचे लेख भी रहा हो, किन्तु अब घिसने से स्पष्ट नहीं दिखाई देता। सं० १९५ इसी मुद्रांक का पृष्ठभाग है, उस पर शंख का चित्र बना हुआ है।

इन मुद्रांकों के लेख 'जितं भगवता' का अभिप्राय है—भगवान् के द्वारा जीता हुआ अथवा भगवान् की कृपा से जीता हुआ। ज्ञात होता है कि वृष्णियों ने स्वयं अथवा यौधेयादि गणों के सहयोग से कोई विशेष विजय प्राप्त किया होगा, उसी की स्मृति में ऐसे मुद्रांकों का निर्माण किया होगा। उस विजय को ईश्वर कृपा मानकर 'भगवता' शब्द भी लिख दिया क्योंकि विजय घोर परिश्रम के उपरान्त भगवत्कृपा से ही हुआ होगा। अथवा वृष्णियों ने अपने पूर्वज श्रीकृष्णजी महाराज वा विष्णु भगवान् को लक्ष्य करके भगवान् (भगवता) शब्द का प्रयोग किया होगा।

यह विजय यूनानी, कुषाण, शक अथवा हूण आदि किसी भी विदेशी सत्ता के साथ हुये युद्ध में मिला होगा। यह विचारणीय है कि 'जय पचलय (जय पंचालय)' और 'जितं भगवता' का उद्देश्य कहीं एक ही विजय की ओर तो नहीं है ? पश्चिमी प्रदेश में प्रचार के लिपि खरोष्ठी लिपि का मुद्रांक बना दिया होगा और पूर्वी प्रदेश के लिये ब्राह्मी लिपि का मुद्रांक निर्मित किया होगा। इन मुद्रांकों में बने चक्र, गदा और शंख ये विष्णु से भी सम्बन्धित हैं। पुराण कथाओं के अनुसार श्रीकृष्ण को विष्णु का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



अवतार माना गया है। इस पौराणिक भावना के अनुसार भी वृष्णियों ने श्रीकृष्ण के इन साधनों को अपने मुद्रांकों पर स्थान दिया होगा। यदुकुल के यादवों ने अपने गृहकलह में मूसलों तक का भी प्रयोग किया था। इसी कारण अपने कुल के हथियारों को भी मुद्रांकों पर अंकित कर दिया। मुद्रांक सं० २०१ पर 'सत्रप्तस्य' लेख है। लेख के ऊपर चक्र का चित्र बना है। चित्र सं० ४८० की उपसंख्या २ पर व्याघ्रसत्र और सत्रगुप्त इन दो वृष्णि राजाओं की मुद्रायें छपी हैं। क्या इस मुद्रांक वाले सत्रप्त और मुद्राओं वाले व्यक्तियों का किसी प्रकार सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है? चिह्न तथा नाम साम्य की दृष्टि से यह हमें सम्भावित लगता है।

## १९८. श्रीरामचन्द्रचन्द्रवौरत्रचन्द्रे ? : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

पहले इस मुद्रांक का लेख स्पष्ट नहीं पढ़ा गया था, अतः मुद्रांक चित्र के नीचे 'अपठित' शब्द लिखा हुवा है। अत्यन्त पुरुषार्थ के उपरान्त इस मुद्रांक का लेख इस प्रकार पढ़ा गया है 'श्रीरामचन्द्रचन्द्रवौरत्रचन्द्रे'। इतना होने पर भी पूर्ण निश्चय से नहीं कहा जा सकता कि यही लेख ठीक है। श्रीरामचन्द्र नाम तो स्पष्ट है। शेष पद के अर्थ की संगति पूर्णतः नहीं लगती। सम्भावना है कि यह किसी स्थान विशेष का नाम हो। क्योंकि अन्तिम चन्द्रशब्द में सप्तमी विभक्ति का प्रयोग किया गया है। जैसे 'यौधेयानां बहुधान्यके' लेखवाली मुद्राओं में सप्तम्यन्त बहुधान्यक पद देश विशेष का वाचक है। लेख के ऊपर अर्द्धचन्द्र का चित्र है, इससे यह किसी विशेष राज्याधिकारी का मुद्रांक प्रतीत होता है। लेख अत्यन्त कलात्मक और सुन्दर लिखा गया है। इसी प्रकार मुद्रांक सं० २०२ का लेख 'श्रीकुन्देश्वरस्य' भी अनुमान से ही लिखा है। इसीसे मिलता जुलता अन्य लेख भी हो सकता है। लेख के 'श्वर' इन दो अक्षरों के मध्य लम्बे दण्ड वाला त्रिशूल बना हुवा दिखाया गया है। श्री के ईकार की मात्रा के साथ 'वे' सदृश अक्षर अथवा डमरू सदृश चिह्न विशेष भी बना है। पाठक मुद्रांक के चित्र में स्पष्टतया देखकर स्वतः अनुमान लगा सकते हैं। श्री यहाँ आदरवाची है।

## २०३. देविलपुत्रस्य श्रीसत्यदेवस्यः समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'देविलपुत्रस्य श्रीसत्यदेवस्य' लेख लिखा है। श्री सत्यदेव नाम पूर्णतः स्पष्ट नहीं है। 'सत्य' शब्द के स्थान पर 'सत्र' का भी अनुमान लगाया जा सकता है। हमारे द्वारा पठित 'देव' शब्द के दकार पर ए की मात्रा भी दिखाई नहीं देती। किन्तु सभी दृष्टियों से सोच-विचार करने पर 'श्रीसत्यदेवस्य' पाठ ही उपयुक्त जंचता है। पाठक इसका निर्णय स्वयं कर सकते हैं। पिता देविल साधारण व्यक्ति था और पुत्र कोई विशेष अधिकारी होगा, क्योंकि पुत्र के नाम से पूर्व श्री का प्रयोग किया हुवा है। लेख के ऊपर चक्र, शस्त्र विशेष (लम्बे खड़े दण्डे के दोनों ओर सर्पाकृति सदृश चिह्न) तथा शंख के चित्र बने हैं। मुद्रांक चित्र के नीचे हमने प्रथम चिह्न शंख का लिखा है। किन्तु वास्तव में प्रथम चिह्न चक्र का ही है। मुद्रांक २०४ के लेख का वर्णन मुद्रांक ७३ में कर दिया है। लेख दोनों का सर्वथा समान है। केवल मात्र प्राप्ति स्थान का ही भेद है। मुद्रांक २०५ का लेख घिसने से स्पष्ट नहीं पढ़ा जाता।

इसी मुद्रांक की दूसरी ओर पगड़ी बांधे हुये राजा का गर्दन से ऊपर तक का चित्र बना है। मुद्रांक सं० २०६ से २१० पर एक पक्ष में 'शङ्करनारायणाभ्याम्' लेख है। सं० २०६ पर दूसरे पक्ष में त्रिशूल के आगे 'मातृः' लिखा है। यह 'मातृः' सम्भवतः मातृशर्मा नाम का संक्षेप है। त्रिशूल का चित्र मातृशर्मा को सेना से सम्बन्धित ज्ञापित करता है। अथवा मातृः से माताओं को मातृशक्ति पार्वती (षष्ठी देवी) को नमस्कार करने का अभिप्राय हो सकता है। मुद्रांक २०७ का 'शङ्करना' भाग टूट गया है, केवल 'रायणाभ्याम्' शेष है। दूसरी ओर 'हरिशर्म' लेख है। लेख के ऊपर शंख का चित्र बना है। यह हरिशर्मा शैव और वैष्णव विचारधारा वाले लोगों में संगठन की दृष्टि से एकता कराने में प्रमुख भाग लेता होगा। इसी प्रकार मुद्रांक २१० का विष्णुदास भी इसी विभाग से सम्बन्धित होगा। मुद्रांक २०८ पर दूसरे पक्ष में ब्राह्मी लिपि का 'म' (मकार), शक्ति (भाला) और त्रिशूल का चित्र बना है। 'म' महासेनापति का संक्षिप्त रूप प्रतीत होता है। शक्ति (भाला) कार्त्तिकेय का शस्त्र है तथा त्रिशूल कार्त्तिकेय के पिता शिवजी महाराज का शस्त्र है। मुद्रांक की पीठ में बने तीनों चिह्न सेना से सम्बन्धित दिखाई देते हैं। मुद्रांक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



२०९ की पीठ का लेख त्रुटित है। मुद्रांक २१० पर दूसरे पक्ष में 'श्रीविष्णुदासस्य' लेख है। लेख के ऊपर शंख अथवा घूमते हुये चक्र का चित्र है। श्रीः का प्रयोग यहां मुद्रांक के अर्थ में किया गया है।

## २११. रुद्रशर्म

### : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

### श्रीजुज्जस्य

इस मुद्रांक पर एक ओर 'रुद्रशर्म' लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र बना है। दूसरे पक्ष में 'श्रीजुज्जस्य' लेख लिखा है। यहां भी लेख के ऊपर त्रिशूल चित्रित है। इस मुद्रांक के 'जुज्ज' लेख को कोई कोई विद्वान्[1] 'जज्ज' पढ़ते हैं, किन्तु शुद्ध पाठ जुज्ज ही है। श्री का प्रयोग सम्मानार्थ किया गया है। जुज्ज शब्द में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग किया गया है तथा रुद्रशर्म शब्द अविभक्तिक है। इससे लगता है कि श्रीजुज्ज बड़ा अधिकारी था और रुद्रशर्मा उसके नीचे कार्य करता होगा। क्योंकि स्वस्वामी के सम्बन्ध में षष्ठी विभक्ति का प्रयोग होता है। वैसे रुद्रशर्म इस स्वतन्त्र लेख वाले हमें और भी अनेक मुद्रांक मिले हैं। हमें श्री जुज्ज लेख युक्त उभयपक्षीय ५ मुद्रांक मिले हैं। त्रिशूल का चित्र सेना से सम्बन्धित है। अतः रुद्रशर्मा और श्री जुज्ज सैन्य अधिकारी प्रतीत होते हैं।

मुद्रांक २१३ पर एक ओर 'गङ्गभद्र' लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र बना है तथा दूसरी ओर 'गङ्ग' लेख लिखा है। लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र है। सम्भव है 'गङ्गभद्र' लेख का ही संक्षिप्त रूप 'गङ्ग' हो। ऐसा लिखने का क्या प्रयोजन हो सकता है, यह विचारणीय है। त्रिशूल का चित्र इन व्यक्तियों को सेना से सम्बन्धित ज्ञापित करता है। यहां प्रथमा विभक्त्यन्त अथवा अविभक्तिक प्रयोग किस कारण किया गया है, यह भी विचारणीय है। क्योंकि प्राचीन मुद्रांकों पर अधिकतर प्रयोगषष्ठी विभक्त्यन्त ही मिलते हैं।

मुद्रांक २१६ पर एक ओर 'श्रीजितं भगवता स्वामिनारायणस्य' लिखा है। लेख के ऊपर चक्र बना है। दूसरे पक्ष में विपरीत 'सु' सदृश अक्षर लिखा है। यहां सम्भवतः सुनेत्र (सुनेत) का संक्षिप्त रूप 'सु' लिखा गया होगा। इस मुद्रांक के लेख का स्पष्टीकरण मुद्रांक सं० ७३ के विवरण में पृष्ठ ९२-९३ पर कर दिया है। मुद्रांक २१७ पर 'बलभद्रस्य' लेख प्रतीत होता है। लेख के ऊपर बैठे हुये सिंह के आगे घूमता हुआ चक्र बना है। दूसरे पक्ष में 'दामिकस्य' लिखा है। दामिक नाम अभारतीय प्रतीत होता है। बलभद्र नामक विशेष सैन्य अधिकारी के नीचे दामिक नामक विदेशी व्यक्ति नियुक्त रहा होगा, उसका यह मुद्रांक है। मुद्रांक २१५ पर भी 'दाम' उल्लिखित है। यह भी किसी दामिक सदृश अन्य देशीय व्यक्ति का नाम लगता है। इसी भांति मुद्रांक २६३ पर भी 'श्रीदामस्य' लेख है, वह भी इसी प्रकार का नाम है।

इनके अतिरिक्त कुछ उभयपक्षीय मुद्रांकों के लेख तथा चित्र इस प्रकार हैं—

| मुद्रांक संख्या | प्रथम पक्ष | द्वितीय पक्ष |
|---|---|---|
| २१९ | श्रीक्षेमस्य | बैठा हुआ नन्दी |
| २२० | हरिशर्म्म (शंख) | त्रिशूल |
| २२१ | श्रीयशस | सपाश अंकुश का चित्र |
| २२२ | श्रीरतिमुतकस (त्रिशूल) | बैठे नन्दी का चित्र |
| २२४ | श्रीस्वामिघोषस्य | कृष्णघोष |
| २२६ | श्रीहरिदासस्य | देवसेन |

1. K.K. Thiplyal: Studies in Ancient Indian seals : P. 303, No. 187.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



श्री स्वामिघोष और श्री हरिदास ये दोनों व्यक्ति विशेष अधिकारी थे। इनके नीचे कृष्णघोष और देवसेन नामक व्यक्ति रहते थे, इन्हीं के ये मुद्रांक हैं। अधिकारी=स्वामी के नाम के साथ षष्ठी विभक्ति का प्रयोग किया गया है। साथ ही नाम से पूर्व श्री का प्रयोग भी इसी स्वामित्व का सूचक है। जैसे श्रीस्वामिघोषस्य—कृष्णघोष। श्रीहरिदासस्य—देवसेन। श्री स्वामिघोष के अधीनस्थ कृष्णघोष का मुद्रांक और श्री हरिदास के अधीनस्थ देवसेन का मुद्रांक।

## २२८. श्रीसूर्य्यभद्रस्य स्य : २४०० वर्ष पूर्व (२६०० कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर एक ओर 'श्रीसूर्य्यभद्रस्य' लेख लिखा है। अर्थात् श्री सूर्य्यभद्र का (मुद्रांक)। लेख के ऊपर अर्द्धचन्द्र और डमरू अथवा शिवलिंग सदृश चित्र बना है। मुद्रांक के ऊपर वाले तट पर 'स्य' लिखा है। इस अकेले 'स्य' का अभिप्राय क्या है यह ज्ञात नहीं हो सका है। संस्कृत भाषा में अकारान्त शब्दों का षष्ठ्यन्त रूप 'स्य' लगकर बनता है, 'स्य' का अर्थ है का, के, की। मुद्रांक की पीठ पर एक दाढी वाले राजा का छाती तक का चित्र बना है। अनुमान है कि यह चित्र श्री सूर्य्यभद्र का ही है। अर्द्धचन्द्र का चित्र किसी विशेष राज्याधिकारी का चिह्न है। सूर्य्य शब्द में 'अचो रहाभ्यां द्वे' (अष्टा० ८-४-४६) सूत्र से यकार को द्वित्व किया हुआ दिखाया गया है।

## २२९. श्रीव्वन्वासिकस्य ब्रह्मि-लस्य साधिकरणस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर उल्लिखित वन्वासिक शब्द ब्रह्मिल नाम का विशेषण है। इसका अर्थ वनवासी है अथवा और कुछ, यह विचारणीय है। श्रीः मुद्रांक (मोहर) का वाचक है। ब्रह्मिल से मिलते जुलते नाम पहले भी अनेक मुद्रांकों पर लिखे हैं, यथा—श्रीरामिल, श्रीगुद्धिल, श्रोदधिल, भजिल और महिलस (मुद्रांक सं० ९३ से ९६ और ३००)। नामों से सम्बन्धित व्याकरण-विषयक जानकारी उक्त मुद्रांकों के विवरण में देखी जा सकती है। 'साधिकरणस्य' शब्द में अधिकरण का अर्थ है, कार्यालय। सहित के अर्थ में स का प्रयोग किया गया है। अर्थात् वनाधिकारी ब्रह्मिल और उसके अधिकरण=कार्यालय की श्रीः=मोहर (मुद्रांक)। मुद्रांक में 'वन्वासिक' शब्द है, हमारे विचार से 'वनवासिक' इस संस्कृत पद का प्राकृत भाषा में 'वन्वासिक' लिख दिया होगा। इससे भिन्न अर्थ की प्रतीति नहीं होती। अधिकरण लेखयुक्त एक मुद्रांक हमें अहिच्छत्रा से भी मिला है, उस पर 'कुमारामात्यस्य नियुक्तस्याधिकरणस्य' लिखा है, देखिये मुद्रांक सं० २८८। सिंहोल से प्राप्त एक मुद्रांक पर भी अधिकरण पद है, जैसे 'श्रीमहाराजकपिलस नियुक्तस्याधिकरणस्य'। यह मुद्रांक हमारे पास नहीं है, किन्तु इसका चित्र प्रस्तुत ग्रन्थ में दिया हुआ है, देखिये मुद्रांक सं० ७०। अधिकरण=कार्यालय से सम्बन्धित अनेक मुद्रांक अन्य पुरातत्त्ववेत्ताओं को भी मिले हैं। जैसे—

(१) तीरभुक्त्युपरिकाधिकरणस्य (२) कुमारामात्याधिकरणस्य।[1]
(३) नगरभुक्तौ कुमारामात्याधिकरणस्य। (४) कुमारामात्याधिकरणस्य।
(५) मगधभुक्तौ कुमारात्मायाधिकरणस्य। (६) नगरभुक्तौ कुमारामात्याधिकरणस्य।
(७) तीरकुमारामात्याधिकरणस्य। (८) वैशालीनां कुण्डे कुमारामात्याधिकरणस्य।
(९) युवराजपादीयकुमारामात्याधिकरणस्य। (१०) युवराजभट्टारकपादीयकुमारामात्याधिकरणस्य।
(११) श्रीपरमभट्टारकपादीयकुमारामात्याधिकरणस्य।
(१२) महाश्वपतिमहादण्डनायकविष्णुरक्षितपादानुगृहीतकुमारामात्याधिकरणस्य।[2]

इन मुद्रांकों पर उल्लिखित अधिकरण का अर्थ कार्यालय ही है। हमारे मुद्रांक के अतिरिक्त साधिकरण पद अभी तक अन्यत्र देखने को नहीं मिला। साधिकरणपद से व्यक्ति तथा कार्यालय दोनों के मुद्रांकों की अभिव्यक्ति हो जाती है। यह इस मुद्रांक की अपनी विशिष्टता है।

---

१. वासुदेवशरण अग्रवाल : प्राचीन भारतीय अभिलेख, द्वितीय संस्करण, पृ० ४५।
2 K. K. Thaplyal : Studies in Ancient Indian Seals, P. 103-105.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक सं० २३० पर सिकन्दर अथवा मिलिन्द (मिनेण्डर) सदृश किसी यूनानी व्यक्ति का चित्र खुदा है। यह मुद्रांक लाल अकीक उपरत्न का बना हुवा है। यह अंगूठी का नग था। इस मूल्यवान् प्रस्तर पर चित्र बहुत ही सुन्दर खोदा गया है। कला की उत्कृष्टतम उपलब्धियों का यह एक प्रतीक है। इसी प्रकार की यूनानी वेशभूषा से युक्त स्त्री चित्र का एक श्वेत अकीक मुद्रांक कौशाम्बी से भी हमें मिला है। वह भी अंगूठी का नग ही है। देखिये चित्र सं० ४२२। इसी भांति विदेशी व्यक्तियों के चित्र मुद्रांक ४२४,४२५ और ४५९ पर भी देखे जा सकते हैं। इन मुद्रांकों पर किसी के नाम नहीं हैं, पुनरपि आकृति और वेशभूषा से ये व्यक्ति नितान्त अभारतीय हैं। बहुत सम्भव है ये यूनानी और पार्थियन राजा एवं देवताओं से सम्बन्धित मुद्रांक हों। किसी राज्यकार्य से आये विदेशी दूत आदि के द्वारा ये मुद्रांक यहाँ आये होंगे। अथवा युद्ध आदि के समय विदेशी आक्रान्ता के किसी अधिकारी के मुद्रांक यहां छूट गये होंगे। सीमा के निकट होने के कारण सुनेत के साथ यूनानियों का व्यापार सम्बन्ध भी रहा होगा, उस समय भी यह मुद्रांक यहां आ सकता है। कुछ भी हो, इतना तो अवश्य है कि सुनेत में यूनानियों का शासन नहीं रहा है।

## मुद्रांकों के विभिन्न चिह्न

२३२ से २६० तक ऐसे मुद्रांक चित्रित हैं, जिन पर केवल चित्र अथवा चिह्न विशेष बने हैं। चित्र इस प्रकार हैं—नन्दी, परशु, अनेक प्रकार के त्रिशूल, सिंह, मयूर, अंकुश, सपरशुत्रिशूल, वृश्चिक (बिच्छू), मनुष्य, चक्र, कलश, सांकुशत्रिशूल और शक्ति (भाला)। नन्दी के विषय में मुद्रांक सं० ६ तथा उससे आगे भी अनेक मुद्रांकों के विवरण में लिखा जा चुका है। सिंह वीरता और साहस का प्रतीक है। मनुस्मृति में सैनिकों के लिये लिखा है—सिंहवच्च पराक्रमेत् अर्थात् युद्ध में सिंह की भाँति वीरता से पराक्रम करना चाहिये। पौराणिक गाथाओं में सिंह को पार्वती का वाहन (सवारी) माना गया है। वाहन से अभिप्राय है झण्डे का चिह्न।

गरुत्मांस्तु ध्वजो विष्णोरीश्वरस्य ध्वजे वृषः।
मयूरः कार्त्तिकेयस्य हेरम्बस्य च मूषिकः॥
कुञ्जरो देवराजस्य यमस्य महिषो ध्वजे।
सिंहो ध्वजे तु दुर्गाया इत्येषा ध्वजकल्पना॥
यस्य यो वाहनः प्रोक्तो ध्वजस्तस्य स एव तु॥—साम्बपुराण ३३. ७-१०॥

इन श्लोकों से सिद्ध है कि विष्णु का ध्वज चिह्न गरुड़, ईश्वर (शिव) का वृष (नन्दी), कार्तिकेय का मयूर, गणेश का चूहा, इन्द्र का हाथी, यम का भैंसा, दुर्गा का सिंह और भैरव का कुत्ता और सूर्य का सप्ताश्व इस प्रकार ये ध्वजों के चिह्न हैं। जो जिसका वाहन कहा गया है वह उसके झण्डे का चिह्न ही है।

शिवपत्नी तथा कार्तिकेय और गणेश की माता पार्वती (दुर्गा) के झंडे का चिह्न सिंह था। इससे ज्ञात होता है कि वह युद्ध में भी भाग लेती थी। चाहे स्त्री सेना हो चाहे पुरुष सेना। सैनिकों को सिंह की भांति वीरता से लड़ने का उपदेश दिया करती होगी। तभी तो उसने कार्तिकेय और गणेश जैसे वीर योद्धा उत्पन्न किये। जैसे सिंह अपने शत्रु पर झपट कर वार करता है, वैसे ही वीर सैनिकों को अपने प्रतिद्वन्द्वियों का साम्मुख्य करना चाहिये। इन्हीं आदर्श भावों को लेकर माता पार्वती ने सिंह को अपना वाहन (ध्वज) चिह्न चुना होगा। देखिये मुद्रांक २४०,२४१। इनके अतिरिक्त पूर्वापर प्रकाशित अनेक मुद्रांकों पर सिंह का चित्र पाठक देख सकते हैं। मुद्रांक ४५१ में सिंह पर सवार दुर्गा चित्रित है।

मयूर (मुद्रांक २४२,२४१ और ३७४) शिव के पुत्र महासेनापति कार्तिकेय के ध्वज का चिह्न है। यौधेयों की 'यौधेयगणस्य जय' लेख वाली मुद्राओं पर कार्तिकेय के बायें पैर के पास मयूर को चित्रित दिखाया गया है। इसी मयूर के ध्वज चिह्न होने के कारण कार्तिकेय के शिखिवाहन, मयूरकेतु, कुक्कुटध्वज, शिखिध्वज और मयूरध्वज आदि पर्याय शब्द हो गये। मयूर शब्द उणादि कोष मीनातेरूरन् १·६८ के अनुसार हिंसार्थक मीञ् धातु से ऊरन् प्रत्यय करने पर सिद्ध होता है अर्थात् 'मीनाति हन्ति सर्पानिति मयूरः' यह सर्पों को मारता है, इसलिये मयूर कहलाता है। इसी कारण मयूर के भुजङ्गभुक्, भुजगभोगी और अहिभुक् आदि नाम मिलते हैं। मयूर सर्पविष नाशक है। इसकी पुष्टि वेद भगवान् भी करता है। यथा—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



फिर विषहरण को मयूरिणियों के प्रसंग से कहते हैं—

त्रिः सप्त मयूर्यः सप्त स्वसारो अग्रुवः।
तास्ते विषं वि जभ्रिर उदकं कुम्भिनीरिव ॥ ऋग्वेद अष्टक २, अध्याय ५, वर्ग १६, मन्त्र ४।

हे मनुष्यो ! जो (सप्त) सात (स्वसारः) बहिनों के समान तथा (अग्रुवः) आगे जाने वाली नदियों के समान (त्रिः, सप्त) इक्कीस (मयूर्यः) मोरिनी हैं (ताः) वे (उदकम्) जल को (कुम्भिनीरिव) जल का जिनके अधिकार है वे घट ले जाने वाली कहारियों के समान (ते) तेरे (विषम्) विष को (विजभ्रिरे) विशेषता से हरें।

इस मन्त्र में उपमालंकार है। मनुष्यों को जो इक्कीस प्रकार की मयूर की व्यक्ति हैं, वे न मारनी चाहियें, किन्तु सदैव उनकी वृद्धि करनी योग्य है। जो नदी स्थिर जल वाली हों, वे रोग के कारण होने से न सेवनी चाहियें, जो जल चलता है, सूर्यकिरण और वायु को छूता है, वह रोग दूर करने वाला उत्तम होता है।[1]

इस मन्त्र में विषहरण करने वाली इक्कीस प्रकार की मयूरियों का वर्णन है, इससे मोर के अहिभुक्, भुजंगभुक् आदि नाम सार्थक ही हैं। इन मुद्रांकों में मोर को नाचता हुवा अथवा पंख फैला कर चलता हुवा दिखाया गया है। यह अवस्था मोर की तभी होती है जब वह अति हर्षित हो अथवा वर्षाकाल हो। इसीलिये मयूर के मेघानन्दी, मेघनादानुलासी और मेघनादानुलासक आदि नाम भी हैं। ऐसी ही प्रसन्नावस्था का चित्र इन मुद्रांकों पर दिया हुवा है। यौधेय मत्तमयूरक भी कहलाते थे क्योंकि वे लोग मस्त मयूर के चित्र से युक्त ध्वज को धारण किया करते थे। मयूरध्वज कार्तिकेय उनका युद्ध प्रिय देवता था। युद्ध समय विजयोप-लक्ष्य में आराध्य देव माना जाता था। अब भारतीय शासन ने मयूर को राष्ट्रिय पक्षी घोषित किया हुवा है तथा इस राजकीय पक्षी की स्मृति में दो रुपये मूल्य का एक डाक टिकट भी निकाला है।

वृश्चिक—मुद्रांक २४६ पर वृश्चिक का चित्र है। खगोलीय ज्योतिष सम्बन्धी बारह राशियों में से अष्टम राशि वृश्चिक है। युद्ध में शत्रु सेना में वृश्चिक, सर्प आदि विषैले जीव जन्तुओं का प्रयोग करने वाले सेनापति का चिह्न भी वृश्चिक हो सकता है। युद्ध में विषैले जीवों के धूम (धूयें) आदि के प्रयोग से भी शत्रु सेना को हानि पहुँचाई जाती थी। इसका प्रतीक भी यह चिह्न हो सकता है। वृश्चिक विष के विषय में आयुर्वेद शास्त्रों में लिखा है—

दहत्यग्निरिवादौ च भिनत्तीवोर्ध्वमाशु च।
वृश्चिकस्य विषं याति पश्चाद्दंशोऽवतिष्ठते ॥

बिच्छू का विष पहले अग्नि की भांति दाह करता है, फिर ऐसा लगता है जैसे शीघ्र ही अंगों को फोड़कर ऊपर की ओर निकलने वाला हो। इसी प्रकार कौटिलीय अर्थशास्त्र में भी युद्ध समय विभिन्न प्रकार से विषों के प्रयोग का विधान है।

शंख—युद्धके वाद्य विशेषों में शंख का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सेनापति और महासेनापति आदि युद्ध के समय विभिन्न अवसरों पर शंख द्वारा अनेक प्रकार के नाद करते थे। पृथक्-पृथक् ध्वनियों के भाव भी अलग-अलग होते थे। जैसे युद्धारम्भ, युद्ध समाप्ति, वेग से लड़ना, इधर-उधर से वार करना आदि। शंख ध्वनि से ही सैनिकों में वीरता की भावना घर कर जाती है तथा शंख से ही धार्मिक भावनाओं का भी प्रस्फुरण हो जाता है। इसीलिये शंख का जहाँ युद्ध स्थल में विशेष स्थान है वहां मन्दिरों में भी पवित्र मानकर अपनाया गया है। प्राचीन भारत के महान् वीर योद्धा और संगठन के प्रतीक श्री विष्णु के पास भी शंख, चक्र, गदा और पुष्प ( धन और लक्ष्मी का प्रतीक ) सदा रहते थे। पुराणों में शंख का माहात्म्य दिखाने के लिये कहा है—

शंखशब्दो भवेद्यत्र तत्र लक्ष्मीश्च सुस्थिरा।
शंखे हरेरधिष्ठानं यतः शंखस्ततो हरिः ॥—ब्रह्मवैवर्त्त पुराण, प्रकृति खण्ड अ० १८।

जहाँ शंखनाद होता है वहाँ सदा लक्ष्मी निवास करती है। शंख में विष्णु का निवास है अतः जहाँ शंख है वहीं विष्णु है। इस श्लोक का भाव यह है कि जहाँ सैनिकों का शंखनाद होता रहता है, जहाँ क्षत्रिय जागृत रहते हैं वहीं लक्ष्मी धन-सम्पत्ति

---

१. महर्षि दयानन्द सरस्वती : ऋग्वेदभाष्यम् मण्डल १. अनुवाक २४. सूक्त १९१. मन्त्र १४ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



बनी रहती है। क्योंकि जहाँ जागृति है, वहीं संगठन रहेगा। अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि जहाँ शंख, चक्र (गदा), पद्म की भाँति एकत्रित रहेंगे वहीं सुख शान्ति रूपी लक्ष्मी निवास करेगी।

वामावर्त और दक्षिणावर्त भेद से शंख मुख्यतया दो प्रकार का होता है। अर्थात् एक बायें हाथ से पकड़ा जाने योग्य और दूसरा दायें हाथ से। इन दो भेदों में ही इनके अनेक रूप रंग और आकार प्रकार मिलते हैं। पुराणों में शंखोत्पत्ति के लिये कहा है कि शिव ने हरि के शूल से दानव को मार गिराया। पुनः उसके अस्थि जाल को शूल के द्वारा लवणोदधि (लवण सागर) में डाल दिया। दानव की उन्हीं हड्डियों से शंख बन गया। ऐसी असम्भव बातें योग्य पुरुषों को सर्वथा अमान्य होती हैं। शंख समुद्री जीव है, यह उसी की हड्डी है। विशेष बात यह है कि जैसे प्रायः सभी जीव जन्तुओं के चर्ममय शरीर के अन्दर हड्डी होती है ठीक उससे विपरीत शंख और इससे मिलते जुलते कुछ जानवरों की हड्डी बाहर होती है और चर्ममय शरीर के शेष भाग हड्डी के नीचे होते हैं। अधिक जानकारी के लिये पुराण और कोश आदि का अवलोकन किया जा सकता है।

**चक्र**—चक्र युद्धोपयोगी अस्त्र है। विष्णु का चक्र और श्रीकृष्ण का सुदर्शन चक्र प्रसिद्ध है। चक्र शब्द सत्ताधारी सम्राट् के रथ के लिये भी प्रयुक्त किया जाता है। सर्वतोभद्र आदि ८४ चक्र प्रसिद्ध हैं। वृष्णि गणराज्य के सिक्के और मोहरों पर भी चक्र का चित्र मिलता है। तक्षशिला से मिले **'पंचनिगमे'** लेख युक्त सिक्कों पर तथा अहिच्छत्रा के अच्युत के सिक्कों पर भी चक्र मिलता है। प्राचीन आहत रजत मुद्राओं और किन्हीं नाग मुद्राओं पर भी चक्र का चित्र मिलता है। सुनेत से प्राप्त अनेक मुद्रांकों पर चक्र का चित्रण हुवा है, जो इसी ग्रन्थ में प्रकाशित हैं।

**गदा**—गदा के लिये कोष में लौहमयशस्त्र विशेष शब्द लिखा है। महाभारत युद्ध में भीम और दुर्योधन का गदायुद्ध प्रसिद्ध है। श्री कृष्ण के बड़े भाई बलराम गदा संचालन और गदायुद्ध के विशेषज्ञ थे। वृष्णि मुद्रांकों पर भी गदा का चित्र मिलता है। विष्णु को सदा गदा से युक्त दिखाया जाता है।

**शक्ति**—शक्ति (भाला) का चित्र अनेक मुद्रांकों के पृष्ठ भाग पर बना हुवा है। यह कार्तिकेय का प्रिय शस्त्र और अस्त्र था। इसी कारण कार्तिकेय के शक्तिग्रह, शक्तिधर, शक्तिपाणि और शक्तिभृत् आदि पर्यायवाची नाम हो गये। बृहत्संहिता ५८.४१ में कार्तिकेय को स्कन्द, कुमाररूप, शक्तिधर और बर्हिकेतु (मयूरध्वज) कहा है। यौधेयों की षण्मुख कार्तिकेय प्रकार एवं **'यौधेयगणस्य जय'** प्रकार मुद्राओं पर कार्तिकेय को शक्ति (भाला) हाथ में लिये चित्रित किया हुवा दिखाया है। कार्तिकेय की शक्तिपाणि मुद्रा में अनेक मूर्तियां भी मिली हैं।

**त्रिशूल**—विजय नामक त्रिशूल शिवजी का प्रिय अस्त्र और शस्त्र है। दुर्गा को भी महिषासुरमर्दिनी रूपवाली मूर्तियों में त्रिशूलवती चित्रित किया जाता है। प्रस्तुत मुद्रांक ग्रन्थ में भी अनेक मुद्रांकों पर त्रिशूल के विभिन्न रूपों को चित्रित दिखाया गया है। अंकुश और परशु जहाँ स्वतन्त्र शस्त्र थे वहाँ उन्हें त्रिशूल में लगा कर भी प्रयुक्त किया जाता था। अंकुश का प्रयोग युद्ध के अतिरिक्त हाथी को चलाने के लिये भी होता था। लोहे के इस शस्त्र का एक भाग सीधा तथा दूसरा वक्र (मुड़ा हुवा) होता था। मुद्रांक ३१३ पर अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्र चित्रित हैं। सुनेत से तो ऐसे बहुत मुद्रांक मिले हैं जिन पर त्रिशूल, चक्र, परशु आदि शस्त्रास्त्र ही बने हैं। मुद्रांक २५७ पर त्रिशूल के नीचे ब्राह्मी लिपि का 'म' बना है। यहाँ 'म' का अभिप्राय महासेनापति से हो सकता है। मुद्रांक २५६ पर जो वज्र सदृश शस्त्र बना है, वही शस्त्र यौधेयों की प्रथम प्रकार मुद्राओं पर भी मिलता है, देखिये फलक सं० ४७९ की उपसंख्या ९ और चित्र सं० ४८० की उपसंख्या १। शस्त्रों के साथ कहीं-कहीं कलश अथवा तत्सम किसी अन्य वस्तु वा पाश विशेष को भी चित्रित किया है, उसका प्रयोजन अन्वेषणीय है। जैसे देखिये मुद्रांक चित्र २५३—२५५ और २५९। वैसे राज्याभिषेक के समय भी पवित्र जल कलश का उपयोग होता था।

उपर्युक्त शस्त्रास्त्र यौधेयगण से सम्बन्धित हैं। इन्हीं शस्त्राशस्त्रों को यौधेयों ने अपने मुद्रा और मुद्रांकों पर भी चित्रित किया है। यौधेय आयुधजीवी भी कहलाते थे। क्योंकि अधर्म और अन्याय के विरुद्ध इनके शस्त्राशस्त्र सदा उठे ही रहते थे।

चित्र सं० २६० पर विभिन्न प्रकार के १७ मुद्रांक छपे हैं। बायें से दायें प्रथम पंक्ति के पहले और दूसरे एक उभय पक्षीय मुद्रांक पर एक ओर **'श्रीर्मतिशर्मस्य'** तथा दूसरी ओर **'शंकरनारायणाभ्याम्'** लेख है। तीसरे चौथे पर बैठे हुये नन्दी का चित्र है। दूसरी मध्यवाली पंक्ति के प्रथम मुद्रांक पर 'श्री' लेख स्पष्ट है, शेष घिसा हुआ है। तीसरे पर एक व्याघ्र बारहसींगे पर आक्रमण

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



करता हुवा चित्रित है। चौथे मुद्रांक पर लम्बे गढे में 'श्रीमाद्विशर्मस' लेख की छाप लगाई गई है। तीसरी पंक्ति के पंचम मुद्रांक पर विश्राम अवस्था में बैठा हुवा सिंह चित्रित है। यह खुदा हुवा मुद्रांक है। सम्भवतः इसे किसी मिट्टी अथवा लाख आदि गीले पदार्थ पर लगाया जाता होगा। इसके बिना इसी छाप लग ही नहीं सकती। यह साँचा प्रतीत होता है। सिंह के चित्र से युक्त ऐसे सौ से अधिक सांचे हमें मिले हैं। इनके अतिरिक्त अन्य मुद्रांकों पर लेख और चित्र अस्पष्ट हैं।

मुद्रांक २६४ पर '(श्रीमं)हाराज ··धर्मसा ··रव्य ··वधकरण' लेख दिखाई देता है। मुद्रांक का लेख अत्यधिक घिसा और टूटा हुवा है। लेख के ऊपर बायें मुख करके चलते हुये नन्दी का चित्र बना है। मुद्रांक बहुत महत्त्वपूर्ण था। यह महाराज शब्द से ही स्पष्ट है। त्रुटित लेख से कुछ भी अनुमान लगाना कठिन है। अतः जैसा हम पढ़ सके वैसा ही लिख दिया है। मुद्रांक २४७ पर सिर से कटि प्रदेश तक एक राजा का चित्र बना है। राजा पगड़ी बांधे हुये है। दाढ़ी-मूंछें भी दिखाई देती हैं। आकृति भारतीय है किन्तु कंचुक और पगड़ी यूनानी मिश्रित है। मुद्रांक पर लेख के अभाव से पूर्णतः नहीं कहा जा सकता कि चित्र किसका सम्भावित है। हमें ऐसे दो मुद्रांक मिले हैं। मुद्रांक २४८ पर एक चलते हुये नंगे व्यक्ति का पीठ की ओर से चित्र बना है। दायां हाथ एक सूखे तने पर टिका है। बायें कन्धे पर कोई वस्त्र अथवा अन्य पदार्थ लटकाया हुवा है। ऐसा चित्र बनाने का क्या प्रयोजन रहा होगा, यह अन्वेषण का विषय है।

इस प्रकार इस अध्याय में सुनेत से प्राप्त मुद्रांकों का संक्षिप्त विवरण देकर अगले अध्याय में कालीबंगा (राजस्थान) और अहिच्छत्रा (उ० प्र०) से प्राप्त मुद्रांकों का वर्णन किया जायेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ओ३म् ॥

## एकादश अध्याय

# कालीबंगा

राजस्थान के गंगानगर जिले में हनुमान्गढ़ और सूरतगढ़ मार्ग से कुछ हटकर कालीबंगा और पीलीबंगा ये दो ग्राम हैं। कालीबंगा ग्राम के निकट तथाकथित सिन्धुसभ्यता कालीन एक उजड़े हुये प्राचीन दुर्ग के खण्डहर विद्यमान हैं। भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने ११ लाख रुपये व्यय करके सात वर्ष तक इस खण्डहर की खुदाई कराई है। मैंने अपने साथियों के साथ इस खण्डहर का उत्खनन अनेक वार देखा है। मोहरें (मुद्रांक), मिट्टी के बर्तन, चूड़ियाँ, गोले, तिकोने और गोल चपटे बाट सदृश, पत्थर विशेष के धारदार उस्तरे (ब्लेड) और मणके इत्यादि अनेकविध सामान वहाँ की खुदाई में पुरातत्त्व विभाग को मिला है। इसी प्रकार का कुछ सामान हमें भी मिला है। हमें यहाँ से दो पूर्ण तथा दो अधूरे मुद्रांक भी मिले हैं। इन पर लेख नहीं है किन्तु मानव और पशु आकृतियाँ बनी हुई हैं। कालीबंगा के मुद्रांकों की प्राप्ति में श्री मेघराज जी अध्यापक का हमें बहुत सहयोग मिला है अतः वे धन्यवाद के पात्र हैं।

यह सिन्धु सभ्यता नाम उस समय प्रसिद्ध हुवा था, जब सन् १९२२ में सिन्धुघाटी के मोइनजोदारो और हड़प्पा के खण्डहरों का पता लगा। इसी प्रकार की सभ्यता सारे आर्यावर्त (भारतवर्ष) देश में मिल चुकी है। अतः इसे अब सिन्धु सभ्यता नाम देना उपयुक्त नहीं है। वस्तुतः यह सभ्यता महाभारत के निकटवर्ती समय के आर्यावर्तीय आर्यों की विशुद्ध सभ्यता है। विदेशी इतिहासकार इसे आर्यों से पूर्व की द्रविड़ सभ्यता कहते हैं। वे यह प्रयास आर्यों को हीन, असभ्य और जंगली सिद्ध करने के लिये करते रहे हैं। आर्यों के अथवा अन्य किसी के भी प्राचीन ग्रन्थ में यह बात नहीं मिलती कि आर्य लोग बाहर से आकर भारत में बसे। आदिसृष्टि से ही अर्थात् आज से १९६०८५३०७४ वर्ष पूर्व से ही आर्य लोग इस आर्यावर्त देश में बसे हुये हैं। इसी कारण इस देश का नाम आर्यावर्त है। यदि आर्य लोग बाहर से आये हैं तो कोई यह तो बताये कि आर्यों से पूर्व इस देश का नाम क्या था ? यह तो नितान्त सत्य है कि आर्य संस्कृति का विस्तार करने हेतु आर्यावर्त से लोग सारे विश्व में फैले हैं। चीन, तिब्बत, साईबेरिया, थाइलैण्ड, जापान, अमेरिका, अफ्रीका, ईरान, अरब, अफगानिस्तान, यूनान आदि देशों की प्राचीन संस्कृति को देखकर यह सिद्ध हो चुका है। ५००० वर्ष पूर्व तक आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य था। यह सब होते हुये आर्यों के विषय में यह लिखना कि ये मध्य एशिया, ईरान आदि से आकर भारत में बसे हैं, नितान्त अप्रामाणिक और सत्य के विपरीत है। ऐसी व्यर्थ बातों को मानकर हमें आत्मगौरव से वंचित नहीं होना चाहिये। अस्तु ! अब कालीबंगा से प्राप्त मुद्रांकों का संक्षिप्त विवरण लिखा जाता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक २७३ तथाकथित सिन्धुसभ्यता कालीन है। यह मुद्रांक खड़िया जैसे श्वेत किन्तु किसी कठोर पदार्थ से बनाया गया है। इस पर एक शृंगी पशु का चित्र खुदा हुआ है। चित्र के ऊपर पीपल का पत्ता भी बना है। पशु के आगे एक ऐसा पात्र सदृश चित्र बना है, जैसे इसमें पशु के लिए जल अथवा भक्ष्य पदार्थ डाला जाता हो। मुद्रांक की पीठ में धागा डालने के लिए उठे हुए स्थान के नीचे सुराख भी बना हुआ था जो अब टूट गया है। खुदे हुए चित्र एवं पृष्ठ भाग के छिद्र से ज्ञात होता है कि मुद्रांक छाप लगाने के लिए प्रयुक्त होता था। यह आज से लगभग ५००० वर्ष प्राचीन है।

मुद्रांक सं० २७४ तथाकथित सिन्धुसभ्यता कालीन है। यह अनुमानतः ५००० वर्ष प्राचीन है। मिट्टी के इस मुद्रांक के एक पक्ष में गर्दन झुकाए हुये एक व्यक्ति खड़ा हुआ चित्रित है। सिर की ओर ऊपर हुठे हुए उसके दांये हाथ में कोई वस्तु विशेष है। बायें हाथ से खुले हुए छाते सदृश एक उपकरण को पकड़ कर बायें कन्धे पर रखा हुआ है। कटि प्रदेश के पास एक तुला (तराजू) अथवा वैंहगी सदृश वस्तु लटक रही है। व्यक्ति ने दायां पैर बाईं ओर तथा बायां पैर दाईं ओर किया हुआ है। दूसरे पक्ष में एक फूल-सा बना हुआ है। दोनों पक्षों में रेखाचित्र बना है, यह चित्र किस अभिप्राय से बनाया है, यह विचारणीय है।

मुद्रांक २७५ टूटा हुआ है। यह मुद्रांक शैलखड़ी सदृश किसी कठोर और सफेद पदार्थ से बना हुवा है। इस पर चौकी पर बैठी और लम्बे मुख की एक मानवाकृति खुदी हुई है। दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली द्वारा सामने वाले किसी पदार्थ की ओर इंगित (इशारा) किया जा रहा है। बायां हाथ चौकी से नीचे लटका हुवा है। चित्र के सम्मुख एक उभयपक्षीय पत्तों वाली टहनी-सी बनी है। इसी की ओर मानवाकृति का संकेत है। खुदे हुये चित्र के कारण यह भी सम्भावित है कि छाप लगाने के लिए मुद्रांक का प्रयोग होता होगा। मुद्रांक के टूटने से यह नहीं कहा जा सकता कि इस पर कोई लेख भी उत्कीर्ण था या नहीं। इसके अतिरिक्त अस्थि सदृश किसी कठोर पदार्थ से बने मुद्रांक का एक छोटा टुकड़ा कालीबंगा से और भी मिला है। उस पर किसी पशु विशेष की पिछली दो टांगे दिखाई देती हैं, शेष भाग सारा त्रुटित है। ऐसे मुद्रांकों पर एक शृंगी पशु अथवा नन्दी का चित्र मिलता है। यह चित्र भी इन्हीं में से किसी एक का रहा होगा।

## अहिच्छत्रा

●

अहिच्छत्रा नगर के अवशेष उत्तर प्रदेश के बरेली जिले में स्थित रामनगर नामक ग्राम (अक्षांश २८.५'उ०, देशा० ७९.२५' पूर्व) के समीप टीलों के रूप में बिखरे पड़े हैं। यहां पहुँचने के लिये दो प्रमुख मार्ग हैं। पहला मार्ग बरेली पहुँच कर रेलगाड़ी द्वारा आंवला नामक स्टेशन पर उतरें। आंवला से पक्की सड़क द्वारा मोटर वा तांगे से लगभग १० मील उत्तर की ओर चलकर अहिच्छत्रा (रामनगर) पहुँचते हैं। दूसरा मार्ग यह है कि मुरादाबाद से चन्दौसी और चन्दौसी से रेलगाड़ी द्वारा आंवला जाकर पहले की तरह जाया जा सकता है। चन्दौसी और आंवला के मध्य एक छोटा स्टेशन 'रेवती बहोड़ा खेड़ा' नामक है। वहां से भी तीनकोश पैदल चलकर अहिच्छत्रा के खण्डहरों तक पहुँचा जा सकता है। रेवती स्टेशन से लगभग आधा मील चल कर मऊचन्दपुर और रामनगर के लिये तांगे से भी पहुँच सकते हैं। अहिच्छत्रा खण्डहर के निकट रामनगर, आनन्दपुर, नसरतगंज और आलमपुर आदि ग्राम बसे हुये हैं। इस खण्डहर पर मैं और मेरे साथी अनेक वार गये हैं।

इस खण्डहर से मुद्रांक आदि सामग्री जुटाने में श्री रामदास जी आर्य और श्री रईस मियाँ रेवती निवासी ने भी सहयोग दिया है, हम इनके आभारी हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## अहिच्छत्रा : नाम और इतिहास

यह प्राचीन नगरी अहिच्छत्रराज्य की राजधानी थी। वीर अर्जुन ने महाराज द्रुपद को युद्ध में जीत कर इसे गुरुदक्षिणा में अपने गुरु द्रोणाचार्य को दिया था।[1] महाराजा द्रुपद ने गुरुद्रोणाचार्य के साथ मैत्री स्वीकार करली और गंगा के दक्षिणप्रदेश में जाकर गंगातटवर्ती अनेक जनपदों से युक्त माकन्दीपुरी में तथा नगरों में श्रेष्ठ काम्पिल्यनगर में निवास एवं चर्मण्वती नदी के दक्षिण तटवर्ती पाञ्चालदेश का शासन करने लगे। द्रोणाचार्य ने उत्तर पाञ्चाल में विद्यमान अहिच्छत्र नामक राज्य को अपने अधिकार में कर लिया।[2] इस प्रकार उत्तर पाञ्चाल की राजधानी अहिच्छत्रा नगरी रही और दक्षिण पाञ्चाल की राजधानी काम्पिल्यनगर बनी।

अहिच्छत्रा नगरी के खण्डहर टीलों के रूप में कई मील के भूभाग पर फैले हुये हैं। ये खण्डहर आदि कोट के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। इस कोट के विषय में जनश्रुति है कि इसे राजा आदि ने बनवाया था। कहते हैं यह राजा अहीर था। एक दिन वह किले की भूमि पर सोया हुआ था और उसके ऊपर एक नाग ने छाया करदी थी। पाण्डवों के गुरु द्रोणाचार्य ने उसे इस अवस्था में देख कर भविष्यद्वाणी की कि वह किसी दिन इस प्रदेश का राजा बनेगा। कहते हैं यह भविष्यवाणी सच निकली और अहि=सांप की छत्र=छाया के कारण अहिच्छत्रा नाम हुआ। इस दुर्ग का वर्तमान घेरा लगभग साढे तीन मील है। दुर्ग के चारों ओर एक चौड़ी खाई (परिखा) थी जिसमें पानी भरा रहता था। यह खाई अब भी दिखाई पड़ती है। दुर्ग के चारों ओर पक्की ईंटों से बनी लगभग दस हाथ चौड़ी एक चारदीवारी भी थी। इस दुर्ग के अतिरिक्त अनेक पुराने टीले रामनगर के आसपास भी फैले पड़े हैं। ये टीले प्राचीन स्तूपों, मन्दिरों, सैनिक चौकियों आदि के सूचक हैं।

महाभारत तक यह अहिच्छत्रा नगरी चन्द्रवंशी पाञ्चाल क्षत्रियों की राजधानी रही है। महाभारत में इसके नाम छत्रवती और अहिक्षेत्र भी मिलते हैं। हरिवंश पुराण तथा पाणिनि की अष्टाध्यायी के अनुसार अहिक्षेत्र और अहिच्छत्र रूप पाये जाते हैं। रामनगर तथा उसके आसपास से प्राप्त कई अभिलेखों में अहिच्छत्रा नाम आया है। इलाहाबाद के पभोसा नामक स्थान की गुहा में अधिछत्रा नाम खुदा है।[3] यह लेख शुंगकालीन माना जाता है। अहिच्छत्रा की खुदाई में पुरातत्त्व विभाग को एक गुप्तकालीन मिट्टी की मुहर मिली थी, उस पर अहिच्छत्रा नाम लिखा है। यथा—"श्रीअहिच्छत्राभुक्तौ कुमारामात्याधिकरणस्य' सन् १९५१ के अन्त में रामनगर से एक अभिलिखित यक्षप्रतिमा प्राप्त हुई थी, उस पर भी अहिच्छत्रा नाम लिखा है। इन दोनों अभिलेखों से सिद्ध है कि शुद्ध नाम 'अहिच्छात्रा' था। महारानी द्रौपदी का जन्म इसी नगरी में हुवा था।

जिस जनपद की राजधानी अहिच्छत्रा नगरी थी, उसका नाम महाभारत में एक स्थान पर अहिच्छत्रविषय मिलता है।

**अहिच्छत्रं च विषयं द्रोणः समभिपद्यत।**

अर्थात् अहिच्छत्र जनपद को द्रोण ने प्राप्त किया। भाव यह है कि द्रोणाचार्य के अधिकार में उत्तरपाञ्चाल का अहिच्छत्र नामक विषय=जनपद था। इससे सिद्ध होता है कि राजधानी के नाम पर जनपद नाम की प्रसिद्धि प्राचीन भारत में थी। काशी और मथुरा राजधानियों के नाम पर उनके जनपदों की भी वही संज्ञा हो गई थी। इसी प्रकार अहिच्छत्रा राजधानी के नाम पर

---

१. एवं राजन्नहिच्छत्रा पुरी जनपदायुता।
युधि निर्जित्य पार्थेन द्रोणाय प्रतिपादिता॥ महा० आदि १३७.७७॥
राजन् इस प्रकार जनपदों से सम्पन्न अहिच्छत्रा नामक नगरी को युद्ध में जीत कर अर्जुन ने द्रोणाचार्य के लिये गुरुदक्षिणास्वरूप दे दिया।

२. राजासि दक्षिणे कूले भागीरथ्याहमुत्तरे।
सखायं मां विजानीहि पाञ्चाल यदि मन्यसे॥ महा० आदि० १३७-७०॥

३. अधिछत्राया राजो शोनकायनपुत्रस वंगपालस···।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



जनपद का भी नाम अहिच्छत्र प्रचलित हो गया था। महाभारत में अनेक स्थानों पर अहिच्छत्र जनपद से उत्तर पाञ्चाल का ही ग्रहण किया गया है। उत्तर दक्षिण पाञ्चाल के मध्य की सीमा गंगा नदी थी। पूरा पाञ्चाल राज्य उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में चम्बल नदी तक फैला हुवा था। प्राचीन साहित्य से ज्ञात होता है कि पाञ्चाल देश में वैदिक धर्म का जोर था। यहां के कई राजाओं ने अश्वमेध और राजसूय यज्ञ किये थे। साथ ही ब्राह्मणों को प्रभूत दक्षिणा भी दी थी। इनकी भाषा तथा यज्ञ प्रणाली को बहुत उत्तम कहा गया है। महाभारत युद्ध के पश्चात् कुरुपाञ्चाल जनपद पर नागों का अधिकार हो गया। तदनन्तर अर्जुन के प्रपौत्र जनमेजय ने इसे नागों से छीनकर अपने अधिकार में कर लिया। पुराणों में महाभारत युद्ध से लेकर नन्द वंश के राजा महापद्मनन्द तक २७ राजाओं का उल्लेख मिलता है। इनके विषय में और कोई विशेष जानकारी नहीं है। बौद्ध और जैन साहित्य में पाञ्चाल जनपद के उत्तर और दक्षिण दो भागों की चर्चा की है। मौर्यकाल में अहिच्छत्रा नगर मुक्ता (मोतियों) के व्यापार के लिये प्रसिद्ध हो गया था। चाणक्य ने भी अपने कौटिलीय अर्थशास्त्र में इसकी चर्चा की है। पीछे की जो सामग्री मिलती है उससे ज्ञात होता है कि गुप्त, पाल और सेन नाम वाले राजाओं ने यहां राज्य किया है। जैसे चन्द्रगुप्त, रुद्रगुप्त, जयगुप्त दमगुप्त, वंगपाल, विश्वपाल, आषाढसेन और वसुसेन प्रभृति। हमें नागगुप्त और वंगपाल के मुद्रांक (मोहर) भी प्राप्त हुये हैं। मित्रान्त नाम के शासकों में हमें अच्छिलसुमित्र, सूर्यमित्र, भूमिमित्र, (महाराज अच्युत), पुत्रिमित्र, विश्वमित्र ? के भी मुद्रांक मिले हैं। वंगपाल का भी एक सिक्का मिला है। इसका नाम केवल शिलालेख से ही ज्ञात था, हमें सिक्का और मोहर दोनों मिल गये हैं। सरकार के पुरातत्त्व विभाग को शिवनन्दि नामक एक शासक के सिक्के अहिच्छत्रा तथा उसके निकटस्थ क्षेत्र से मिले हैं। हमें मथुरा से रामनन्दि इस विपरीत लेख से युक्त एक ताम्र मुद्रांक भी मिला है। अहिच्छत्रा से भी पद्मनन्दि इस विपरीत लेखयुक्त एक ताम्र मुद्रांक हमें प्राप्त हुवा है। लेख के ऊपर चक्र और शंख बने हैं। अहिच्छत्रा नगर के प्राचीन खण्डहर से हमें निम्नलिखित स्थानीय शासकों की मुद्रायें प्राप्त हुई हैं—

| | |
|---|---|
| १. रुद्रगुप्त (ध्रुवमित्र के साथ) | १०. फल्गुनीमित्र |
| २. सूर्यमित्र | ११. जयमित्र |
| ३. भूमिमित्र | ११. विष्णुमित्र |
| ४. अच्यु(त) | २३. विजयमित्र |
| ५. बृहस्पतिमित्र | १४. भद्रघोष |
| ६. ध्रुवमित्र (वासुदेव कुषाण, रुद्रगुप्त के साथ) | १५. वीरसेन |
| ७. अग्निमित्र | १६. नेवक |
| ८. भानुमित्र | १७. अगिमितस (कौशाम्बी वाला) |
| ९. इन्द्रमित्र | १८. ···दत्तस्य |

इनके अतिरिक्त आहत, चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, विमकडफिस, कनिष्क, हुविष्क, वासुदेव, क्षत्रप, अमोघभूति कुणिन्द, प्रथम प्रकार यौधेय, यौधेयानां बहुधान्यके, हर्षवर्द्धन, आदिवराह, विग्रहपाल तथा अनेक मुस्लिम बादशाहों की मुद्रायें भी हमें प्राप्त हुई हैं। एक ऐसी मृन्मूर्ति मिली है जिस पर राजकुमार भरत जंगली सूअर की पूंछ पकड़ कर उसे वृक्ष से बांधने की चेष्टा कर कर रहा है। महाभारत में भरत द्वारा ऐसे ही वीर कर्म किये जाने का उल्लेख मिलता है। उसी वर्णन को मृन्मूर्ति पर चित्र के रूप में अंकित किया गया है।

अहिच्छत्रा पर स्थानेश्वर के महाराजा हर्षवर्द्धन का भी अधिकार हो गया था। उसके समय में चीनी यात्री हुएन्त्सांग यहां आया था। उसके विवरण के अनुसार तत्कालीन अहिच्छत्रा नगर लगभग तीन मील के फैलाव में बसा था। जिस प्रदेश की राजधानी यह नगरी थी, उसका विस्तार चीनी यात्री ने ३००० ली (लगभग ५०० मील) लिखा है। यहां के जलवायु को उत्तम बताया है और कहा है कि यहां के निवासी सत्यनिष्ठ थे। धर्म और विद्याभ्यास से उन्हें बड़ा प्रेम था चीनीयात्री के अनुसार उस समय अहिच्छत्रा में बौद्धों के १० संघाराम थे, जिनमें सम्मितीय संस्था के हीनयान सम्प्रदायी १००० भिक्षु रहते थे। नौ देवमन्दिर भी थे जिनमें पाशुपत मतानुयायी ३०० साधु रहते थे। हमें एक ऐसा मुद्रांक मिला है जिस पर 'पशुपतियश'

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



लेख मौर्य कालीन लिपि में लिखा है। लेख के नीचे व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं के चित्र भी बने हैं। 'स्थावरस्य' लेख का भी मुद्रांक मिला है (मु० सं० २९३)। पशुपति और स्थावर नाम शिव के भी हैं। हुएन्त्सांग के विवरण से पता लगता है कि अहिच्छत्रा में बौद्धधर्म के मानने वाले बहुत लोग रहते थे। इनके कई मठ और स्तूप थे। पुराने टीलों में उनके भग्नावशेष अब भी मिलते हैं। अहिच्छत्रा के एक बौद्ध विहार का मुद्रांक हमें मिला है, उस पर 'सुधर्म्ममहाविहारे' लिखा है। देखिये मुद्रांक सं० २९०।

सातवीं शती में यहां अनेक शिव मन्दिर भी थे। यहां की खुदाई में अनेक धर्मिक कलाकृतियां भी मिली हैं। उनमें शिवपार्वती की भी अनेक मूर्तियाँ हैं। महाभारत युद्ध के दृश्यों से अंकित तथा गंगा यमुना की विशाल मृन्मूर्तियाँ भी अहिच्छत्रा से ही निकली हैं। यौधेयों के अन्तिम विशेष प्रतिनिधि हर्षवर्द्धन की मृत्यु के पश्चात् यहाँ किसका शासन रहा, इसका वास्तविक ज्ञान नहीं है। नवम शती में महाराजा हर्ष की दूसरी राजधानी कन्नौज पर गुर्जरप्रतिहार मिहिरभोज का अधिकार हो गया था। पाल और राष्ट्रकूट राजा भी उसी समय हुये। इन तीनों वंशों में परस्पर संघर्ष रहा। राष्ट्रकूटों ने प्रतिहारों को समाप्त कर दिया। ग्यारहवीं शती में विदेशी आक्रान्ताओं ने भारत के यत्किञ्चित् शेष धर्म, संस्कृति और वैभव को भी नष्ट कर दिया। यह अहिच्छत्रा भी उसकी लपेट से बचा न रहा। महमूद गजनवी आदि के प्रहार से बचे खुचे पुराने भवन तथा मूर्तियां रुहेलों के शासनकाल में तोड़े गये।[1]

इस अहिच्छत्रा नगर से साढे चार कोस दक्षिणपूर्व में (आंवला स्टेशन के पास) रहटोइया नामक ग्राम है। उसके पास भी एक मौर्ययुगीन खण्डहर है। यहां से भी हमें पाँच मुद्रांक मिले हैं। उनमें एक मुद्रांक बौद्धविहार का है, उस पर 'हरनकर-विहारे संघस।' देखिये मुद्रांक सं० ३०९।

ऐतिहासिक दृष्टि से उत्तर प्रदेश का भी भारत में प्रमुख स्थान रहा है। प्राचीन काल में इसे मध्य देश कहते थे। यह प्रदेश ब्रह्मर्षि देश का ही एक भाग था। मनुस्मृति में लिखा है—

**कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पाञ्चालाः शूरसेनकाः।**
**एष ब्रह्मर्षि देशो वा आर्यावर्तादनन्तरः ॥२-१९॥**

कुरुक्षेत्र, मत्स्य (अलवर भरतपुर आदि), पांचाल (बरेली का चतुर्दिक् भाग) और शूरसेनक (मथुरा का निकटवर्ती क्षेत्र) यह सब आर्यावर्त्त के अन्तर्गत था और ब्रह्मर्षि देश कहलाता था।

ब्रह्मर्षिदेश (यौधेयदेश) के एक भाग इसी अहिच्छत्रा नगर से हमें ५९ मुद्रांक प्राप्त हुये हैं। जिनमें से ५० मुद्रांकों के चित्र इस प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रकाशित किये हैं। शेष मुद्रांक अस्पष्ट तथा त्रुटित हैं। अब अहिच्छत्रा और रहटोइया से प्राप्त मुद्रांकों का संक्षिप्त विवरण लिखा जाता है।

---

१. इस विषय में अधिक जानकारी करना चाहें तो श्री कृष्णदत्त वाजपेयी कृत 'अहिच्छत्रा' पुस्तक से की जा सकती है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



## २७६. धर्मो रक्षति रक्षित : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

अंगूठी के नग सदृश लाल अकीक से बने इस मुद्रांक पर विपरीत अक्षरों में 'धर्मो रक्षति रक्षित' लेख खुदा हुवा है। मुद्रांक का परिवर्धित चित्र हमने सीधी छाप का दिया है। छोटे चित्र उल्टे और सीधे दोनों प्रकार के हैं! लेख के ऊपर परशु (कुल्हाड़ा) और अर्द्धचन्द्र के चित्र भी बने हुए हैं। 'धर्मो रक्षति रक्षित' यह मनुस्मृति ८·१५ का एक चतुर्थ चरण है। पूरा श्लोक इस प्रकार है—

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत्॥ मनुस्मृति ८·१५।

मारा हुआ धर्म मारने वाले का नाश और रक्षित किया हुवा धर्म रक्षक की रक्षा करता है, इसलिये धर्म का हनन कभी न करना, इस डर से कि मारा हुवा धर्म कभी हमको न मार डाले। भाव यह है कि यदि हम धर्म का हनन करेंगे तो वह मारा हुवा धर्म हमारा भी घात कर देगा और यदि हम धर्म की रक्षा करेंगे, धर्म का पालन करेंगे तो वह धर्म सदा हमारी रक्षा करेगा। इसलिए कभी भी और किसी भी अवस्था में धर्म का त्याग नहीं करना चाहिए। धर्म के लिये चाणक्यनीति में लिखा है :—

आहारनिद्राभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥ अध्याय १७ श्लोक १७॥

आहार, निद्रा, भय और मैथुन ये सब कर्म पशुओं और मनुष्यों में एक समान है। केवल एक धर्माचरण रूपी कर्तव्य ही ऐसा है जो मनुष्य और पशु में भेद करता है। यदि मानव शरीर को धारण करके भी धर्म का पालन नहीं किया गया तो वह मनुष्य शरीर में रहता हुवा भी पशु के समान ही है। इसलिए सभी मनुष्यों को नित्य ही धर्म का पालन करना चाहिये। छान्दोग्योपनिषद् २·२३·१ में लिखा है—

त्रयो धर्मस्कन्धाः, यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमस्तप एव द्वितीयो, ब्रह्मचार्य्याचार्यकुलवासी तृतीयोऽत्यन्तमात्मानमाचार्य्यकुलेऽवसादयन् सर्व एते पुण्यलोका भवन्ति।

अर्थात् धर्म के तीन स्कन्ध (आधार) हैं। दैनिक अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधादि पर्यन्त यज्ञ, वेदादि सत्यशास्त्रों का पठन-पाठन और स्वाध्याय, सुपात्र-कुपात्र को देखकर धर्म कर्मों में दान देना यह पहला स्कन्ध है। राग-द्वेष, सुख-दुःख, मान-अपमान, लाभ-हानि, भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी आदि [द्वन्द्वों में[1] सहनशील होकर एक समान रहना यह धर्म का दूसरा स्कन्ध है। ब्रह्मचर्य पूर्वक अधिक से अधिक समय तक आचार्य के पास आचार्यकुल (गुरुकुल) में वास करके सब विद्याओं को जान कर ईश्वर को प्राप्त करना तीसरा स्कन्ध है।

वेद का उपदेश है—धर्मणा धर्मं जिन्व (यजुर्वेद १५·६) अर्थात् न्यायाचरणेन धर्मं जानीहि न्याय के आचरण से धर्म को जान। सात्विक, वीर और धीर लोग कभी न्यायाचरण रूपी धर्म से पृथक् नहीं चलते। महाराज भर्तृहरि ने कहा है—

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥ नीतिशतक ८४॥

नीति विशारद लोग स्तुति करें वा निन्दा करें, धर्माचरण करते हुए धनैश्वर्य आये वा जाये, आज ही अन्त हो अथवा लम्बे समय तक जीवन रहे किन्तु धीर और नीति निपुण सज्जन लोग कभी भी न्यायाचरणरूप धर्म से विपरीत आचरण नहीं

---

[1] द्वन्द्वसहनं तपः—योगदर्शन।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



करते, धर्म का त्याग कभी नहीं करते। इसी प्रकार के श्रेष्ठ धर्म की रक्षा के लिए प्रस्तुत मुद्रांक में आदेश और उपदेश है। जनता में धर्म का प्रचार और प्रसार करने के लिए राजा की ओर से ऐसे महत्त्वपूर्ण वाक्य खुदवाये जाते थे। यही कारण था कि जनता धर्म कृत्यों का विशेष रूप से पालन करती थी। धर्म के विषय में अधिक जानकारी मुद्रांक ८१ से ८३ के विवरण में दे दी गई है।

महात्मा चाणक्य ने लिखा है—

सुखस्य मूलं धर्मः, धर्मस्य मूलमर्थः, अर्थस्य मूलं राज्यम्, राज्यमूलमिन्द्रियजयः, इन्द्रियजयस्य मूलं विनयः, विनयस्य मूलं वृद्धोपसेवा। चाणक्यसूत्र १-६ ॥

सुख का मूल धर्म है, धर्म का मूल अर्थ (धन) है। धन का मूल राज्य होता है, राज्य का मूल इन्द्रियजय है, इन्द्रियजय का मूल विनय, नम्रता तथा सदाचार है और वह विनय वृद्ध और विद्वत्सेवा से प्राप्त होता है, अतः धर्माचरण करने वाले को वृद्ध जनों की सेवा अवश्य करनी चाहिये। पवित्र अन्तःकरण से निकली उनकी वाणी हमारे लिए सदा कल्याणकारिणी ही सिद्ध होती है।

मुद्रांक के लेख पर परशु (कुठार) और अर्द्धचन्द्र के चित्र बने हैं। परशु शक्ति का प्रतीक है तथा चन्द्रमा शान्ति का द्योतक है। अभिप्राय यह है कि धर्म का पालन दो ही उपायों से सम्भावित है—एक तो शान्ति से तथा महापुरुषों के सत्य उपदेशादि से। यदि कोई शान्ति से प्रार्थनादि करने पर भी धर्माचरण नहीं करता, उनके लिए दूसरा उपाय परशु रूपी राजदण्ड सज्जित रहता है अर्थात् उनसे राजशक्ति के द्वारा धर्म का पालन करवाया जाना चाहिए।

संख्या २७७ से २८२ तक ताम्र के मुद्रांक हैं और २८३ वां मिट्टी का है। इन सब पर लेख विपरीत खुदा हुवा है। इनके लेख और चित्र इस प्रकार हैं—

| | लेख | चित्र (चिह्न) |
|---|---|---|
| २७७. | अग्निभुक | × |
| २७८. | शङ्करदत्तस्य[1] | शंख, एक धार्मिक चिह्न। |
| २७९. | पद्मंनन्दि | शंख, चक्र। |
| २८०. | कबिकस्य | बैठा हुवा नन्दी |
| २८१. | नन्यकस्य | × |
| २८२. | क·····कय | × |
| २८३. | अफस्य | चक्र वा पुष्प। |

मुद्रांक २७९ पर 'पद्मंनन्दि' लेख विपरीत खुदा है। हमारे विचार से 'पद्मनन्दि' लेख होना चाहिये। लेख के ऊपर शंख और चक्र के चित्र बने हुये हैं। बरेली और पीलीभीत के मध्य एक स्थान पर 'शिवनन्दि' नामक किसी राजा की मुद्रायें मिली हैं। इसी स्थान के निकटवर्ती अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक का पद्मनन्दि भी शिवनन्दि के कुल से ही सम्बन्धित जान पड़ता है। दोनों का नामान्त साम्य है। यह पद्मनन्दि कोई राजा अथवा विशेष राज्याधिकारी रहा होगा। विशेष अन्वेषण करने से वहां नन्दि पदान्त नाम वाले अन्य राजाओं की भी मुद्रायें तथा मोहरें प्राप्त हो सकती हैं। मुद्रांक २८३ पर उत्कीर्ण नाम 'अफ' अभारतीय जंचता है। सम्भव है यह कोई पार्थियन व्यक्ति अहिच्छत्रा में किसी विभाग का अधिकारी आदि नियुक्त कर रक्खा होगा।

---

१. गुप्तयुग के भीटा लेख में किसी 'दण्डनायकश्रीशंकरदत्तस्य' का उल्लेख मिलता है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक २८४ ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा विस्मयकारक है। इसका लेख जैसा हम पढ़ पाये हैं, वह इस प्रकार है—

गोमिकुलागात्रगृहीतमहाराजाह्लिलसुमित्रमहाराज[सूर्यमि-]
त्रमहाराजश्रीभूमि[मि]त्रश्रीमहाराजाच्यु[तस्य]

इसका अर्थ इस प्रकार लगाया जा सकता है—गोमिकुल के गोत्र में उत्पन्न व्यक्ति द्वारा गृहीत=स्वीकृत महाराज अह्लिलसुमित्र, (उसके पुत्र ?) महाराज सूर्यमित्र, (उसके पुत्र ?) महाराज श्रीभूमिमित्र, (उसके पुत्र ?) श्री महाराज अच्युत का (मुद्रांक)। यद्यपि मुद्रांक के प्रथम नाम अह्लिलसुमित्र पाठ में हमें कुछ सन्देह है, पुनरपि अनुमानगम्य जो सम्भावित था, वह हमने लिख दिया है। इस मुद्रांक में चार नामों के अजस्र पाठ से पिता पुत्रों की नामावली का आभास होता है। यद्यपि पुत्र शब्द का स्पष्ट उल्लेख नहीं है। पुनरपि हमारे विचार से ये नाम वंशानुक्रम से ही लिखे प्रतीत होते हैं। इससे चार मित्र राजाओं की पीढी इस प्रकार बन सकती है—

महाराज अह्लिलसुमित्र
|
महाराज सूर्यमित्र
|
महाराज श्रीभूमिमित्र (भूमिमित्र ?)
|
श्रीमहाराज अच्युत

यद्यपि अहिच्छत्रा से अच्यु(त) लेख वाली सचित्र तथा अचित्र मुद्रायें मिलती हैं तथापि उसे आधुनिक इतिहासकार मित्रवंशीय राजा न मानकर किसी और से ही सम्बन्धित मानते हैं। वे तर्क यह उपस्थित करते हैं कि इसके नाम में मित्र शब्द का प्रयोग नहीं किया गया। कोई-कोई इसे अहिच्छत्रा का प्रारम्भ काल का शासक स्वीकार करते हैं। किन्तु हमारे इस मुद्रांक से स्पष्ट सिद्ध है कि महाराज अच्युत निश्चय से ही मित्रान्त नाम वाले राजाओं का ही परवर्ती है तथा यह प्रारम्भिक राजा भी नहीं है। इन राजाओं का कुल गोमिकुल कहलाता था। कुल के आगे 'गात्र' शब्द लिखा है, हमने इसे 'गोत्र' शब्द मानकर अर्थ की संगति लगाने की चेष्टा की है। भूमिमित्र के भू को भृ भी पढ़ा जा सकता है। लेख के ऊपर बायें मुख किये बैठे हुये सिंह का चित्र है। सिंह के आगे कोई धार्मिक चिह्न बना है। यही चिह्न २८६, २९१, २९४, ३१४, ३१९, और ३२४ संख्या वाले मुद्रांकों पर भी बना हुवा है। यह चिह्न किस का प्रतीक है, यह अभी विचारणीय है। मुद्रांक पर उल्लिखित व्यक्तियों में से सूर्यमित्र, भूमिमित्र और अच्यु(त) के सिक्के भी अहिच्छत्रा से हमें मिले हैं। प्रथम नाम अह्लिलसुमित्र का कोई सिक्का अब तक देखने में नहीं आया। इस महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक मुद्रांक के विषय में और अधिक अन्वेषण की आवश्यकता है।

## २८५. वगपालस : समय ३४०० वर्ष पूर्व (१६७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर 'वगपालस' (वंगपालस्य) लेख लिखा है। लेख के नीचे पांचाल राज्य का राजकीय चिह्न बना है। हमें कुछ दिन पूर्व 'वंगपालस' लेख युक्त एक सुन्दर ताम्र मुद्रा भी मिली है। इससे पूर्व वंगपाल नाम केवल दो शिलालेखों में ही मिलता है। सिक्के और मोहर के रूप में वंगपाल की ऐतिहासिकता सर्वप्रथम हमने ही सिद्ध की है। सिक्के का चित्र इसी ग्रन्थ में सं० ४७८ की उपसंख्या ६ पर प्रकाशित है। इस मुद्रा पर वे ही तीनों चिह्न बने हैं जो शेष पांचाल राजाओं की मुद्राओं पर मिलते हैं। अतः यह वंगपाल निश्चय से अहिच्छत्रा में तो शासन करता ही था। निकटवर्ती प्रदेश भी इसके अधिकार में अवश्य रहा होगा। राजा वंगपाल के लिये श्री कृष्णदत्त वाजपेयी ने लिखा है—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



"पालवंशी राजाओं में वंगपाल का नाम उल्लेखनीय है। सम्भवतः उसने दमगुप्त से राज्य छीना। वंगपाल का नाम कौशाम्बी के समीप पभोसा से मिले हुए दो अभिलेखों में भी मिलता है। इसका समय ईस्वी पूर्व द्वितीय शती का अंतिम भाग माना जा सकता है। वंगपाल के उत्तराधिकारी विश्वपाल तथा यज्ञपाल हुए। इनके नाम केवल सिक्कों द्वारा ही ज्ञात हो सके हैं। शायद इन दोनों ने बहुत थोड़े समय तक राज्य किया। पभोसा के एक लेख में अहिच्छत्रा के राजवंश में वंगपाल के बाद उसके पुत्र भागवत और फिर भागवत के पुत्र आषाढसेन का नाम दिया है। भागवत और आषाढसेन का कोई सिक्का पंचाल में नहीं मिला। हो सकता है कि इन दोनों ने अपना अधिक समय कौशाम्बी में बिताया हो। आषाढसेन के अतिरिक्त वसुसेन नामक एक अन्य सेन नामान्त वाले शासक का पता चला है। यहां पभोसा के उक्त दोनों लेखों का पूरा विवरण दे देना आवश्यक प्रतीत होता है। एक लेख में आषाढसेन नामक राजा का नाम आया है, जिसे राजा भागवत का पुत्र लिखा है। आषाढसेन की माता का नाम वैहिनरी दिया है। दूसरे लेख में उसे राजा बृहस्पतिमित्र का मामा लिखा है। इस बृहस्पतिमित्र के सम्बन्ध में विद्वानों के विभन्न मत हैं। कुछ लोग उसे मगध के शुंग वंश का मानते हैं। अन्य लोग उसे पुष्यमित्रशुंग का दूसरा नाम समझते हैं। पभोसा का पहला लेख इस प्रकार है—

पंक्ति १ अधिछत्राया राज्ञो शोनकायनपुत्रस्य वंगपालस्य

,, २ पुत्रस्य राज्ञो तेवणीपुत्रस्य भागवतस्य पुत्रेण

,, ३ वैहिदरीपुत्रेण आषाढसेनेन कारितं ॥

अर्थात् अधिछत्रा (अहिच्छत्रा) के राजा शोनकायन के पुत्र वंगपाल और तेवणी के पुत्र राजा भागवत। उनकी पत्नी वैहिदरी के पुत्र आषाढसेन के द्वारा किया गया। दूसरे लेख में आषाढसेन को राजा बृहस्पतिमित्र का मामा कहा गया है। इन दोनों लेखों से आषाढसेन तथा बृहस्पतिमित्र का वंश इस प्रकार बनता है—

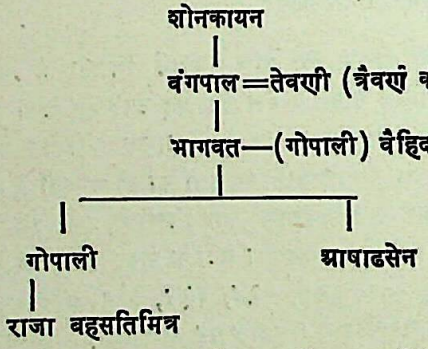


उक्त अभिलेखों में यह स्पष्ट रूप से नहीं मिलता कि बृहस्पतिमित्र कहां राज्य करता था और उसके पिता का क्या नाम था। परन्तु पभोसा में लेख मिलने से ऐसा प्रतीत होता है कि वह कौशाम्बी का राजा था। कौशाम्बी पभोसा (प्रभास) के बिल्कुल निकट है। कौशाम्बी में इस राजा के सिक्के भी मिल चुके हैं। पभोसा के इन लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि आषाढ सेन ने उक्त गुफाओं का निर्माण अपने भानजे के राज्य में करवाया।"[1]

अभी तक वंगपाल के विषय में इतनी ही जानकारी मिल पाई है। 'वंगपालस' लेख के नीचे जो चिह्न है, वही चिह्न मुद्रांक सं० ३१५ पर भी चित्रित है। यह मुद्रांक भी किसी राज्याधिकारी का ही हो सकता है। प्रत्येक राजकीय साधारण कार्य तक के लिए इसका प्रयोग होता होगा, जिससे यह ज्ञात हो सके कि यह व्यक्ति अथवा कार्य राज्य से सम्बन्धित है। यही चिह्न पांचाल राज्य के प्रायः सभी राजाओं की मुद्राओं पर मिलता है। अच्युत की मुद्रा पर पांचाल चिह्नों की अपेक्षा चक्र का चित्र मिलता है। उसने इसे किस कारण अपनाया, यह अन्वेषणीय है।

---

१. श्रीकृष्णदत्त वाजपेयी : अहिच्छत्रा पृ० ८, ९।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक २८६ से लेकर ३२५ तक ऐसे मुद्रांक हैं, जिनके विषय में विशेष कहने की आवश्यकता नहीं है। ये राज्याधिकारी आदिकों के नाम ही हैं। एक सदृश अनेक नामों के अभाव में वंशानुक्रम का अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता। अतः इनका लेख संख्या और चिह्नों सहित आगे लिखा जाता हैं—

| मुद्रांक संख्या | लेख | चिह्न |
|---|---|---|
| २८६. | श्रीवरवीरदेवस्य | शंख, शस्त्रविशेष, घूमता हुवा चक्र। |
| २८७. | गोठभूतिस | म (गोमुख ?), स्वस्तिक। |
| २८८. | कुमारामात्याधिकरणस्य | गजलक्ष्मी, दो सिंह। |
| २८९. | भद्रस्य | शंख। |
| २९०. | सुधर्ममहाविहारे | गुल्मलताओं में त्रिशूल। |
| २९१. | पुत्रिमित्र··· | घूमता हुवा चक्र, शस्त्रविशेष, शंख। |
| २९३. | स्थावरस्य | घूमता हुवा चक्र। |
| २९४. | विश्व(मित्रस्य ?) | पुष्प, शंख। |
| २९५. | जबुलस्य | शंख, त्रिशूल। |
| २९६. | (प)शुपतिथश ? | चीता, भेड़िया आदि। |
| २९७, | दामिकस्य | त्रिशूल। |
| २९९. | श्रीदौद्धस्य | चक्र, शंख। |
| ३००. | महिलस | म। |
| ३०१. | वसुजरठिकस | त्रिरत्न ? |
| ३०२. | महादिन | स्वस्तिक। |
| ३०३. | शावादिनकस | शस्त्र ? त्रिरत्न। |
| ३०४. | कुम्हकारसेणायै | × |
| ३०५. | कुमारनन्दपुत्रस्य देवनन्दस्य | × |
| ३०६. | सिंहस | रेखाचित्र। |
| ३०७. | नागगुप्त | × |
| ३०८. | जयते | × |
| ३०९. | हरनकरविहारे संघस | × |
| ३२२. | दण्डनायक···कत्र···श्रीज···म··· | सिंह |
| ३२४. | श्रीवं···(द)ण्डना(यक)मिमु··· | धार्मिक चिह्न, सिंह |
| ३२५. | सुरिकसा···? | चिह्न विशेष |

मुद्रांक २८७ पर 'गोठिभूतिस' लेख प्राकृत भाषा में उल्लिखित है। इसका संस्कृत रूप 'गोष्ठभूतेः' बनता है अर्थात् गोष्ठ-भूति का (मुद्रांक)। लेख के ऊपर ब्राह्मी लिपि का मकार अथवा नन्दीमुख तथा नीचे स्वस्तिक चिह्न बना है। 'म' महासेनापति का संक्षिप्त रूप हो सकता है। स्वस्ति चिह्न कल्याण भावना को द्योतित करता है। यह मुद्रांक ३००० वर्ष (२०७४ कलिसंवत्) पुराना प्रतीत होता है। मुद्रांक २८८ पर 'कुमारामात्याधिकरणस्य' लेख है। इसका अभिप्राय है—कुमार=राजपुत्र जो अमात्य पद पर आसीन है, उसके अधिकरण=कार्यालय का मुद्रांक (मोहर)। अहिच्छत्रा की खुदाई में पुरातत्त्व विभाग को एक ऐसा भी मुद्रांक मिला था, जिस पर लिखा है—'श्रीअहिच्छत्राभुक्तौ कुमारामात्याधिकरणस्य'[1]=अहिच्छत्रा भुक्ति में कुमारामात्य के

१. कृष्णदत्त वाजपेयी : अहिच्छत्रा पृ० ११।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



कार्यालय की मोहर। हमारे मुद्रांक में लेख के ऊपर गजलक्ष्मी चित्रित है। गजलक्ष्मी के दोनों ओर बाहर की ओर मुख किये दो सिंह भी चित्रित हैं। सिंह वीरता के प्रतीक हैं। यह मुद्रांक किसी गुप्तवंशीय कुमार से भी सम्बन्धित हो सकता है। क्योंकि अहिच्छत्रा में गुप्तों का राज्य रहा है, वहाँ से चन्द्रगुप्त द्वितीय की अनेक ताम्र मुद्रायें भी मिलती हैं। हमारे विचार से मुद्रांक २९२ भी चन्द्रगुप्त सदृश किसी गुप्त सम्राट् का ही रहा होगा। दुर्भाग्य से लेख टूट गया है पुनरपि पुष्पहस्ता लक्ष्मी, लिपि और बनावट की दृष्टि से इसका पूर्ण लेख श्री(महाराजचन्द्रगुप्तस्य) अथवा श्री(महाराजाधिराजचन्द्रगुप्तस्य) होना चाहिये।

मुद्रांक २९० पर लेख अस्पष्ट है पुनरपि हमारे विचारानुसार **'सुधर्म्ममहाविहारे'** लेख होना चाहिए अर्थात् सुधर्म्म नामक बौद्ध महाविहार का मुद्रांक। अहिच्छत्रा में बौद्धों का सुधर्म्म नामक विशाल विहार रहा होगा, उसी का यह मुद्रांक है। लेख के ऊपर गुल्मलताओं में त्रिशूल का चित्र बना है। मुद्रांक ३०९ भी किसी विहार विशेष से सम्बन्धित था। उस पर लिखा है— **'हरनकरविहारे संघस'** अर्थात् हरनकर नामक विहार में संघ का (भिक्षुओं के संघ का) मुद्रांक। मुद्रांक का लेख घिस जाने से हरनकर नाम दिखाई देता है, संभवतः इसी के सम अन्य लेख भी हो। मुद्रांक २९६ पर **'पशुपतिथश'** लेख पढ़ा जाता है। लेख के नीचे चीता, भेड़िया आदि अनेक पशु आकृतियां बनी हैं। पशुओं के ऊपर 'पशुपति' नाम सार्थक ही है। पशुपति शिवजी का भी नाम मिलता है। लिपि की दृष्टि से यह मुद्रांक ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलि०) का प्रतीत होता है। मुद्रांक ३०० पर **'महिलस'** लेख के नीचे 'म' लिखा है। यह 'म' भी महासेनापति का ही संक्षेप हो सकता है। मुद्रांक ३०४ पर **'कुम्हकारसेणायं'** लिखा है। कुम्हकार से कुम्हार का ग्रहण हो सकता है। परन्तु यहां विचारणीय है कि क्या कुम्हारों की भी सेना होती थी ?

मुद्रांक ३०५ पर विपरीत अक्षरों में लिखा है=**'कुमारनन्दपुत्रस्य देवनन्दस्य'** अर्थात् कुमारनन्द के पुत्र देवनन्द का मुद्रांक। इस मुद्रांक की पीठ में छिद्र था, अब तो वह टूट गया है। मुद्रांक में विपरीत लेख खोदते समय **'पुत्र'** शब्द भूल से सीधा खोद दिया गया है, जब कि छाप लगाने पर वही पुत्र शब्द सीधी छाप में उलटा दिखाई देता है। मुद्रांक ३०७ पर 'नागगुप्त लेख है। क्या यह भी कोई गुप्तवंशीय राजा या अधिकारी हो सकता है ? मुद्रांक ३०८ पर **'जयते'** पद खुदा है। किसी शत्रु पर जय पाने के उपलक्ष्य में ऐसे मुद्रांक बनाकर जनता में विजय की भावना भरी जाती होगी। मुद्रांक ३२२ का लेख यद्यपि त्रुटित है, पुनरपि **'दण्डनायक'** ठीक पढा जाता है। दण्डनायक और महादण्डनायक पुराकाल में न्याय विभाग के अधिकारी न्यायाधीश को कहते थे।

लेख के ऊपर बायें मुख करके बैठे हुए सिंह का चित्र बना है। मुद्रांक ३२४ पर भी **'श्रीमहादण्डनायक···'** लेख पढा गया है। यहां श्रीः मुद्रांक वाची है और महादण्डनायक न्यायाधीश का वाचक है। जैसे आजकल भी न्यायालय, (Court) उच्चन्यायालय (High Court), सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) में न्यायाधीश होते हैं। उसी प्रकार प्राचीनकाल में दण्डपाशिक, दण्डनायक और महादण्डनायक आदि छोटे बड़े न्यायाधीश होते थे। मुद्रांक २९९, ३०० और ३०२ मौर्यकालीन अर्थात् ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलिसंवत्) के हैं।

इनके अतिरिक्त नन्दी, हाथी, चीता, बाड़वाला वृक्ष, स्त्रीपुरुष, चैत्य अथवा सुमेरु पर्वत, मकार अथवा गोमुख, चक्र और विविध शस्त्रास्त्र, सिंह, पुष्प, मुर्गा, वृक्ष, मयूर, मृग आदि के चित्र भी बने हैं। इन पर कोई लेख नहीं है। मुद्रांक ३१० पर एक ही चित्र को चार वार छापा गया है। यह मिट्टी से बना लघु मणके सदृश उपकरण बीच से खाली है। चारों ओर नन्दी, हाथी, चीता आदि बने हैं। नीचे के तल पर मानव का रेखाचित्र बना है। मुद्रांक ३१२ पर चैत्य सदृश चित्र दो ओर बना हुवा है, एक ओर उभरा हुवा तथा दूसरी ओर खुदा हुवा है। मुद्रांक ३१३ प्राचीन शस्त्रास्त्रों की सचित्र जानकारी के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और सुन्दर उदाहरण है।

अहिच्छत्रा के मुद्रांकों का संक्षिप्त विवरण देकर अब अगले अध्याय में कौशाम्बी के मुद्रांकों का वर्णन किया जायेगा।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म्

## द्वादश अध्याय

# कौशाम्बी

●

भारत का यह प्राचीन नगर प्रयाग से दक्षिण पश्चिम दिशा में लगभग ४० मील दूर यमुना के तट पर विद्यमान था, जो अब अपने प्राचीन वैभव को उजड़े हुये ऊंचे नीचे खण्डहरों के रूप में संजोये हुये अतीत की कथा सुनाने के लिये किसी इतिहास-प्रेमी की प्रतीक्षा कर रहा है। भारत के पुरातत्त्व विभाग की ओर से इस खण्डहर की खुदाई भी हुई है। हमने भी इस दुर्ग के अनेक चक्कर लगाकर हजारों रुपये व्यय करके यहां की ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित की है। अनेक बार अपनी जीप गाड़ी द्वारा जा कर हजारों मुद्रायें, सैकड़ों मुद्रांक (मोहरें), ढेरों मणके, सैकड़ों मृन्मूर्तियां, बहुत सी प्रस्तर मूर्तियां तथा अन्य विविध सामग्री अपने संग्रहालयों के लिये संगृहीत की है।

कौरव-पाण्डवों की पुरानी राजधानी हस्तिनापुर जब गंगा की बाढ़ से उजड़ गई, उस समय कुरुवंशी राजा निचक्षु हस्तिनापुर को छोड़ने के लिये विवश हो गया। पुनः उसने वत्सों की राजधानी कौशाम्बी पर अधिकार कर लिया[1]। निचक्षु के उत्तराधिकारियों ने भी अपना राज्य यहीं स्थापित कर लिया। यह निचक्षु महाराज युधिष्ठिर की सातवीं पीढ़ी में हुआ था। इसी वंश की सत्ताईसवीं पीढ़ी में शाक्य मुनि बुद्ध और वर्द्धमान महावीर के समय उदयन कौशाम्बी का राजा हुआ। वासवदत्ता हरण की कथा को कौशाम्बी में मृन्मूर्तियों पर भी चित्रित किया गया है। महावत सहित हाथी पर राजा और वासवदत्ता सवार हैं। पीछे-पीछे सेना पीछा करती हुई आ रही है। हाथी पर से राजा ने स्वर्ण और रजत मुद्राओं की थैली खोलकर बिखेरना प्रारम्भ कर दिया जिससे सैनिक धन एकत्रित करने में लग गये और कर्त्तव्य को भूल गये। इतने ही में भागता हुआ हाथी दूर निकल गया और सैनिक देखते रह गये। इस दृश्य से अंकित तीन मृन्मूर्तियां हमें भी प्राप्त हुई हैं।

कौशाम्बी को प्राकृत भाषा में 'कसविया' कहते थे। यह नाम वहां से प्राप्त होने वाली किसी-किसी मुद्रा पर भी मिलता है। हमें भी ऐसी दो मुद्रायें मिली हैं। कौशाम्बी के जिन स्थानीय राजाओं की हमें मुद्रायें मिली हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं—

| | | | |
|---|---|---|---|
| १. | बृहस्पतिमित्र | ८. | विजयमघ |
| २. | अग्निमित्र | ९. | शिवमघ |
| ३. | प्रजापतिमित्र | १०. | जयमघ |
| ४. | भद्रमित्र | ११. | नेवस (मघ) |
| ५. | वरुणमित्र | १२. | पुष्टश्रिय (मघ) |
| ६. | राजमित्र | १३. | विशाखदेव |
| ७. | वैश्रवण (मघ) | १४. | अश्वघोष |

---

१. अधिसीमकृष्णपुत्रो निचक्षुर्भविता नृपः।
यो गंगयाऽपहृते हस्तिनापुरे कौशाम्ब्यां निवत्स्यति॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



१५. अंगराज
१६. भीमसेन
१७. भीमवर्मा
१८. शिवदेव
१९. शिवदत्त
२०. ज्येष्ठदत्त
२१. कसबिया
२२. ककुद्वान् नन्दी प्रकार
२३. गाधिन

इनके अतिरिक्त आहत (रजत ताम्र), ताम्र की ढली (चतुष्कोण, गोल) मुद्रायें, प्रथम प्रकार यौधेय, कनिष्क, हुविष्क, वासुदेव, अनेक मुस्लिम बादशाह तथा अन्य बहुत प्रकार की मुद्रायें प्राप्त हुई हैं।

हमें कौशाम्बी से १७४ मुद्रांक (मोहर) मिले हैं। मित्र वंश के राजा अहिमित्र, इन्द्रमित्र, राजमित्र, भट्टिमित्र, रेवतीमित्र, राघमित्र तथा ·····त्रमित्र की मुहरें मिली हैं। कीर्तिभूति, गिरिभूति और लजवतीभूति ये किसी भूतिवंश के राजकीय मुद्रांक हैं। केशवगुप्त और शूरगुप्त किसी गुप्त वंश से भी सम्बन्धित हो सकते हैं। मघ वंशीय पर्णमघ और मघवश के मुद्रांक भी मिले हैं। कलचुरी वंश के श्रीमद्यशःकर्णदेव का एक भारी ताम्र मुद्रांक चार ताम्र पत्रों सहित हमें कौशाम्बी से मिला है। ऐतिहासिक और पुरातत्त्विक दृष्टि से यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कौशाम्बी के अनेक मुद्रांक हमें श्री पण्डित सूजरभान द्विवेदी, श्री जिनेश्वरदास जी जैन, श्री पं० रामचन्द्र जी टंडन, श्री रामचन्द्र जी व्यास तथा श्री सुरेशचन्द्र अग्रवाल द्वारा प्राप्त हुये हैं। श्री पं० भूरजभान जी और सुरेशचन्द्र जी ने कुछ मुद्रांक उपहार स्वरूप भी दिये हैं, एतदर्थ हम उनका आभार सहित धन्यवाद करते हैं।

कौशाम्बी के विषय में अधिक जानकारी चाहें तो श्री जी.आर. शर्मा द्वारा लिखित The Excavations at Kausambi (1957-59) के द्वारा की जा सकती है।

लखनऊ तथा दिल्ली के व्यापारियों से कुछ मुद्रांक हमने क्रीत किये थे। उनकी वास्तविकता में हमें सन्देह है। पुनरपि उनके चित्र कौशाम्बी की मोहरों के पश्चात् दे दिये हैं। यदि प्रतिकृति भी बनाई होगी तो किसी वास्तविक वस्तु से ही बनाई होगी। अथवा नकली भी हो तो भी ऐसे इतिहास दूषकों से सावधान रहना चाहिये। जो कि पेट भरने अथवा चन्द चांदी के टुकड़े वा कागजी अर्थपत्रों की प्राप्ति हेतु भारतीय पुरातत्त्व और इतिहास के साथ खिलवाड़ करते हैं। ऐसे लोगों में इतिहास और देश प्रेम का अंश भी नहीं होता। पुरातत्त्व सम्बन्धी वस्तुओं से आजीविका चलानी हो तो चलाते रहें किन्तु नकली वस्तुयें बनाकर कम से कम इतिहास दूषण तो नहीं करना चाहिये। पुरातत्त्व प्रेमियों को इस विषय में सावधान रहकर गवेषणात्मक और परीक्षात्मक दृष्टि से विचार करना चाहिये।

अब कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांकों में से कुछ एक का संक्षिप्त विवरण दिया जाता है। इसके पश्चात् चित्र सं० ४७९ और ४८० पर प्रकाशित सिक्कों और शिलालेख आदि का परिचय दिया जायेगा।

## ३२६. सोमस्य : समय २२०० वर्ष पूर्व (२८७४ कलिसंवत्)

यह मुद्रांक ताम्र का है किन्तु इस पर रजत आदि किसी अन्य धातु का झोल (पानी) चढ़ाया हुवा प्रतीत होता है। इस पर विपरीत अक्षरों में 'सोमस्य' लेख खुदा है। इसका अर्थ है सोम का (मुद्रांक=मोहर)। लेख के ऊपर एक विशालकाय नन्दी खड़ा हुआ चित्रित है। नन्दी के आगे-पीछे एक-एक ध्वज लहरा रहा है। कला की दृष्टि से नन्दी बहुत सुन्दर बना हुवा है। मुद्रांक की पीठ पर एक छल्लेदार मूंठ भी बनी हुई थी जो अब टूट गई है। यह सोम नामक व्यक्ति कौशाम्बी का कोई राज्याधिकारी होगा। विपरीत मुद्रांक आदेश पत्रों पर छाप आदि लगाने के काम आता था। दो ध्वजों में से एक राजकीय तथा दूसरा विभागीय हो सकता है। नन्दी के सामने वाले ध्वज के स्थान पर यज्ञिय यूप की भी कल्पना की जा सकती है जैसा कि यौधेय और आर्जुनायन गण की मुद्राओं पर यूप से बद्ध नन्दी चित्रित किया हुवा मिलता है।

संख्या ३२७ से ३३९ तक विपरीत लेख वाले मुद्रांक हैं। विपरीत लेख के मुद्रांक राज्य की ओर से दिये जाने वाले आदेशपत्रों पर स्वीकृति हेतु लगाये जाते थे। इनके लेख क्रमशः इस प्रकार हैं—

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



| मुद्रांक सं० | लेख | चित्र | समय |
|---|---|---|---|
| ३२७. | ईश्वरस्य | × | २४०० कलिसंवत् |
| ३२८. | जितं भगवतवसुदेवेन | शंख, चक्र | २७०० ,, |
| ३२९. | अनामकस्य | शंख | २७०० |
| ३३०. | पर्नमघः (पर्णमघ) | × | २८०० |
| ३३१. | अयदासस | × | २२०० |
| ३३२. | षडतन्यीस्य | शंख | २४०० |
| ३३३. | भूयतस | × | २५०० |
| ३३४. | वक्रदेववनु ? | × | २४०० |
| ३३५. | वेडस | × | २४०० |
| ३३६. | सिह (सिंह) | × | २४०० |
| ३३७. | सिङ्ह | मन्दिर | २८०० |
| ३३८. | (जितं) भग (वता) | देवता | २५०० |
| ३३९. | वाहस | × | २६०० |

मुद्रांक ३२७ पर ईश्वरस्य लेख है। यह ईश्वर नामक व्यक्ति का मुदांक है। मुद्रांक ३२८ पर 'जितं भगवतवसुदेवेन' लेख लिखा है। हमारे विचार से शुद्ध लेख 'जितं भगवता वासुदेवेन' होना चाहिये। इसका अर्थ है भगवान् वासुदेव=श्रीकृष्ण जी की कृपा से जीत लिया गया अथवा यह सारा जगत् भगवान् द्वारा जीता हुवा है। लेख के ऊपर घूमता हुआ चक्र बना है। शंख और चक्र जहाँ धार्मिक चिह्न हैं वहाँ सैनिक चिह्न भी हैं। शंख धर्मप्रचार=धर्म-घोष का प्रतीक है। चक्र चक्रवर्त्ती राज्य तथा वायुयान, अश्वयान आदि का भी प्रतीक है। लेख तथा चित्रों के मध्य उठे हुए सिरों वाली एक सीधी रेखा बनी है। घूमते हुये चक्र का अभिप्राय है हमारा शासन चक्र चलता रहे, कभी रुकने न पाये। मुद्रांक की पीठ में एक चौड़ा छिद्र भी बना हुवा है। यह मुद्रांक छाप लगाने के काम आता था। मुद्रांक ३२९ पर 'अनामकस्य' लेख लिखा है। अर्थात् अनामक नाम वाले व्यक्ति का मुद्रांक। लेख के ऊपर शंख का चित्र बना हुवा है। शंख प्रचार विभाग का तथा स्वतिक कल्याण का प्रतीक है। मुद्रांक ३३० पर पर्नमघः (=पर्णमघः) लिखा है। यह पर्णमघ मघवंशी कोई राजा अथवा अधिकारी प्रतीत होता है। मुद्रांक के पीठ की ओर एक छिद्र भी बना हुवा है। मुद्रांक ३८५ पर 'मघवश' लेख है, यह मघवंश हो सकता है अथवा मघवश=मघवस्य का प्राकृत रूप हो। मघवा इन्द्र का भी पर्याय है। इसका अभिप्राय और भी हो सकता है।

मुद्रांक ३३१ पर सीधे अक्षरों में किन्तु दायें से बायें (खरोष्ठी, उर्दू, अरबी, फारसी आदि की भांति 'अयदासस (=आर्य-दासस्य) लेख खुदा है। अर्थात् आर्यदास का मुद्रांक। मुद्रांक ३३२ हाथी दांत से बना है इस पर 'षडतन्यीस्य' खुदा है, इस नाम का स्पष्टीकरण नहीं हो पाया है। लेख पर शंख का चित्र बना हुवा है। इसी प्रकार मुद्रांक ३३३ और ३३५ भी हाथी दांत के हैं, उन पर क्रमशः भूयतस(=भूयतस्य) और वेडस(=वेदस्य) लेख खुदे हैं अर्थात् भूयत और वेड(वेद) का मुद्रांक। मुद्रांक ३३४ विशेष प्रकार के चित्तीदार काले और भारी पत्थर का है, इस पर 'वक्रदेववनु' ? लेख खुदा है। इसका भाव क्या है यह अभी विचारणीय है। मुद्रांक की पीठ में मूठ भी बनी हुई है। सं०३३६ लाल पत्थर का टूटा हुवा टुकड़ा है। इस पर सिह=(सिंह) लेख विपरीत खुदा है। मुद्रांक ३३७ मिट्टी का है इस पर "सिङ्ह" (=सिंह) लेख खुदा है। लेख के ऊपर मन्दिर अथवा यज्ञवेदि का चित्र बना हुवा है। मुद्रांक ३३८ गोमेद नामक रत्न से बना हुआ है, इस पर '···भग···' ये दो अक्षर दिखाई दे रहे हैं। मुद्रांक टूट गया है। हमारे विचार से पूरा लेख 'जितं भगवता' होना चाहिये। अर्थात् भगवान् की कृपा से जीता हुवा। लेख के ऊपर किसी देवता की मूर्ती बनी हुई है। यह उपरत्न अंगूठी का नग है। जनता में धार्मिक भावना का प्रचाकरने के लिये ऐसे मुद्रांकों का प्रयोग किया जाता था। यह जगत् भगवान् द्वारा जीता हुआ है। अथवा भगवान् की कृपा से हमारा यह विजय हुवा है। चित्र किस देवता का है यह नहीं कहा जा सकता। मुद्रांक ३३९ पर सम्भवतः 'वाहस' लिखा है। इसका अभिप्राय है वाह नामक व्यक्ति का मुद्रांक।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



मुद्रांक ३४० पर 'महाराज्ञः चेणुशिवसंघस्य' लेख लिखा है अर्थात् महाराज चेणुशिव सघ का मुद्रांक। यह चेणुशिवसंघ नाम है अथवा चेणु नाम हो सकता है। यह चेणु नामक व्यक्ति शिव भक्तों के संघ का महाराजा होगा। लेख के ऊपर खड़े हुये नन्दी का चित्र बना है। नन्दी के चित्र के आगे त्रिशूल का चित्र बना है। नन्दी के पीछे भी किसी शस्त्र विशेष का चित्र है। मुद्रांक की पीठ पर किसी वस्तु विशेष का चित्र बना है। मुद्रांक की पीठ पर दो रेखायें ऐसी बनी हैं जैसे किसी वस्तु विशेष को भेजते समय इस मुद्रांक को उस पर लगाकर धागे से बांध दिया जाता था। जिससे कोई अनधिकृत व्यक्ति मार्ग में उसे खोलकर न देख ले। मुद्रांक ३४१ पर 'महादण्डनायक···स्यस्य श्रियः' लेख लिखा है। महादण्डनायक का अर्थ है महान्यायाधीश=मुख्य न्यायाधीश। यह प्रजा में दण्ड विधान की व्यवस्था करता था। महादण्डनायक का नाम घिसने के कारण स्पष्ट दिखाई नहीं देता। नाम के अन्त में श्री था, उसका षष्ठी विभक्ति में श्रियः बनता है वही यहाँ दिखाई दे रहा है। लेख के ऊपर पंख फैलाकर चलते हुये मयूर का चित्र बना है। मुद्रांक ३४३ टूटा हुवा है। इस पर 'कौशाम्बिघोषिता(राममहा)विहारे भिक्षु (संघस्य) लिखा है। यह कौशम्बी के घोषिताराम नामक बौद्धों के महाविहार में रहने वाले भिक्षु संघ का मुद्रांक है। लेख के ऊपर धर्म चक्र बना हुवा है। उसके दोनों ओर दो मृग बैठे हुये चित्रित हैं। कौशाम्बी से इस प्रकार के अनेक मुद्रांक अन्य लोगों को भी खुदाई आदि में मिले हैं। त्रुटित मुद्रांक ३४४ पर 'कौशाम्बिमहा (विहारे···)प···' लेख दिखाई देता है। यह भी किसी बौद्ध महाविहार का मुद्रांक है। लेख के ऊपर कमल पुष्प पर स्थित लक्ष्मी चित्रित है, उसके दोनों ओर दो सेविकायें बनी थीं। मुद्रांक टूटने के कारण एक ही दिखाई दे रही है। लक्ष्मी दाहिने हाथ में माला अथवा फूल लिये हुये है। कौशाम्बी में बौद्धों का बाहुल्य रहा है अतः बौद्धमत विषयक पर्याप्त सामग्री वहाँ से उत्खनन आदि में मिलीं है। बौद्धमत के प्रसिद्ध श्लोक युक्त मुद्रांक हमें भी प्राप्त हुये हैं। देखिये मुद्रांक सं० ३४६, और ३९६ से ३९८ तक।

## ३४५. श्रीमद्यशःकर्णदेवः : समय संवत् ८२३ वि०

यह मुद्रांक महाराजा यशःकर्णदेव का है। कौशाम्बी से हमें प्रस्तुत मुद्रांक से बंधे हुये इस राजा के चार ताम्रपत्र मिले हैं। दो ताम्रपत्र श्रीमद् यशःकर्णदेव के हैं तथा दो उसकी महारानी श्रीमती वीक्कलदेवी के हैं। राजा के ताम्रपत्रों पर मार्गशीर्ष पूर्णिमा सं० ८२३ रविवार और चन्द्रग्रहण का दिन लिखा है। महारानी के ताम्रपत्रों पर श्रावण कृष्णा षष्ठी सं०८२७ शनिवार दक्षिणायन संक्रान्ति का उल्लेख है। उक्त दोनों तिथियों को क्रमशः राजा-रानी ने ब्राह्मणों को ग्राम और ग्रामांश दान किये थे। उसी दान का वर्णन इन ताम्रपत्रों में है। प्रारम्भ के २४ श्लोकों में राजा के वंशानुक्रम का वर्णन तथा कीर्तिगान किया गया है। ताम्रपत्रों के अन्त में दान के महिमा का वर्णन है। कल्चुरी वंशी महाराज यशःकर्णदेव कर्णदेव का पुत्र तथा गांगेयदेव का पौत्र था। यशःकर्णदेव की माता का नाम आवल्ल देवी था, यह हूणवंश की राजकुमारी थी। मुद्रांक पर राजा के हस्ताक्षर बने हैं। हस्ताक्षर लेख के ऊपर बठी हुई गज लक्ष्मी का चित्र बना हुवा है। लेख के नीचे नन्दी का चित्र है। नन्दी के आगे पीछे भी पात्र सदृश कुछ रक्खा हुआ है। मुद्रांक के मुख्य भाग के चारों ओर बिन्दु वाली गोल पंक्ति बनी हुई है। यह रत्नमाला समृद्धि की द्योतक भी हो सकती है और सुन्दरता के लिये भी बनाई जा सकती है। मुद्रांक के पृष्ठ भाग में एक बहुत बड़ी मूठ कड़े के रूप में बनी हुई है। इसी कड़े में चारों ताम्रपत्र लगे हुये थे। इन ताम्र शासनों का विस्तृत और पूर्णतः वर्णन प्राचीन अभिलेखों के ग्रन्थ में पृथक् से किया जायेगा।

## ३४६. ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथाग-<br>तो ह्यवदत् तेषां च यो निरोध ए- : समय २२०० वर्ष पूर्व (२८७४ कलिसंवत्)<br>वं वादी महाश्रमणः

यह बौद्ध धर्म का प्रसिद्ध श्लोक है। इसका अर्थ है जो धर्म=स्वभाव कारण विशेष से उत्पन्न होते हैं, उनके मूल कारण और निरोध के उपायों को तथागत बुद्ध ने कहा है, महाश्रमण बौद्धभिक्षु लोग ऐसा कहते हैं। इस मुद्रांक पर लेख के ऊपर बौद्धस्तूप (विहार) में महात्मा बुद्ध की पद्मासनस्थ मूर्ति स्थापित है। विहार के दोनों ओर दो बोधिसत्त्व खड़े हैं, सम्भवतः ये सारिपुत्र और मौद्गल्यायन हैं। स्तूप का शिखर अति सुन्दर है। शिखर के दोनों ओर दो पवित्र जलकलश भी दिखाये गये हैं। इसी लेख वाले चार मुद्रांक कौशाम्बी से और भी मिले हैं, जिनमें से तीन के चित्र मुद्रांक ३९६ से ३९८ पर देखे जा सकते हैं। उन·

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



पर कोई चित्र नहीं है, केवल लेख मात्र है। मुद्रांक ३६६ की आकृति बौद्धस्तूप जैसी है। मुद्रांक ४६६ पर भी यही बौद्ध वाक्य लिखा है। इस मुद्रांक पर लेख के ऊपर तीन बौद्ध स्तूप (चैत्य) बने हैं। मुद्रांक की यह प्रतिकृति हमने वाराणसी से खरीदी है। यह किसी वास्तविक मुद्रांक की ही प्रतिकृति है। सिंहोल से भी इसी लेख वाला एक मुद्रांक प्राप्त हुवा है। उस पर एक पक्ष में महात्मा बुद्ध पद्मासनस्थ बैठे हैं तथा दूसरी ओर तीन ऊंचे-ऊंचे बौद्धस्तूपों के नीचे 'ये धर्मा०' आदि श्लोक लिखा है। देखिये मुद्रांक सं० ७६।

## ३४६. लेवतीमितस : समय ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर प्राकृत भाषा में 'लेवतीमितस' नाम लिखा है। इसका संस्कृत रूप 'रेवतीमित्रस्य' बनता है अर्थात् रेवती-मित्र का मुद्रांक। लेख के ऊपर दो चिह्न बने हैं। एक बाड़ वाला वृक्ष अथवा यज्ञिय यूप सदृश है। दूसरा समकोण बनाकर काटती हुई दो सीधी रेखाओं के चारों सिरों पर एक-एक गोला बना हुवा है। ऐसा चिह्न उज्जयिनी की मुद्राओं पर बना हुआ मिलता है। कौशाम्बी से प्राप्त अनेक मुद्रांकों पर भी यही चिह्न बना है। यह किस का प्रतीक है, यह अभी विचारणीय विषय है। रेवतीमित्र के अतिरिक्त मित्रान्त नाम अन्य मुद्रांकों पर भी है :—

| मुद्रांक संख्या | लेख | चिह्न | समय |
|---|---|---|---|
| ३५१ | राघमितस सिथाद्वारे | ०+० | १५०० कलिसंवत् |
| ३५४ | राजमितस नगरभूते | ०+० | २००० ,, |
| ३५७ | इदमितस | ०+० म | १७०० ,, |
| ३५६ | राजमितस | ०+० स्वस्तिक | २००० ,, |
| ३६३ | भट्टिमितस | गदा, शक्ति | २४०० ,, |
| ३८२ | लाजु अहिमितस | × | २००० ,, |
| ३८७ | राजमितस | × | १७०० ,, |
| ४०७ | ···तरमितस | × | २००० ,, |

ये सब लेख प्राकृत भाषा में हैं। मुद्रांक ३५१ पर 'राघमितस सिथाद्वारे' लिखा है इसका संस्कृत रूप 'राघमित्रस्य सिन्थाद्वारे' बनता है। अर्थात् राघमित्र के सिन्थाद्वार पर (द्वार में)। यह किसी द्वार विशेष का नाम है जैसे 'महासेनापतिस्य वीरद्वारे' (मुद्रांक सं० १)। ३५४ मुद्रांक का संस्कृत लेख 'राजमित्रस्य नगरभूते' बनेगा। नगरभूते का अभिप्राय नगरभूति=नगर निगम जैसी नगर व्यवस्थापिका संस्था का नाम है। जैसे देखिये 'नगरभूति' मुद्रांक सं० १८। मुद्रांक ३५७, ३५६, ३६३, ३८७ और ४०७ के लेख संस्कत भाषा में क्रमशः इस प्रकार बनेंगे—इन्द्रमित्रस्य, राजमित्रस्य, भट्टिमित्रस्य, राजमित्रस्य, ···अमित्रस्य। इसी प्रकार के भट्टिमित्रस्य लेख वाले मुद्रांक लखनऊ और दिल्ली से भी हमें मिले हैं। देखिये मुद्रांक सं० ४६२ और ४७३। मुद्रांक ३८२ के लेख का संस्कृत रूप 'राज्ञो अहिमित्रस्य' बनेगा। राजा अहिमित्र कौशाम्बी का कोई विशेष राजा होगा। हमें अभी तक इसके सिक्के नहीं मिले हैं।

## ३५०. हथीपलशो : समय ३५०० वर्ष पूर्व (१५७४ कलिसंवत्)

इस मुद्रांक पर प्राकृत भाषा में 'हथीपलशो' लेख है, इसका संस्कृत रूप 'हस्तिपालस्य' बनता है। अर्थात् हस्तिपाल नामक व्यक्ति का मुद्रांक। यहां प्राकृत भाषा में षष्ठी विभक्ति के दन्त्य सकार के स्थान पर तालव्य शकार का प्रयोग किया गया है। उस 'श' के स्थान पर भी 'शो' लिखा है। लेख के नीचे स्वस्तिक, म, कच्छप और वज्र अथवा किसी अन्य शस्त्र का चित्र

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



बना है। जिसे हमने कच्छप माना है उसे श्री कृष्णदत्त जी वाजपेयी ने इन्द्रध्वज लिखा है।[1] श्री वाजपेयी जी ने हस्तिपाल के एक सिक्के की भी चर्चा की है। सम्भवतः इसी मुद्रांक वाले राजा हस्तिपाल का ही वह सिक्का हो। मुद्रांक ३६० पर 'सिदेवस म' लेख है। प्राकृत के इस नाम का संस्कृत रूप 'श्रीदेवस्य म' अथवा 'शिवदेवस्य म' बन सकता है। म महासेनापति पद का संक्षिप्त रूप सम्भावित है। लेख के ऊपर खुले हुये छाते सदृश किसी वस्तु-विशेष का चित्र बना है। इसी प्रकार के दो मुद्रांकों के चित्र कौशाम्बी की खुदाई की पुस्तक में दिये हैं। वहां इस लेख को 'स द व स म' पढ़ा गया है।[2] मुद्रांक ३६१ किसी सातवाहन वंशी सातकर्णि आदि का प्रतीत होता है। लिपि वैसी ही है जैसी सातकर्णि आदि के सिक्कों पर मिलती है। लेख त्रुटित है, पुनरपि जितना दिखाई देता है, वह इस प्रकार है—'शिरि सप्त नं कय···भ···कर्णिस'। मुद्रांक ३६६ पर 'भोनुपुत्र वग्गघोष' तथा ३६७ पर वर्गघोष लिखा है। दोनों लेखों पर क्रमशः पुष्प और उलूक सदृश चित्र हैं। ये दोनों वग्गघोष एक हो व्यक्ति हैं अथवा भिन्न-भिन्न, यह अन्वेष्टव्य है। हमें ऐसे वर्गघोष लेख वाले ५ मुद्रांक मिले हैं।

## ३८६. कीतिभूतिस
## लजवतीभूतिस : समय ३४०० वर्ष पूर्व (१६७४ कलिसंवत्)

एक मिट्टी के गोले पर अनेक नामों की छापें लगाई हुई थीं। गोला टूट गया है, अतः छः छापें ही टूटी-फूटी दिखाई देती हैं। उन पर क्रमशः ये नाम हैं—१. (कीतिभूतिस (=कीर्तिभूतेः), २. लजवतीभूतस (=लज्जावतीभूतस्य, राजवतीभूतस्य), ३. ·····भूतिस (भूतेः), ४. मितस (=·····मित्रस्य), ५. व·····स (=व···स्य), ६. रहन···।

मुद्रांक ३९४ पर गिरिभूतिस (=गिरिभूतेः) लेख है। मुद्रांक ४१३ पर 'भूतस' (=भूतस्य) लेख हैं। ये भूत्यन्त नाम एक कुल से सम्बन्धित भी हो सकते हैं। ४२१ से ४४९ तक के मुद्रांकों पर कलश, स्वस्तिक आदि अनेक प्रकार के धार्मिक चिह्न शस्त्रास्त्र, नन्दी, सिंह तथा व्यक्ति विशेष के चित्र बने हैं। इस प्रकार के चिह्न ताम्र की प्राचीन ढली हुई मुद्राओं पर भी मिलते हैं। ये मुद्रांक १५०० कलिसंवत् के आसपास के हैं। मुद्रांक ४२१ पर चैत्य और धार्मिक चिह्नों के मध्य धनुर्धारी व्यक्ति का चित्र बना है। मुद्रांक ४४० पर भी एक खड़े हुये व्यक्ति के दायें हाथ में शक्ति भाला तथा बायें के पास धनुष दिखाया गया है। अनेक चिह्नों का अभिप्राय अन्वेषणीय है। सभी चिह्न किसी न किसी वस्तु अथवा भावना विशेष के प्रतीक हैं।

लखनऊ से खरीदे हुये ४५४ सं० मुद्रांक पर 'धनदेवस्य' लेख है अर्थात् धनदेव का मुद्रांक। लेख के नीचे यूप से बंधा नन्दी खड़ा है। नन्दी के आगे पीछे शक्ति (भाला) के चित्र बने हैं। नन्दी के मुख के पास चैत्य सदृश चित्र बना है। अयोध्या से किसी धनदेव नामक राजा के सिक्के भी मिले हैं।[3] मुद्रांक ४५५ पर 'शूरदस्य' लेख की सम्भावना है। लेख के ऊपर ढाल, तलवार और भाला लिये हुए एक योद्धा सिंह से युद्ध करता हुवा चित्रित है। भाला सिंह की गर्दन के आर-पार निकला हुवा है। शेर के अगले पंजे योद्धा की ढाल पर वार करते हुये दिखाई दे रहे हैं। योद्धा के सिर पर लम्बे बाल हैं और वह धोती बांधे हुये हैं। सं० ४७० मुद्रांक पर 'श्रीधोमन्त्रम्' लेख पढ़ा जाता है। इसका क्या अभिप्राय है, यह अन्वेष्टव्य है। यह मुद्रांक जौनपुर से क्रीत किया (खरीदा) गया है। सं० ४७१, ४७२ पर एक उभयपक्षीय मुद्रांक छपा है। इस पर एक ओर 'श्रीअच्युतभद्रः' लेख के ऊपर शंख और पुष्पों के चित्र हैं। दूसरे पक्ष में 'स्वामिनाग' लेख के ऊपर शंख और घूमता हुवा चक्र चित्रित है। श्री अच्युतभद्र बड़ा अधिकारी था और स्वामिनाग उसके अधीनस्थ। क्योंकि अच्युतभद्र के साथ आदर सूचक श्री का प्रयोग किया गया है।

---

1. The Journal of the Numismatic Society of India 1966, Vol. XXVIII Part 1.
   A Clay Sealing Hastipal from Kausambi. by K. D. Bajpai. P. 44-45. Plate II, No. 11.
2. G. R. Sharma. : The Excavations at Kausambi, (1957-59) p. 85-86.
3. John Allan : Catalogue of Ancient India (British Museum) London. p. 132-133, plate XVI 17-18, XVII, 1-2

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



चित्र सं० ४८० की सं० २ पर वृष्णिगण के राजा व्याघ्रसत्र और सत्रगुप्त की मुद्रायें हैं। इन पर वृष्णिगण का सुदर्शन चक्र भी बना है। सुनेत से यज्ञसोम नामक राजा की भी मुद्रायें मिलती हैं। सं० ३ पर 'महासेनापति बलवर्मा' लिखा है। इस मुद्रा पर नन्दी का चित्र बना है। यह उक्त लेख भी नन्दी के चतुर्दिक् लिखा हुवा है। मुद्रांक संख्या ४ पर ईश्वर लिखा है। उसके पास प्रथम प्रकार मुद्राओं पर बने शस्त्र जैसा भी बना है। दूसरी ओर देवी तथा कहीं-कहीं पुष्प भी चित्रित है। सं० ५ पर केवल 'बल' लिखा है। ये भी बलवर्मा की मुद्रायें प्रतीत होती है। ये बलवर्मा और ईश्वर भी यौधेयों के सेनापति प्रतीत होते हैं। क्योंकि प्रथम प्रकार (शस्त्रास्त्र) वाली मुद्राओं के चिह्न इन पर हैं और उन्हीं के ढेर में से प्राप्त हुई हैं। सं०६ मुद्रा वंगपाल की है। यह अहिच्छत्रा का राजा था। इसकी मुहर भी इस पुस्तक की सं० २८५ पर छपी है। वंगपाल की मुद्रा और मोहर सबसे पहले हमें ही मिली है। इससे पूर्व इसका नाम पभोसा की गुहा में लिखे लेख में ही मिलता था। सं० ७ अगरोहा से प्राप्त एक मृत्पट्टिका है। इस पर षड्ज, निषाद, धैवत, पञ्चम, मध्यम, गान्धार और ऋषभ, (षड्ज) इन सात वैदिक स्वरों के आद्यक्षर 'सा, नि, ध, पा, मा, गा, रे (और स) लिखे हैं आदि और अन्त में षड्ज की द्विरावृत्ति की हुई है। इससे यौधेय प्रदेश में गान-विद्या की उत्कृष्टता की प्रतीति होती है। आजकल भी गायक लोग सरगम नाम से इन्हीं स्वरों के आधार पर गान करते हैं। सं० ८ पर यौधेयगण का विजयगढ़ स्थित शिलालेख है। यह देवनागरी लिपि में इस प्रकार लिखा जायेगा। **सिद्धम्, यौधेयगणपुरस्कृतस्य महाराजमहासेनापतेः पु··· ब्राह्मणपुरोगं चाधिष्ठानं शरीराविकुशलं पृष्ट्वा लिखत्यस्तिरस्मा ···"** प्रतीत होता है कि यौधेयगण के द्वारा पुरस्कृत=सम्मानित महाराजा और महासेनापति के किसी विशेष महत्त्वपूर्ण पत्र को शिला पर उत्कीर्ण किया गया है। क्योंकि ब्राह्मण=विद्वानों को आगे करके निवास स्थान देकर रखना और शरीरादि का कुशल क्षेम पूछकर सूचना लिखना यह प्रकार पत्रों में ही अपनाया जाता है। सं० ९ पर औदुम्बरगण की रजत मुद्रायें चित्रित हैं।[1] इनके एक ओर हाथी तथा दूसरी ओर नन्दी बना है। हाथी की ओर ब्राह्मी लिपि में तथा नन्दी की ओर खरोष्ठी लिपि में **'भागवतमहादेवस राजराजस'** लिखा है। **यौधेयानां बहुधान्यके** प्रकार तथा औदुम्बरों की इन मुद्राओं का अनुकरण करके भारतीय यूनानी राजा अपोलोडोटस (अपलदत्त) ने अपनी चतुष्कोण मुद्रायें चलाई थीं। कई इतिहासकार कहते हैं कि यूनानियों की मुद्राओं का अनुकरण भारतीयों ने किया, यह नितान्त भ्रमपूर्ण तथा असत्य है। भारतीय मुद्रायें यूनानी मुद्राओं से प्राचीन हैं। सं० १० पर कुणिन्दगण के राजा की रजत मुद्रायें प्रकाशित हैं। इन पर एक ओर ब्राह्मी लिपि में तथा दूसरी ओर खरोष्ठी में **'राज्ञः कुणिन्दस अमोघभूतिस महाराजस'** लिखा है। अर्थात् कुणिन्दराज महाराजा अमोघभूति की मुद्रा। इन पर एक ओर मृग के आगे देवी खड़ी है तथा दूसरी ओर स्वस्तिक, वृक्ष, चैत्य, त्रिरत्न, कलश और शस्त्र विशेष बने हुये हैं। हमें कुणिन्दगण की रजत और ताम्र की सैंकड़ों मुद्रायें प्राप्त हुई हैं।

चित्र सं०४७९ और ४८० में विविध मुद्राओं के चित्र हैं। ये सब यौधेय आदि गणों की मुद्रायें हैं। चित्र सं०४७९ की सं० ९ तथा ४८० की १ सं० की मुद्रायें सबसे प्राचीन हैं। इन मुद्राओं पर एक ओर त्रिशूल, वज्र, चक्र आदि विविध प्रकार के शस्त्रास्त्र बने हैं। दूसरे पक्ष में नन्दी (शिव सहित) तथा कहीं-कहीं बैठा और खड़ी हुवा अकेला नन्दी भी चित्रित है। यौधेय आयुधजीवी कहलाते थे। यह नाम उनकी इन मुद्राओं से भी सार्थक सिद्ध होता है। यौधेय लोग सदा से शिवभक्त रहे हैं। इसीलिये शिव तथा उनके परिवार से सम्बन्धित नन्दी, मयूर, कार्तिकेय, त्रिशूल, शक्ति (भाला) आदि चिह्नों को अपनी मुद्राओं और मुद्रांकों पर स्थान दिया है। चित्र ४७९ में सं० १ की मुद्राओं पर **'यौधेयानां बहुधाजके (=बहुधान्यके)** लेख लिखा है। मुद्रा के मध्य यज्ञिय यूप से बंधा हुआ नन्दी चलता हुआ प्रदर्शित है। दूसरे पक्ष में हाथी का चित्र है। हाथी की पीठ पर झंडा और त्रिरत्न के चिह्न भी बने हैं। हाथी युद्धोपयोगी पशु है। नन्दी घी, दूध और कृषि का प्रतीक है। हमें **'यौधेयानां भूमधान्यके'** लेख वाली मुद्रा भी प्राप्त हुई है। चित्र उस पर भी ये ही हैं। उसमें नन्दी के पास यूप नहीं है। बहुधान्यक नाम यौधेय प्रदेश का अति प्राचीन नाम है। महाभारत सभा पर्व में इस नाम का उल्लेख है।[2] सं० २ की मुद्रा पर **'बहुधन यौधेय'** लिखा है। दूसरी ओर एक स्तम्भ पर चक्र लगा हुआ दिखाया है। सं० ३ से ५ तक की मुद्रायें षण्मुखकार्तिकेय प्रकार वाली यौधेयों की मुद्राओं के ढेर में मिली हैं। इन पर क्रमशः

---

१. हमें औदुम्बर गण की चतुष्कोण २०० से अधिक अनेक प्रकार की ताम्र मुद्रायें भी मिली हैं। उनमें कई एक पर एक पक्ष में हाथी तथा दूसरे पक्ष में नन्दी चित्रित है। उन पर भी ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपि अंकित है।

२. ततो बहुधनं रम्यं गवाढ्यं धनधान्यवत्। अ० ३२।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



राज्ञो रावणस्य, राज्ञो वरुणमित्रस्य और राज्ञो भानुवस्य लिखा है। ये रावण, वरुणमित्र और भानुव यौधेयों के राजा थे। भानुव नाम प्राकृत भाषा का है। इसका शुद्ध नाम भानुघोष था। हमें ऐसी अनेक मुद्रायें मिली हैं, जिनपर एक ओर 'भानुघोष' तथा दूसरी ओर 'राज्ञो भानुघोषस्य' लेख है। इन्हीं मुद्राओं का कुछ परिवर्तित वह छोटा रूप है। सं० ६,७ पर 'भागवतस्वामिनो ब्रह्मण्ययौधेयस्य' और 'भागवतस्वामिनो ब्रह्मण्यदेवस्य कुमारस्य' लिखा है। इनपर शक्ति हाथ में लिये हुये षण्मुखकार्तिकेय का चित्र बना है। किन्हीं किन्हीं पर मृग का चित्र भी है। यौधेयों की इन्हीं मुद्राओं का एक छोटा रूप हमने ऐसा भी देखा है जिस पर 'महासेनस्य कुमारस्य' लिखा है। यह अति दुर्लभ मुद्रा है। सं० ८ पर यौधेयगणस्य जय, यौधेयगणस्य जय द्वि और यौधेयगणस्य जय त्रि लेख वाली मुद्रायें छपी हैं। इन पर एक ओर शक्तिभृत् कार्तिकेय तथा दूसरी ओर पार्वती का चित्र है। ये तीनों प्रकार की मुद्रायें यौधेयों ने कुषाणों को तीन वार पराजित करके चलाई थी। यह यौधेयों की विजयमुद्रा कहलाती है। उसी समय यौधेयों ने एक मुद्रांक (मोहर) का भी निर्माण किया जिस पर 'यौधेयानां जयमन्त्रधराणाम्' लिखा मिलता है। देखिये मुद्रांक सं० १२, और ८०।

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रकाशित होते होते हमें ४२ मुद्रांक सुनेत से तथा एक मुद्रांक मथुरा से मिला है। अतः इनका भी वर्णन प्रसंगवश किया जा रहा है। चित्र यहां प्रकाशित नहीं किये जा रहे हैं।

## ४८१. ससभाथु-ज- : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

प-अन·····

यह वृष्णिगण का मुद्रांक है। लेख के ऊपर एक स्तम्भ पर ध्वज के रूप में गड़े अर्द्धहस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शन-चक्र के चित्र बने हैं। वृष्णि मुद्रांकों पर प्रायः ऐसे ही चित्र मिलते हैं। लेख और चित्र के मध्य बिन्दु निर्मित तीन पक्तियां भी बनी हैं। प्रत्येक बिन्दु ऊपर से नीचे की ओर पतली-पतली रेखाओं से जुड़ा हुवा है। इसी प्रकार के बिन्दु वृष्णिमुद्रांक १८७ और १८८ पर भी बने हैं। मुद्रांक का लेख वाला भाग अत्यधिक घिस जाने से लेख स्पष्ट नहीं दिख रहा।

सात्वत भजमान नामक एक राजा का एक 'वृष्णि' नामक पुत्र था, इसका दूसरा नाम क्रोष्टु भी था। यह यादव कुल का शासक था। क्रोष्टु वंश के इसी वृष्णि से सुविख्यात वृष्णि वंश का प्रादुर्भाव हुआ था। श्रीकृष्ण के साथ स्यमन्तक मणि के सम्बन्ध में इसका युद्ध हुवा था। इसे सन्देह हो गया था कि मेरी स्यमन्तक मणि कृष्ण के द्वारा चुराई गई है। किन्तु कृष्ण ने अपने आप को निर्दोष सिद्ध कर दिया।[1]

मुद्रांक ४८२ भी वृष्णिगण का ही है। इस पर केवल चित्र बने हैं। चार लम्बी पड़ी तथा दस खड़ी छोटी रेखाओं से बने एक चतुष्कोण घेरे में एक स्तम्भ पर सुन्दर सुदर्शनचक्र तथा दूसरे स्तम्भ पर अर्द्धहस्तिसिंह पीठ मिलाये हुए चित्रित हैं। अब तक उपलब्ध हुये अन्य वृष्णिमुद्रांकों से इसमें इतना अन्तर है कि औरों में अर्द्धहस्तिसिंह का चित्र पहले दिया गया है और सुदर्शनचक्र का पीछे। इसमें प्रथम स्थान सुदर्शनचक्र का है पुनः अर्द्धहस्तिसिंह का। मुद्रांक १८९ खरोष्ठीलिपि का है। उसके चित्रों को भी यदि लिपि की भांति दायें से बायें देखा जाये तो उसमें भी चक्र को प्रथम स्थान पर स्थित कहा जा सकता है। मुद्रांकों के रूप में वृष्णिगण की सत्ता सर्वप्रथम हमने ही सिद्ध की है।[1] हमसे पूर्व केवल एक रजत मुद्रा श्री कनिंघम को प्राप्त हुई थी, वह अब ब्रिटिश म्यूजियम लन्दन में है। ताम्र की कुछ चतुष्कोण वृष्णिमुद्रायें हमें भी सुनेत से मिली हैं।

## ४८३. श्रीश्रमवतीस्य : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

ताम्र के इस मुद्रांक पर 'श्रीश्रमवतीस्य' यह लेख विपरीत खुदा हुवा है। लेख के ऊपर चक्र और कलश तथा नीचे

---

१. श्री सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव : प्राचीन चरित्र कोश पृष्ठ ९०३ पर वृष्णि शब्द।

१. The auther deserves to be congratulated warmly for bringing as many as ten vrishni sealings to light for the first time. The vrishnis were so for only scantily represented by literary and numismatic evidence and the above sealings certainly add to our knowledge abou· tl em.

The Jonral of The Numismatic Society of India voi. XXXV 1973 —Ajay Mitra Shastri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



त्रिशूल का चित्र बना है। लेख के चारों ओर अण्डाकार रेखा भी बनी है। श्रमवती नाम में मतुप् प्रत्यय करके स्त्रीलिंग में ङीप् प्रत्यय किया गया है।[1] इसका अर्थ है श्रम=परिश्रम करने वाली। श्री का प्रयोग आदर के लिये किया गया है। **'श्रीश्रमवती'** यह नाम हमें किसी स्त्री अधिकारिणी का प्रतीत होता है। इससे ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में पुरुषों की भांति देवियां भी राज्यकार्य में भाग लिया करती थीं। इसी प्रकार का स्त्री अधिकारिणी का एक मुद्रांक पृष्ठ १२१ (संख्या ४२) पर प्रकाशित है।

## ४८४. श्रीकुमारबोधिः : समय २५०० वर्ष पूर्व (२५७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर **'श्रीकुमारबोधिः'** यह लेख दो बार उभरा हुवा लिखा है। धातु के जिस विपरीत मुद्रांक की जब पहली छाप गीली मिट्टी में लगाई गई, उस समय छाप पर हाथ लग जाने से वह उभरा हुवा लेख नीचे दब गया था। इसीलिये उसी के पास दूसरी छाप लगा दी गई। इस कारण एक ही मुद्रांक पर यह नाम दो बार लिखा हुवा है। लेख के ऊपर अर्द्धचन्द्र का चित्र है। इससे कुमारबोधि विशेष राज्याधिकारी प्रतीत होता है। श्री का प्रयोग आदर के लिये किया है। मुद्रांक ४८५ पर **'श्री बुधस्य'** लेख लिखा है। लेख के चारों ओर अण्डाकार उभरी हुई रेखा बनी हुई है। यह यौधेय गणराज्य का कोई अधिकारी था। इन मुद्रांकों की चर्चा पृष्ठ १०० पर भी की हुई है।

मुद्रांक ४८६ पर **'श्रीय्यौमीश्वरस्य'** लेख लिखा हुवा है। अर्थात् यौमीश्वर की श्रीः=मोहर। श्रीः यहां मुद्रांक (मोहर) वाचक है। श्रीर् के रेफ के कारण यकार को द्वित्व हो गया है।[2] लेख के ऊपर चक्र सदृश तथा शस्त्र विशेष का चित्र बना है। इसी प्रकार का शस्त्र **'यौधेयगणस्य जय त्रि'** प्रकार वाली यौधेय मुद्राओं पर भी मिलता है। इसका आकार ऐसा है जैसे बीच में खड़े दण्डों के दोनों ओर दो सर्पसदृश चित्र बने हों। यह यौमीश्वर कोई शासनाधिकारी रहा होगा।

## ४८७. राजाधिराज हुविष्क कुषाण : समय ३३०० वर्ष पूर्व (१७७४ कलिसंवत्)

मिट्टी के इस मुद्रांक पर हुविष्क का चित्र है। उसके बायें हाथ में शक्ति (भाला) और दायें में सुन्दर छड़ी (दण्ड) लिये हुये है। चित्र के चारों ओर यूनानी लिपि में उपाधि सहित राजा का नाम लिखा हुवा है।[3] इसका भाव है **'राजाधिराज हुविष्क कुषाण'** ठीक इसी प्रकार का चित्र हुविष्क की स्वर्ण मुद्राओं पर भी मिलता है। सुनेत से हुविष्क की स्वर्ण मुद्रा का ठप्पा भी मिला है। यह भी सम्भव है कि स्वर्णमुद्रा के ठप्पे की साधुता को जांचने के लिये मिट्टी पर उसकी प्रतिकृति ली होगी। वस्तुतः यह बहुत महत्त्वपूर्ण मुद्रांक है। मुद्रांक ४८८ पर भी कुषाण राजा वासुदेव की स्वर्णमुद्रा का शिवनन्दी वाला पक्ष बना हुवा है। लगता है यह भी ठप्पे (सांचे) को परखने के लिये बनाया गया होगा। उसे पकाकर अधिकारी विशेष को दिखाते होंगे। नहीं तो परीक्षण गीली मिट्टी पर भी किया जा सकता है, उसे पकाने की क्या आवश्यकता होती।

## ४८९. रामनन्दिस्य : समय २४०० वर्ष पूर्व (२६७४ कलिसंवत्)

यह ताम्र का चतुष्कोण मुद्रांक मथुरा से प्राप्त हुवा है। इस पर **'रामनन्दिस्य'** लेख विपरीत खुदा हुवा है। अर्थात् रामनन्दि (रामनन्दी) का (मुद्रांक)। लेख के चारों ओर बिन्दु निर्मित वर्गाकार घेरा बना हुवा है। यह रामनन्दि मथुरा प्रदेश का कोई राजकीय अधिकारी होगा। वैसे अहिच्छत्रा (बरेली) के निकट किसी रामनन्दि नामक शासक की मुद्रायें भी प्राप्त हुई हैं। इन दोनों की एकता में कोई सम्भावना नहीं है। अतः ये दोनों पृथक्-पृथक् व्यक्ति होंगे। (मुद्रांक ४९०)। मथुरा से एक ताम्र मुद्रांक ऐसा भी मिला है जिस पर महाराज सेनापतिषेण (क्षेम ?) लिखा है। यह चतुष्कोण मुद्रांक है। इस पर लेख विपरीत खुदा हुवा है। इसका वैशिष्ट्य इसके महाराज और सेनापति पदों से ही भासित हो रहा है। विपरीत मुद्रांक राजकीय शासनादेशों पर स्वीकृति हेतु लगाया जाता था। इस प्रकार ग्रन्थ के छपते-छपते जो विशेष मुद्रांक मिले थे, उनका संक्षिप्त विवरण लिख दिया है।

---

१. तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् (अष्टा० ५-२-९४)। मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः (अष्टा० ८-२-९)। उगितश्च (अष्टा० ४-१-६)॥

२. अचो रहाभ्यां द्वे (अष्टा० ८-४-४६)।

३. (राओ ननो राओ) शाओ ननो शाओ हुविष्की कुषानो।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri



श्री देवेन्द्र जी हाण्डा के पास भी सुनेत के कुछ मुद्रांक हैं, जिन पर उनके अनुसार निम्नलिखित लेख लिखे हैं—

१. श्रीस्था(णुव)र्म्मण
२. श्री·····
चन्द्रगुप्तस्य
चक्रराजस्य
३. श्रीज्येष्ठदत्तस्य
४. ता अ (ठ) त र
···अ त त स
···(स) त (प)

हमें इन मुद्रांकों के एकत्रित करने में जिन सज्जनों ने सहयोग दिया है, उनके नाम इस प्रकार हैं—

१. श्री अध्यापक भरतसिंह जी वामला
२. ,, बगड़ावतसिंह जी, नौरंगाबाद
३. ,, जयचन्द जी ,,
४. ,, चन्दगीराम जी ,,
५. ,, रामपत जी आर्योपदेशक, आसन
६. ,, महेन्द्रसिंह जी, कलोई
७. ,, मामचन्द जी, रोहतक
८. ,, पं० ओमप्रकाश जी, अच्छेज पहाड़ीपुर
९. ,, पृथ्वीसिंह जी, मोहनबाड़ी
१० ,, अध्यापक मेघराज जी
११. ,, प्रो० मांगेराम जी, थुसकाणी
१२. ,, पं० गंगाविष्णु जी शर्मा, सिंहोल
१३. ,, देवेन्द्रसिंह जी हांडा, लुधियाना
१४. श्री रामदास जी, आनन्दपुर, बरेली
१५. ,, रईसमियां जी, रेवती, बरेली
१६ ,, सरदार लक्ष्मणसिंह जी, सुनेत
१७. ,, बलवेन्द्रसिंह जी, सुनेत
१८. ,, वैद्य रामलाल जी, यमुनानगर
१९. ,, डा० लोकेशचन्द्र जी, दिल्ली
२०. ,, डा० सूरजभान जी, आसौधा
२१. ,, प्रो० योगानन्द जी, भदानी
२२. ,, विरजानन्द जी दैवकरणि
२३. ,, बलवान्सिंह जी इञ्जीनियर, झाड़ली
२४. ,, रामचन्द्र जी, संगतपुरा, जींद
२५. ,, पं० सूरजभान जी द्विवेदी, कौशाम्बी
२६. ,, सुरेशचन्द्र अग्रवाल, इलाहाबाद

इनके अतिरिक्त अनेक व्यापारियों से भी बहुत से मुद्रांक खरीदे हैं। इन सभी सहृदय सज्जनों के हम आभारी हैं और इनको धन्यवाद देते हैं। आशा है भविष्यत् में भी सभी सज्जन लोग हमें इसी प्रकार सहयोग देकर भारतीय इतिहास की सुरक्षा में विशेष योगदान करते रहेंगे।

इस प्रकार हमने मुद्रांकों और मुद्राओं का साधारण परिचय लिख दिया है। इस विषय में अभी और भी अधिक अन्वेषण की आवश्यकता है। आशा है इतिहास और पुरातत्त्व प्रेमी जन इस ओर रुचि लेकर भारतीय इतिहास के गम्भीर रहस्यों का उद्घाटन करके उलझी हुई ग्रन्थियों को सुलझायेंगे और लुप्त तथा टूटी ऐतिहासिक कड़ियों को फिर से जोड़ कर आर्यावर्त देश का गौरवमय इतिहास जनता के समक्ष रक्खेंगे, जिससे इतिहास की भ्रान्त धारणायें समाप्त हों और इस देश की भावी पीढ़ी स्वयं को गौरवान्वित समझ सके ।। इति शम् ।।

इति श्रीयुतस्वामिस्वतन्त्रानन्दसरस्वतीमहाभागानामैतिह्यमहाविदुषां शिष्येण
हरयाणाप्रान्तीयझज्जरगुरुकुलस्थपुरातत्त्वसंग्रहालयाध्यक्षेण
ओ३मानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मितः प्राचीनमुद्रांक-
नाम्नो ग्रन्थ ईशानुग्रहेण पूर्तिमगमत् ।।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. रोहतक से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—महासेनापतिस्य वीरद्वारे

लेख के नीचे चलता हुवा नन्दी

1. Clay seal of Mahāsenāpati from Rohtak.
Below the inscription is a walking Nandi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोहतक से प्राप्त मुद्रांक

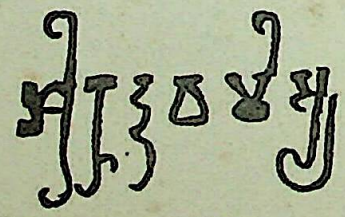

पाठ—श्रीरुद्रवर्मस्य

2. Clay seal of Rudravarmā from Rohtak.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

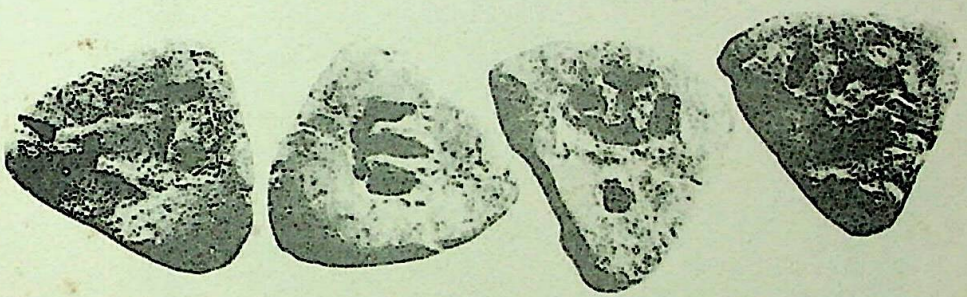

३. रोहतक से प्राप्त मुद्रांक

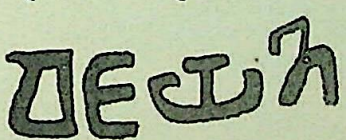

पाठ—वि ज य ते (चारों ओर एक-एक अक्षर लिखा है)।

3. Clay seal from Rohtak inscribed *vi ja ya te.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. रोहतक से प्राप्त ब्रह्मा का चित्र

4. Clay seal from Rohtak depicting Brahmā

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

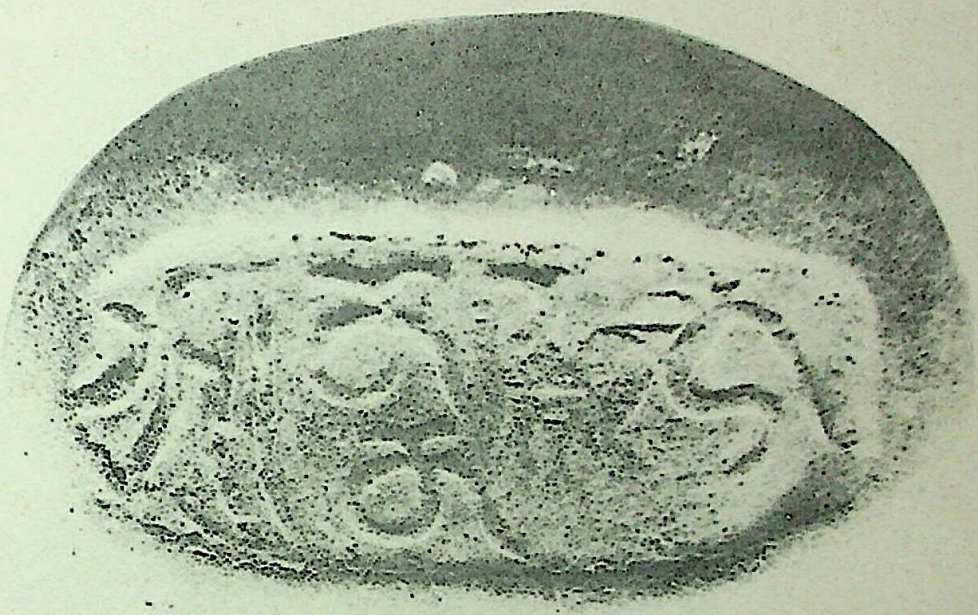

५. रोहतक से प्राप्त मुद्रांक

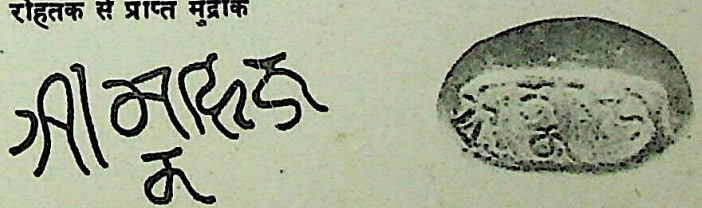

पाठ—श्रीमहिजन

5. Clay seal from Rohtak inscribed Śrīmahijana

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. रोहतक से प्राप्त नन्दी का चित्र

6. Clay seal from Rohtak with Nandi

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. सोनीपत से प्राप्त ताम्र मुद्रांक

पाठ—.....य.....श्रीमहा[रा].....
..... परमादित्यभक्तो [महारा]जश्रीराज्यवर्द्धनः तस्य पुत्रस्तत्पा[दानुध्यातः] श्रीमहादेव्यां [उत्पन्नः परमा]दित्यभक्तो महाराज-श्रीमदादित्य[वर्द्धनः त]स्य [पुत्रस्तत्पादानुध्यातः श्री]महासेनगुप्तादेव्या-मुत्पन्नः.....य.....सर्ववर्णाश्रमव्यवस्थापनप्रवृ[त्तः].....य.....व..... प्रवर्द्ध.....परमादित्यभक्तः परमभट्टारकमहाराजाधिराजश्रीप्रभाकरवर्द्धनः तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्या[त] इ.....श्रीमत्यां यशोमत्या [मुत्पन्नः] परम योगत ...[परमभट्टारक]महाराजाधि[राज]श्रीराज्यव[र्द्धनः तस्यानुजस्तत्पादानु-] ध्यातो महादेव्यां यशोमत्या[मुत्पन्नः]..... [परमभट्टारकम-] हाराजा[धि]राजश्रीहर्षवर्द्धनः

ऊपर नन्दी का चित्र है ।

7. Copper seal of Harṣavardhana from Sonepat.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. अच्छेज से प्राप्त मुद्रांक

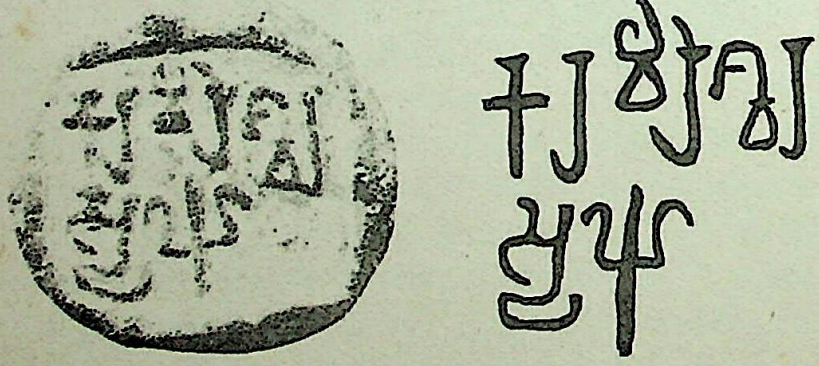

पाठ—करवीरेश्वरस्य (लेख के अन्त में त्रिशूल का चित्र)

8. Clay seal from Acchej inscribed *karavireśvarasya*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. अच्छेज से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

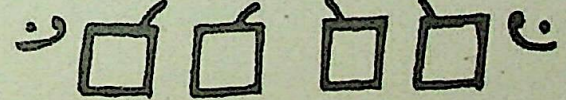

पाठ—बे बें

१. Reverse clay seal from Acchej with the letters *be be*̃

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. मोहनबाड़ी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—भ ॥

10. Clay seal from Mohanbari with the letter *bha* ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

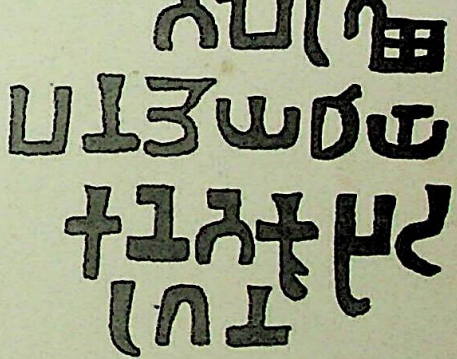

११. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—रैपति

यौधेयजनप-

दप्रकृता नाक-

नगर

लेख से पूर्व यज्ञ-यूप का चित्र है ।

11. Clay seal of the Yaudheya Republic from Naurangabad (Bamla), with a yajña-yūpa above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

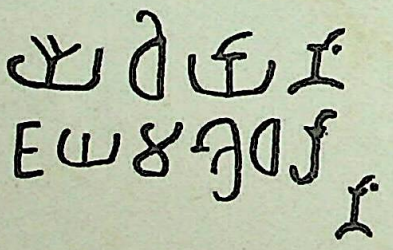

पाठ—यौधेयानां
जयमन्त्रधरा-
णां

लेख के नीचे चलते हुवे नन्दी का चित्र,।

12. Clay seal of the Yaudheyas from Naurangabad (Bamla), with a walking Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

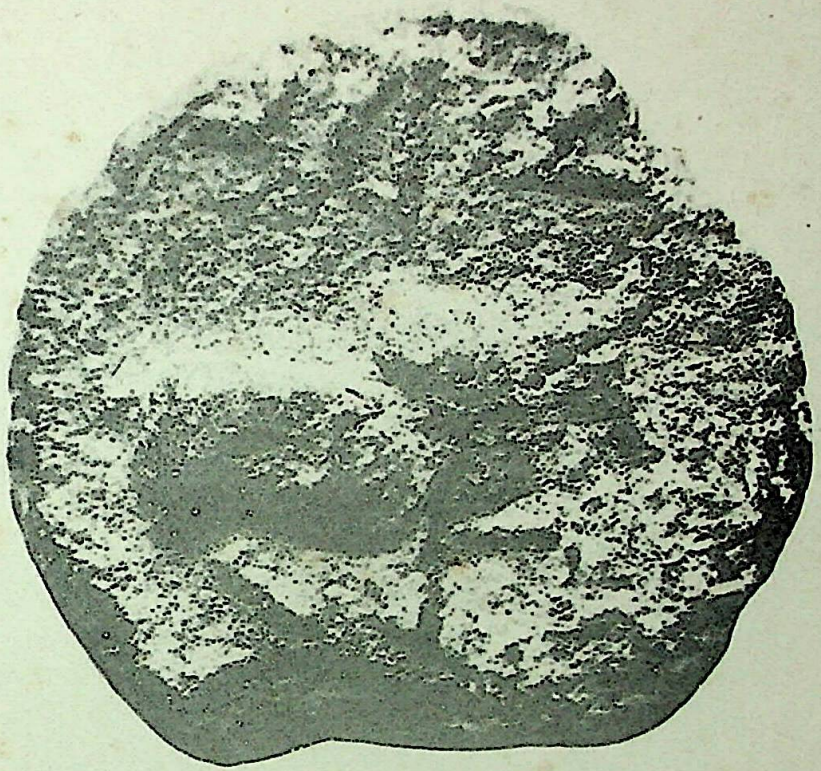

१३. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—यौधेया[नाम्]

लेख के नीचे चलते हुवे नन्दी का चित्र

13, Clay seal of the Yaudheyas from Naurangabad (Bamla), with a walking Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त रांग का विपरीत मुद्रांक
पाठ—यौधेयानाम्

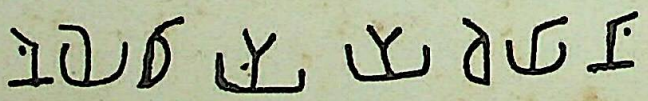

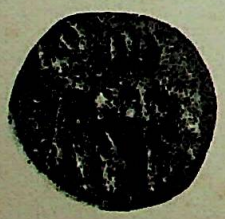

लेख के नीचे चलते हुवे नन्दी का चित्र ।

14. Reverse lead seal of the Yaudheyas from Naurangabad (Bamla), with a walking Nandī below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त रांग का मुद्रांक

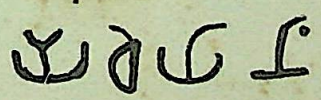

पाठ—यौधेयानाम्
लेख के नीचे चलते हुवे नन्दी का चित्र।

15. Lead seal of the Yaudheyas from Naurangabad (Bamla), with a walking Nandī below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

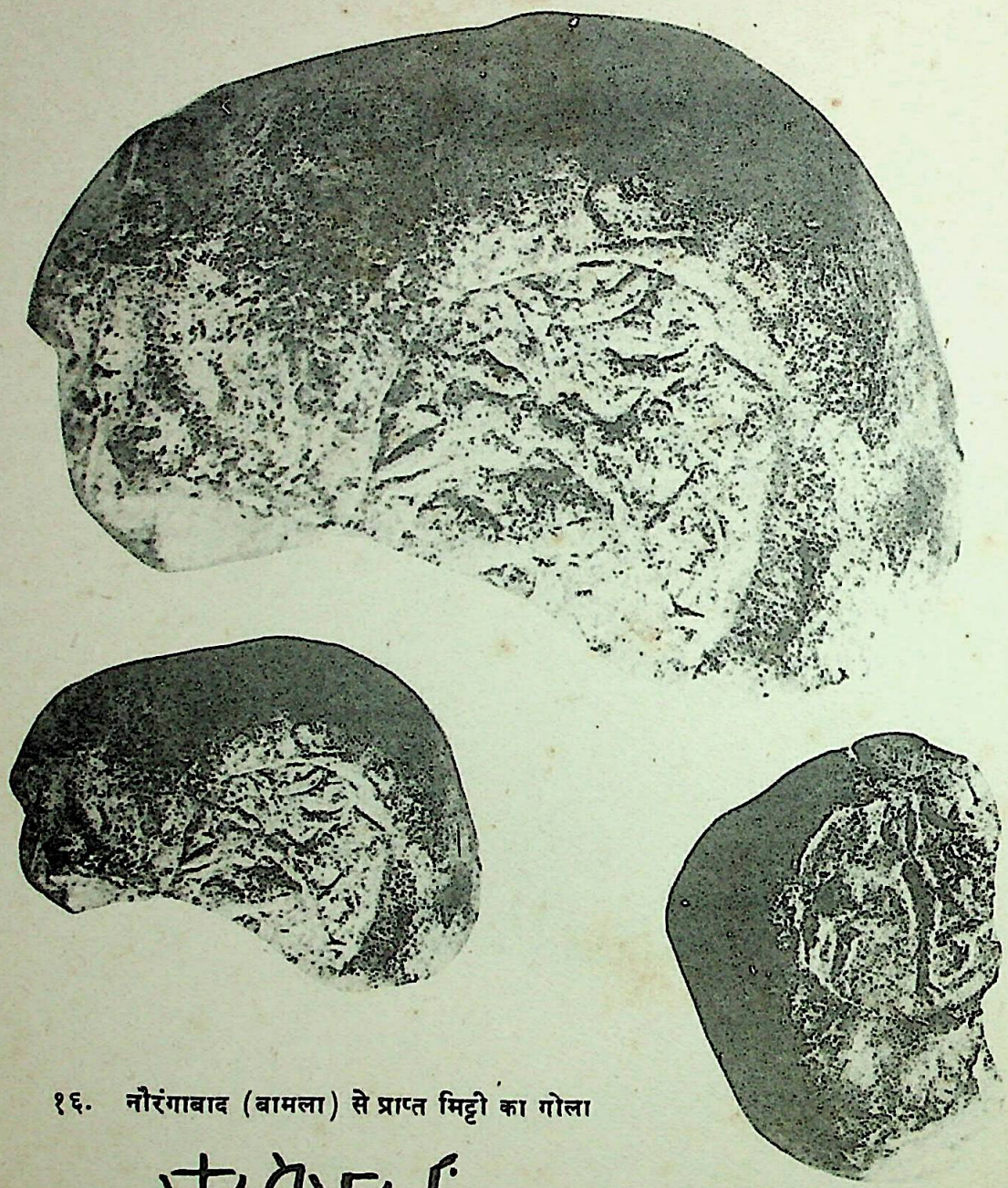

१६. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मिट्टी का गोला

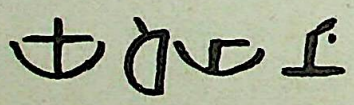

पाठ—यौधेयानाम्

लेख के नीचे चलते हुवे नन्दी का चित्र ।

16. Clay ball seal of the Yaudheyas from Naurangabad (Bamla), with a walking Nandi below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

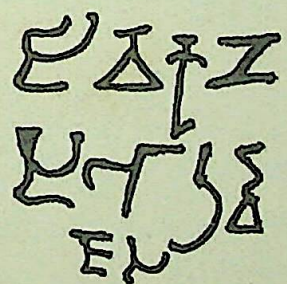

पाठ—जीवेकुण-
स भारद्वा-
जस

17. Clay seal from Naurangabad (Bamla), with the inscription *jivekuṇasa bhāradvājasa.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—नगरभूति

लेख के ऊपर गमले में लगा वृक्ष चित्रित है ।

18. Clay seal from Naurangabad (Bamla) inscribed *nagara-bhūti*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

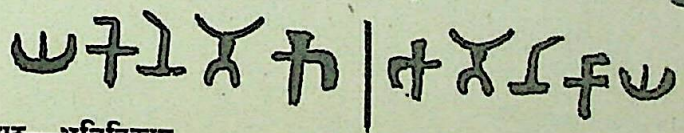

पाठ—भूतिनिकाय

19. लेख के नीचे शस्त्र का चिह्न ⚔ है ।

Reverse clay seal from Naurangabad (Bamla), with the inscription *bhūtinikāya*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

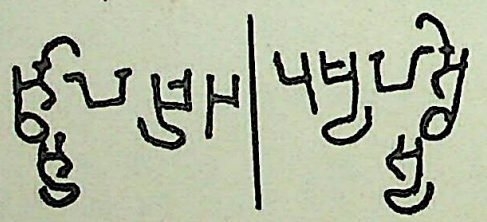

पाठ—पुष्यहस्थि

स्य

लेख के नीचे स्वस्तिक और 卐 चिह्न हैं।

20. Reverse copper seal from Naurangabad (Bamla) inscribed *puṣyahasthisya*, with the symbols of svastika and 卐.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

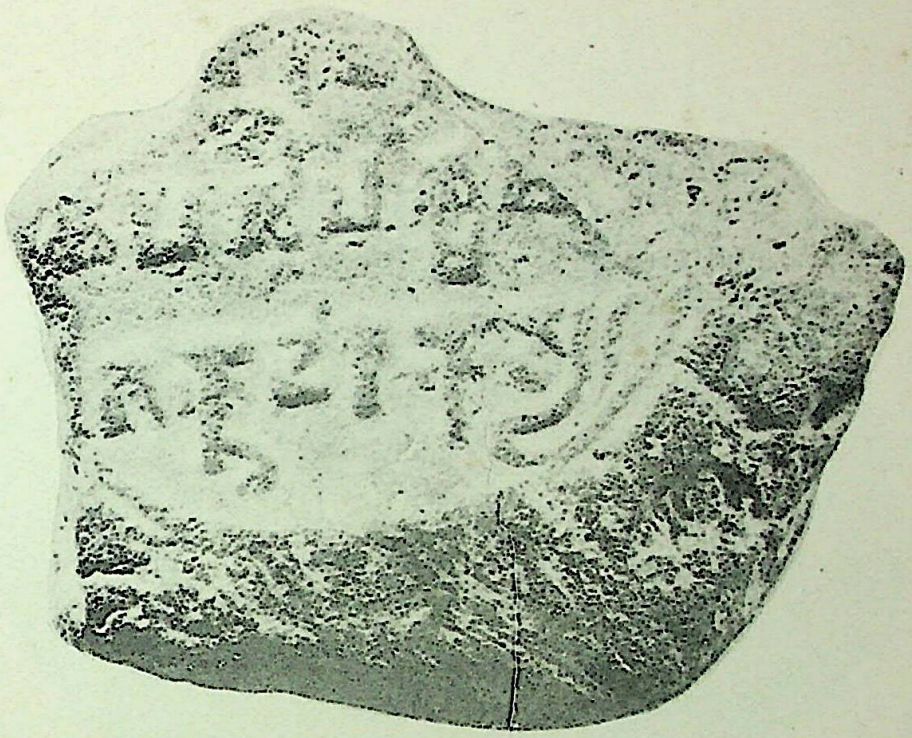

२१. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

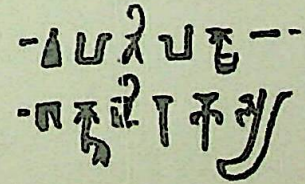

पाठ—.....वपतिलक्ष..

.....ग कुमारकस्य

21. Broken clay seal from Naurangabad (Bamla)

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

पाठ—रमशश्री

22. Reverse clay seal from Naurangabad (Bamla) inscribed *ramaśaśri*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

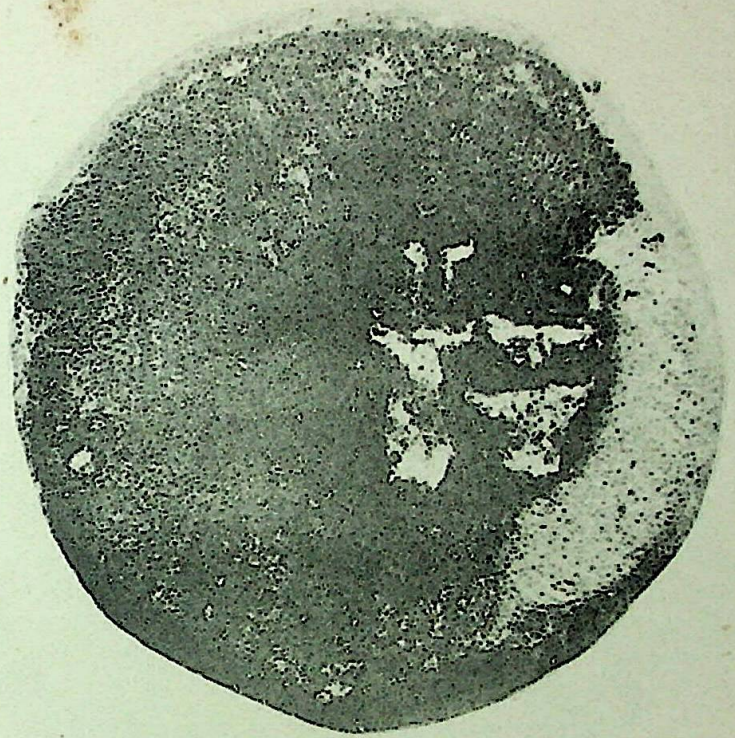

२३. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

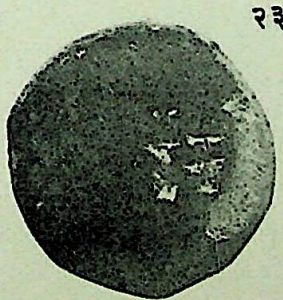

पाठ—कक

23. Clay seal from Naurangabad (Bamla) inscribed *kaka*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक
चित्र—हस्ती द्वारा ताड्यमान पुरुष

24. Clay seal from Naurangabad (Bamla) showing a person being beaten by an elephant.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

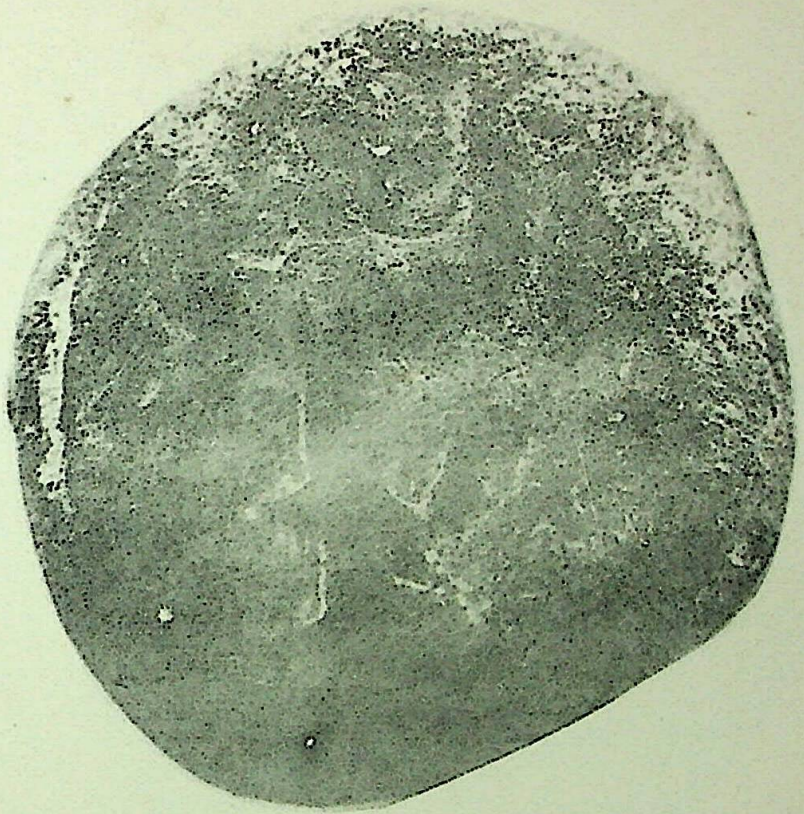

२५. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

चित्र –सपरशु त्रिशूल का चित्र

25. Clay seal from Naurangabad (Bamla) with the symbol of a combined axe and trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक एक धार्मिक चिह्न चित्रित है ।

26. Clay seal from Naurangabad (Bamla) with a religious symbol.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

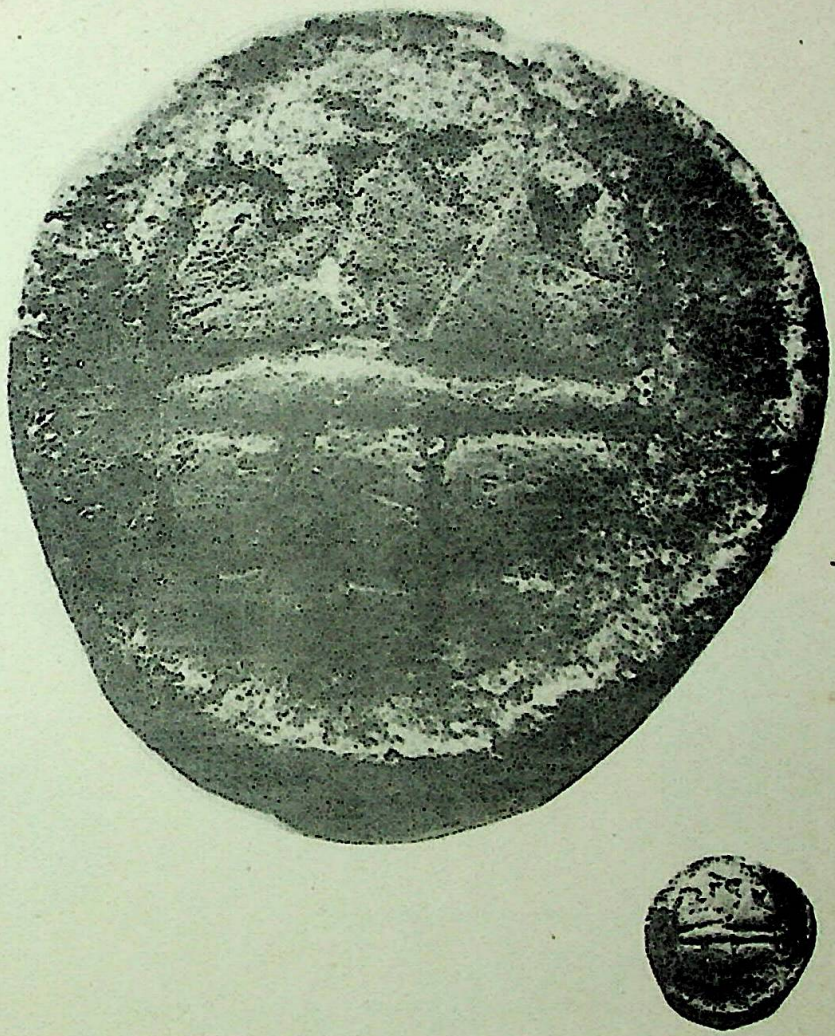

२७. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक
पाठ—यौधेय ?

27. Clay seal from Naurangabad (Bamla) with an indistinct inscription which may be *Yaudheya* ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

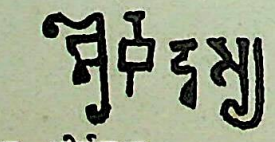

पाठ—श्रीबुद्धस्य

ऊपर बैठे हुवे सिह का चित्र है ।

28. Clay seal of Buddha from Naurangabad (Bamla). A seated lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

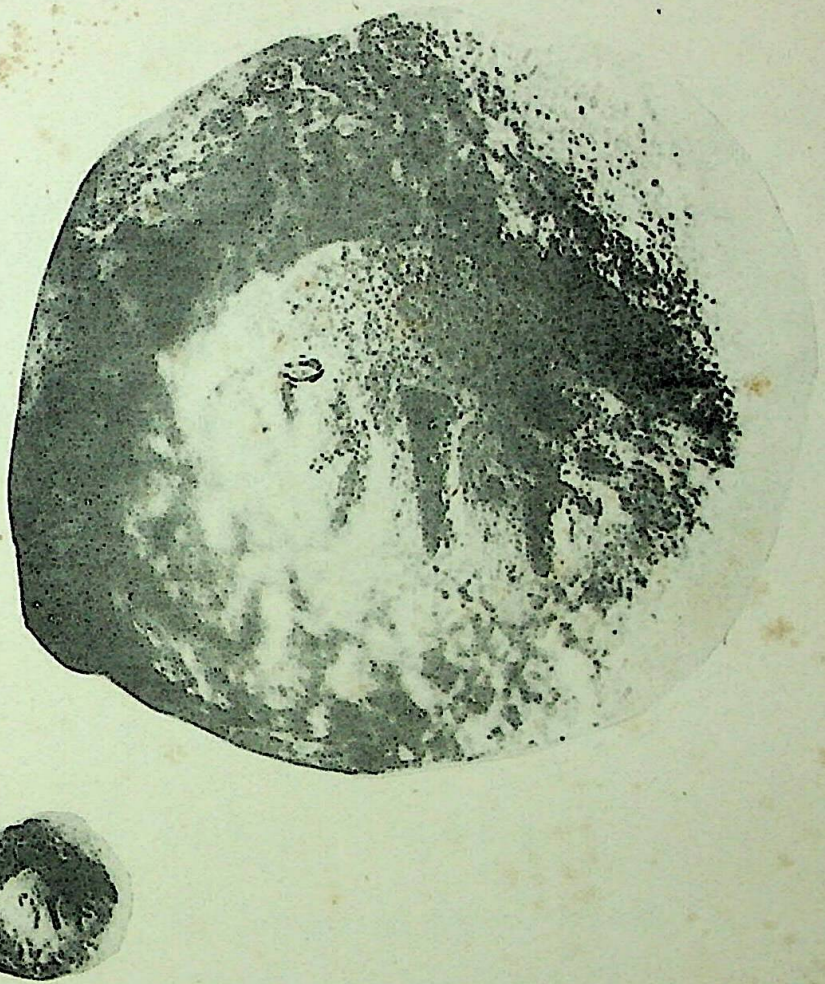

२९. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—रक्क

लेख के ऊपर चक्र का चिह्न है।

29. Clay seal from Naurangabad (Bamla) inscribed *rakka*, with a discus above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

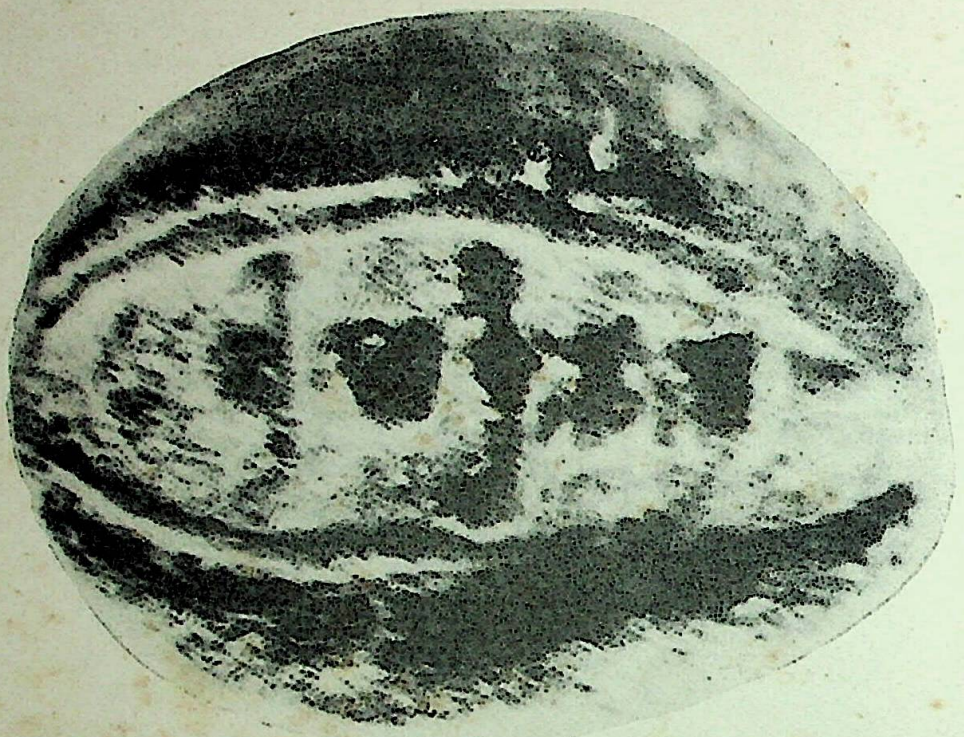

३०. नौरंगाबाद (बामला) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीहरिवरस

लेख के ऊपर शंख का चित्र है ।

30. Clay seal of Harivara from Naurangabad (Bamla), with a conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

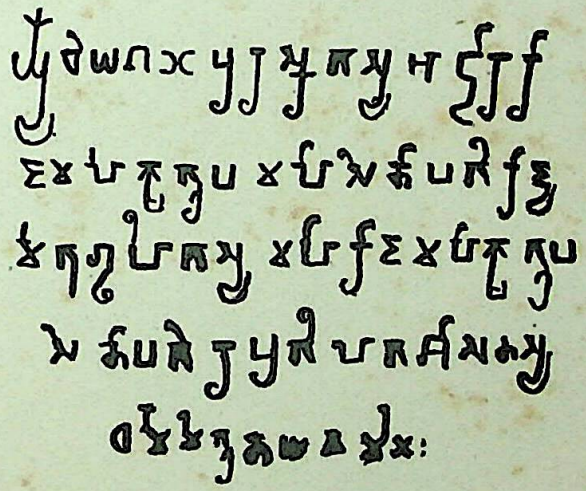

३१. पाठ—यौधेयगणपुरस्कृतस्य भट्टारर-
जमहाक्षत्रपमहासेनापते राज्य-
मात्रगृहीतस्य महाराजमहाक्षत्रप-
सेनापतेरप्रतिहतशासनस्य
धर्ममित्रनयवर्मणः

लेख के ऊपर चलते हुवे नन्दी का चित्र है।

31. Clay seal of Dharmamitranayavarmā from Agroha, with a walking Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

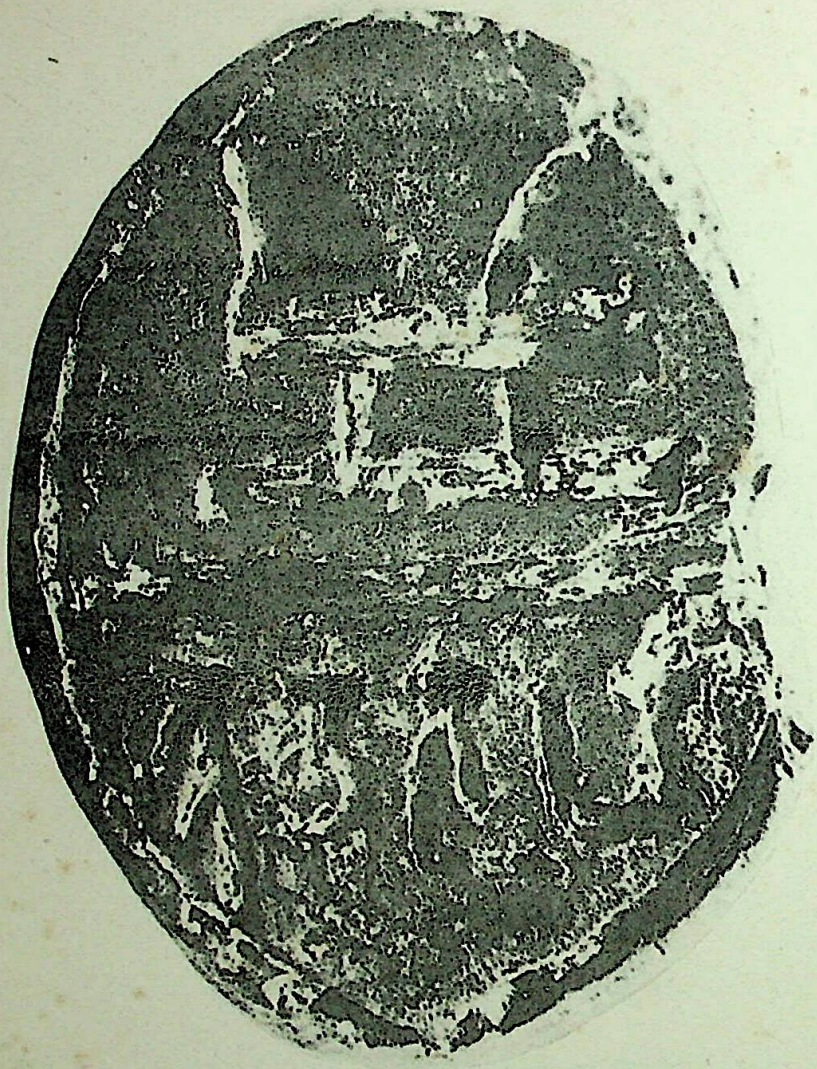

३२. अगरोहा से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

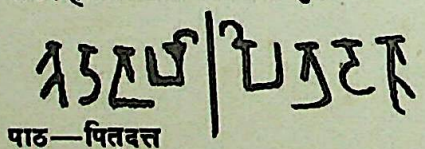

पाठ—पितृदत्त

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है।

32. Reverse clay seal of Pitṛdatta from Agroha, with a temple above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३३. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

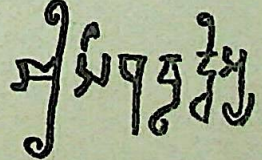

पाठ—श्रीसाधुवृद्धिस्य

33 Clay seal of Sādhuvṛddhi from Agroha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

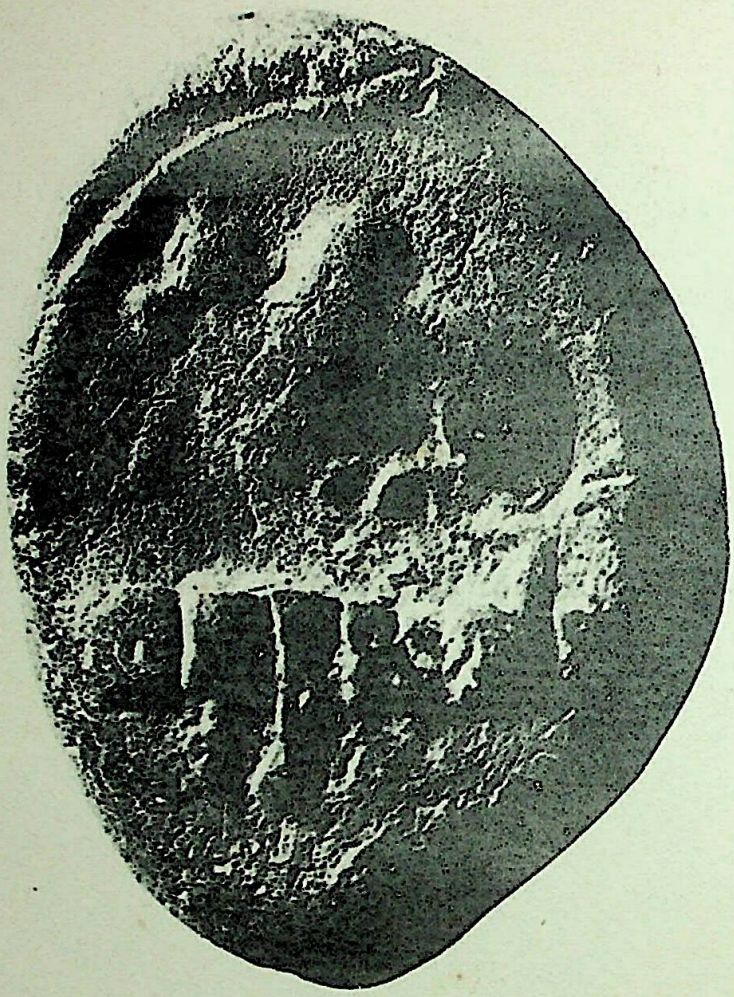

३४. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

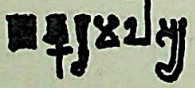

पाठ—शङ्करमलस्य

लेख के ऊपर बैठे हुवे नन्दी का चित्र।

Clay seal of Śaṅkaramal[l]a from Agroha, with a seated
34. Nandi above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—नूनकुसला

35. Inscribed clay seal from Agroha inscribed *nūnakusalā*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

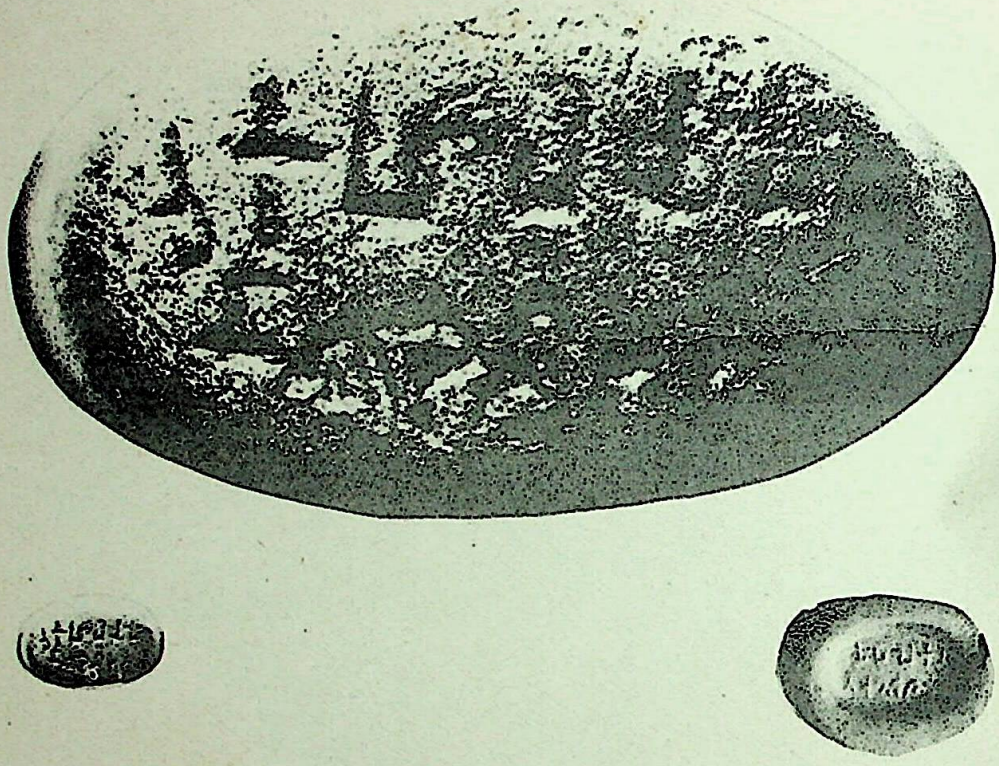

३६. अगरोहा से प्राप्त ताम्र की विपरीत अंगूठी

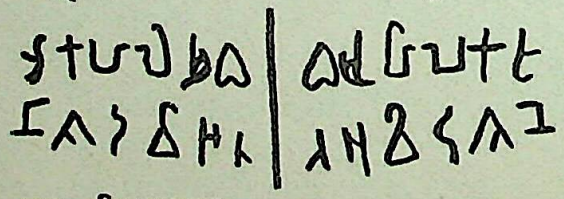

पाठ—विसपालकस
तपुविदशने

36. Inscribed copper signet ring from Agroha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

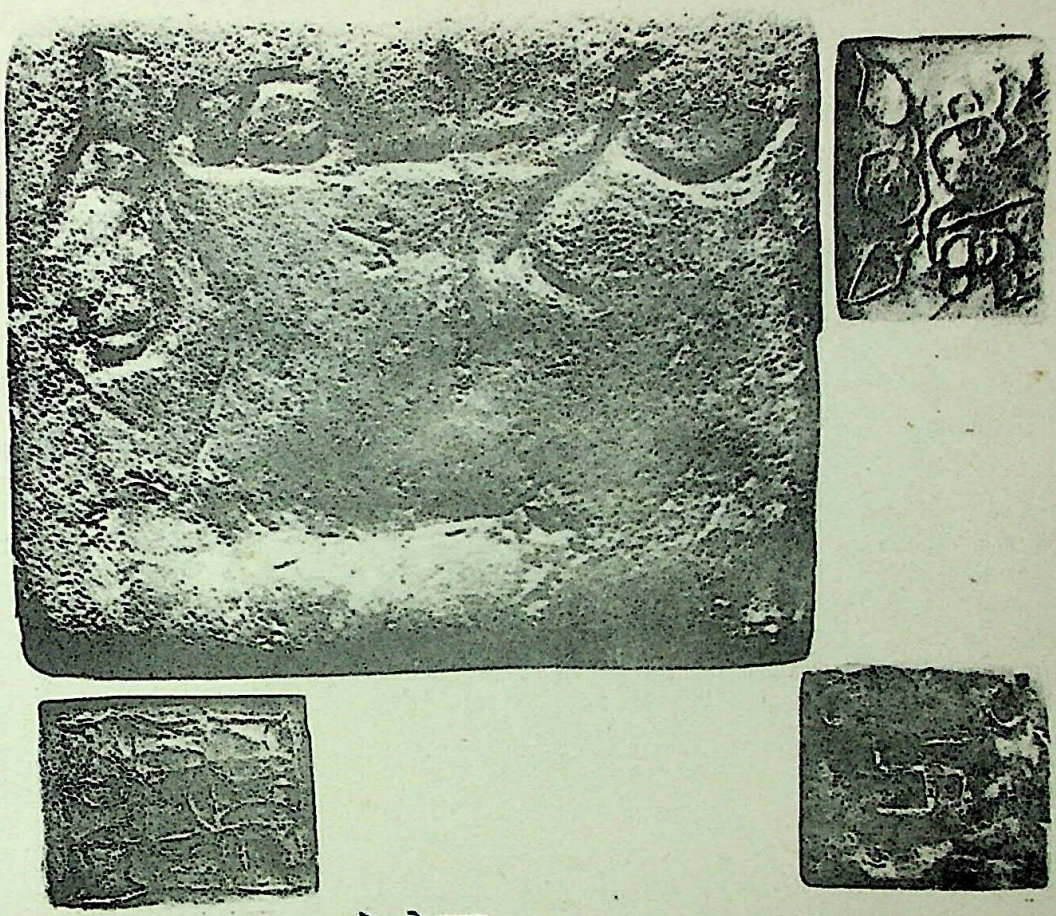

३७. अगरोहा से प्राप्त

पाठ—श्रीयाकस

पात्र के चारों ओर स्वस्तिक, गमले में वृक्ष, सपुष्प लता और अन्य रेखाचित्र हैं।

37. Clay pot of Yāka from Agroha, ornamented with svastika, flower-pot, creeper in bloom, and other designs.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

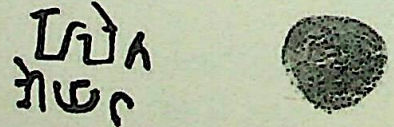

पाठ—हालेत
गेया...

38. Inscribed clay seal from Agroha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३९. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—सिंहस

39. Clay seal of Simha from Agroha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०. अगरोहा से प्राप्त

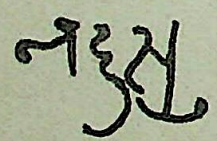

पाठ—भद्रस्य

यह लेख पात्रों पर फूल छापने के ठप्पे पर है।

40. Clay seal of Bhadra from Agroha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४१. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—पावनेस रुद्रेधम

लेख के ऊपर बैठे नन्दी का चित्र।

41. Inscribed seal from Agroha with Nandi above the inscription which reads: *pāvanesa rudredhama.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४२. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—जु जु (दोनों ओर उत्कीर्ण हैं)।

42. Clay seal from Agroha inscribed *juju* on both the obverse and reverse.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

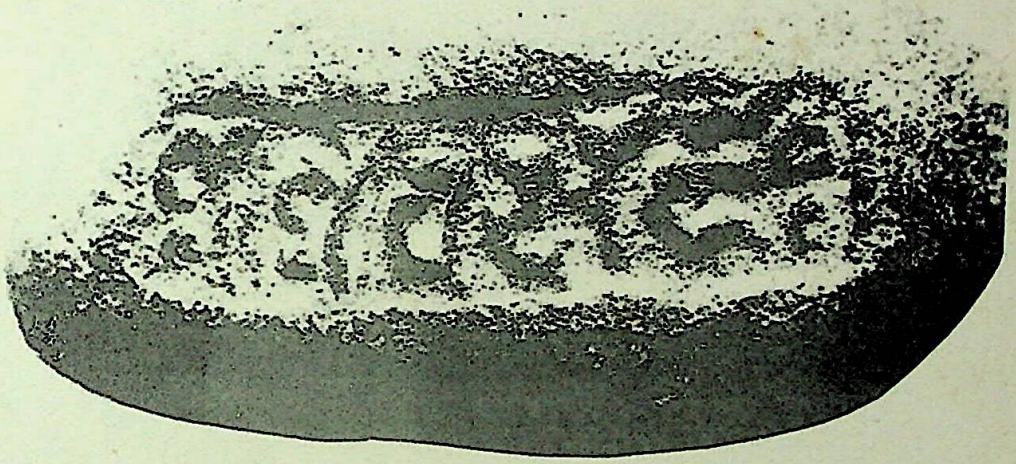

४३. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

श्रीशिवदरजः

पाठ—श्रीशिवदरजः

43. Clay seal from Agroha, inscribed *Śrīśivadarajaḥ*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

ददाकस्य

पाठ—ददाकस्य

44. Clay seal from Agroha, inscribed *Dadākasya*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

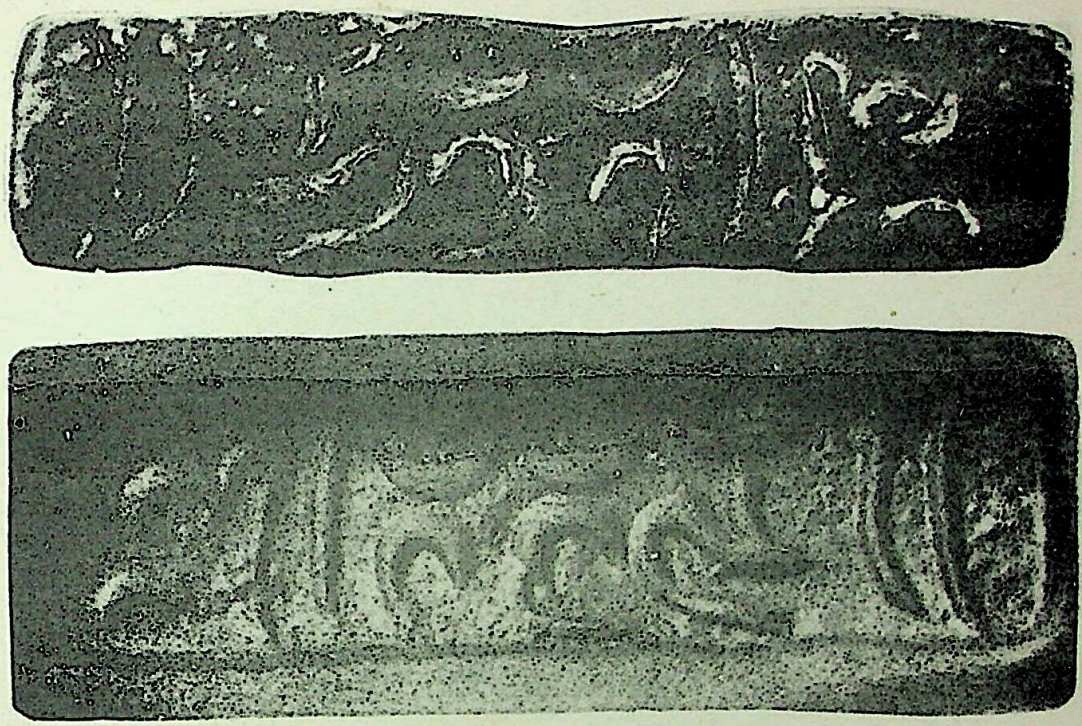

४५. अगरोहा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

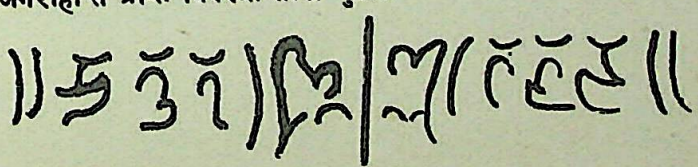

पाठ--श्रीततुण्य ॥

45. Reverse copper seal from Agroha, inscribed *Śrītatunya*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

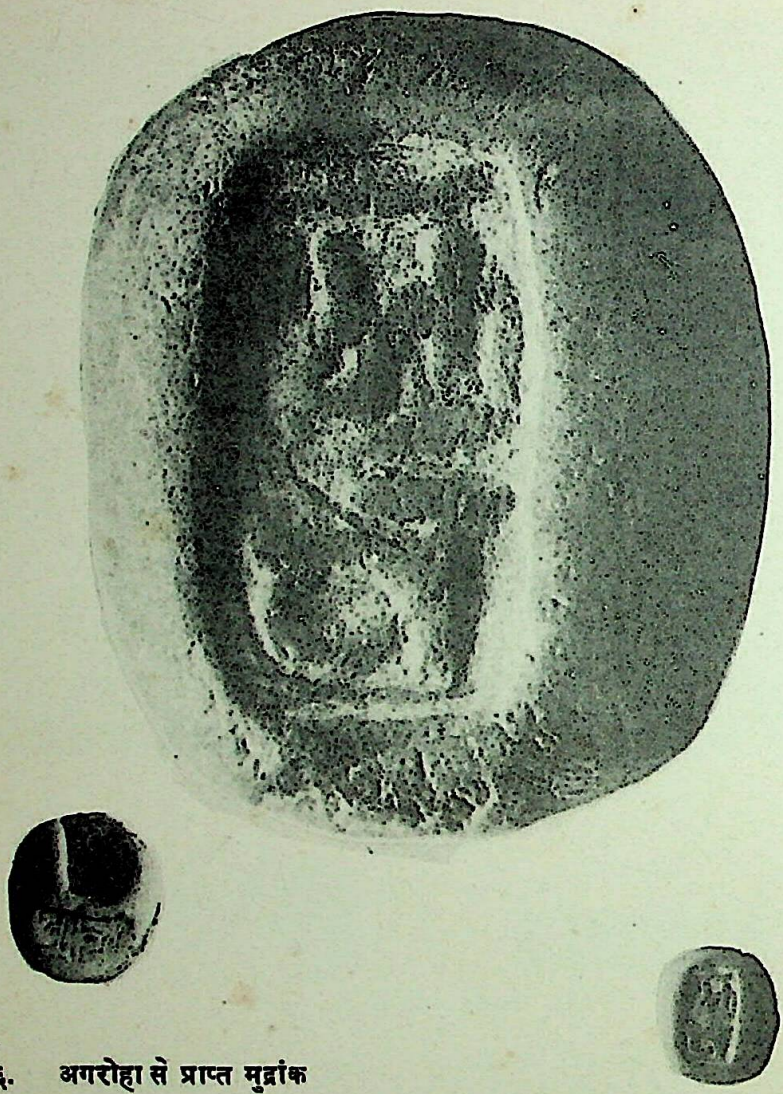

४६. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक

मु
च

पाठ—मुच

46. Clay seal from Agroha inscribed *muca*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४७. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक
अश्वारोही के सम्मुख प्रसारितबाहु मानवाकृति है।

47. Clay seal from Agroha with a person entreating an equestrian.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४८. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक
इसपर स्वस्तिक और चक्र का चिह्न है।

48. Clay seal from Agroha with svastika and cakra signs.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

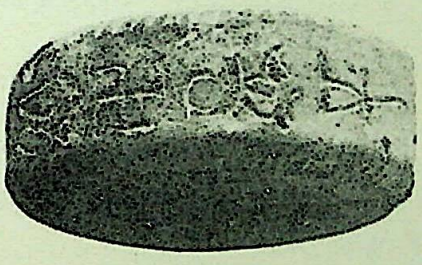

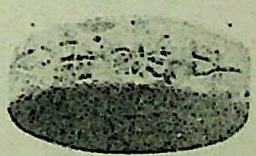

४९. अगरोहा से प्राप्त मुद्रांक
इसपर एक क्षुप और विविध शस्त्रास्त्र चित्रित हैं।

49. Clay seal from Agroha with a tree and weapons.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

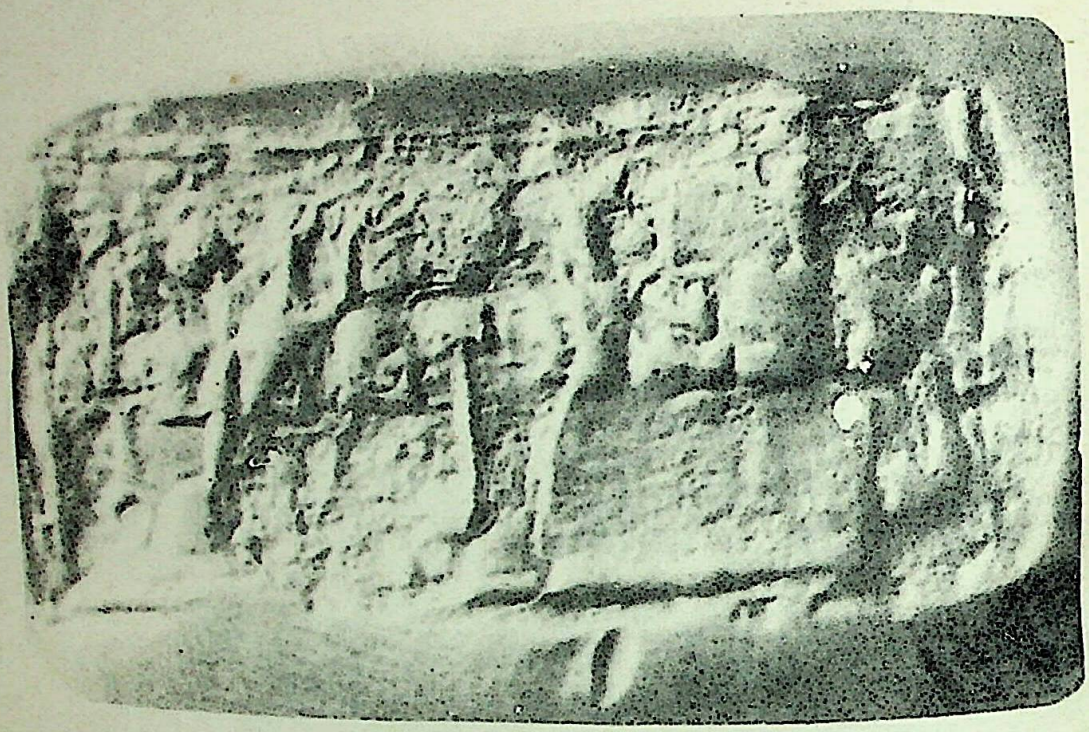

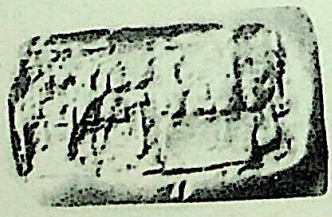

५०. अगरोहा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक
पाठ—श्रीध्रुंवा...र...मित्र ?

50. Reverse copper seal from Agroha with an indistinct inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

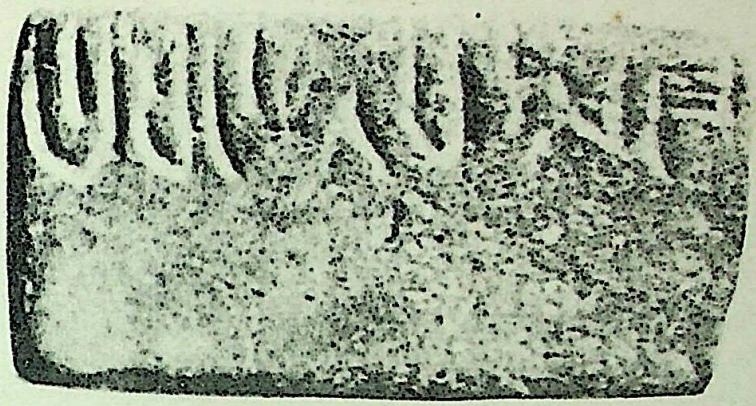

५१. राखीगढी से प्राप्त मुद्रांक

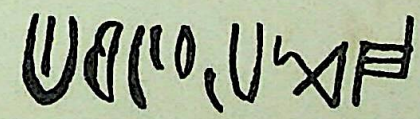

पाठ—तथाकथित सिन्धुलिपि में है।

51. Clay seal from Rakhigarhi in the Indus Valley script.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

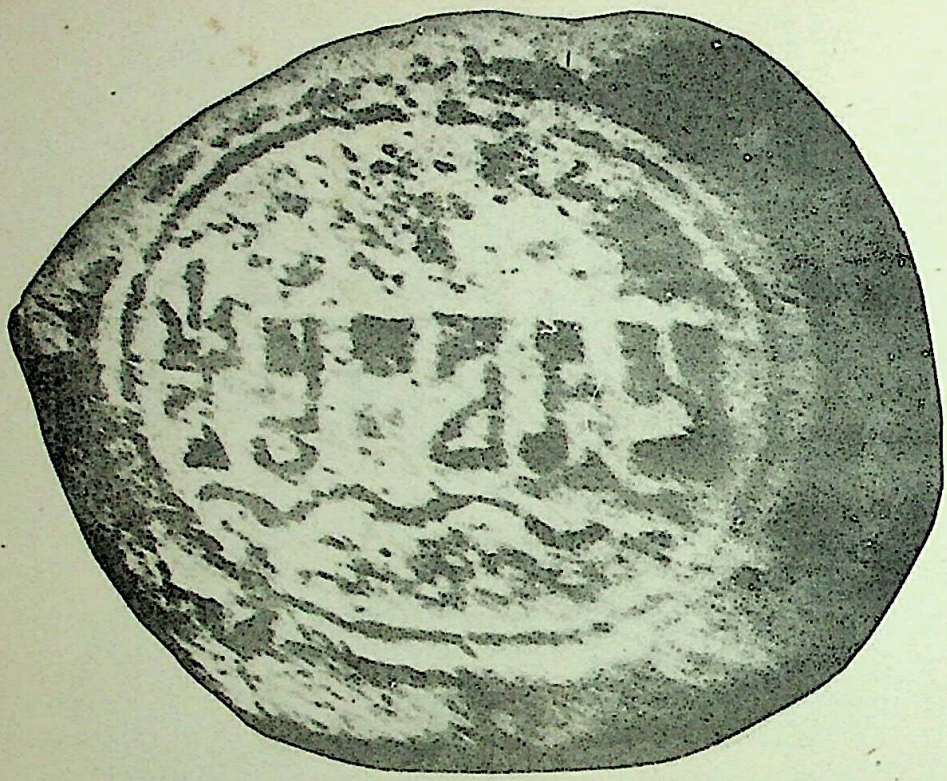

५२. थानेसर (स्थानेश्वर) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—स्थानेश्वरस्य

लेख से पूर्व सपरशु त्रिशूल का चित्र ।

52. Clay seal from Thanesar inscribed *Sthāneśvarasya*, preceded by axe-trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

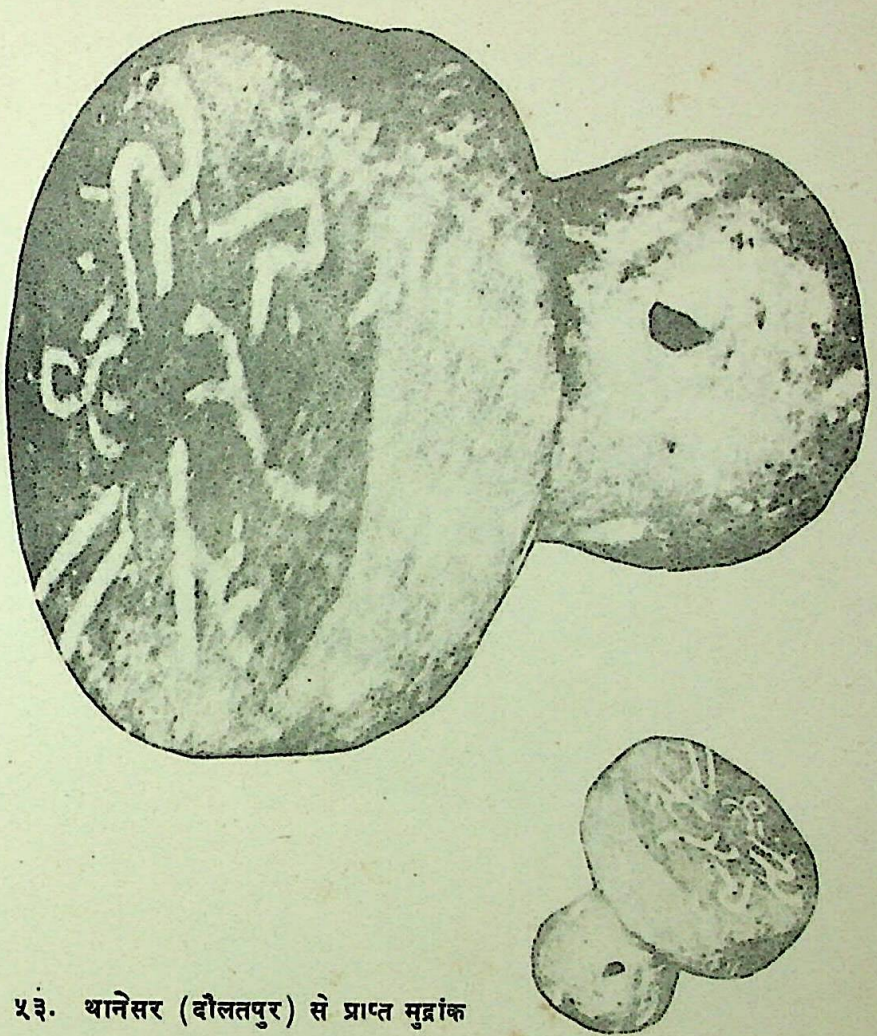

५३. थानेसर (दौलतपुर) से प्राप्त मुद्रांक

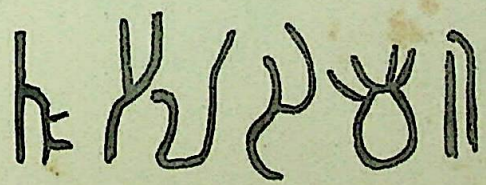

पाठ—तूडिलस म ॥

53. Clay seal from Thanesar (Daulatpur) inscribed *tūḍilasa ma* ||

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५४. थानेसर से प्राप्त मुद्रांक

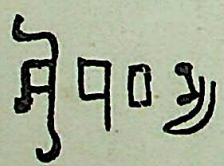

पाठ—श्रीबुधस्य

54. Clay seal of Budha from Thanesar.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५५. थानेसर से प्राप्त मुद्रांक

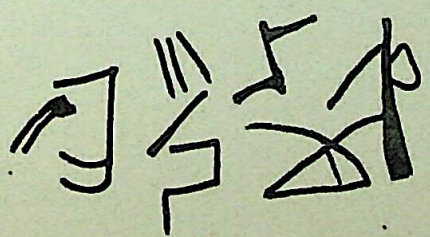

पाठ—अपठित

55. Clay seal from Thanesar. Illegible.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५६. करनाल से प्राप्त मुद्रांक

इसपर मानवाकृति चित्रित है और मूठ पर स्वस्तिक चिह्न है।

56. Clay seal from Karnal with a human figure and svastika in the handle.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५७. करनाल से प्राप्त मुद्रांक

इसपर बैठे हुवे नन्दी का चित्र और गोमुख उत्कीर्ण है ।

57. Clay seal from Karnal with a seated Nandi and cow-face.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५८. सुघ से प्राप्त खरोष्ठी लिपि का मुद्रांक

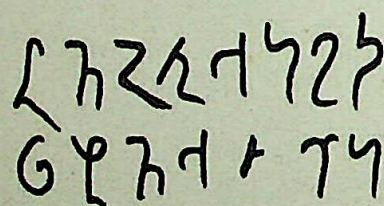

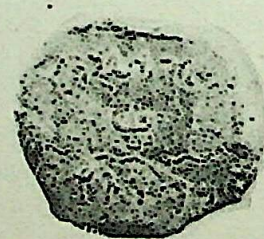

पाठ—खहरालपुत्रस कन-
बुजरस्पग

दोनों पंक्तियों के मध्य त्रिरत्न चिह्न हैं।

58. Clay seal of Khaharālaputra from Sugh in the Kharoṣṭhi script.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

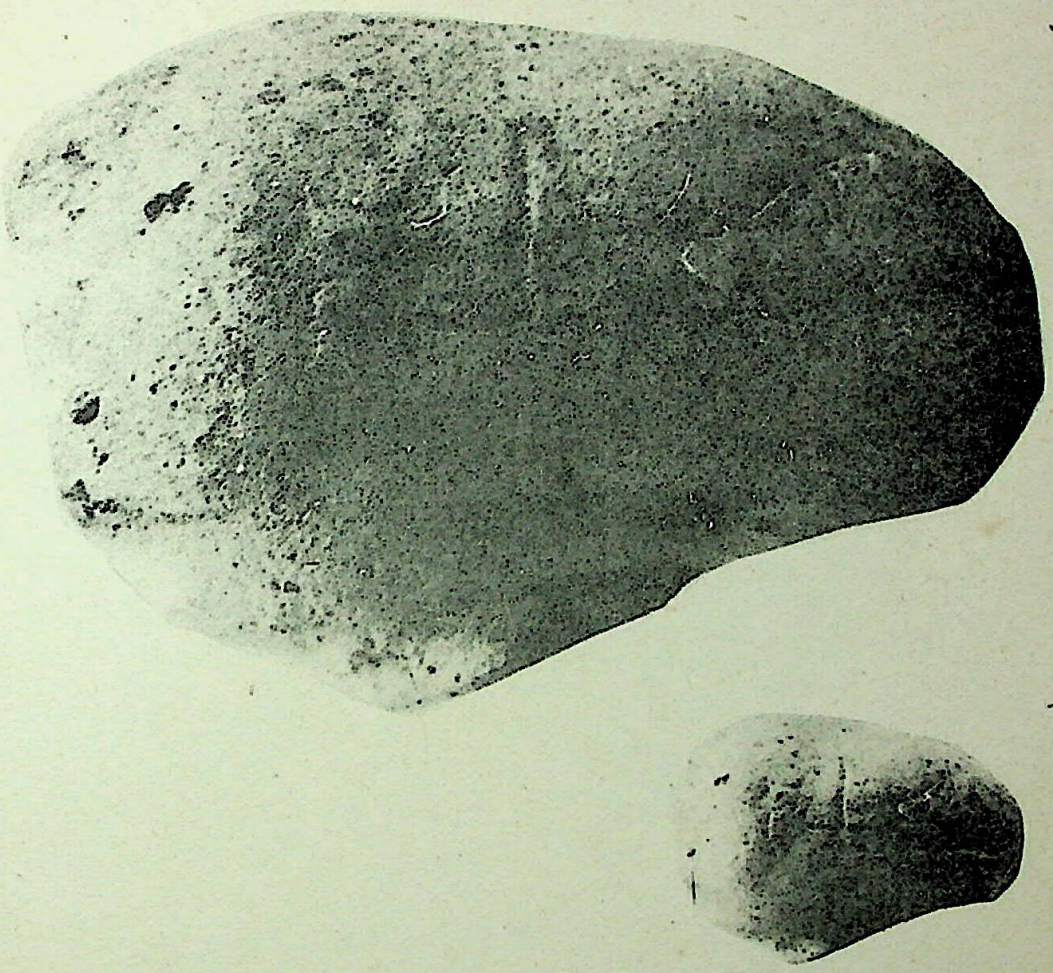

५९. सुघ से प्राप्त मृण्मय मूर्ति का अवशेष हस्तिशुण्ड

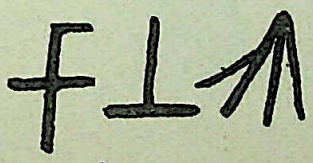

पाठ—कानशे

59. Terra cotta elephant trunk from Sugh inscribed *kānaśe*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

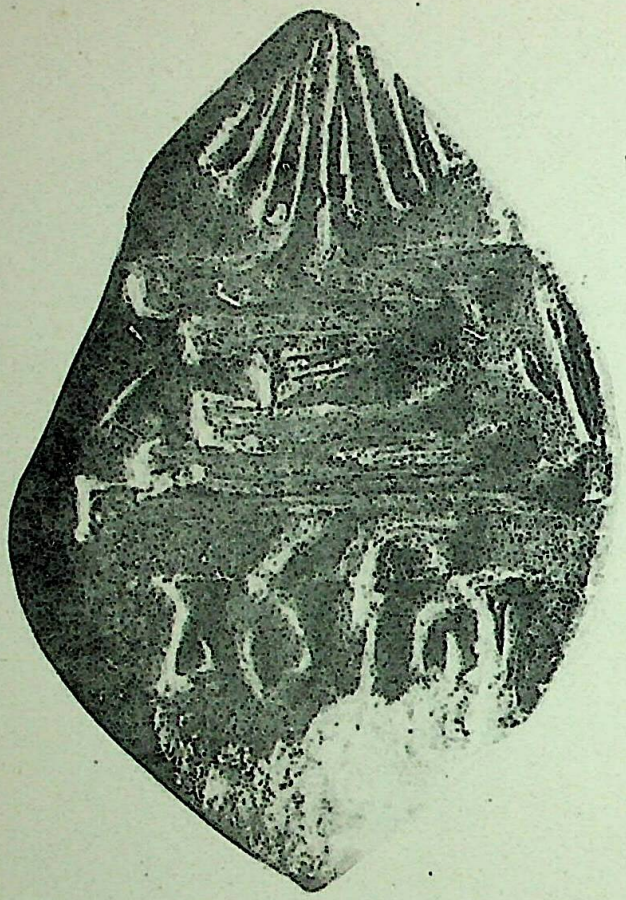

६०. सुघ से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

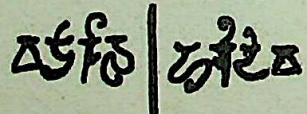

पाठ—हरिदेव

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है।

60. Reverse seal of Harideva from Sugh, with a temple depicted above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६१. सुघ से प्राप्त मुद्राङ्क

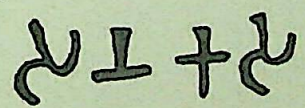

पाठ—सनकस

लेख के ऊपर 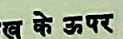 चित्रित है।

61. Clay seal of Sanaka from Sugh.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६२. सुघ से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

पाठ—धमय (धर्माय)

62. Votive reverse clay seal from Sugh, inscribed *dhamaya* (=*dharmāya*).

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६३. सुघ से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ—श्रीअरुण

63. Clay seal of Aruṇa from Sugh.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६४. सुघ से प्राप्त सचिह्न मुद्राङ्क

64. Clay seal from Sugh with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

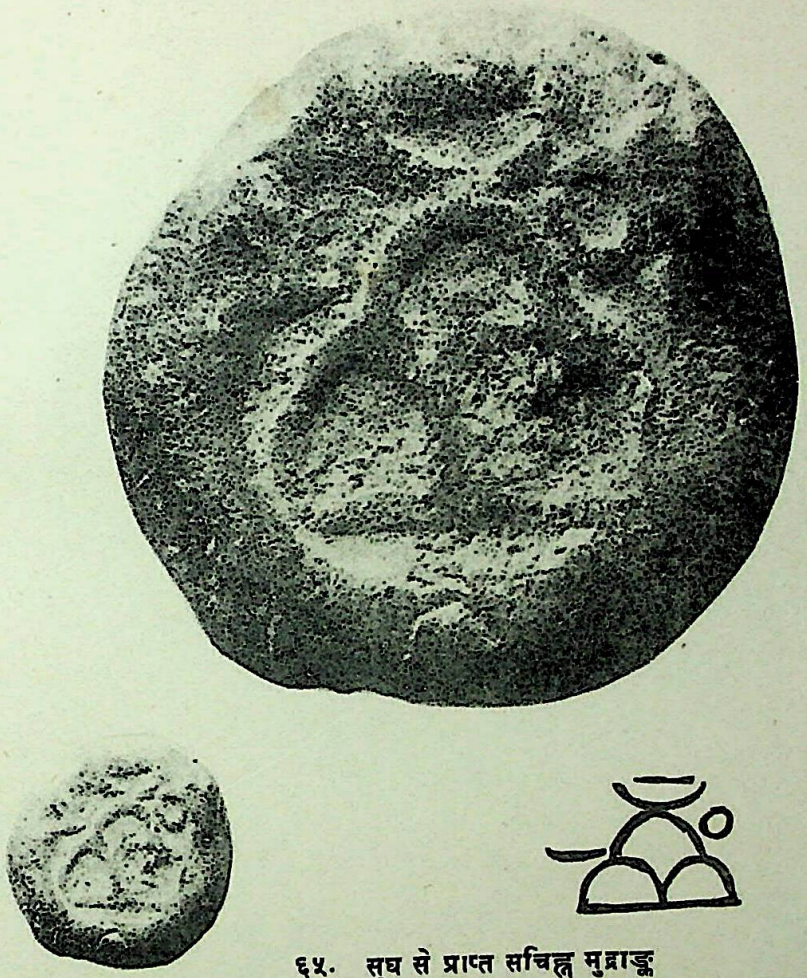

६५. सुघ से प्राप्त सचिह्न मुद्राङ्क

65. Clay seal from Sugh with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६६. सुघ से प्राप्त सचिह्न मुद्राङ्क

66. Clay seal from Sugh with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६७. सुघ से प्राप्त मुद्राङ्क
कच्छप और अनेकपदी जीव के चित्र।

67. Clay seal from Sugh ornamented with tortoise and centipede.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

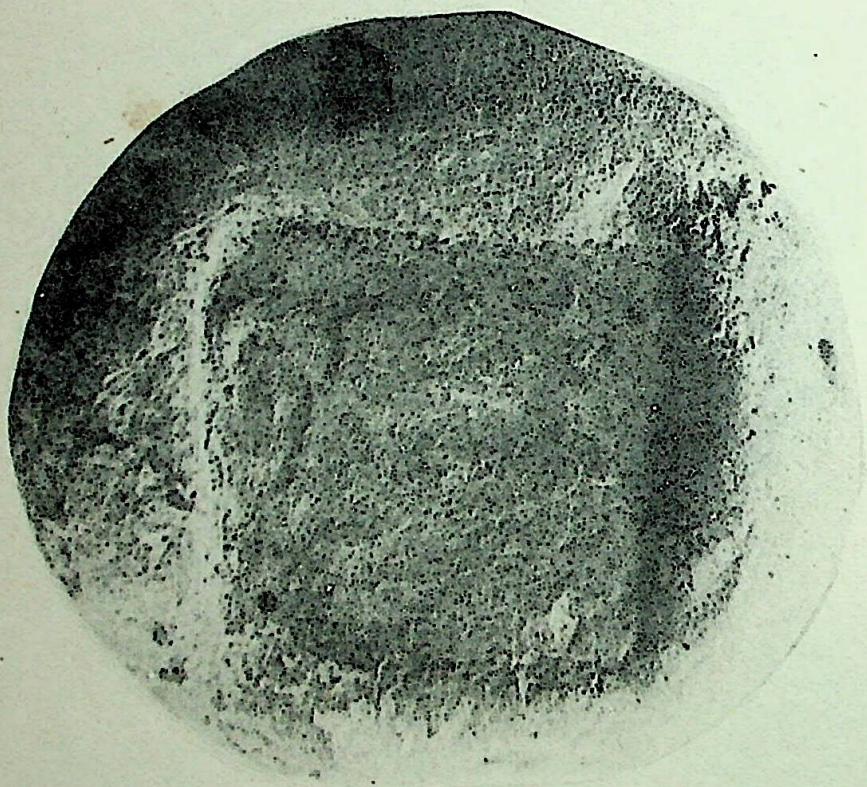

६८. सुघ से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ— श्री...व

68. Clay seal from Sugh.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६९. सुघ से प्राप्त मुद्राङ्क
इसपर षड्दल कमल चित्रित है।

69. Clay seal from Sugh with a six-petalled lotus.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७०. सिंहोल से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ—श्रीमंहाराजकपिल-
स नियुक्तस्याधि-
करणस्य

लेख के ऊपर शंख एवं चक्र के चिह्न ।

70. Clay seal of an adhikaraṇa commissioned by Mahārāja Kapila, from Sinhol, wlth the emblems of conch and discus.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७१. सिंहोल से प्राप्त खरोष्ठी लिपि का मुद्रांक

पाठ—रजतिरजस त्रदतस गुदफरस

मध्य में एक देवता का चित्र है।

71. Kharoṣṭhī clay seal of Gondophares from Sinhol.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७२. सिंहोल से प्राप्त हस्तिदन्त का विपरीत मुद्रांक



पाठ—जीवबलस

लेख के ऊपर शंख और नीचे स्वस्तिक के चित्र हैं।

72. Reverse ivory seal of Jɪvabala from Sinhol. Conch above the inscription and svastika below it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७३. सिहोल से प्राप्त मुद्रांक

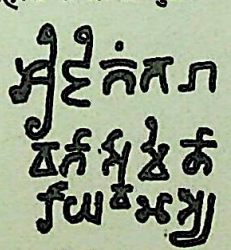

पाठ—श्री जितं भग-
वता स्वामिना-
रायणस्य
लेख के ऊपर चक्र का चित्र है ।

73. Clay seal from Sinhol dedicated to Svāmi-nārāyaṇa.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७४. सिंहोल से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

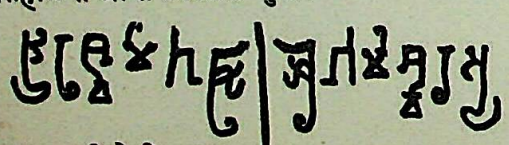

पाठ—श्रीगोमीश्वरस्य

लेख के ऊपर शंख और ६६ चिह्न हैं।

74. Reverse clay seal of Gomīśvara from Sinhol.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७५. सिंहोल से प्राप्त मुद्रांक

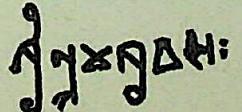

पाठ—श्रीभूमश्रवसः

75. Clay seal of Bhūmaśravas from Sinhol.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७६. सिंहोल से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—अस्पष्ट। वियोवन वना ?

लेख के ऊपर सिंह के आगे एक योद्धा चित्रित है। दूसरी ओर पुष्प का चित्र है।

76. Clay seal from Sinhol with an illegible inscription, above which is a man facing a lion, and on the reverse is a flower.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७७. सिंहोल से प्राप्त मुद्रांक
पाठ—त्रुटित और अस्पष्ट
लेख के ऊपर सिंह को दबाये हुवे हाथी चित्रित है ।

77. Clay seal from Sinhol, with a broken and indistinct inscription. An elephant is shown crushing a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७८. सिंहोल से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीबुद्धिवसुस्य

लेख के ऊपर बैठा हुवा नन्दी चित्रित है।

78. Clay seal of Buddhivasu from Sinhol, with a seated Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७९. सिंहोल से प्राप्त मुद्रांक



पाठ —ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत् ।
तेषां च यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः ।।

लेख के ऊपर बौद्ध स्तूप बने हैं । दूसरी ओर बुद्धमूर्ति है ।

79. Clay seal from Sinhol with the well-known Buddhist formula *ye dharmā*... and a Buddhist stūpa above it. On the reverse is an image of Buddha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

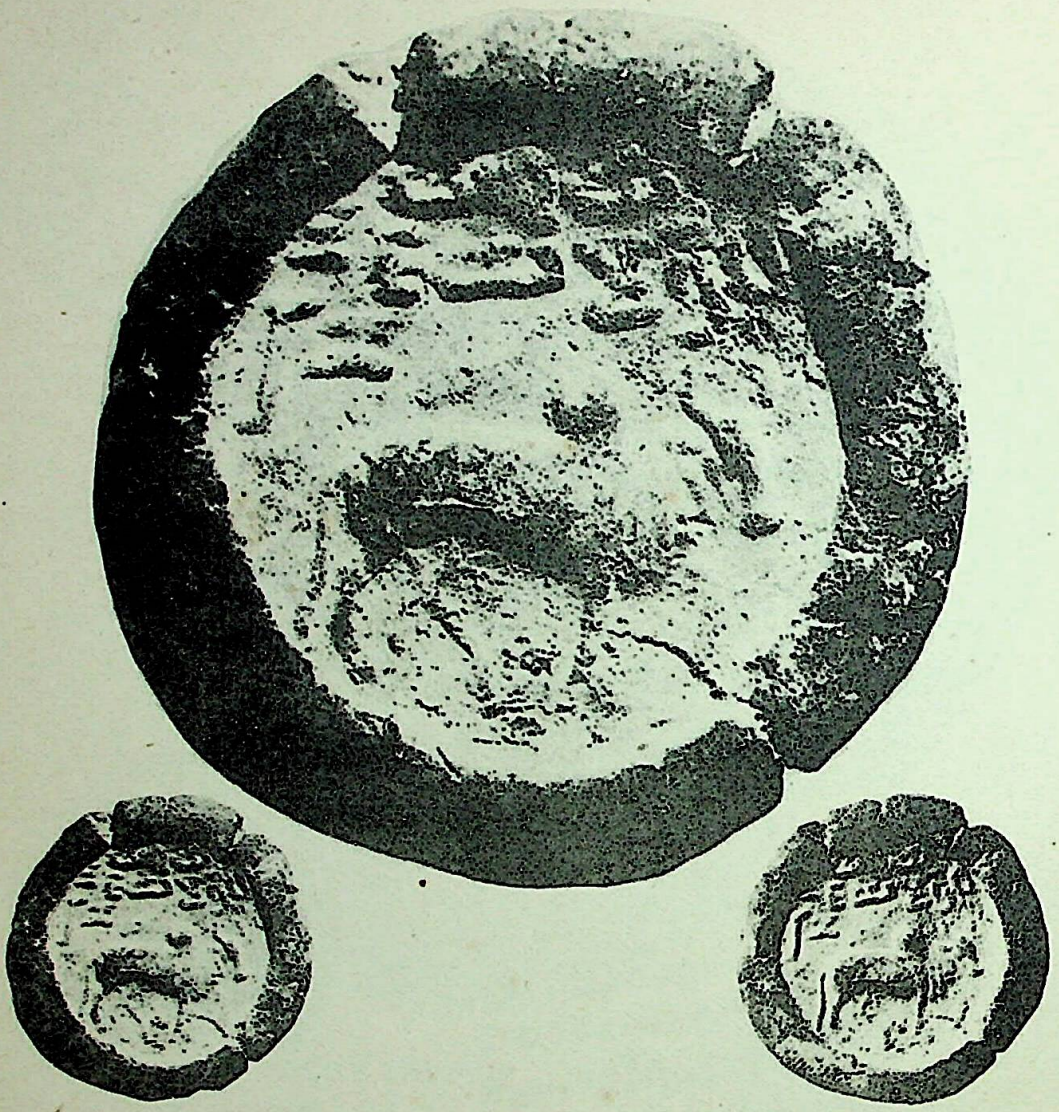

८०. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

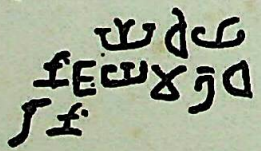

पाठ—यौधेया-
नां जयमन्त्रध-
राणां

लेख के नीचे चलता हुवा नन्दी प्रदर्शित है ।

80. Clay seal of the Yaudheyas from Sunet, with a walking Nandī below the three-line inscription: *Yaudheyānām jayamantradharāṇām.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

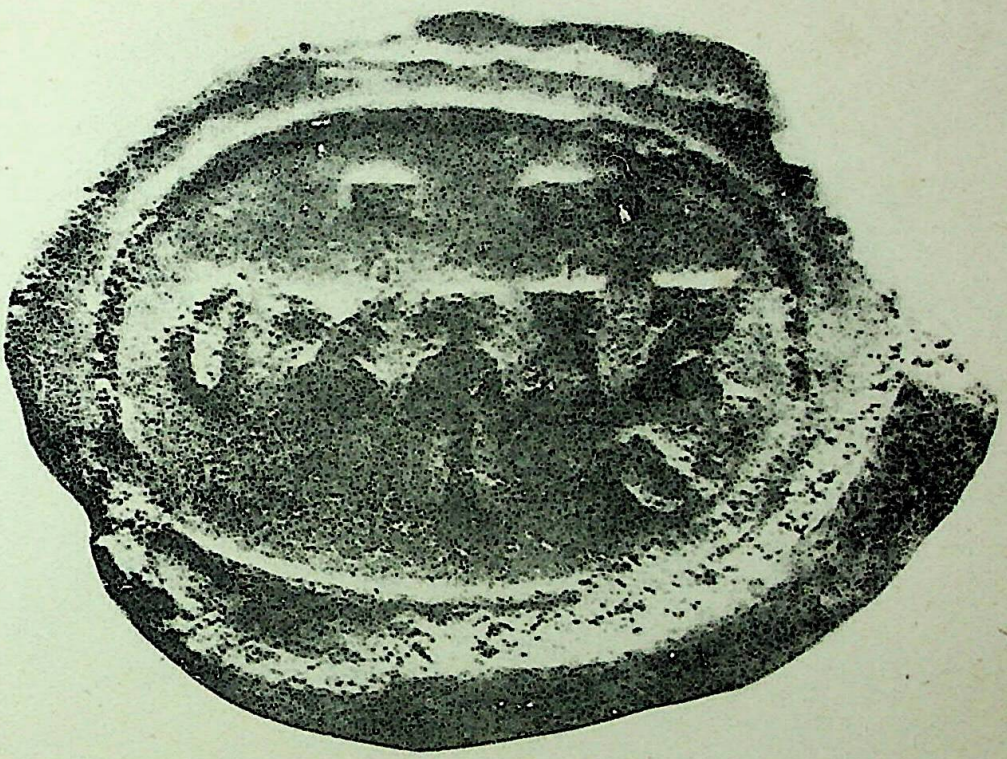

८१. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ—धर्म कर्तव्य

81. Votive clay seal from Sunet inscribed *dharma kartavya*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८२. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

पाठ—धर्म कर्त्तव्य

82. Votive reverse clay seal from Sunet inscribed *dharma kartavya.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८३. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

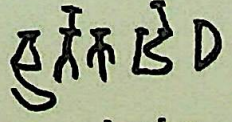

पाठ—धर्म कर्त्तव्य

83. Votive reverse clay seal from Sunet inscribed *dharma kartavya.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८४. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

पाठ—सत्य वतव्य

84. Reverse votive clay seal from Sunet inscribed *satya vatavya*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

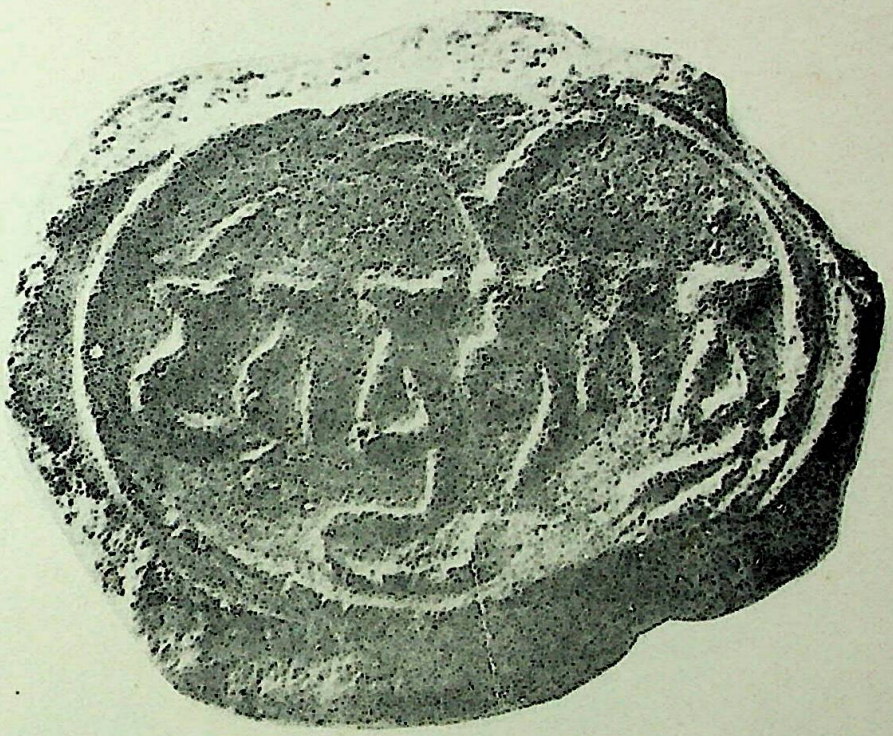

८५. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

दातव्य भोतव्यं

पाठ—दातव्य भोतव्यं

85. Votive clay seal from Sunet inscribed *dātavya bhotav-yam.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८६. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

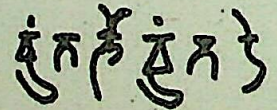

पाठ—दातव्यं भोतव्यं

86. Reverse votive clay seal from Sunet, inscribed *dātavyaṁ bhotavyam.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८७. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्राङ्क

पाठ—सिद्धिरस्तु

87. Reverse votive clay seal from Sunet inscribed *siddhir astu.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

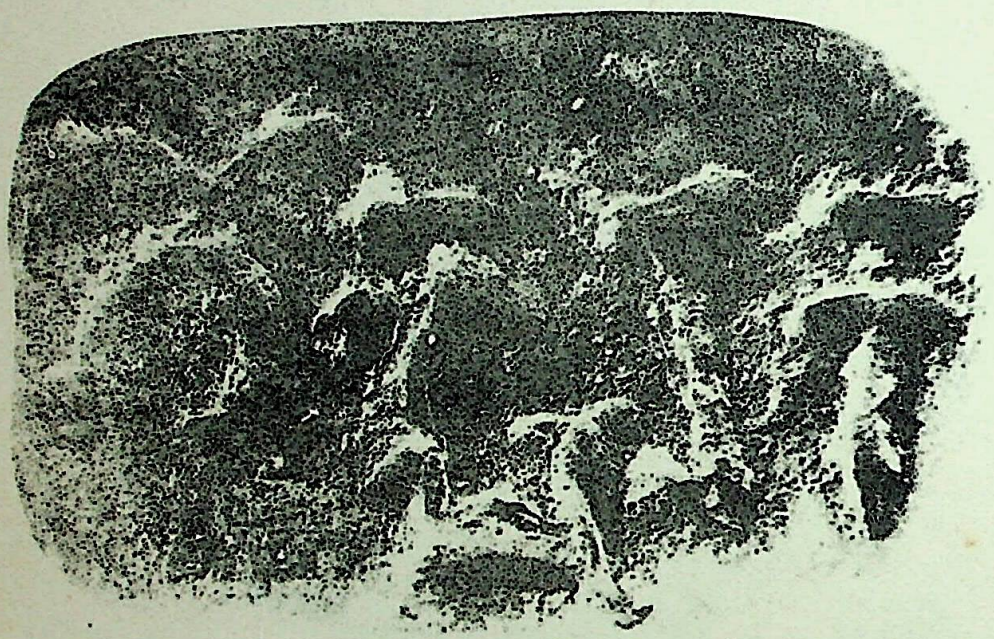

८८. सुनेत से प्राप्त मृण्मणका

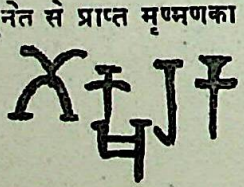

पाठ—गोक्षुरक

88. Clay head from Sunet inscribed *gokṣuraka*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

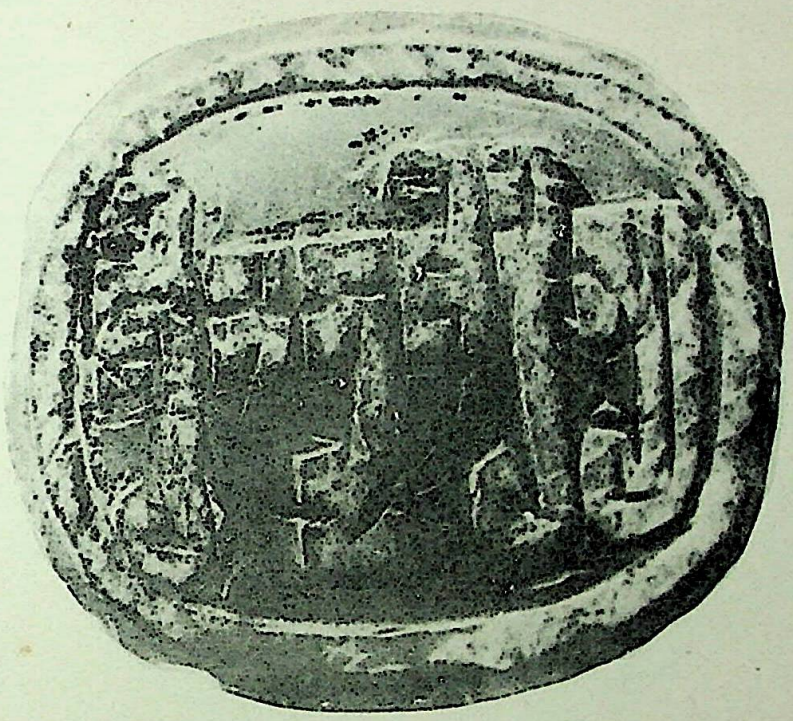

८९. सुनेत से प्राप्त अकीक पत्थर का मुद्राङ्क

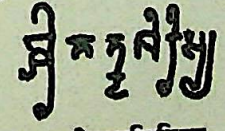

पाठ—श्रीनन्दशिरिस्य

89. Crystal seal of Nandaśiri from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९०. सुनेत सं प्राप्त मुद्राङ्क

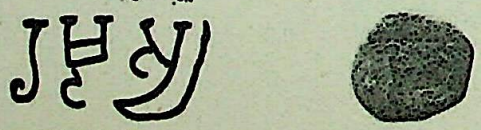

पाठ—रष्टस्य ?

90. Clay seal from Sunet inscribed *raṣṭasya* ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

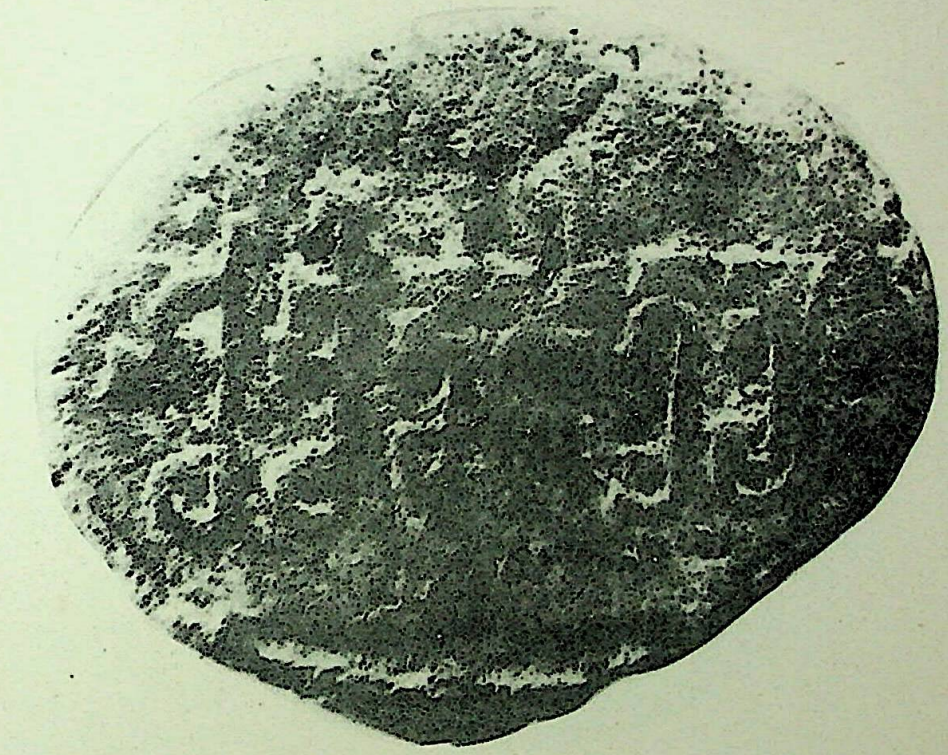

९१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

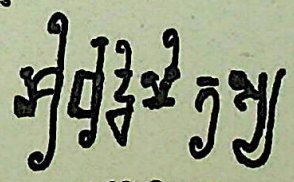

पाठ—श्रीबुद्धिमित्रस्य

91. Clay seal of Buddhimitra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

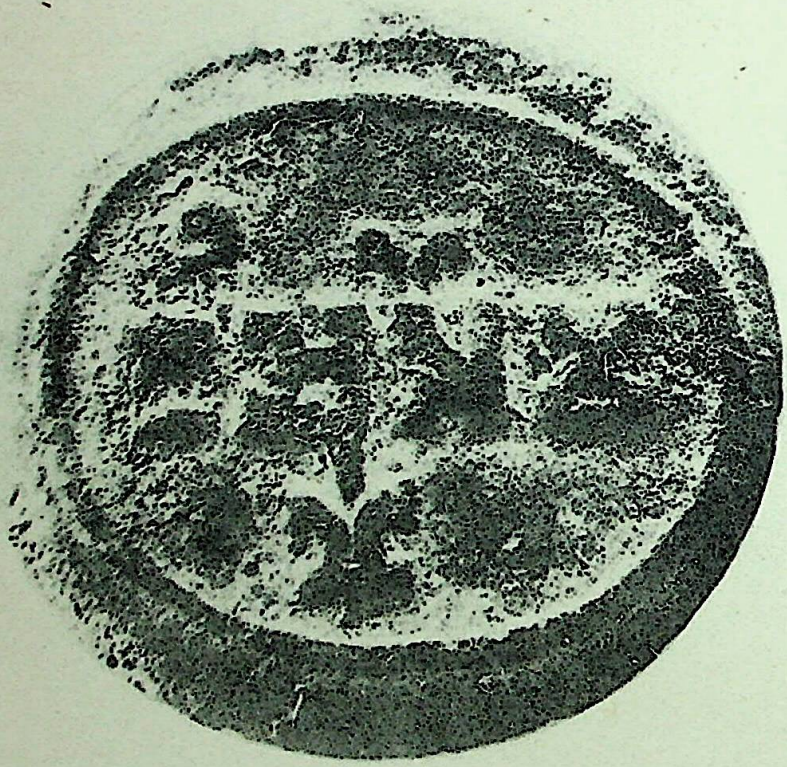

९२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—विष्णुसोम

92. Clay seal of Viṣṇusoma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

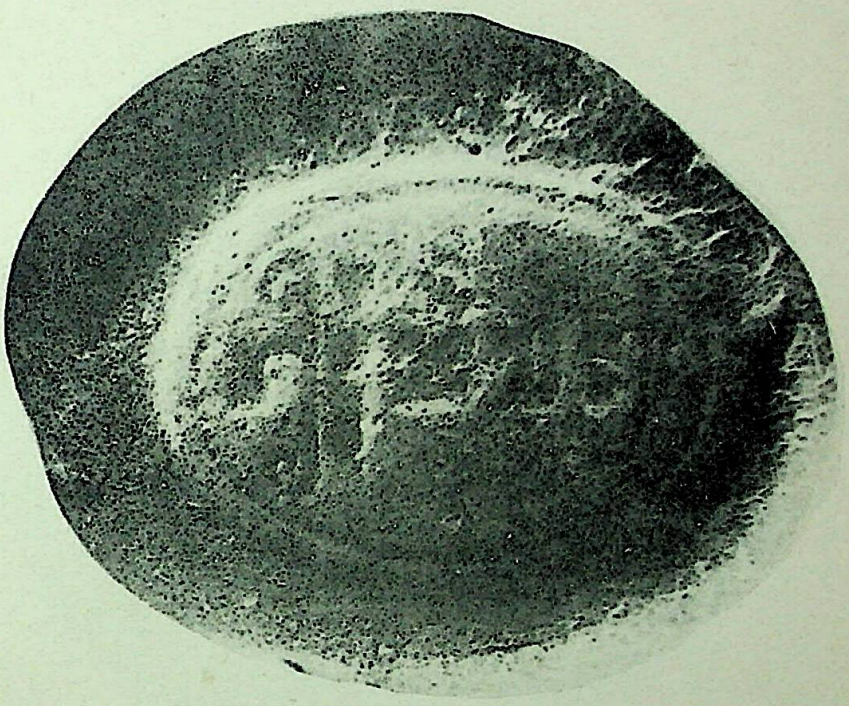

९३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीरामिलस्य

93. Clay seal of Rāmila from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

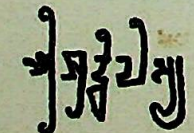

पाठ—श्रीशुद्धिलस्य

94. Clay seal of Śuddhila from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

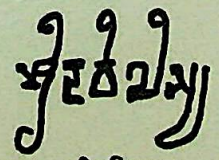

पाठ—श्रीदविलस्य

95. Clay seal of Davila from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

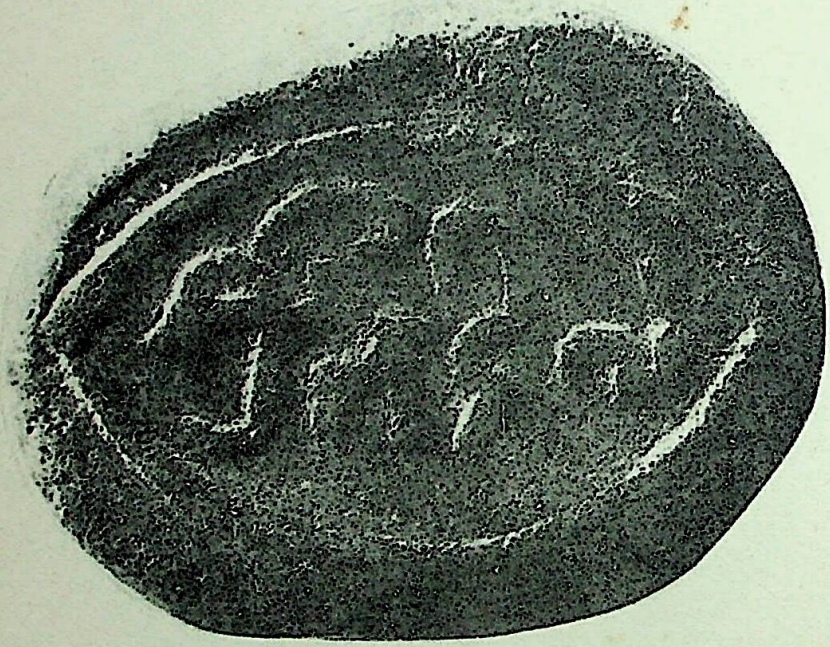

९६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ— श्रीभजिल

96. Clay seal of Bhajila from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

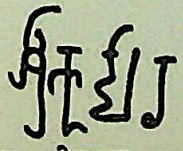

पाठ—श्रीकुमार

97. Clay seal of Kumāra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९८. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

पाठ—श्रीकुमार

98. Reverse clay seal of Kumāra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

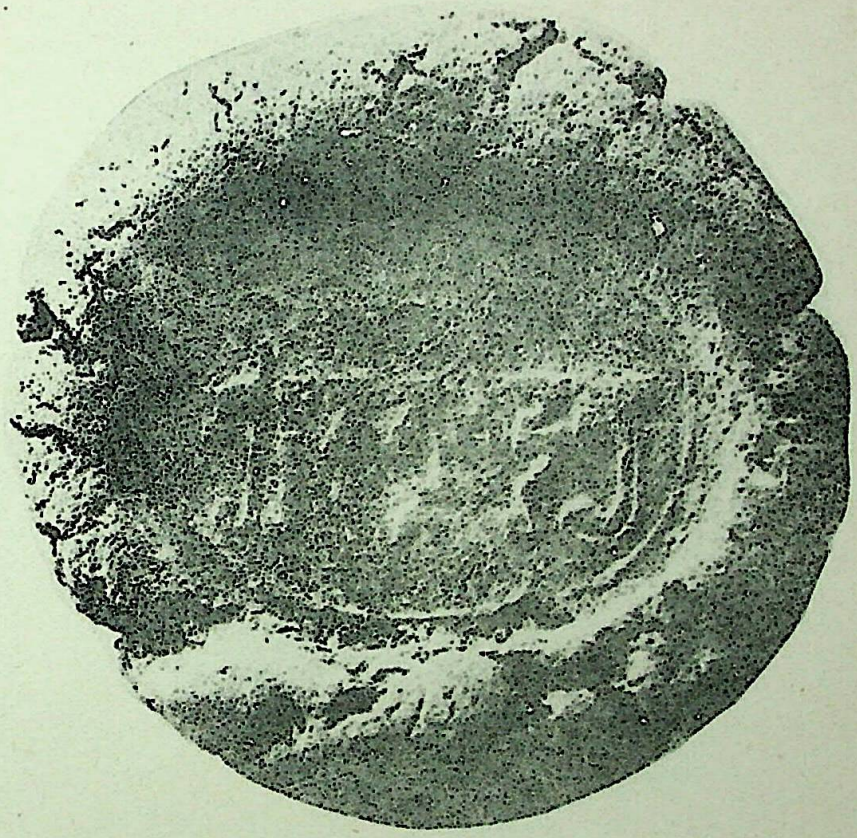

९९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

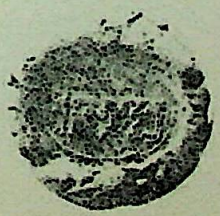

पाठ—श्रीरवन्तभद्रस्य

99. Clay seal of Avantabhadra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

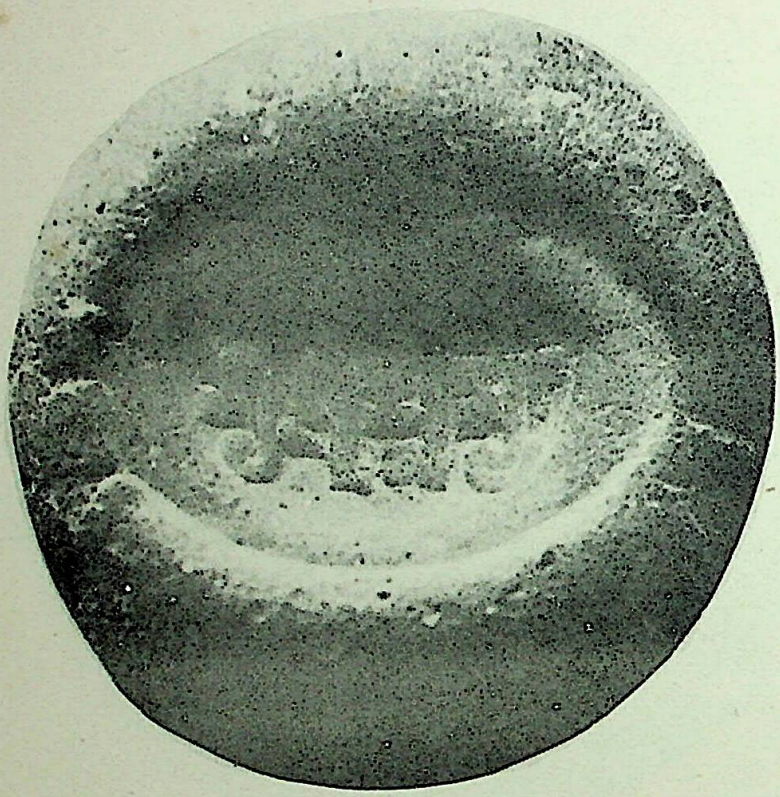

१००. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

श्रीगुप्तस्य

पाठ—श्रीगुप्तस्य

100. Clay seal of Gupta from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीविष्णुभद्रस्य

101. Clay seal of Viṣṇubhadra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

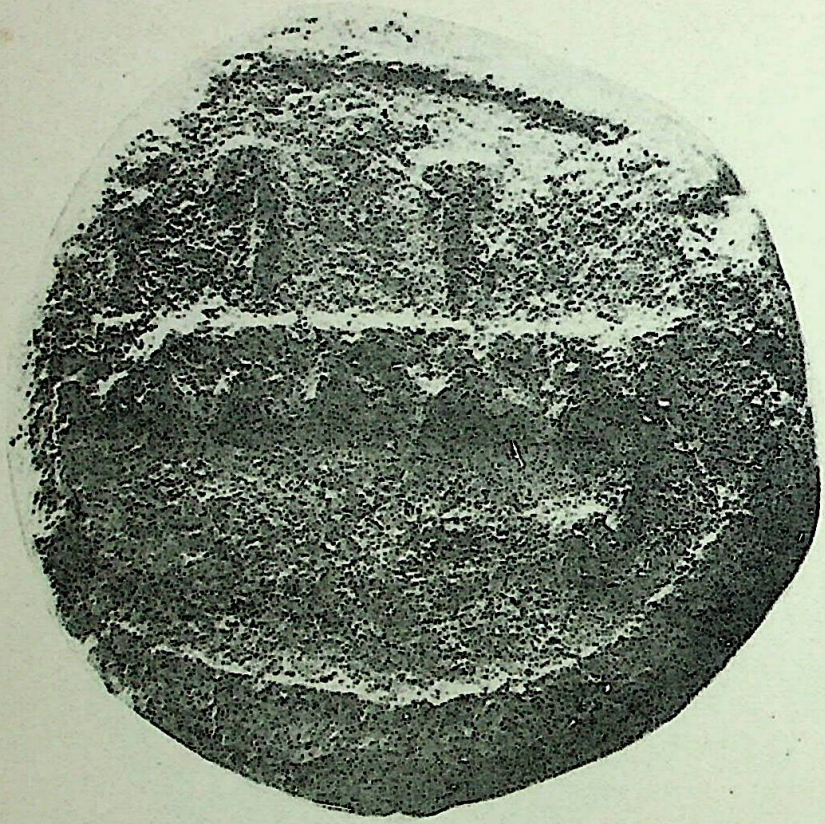

१०२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

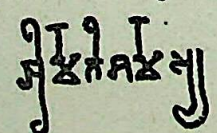

पाठ—श्रीमंतिशर्मस्य

102. Clay seal of Matiśarma from Sunet

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

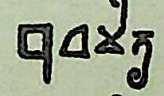

पाठ—बुधमित्र

103. Clay seal of Budhamitra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०४ सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

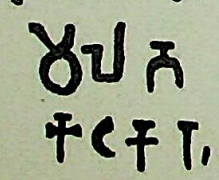

पाठ—महत
कटकर

104. Clay seal from Sunet, inscribed *mahata kaṭakara*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

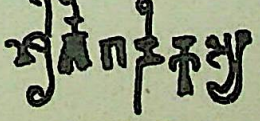

पाठ—[श्री]विशण्डिकस्य

105. Clay seal of Viśaṇḍika from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

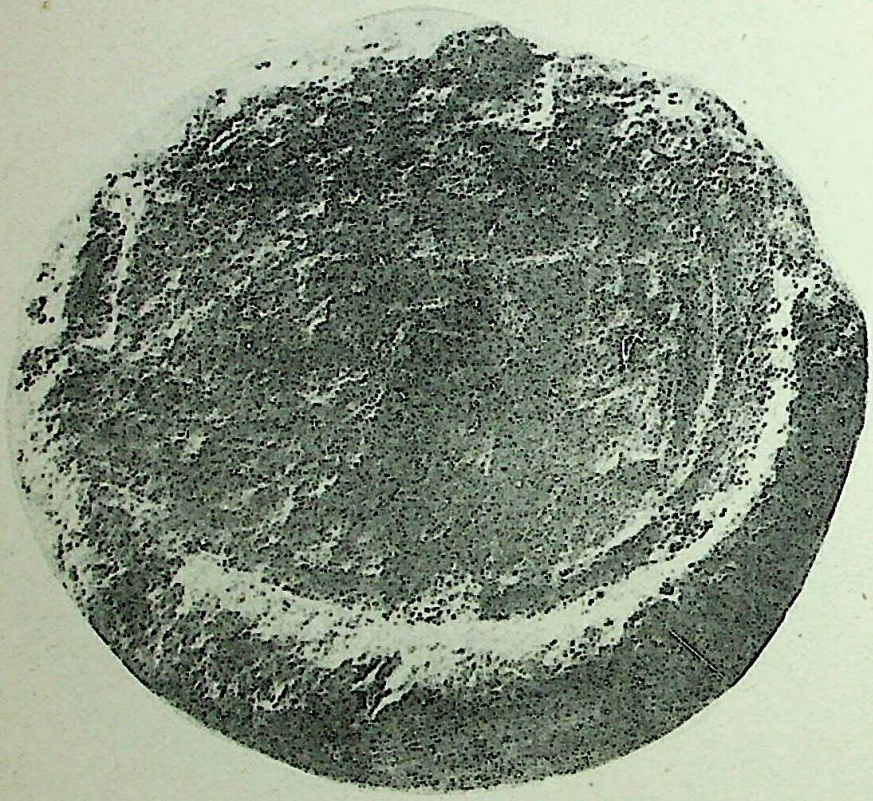

१०६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—मित्रदेवस्य

106. Clay seal of Mitradeva from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ –शङ्करना-
रायणाभ्यां

107. Votive clay seal from Sunet, dedicated to Śaṅkara and Nārāyaṇa.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

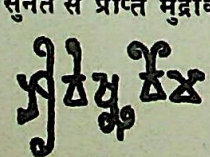

पाठ—श्रीविष्णुवोम

108. Clay seal of Viṣṇuvoma (?) from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीस्वामिगुप्त

109. Clay seal of Svāmigupta from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

मुल्लस्य

पाठ—श्रीमुल्लस्य

110. Clay seal of Mulla from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

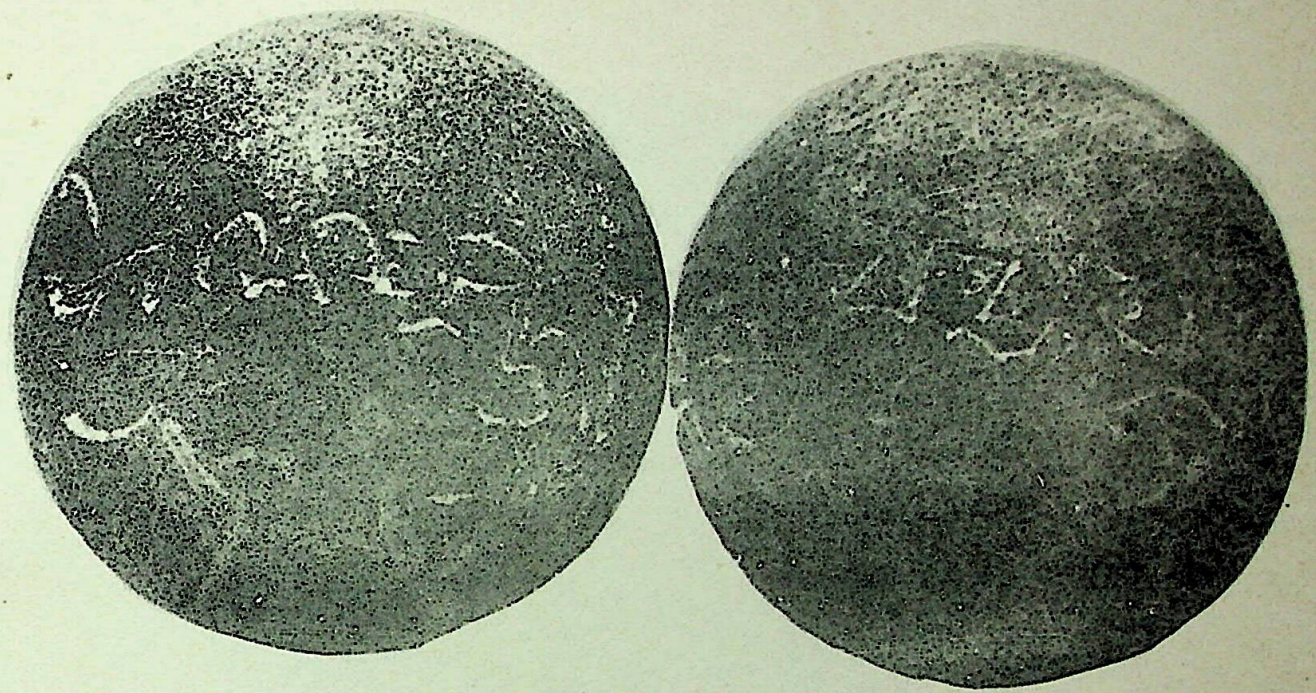

१११. सुनेत से प्राप्त मिट्टी की गोली

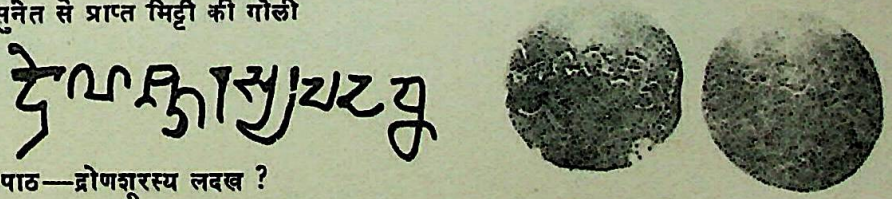

पाठ—द्रोणशूरस्य लदख ?

111. Ball-type clay seal of Droṇaśūra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीसोमदेव से-
धचक्र
लेख के ऊपर शंख का चित्र है ।

112. Clay seal of Somadeva from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

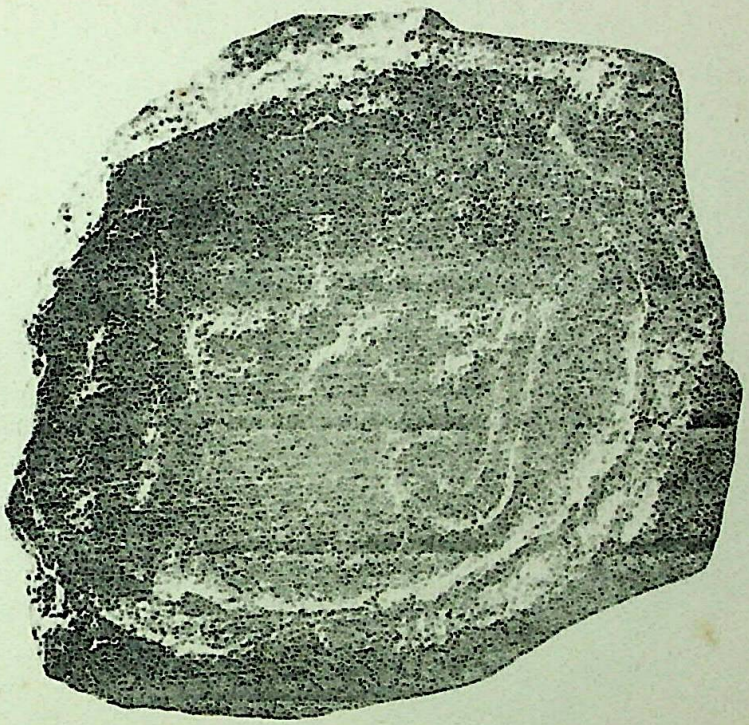

११३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीधर्मस्य

113. Clay seal of Śrīdharma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

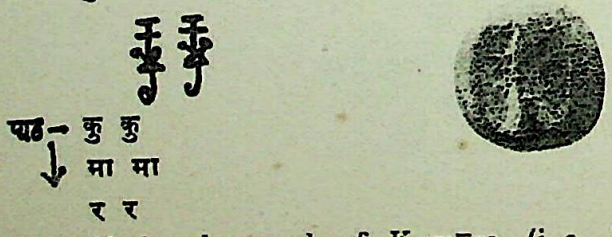


114. Votive clay seal of Kumāra (i. e. Kārtikeya) from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

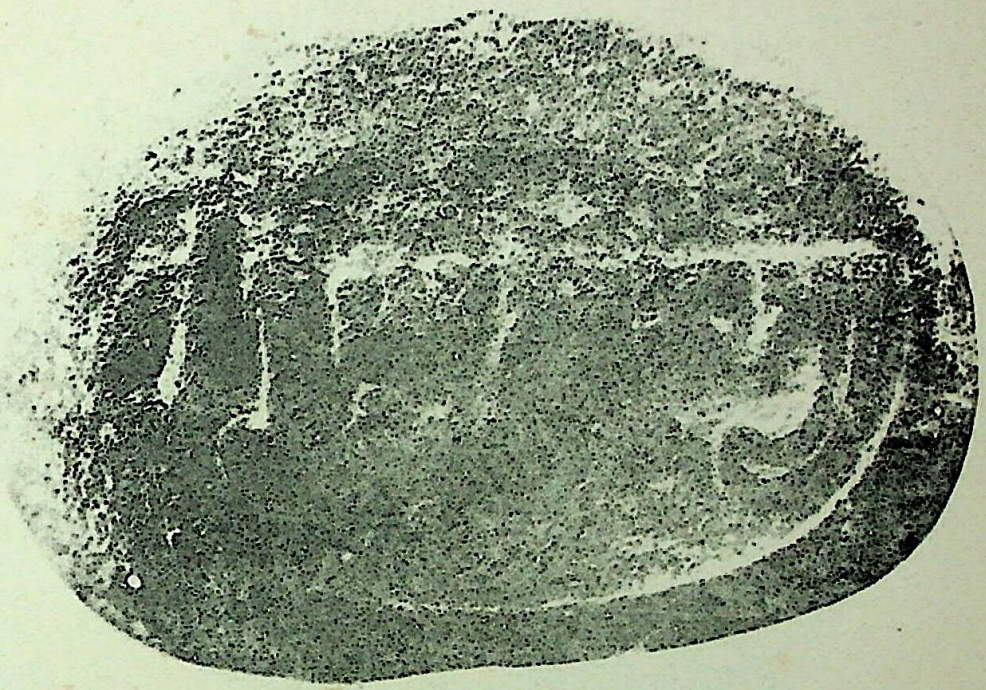

११५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

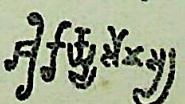

पाठ - श्रीरार्य्यसोमस्य

115. Clay seal of Āryasoma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

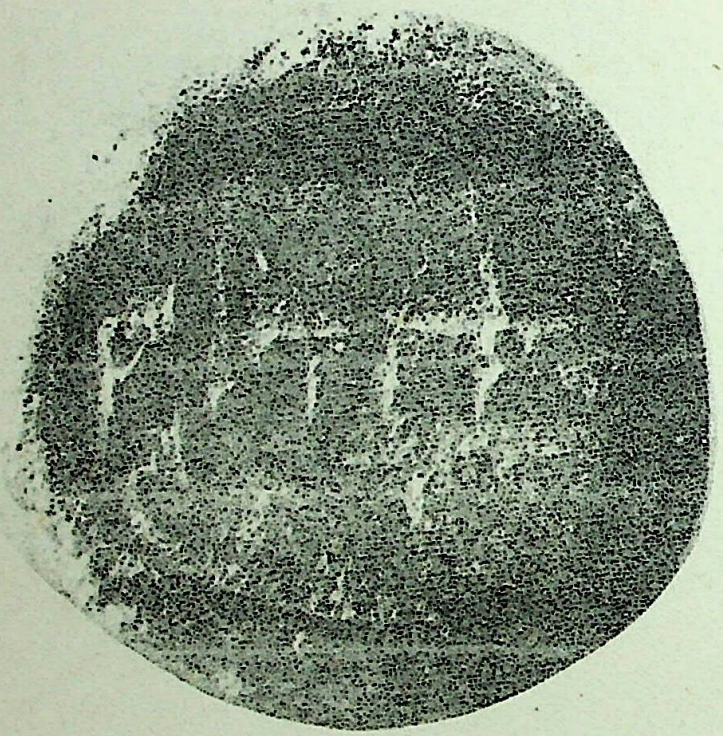

११६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीमातिशर्मस्य

116. Clay seal of Mātiśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

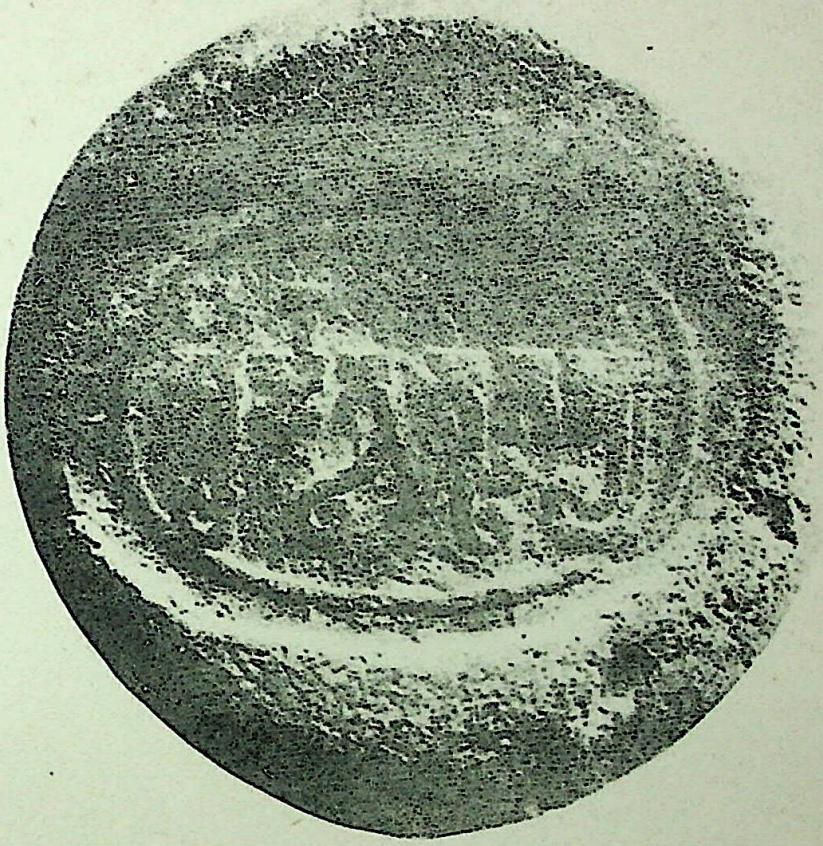

११७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

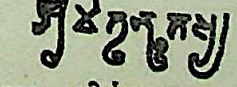

पाठ—श्रीमंतृभूतस्य

117 Clay seal of Mātṛbhūta from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

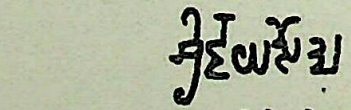

पाठ—श्रीजयसोम

118. Clay seal of Jayasoma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

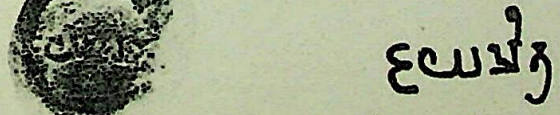

पाठ—जयमित्र

119. Clay seal of Jayamitra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—नौमि

120. Votive clay seal from Sunet, inscribed *naumi* 'I pay homage'.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

रवेः

पाठ—रवेः

121. Clay seal of Ravi from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

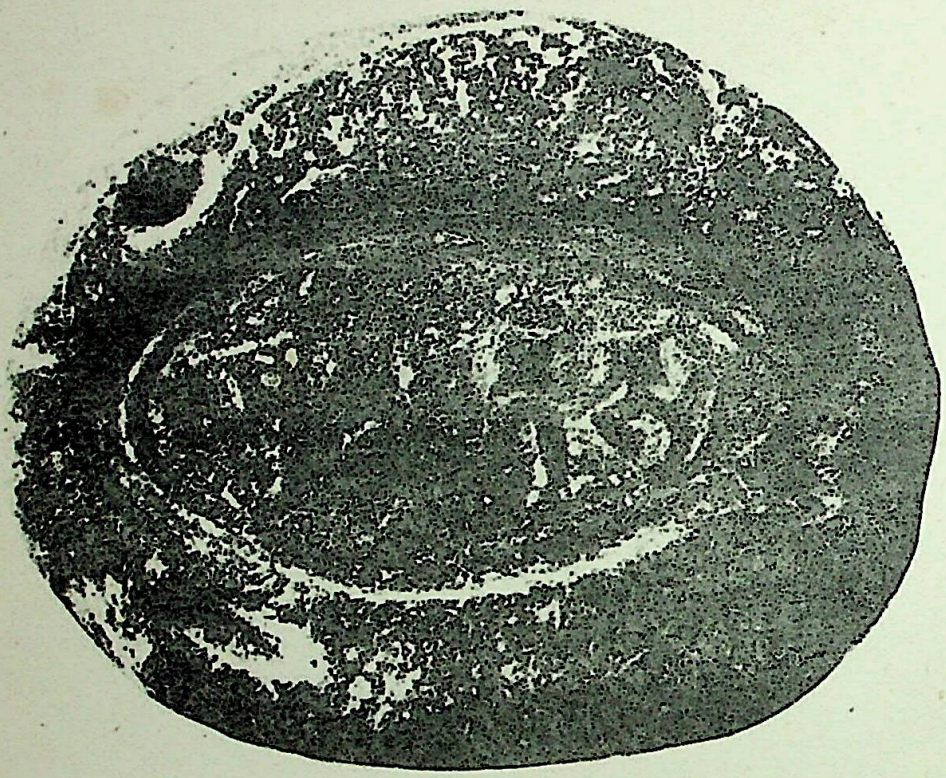

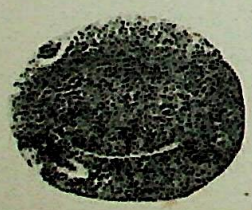

१२२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

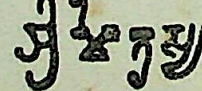

पाठ— श्रीमित्रस्य

122. Clay seal of Śrīmitra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

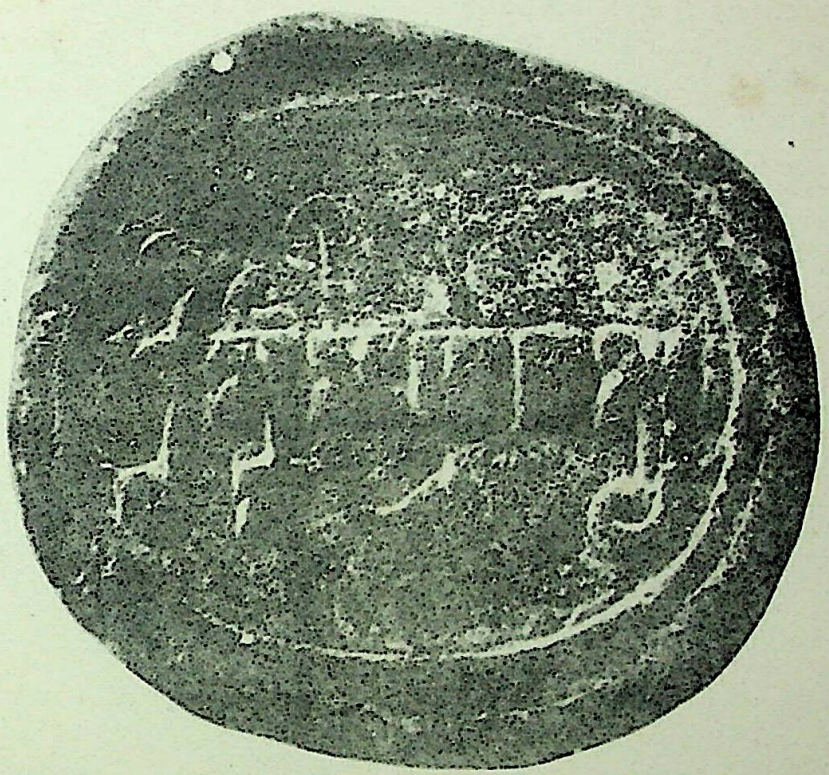

१२३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

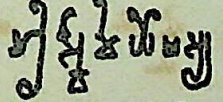

पाठ—श्रीस्वामिघोषस्य

123. Clay seal of Svāmighoṣa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

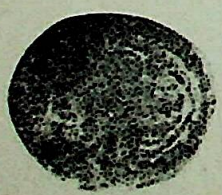

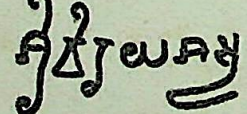

पाठ—श्रीवीरयशस्य

124. Clay seal of Vīrayaśa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

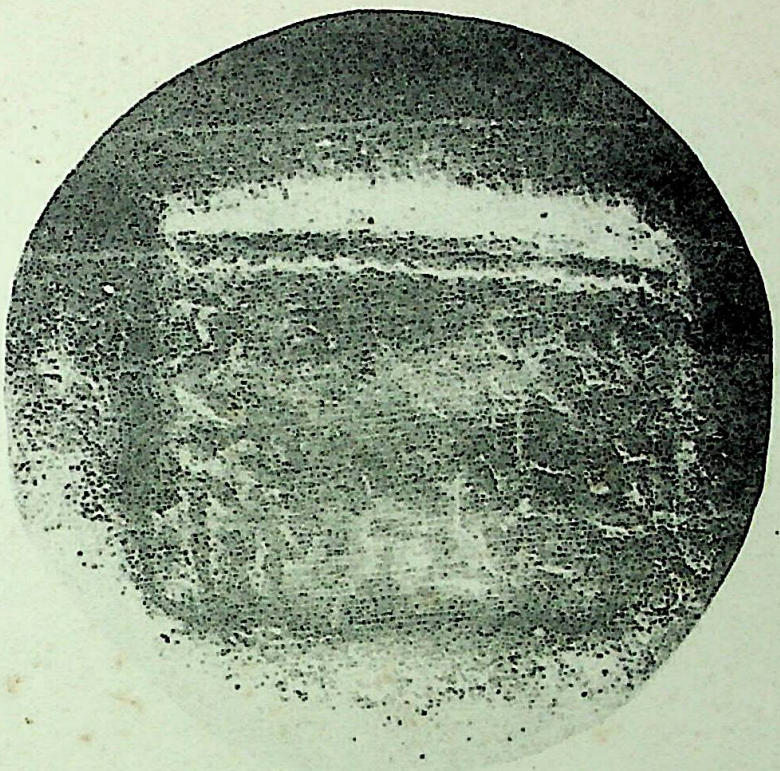

१२५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

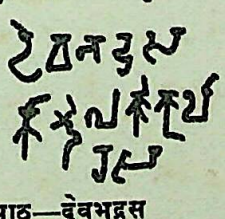

पाठ—देवभद्रस
काण्डेलकाकुमा-
रस

125. Clay seal of Devabhadra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

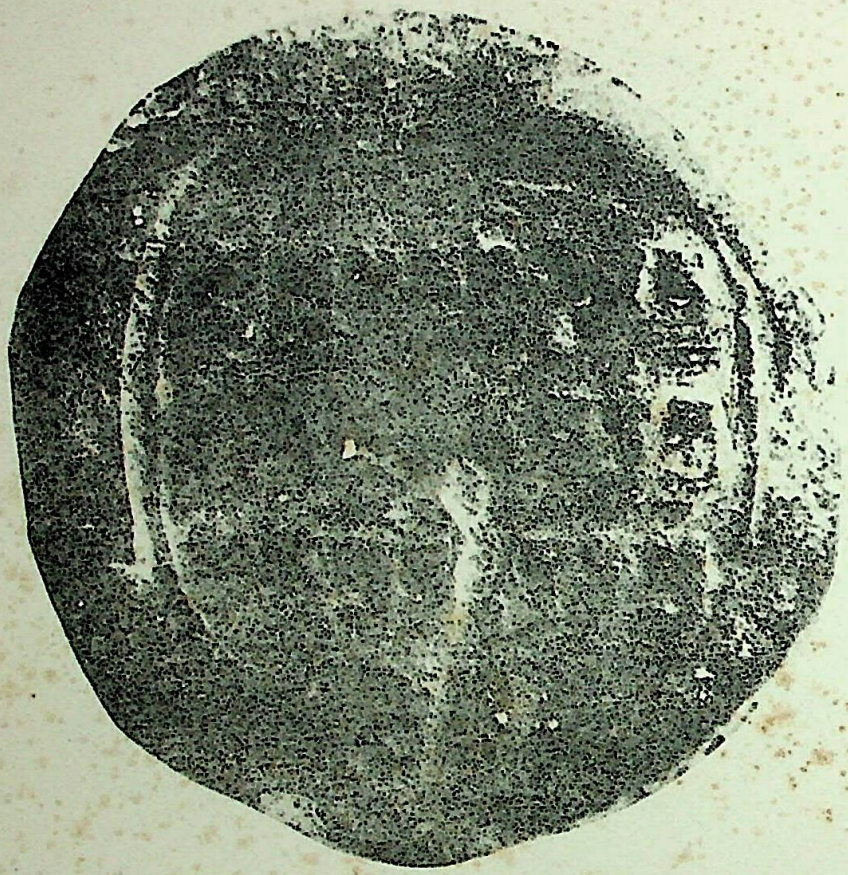

१२६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

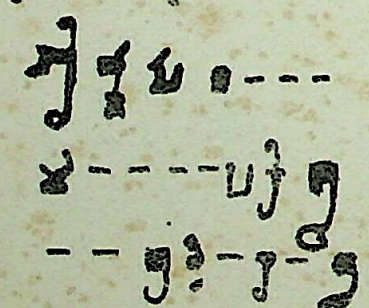

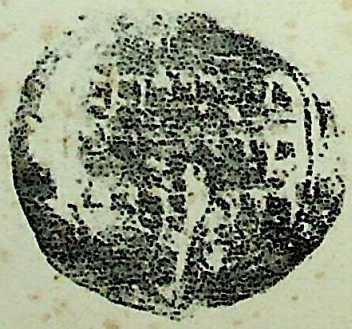

पाठ—श्रीस्वामि.....

.....हरि-

.....र...स्य

126. Clay seal from Sunet with a broken inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२७. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

पाठ—जातुवेद ?

127. Reverse clay seal from Sunet inscribed *jātuveda*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

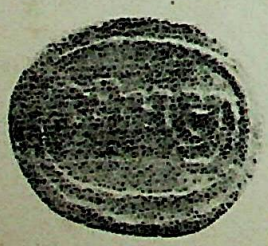

१२८. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

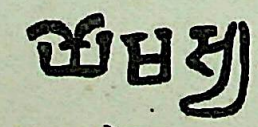

पाठ—घोषस्य

128. Clay seal of Ghoṣa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

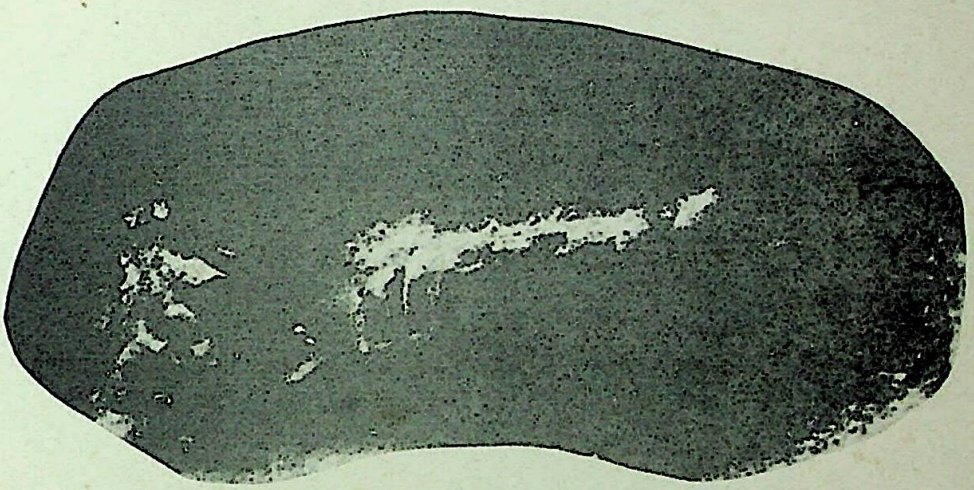

१२९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीमात्रिशर्मस

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र ।

129 Clay seal of Mātriśarma from Sunet.
Trident before the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

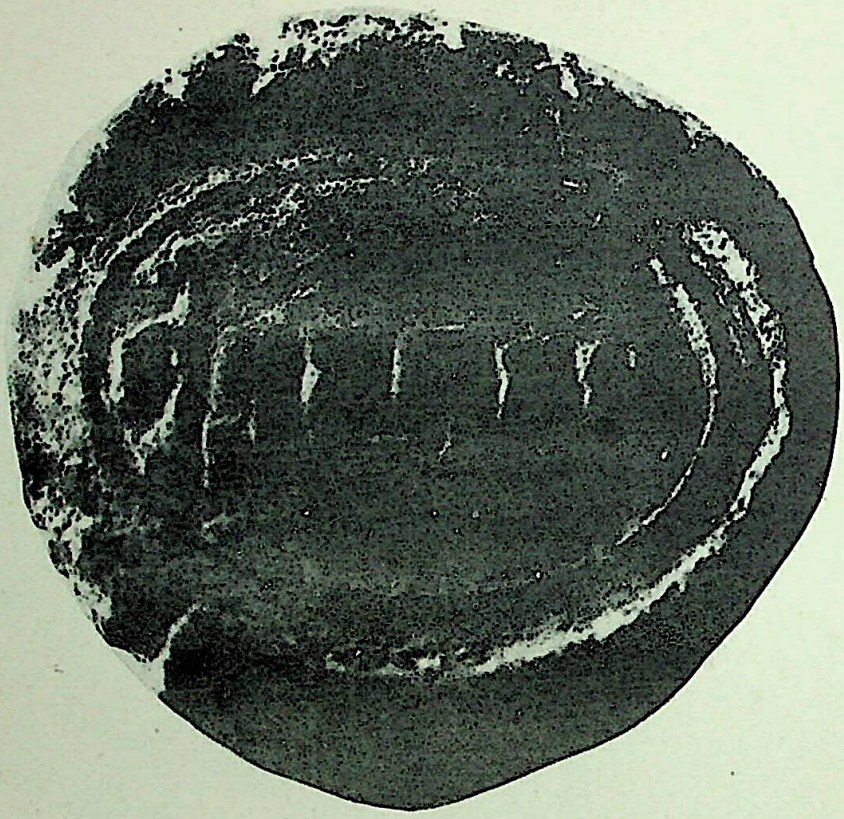

१३०. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

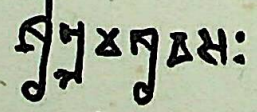

पाठ—श्रीभूमश्रवसः

130 Clay seal of Bhūmaśravas from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

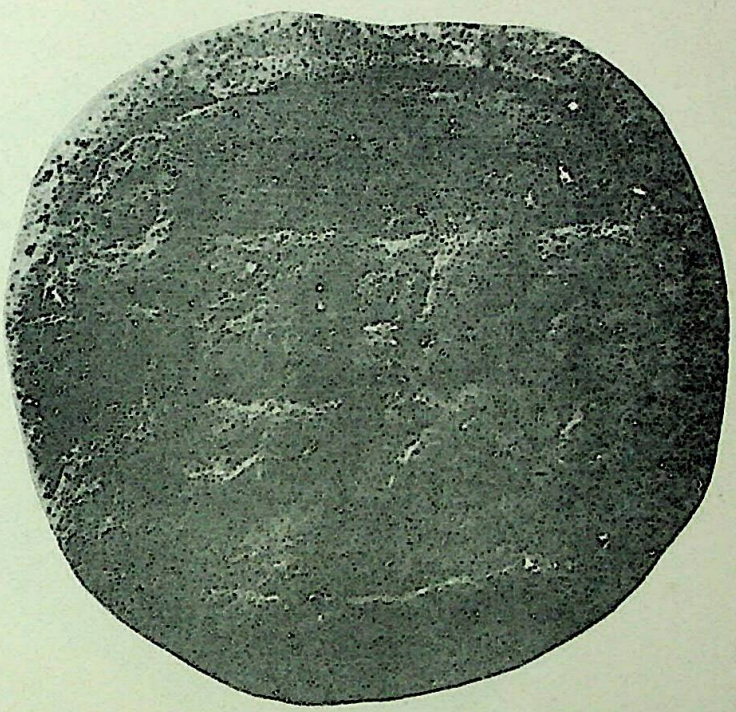

१३१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

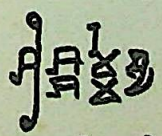

पाठ—श्रीइशर्म्मस्य ?

131 Clay seal of Śarmma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

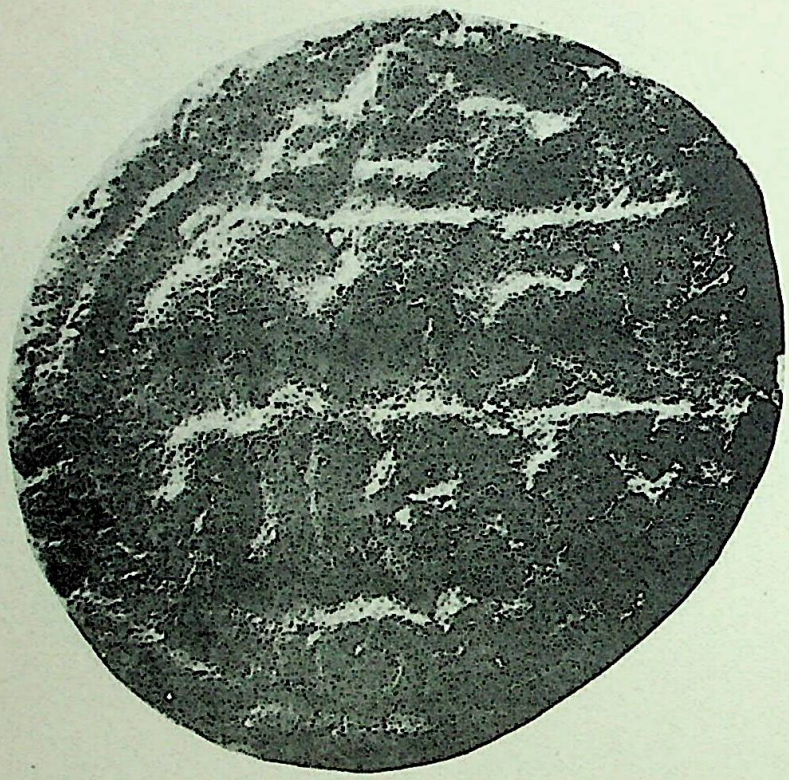

१३२. सुनेत से प्राप्त

कमल

श्रीमत

पाठ—कमल

श्रीमता ?

132 Clay seal from Sunet, inscribed *kamala śrimatā* ?

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

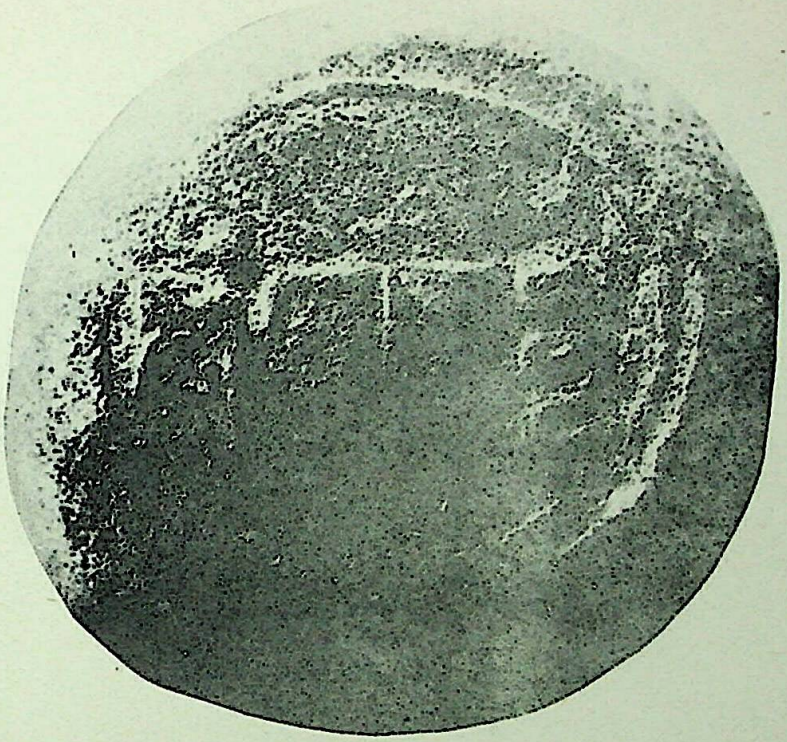

१३३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

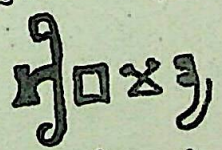

पाठ—श्रीधमस्य ?

133 Clay seal of Śrīdharma (?) from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक



पाठ— .....मित्र वि...?

लेख के ऊपर का चित्र त्रुटित।

134 Clay seal of °mitra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३५. सुनेत से प्राप्त खरोष्ठी लिपि का मुद्रांक

पाठ—अपठित

लेख के नीचे सिंह चलता हुवा और उसके पैरों में स्वस्तिक चिह्न ।

135 Clay seal in Kharoṣṭhī script from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

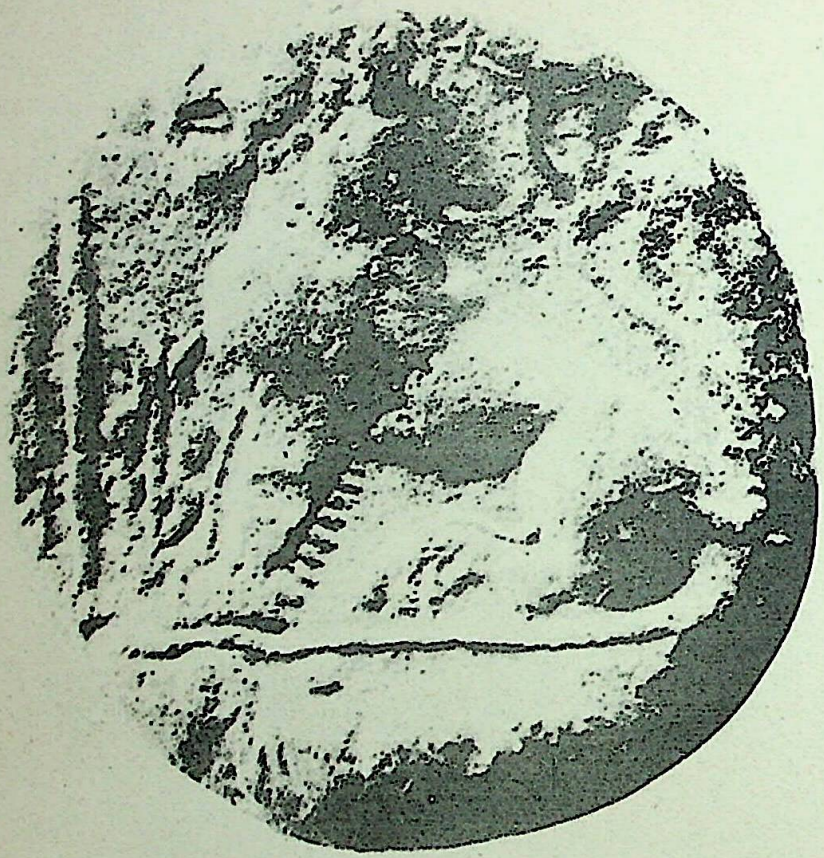

१३६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

𑀚𑀺𑀢𑀁𑀪𑀕𑀯𑀢𑀸

पाठ—जितं भगवता

लेख के ऊपर बैठा हुवा सिंह चित्रित है ।

136 Votive clay seal from Sunet, inscribed *jitaṁ bhagavatā*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—सोमेसरपुत्र-
स्य श्रीपृथ्वीवर्मस्य ? श्रीपुष्ट.....स्य ?
लेख के नीचे सिंह का चित्र तथा उसके आगे शंख ।

137 Clay seal of Someśvara-putra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

[श्री]न्दसोम[स्य]? [श्रीमित्रसोमस्य]?

पाठ—[श्रीन]न्दसोम[स्य]? [श्रीमित्रसोमस्य]?

लेख के ऊपर सिंह के आगे चक्र का चित्र ।

138 Clay seal of Nandasoma (?) from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

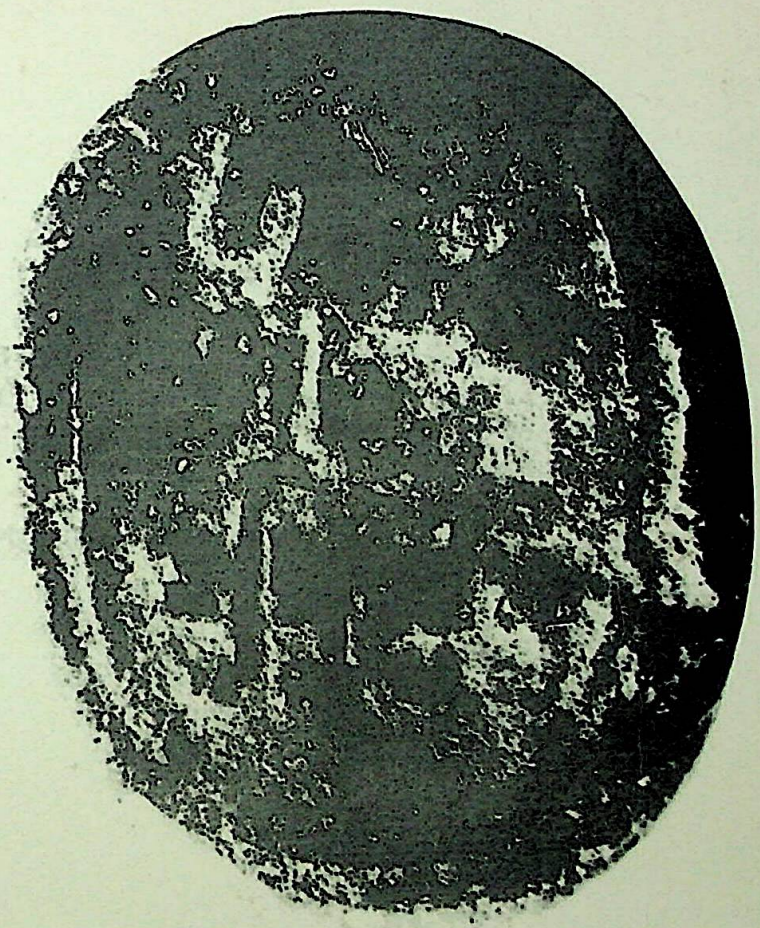

१३९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीसूर्यस्य ?

लेख के ऊपर खड़े अश्व का चित्र।

139 Clay seal of Sūrya from Sunet, with a standing horse above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीअतिमुत्तक

लेख के ऊपर मस्त नन्दी का चित्र ।

140 Clay seal of Atimuttaka from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४१. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

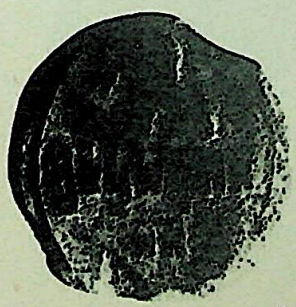

श्रीविष्णुसिंह शत
पतेः

पाठ—श्रीविष्णुसिंहशत-
पतेः

ऊपर बैठे हुवे सिंह के आगे शंख ।

141 Clay seal of Viṣṇusiṁha Śatapati from Sunet. Conch opposite a sitting lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४२. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ—स्वामिगुप्त...य
श्रीरु...व...
ऊपर बैठे सिंह के आगे चक्र।

142 Clay seal of Svāmigupta from Sunet. Discus opposite a sitting lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

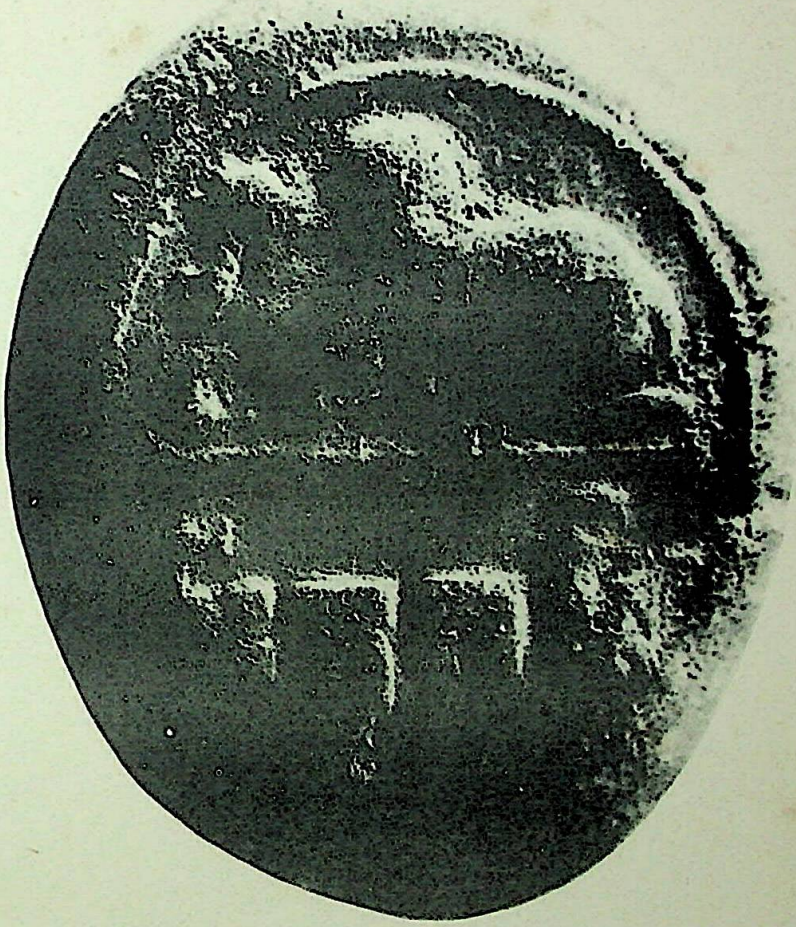

१४३. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ—मातृशर्मा

ऊपर बैठा हुवा नन्दी ।

143 Crystal seal of Mātṛśarmā from Sunet. Seated Nandi above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

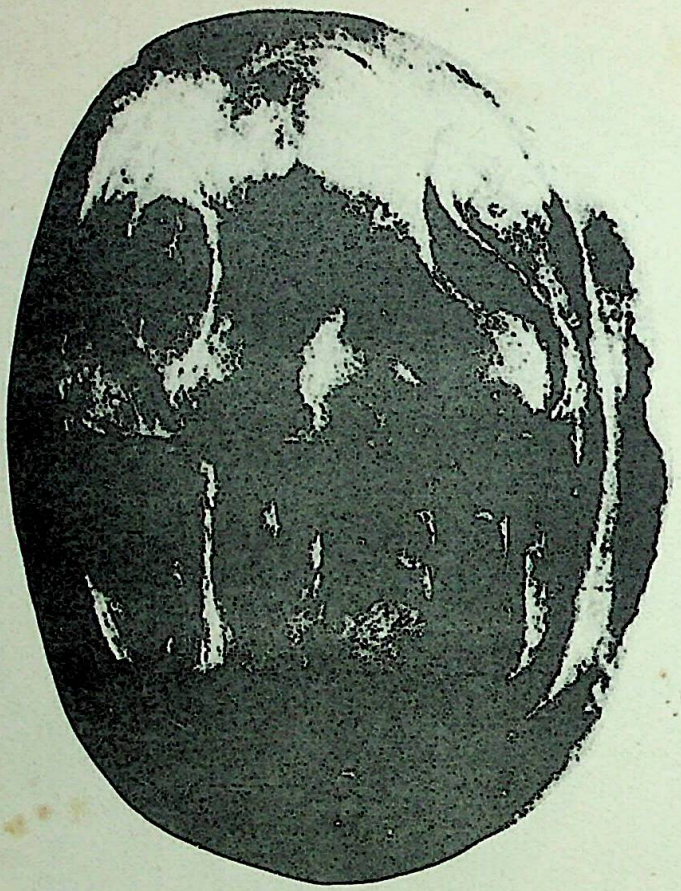

१४४. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

पाठ—श्रीसोमस्य

ऊपर सिंह के आगे चक्र।

144 Clay seal of Soma from Sunet. Discus opposite a lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४५. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

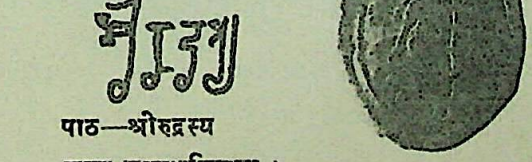

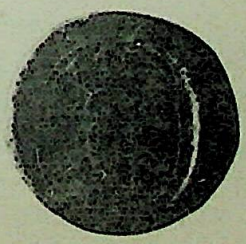

पाठ—श्रीरुद्रस्य

ऊपर शालभञ्जिका ।

145 Clay seal of Rudra from Sunet, with a śālabhañjikā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४६. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

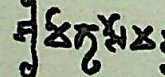

पाठ—श्रीमातृसोम[स्य]

ऊपर बैठे सिंह के आगे त्रिशूल है।

146 Clay seal of Mātṛsoma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४७. सुनेत से प्राप्त मुद्राङ्क

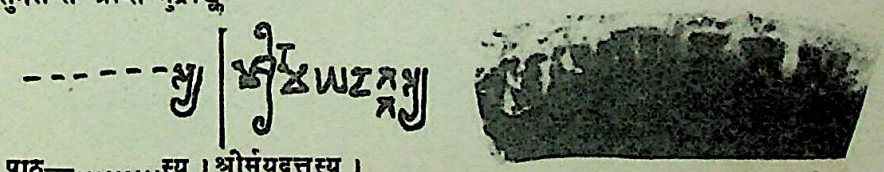

पाठ—.....स्य । श्रीमयदत्तस्य ।

लेख अस्पष्ट है । लेख के ऊपर नन्दी का चित्र है ।

147 Clay seal of Mayadatta from Sunet, with a Nandi above the inscription

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीवाष्णव ?

ऊपर बैठे हुवे सिंह के आगे एक धार्मिक चिह्न

148 Clay seal of Vāṣṇava(?) from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

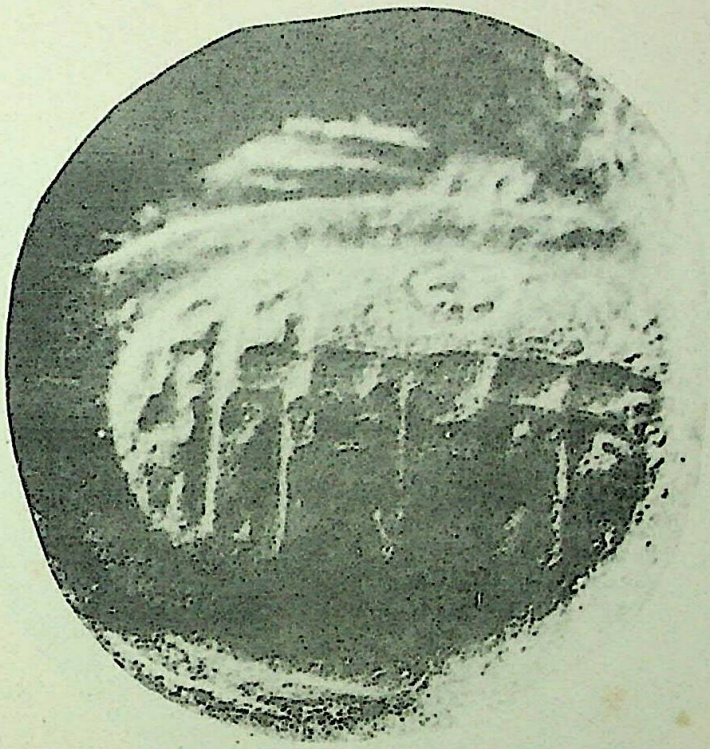

१४९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीकृष्णदत्तस्य

लेख के ऊपर चक्र का चित्र ।

149 Clay seal of Kṛṣṇadatta from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

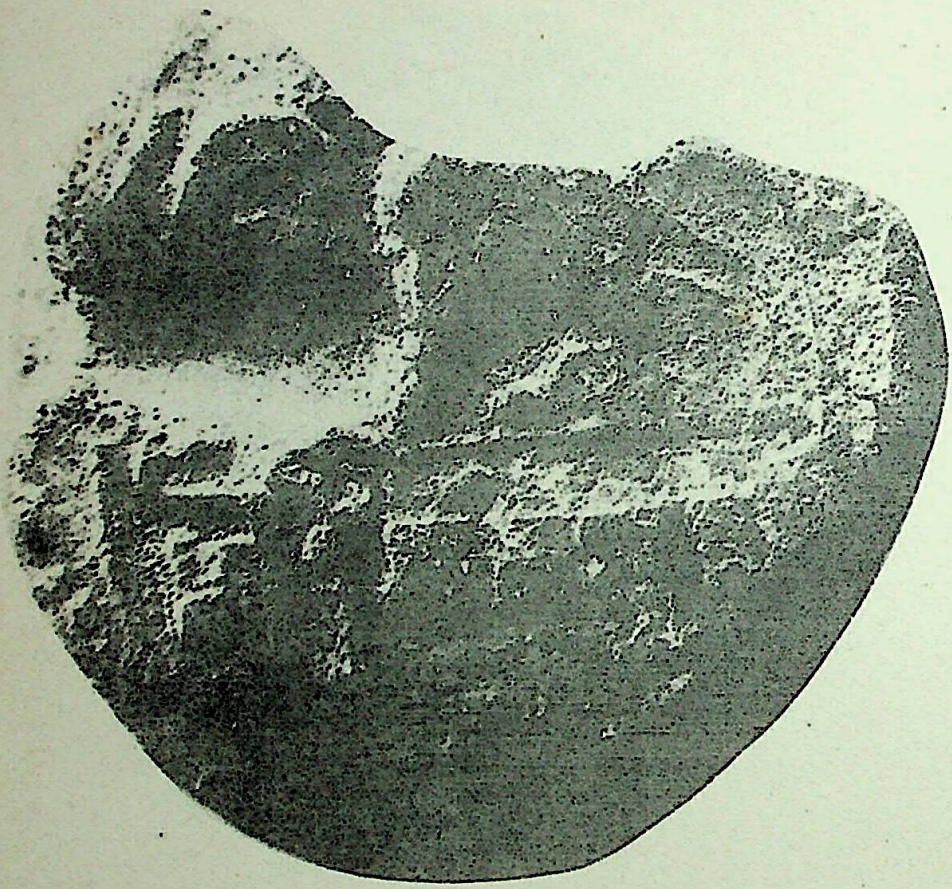

१५०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीरीशानभद्रस्य

ऊपर बैठे हुवे सिंह के आगे चक्र का चित्र।

150 Clay seal of Īśānabhadra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

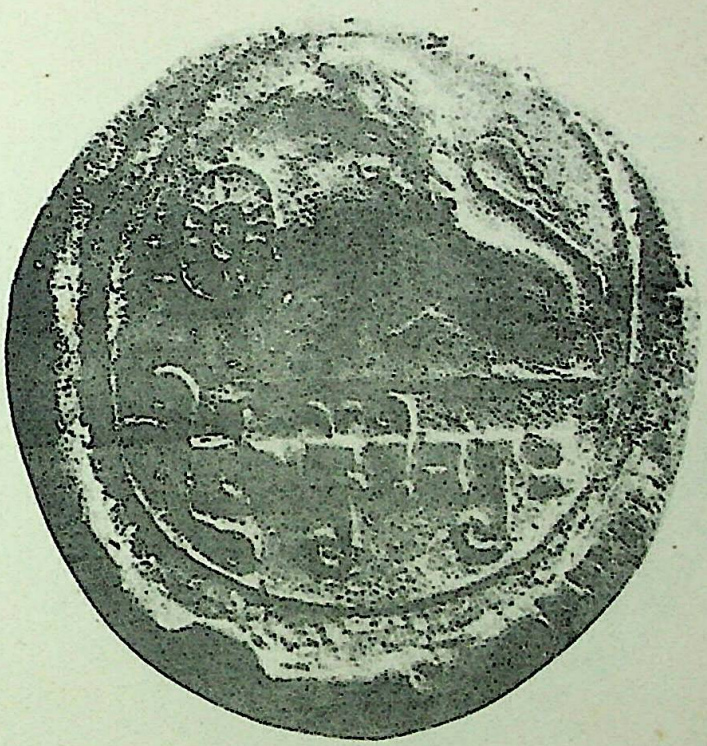

१५१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

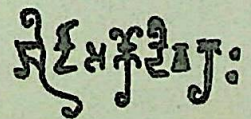

पाठ—श्रीदासकोदिवरः

ऊपर सिंह के आगे चक्र है।

151 Clay seal of Dāsakodivara from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

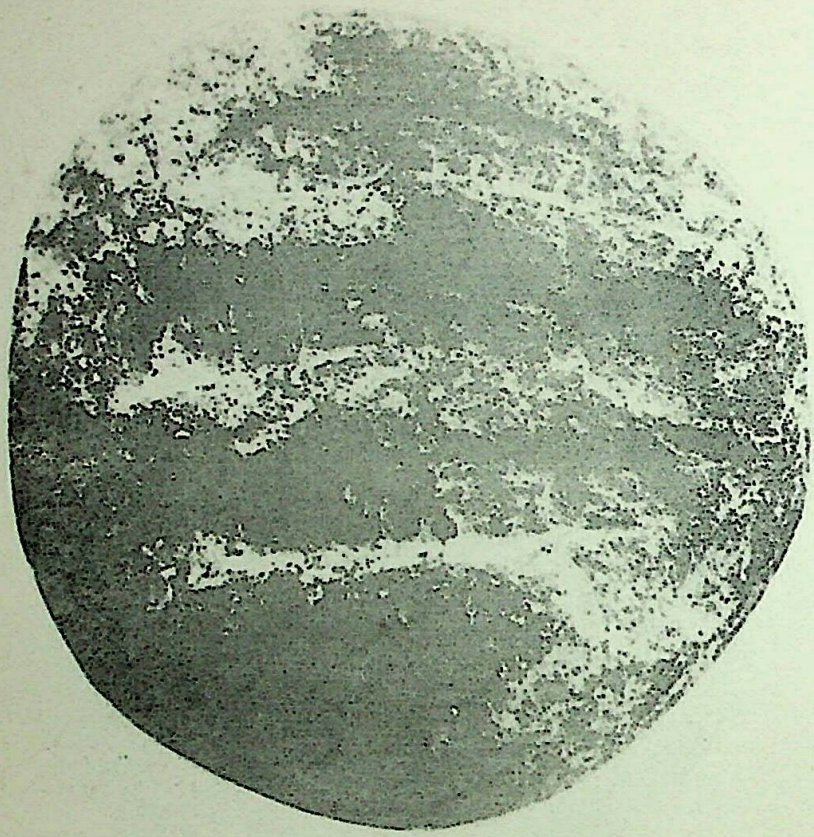

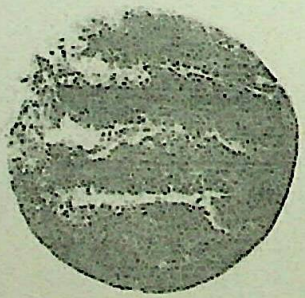

१५२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

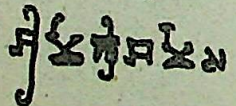

पाठ—श्रीमात्रिशर्मस

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र ।

152 Clay seal of Mātṛśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

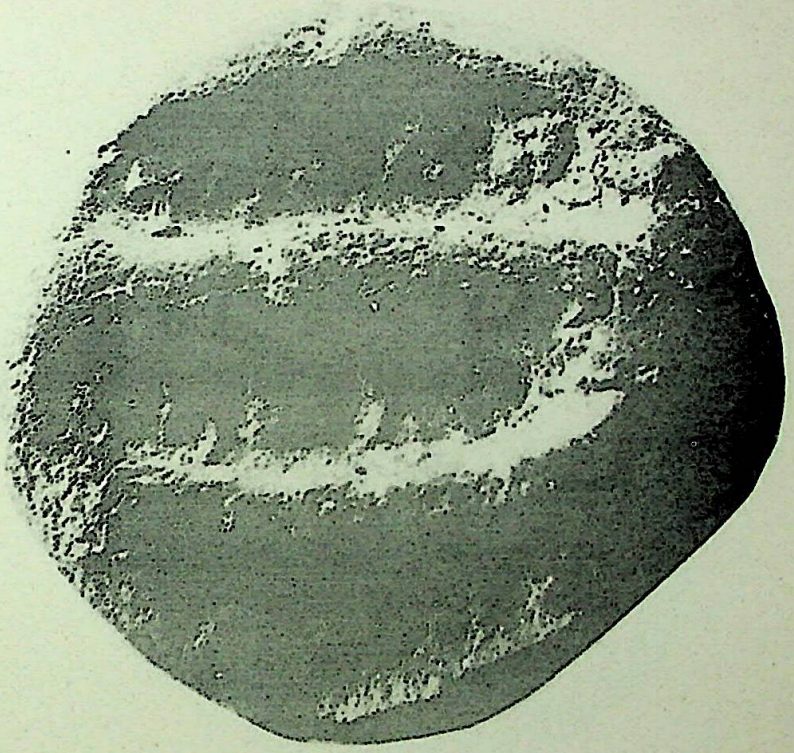

१५३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीमात्रिशमस

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र।

153 Clay seal of Mātṛśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

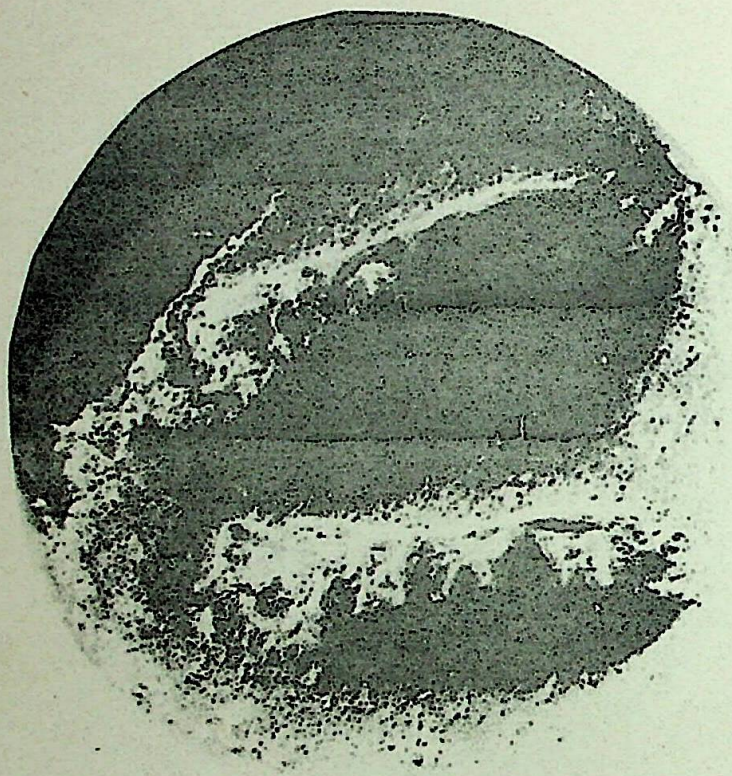

१५४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीमा[illegible]शर्मस

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र ।

154 Clay seal of Mātṛśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीमात्रिशर्मस

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र।

155 Clay seal of Mātṛśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

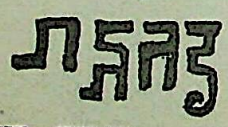

पाठ—गङ्गभद्र

लेख के ऊपर त्रिशूल और सर्पाकृति।

156 Clay seal of Gangabhadra from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीशङ्खस्य

लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र है ।

157 Clay seal of Śaṅkha from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

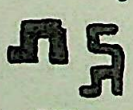

पाठ—गङ्ग

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र।

158 Clay seal of Gaṅga from Sunet. Trident before the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

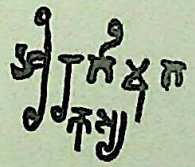

पाठ—श्रीरतिमुत-
कस्य

लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र ।

159 Clay seal of Atimutaka from Sunet. Trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

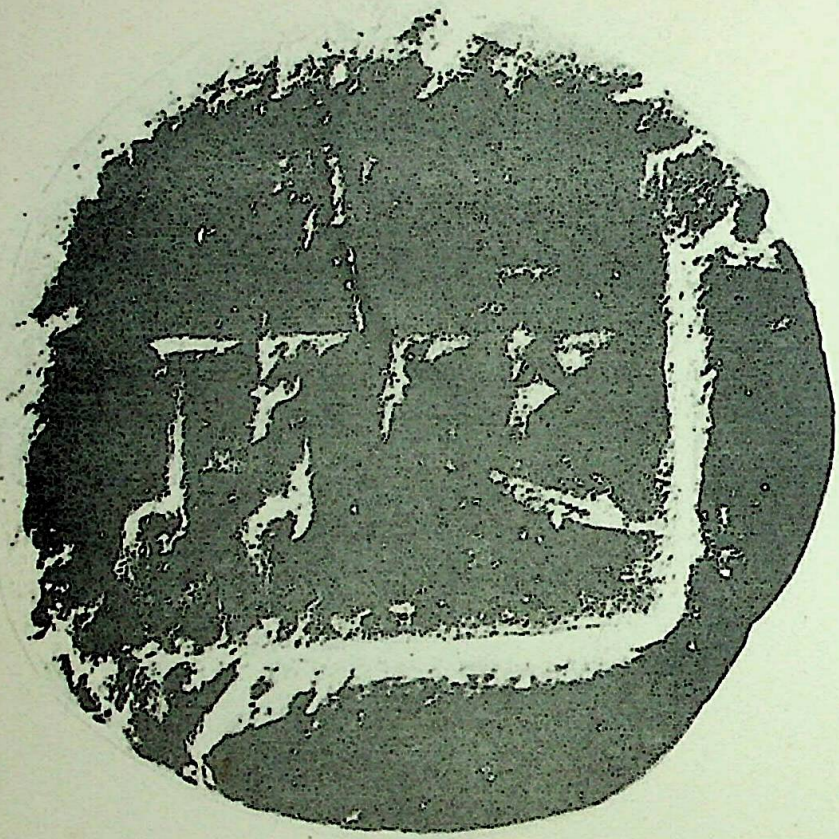

१६०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—रुद्रशर्म

लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र ।

160 Clay seal of Rudraśarma from Sunet. Trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

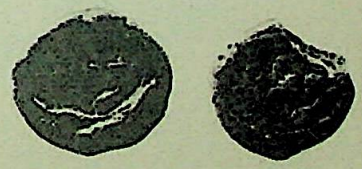

मातृः

पाठ—मातृः

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र।

161 Clay seal of Mātṛ from Sunet. Trident before the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—हरिशर्म

लेख के ऊपर शंख का चित्र ।

162 Clay seal of Hariśarma from Sunet. Conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

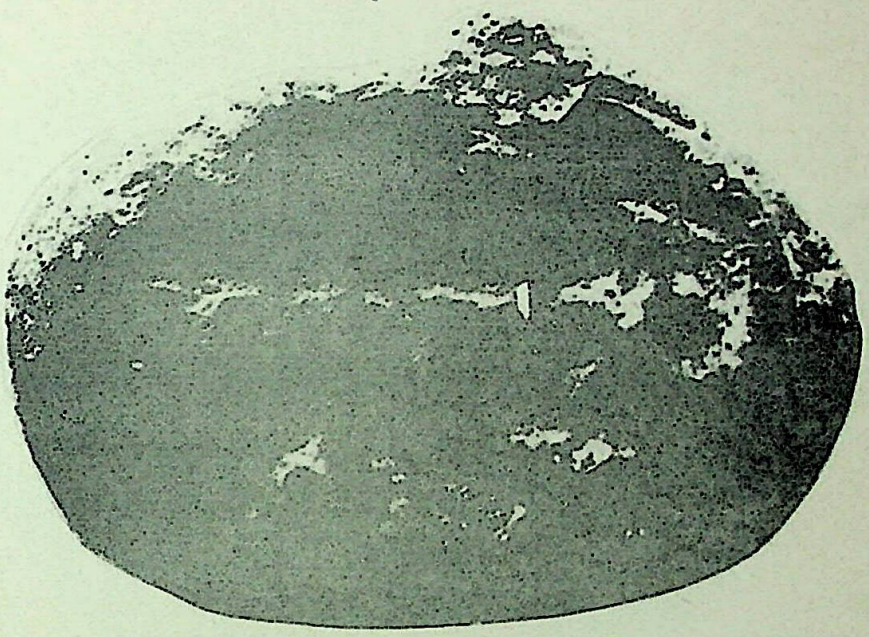

१६३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

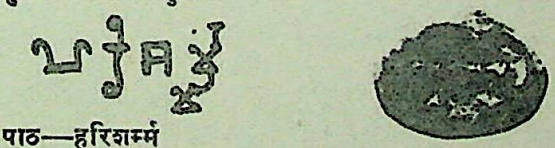

पाठ—हरिशर्म्म

लेख के ऊपर शंख का चित्र।

163 Clay seal of Hariśarma from Sunet. Conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

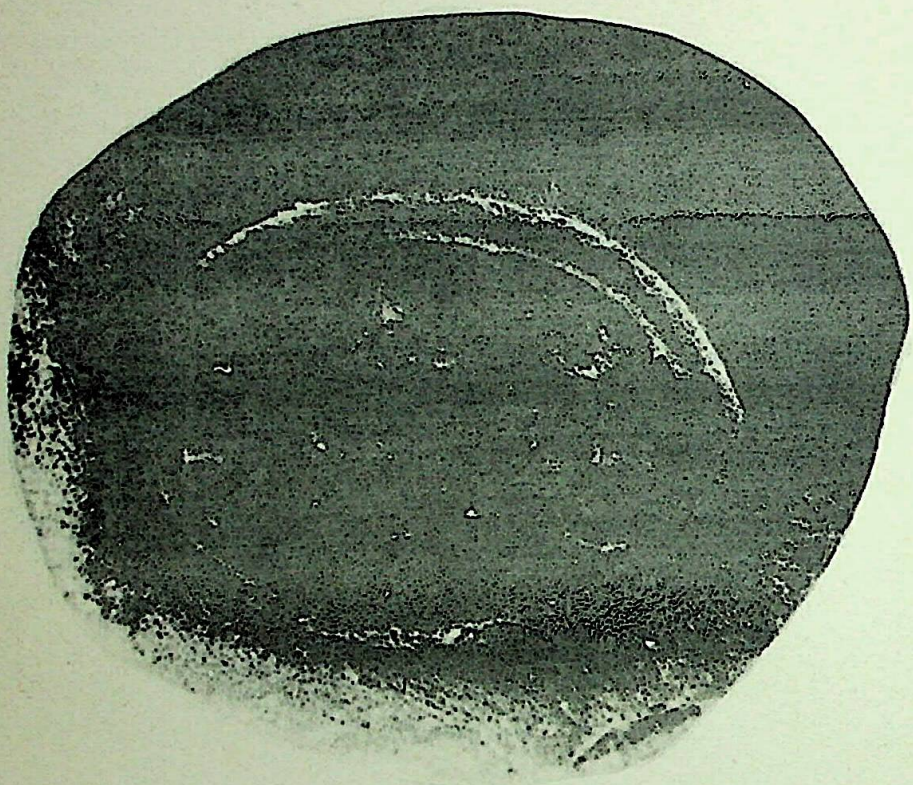

१६४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

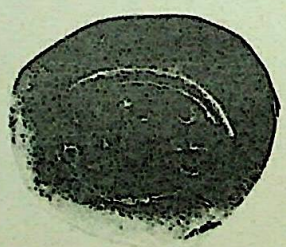

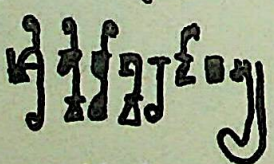

पाठ—श्रीस्सिद्धेश्वरदासस्य ?

लेख के ऊपर ▲ और ☾ अर्धचन्द्र का चित्र।

164 Clay seal of Siddheśvaradāsa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक



पाठ—महासेनापतिवर्म ?

लेख के ऊपर शंख का चित्र।

165 Clay seal of Mahāsenāpativarma from Sunet. Conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

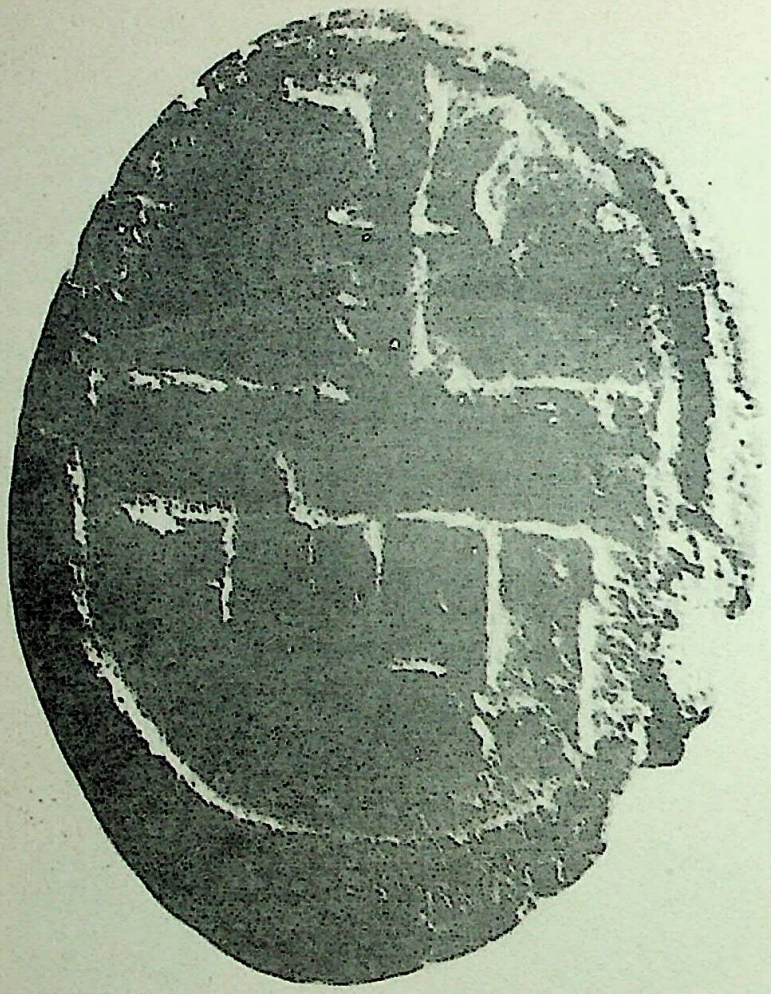

१६६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

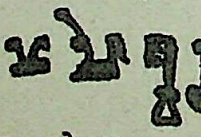

पाठ—महेश्वर

लेख के ऊपर परशुयुक्त त्रिशूल का चित्र ।

166 Clay seal of Maheśvara from Sunet. Axe-trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

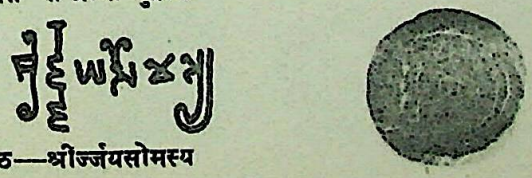

पाठ—श्रीज्जयसोमस्य

लेख के ऊपर अर्धचन्द्र का चित्र।

167 Clay seal of Jayasoma from Sunet. Crescent above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

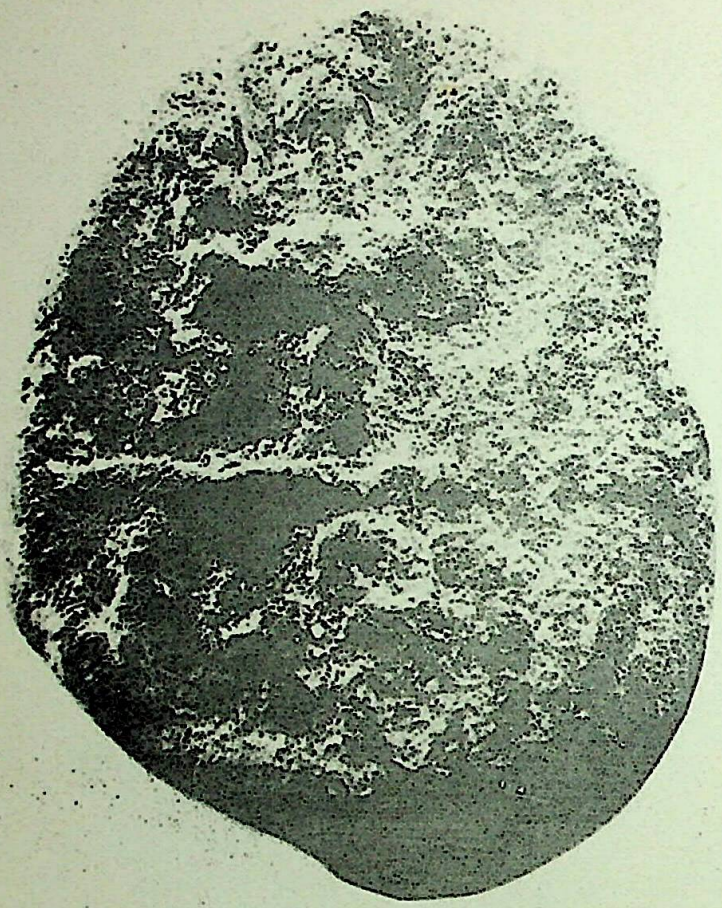

१६८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—रुशम...?

लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र ।

168 Clay seal of Ru[dra]śarma from Sunet. Trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

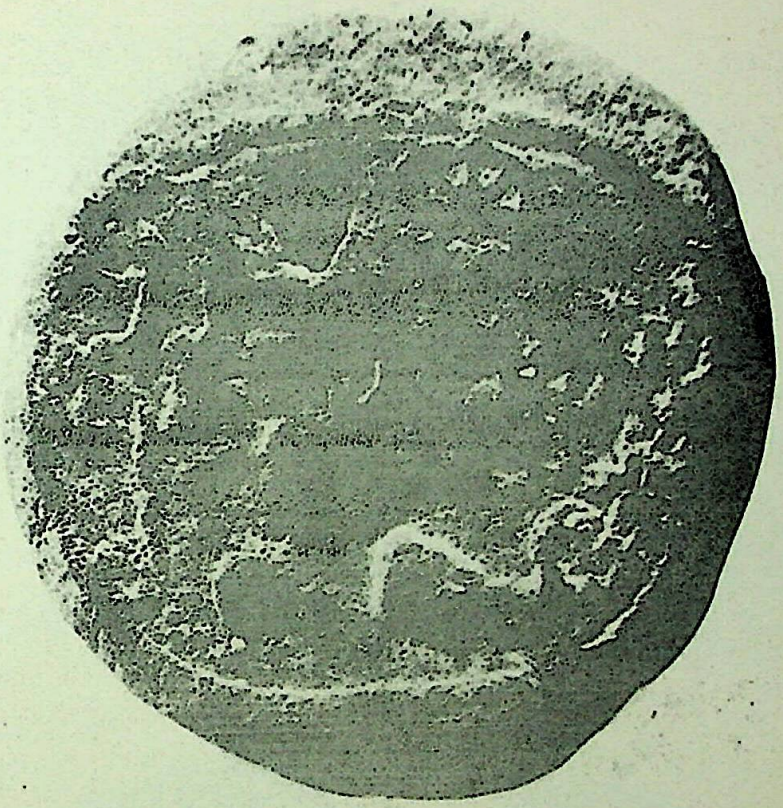

१६९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

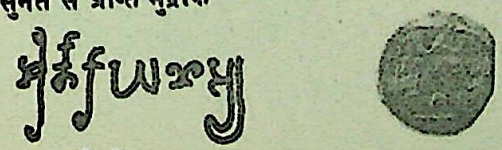

पाठ—श्रीनारायणस्य

लेख के ऊपर चक्र और नीचे शंख का चित्र ।

169 Clay seal of Nārāyaṇa from Sunet. Cakra above the inscription and conch below it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

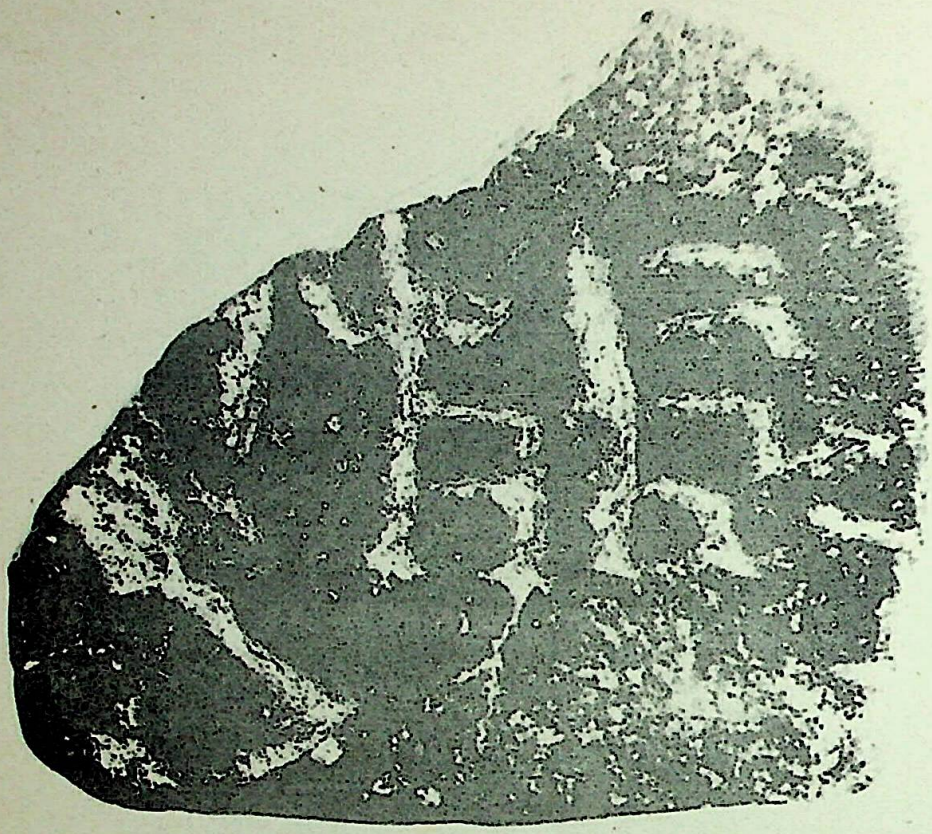

१७०. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

पाठ—श्रीशौम्य

170 Reverse clay seal of Śaumya from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

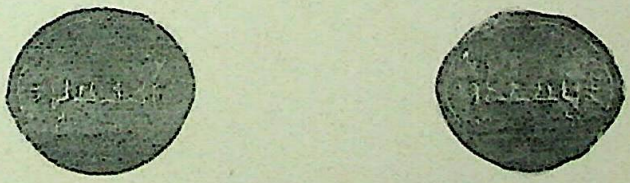

१७१. सुनेत से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

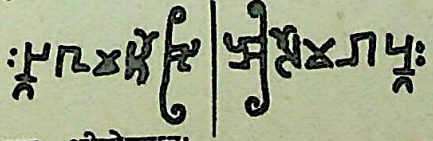

पाठ—श्रीसोमगुप्तः

171 Reverse copper seal of Somagupta from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७२. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

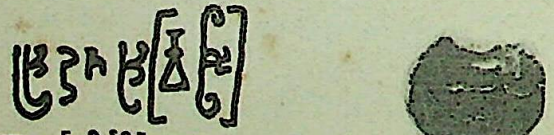

पाठ—[श्रीवं?]सुभट्टस्य

लेख के ऊपर बैठा हुवा सिंह ।

172 Reverse seal of Vasubhaṭṭa(?) from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७३. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

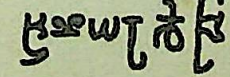

पाठ—श्रीनारायणस्य?

173 Reverse clay seal of Nārāyaṇa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

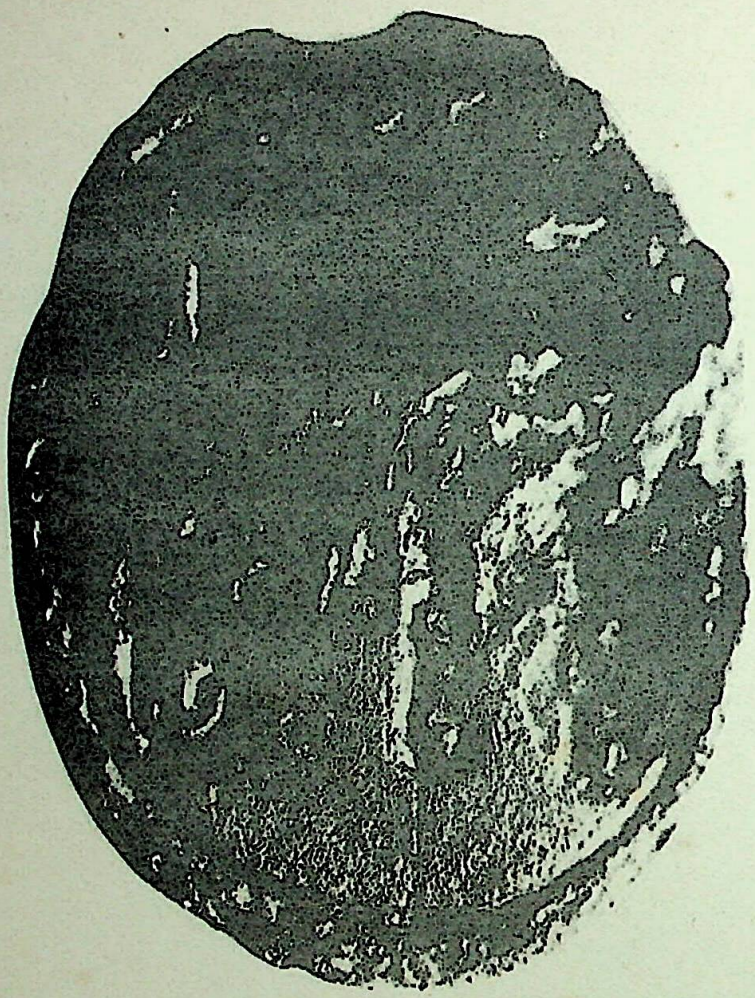

१७४. सुनेत से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

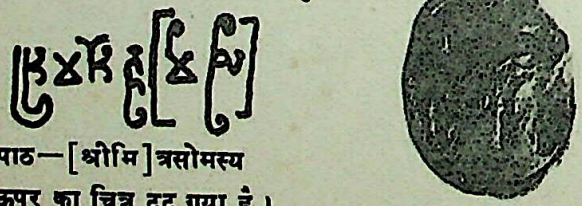

पाठ—[श्रीमि]त्रसोमस्य

ऊपर का चित्र टूट गया है।

174 Reverse copper seal of Mitrasoma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

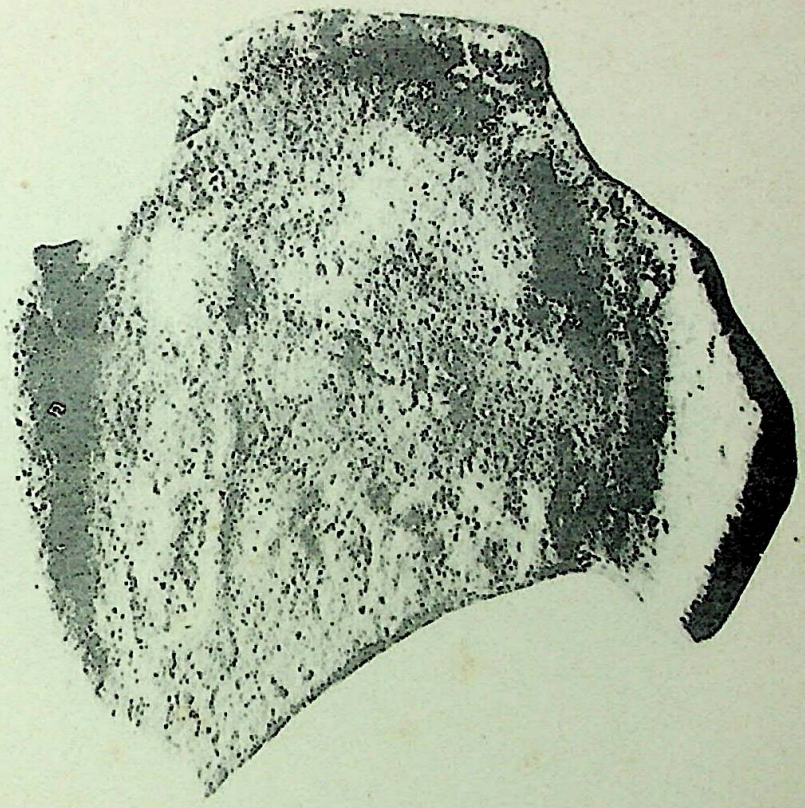

१७५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

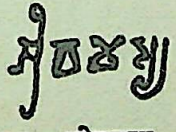

पाठ—श्रीवमस्य

ऊपर बैठा हुवा सिंह है।

175 Clay seal of Varmā from Sunet with a lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीर्य्या...सोमस्य

बैठे हुवे सिंह के आगे चक्र का चित्र ।

176 Clay seal of Yā...soma from Sunet. Discus opposite a seated lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

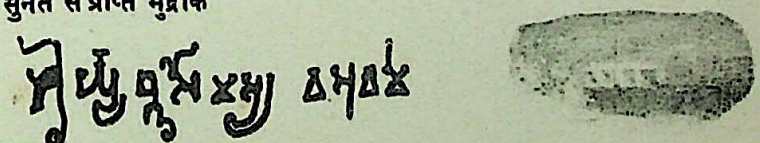

पाठ—श्रीर्य्यात्रिसोमस्य । वसुवर्म

ऊपर बैठे सिंह के आगे चक्र । वसुवर्म बराबर के किनारे पर लिखा है ।

177. Clay seal from Sunet with the names of Yātrisoma and Vasuvarma.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीविष्णुदत्तस्य

ऊपर सिंह का चित्र है।

178. Clay seal of Viṣṇudatta from Sunet, with a lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

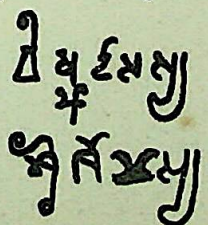

पाठ—विष्णुदासस्य
श्रीशोणस्य?

ऊपर विश्राम अवस्था के सिंह का चित्र।

179. Clay seal from Sunet, with the names of Viṣṇudāsa and Śoṇa. A seated lion above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८०, सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

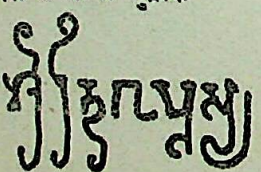

पाठ—श्रीरिन्द्रगुप्तस्य

ऊपर दौड़ते हुवे सूअर का चित्र है।

180. Clay seal of Indragupta from Sunet, with a running boar above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

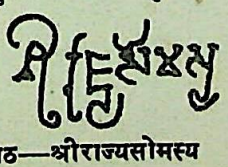

पाठ—श्रीराज्यसोमस्य

ऊपर बैठे हुवे सिंह का चित्र।

181. Clay seal of Rājyasoma from Sunet. with a lion seated above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

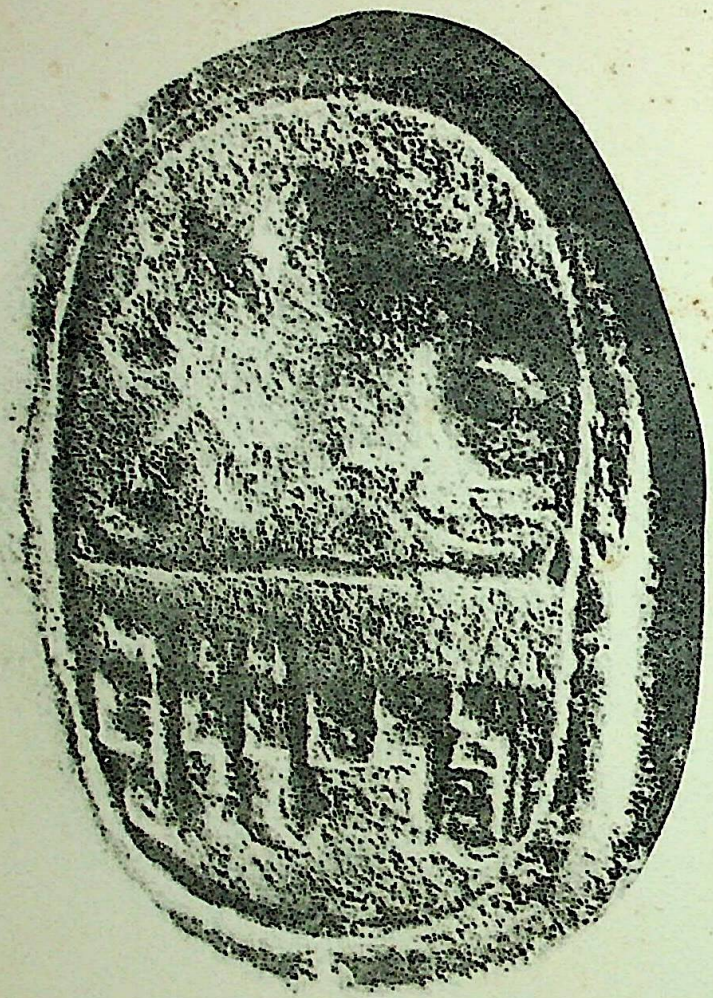

१८२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

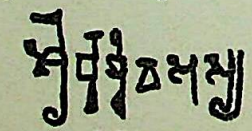

पाठ—श्रीबुद्धिवसुस्य

ऊपर नन्दी बैठा हुवा है।

182. Clay seal of Buddhivasu from Sunet. Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

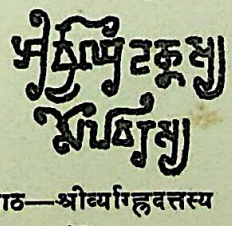

पाठ—श्रीव्याघ्रदत्तस्य
सैंपिवरस्य
ऊपर विश्राम करते सिंह का चित्र ।

183. Clay seal of Vyāghradatta from Sunet. Lion resting above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

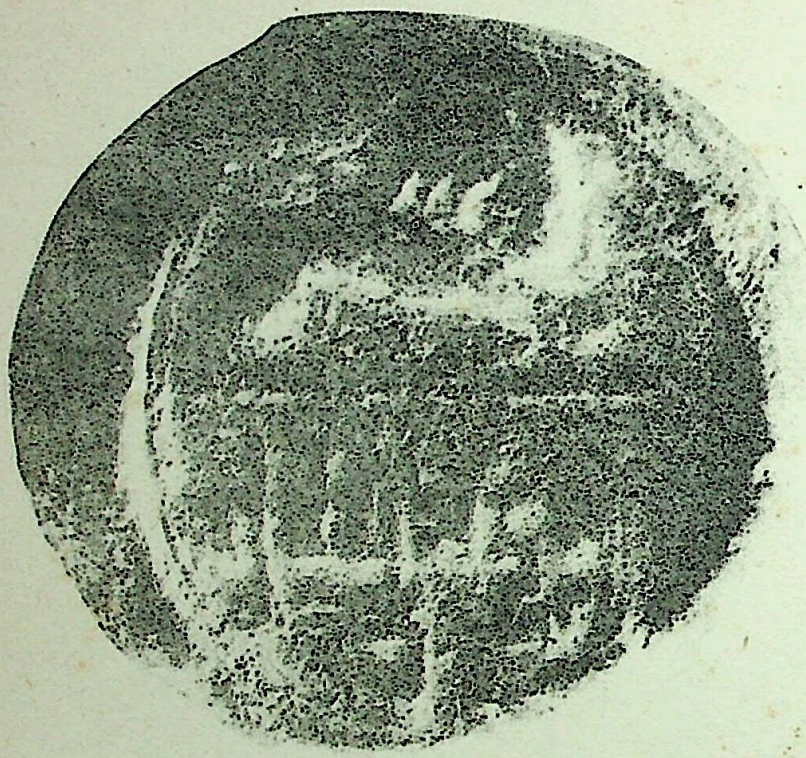

१८४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

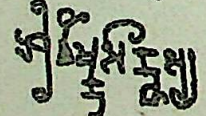

पाठ—श्रीविष्णुसिंहस्य

ऊपर बैठे हुवे सिंह का चित्र।

184. Clay seal of Viṣṇusiṁha from Sunet. Lion seated above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

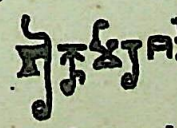

पाठ—श्रीकुमारशर्म...

ऊपर सिंह का चित्र है। मुद्रांक टूटा हुवा है।

185. Clay seal of Kumāraśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
पाठ—अस्पष्ट
ऊपर बैठे हुवे सिंह के आगे चिह्न है।

186. Clay seal from Sunet. Inscription indistinct. Above is a seated lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८७. सुनेत से प्राप्त वृष्णिगण का मुद्रांक

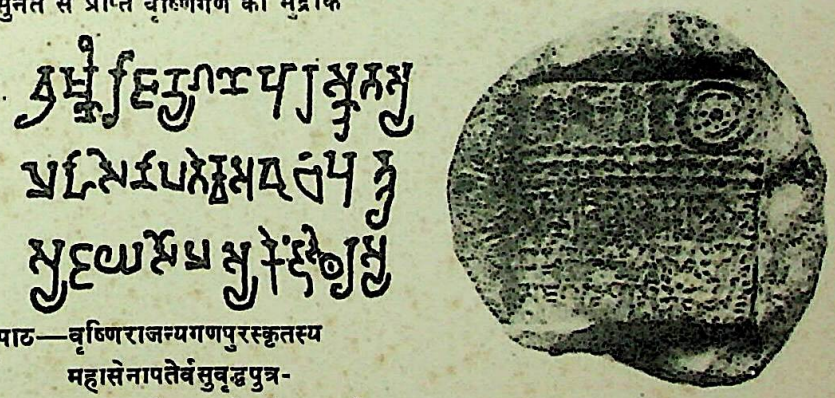

पाठ—वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य
महासेनापतेर्वसुवृद्धपुत्र-
स्य जयसोमस्य क्रेन्द्रस्थिरस्य ?

हस्तिसिंह की पीठ मिलाई हुई मूसल, गदा और सुदर्शन चक्र का चित्र।

187. Clay seal of the Vṛṣṇi Republic from Sunet, with their state emblems of an addorsed elephant-lion, pestle, mace and Sudarśana discus above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

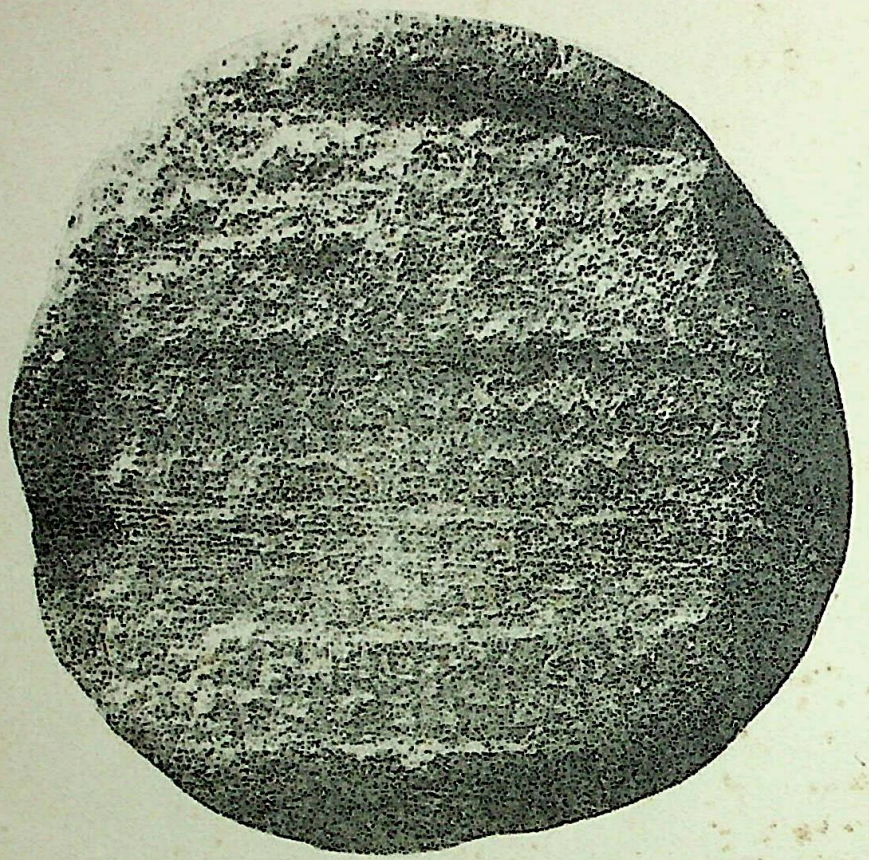

१८८. सुनेत से प्राप्त वृष्णिगण का मुद्रांक

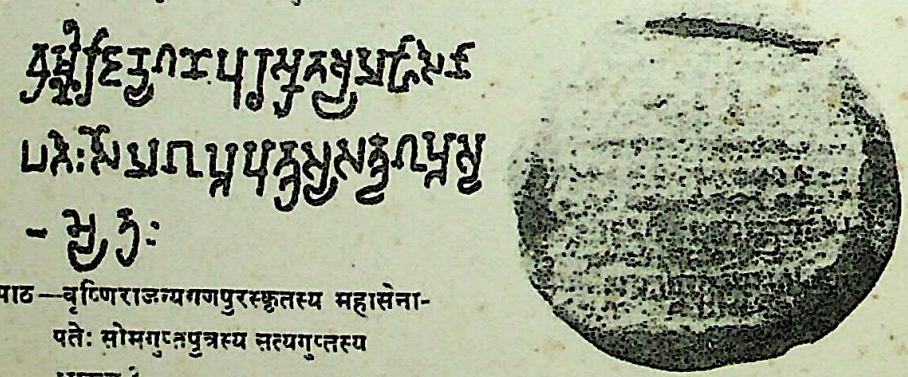

पाठ—वृष्णिराजन्यगणपुरस्कृतस्य महासेना-
पतेः सोमगुप्तपुत्रस्य सत्यगुप्तस्य
भृम्यत्र ?

ऊपर हस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शन चक्र के चित्र हैं।

188. Clay seal of the Vṛṣṇi Republic from Sunet, with their state emblems of an addorsed elephant-lion, pestle, mace and Sudarśana discus, above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

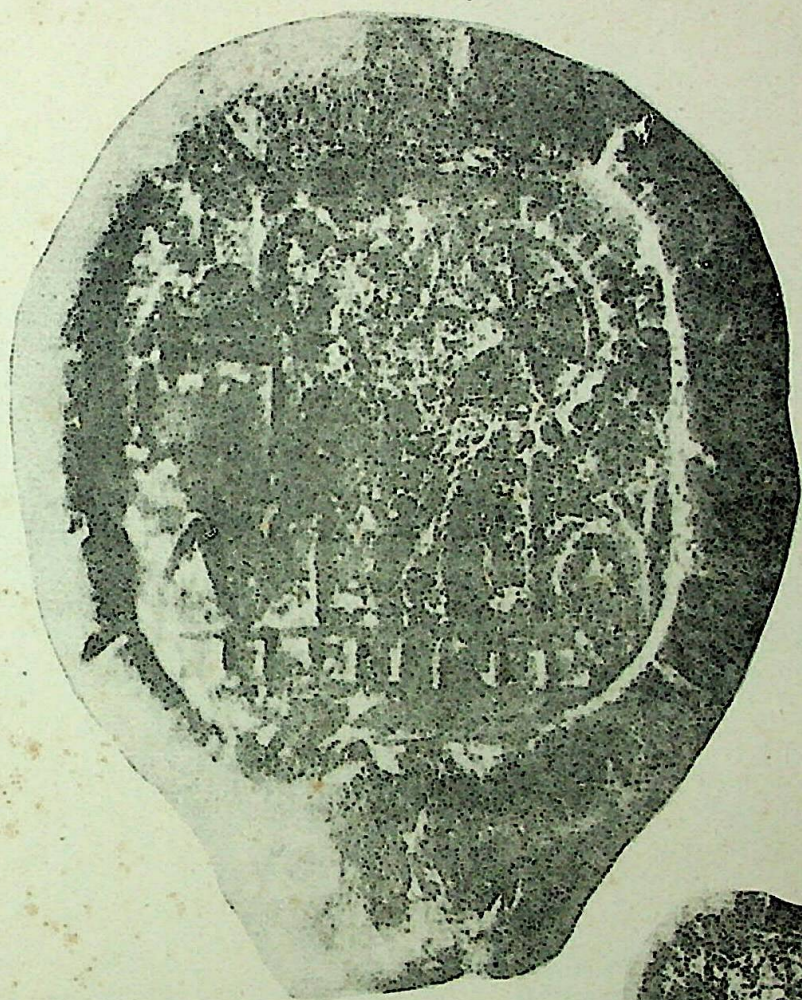

१८९. सुनेत से प्राप्त खरोष्ठी लिपि में वृष्णिगण का मुद्रांक

पाठ—जय पचलय = जय पंचालय

लेख के ऊपर हस्तिसिंह और सुदर्शन चक्र का चित्र है।

189. Kharoṣṭhī seal from Sunet with the state emblems of the Vṛṣṇi Republic inscribed *jaya pacalaya* 'victory to Pañcāla'.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९०. सुनेत से प्राप्त वृष्णिगण का मुद्रांक

[जि]तं भगवता

नीचे हस्तिसिंह, मूसल और गदा का चित्र ।

190. Votive clay seal of the Vṛṣṇi Republic from Sunet with their state emblems of an addorsed elephant-lion, pestle and mace.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

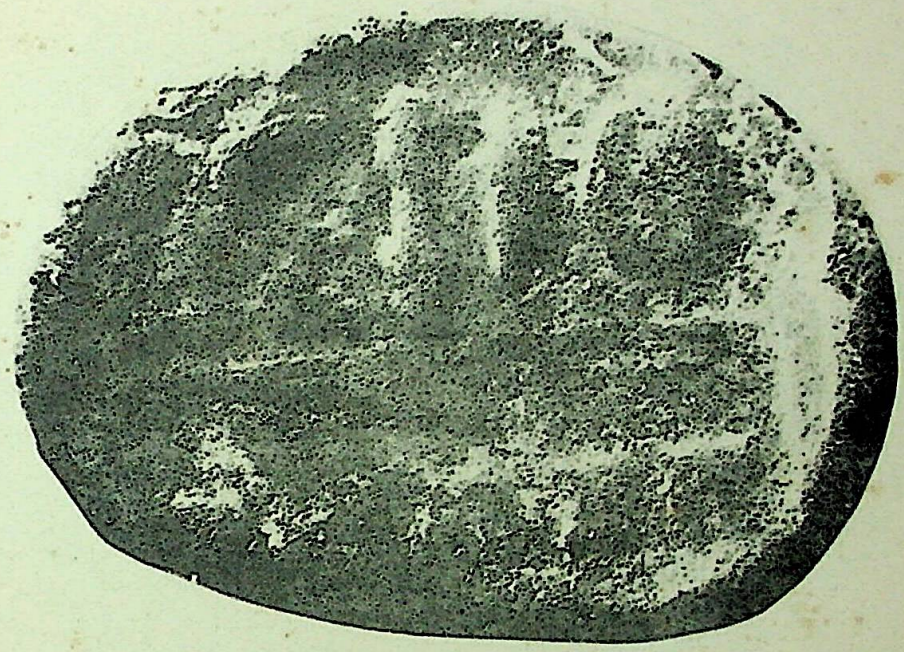

१९१. सुनेत से प्राप्त वृष्णिगण का मुद्रांक

[हस्ति]नगर ठर्क

पाठ—[जितं] भगवता

प्रथम ओर हस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शन चक्र के चित्र।

191. Clay seal of the Vṛṣṇi Republic with their state emblems of an addorsed elephant-lion. pestle, mace and Sudarśana discus.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

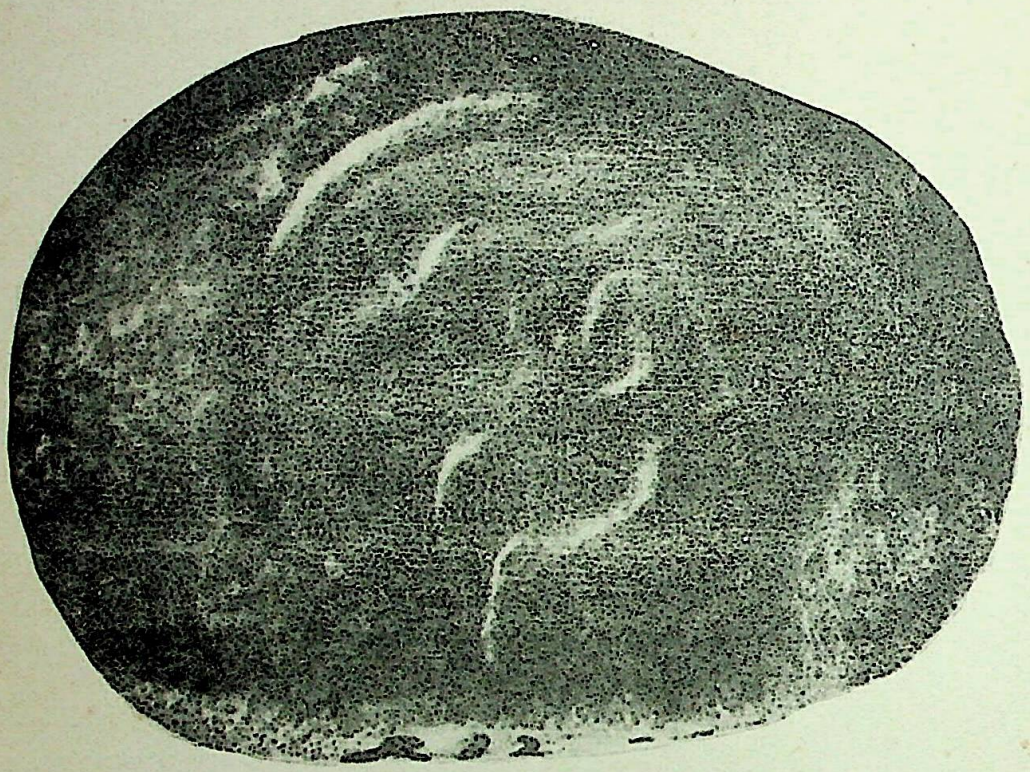

१९२. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर शंख का चित्र ।

192. Reverse of the previous seal with the emblem of a conch.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९३. सुनेत से प्राप्त वृष्णिगण का मुद्रांक

[ꣳ]ꣳ

पाठ –[जितं] भगवता

हस्तिसिंह, मूसल, गदा और सुदर्शन चक्र के चित्र ।

193 Clay seal of the Vṛṣṇi Republic with their state emblems of an addorsed elephant-lion. pestle, mace and Sudarśana discus.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

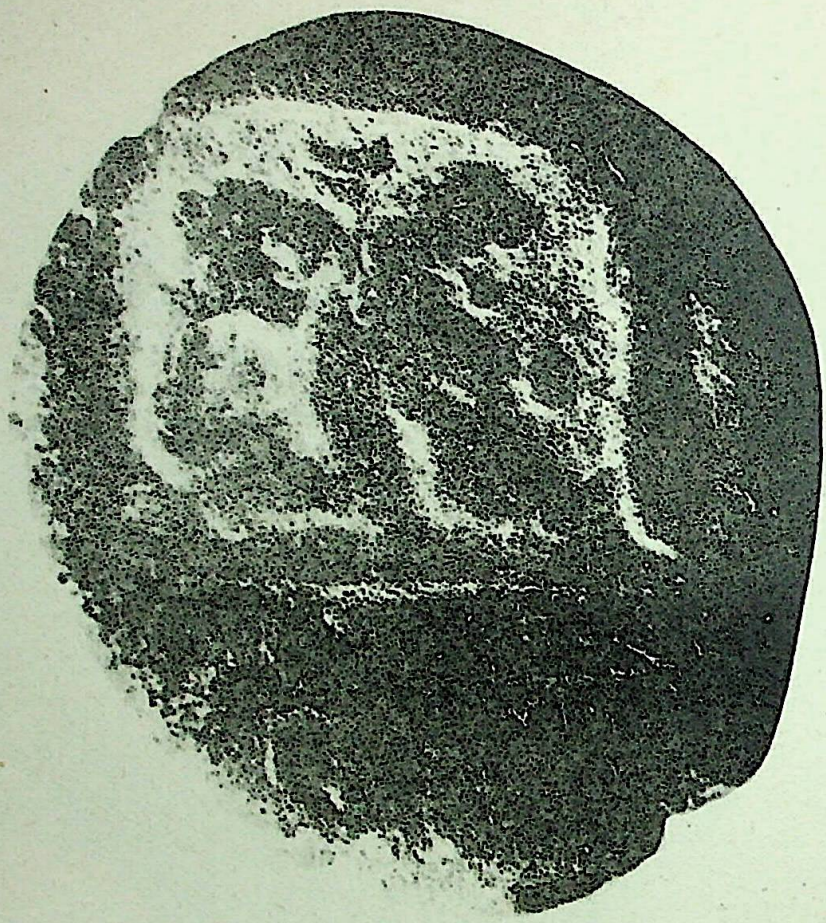

१९४. सुनेत से प्राप्त वृष्णिगण का मुद्रांक
प्रथम ओर हस्तिसिंह का चित्र ।

194. Clay seal of the Vṛṣṇi Republic from Sunet with an addorsed elephant-lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९५. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर शंख का चित्र ।

195. Reverse of the previous seal with a conch.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

ಕಗಟಿಕಃ

पाठ—नागदेव

लेख के ऊपर और प्रारम्भ में शंख के चित्र।

196 Clay seal of Nāgadeva from Sunet, with conch above and besides the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

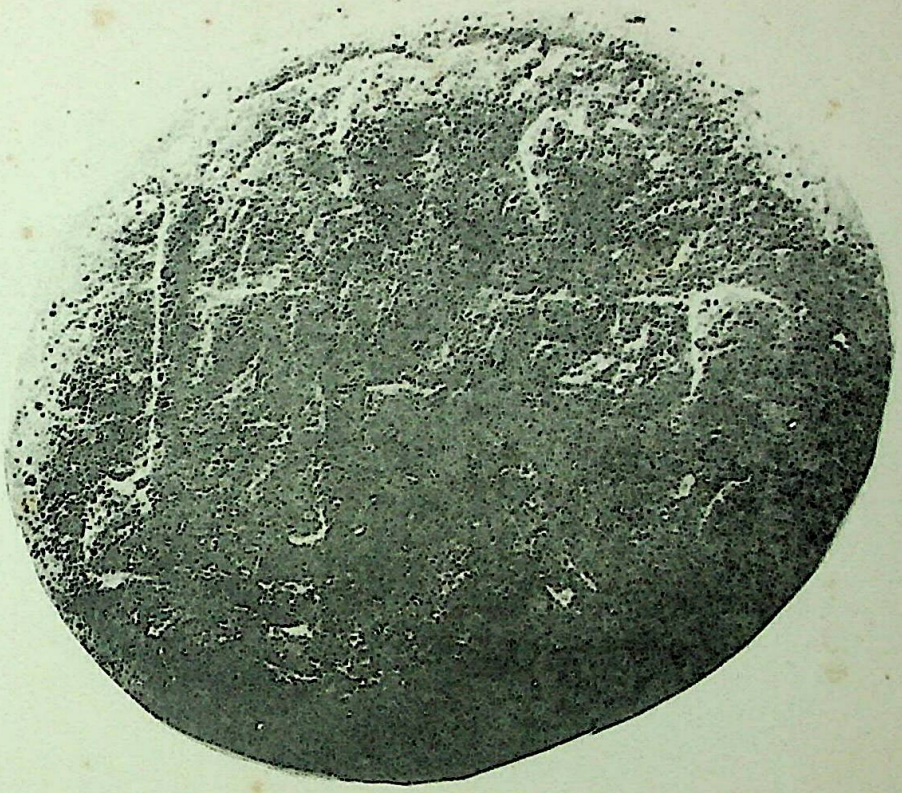

१९७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीनारायणदेवस्य

लेख के ऊपर चक्र और शंख के चित्र ।

197 Clay seal of Nārāyaṇadeva from Sunet. Discus and conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

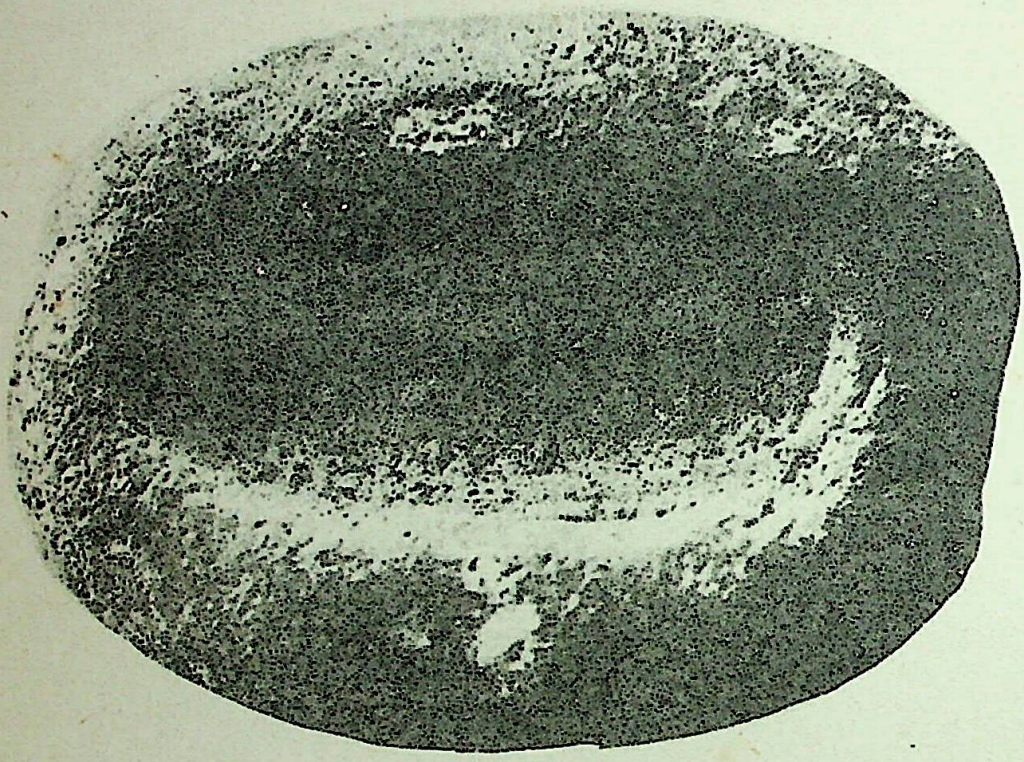

१९८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

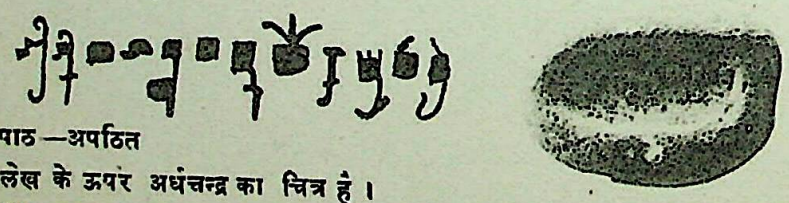

पाठ —अपठित

लेख के ऊपर अर्धचन्द्र का चित्र है।

198. Clay seal from Sunet. with indistinct writing and crescent above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

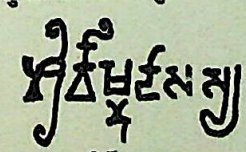

पाठ—श्रीविष्णुदासस्य

लेख के ऊपर शंख का चित्र।

199. Clay seal of Viṣṇudāsa from Sunet. Conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

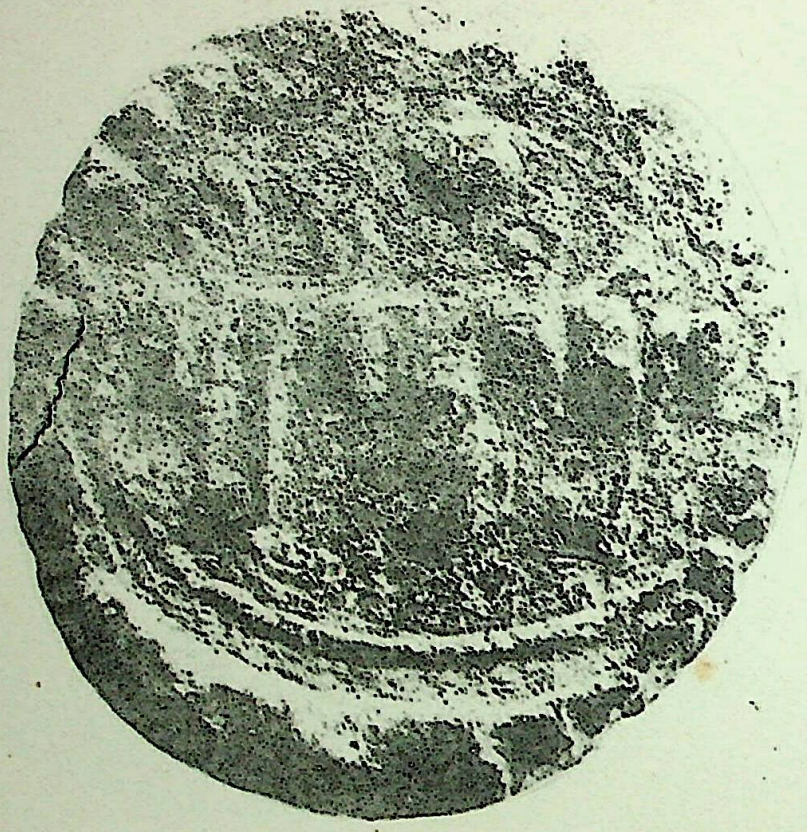

२००. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीरविङ्कृतिद्वास?

लेख के ऊपर शंख का चित्र।

200 Clay seal from Sunet, inscribed *śrīr aviṅkatidvāsa* ? Conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—सत्रप्तस्य

लेख के ऊपर चक्र का चित्र।

201 Clay seal of Satrapta from Sunet. Discus above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

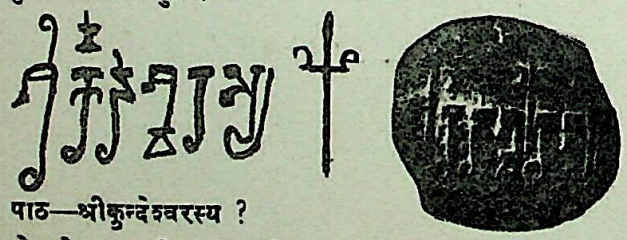

पाठ—श्रीकुन्देश्वरस्य ?

लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र ।

202. Clay seal of Kundeśvara from Sunet. Trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

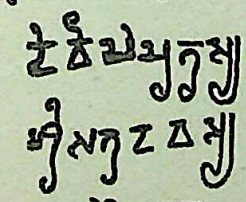

पाठ—देविलपुत्रस्य
श्रीसत्यदेवस्य

लेख के ऊपर शंख, [illegible] शंख के चित्र हैं।

203. Clay seal of Satyadeva the son of Devila, from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्री जितं भग-
वता स्वामिना-
रायणस्य
लेख के ऊपर चक्र ।

204 Votvie clay seal from Sunet, inscribed *śrī jitaṁ bhagavatā svāmināārāyaṇasya*, with a discus above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
पाठ—अस्पष्ट ।
दूसरी ओर पगडी बांधे राजा का चित्र ।

205 Clay seal from Sunet. with indistinct writing. and the illustration of a king with turban on the other side.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०६ सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

प्रथम ओर का पाठ—शङ्करना-
रायणाभ्यां
दूसरे ओर का पाठ—मातृः
लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र ।

206. Clay seal from Sunet dedicated to Śaṅkara and Nārāyaṇa. On its reverse is a trident, followed by *mātṛḥ*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

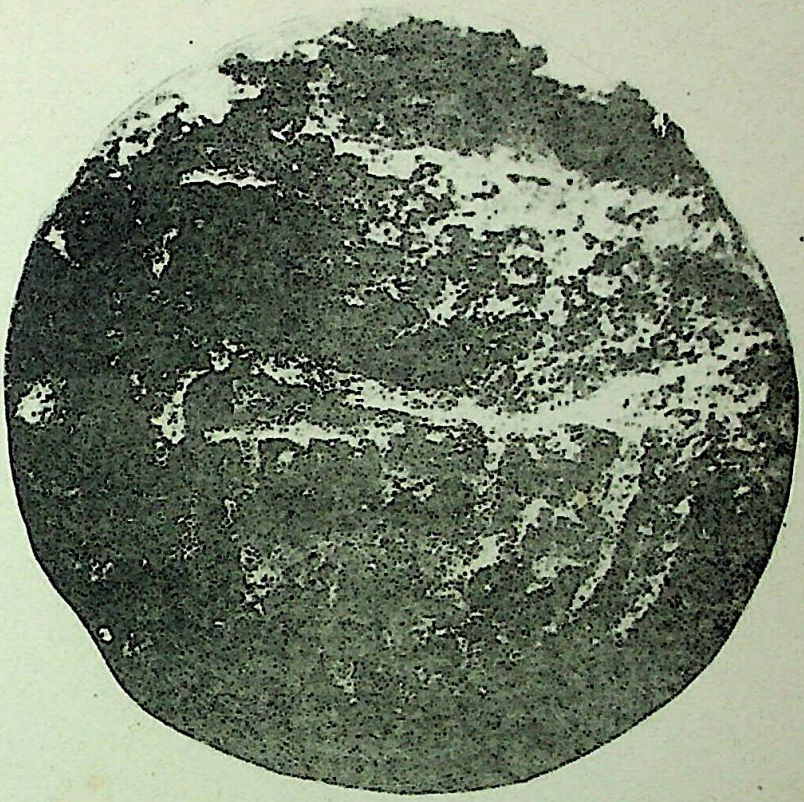

२०७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

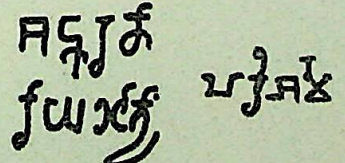

प्रथम ओर का पाठ—शङ्करना-
रायणाभ्यां
दूसरे ओर का पाठ—हरिशर्म
लेख के ऊपर शंख का चित्र ।

207. Clay seal of Sunet dedicated to Śaṅkara and Nārāyaṇa. On its back is a conch followed by the inscription *Hariśarma*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

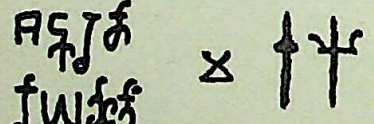

प्रथम ओर का पाठ—शङ्करना-
रायणाभ्यां

दूसरी ओर का पाठ—म
मकार के पश्चात् शक्ति और त्रिशूल का चित्र।

208 Clay seal from Sunet dedicated to Śaṅkara and Nārāyaṇa. On its reverse is the letter *ma*, followed by a spear and trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

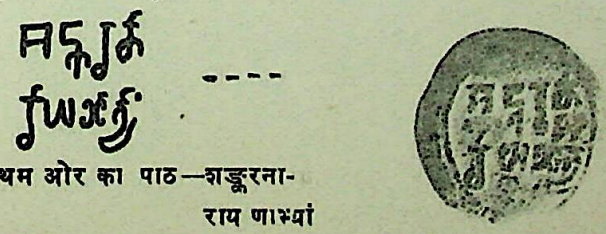

प्रथम ओर का पाठ—शङ्करना-
राय णाभ्यां

दूसरी ओर त्रुटित ।

209. Clay seal from Sunet dedicated to Śaṅkara and Nārāyaṇa. Reverse broken.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

प्रथम ओर का पाठ—शङ्करना-
रायणाभ्यां
दूसरी ओर का पाठ—श्रीविष्णुदासस्य
लेख के ऊपर शंख का चित्र ।

210. Clay seal from Sunet dedicated to Śaṅkara and Nārāyaṇa. Its reverse has a conch followed by *śrīr Viṣṇudāsasya.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

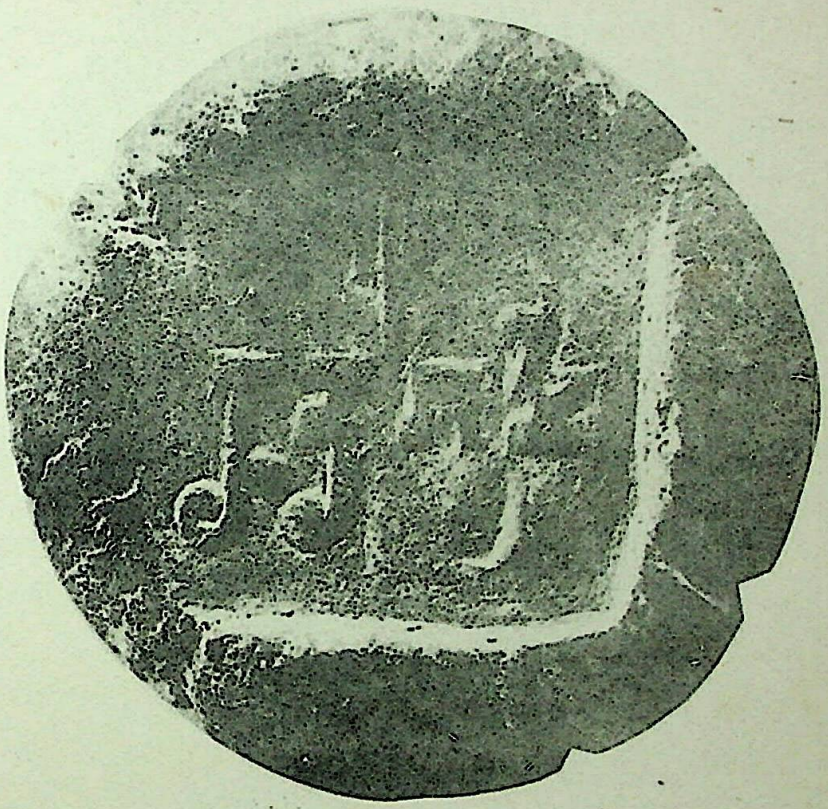

२११. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

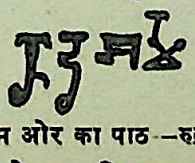

प्रथम ओर का पाठ—रुद्रशर्म
लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र।

211. Clay seal of Rudraśarma from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

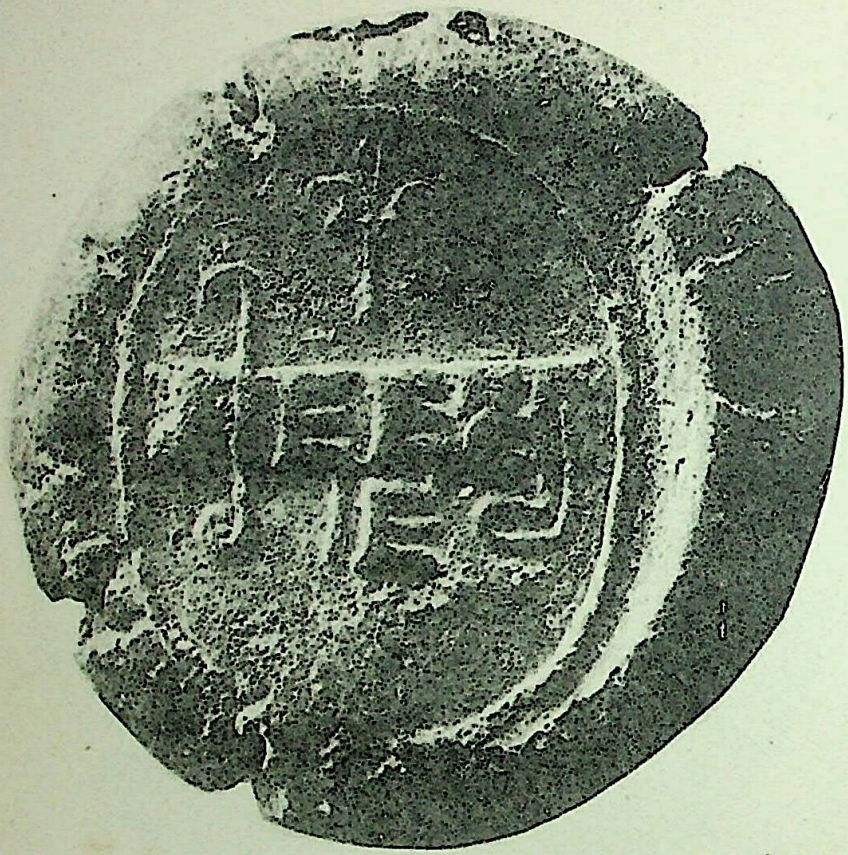

२१२. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर का पाठ—श्रीजुज्जस्य लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र ।

212. Reverse of previous seal, inscribed *śrijujjasya*, with a trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पहली ओर का पाठ—गङ्गभद्र
लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र।

213. Clay seal of Gangabhadra from Sunet, with a trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

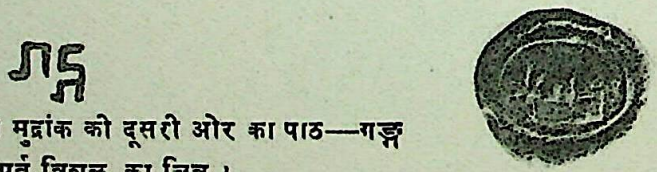

२१४. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर का पाठ—गङ्ग
लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र ।

214. Reverse of the previous seal, inscribed *Gaṅga*, with a trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

------ दाम

प्रथम ओर का लेख अस्पष्ट ।

दूसरी ओर का पाठ—दाम

215. Clay seal from Sunet, inscribed on both sides. The obverse is indistinct and the reverse reads *dāma*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

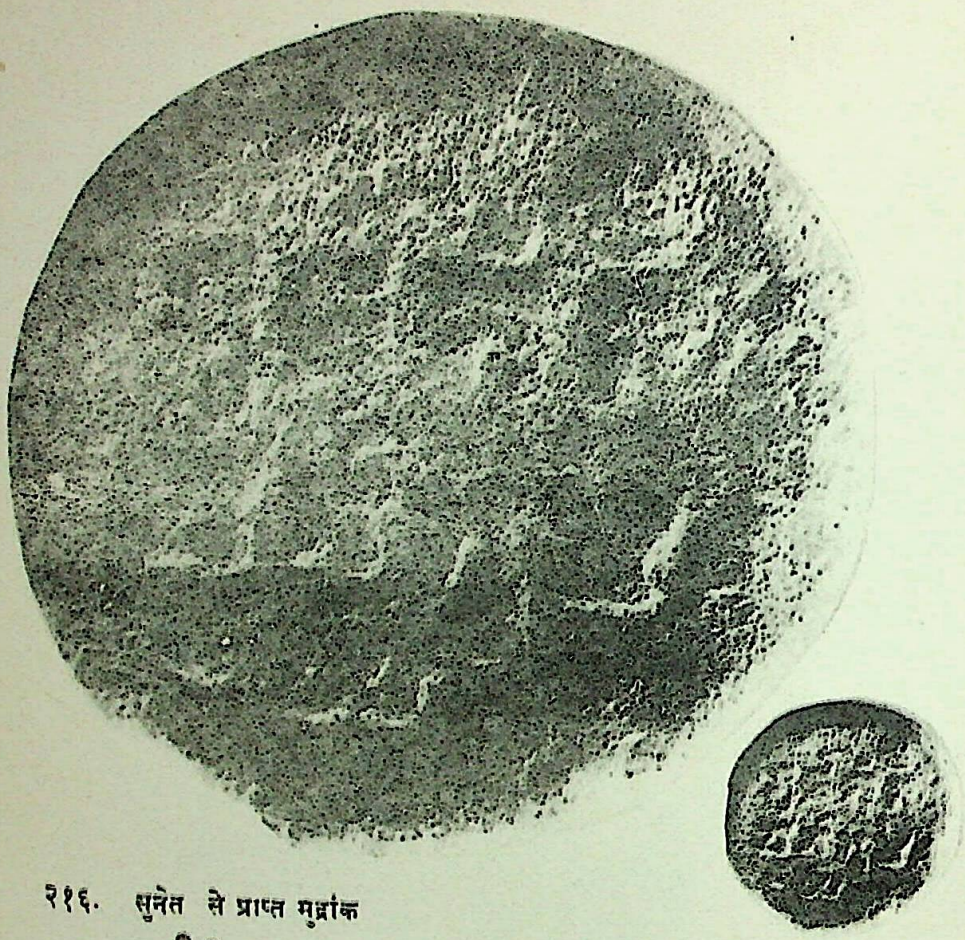

२१६. सुनेत से प्राप्त मृद्मांक

प्रथम ओर का पाठ—श्री जितं भग-
वता स्वामिना-
रायणस्य
लेख के ऊपर चक्र का चित्र है।
दूसरी ओर का पाठ -सु (विपरीत लिखा है)

216. Clay seal from Sunet dedicated to Svāminārāyaṇa with discus above the inscription. On its back side is the letter *su* in reverse.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पहली ओर का पाठ—बलभद्रस्य ?

ऊपर सिंह के आगे चक्र बना है ।

217. Clay seal of Balabhadra(?) from Sunet, with a lion and discus above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१८. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर का पाठ—दामिकस्य

218. Reverse of the provious seal. Reads: *Dāmikasya.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

प्रथम ओर का पाठ—श्रीक्षेमस्य?

दूसरी ओर बैठे हुवे नन्दी का चित्र है।

219. Clay seal of Kṣema from Sunet, with a seated Nandi on its reverse.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

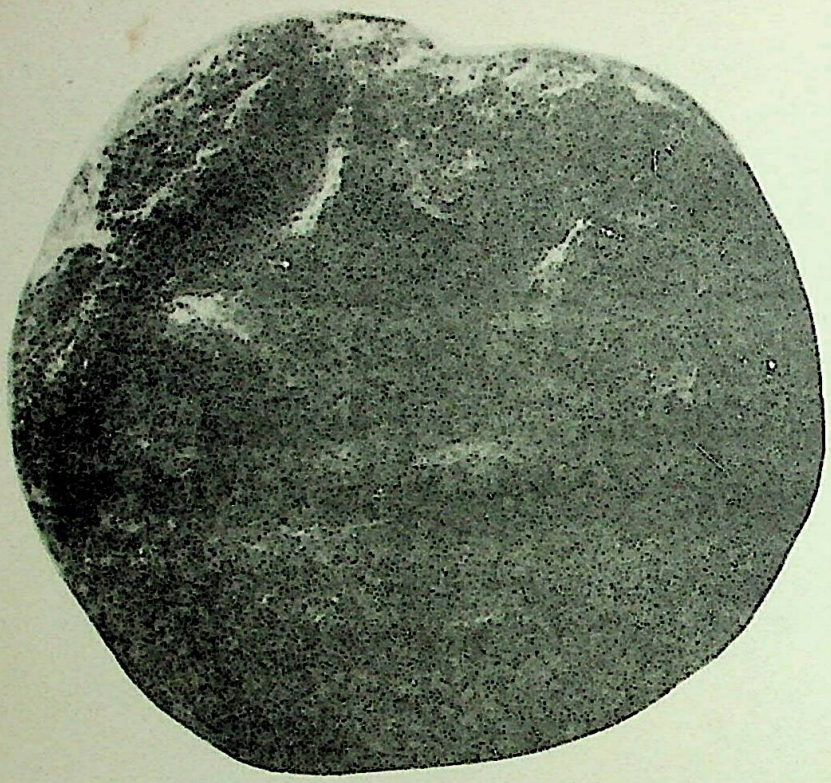

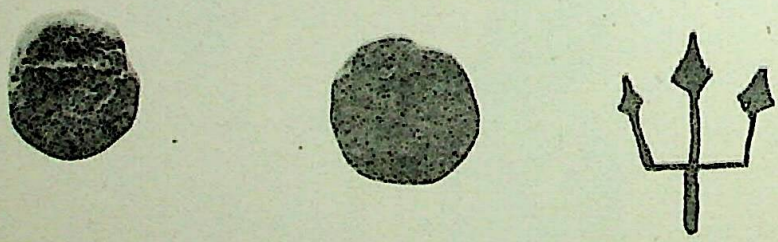

२२०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

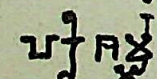

प्रथम ओर का पाठ--हरिशर्म्म (लेख के ऊपर शंख का चित्र)
दूसरी ओर त्रिशूल का चित्र।

220. Clay seal of Harisarma from Sunet, with a conch above the inscription and a trident on the reverse.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२१ सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

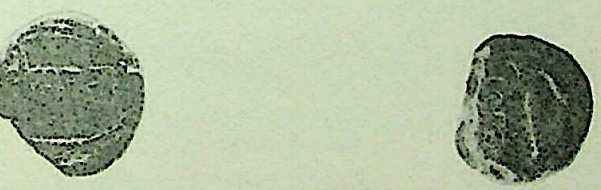

प्रथम ओर का पाठ—श्रीयशस

दूसरी ओर सपाश अंकुश का चित्र।

221. Clay seal of Yaśa from Sunet, with a noose-goad on its reverse.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

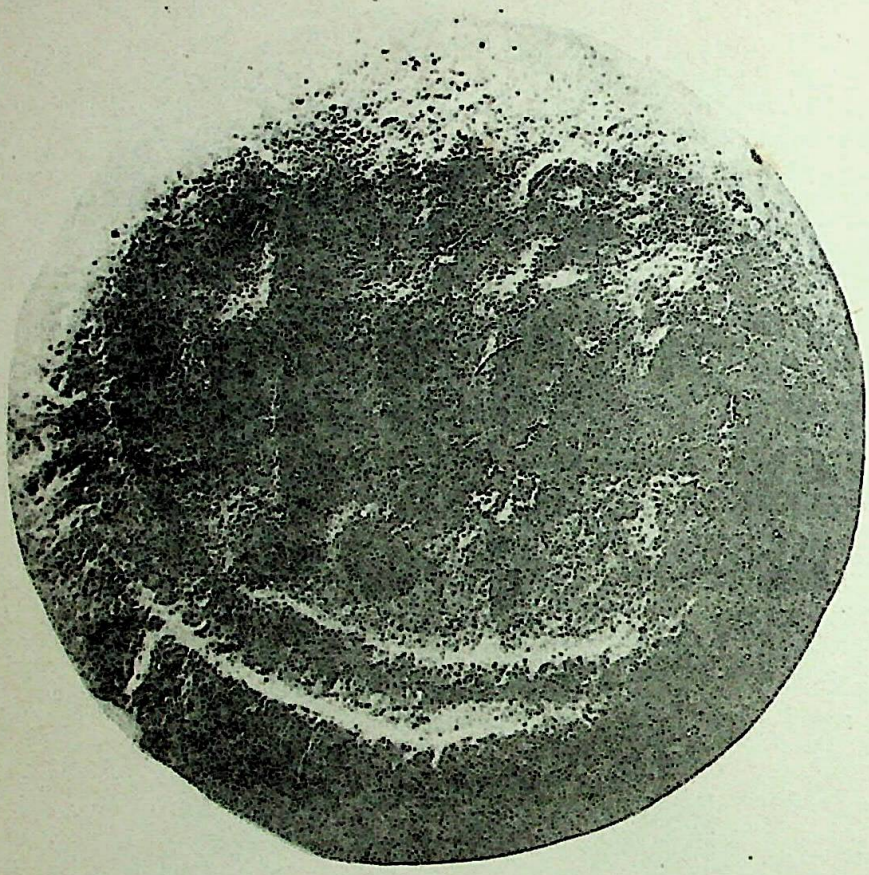

२२२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

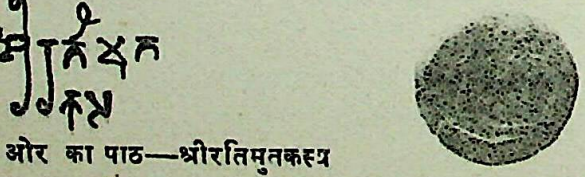

प्रथम ओर का पाठ—श्रीरतिमुतकस्य

लेख के ऊपर त्रिशूल का चित्र है।

222. Clay seal of Atimutaka from Sunet. with a trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

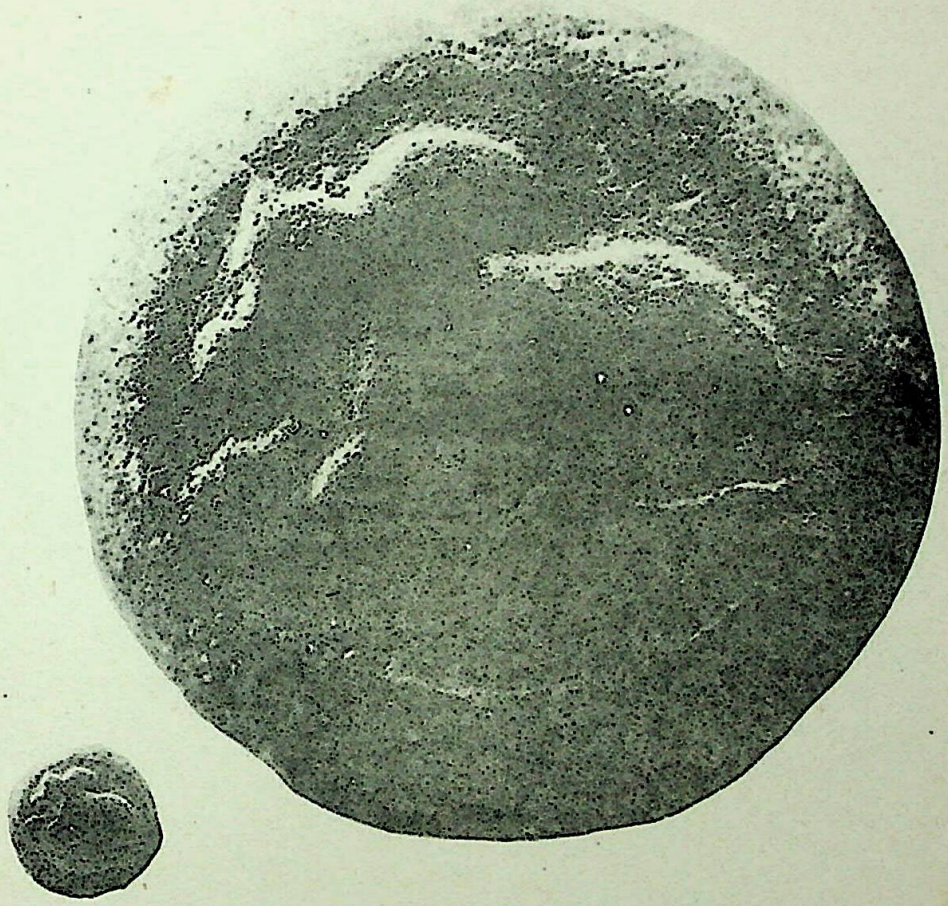

२२३. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर बैठे हुवे नन्दी का चित्र है ।

223. Reverse of the previous seal with a seated Nandi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

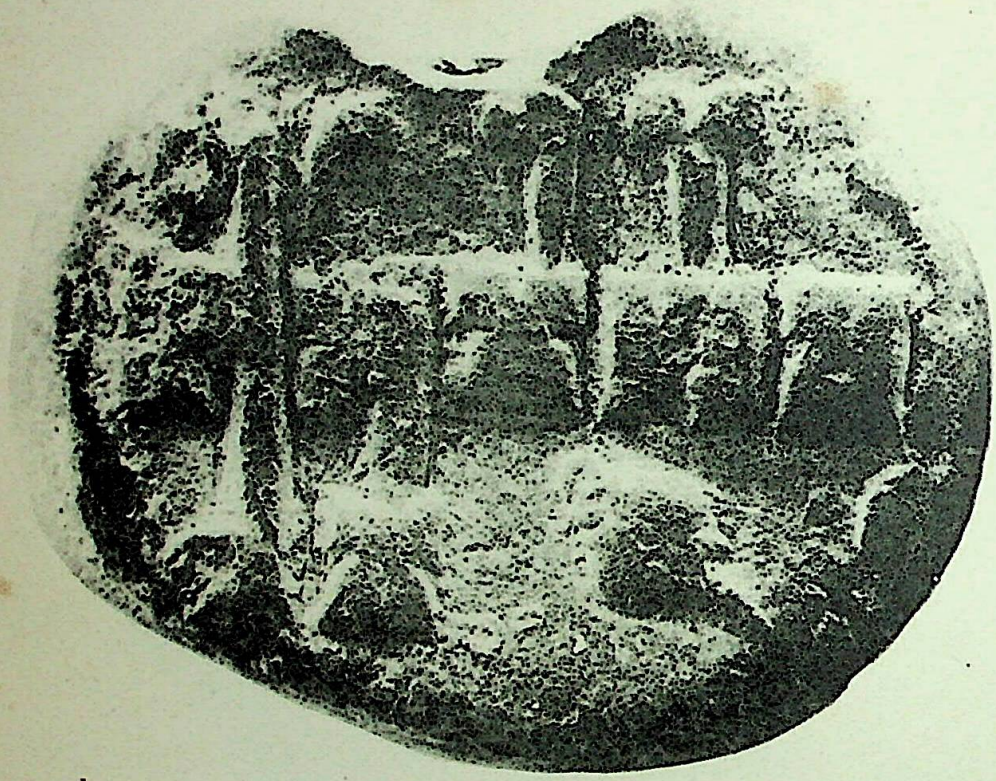

२२४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

प्रथम ओर का पाठ—श्रीस्वामिघोषस्य

लेख के नीचे शंख का चित्र ।

224. Clay seal of Svāmighoṣa from Sunet, with a conch below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

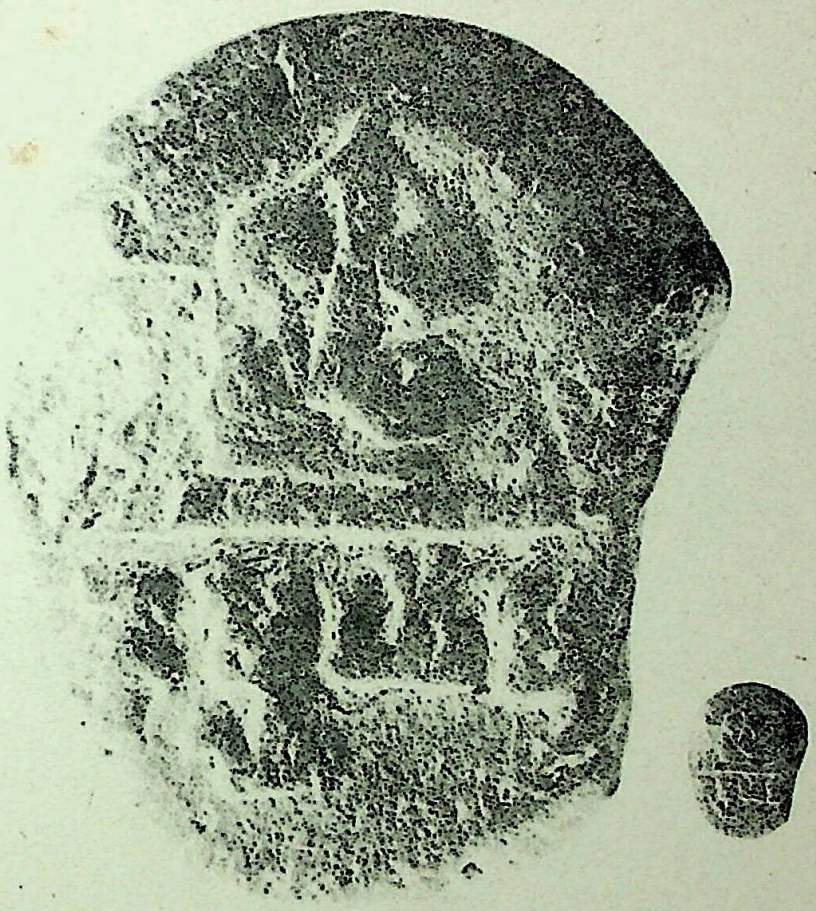

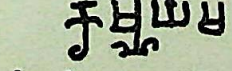

२२५. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर का पाठ—कृष्णघोष
लेख के ऊपर चित्र है ।

225. Reverse of the previous seal inscribed Kṛṣṇaghoṣa.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

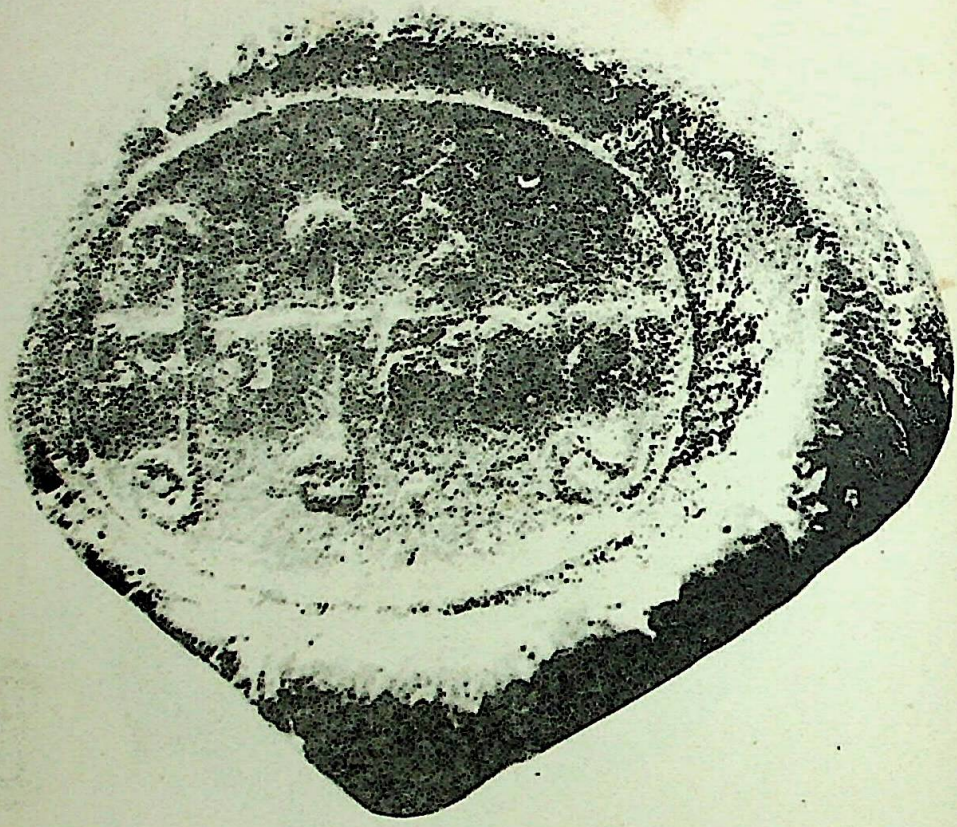

२२६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

प्रथम ओर का पाठ—श्रीहरिदासस्य

226. Clay seal of Haridāsa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२७. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर का पाठ—देवसेन

227. Reverse of the previous seal inscribed *Devasena*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

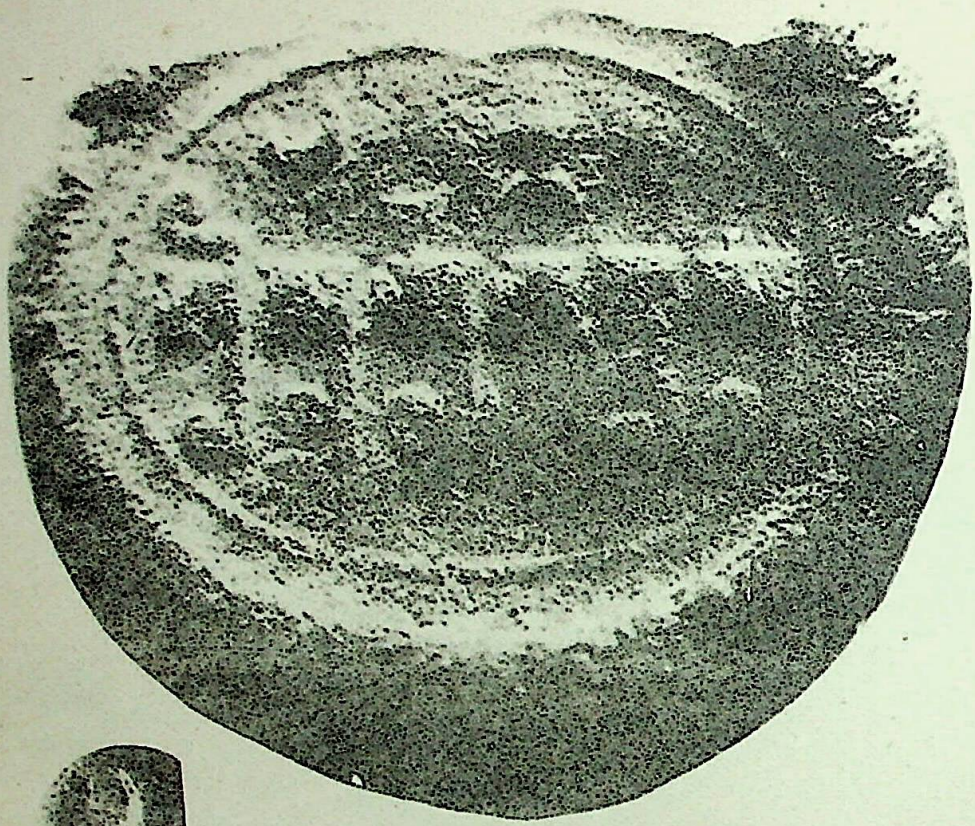

२२८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

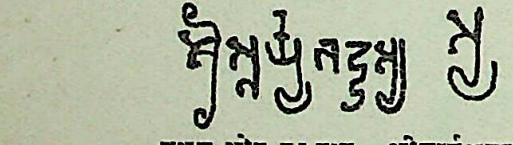

प्रथम ओर का पाठ—श्रीसूर्य्यभद्रस्य

लेख के ऊपर अर्धचन्द्र और शिवलिंग सदृश Σ चिह्न हैं। मुद्रांक के पीछे दाढ़ी वाले राजा का चित्र है। मुद्रांक के तट पर 'स्य' अंकित है।

228. Clay seal of Sūryabhadra from Sunet. On its rim is the solitary letter *sya*, and its reverse depicts a bearded king.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीवर्व्वन्वासिकस्य ब्रह्मि-
लस्य साधिकरणस्य

229. Clay seal from Sunet inscribed *śrīr wam·āsikasya Brahmi-lasya ·ādhikaraṇasya.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३०. सुनेत से प्राप्त अकीक पत्थर का मुद्रांक
इसपर किसी यूनानी राजा का चित्र है। यह अंगूठी का नग है।

230. Crystal ring signet with the depiction of a Greek king.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

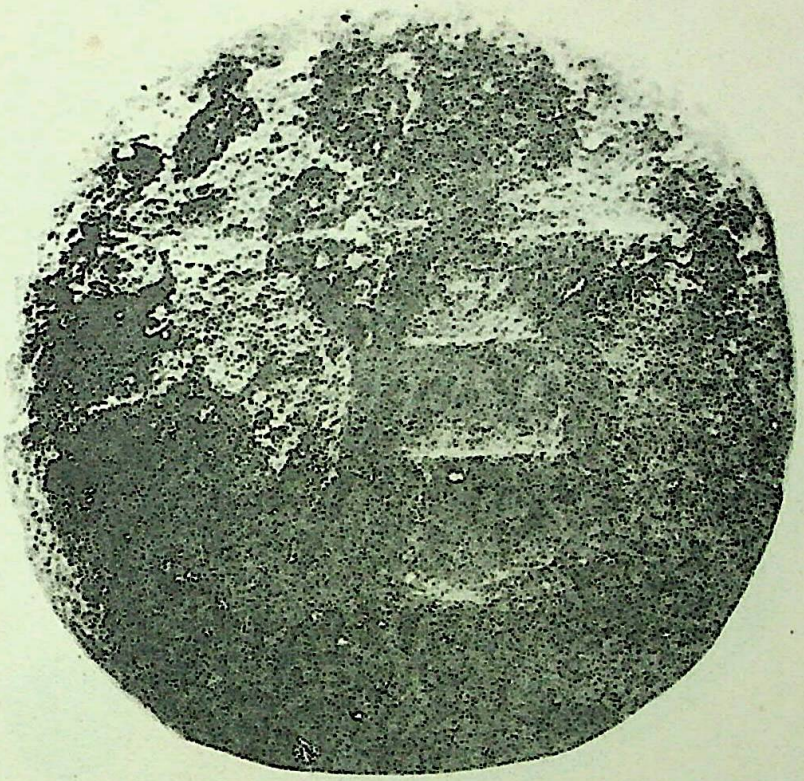

२३१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—ष

231. Clay seal from Sunet inscribed *ṣa*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

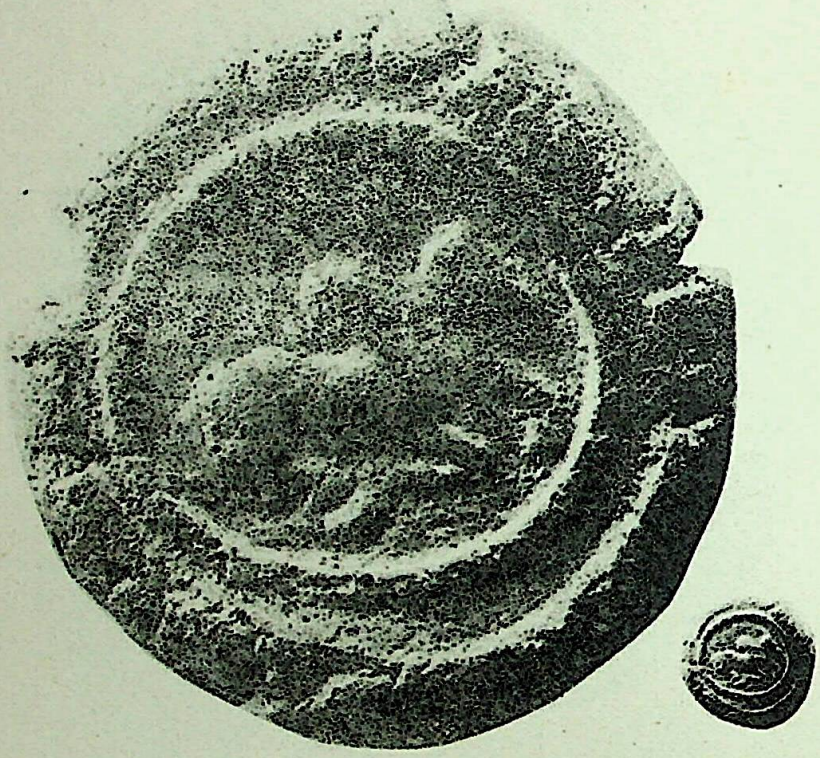

२३२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
प्रथम ओर नन्दी का चित्र है।

232. Clay seal from Sunet with Nandi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

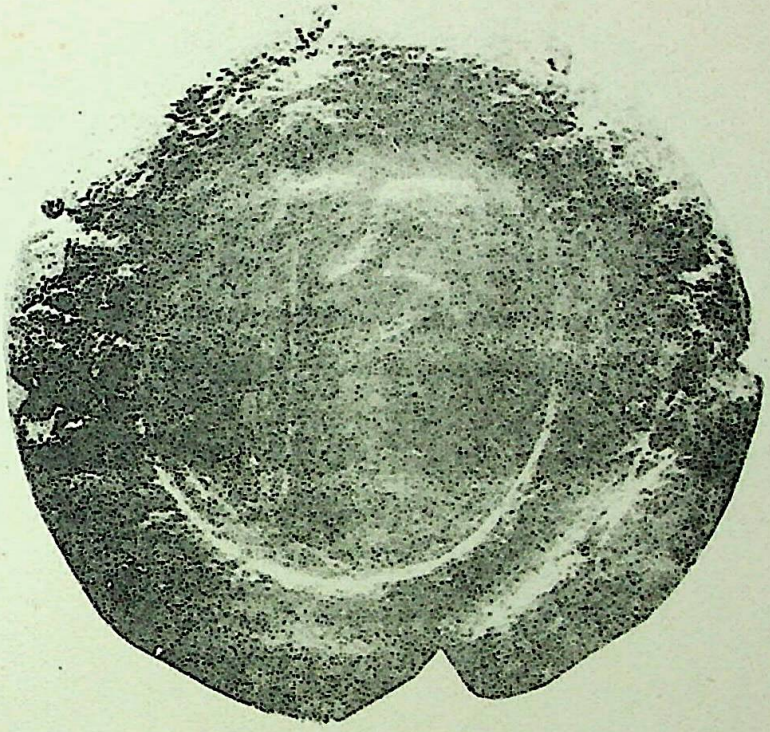

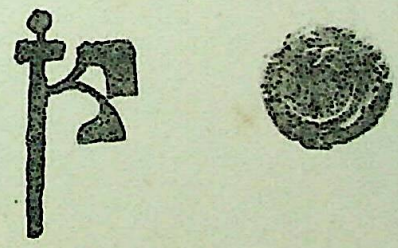

२३३. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर परशु का चित्र है।
233. Reverse of the previous seal with an axe.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

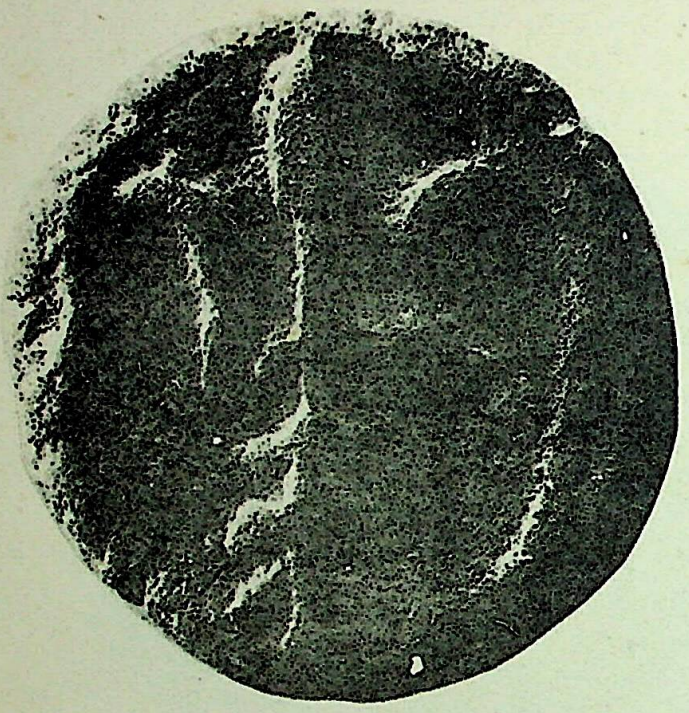

२३४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल का चित्र है।

234. Clay seal from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

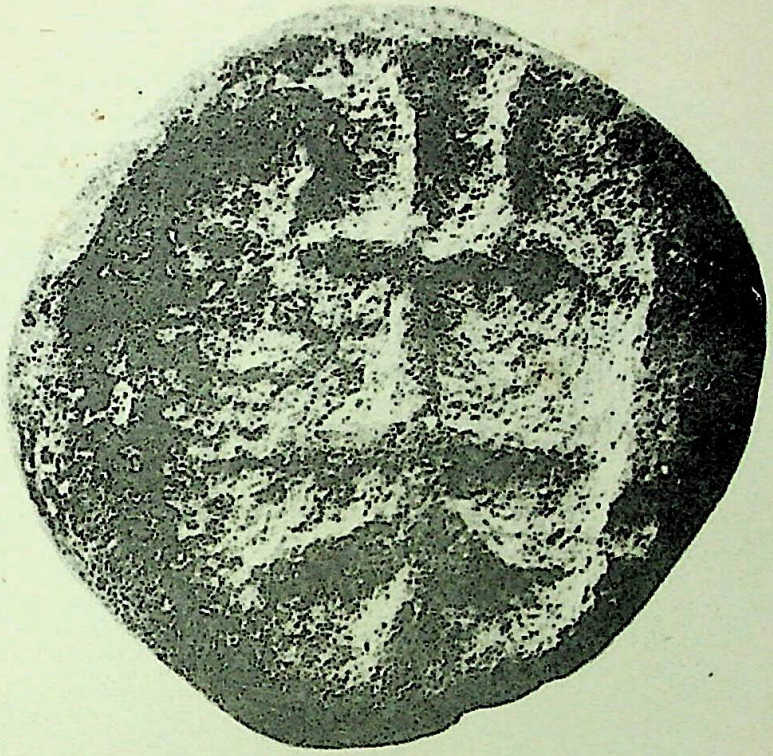

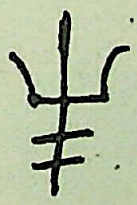

२३५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल का चित्र है।

235. Clay seal from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

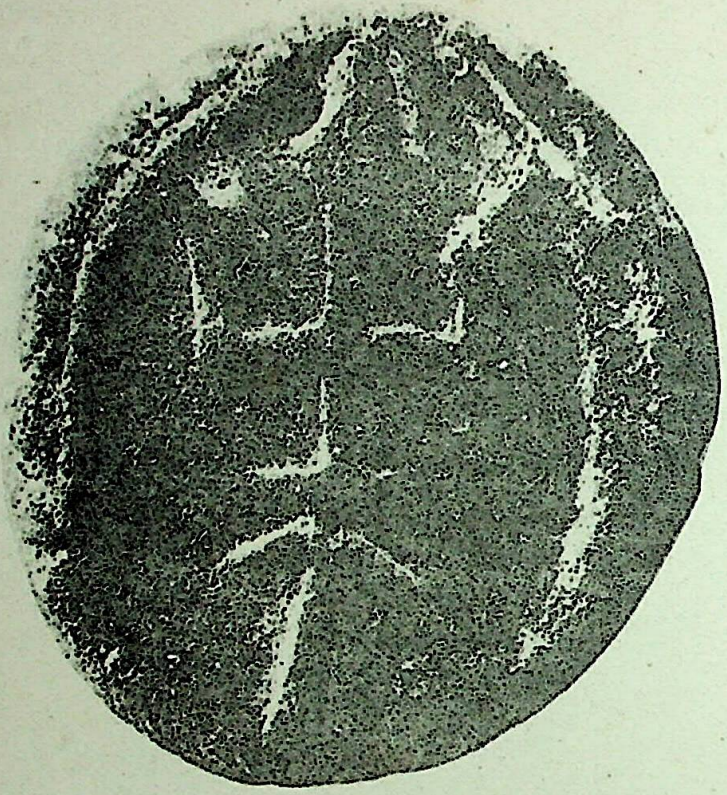

२३६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल का चित्र है।

236. Clay seal from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल का चित्र है।

237. Clay seal from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल का चित्र है ।

238. Clay seal from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२३९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल का चित्र है।

239. Clay seal from Sunet with a trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

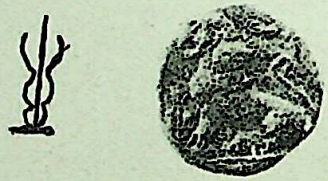

२४०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर सिंह का चित्र है।

240. Clay seal from Sunet with a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर सिंह का चित्र है।

241. Clay seal from Sunet with a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

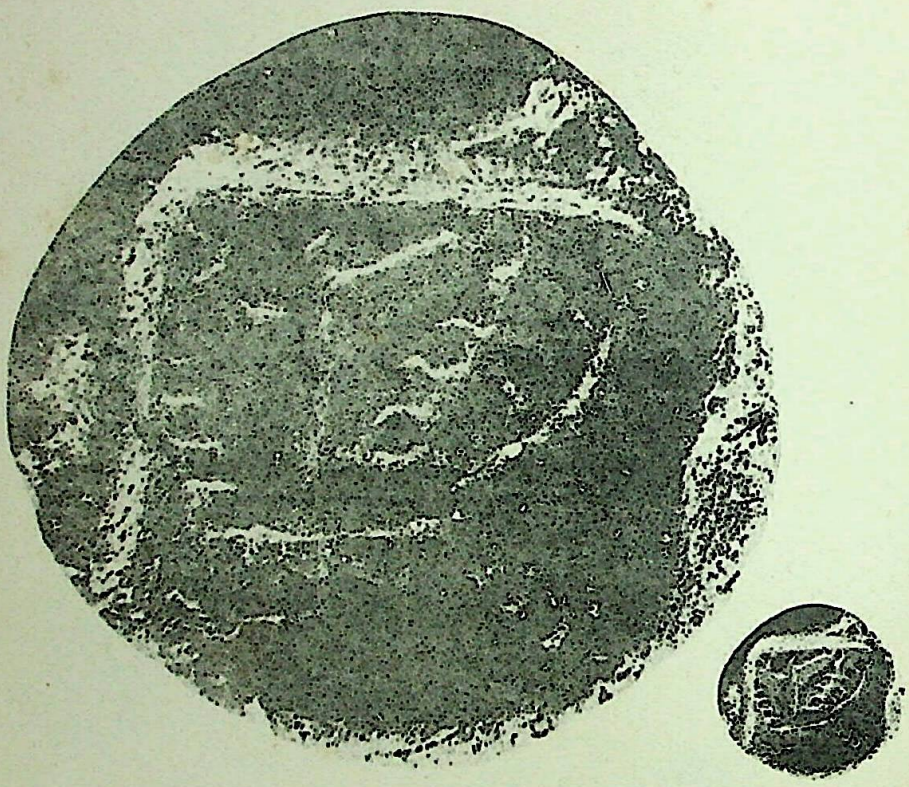

२४२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर नाचते हुवे मयूर का चित्र है।

242. Clay seal from Sunet with a dancing peacock.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

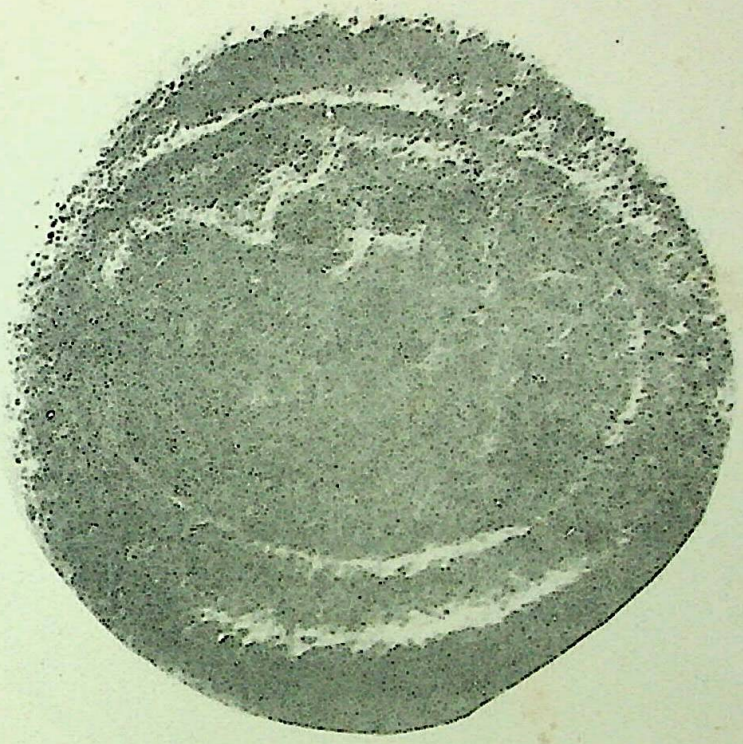

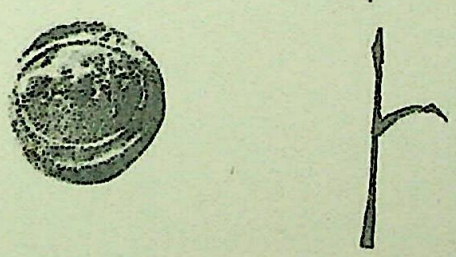

२४३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर बैठे हुवे नन्दी के आगे अंकुश का चित्र है।

243. Clay seal from Sunet with a seated Nandī and goad.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

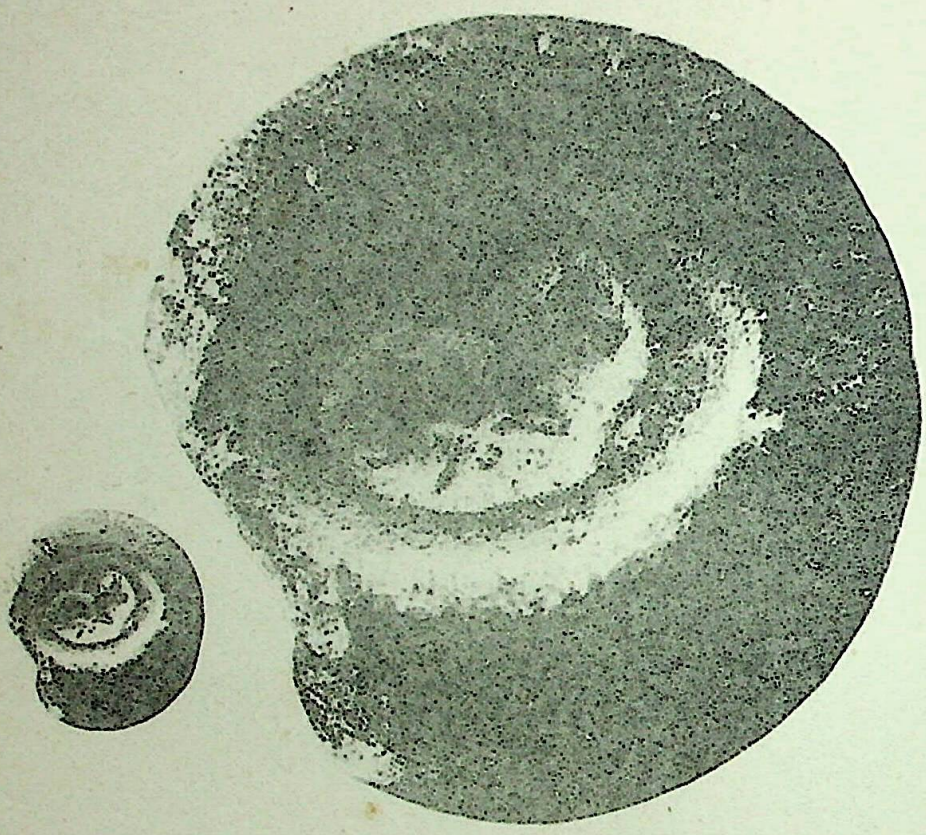

२४४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर बैठे हुवे नन्दी का चित्र है।

244. Clay seal from Sunet with a seated Nandī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

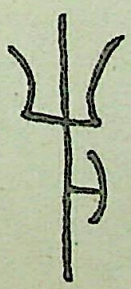

२४५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर सपरशु त्रिशूल का चित्र है ।

245. Clay seal from Sunet with axe-trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर वृश्चिक का चिन्ह है।

246. Clay seal from Sunet with the symbol of Scorpio

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

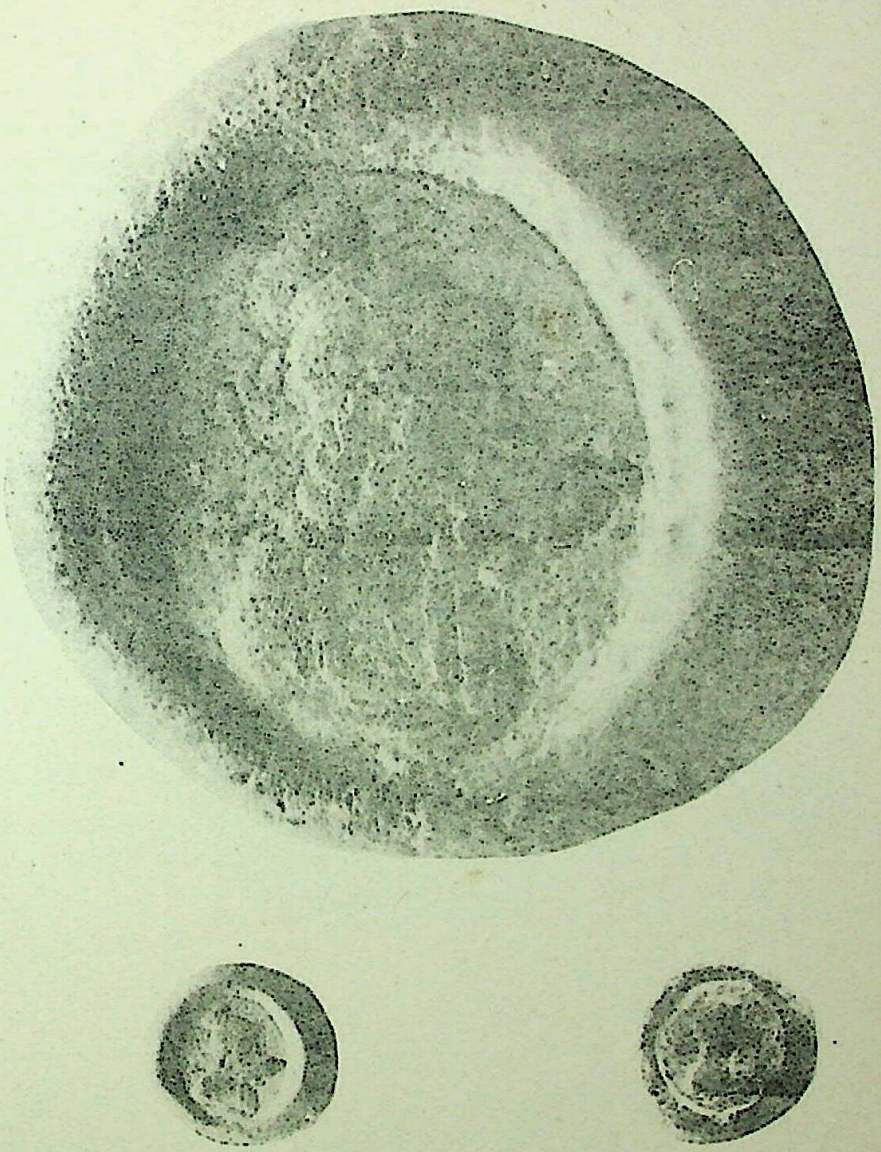

२४७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर व्यक्ति का आकटि चित्र है ।

247. Clay seal from Sunet with a bust portrait.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चलते हुवे मनुष्य का पीठ की ओर से चित्र है।

248. Clay seal from Sunet with a man walking away seen from back.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४९ सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
प्रथम ओर खड़े हुवे नन्दी का चित्र है ।

249 Clay seal from Sunet with a standing Nandi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५०. पूर्वगामी मुद्रांक की दूसरी ओर चक्र और त्रिशूल का चित्र है ।

250. Reverse of the previous seal with discus and trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चक्र का चित्र है।

251. Clay seal from Sunet with a discus.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

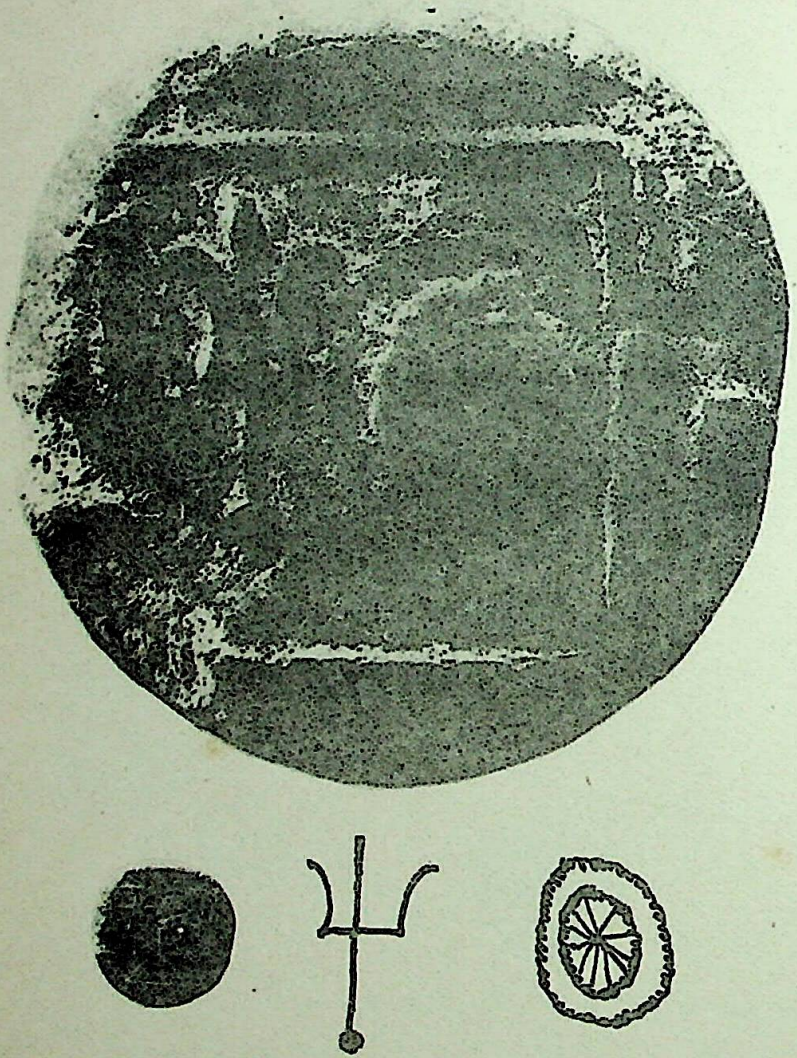

२५२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर युद्धोपकरणों के चित्र हैं।

252. Clay seal from Sunet with weapons.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

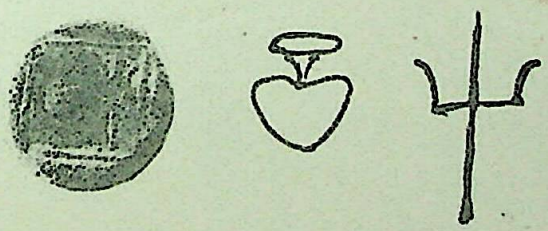

२५३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर युद्धोपकरणों के चित्र हैं।

253. Clay seal from Sunet with weapons.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर सांकुश त्रिशूल प्रभृति शस्त्रों के चित्र हैं।

254. Clay seal from Sunet, with goad-trident and other weapons.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

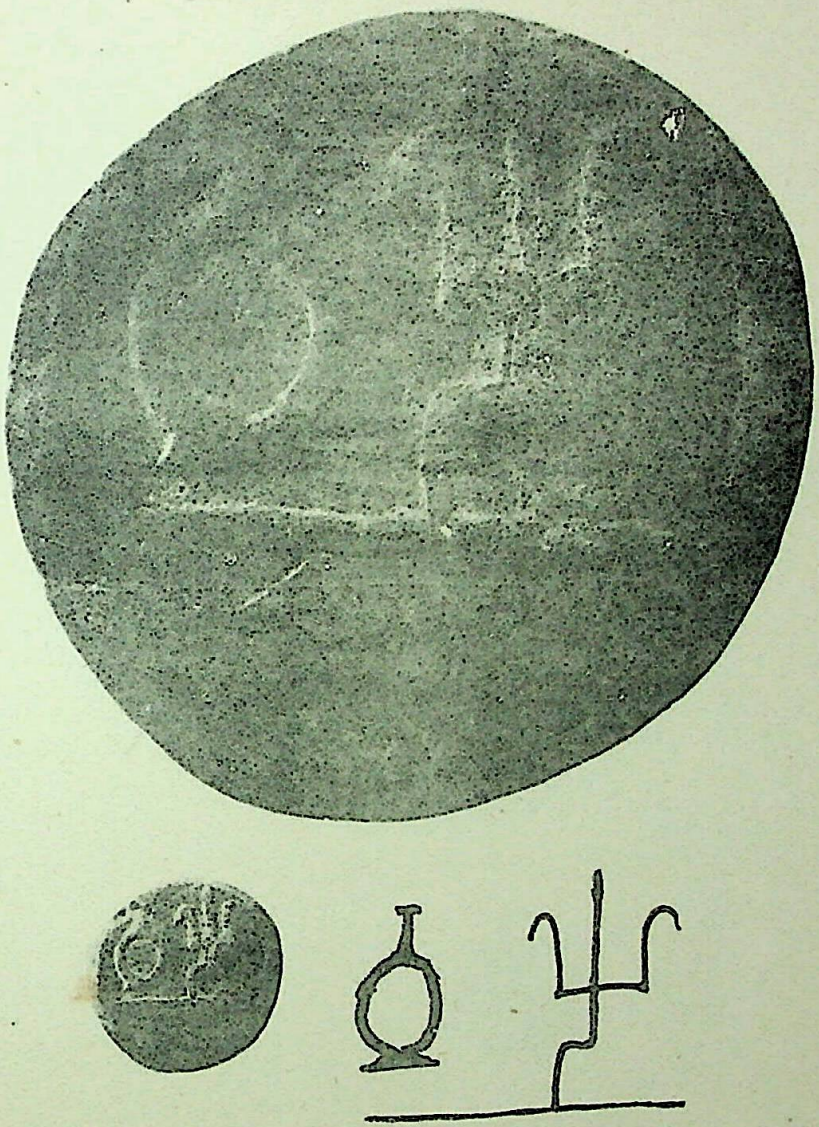

२५५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर त्रिशूल-सदृश शस्त्र का चित्र है।

255. Clay seal from Sunet, with a trident-like weapon.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

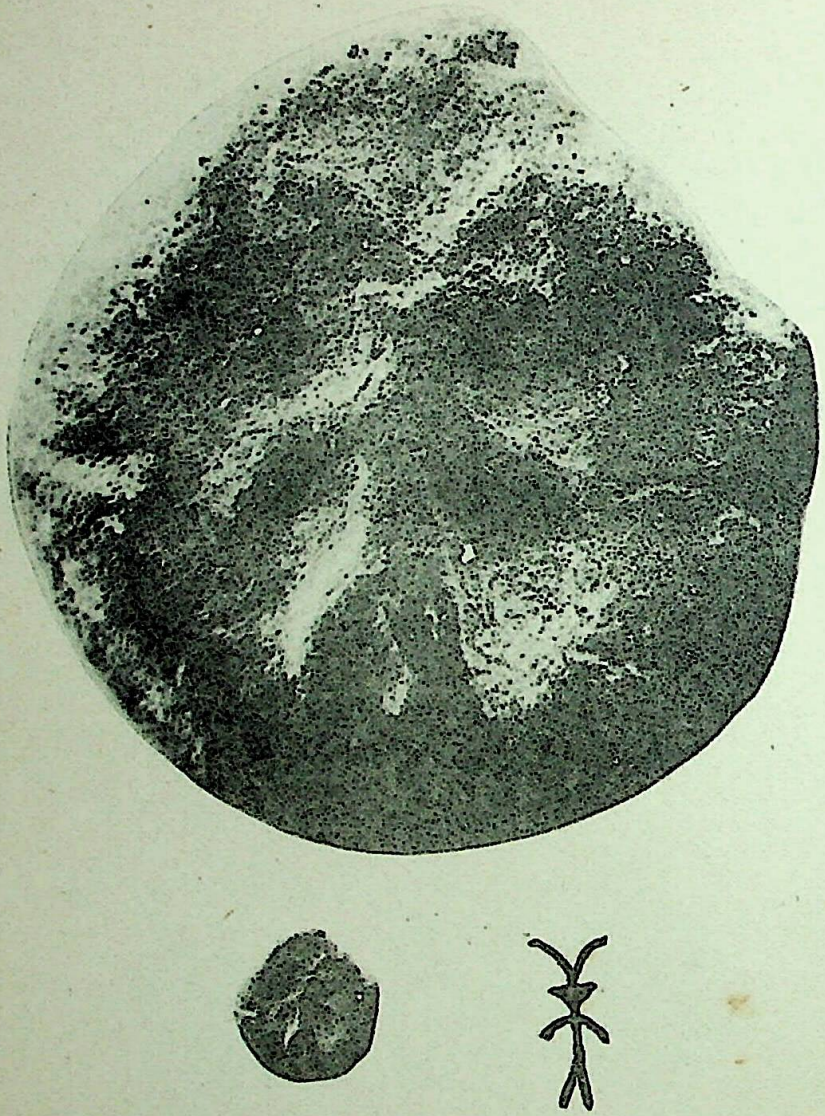

२५६. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
शस्त्र का चित्र। यह यौधेय मुद्राओं पर मिलता है।

256. Clay seal from Sunet with a weapon which appears on Yaudheya coins.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

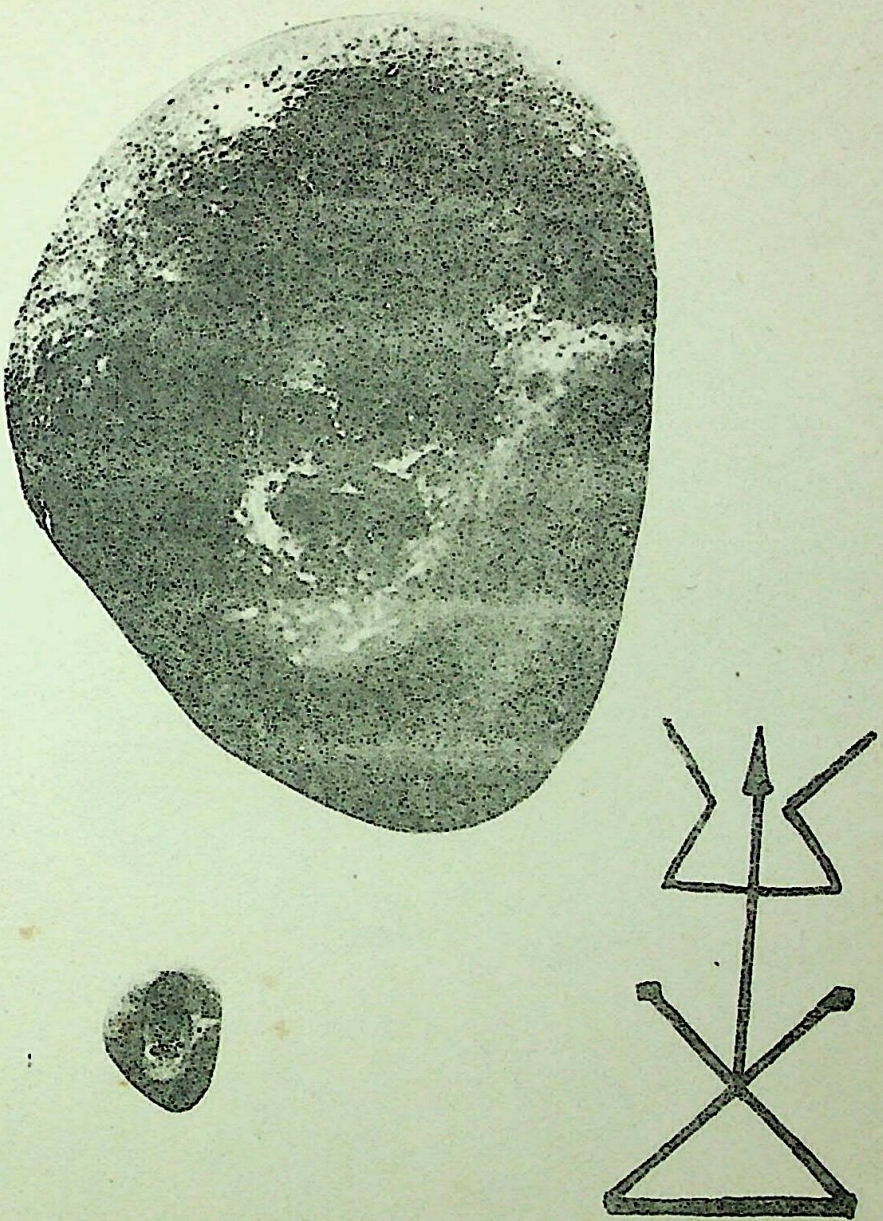

२५७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
मकार के ऊपर त्रिशूल का चित्र है।

257. Clay seal from Sunet, inscribed with *ma* and a trident above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

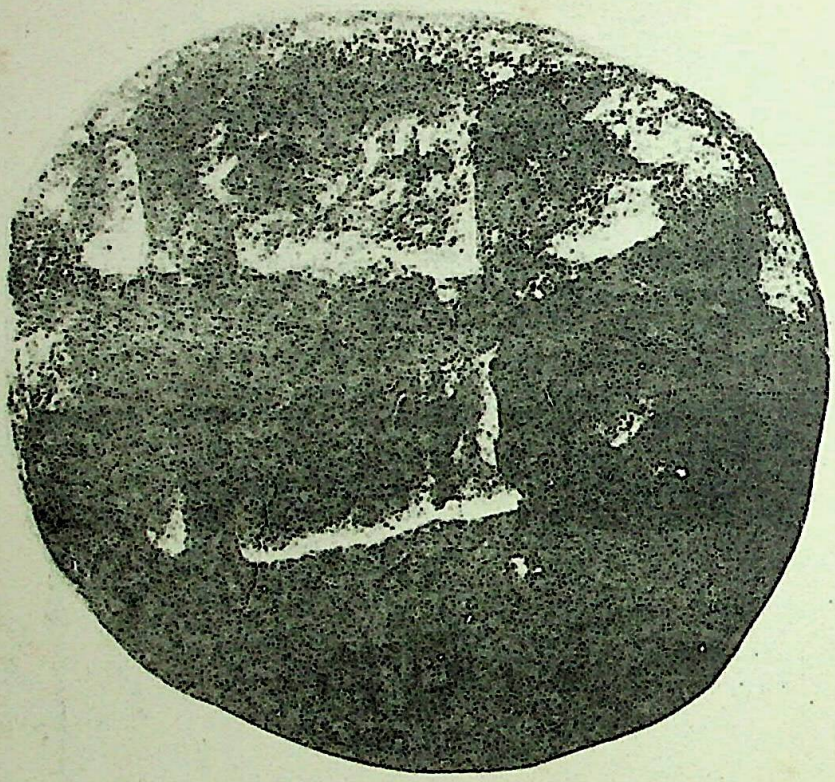

२५८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
मकार के आगे शक्ति और त्रिशूल का चित्र है।

258. Clay seal from Sunet, inscribed with *ma*, a spear and trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

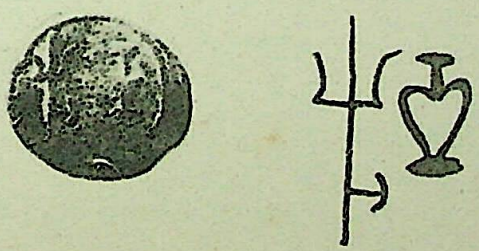

२५९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
इस पर युद्धोपकरणों के चित्र है।

259. Clay seal from Sunet with weapons.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

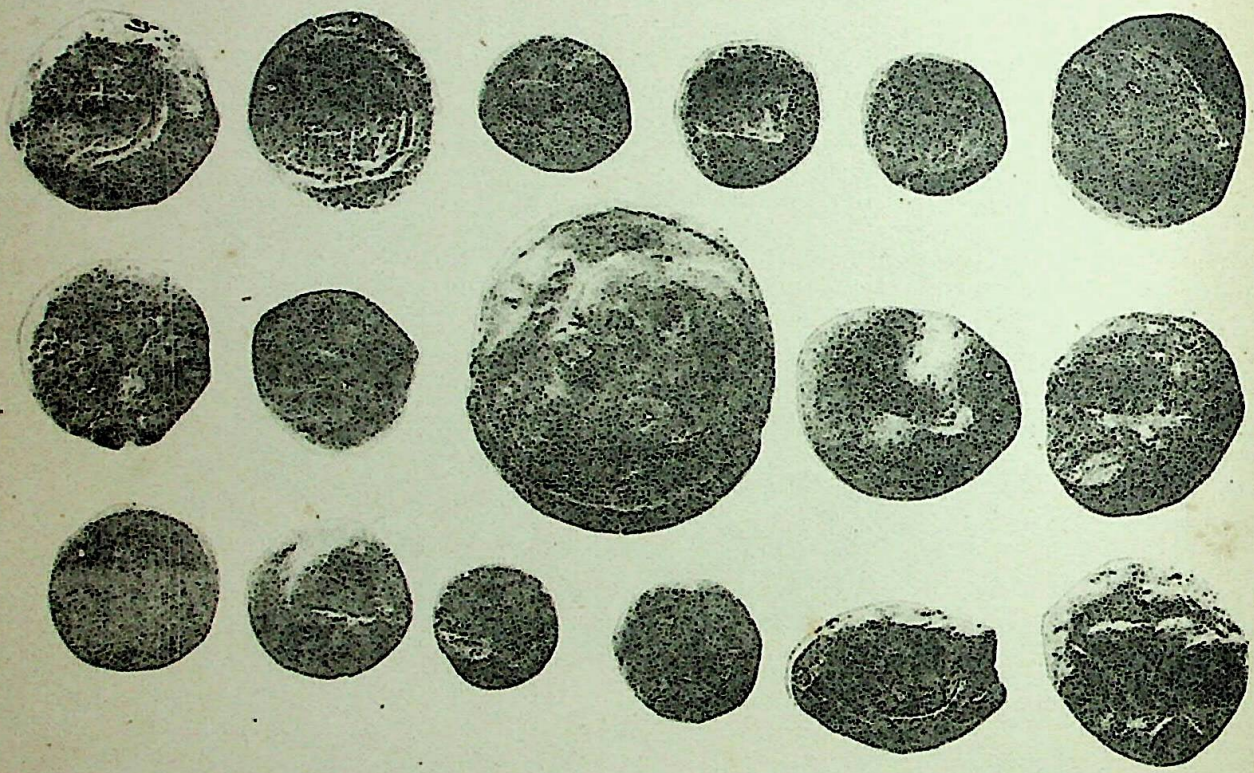

२६०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
लेख अस्पष्ट है। बीच में बारासींगा पर आक्रमण करता हुआ चीता।

260. Clay seal from Sunet, with an indistinct inscription. In the centre a tiger can be seen attacking a deer.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीहरिगुप्तस्य

261. Clay seal of Harigupta from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

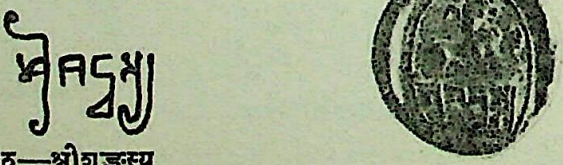

पाठ—श्रीशङ्खस्य

ऊपर सिंह के आगे शंख का चित्र है ।

262. Clay seal of Śaṅkha from Sunet, with a lion and conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६३. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

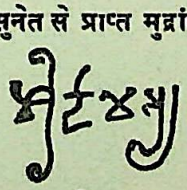

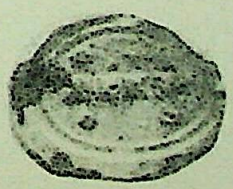

पाठ—श्रीदामस्य

263. Clay seal of Dāma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

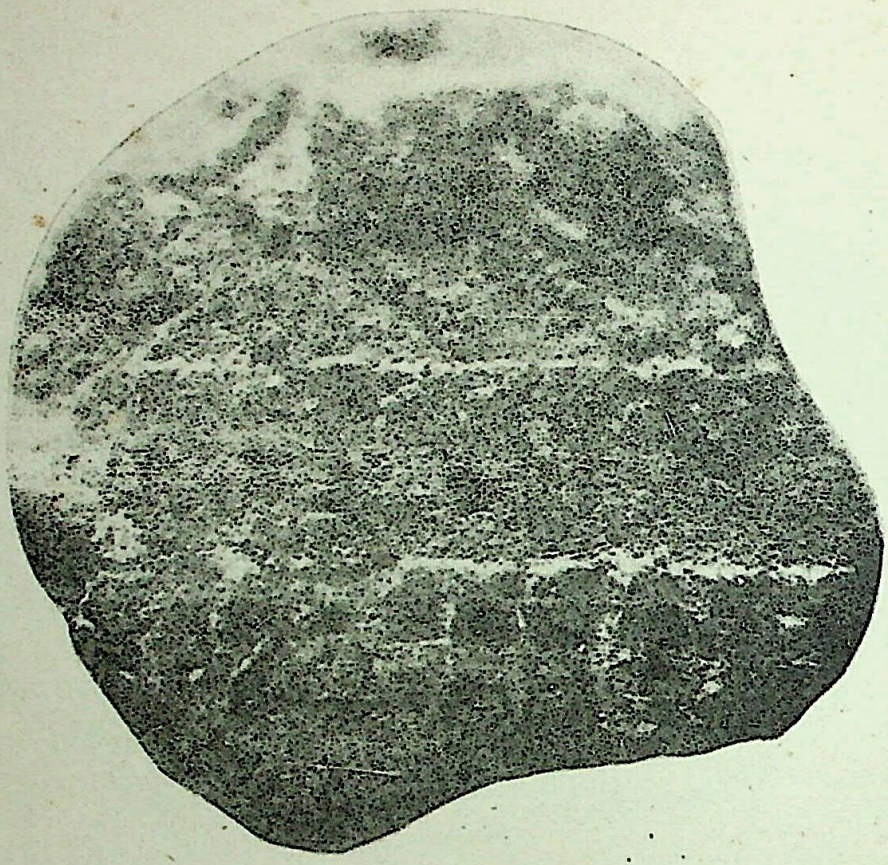

२६४. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—[श्रीमं]हाराज...धर्मसा...
रव्य...वधकरण...
ऊपर चलते हुवे नन्दी का चित्र है।

264. Clay seal from Sunet of Mahārāja...°dharma. Above the inscription is a walking Nandī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६५. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

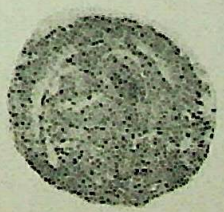

पाठ – ओ...यशस्य

265. Clay seal of °yasa from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६६. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक
पाठ—श्री कान्ति स्थिर--

266. Reverse clay seal from Sunet

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

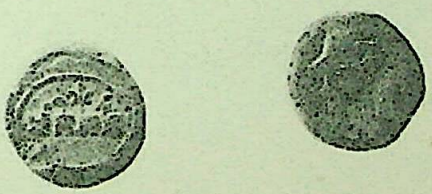

२६७. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

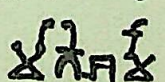

पाठ—मातिशर्मा

दूसरी ओर पुष्प का चित्र है।

267. Clay seal of Mātiśarmā from Sunet with flower on reverse.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६८. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

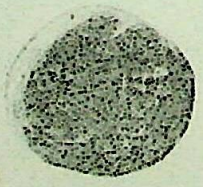

पाठ—श्रीमतिशर्मस्य

268. Clay seal of Mātiśarma from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

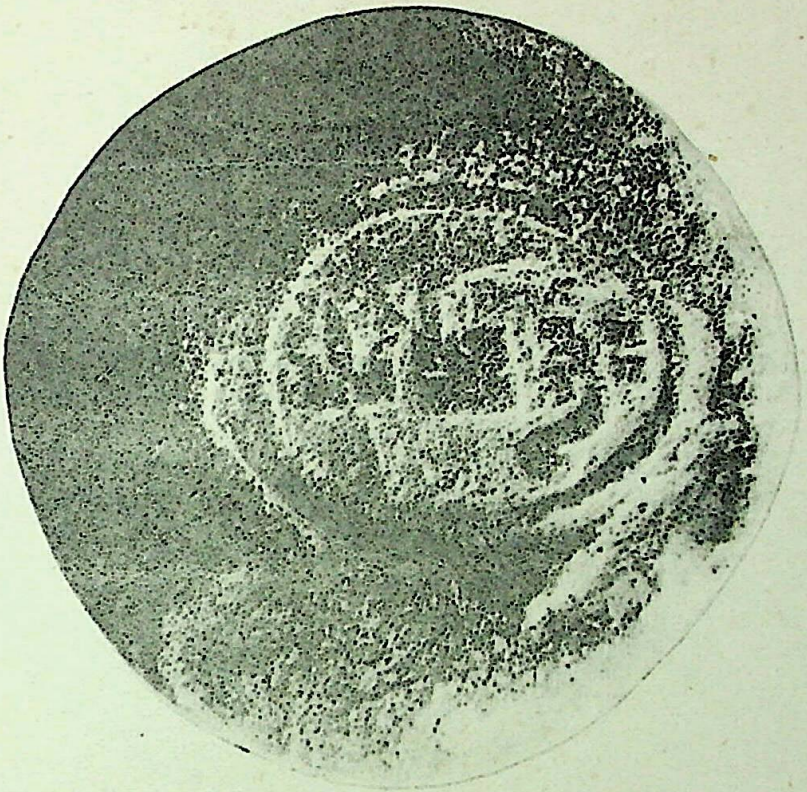

२६९. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

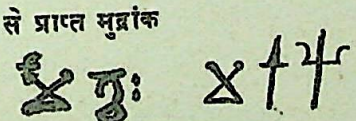

पाठ—मातृः

लेख से पूर्व त्रिशूल का चित्र। मुद्रांक की दूसरी ओर मकार के आगे शक्ति और त्रिशूल का चित्र है।

269. Clay seal of Mātṛ from Sunet. Trident before the inscription. Reverse of the previous seal inscribed with *ma*, a spear and trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७०. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—जितं भगवता

लेख के ऊपर बैठा हुवा सिंह चित्रित है ।

270. Votive clay seal from Sunet, inscribed *jitaṁ bhagavatā*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७१. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
मकार के आगे शक्ति और त्रिशूल के चित्र हैं।

271. Clay seal from Sunet, with *ma*, spear, and trident.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

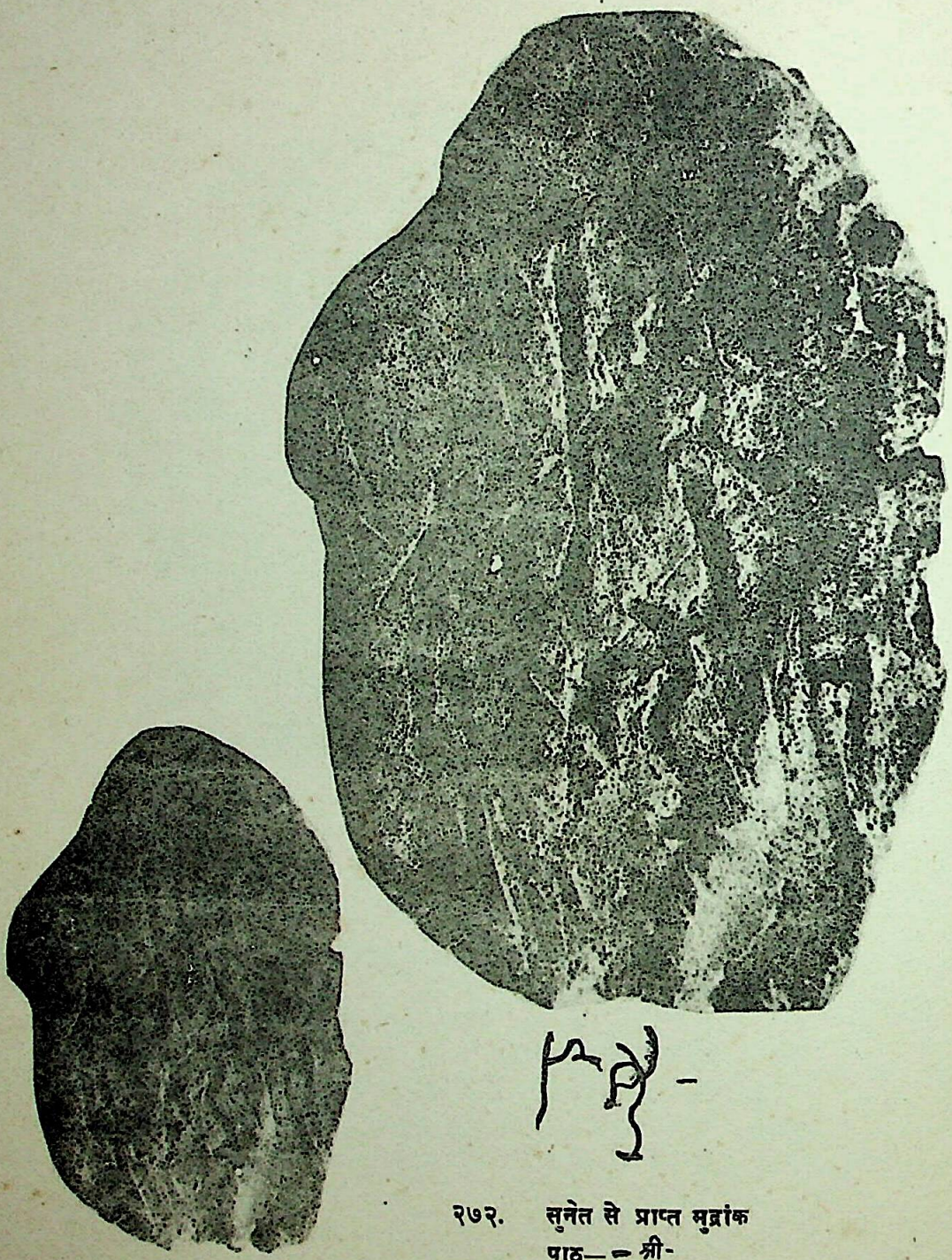

२७२. सुनेत से प्राप्त मुद्रांक
पाठ— ॰ श्री-

272. Clay seal from Sunet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७३. कालीबंगा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर एकशृङ्गी पशु के ऊपर पीपल का पत्ता प्रदर्शित है ।

273. Indus Valley seal from Kālibangā with a standing bull and a peepal leaf.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

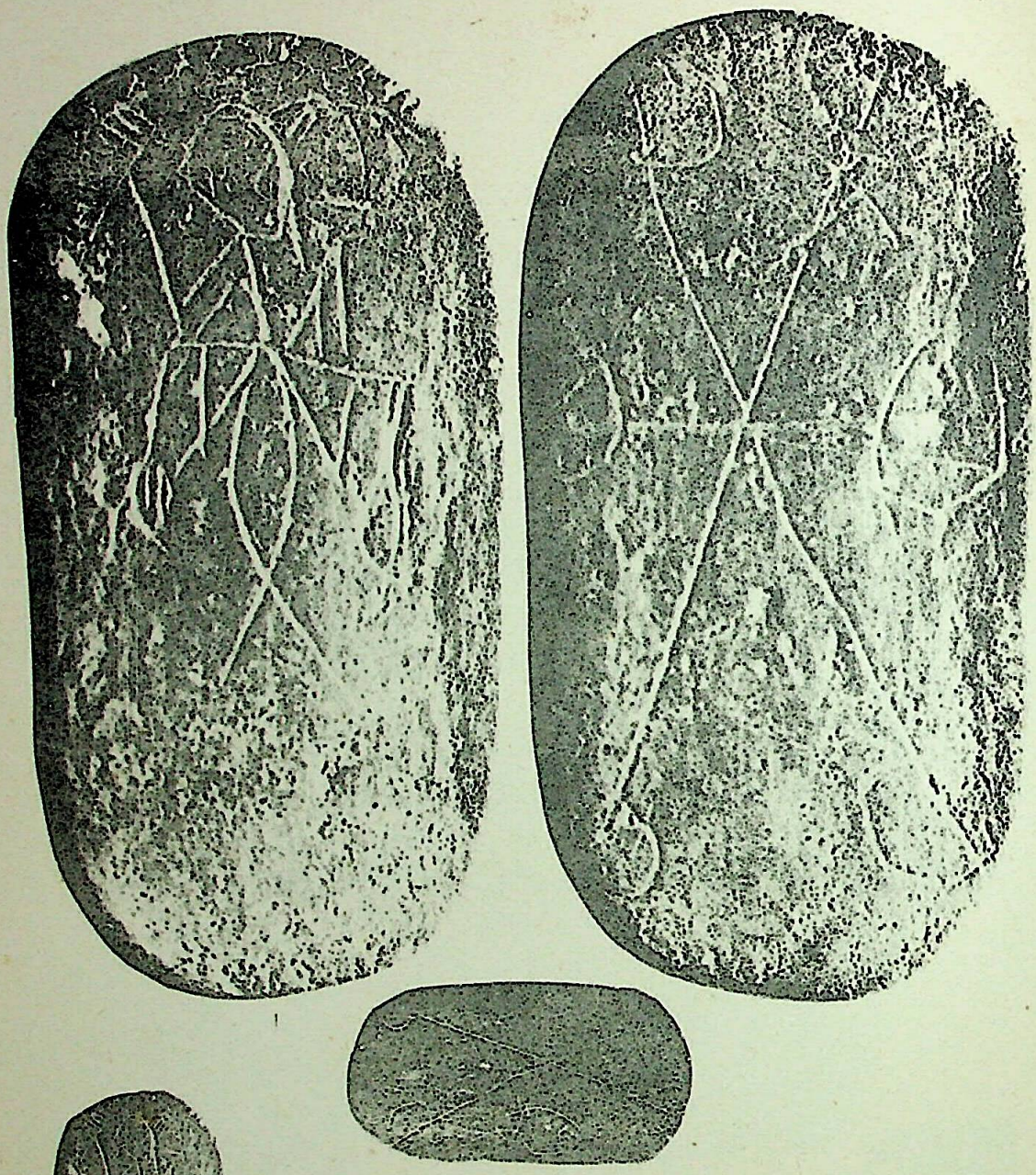

२७४. कालीबंगा से प्राप्त मुद्रांक
प्रथम ओर एक व्यक्ति कंधों पर बँहगी लिये खड़ा है। हाथ में पकड़े हुवे है। दूसरी ओर अंकित है।

274. Seal from Kālibangā with the sketch of a person holding a pair of baskets over his shoulders for carrying merchandise.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

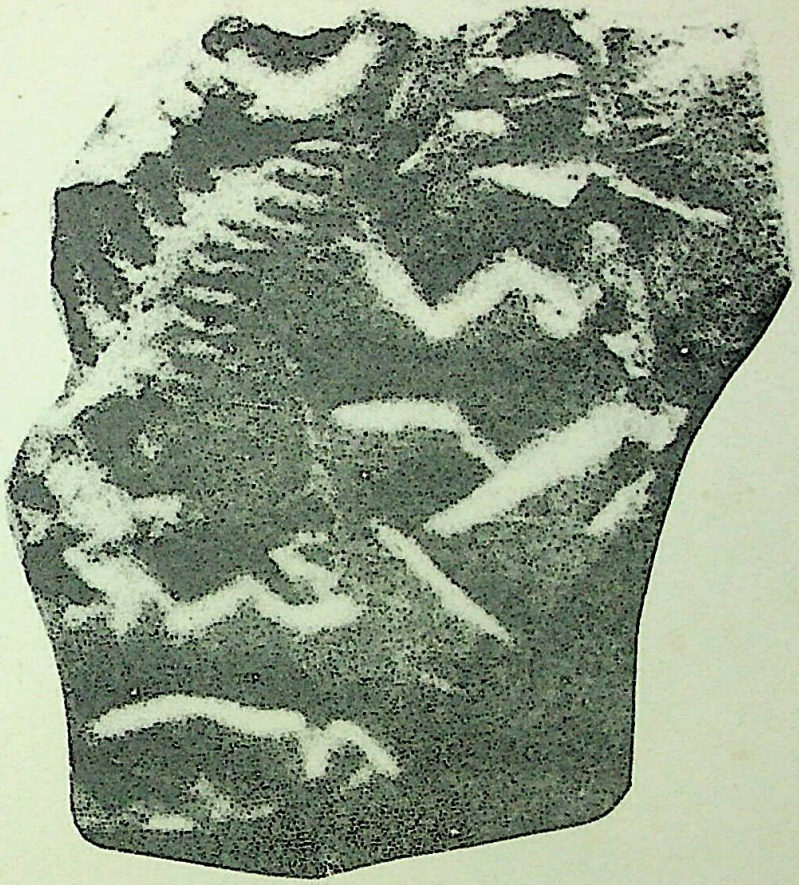

२७५. कालीबंगा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर लम्बे मुख की मानवाकृति प्रदर्शित है।

275. Indus Valley seal from Kālibangā with a human figure.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७६. अहिच्छत्रा से प्राप्त अकीक प्रस्तर का विपरीत मुद्रांक

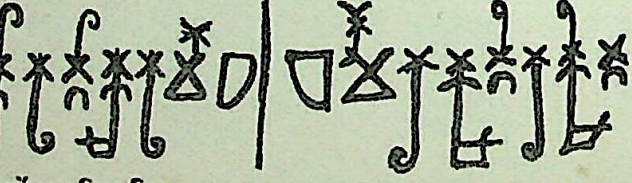

पाठ—धर्मो रक्षति रक्षित

लेख के ऊपर परशु (कुठार) और अर्धचन्द्र के चित्र हैं।

यह मनुस्मृति ८. १५ श्लोक का चरण है।

276. Reverse votive crystal seal from Ahicchatrā, inscribed *dharmo rakṣati rakṣita*. Above the inscription are an axe and crescent.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

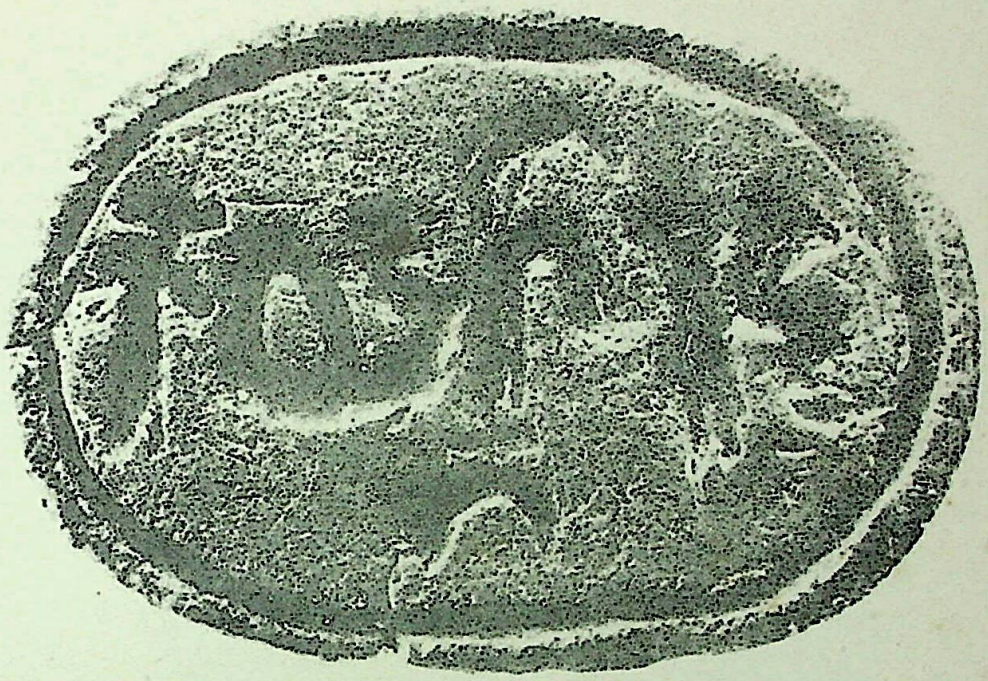

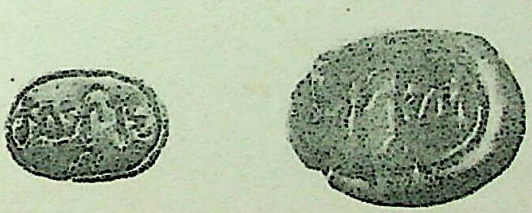

२७७. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

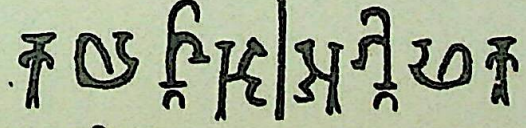

पाठ—अग्निभुक

277. Reverse copper seal from Ahicchatrā, inscribed *agnibhuka*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७८. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

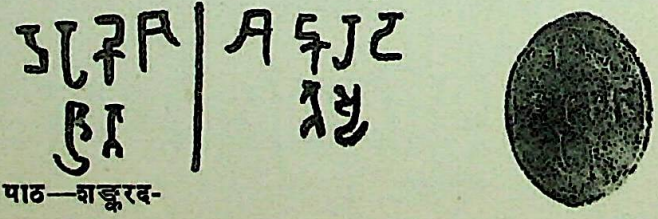

पाठ—शङ्करद-

त्तस्य

ऊपर शंख और चिह्न बना है।

278. Reverse copper seal of Śaṅkaradatta from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२७९. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

पाठ—पद्मनन्दि

लेख के ऊपर शंख और चक्र बने हैं।

279. Reverse copper seal from Ahicchatrā, inscribed *padmaṁnandi*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८०. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

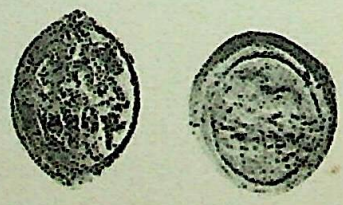

पाठ—कविकस्य

ऊपर बैठे हुवे नन्दी का चित्र है।

280. Reverse copper seal of Kabika from Ahicchatrā, with a seated Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८१. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

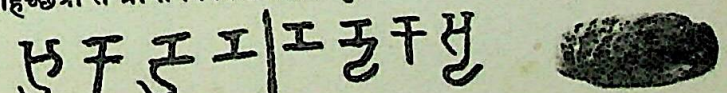

पाठ—नन्यकस्य

281. Reverse copper seal of Nanyaka from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

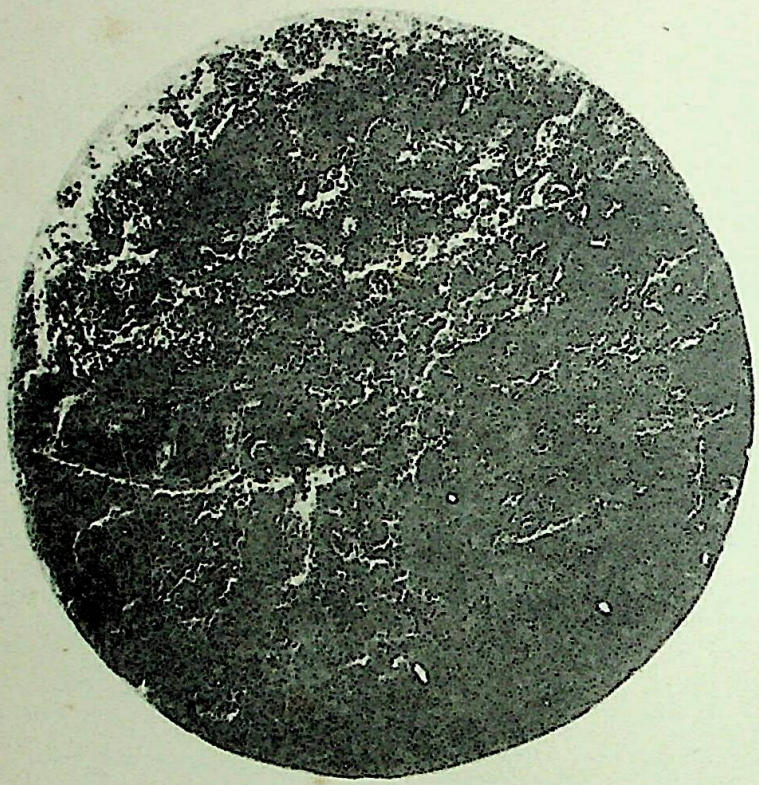

२८२. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

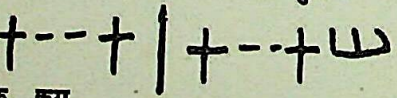

पाठ—क...कय

282. Reverse copper seal from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

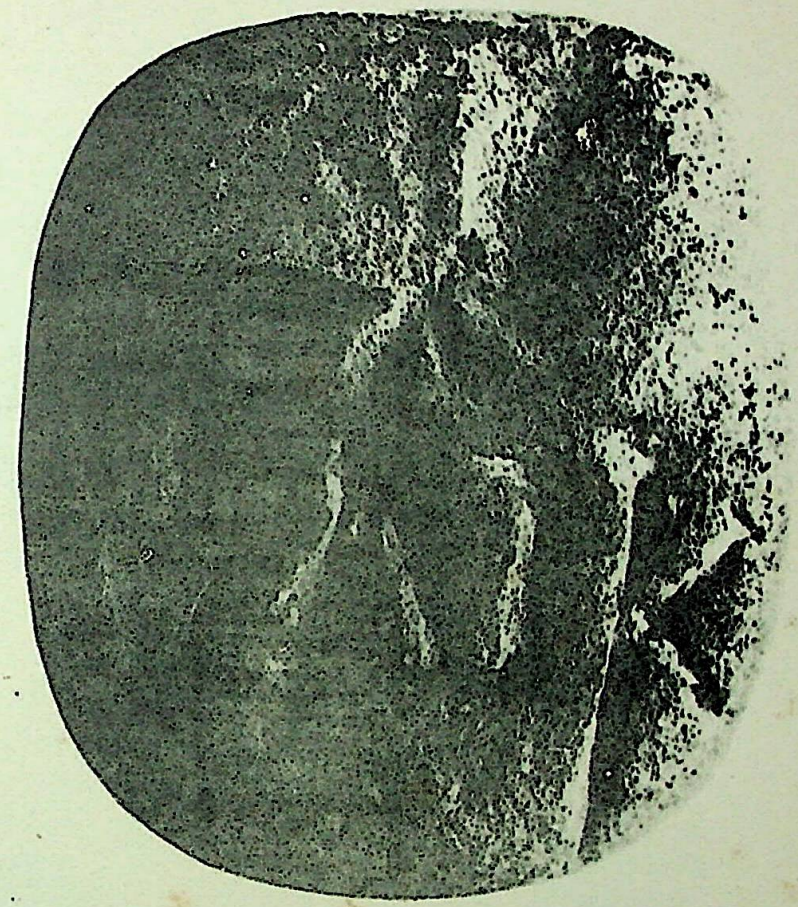

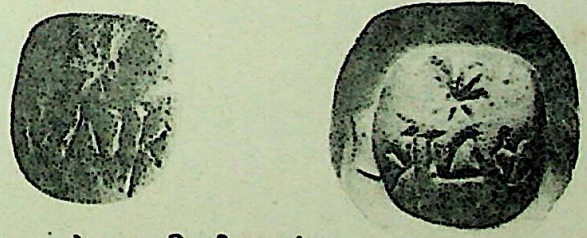

२८३. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

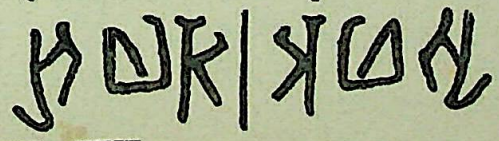

पाठ—अफस्य

लेख के ऊपर ✳ चिह्न बना है।

283. Reverse clay seal of Apha from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८४. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

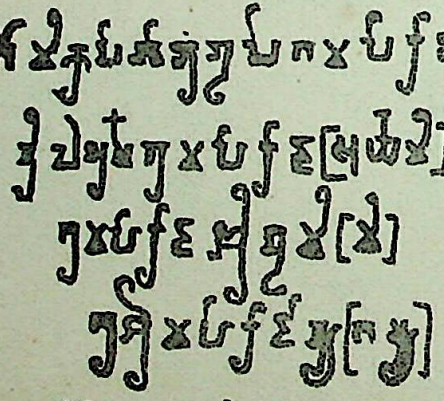

पाठ—गोमिकुलागात्रगृहीतमहाराजा-
ह्मिलसुमित्र महाराज [सूर्यमि-]
त्र महाराजश्रीभू? मि [मि-]
त्र श्रीमहाराजाच्यु [तस्य]

ऊपर सिंह के आगे चिह्न है।

284. Seal of Mahārāja Acyuta from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८५. अहिच्छत्रा से प्राप्त मृन्मांक

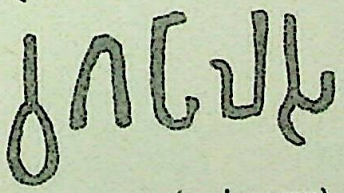

पाठ—वगपालस (=वंगपालस्य)

लेख के नीचे पाञ्चाल देश का राजकीय चिह्न 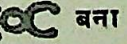 बना है।

वंगपाल अहिच्छत्रा का राजा था। इसके पिता का नाम शोनकायन था। इसकी रानी का नाम तेवणी था, यह त्रैवर्ण की राजकुमारी थी।

285. Clay seal of Vaṅgapāla from Ahicchatrā. with the royal emblem of Pāñcāla.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८६. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीवरवीरदेवस्य

लेख के ऊपर शंख ॐ चक्र बने हैं।

286. Clay seal of Śrivaravīradeva from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८७. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

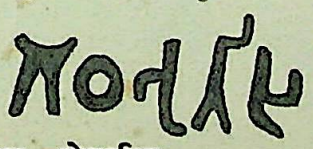

पाठ—गोठभूतिस

इसपर ᘓ 卐 चिह्न बने हैं।

287. Clay seal of Goṭhabhūti from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

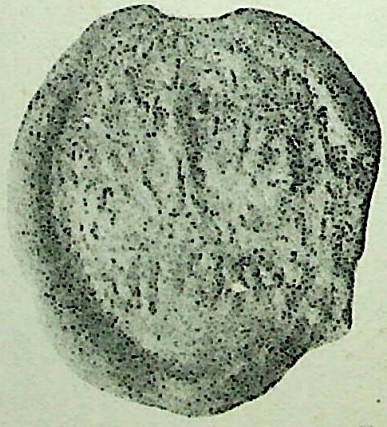

२८८. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

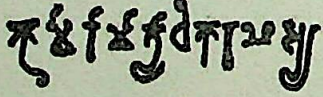

पाठ—कुमारामात्याधिकरणस्य

इस पर गजलक्ष्मी के दोनों ओर दो सिंह प्रदर्शित हैं।

288. Clay seal from Ahicchatrā, inscribed *kumārāmātyā-dhikaraṇasya*, with two lions flanking Gaja-Lakṣmī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

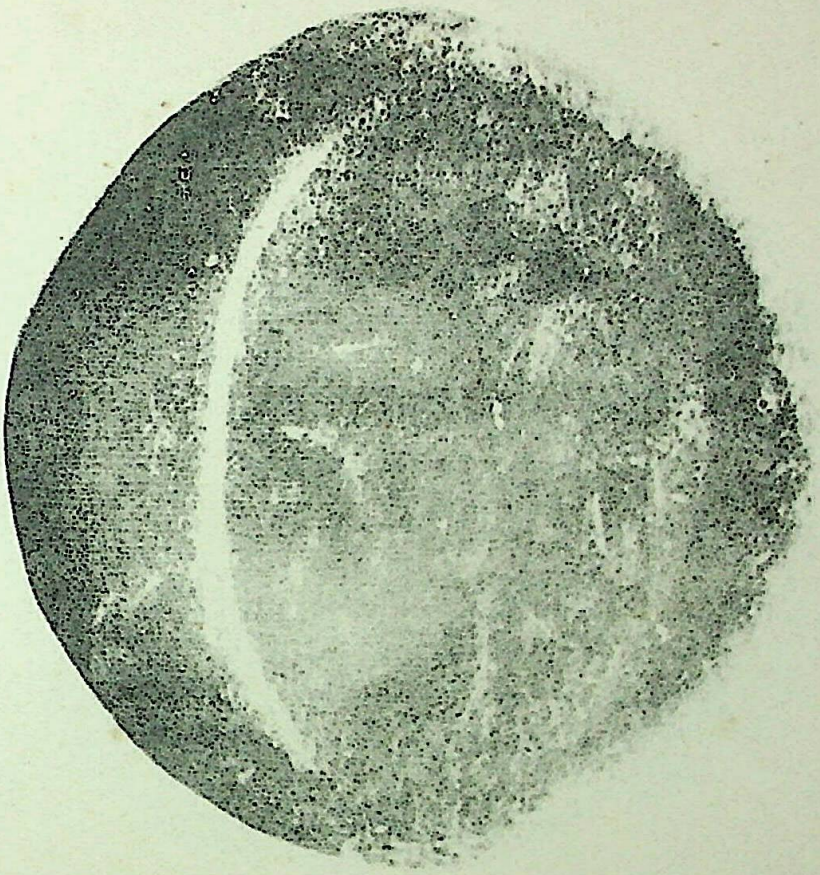

२८९. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—भद्रस्य

लेख के ऊपर शंख का चित्र है।

289. Clay seal of Bhadra from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

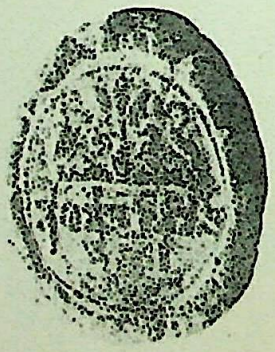

२९०. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—सुधर्म्ममहाविहारे ?

लेख के ऊपर गुल्मलताओं में त्रिशूल का चित्र है।

290. Clay seal of Sudharmma Mahāvihāra from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection..

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९१. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

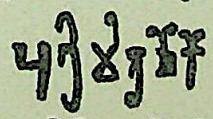

पाठ—पुत्रिमित्र...ौ...ौ ?

लेख के ऊपर [illegible] शंख बने हैं।

291. Clay seal from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९२. अहिच्छत्रा से प्राप्त त्रुटित ताम्र मुद्रांक

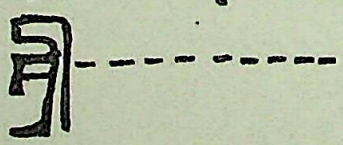

पाठ—श्री.....

ऊपर लक्ष्मी का चित्र है ।

292. Broken copper seal from Ahicchatrā, with the image of Lakṣmī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९३. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—स्थावरस्य(?) (लेख के ऊपर घूमता हुवा चक्र बना है)।

293. Clay seal of Sthāvara(?) from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९४. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—...विश्वमि...?

लेख के ऊपर शंख बने हैं।

294. Clay seal of Viśvamitra from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९५. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—जबुलस्य

लेख के ऊपर शंख और त्रिशूल बने हैं।

295. Clay seal of Jabula from Ahicchatrā. Conch and trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९६. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

[प]शुपतिस्यश

पाठ—[प]शुपतिस्यश

लेख के नीचे चीता, भेड़िया आदि पशु चित्रित हैं।

296. Clay seal of Paśupati(?) from Ahicchatrā. A number of animals are depicted below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

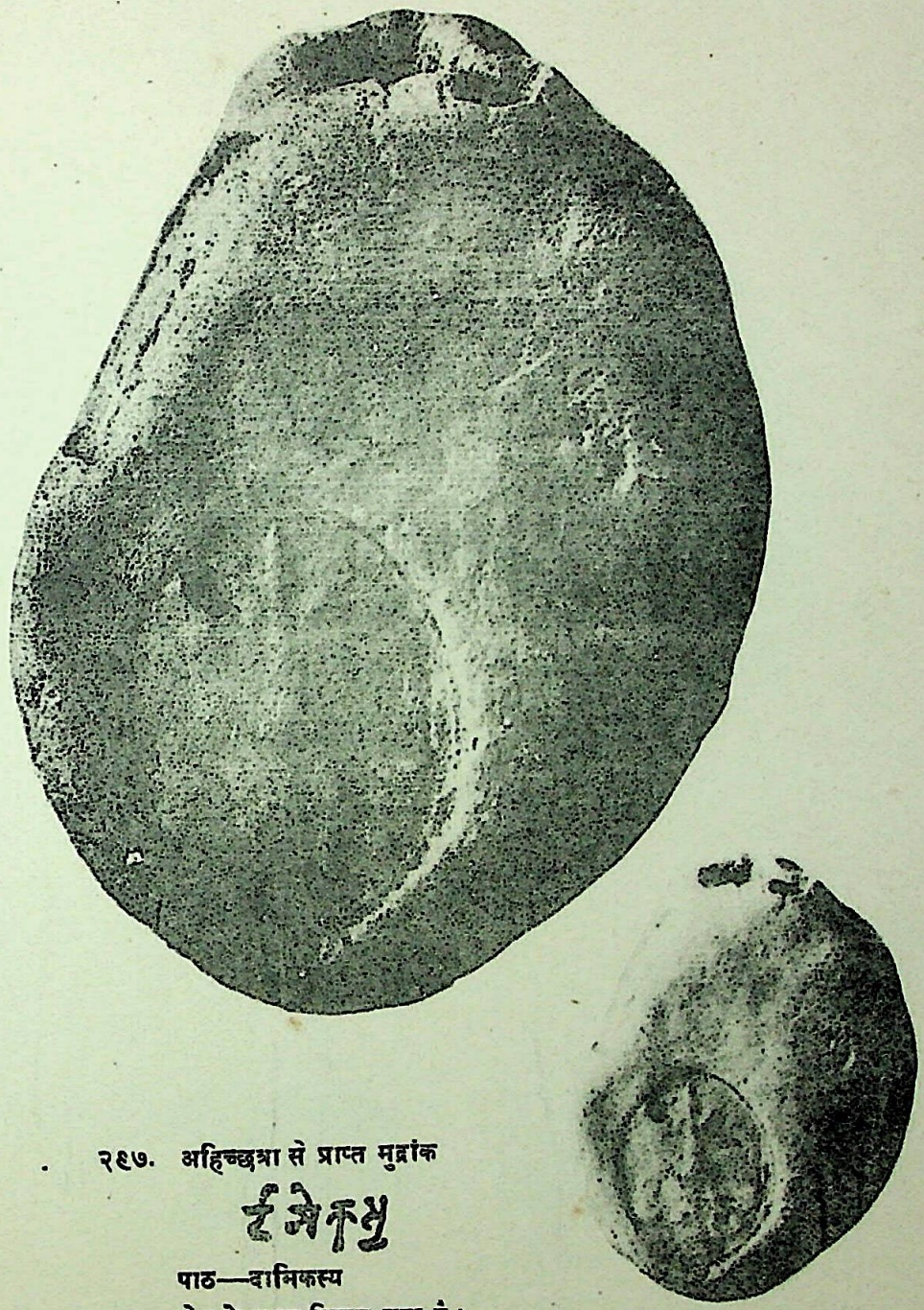

२९७. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक



पाठ—दामिकस्य

लेख के ऊपर त्रिशूल बना है।

297. Clay seal of Dāmika from Ahicchatrā. A trident above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

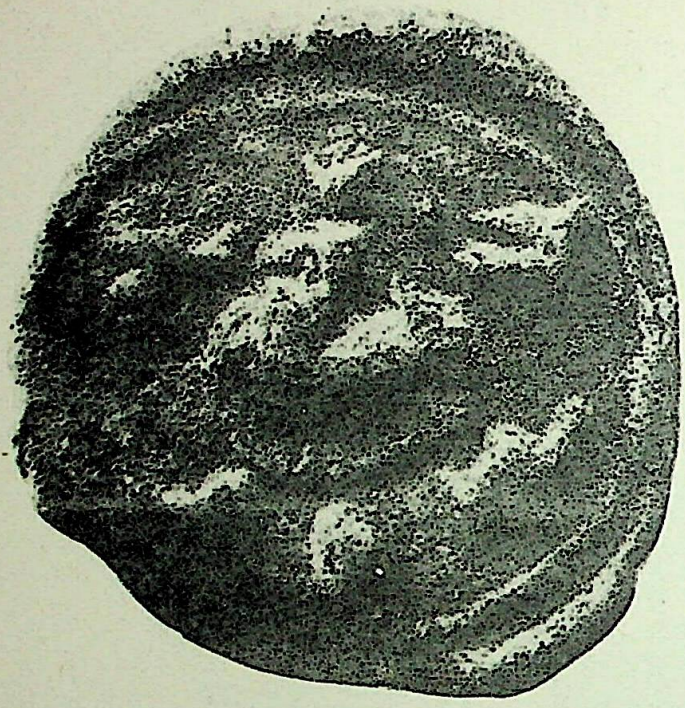

२९८. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—...कु ...?

लेख के मध्य पक्षी सदृश चित्र है।

298. Clay seal from Ahicchatrā with an indistinct inscription around the seal and a bird in the centre.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९९. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्रीदौद्धस्य ?

लेख के ऊपर चक्र और शंख बने हैं।

299. Clay seal of Dauddha(?) from Ahicchatrā with discus and conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

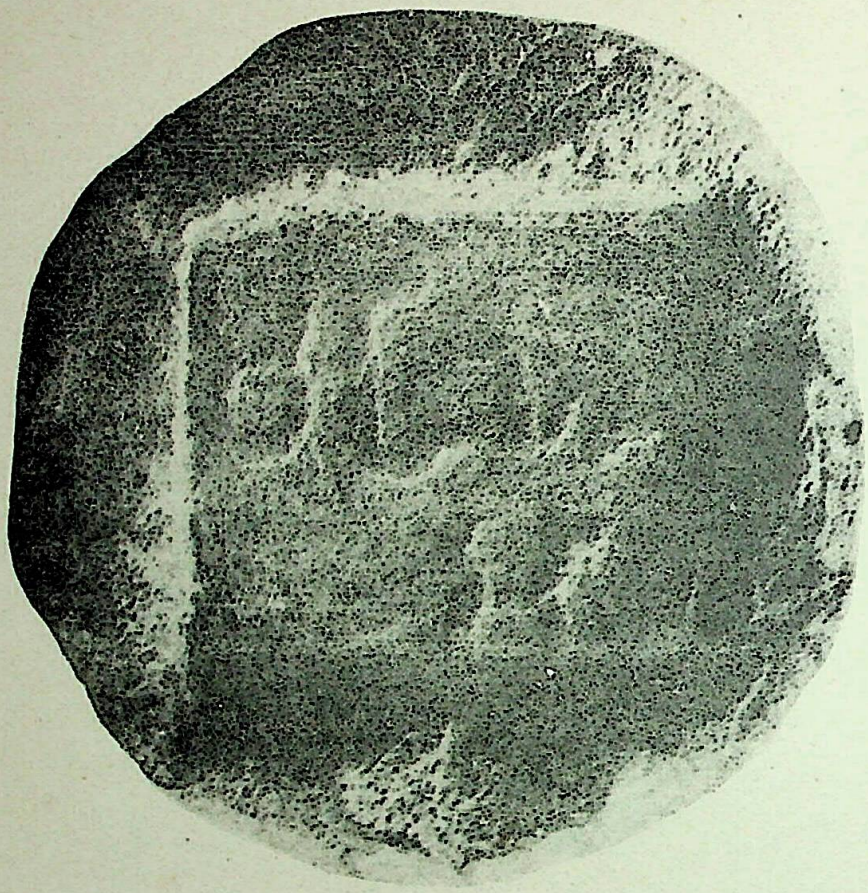

३००. रहटोइया (अहिच्छत्रा) से प्राप्त मुद्रांक

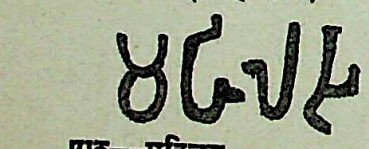

पाठ—महिलस

इस पर 𑀫 चिह्न बना है।

300. Clay seal of Mahila from Rahṭoiyā near Ahicchatrā. It has a *ma* like emblem.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

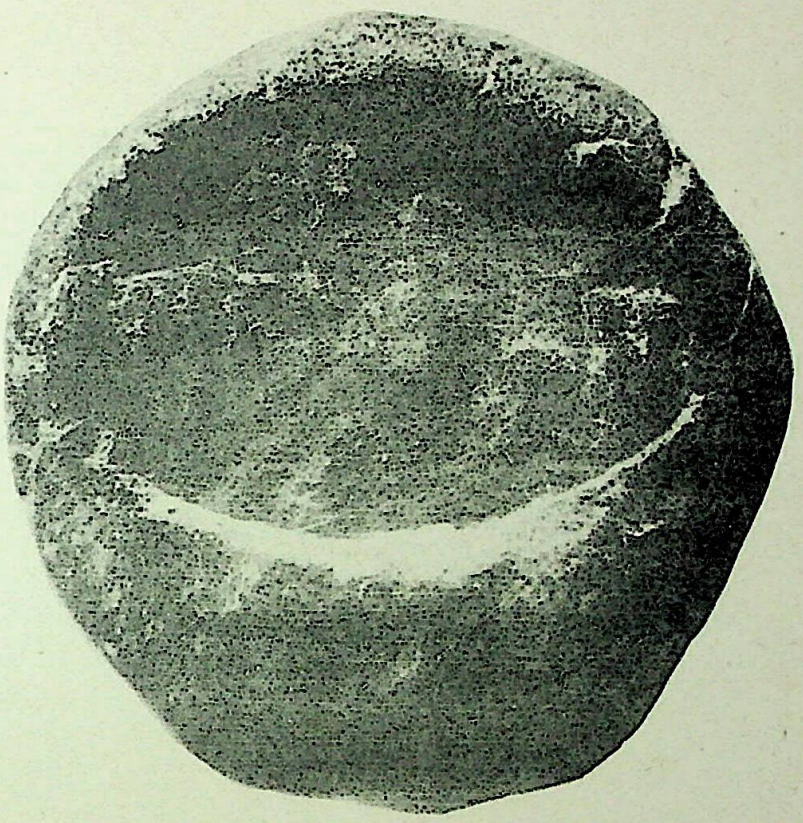

३०१. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

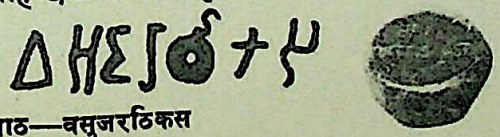

पाठ—वसुजरठिकस

ऊपर अस्पष्ट चिह्न बने हैं।

301. Clay seal of Vasujaraṭhika from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

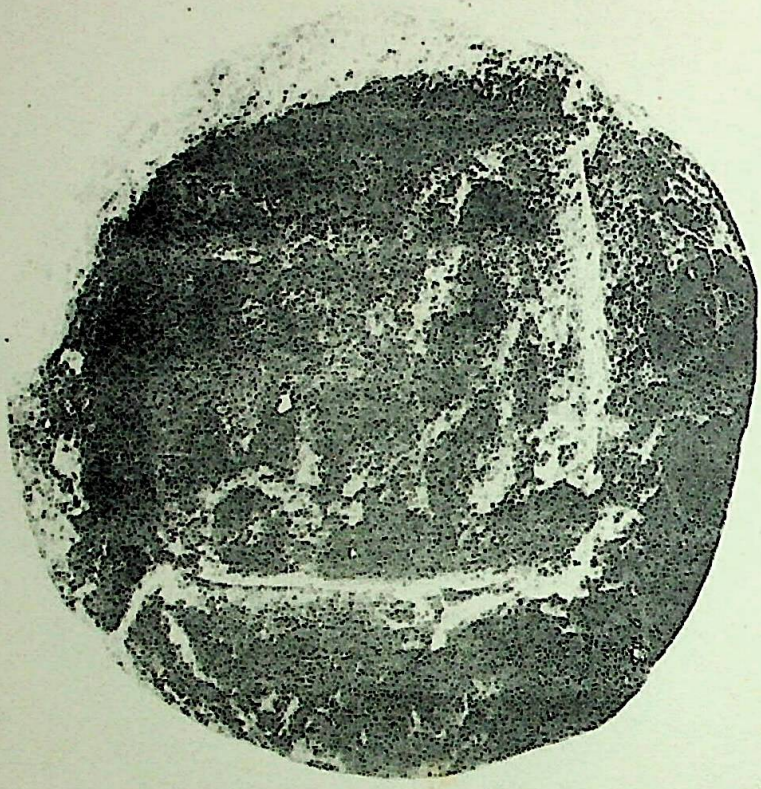

३०२. रहटोइया (अहिच्छत्रा) से प्राप्त मुद्रांक

४५१

पाठ—महादिन

इस पर स्वस्तिक चिह्न बना है।

302. Clay seal from Rahṭoiyā (Ahicchatrā), inscribed *mahā-dina.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

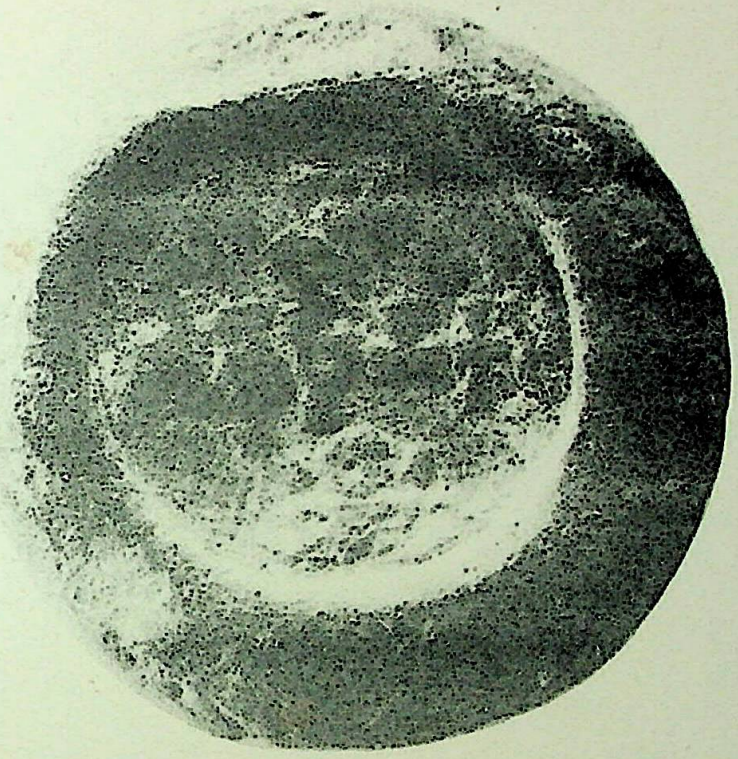

३०३. रहटोइया (अहिच्छत्रा) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—शावादिनकस

लेख के ऊपर चिह्न बना है। लेख के नीचे चिह्न है।

303. Clay seal of Śavādinaka from Rahṭoiyā (Ahicchatrā).

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

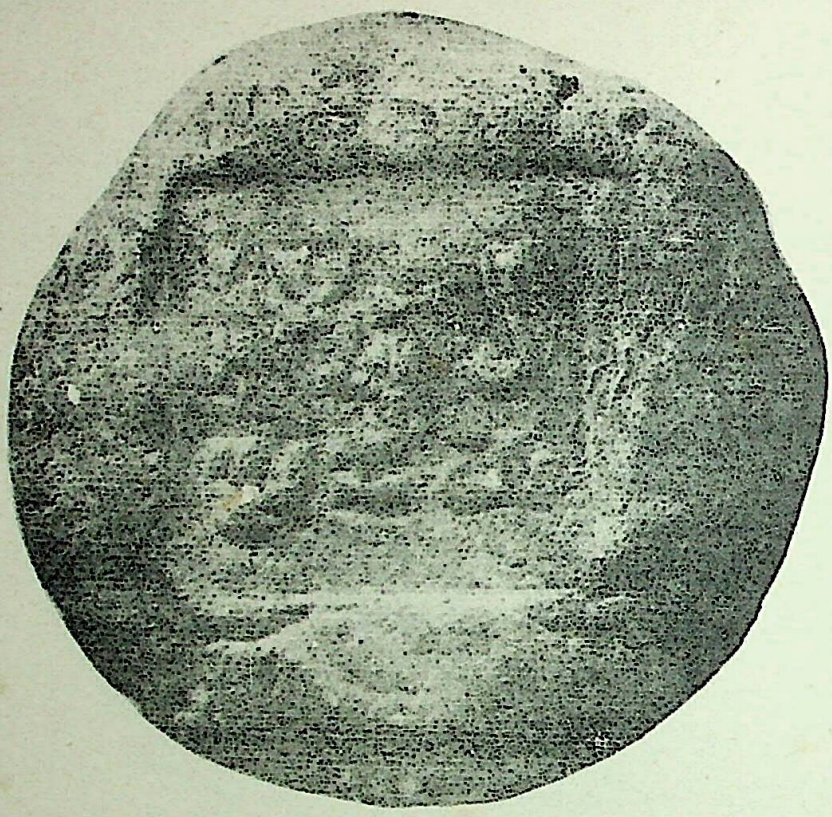

३०४. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—कुम्हकार-
सेणायै

304. Clay seal from Ahicchatrā, inscribed *kumhakāraseṇā-yai.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३०५. अहिच्छत्रा से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

पाठ—कुमारनन्दपु-
त्रस्य देवनन्दस्य

इसमें विपरीत लेख खोदते समय 'पुत्र' शब्द भूल से सीधा खोद दिया गया है।

305. Reverse clay seal of Devananda the son of Kumāra-nanda from Ahicchatrā. The word *putra* has been engraved in obverse by mistake.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

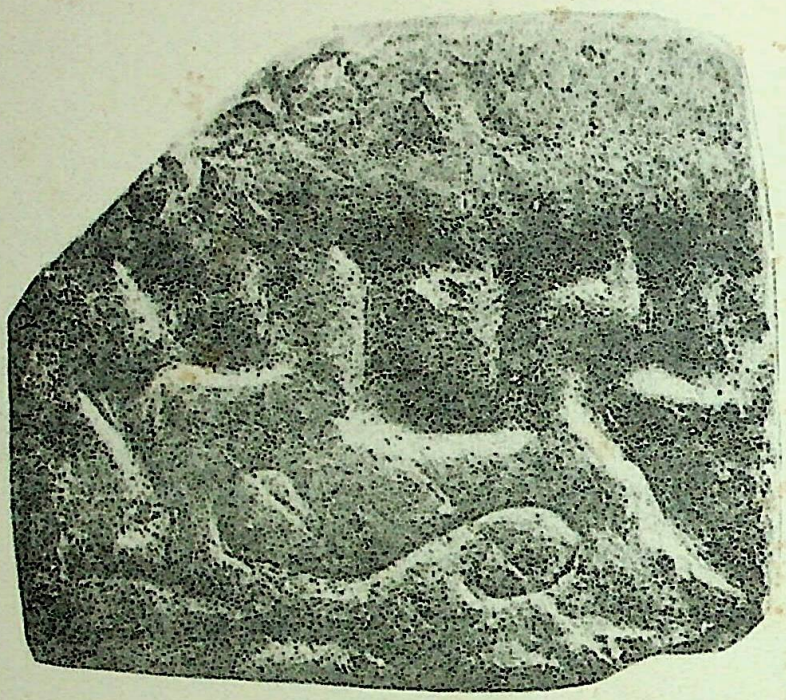

३०६. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

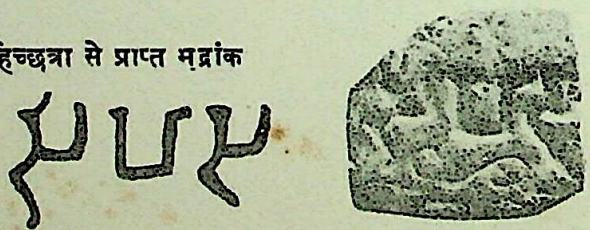

पाठ—सिंहस

306. Clay seal of Siṁha from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३०७. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

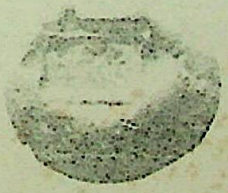

पाठ—नागगुप्त

307 Clay seal of Nāgagupta from Ahicchatrā.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

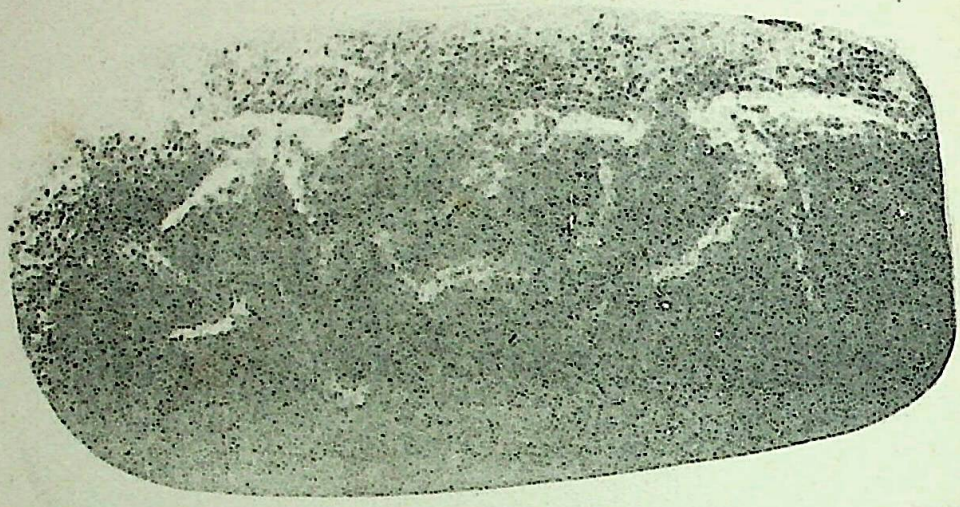

३०८. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—जयते

308. Clay seal from Ahicchatrā, inscribed *jayate*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

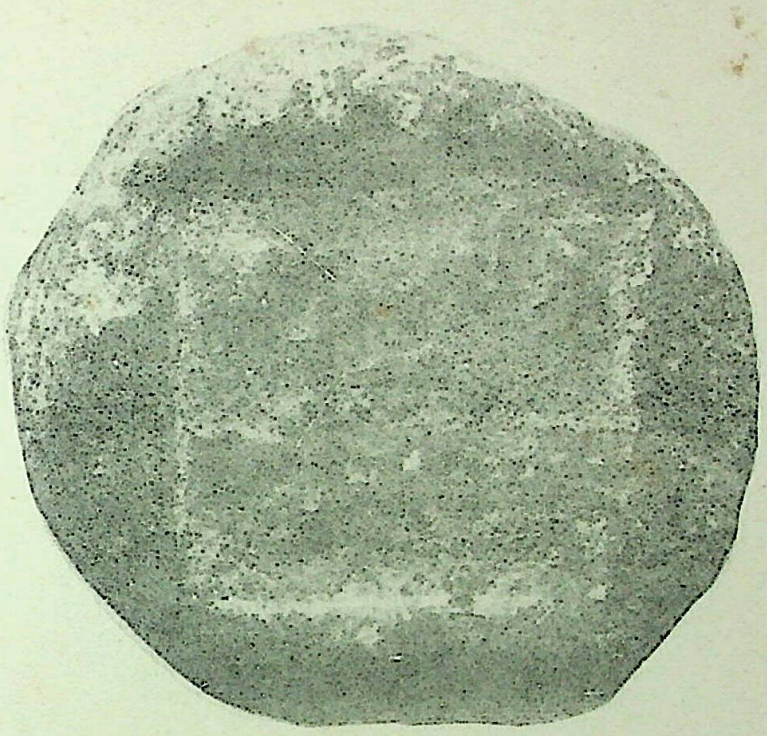

३०९. रहटोइया (अहिच्छत्रा) से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—हरनकरवि-?
हारे संघस

309. Clay seal of the saṅghaḥ in the Haranakara (?) vihāra from Rahṭoiyā (Ahicchatrā).

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१०. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर नन्दी, हाथी, चीता आदि पशु चार बार बने हैं। तले पर मानवाकृति खुदी है।

310. Un-inscribed clay seal from Ahicchatrā, with the depictions of Nandī, elephant, tiger and other animals, repeated four times on four sides.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३११. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर स्त्री पुरुष का चित्र बना है, जिन के सिर पर ♉ ♎ बने हैं।

311. Clay seal from Ahicchatrā with a human couple and the signs ♉ ♎ above them.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१२. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चित्र दो बार बना है, एक बार उभरा हुवा, दूसरी बार खुदा हुवा है ।

312. Clay seal from Ahicchatrā with the sign repeated twice, both engraved in relief and incised below.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१३. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चक्र, त्रिशूल आदि विविध शस्त्रास्त्र बने हैं।

313. Clay seal from Ahicchatrā, with discus, trident and other weapons.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१४. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर बैठे सिंह के आगे चिह्न बना है।

314. Clay seal from Ahicchatrā, with an emblem and lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

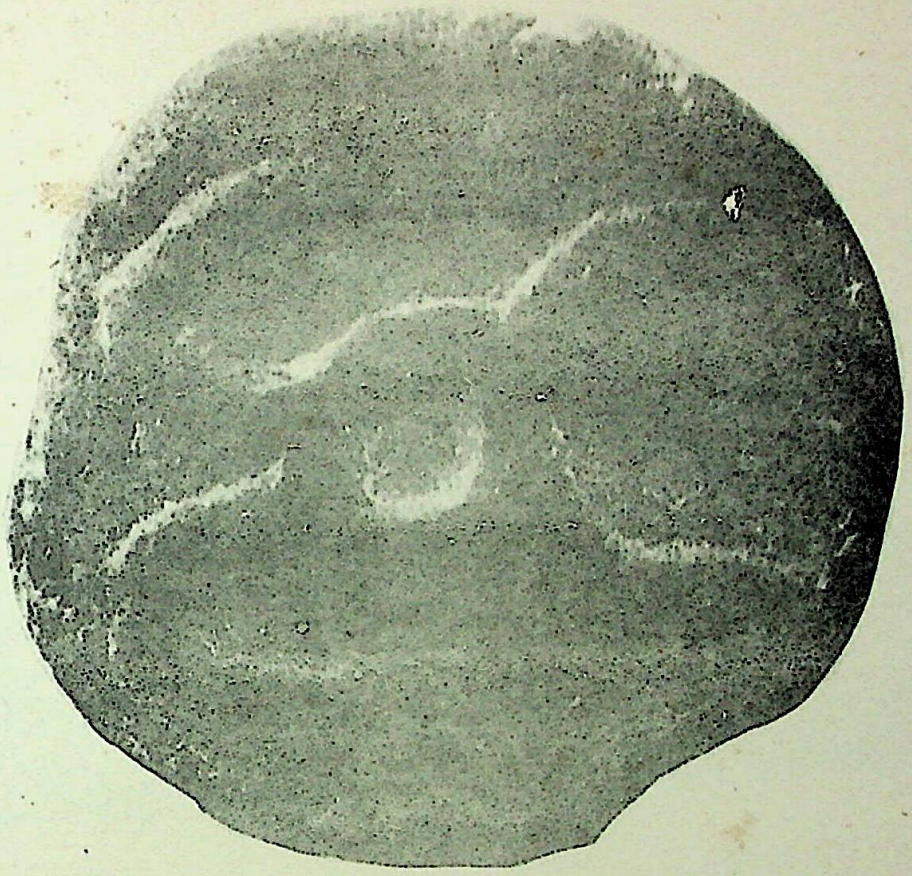

३१५: अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

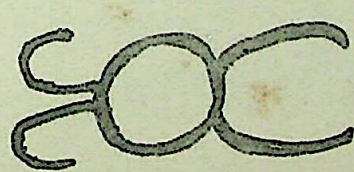

इस पर पाञ्चाल देश का राजकीय चिह्न ꣳ बना है।

315. Clay seal of Ahicchatrā with the state emblem of the Pāñcāla Republic.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१६. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
चौकी पर ब्रह्मा बैठा हुवा चित्रित है।

316. Clay seal from Ahicchatrā with Brahmā on a seat.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१७ अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर एक कुक्कुट और मयूर बना है, और मध्य में ज्योतिस्तम्भ है।

317. Clay seal from Ahicchatrā, depicting a pillar flanked by a cock and peacock.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

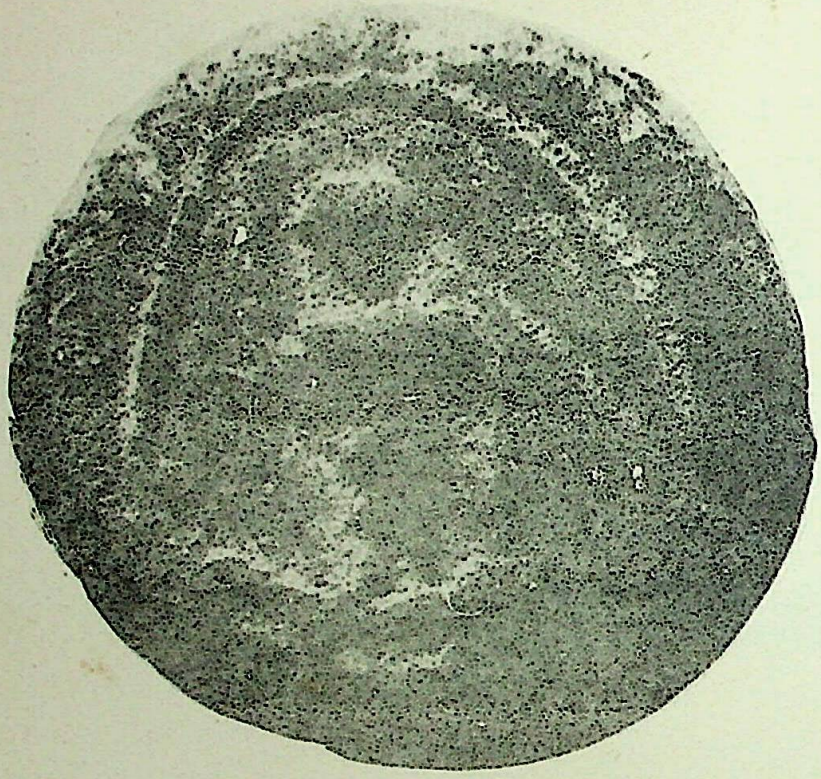

३१८ अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर एक खड़े व्यक्ति का चित्र है।

318. Clay seal from Ahicchatrā, with a standing human figure.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१९. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इसमें सिंह के सामने धार्मिक चिह्न बना है।

319. Clay seal from Ahicchatrā with the sign

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२०. रहटोइया (अहिच्छत्रा) से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चलता हुवा सिंह प्रदर्शित है ।

320. Clay seal from Rahṭoiyā (Ahicchatrā) with a lion walking on a hill.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

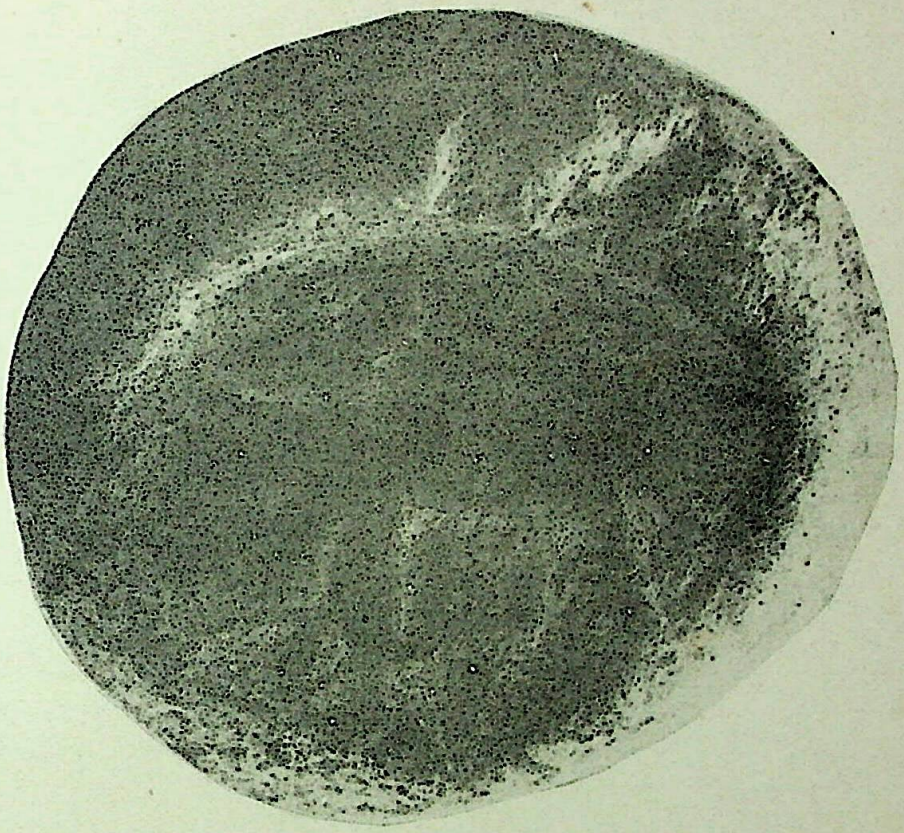

३२१. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चलता हुवा मृग प्रदर्शित है ।

321. Clay seal from Ahicchatrā, with a walking deer.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

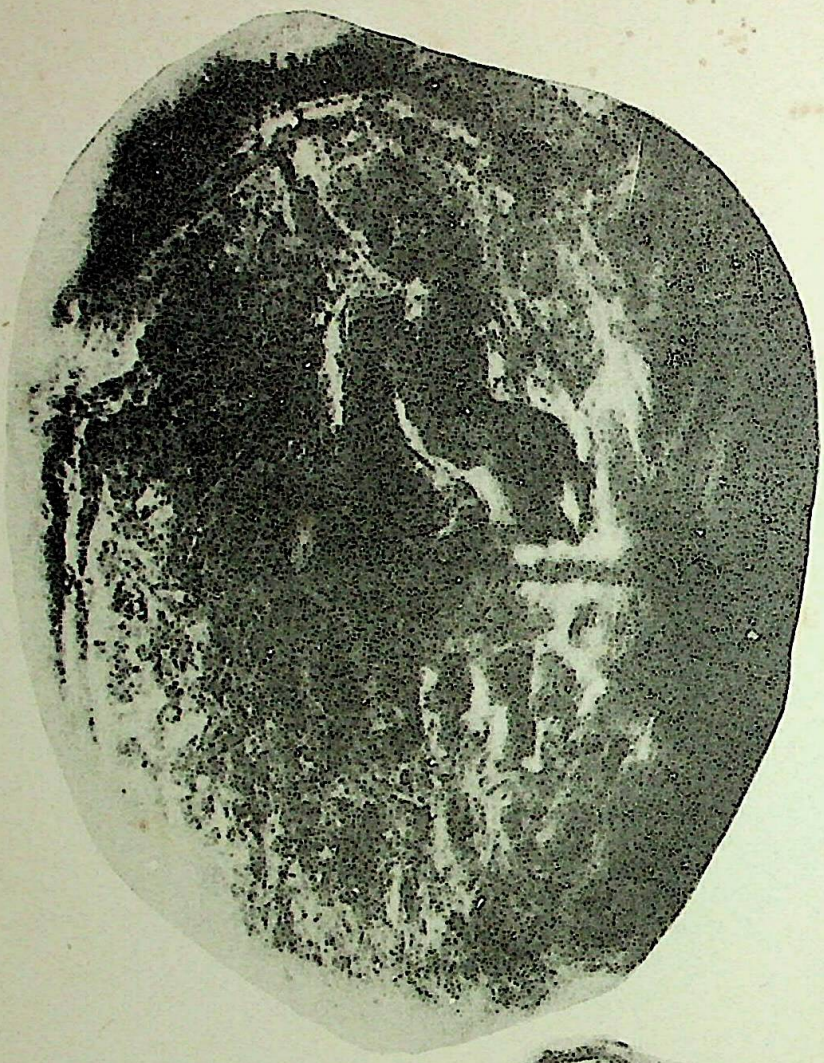

३२२. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

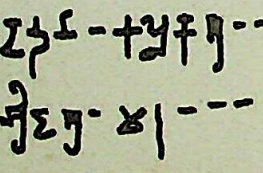

पाठ—दण्डनायक...कत्र...

श्रीज...म.....

ऊपर बैठे हुवे सिंह का चित्र बना है।

322. Clay seal of a daṇḍanāyaka (inscription damaged) from Ahicchatrā with the emblem of a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२३. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक
इस पर चौकी पर बैठा पुरुष दिखाया गया है ।

323. Clay seal from Ahicchatrā, with a person sitting on a stool.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

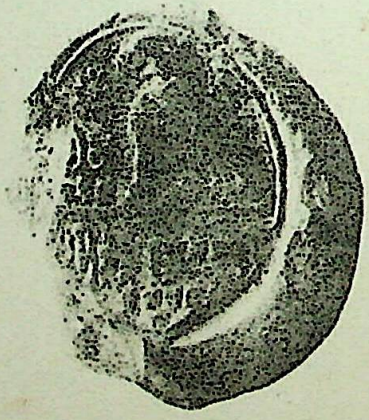

३२४. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

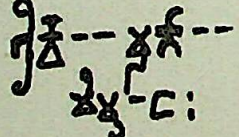

पाठ – श्रीवं...ण्डना...

मिमु .....:

ऊपर सिंह का चित्र है।

324. Clay seal of a daṇḍanāyaka from Ahicchatrā with a lion emblem. The inscription is damaged.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२५. अहिच्छत्रा से प्राप्त मुद्रांक

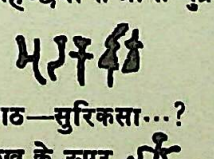

पाठ—सुरिकसा...?

लेख के ऊपर चित्र है ।

325. Clay seal from Ahicchatrā, inscribed *surikasā*..., with a symbol above.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२६. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत ताम्र मुद्रांक

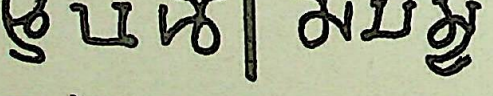

पाठ—सोमस्य

लेख के ऊपर नन्दी यूप से बंधा खड़ा है जिसके आगे पीछे ध्वज हैं।

326. Reverse copper seal of Soma from Kauśāmbī. A Nandī flanked by two flags, dominates over the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२७. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

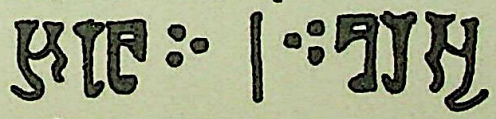

पाठ—ईश्वरस्य

327. Reverse clay seal of Īśvara from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२८. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

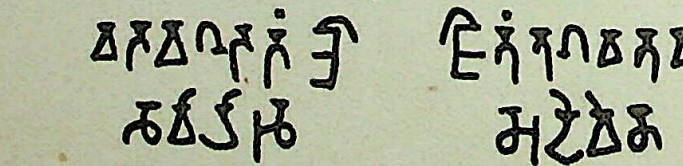

पाठ—जितं भगवत व-
सुदेवेन

लेख के ऊपर शंख और चक्र बने हैं।

328. Reverse votive clay seal from Kauśāmbī dedicated to Vasudeva. Above the inscription are a conch and a discus.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

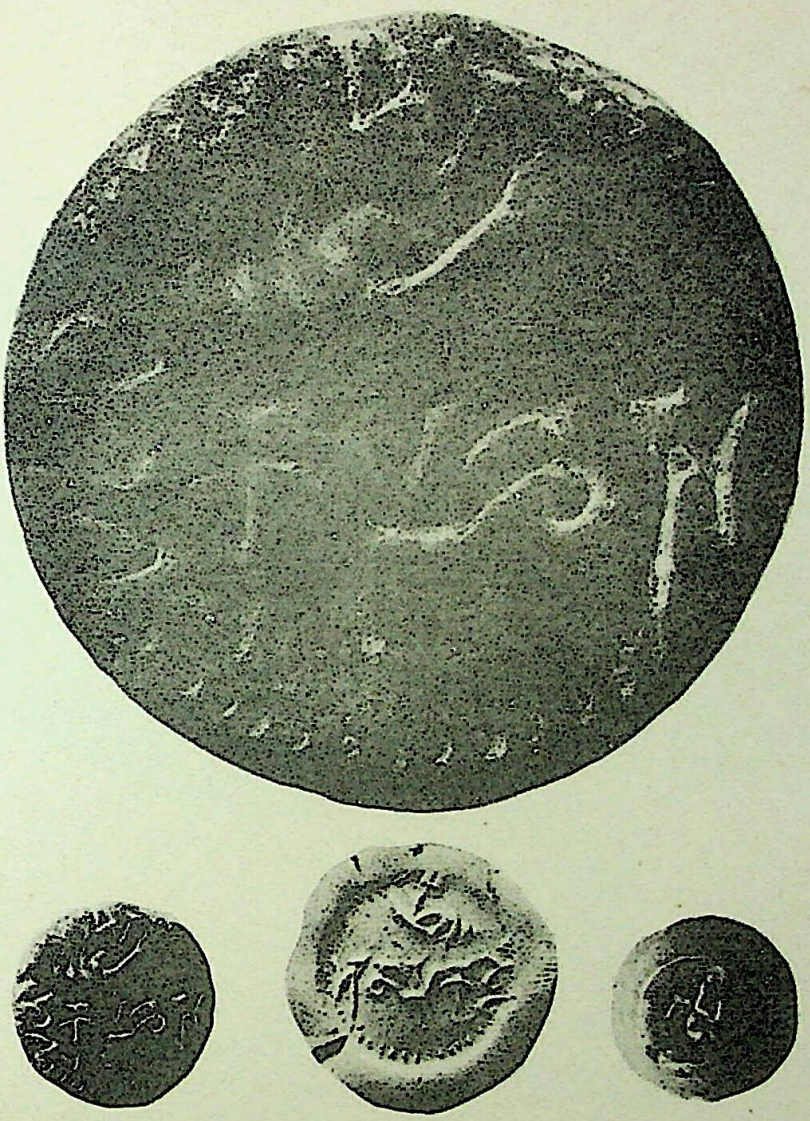

३२९. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

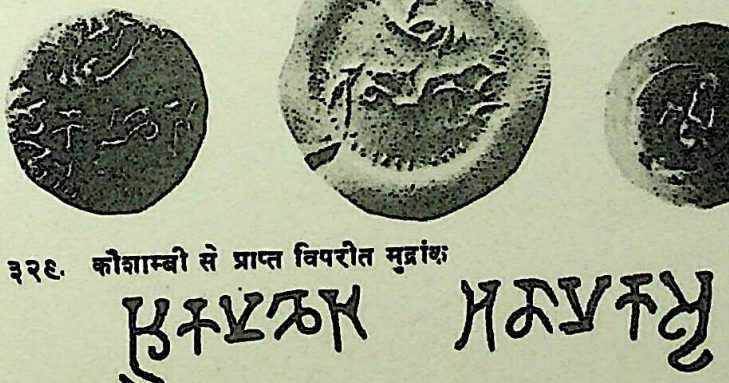

पाठ—अनामकस्य

लेख के ऊपर शंख बना है। मुद्रांक की मूठ पर स्वस्तिक चिह्न है।

329. Reverse clay seal of Anāmaka from Kauśāmbī. Conch above the inscription and a svastika on the handle.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

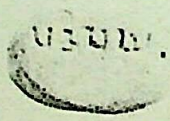

३३०. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

:ꦥꦤꦤ꧀ꦢꦶꦥ | ꦥꦤꦶꦩꦥ:

पाठ—पर्णमघः

330. Reverse clay seal of Parṇamagha from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

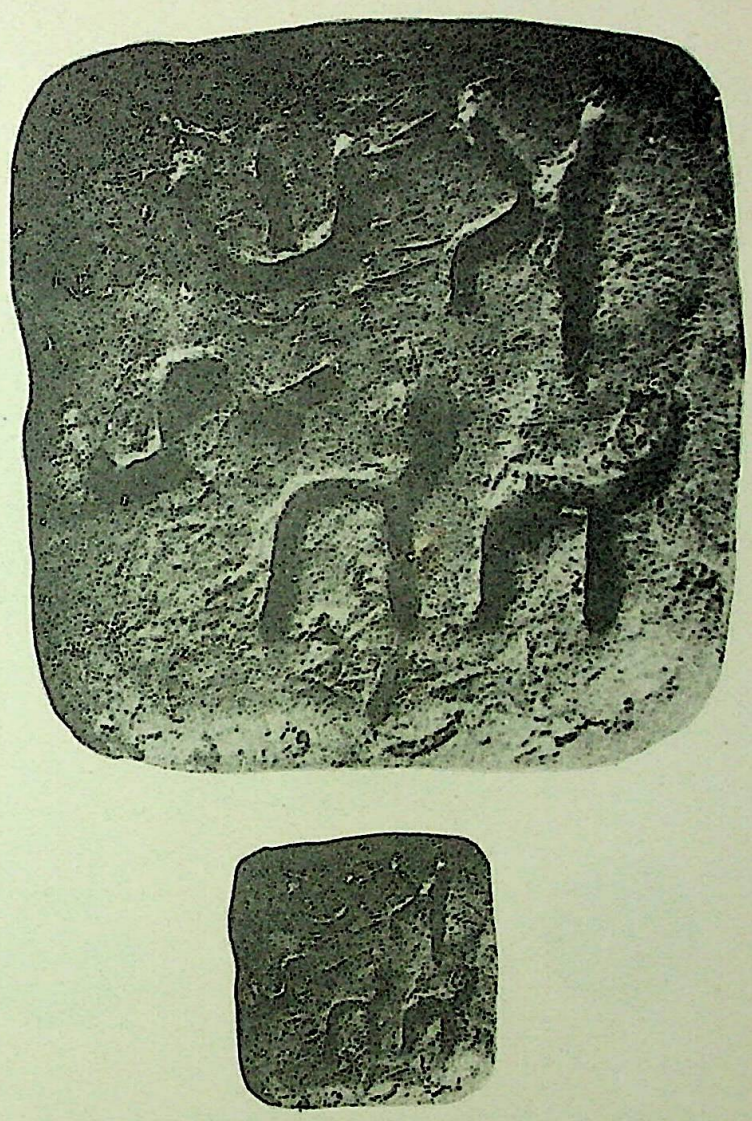

३३१. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

पाठ—अयदासस (=आर्यदासस्य)

इसमें अक्षर सीधे हैं, किन्तु दायें से बायें खुदे हैं।

331. Reverse clay seal of Āryadāsa from Kauśāmbī. The letters are engraved from right to left.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

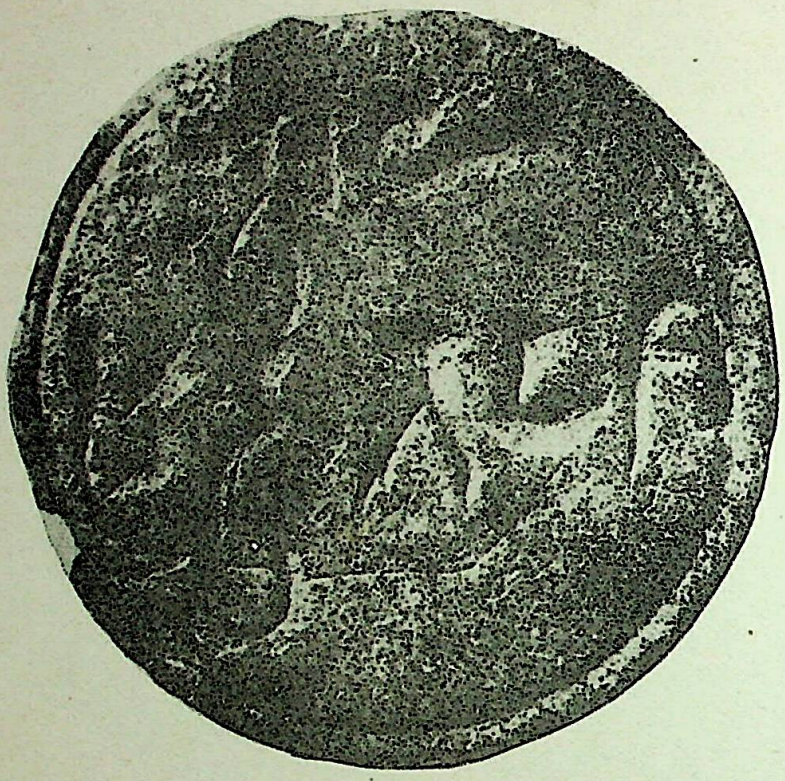

३३२. कौशाम्बी से प्राप्त हस्तिदन्त का विपरीत मुद्रांक

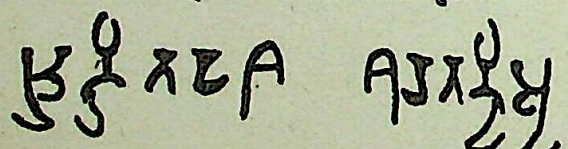

पाठ—शडतन्यीस्य (शडतन्यौस्य ?) शडतत्यीस्य ?

लेख के ऊपर शंख का चित्र है।

332. Reverse ivory seal of Śaḍatanyī (?) from Kauśāmbī. Conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

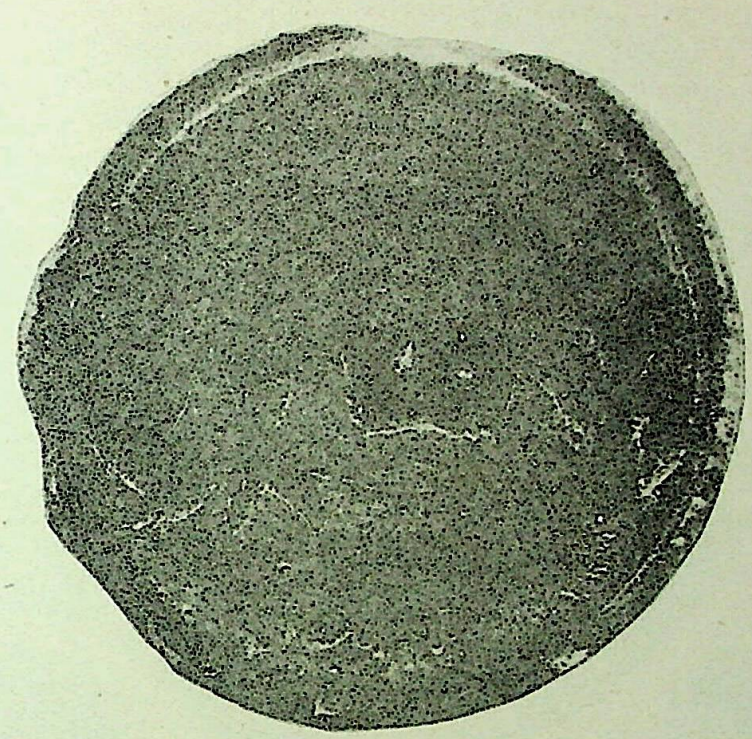

३३३. कौशाम्बी से प्राप्त हस्तिदन्त का विपरीत मुद्रांक

पाठ—भूयतस

333. Reverse ivory seal of Bhūvata from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३३४. कौशाम्बी से प्राप्त पत्थर का विपरीत मुद्रांक

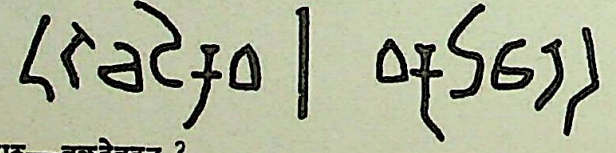

पाठ—वक्रदेवदनु ?

334. Reverse stone seal from Kauśāmbī, inscribed *vakradeva-danu* (?).

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

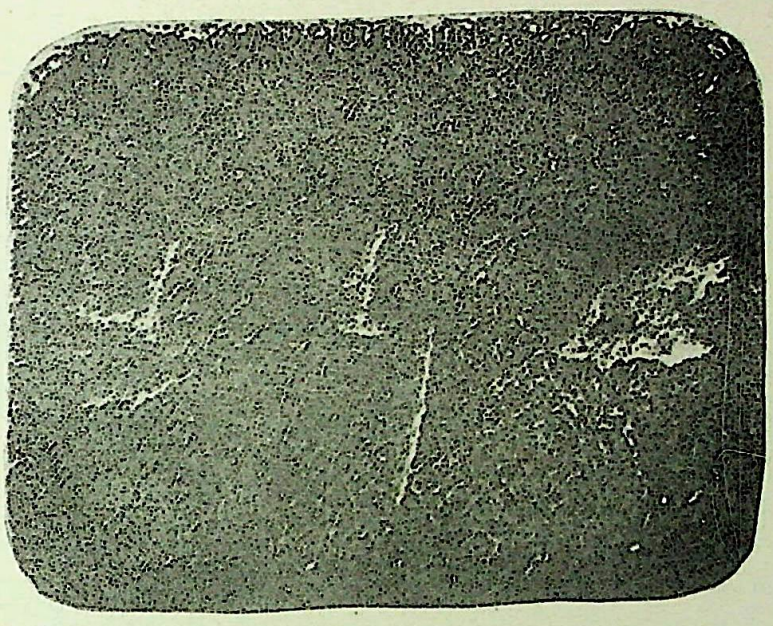

३३५. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत हस्तिदन्त मुद्रांक

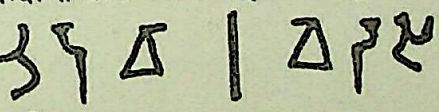

पाठ—वेडस

335. Reverse ivory seal of Veḍa from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

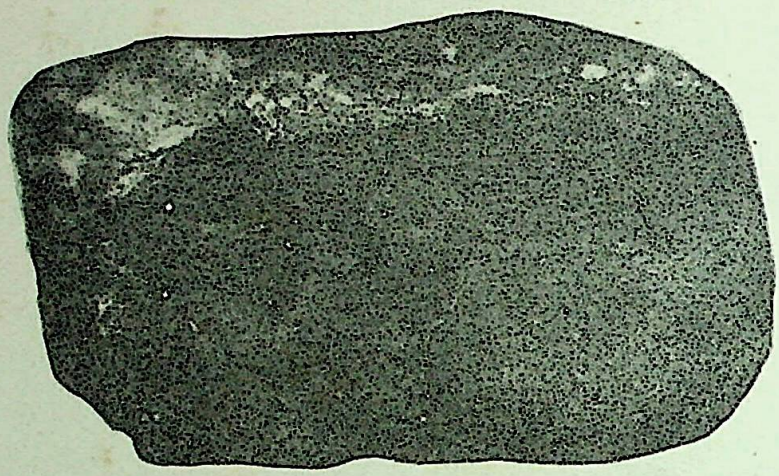

३३६. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

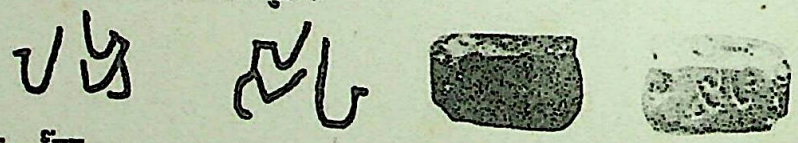

पाठ—सिंह

336. Reverse seal of Simha from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३३७. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

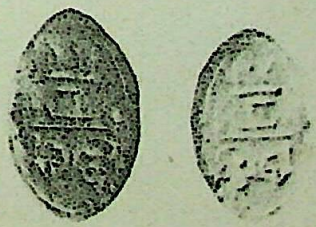

पाठ—सिंह

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है।

337. Reverse seal of Simha from Kauśāmbī, with a temple above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३३८. कौशाम्बी से प्राप्त गोमेदक का विपरीत मुद्रांक

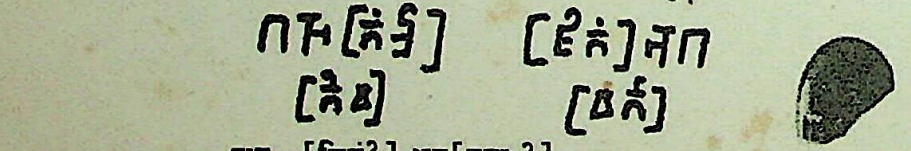

पाठ—[जितं? ] भग[वता ?]

ऊपर किसी देवता का चित्र है ।

338. Reverse votive seal made of *gomedaka* jewel, with a damaged inscription and a deity above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

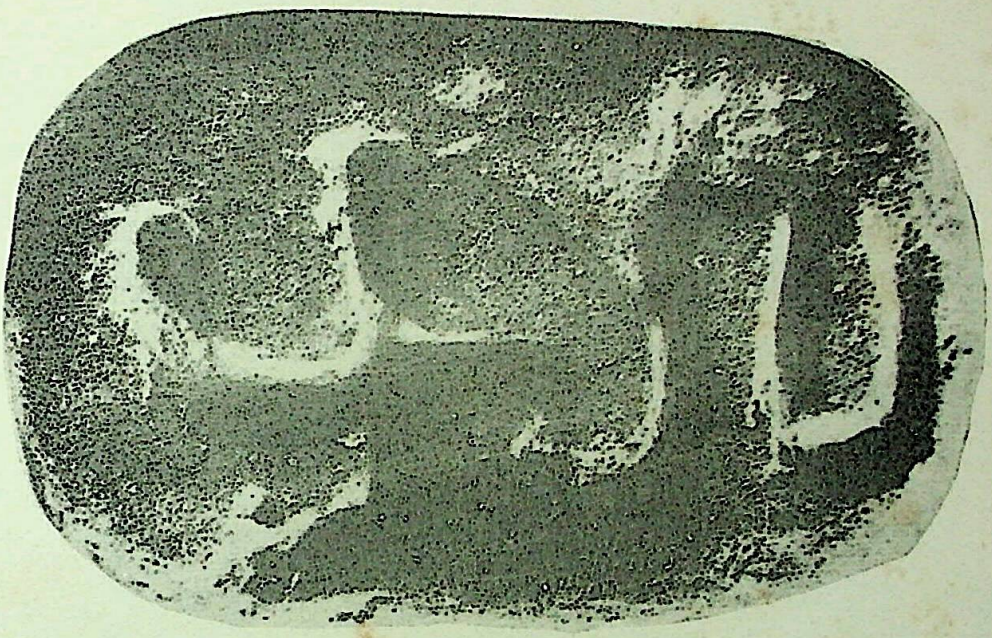

३३९. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

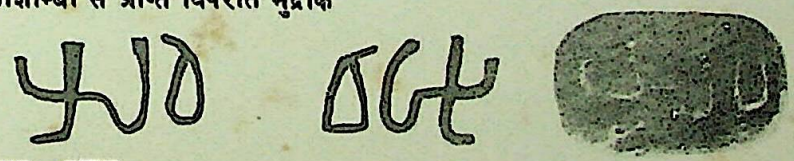

पाठ—वाहस

339. Reverse clay seal of Vāha from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

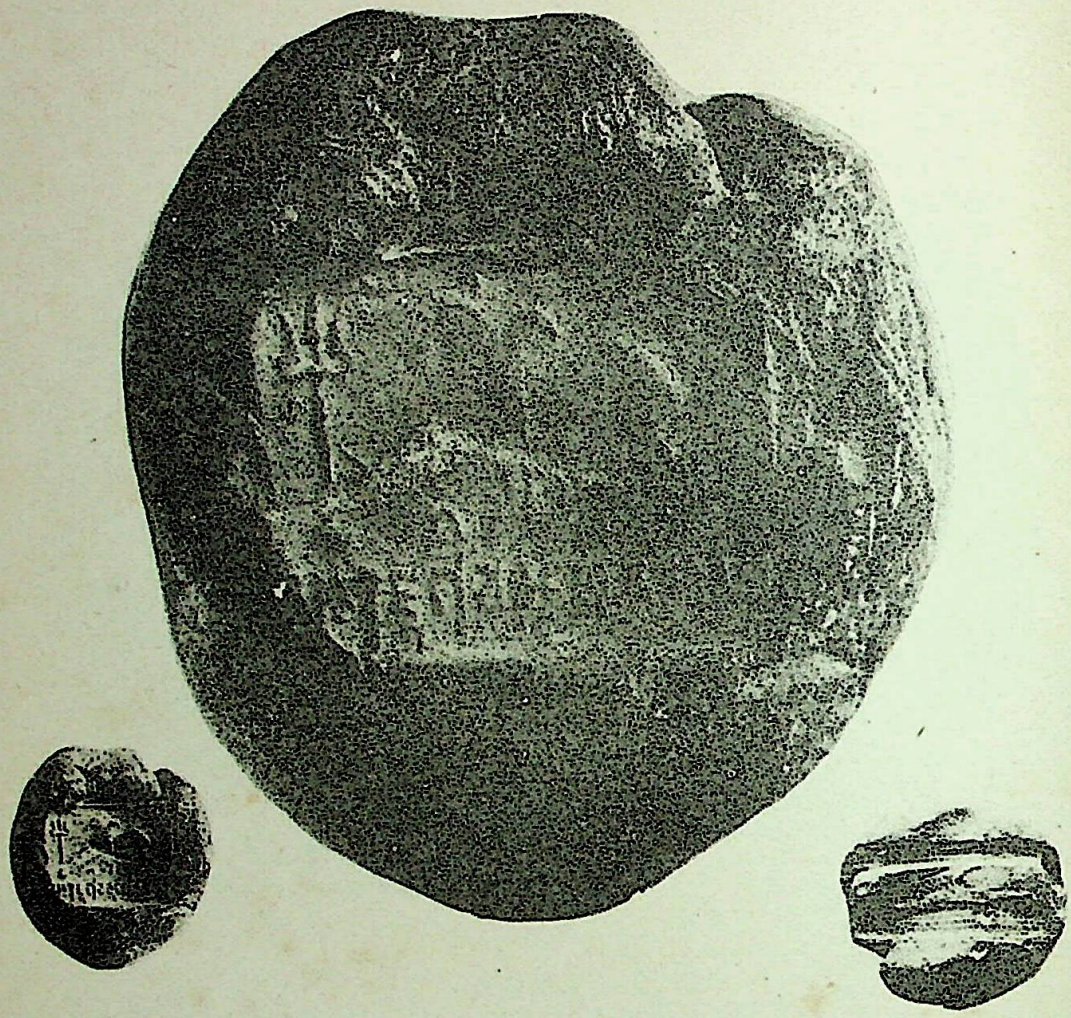

३४०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

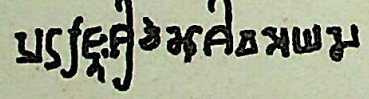

पाठ—महाराज्ञः श्रीचेणुशिवसंघस्य

लेख के ऊपर खड़े नन्दी का चित्र है। नन्दी के आगे त्रिशूल का चित्र।

340. Clay seal of Mahārāja Ceṇuśivasaṅgha from Kauśāmbī. Standing Nandī above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३४१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

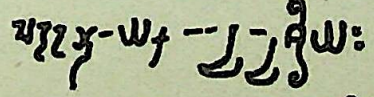

पाठ—महादण्डनायक.....स्यस्य श्रियः

लेख के ऊपर पंख फैलाकर चलते हुवे मयूर का चित्र है ।

341. Clay seal of a mahādaṇḍanāyaka from Kuśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

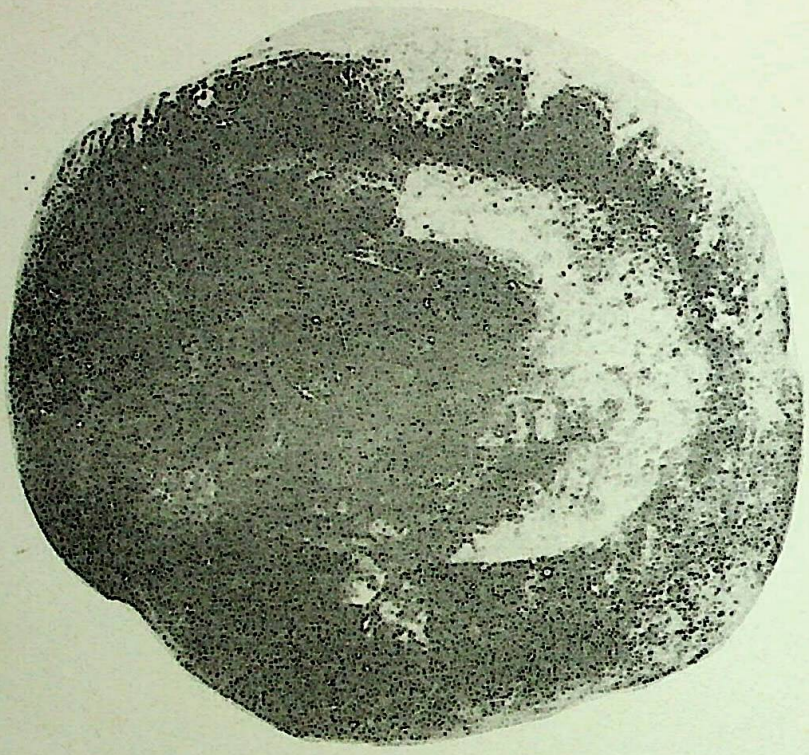

३४२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

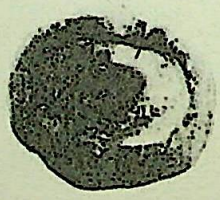

--ते-ध+मुपा---

पाठ—...धि...यक...स्य पुर-

लेख के ऊपर बैठे हुवे नन्दी का चित्र है ।

342. Clay seal from Kauśāmbī, with damaged inscription, and a seated Nandī above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३४३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

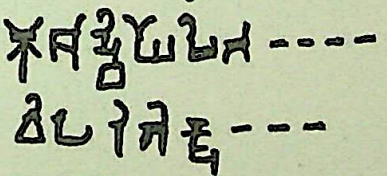

पाठ—कौशाम्बिघोषिता[राममहा-]
विहारे भिक्षु[संघस्य]
लेख के ऊपर धर्मचक्र के दोनों ओर मृग।

343. Clay seal of the bhikṣu-saṅgha of the great monastery of Ghoṣitārāma of Kauśāmbī, obtained from Kauśāmbī. On top is the Buddhist symbol of the dharmacakra flanked by two deer.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

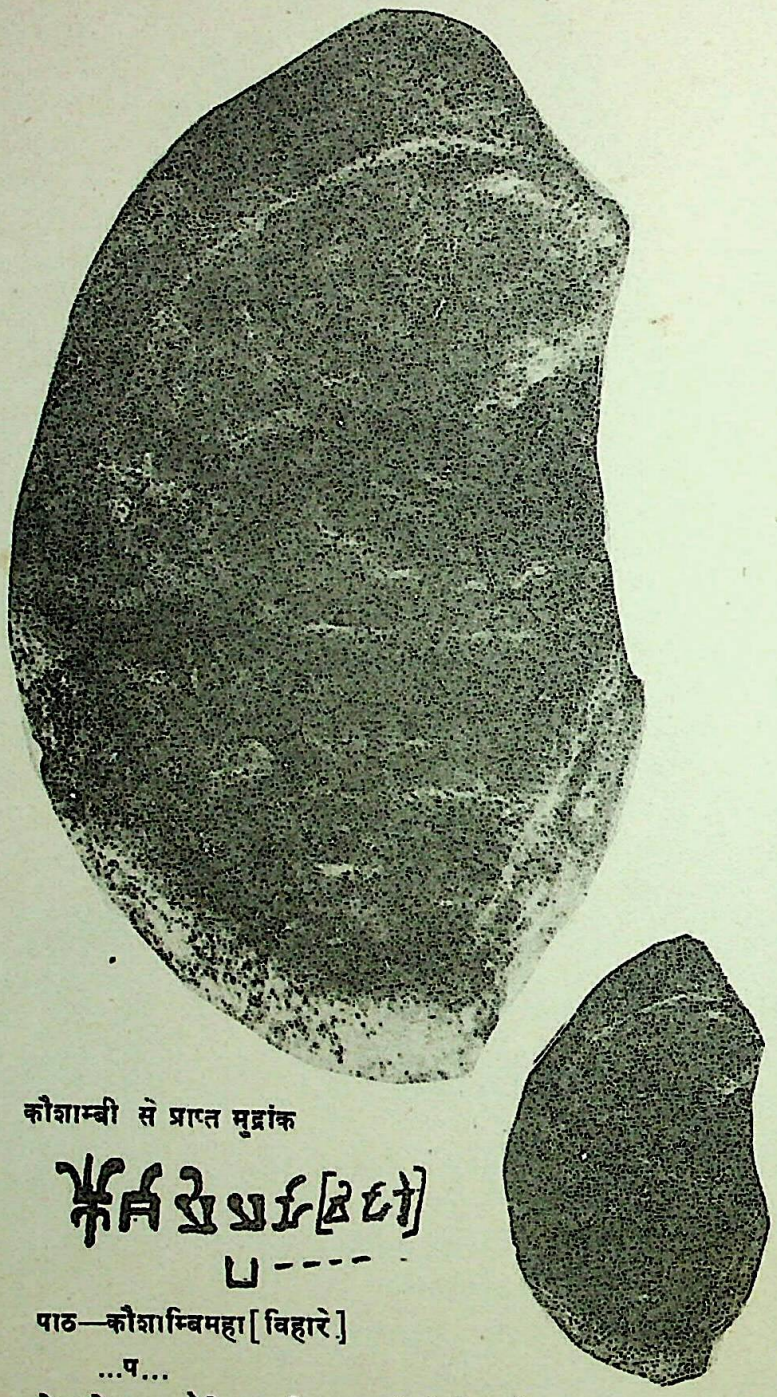

३४४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक



पाठ—कौशाम्बिमहा[विहारे]

...प...

लेख के ऊपर सेविका-सहिता लक्ष्मी चित्रित है।

344. Clay seal of the Kauśāmbi-mahāvihāra, from Kauśāmbī. Lakṣmī with her attendant above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३४५. कौशाम्बी से प्राप्त ताम्र मुद्रांक

श्रीमद्यशःकर्णदेवः॥

पाठ—श्रीमद्यशःकर्णदेवः ॥

लेख के ऊपर गजलक्ष्मी तथा नीचे नन्दी का चित्र है।

यह मुद्रांक ताम्रपत्रों के साथ मिला है।

345. Copper seal of Yaśaḥkarṇadeva from Kauśāmbī, found alongwith the copper-plates. Gaja-Lakṣmī above the inscription and Nandī below it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

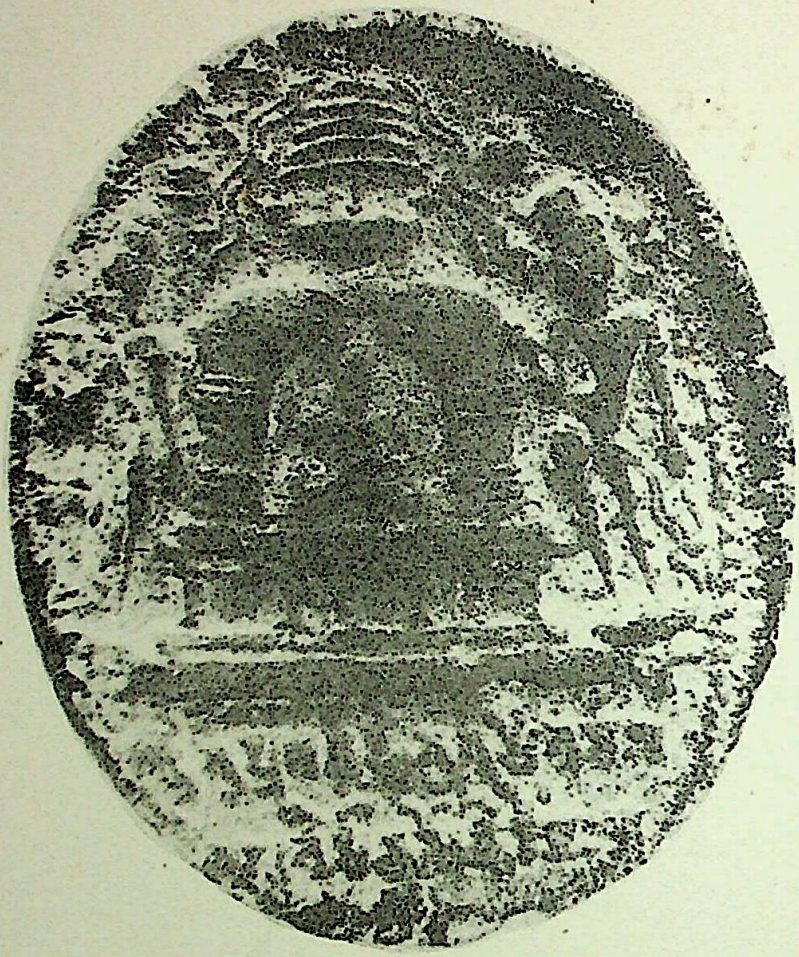

३४६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

---

पाठ—[ये धर्मा] हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथाग-
[तो ह्यव]दत् तेषां च यो निरोध ए-
वं वादी महाश्रमणः ॥]

लेख के ऊपर बौद्ध स्तूप में मूर्ति है और दोनों ओर बोधिसत्त्व खड़े हैं।

346. Clay seal from Kauśāmbī with the Buddhist formula *ye dharmā*... Above the inscription is a stūpa with an image, flanked by two Bodhisattvas.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३४७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

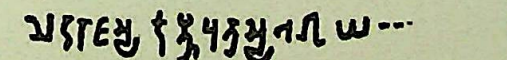

पाठ—महाराजस्य कान्तिपुत्रस्य.....

लेख के ऊपर खड़े नन्दी का चित्र तथा नीचे चिह्न है।

347. Clay seal of Mahārāja Kāntiputra...from Kauśāmbī. Above the inscription is a standing Nandī and the symbol below it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३४८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

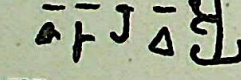

पाठ—.....व स्य

लेख के नीचे नन्दी खड़ा है।

348. Clay seal from Kauśāmbī, with a damaged inscription above which is a standing Nandī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

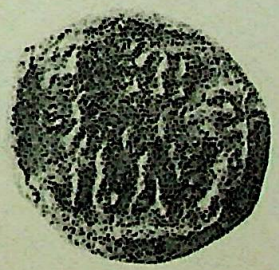

३४९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

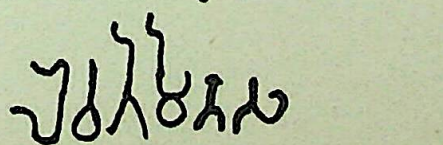

पाठ—लेवतीमितस (=रेवतीमित्रस्य)

इसमें चिह्न बने हैं।

349. Clay seal of Revatīmitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

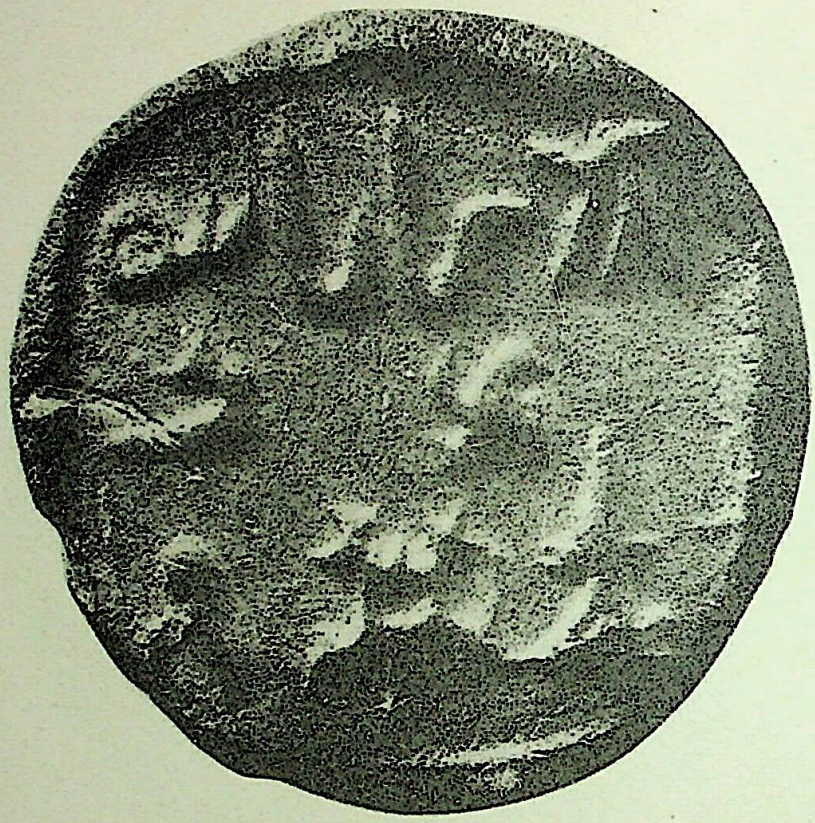

३५०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

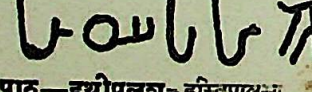

पाठ—हथीपलश=हस्तिपालस्य

इसपर (कच्छप), चिह्न हैं।

350. Clay seal of Hastipāla from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—राधमितस सिन्थाद्वारे

इस पर [illegible] चिह्न बने हैं।

351. Clay seal of Rādhamitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

हमतश

पाठ—हमतश

352. Clay seal of Hamata from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५३. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

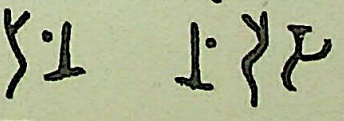

पाठ—नन्दिस

इस पर चिह्न तथा मूठ पर चिह्न हैं।

353. Reverse clay seal of Nandī from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

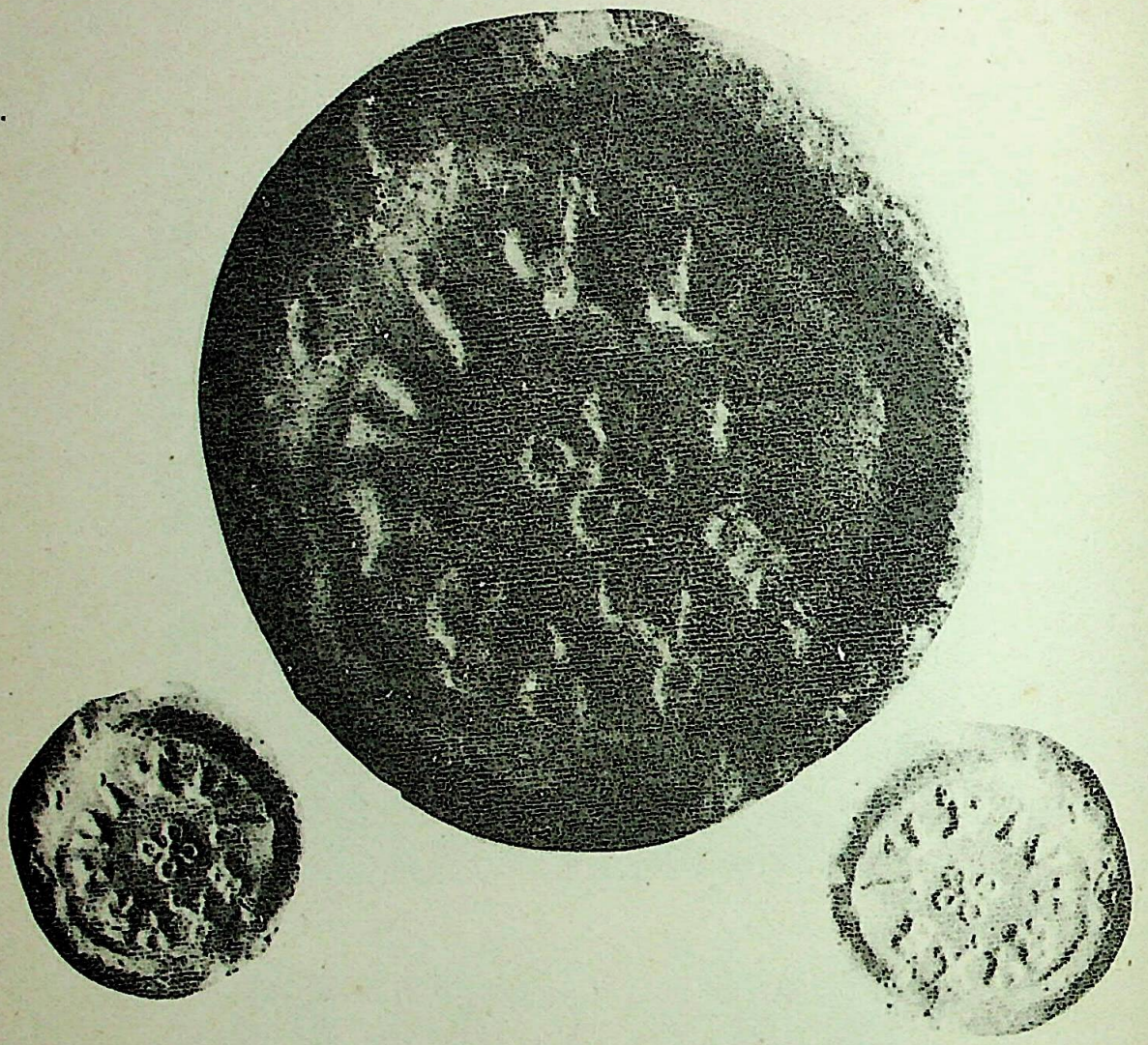

३५४. कौशाम्बी से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

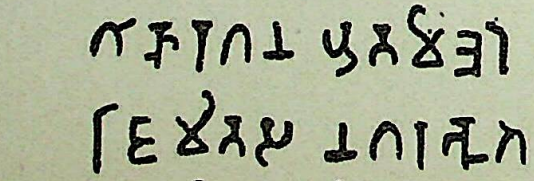

पाठ—राजमितस नगरभूते

लेख के मध्य ० चिह्न है।

354. Reverse clay seal of Rājamitra from Kauśāmbi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

[ह] [illegible] [illegible]

पाठ-[ज] यघोष [स्य]

इस पर शंख का चित्र है ।

355. Clay seal of Jayaghoṣa from Kauśāmbī, with a conch above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

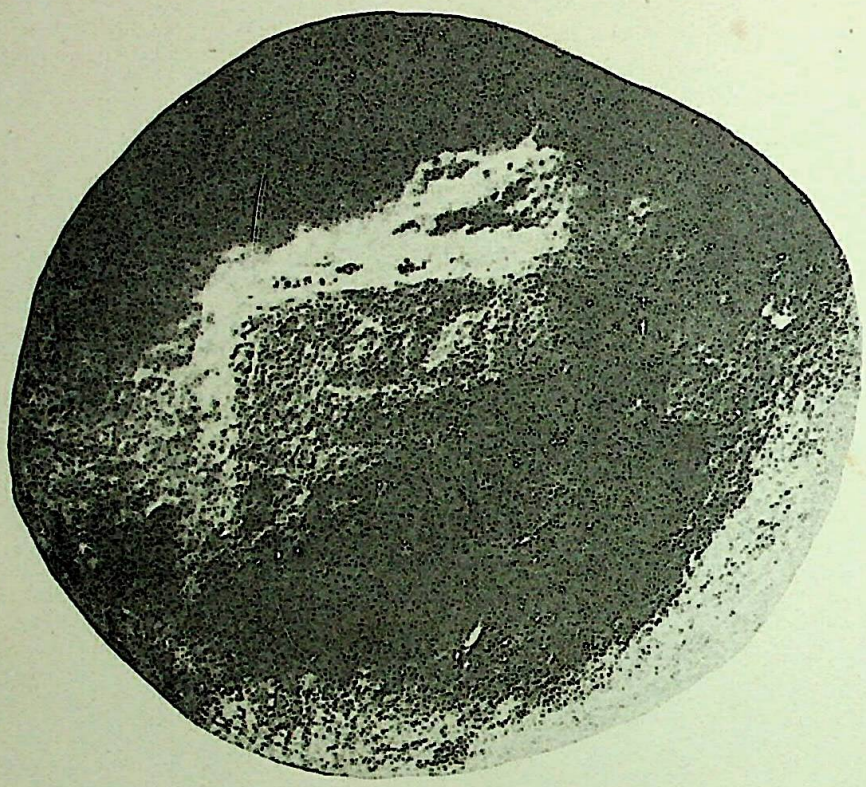

३५६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—केशवगुप्त

लेख के ऊपर चिह्न बना है।

356. Clay seal of Keśavagupta from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

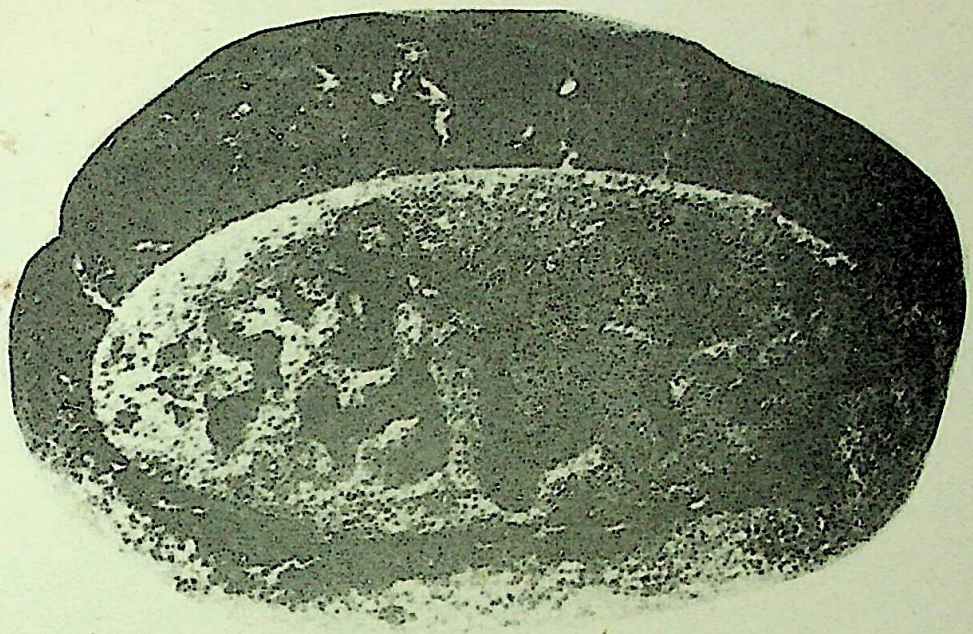

३५७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—इदमितस (=इन्द्रमित्रस्य)

लेख के ऊपर ☸ चिह्न हैं।

357. Clay seal of Indramitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३५८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

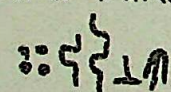

पाठ—इन्द्रदिनश

इस पर [illegible] चिह्न बने हैं।

358. Clay seal of Indradina (=Indradatta) from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

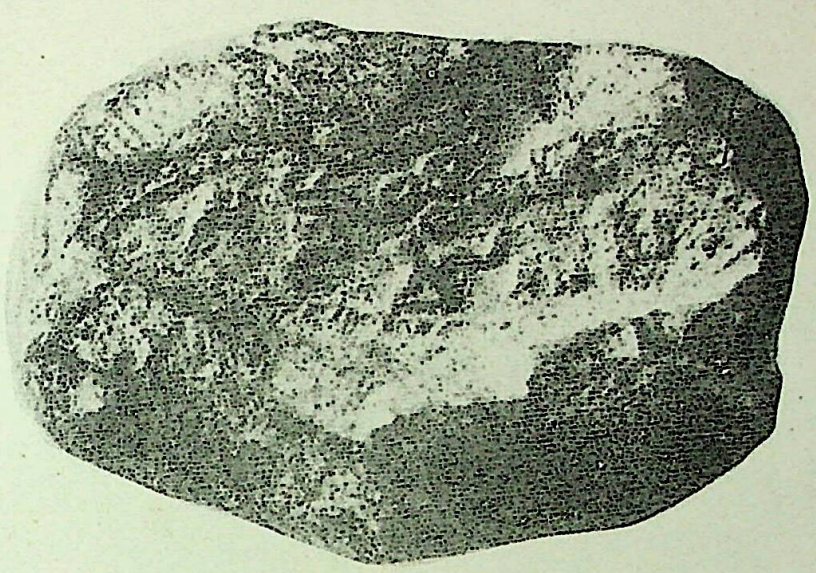

३५९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—[रा]जमितस

इस पर चिह्न बने हैं।

359. Clay seal of Rājamitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

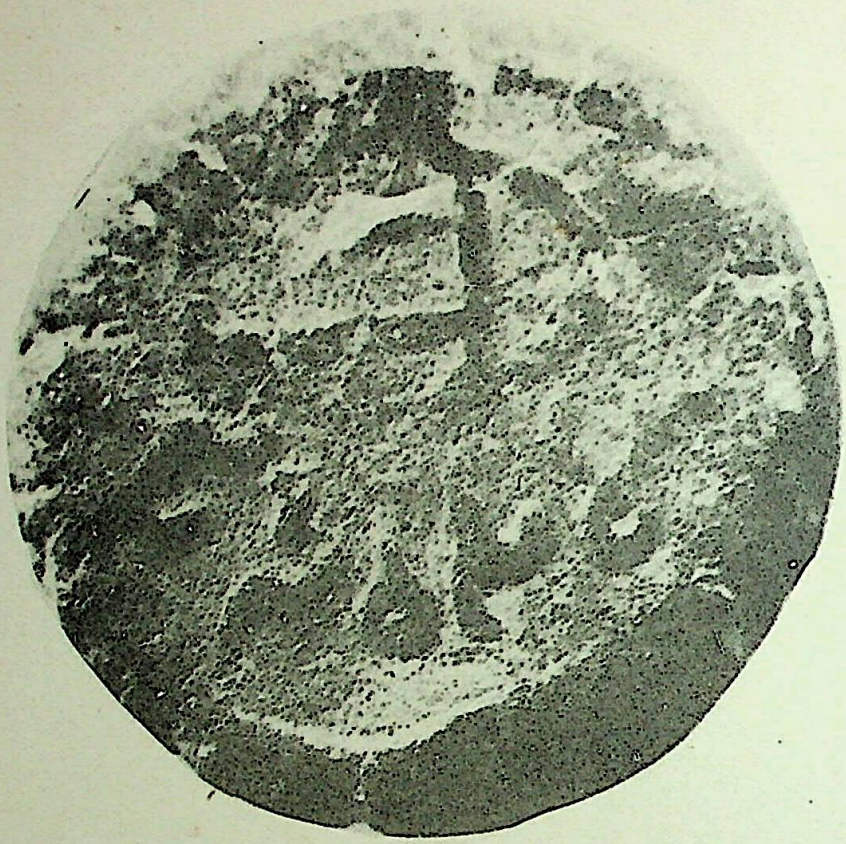

३६०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

६३८४-

पाठ—सिदेवस म -

लेख पर ⊢ चित्र है ।

360. Clay seal of Simhadeva from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

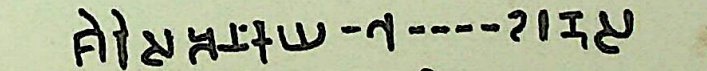

पाठ—शिरिसप्तनं कय...भ.....कणिस

मुद्रांक के मध्य में चिह्न है।

361. Clay seal from Kauśāmbī with a damaged inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

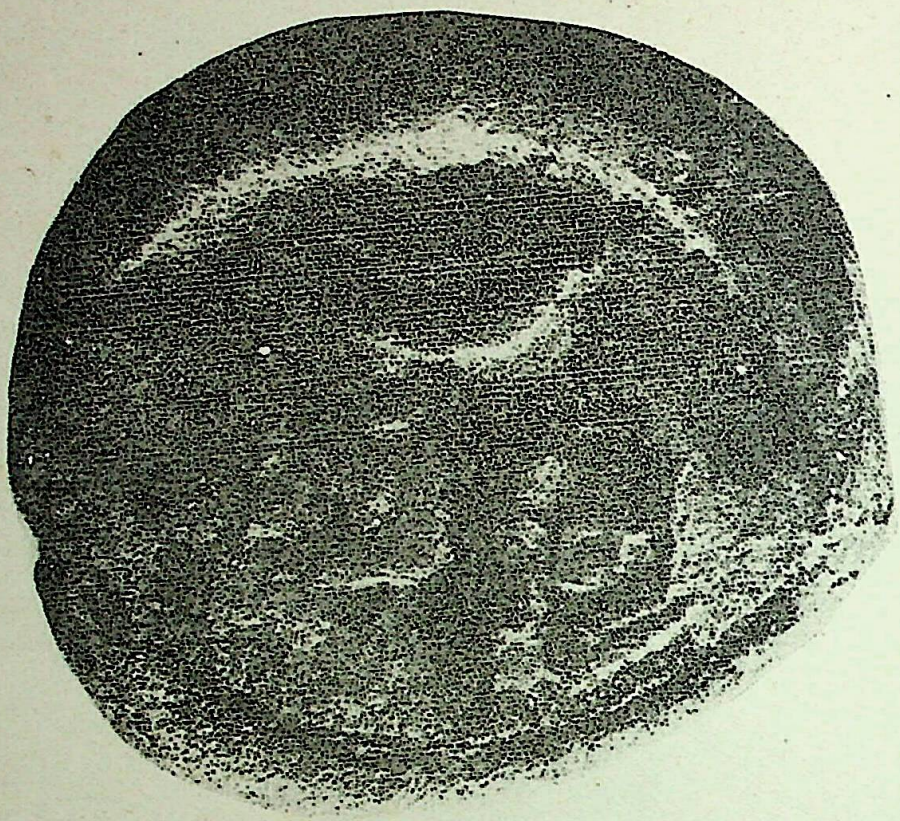

३६२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—कुमारस्य

लेख के ऊपर अर्धचन्द्र है।

362. Clay seal of Kumāra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

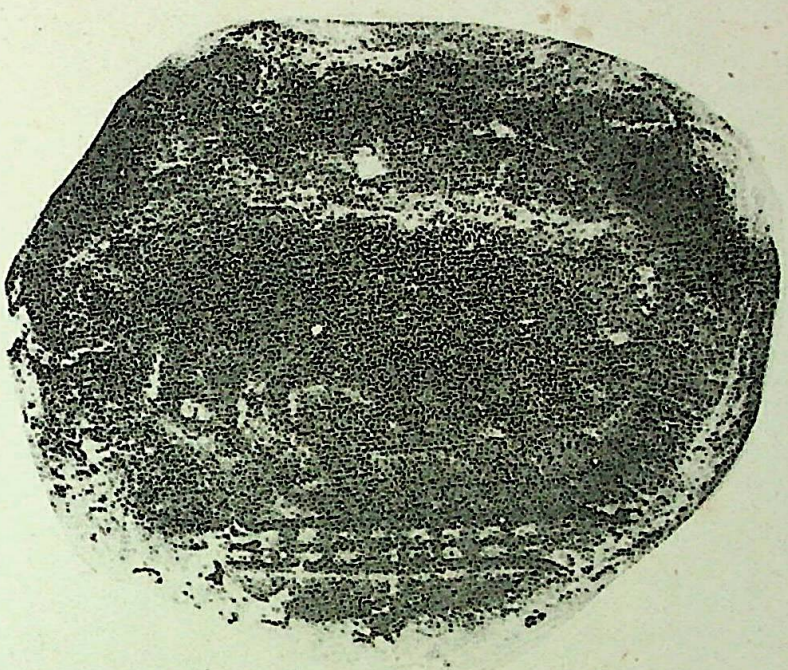

३६३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—भट्टिमितस

लेख के प्रारम्भ में गदा तथा शस्त्र बने हैं।

363. Clay seal of Bhaṭṭimitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

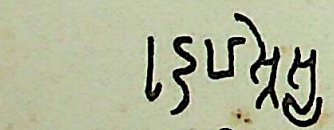

पाठ—रुद्रहस्तिस्य

लेख के आदि और अन्त में दो शक्ति के चित्र हैं।

364. Clay seal of Rudrahastī from Kauśāmbī. Two spears flank the left and right sides of the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

[की]ᴧ□ᴗᴌ

पाठ—[ना]गबलस्य

लेख के ऊपर बेल, बूटे, पुष्प हैं।

365. Clay seal of Nāgabala from Kuśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—भोनु?पुत्र वग्गं—
घोष
नाम के ऊपर पुष्प का चित्र है।

366 Clay seal of Varggaghoṣa? son of Bhonu? from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

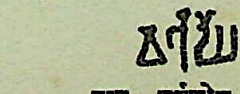

पाठ—वग्गघोष

लेख के ऊपर डाल पर उल्लू सदृश पक्षी बैठा है।

367. Clay seal of Vargaghoṣa from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

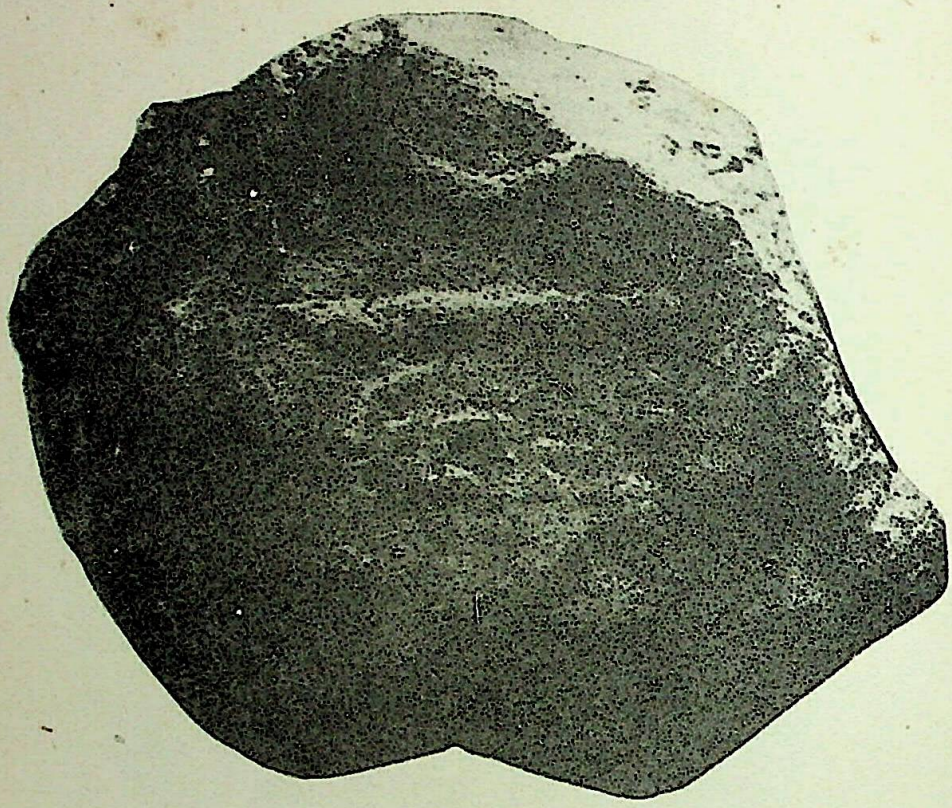

३६८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

𑀦𑀸𑀕𑀲𑁆

पाठ—नागश[र्म]

लेख के ऊपर अर्धचन्द्र बना है।

368. Clay seal of Nāgaśarma from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

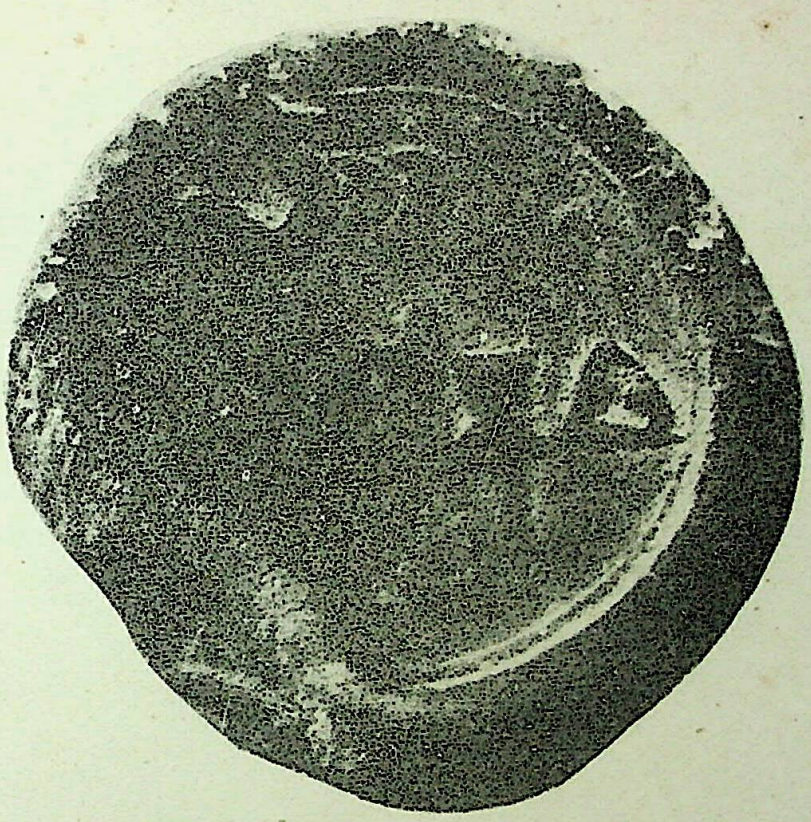

३६९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—...टिकव

लेख के ऊपर शंख का चित्र है।

369. Clay seal from Kauśāmbī, with a damaged inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३७०. कौशाम्बी से-प्राप्त मुद्रांक

पाठ—इष्टदत्तस्य (लेख के उपर कलश का चित्र है)

दूसरी ओर अस्पष्ट लेख है।

370. Clay seal of Iṣṭadatta from Kauśāmbī. Kalaśa (pot) above the inscription. Reverse illegible.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३७१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

+IC५ ---०५....

एक स्थान पर पाठ—करटस । यह पाठ सात बार है । इसके अन्त में त्रिशूल बना है ।

दूसरे स्थान पर पाठ--...वस...। यह पाठ दो बार है, लेख त्रुटित है ।

371. Clay seal of Karaṭa(?) from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

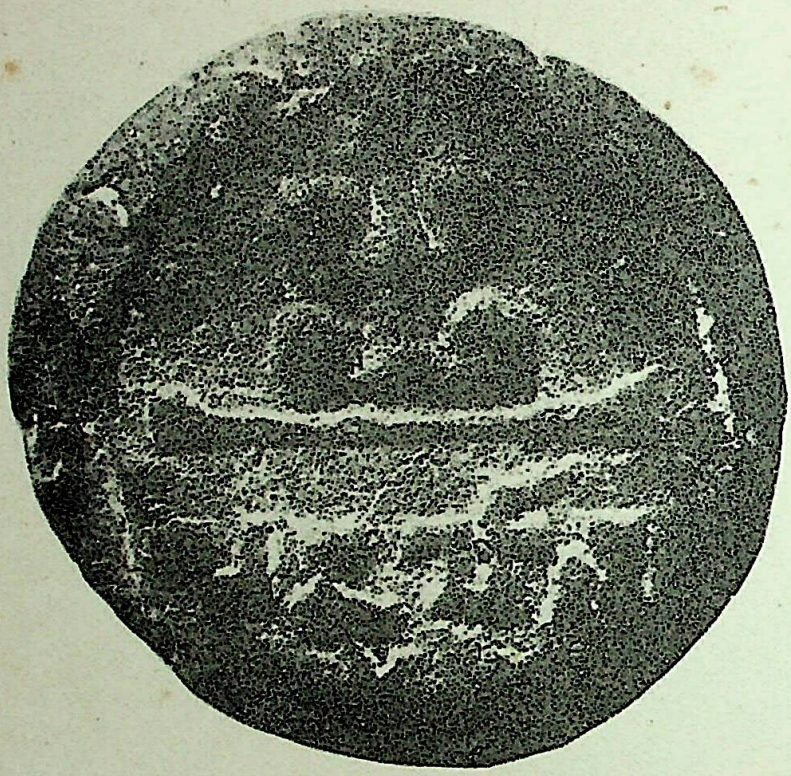

३७२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पण्यलाभ

पाठ—पण्यलाभ

लेख के ऊपर चिह्न है।

372. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *paṇyalābha*, for success in business.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३७३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—पद्मनाभ

लेख के ऊपर चक्र का चित्र है।

373. Clay seal from Kauśāmbī inscribed *padmanābha*, with a discus above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

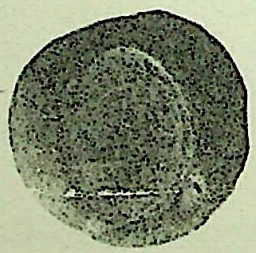

३७४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
पाठ—अस्पष्ट
ऊपर नाचते हुवे मयूर का चित्र।

374. Clay seal from Kauśāmbī bearing the figure of a dancing peacock. Inscription indistinct.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

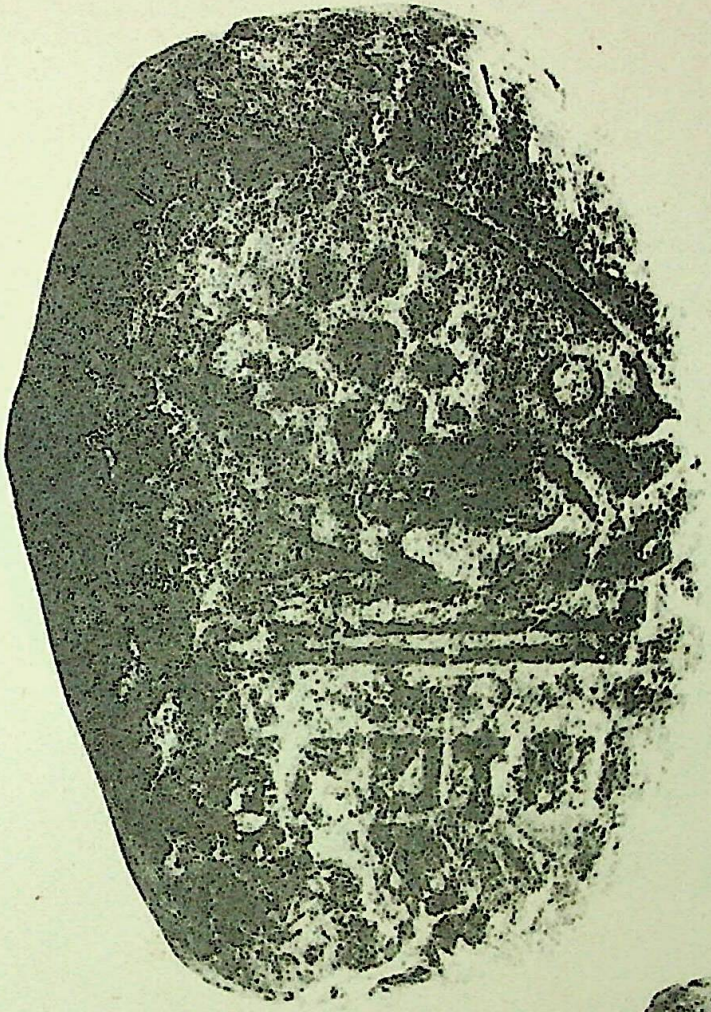

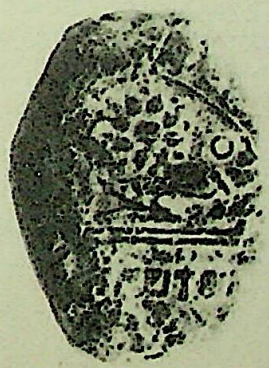

३७५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

---परिय

---

पाठ— .....परिय...

लेख के ऊपर पुष्पयुक्त पौधा बना है।

375 Clay seal from Kauśāmbī with illegible writing and a plant in bloom above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

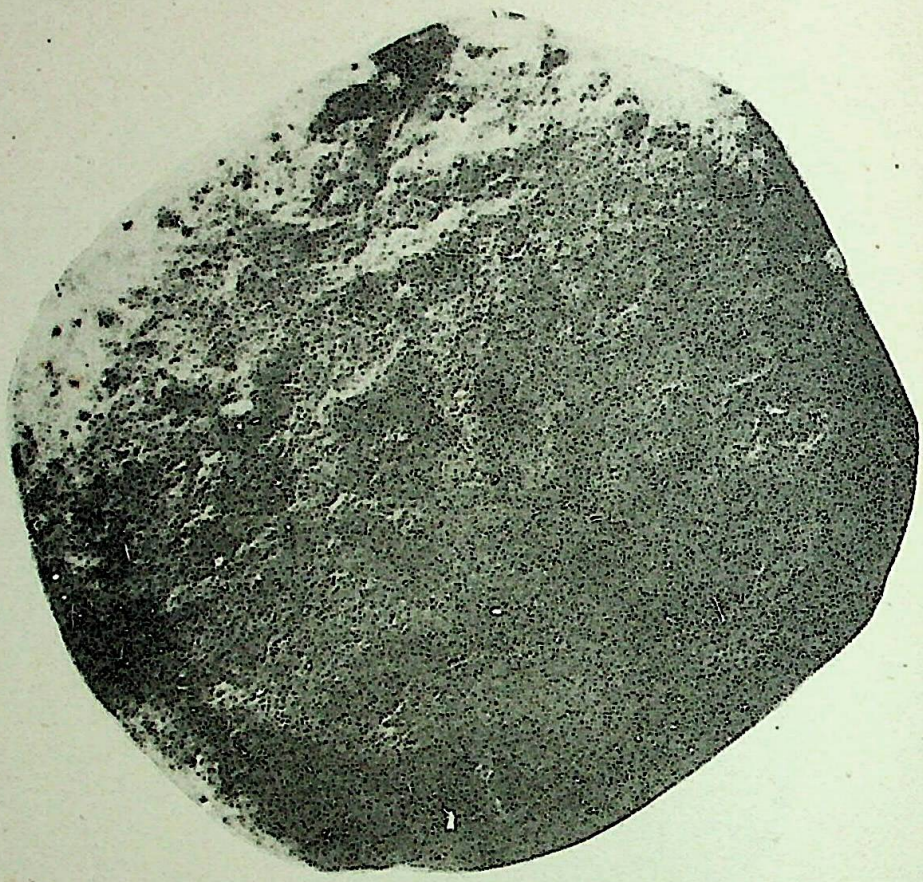

३७६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

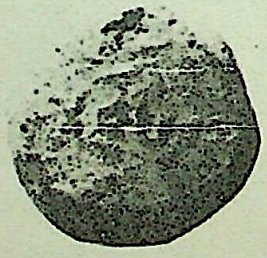

पाठ—गोजिपडस

376. Clay seal of Gojipaḍa from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३७७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक



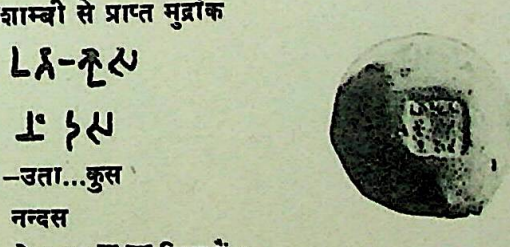

पाठ –उता...कुस

नन्दस

लेख के मध्य चिह्न हैं।

377. Clay seal of Nanda from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३७८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

सधै-

पाठ—सधै...

378. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *sadhai*...

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३७९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

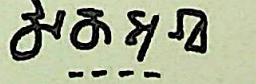

पाठ—सेनसूश्व ----

लेख के ऊपर सपरशु त्रिशूल बना है।

379. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *senasūśva*..., with axe-trident above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
पाठ—अस्पष्ट

380. Clay seal from Kauśāmbī. Illegible.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

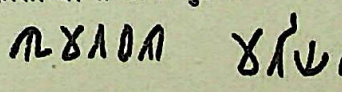

एक स्थान का पाठ—शुमतथश । दूसरे स्थान का पाठ—मतियश
एक मुद्रांक पर दो पाठ हैं । मध्य में स्वस्तिक चिह्न है ।

381. Inscribed clay seal from Kauśāmbi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

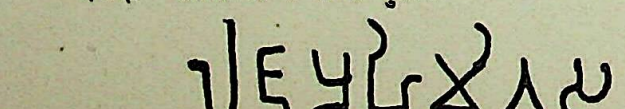

पाठ—लाजु अहिमितस (=राज्ञः अहिमित्रस्य)

382. Clay seal of King Ahimitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्राक

पाठ—यशनपादे

मुद्रांक के मध्य स्वस्तिक है ।

383. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *yaśanapāde*, with svastika symbol in the centre of the seal.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

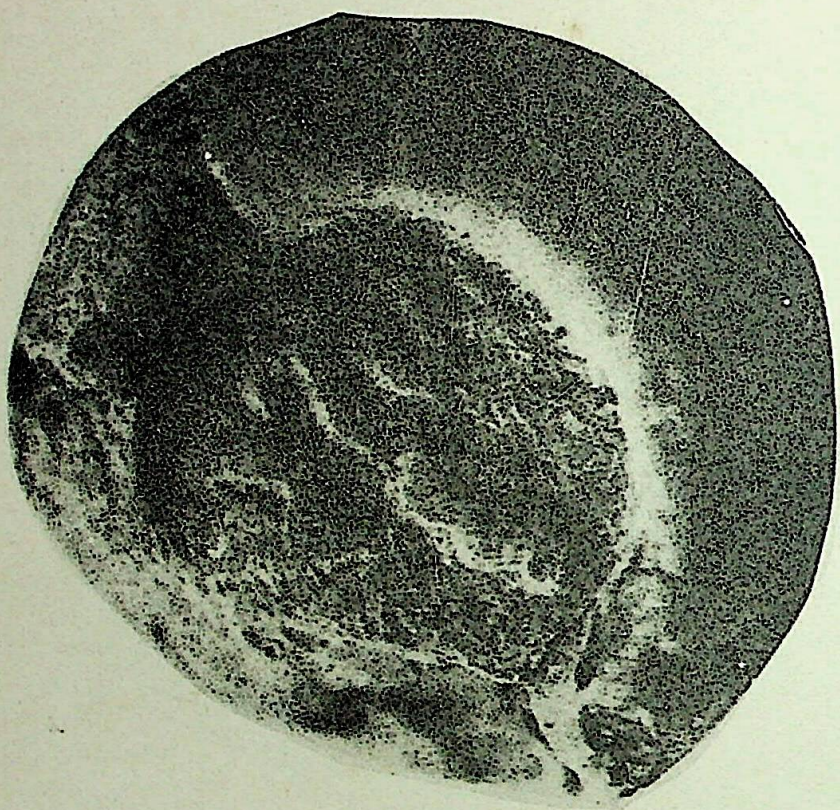

३८४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—भरज्वाजस (=भरद्वाजस्य)

384. Clay seal of Bharadvāja from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—मघवश

385. Clay seal of Maghavā from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

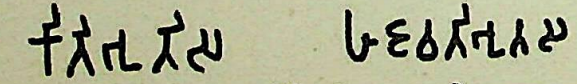

एक स्थान पर पाठ—कीर्तिभूतिस । दूसरे स्थान पर पाठ—लजवतीभूतस
इस मुद्रांक पर ये नाम दो-दो बार लिखे हैं ।

386. Clay seal of Kīrtibhūti and Lajavatībhūta from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

१४४८२

पाठ—राजमितस (=राजमित्रस्य)

387. Clay seal of Rājamitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८८ कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—दीर्घवक्र

388. Clay seal of Dīrghavakra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—निगमे

389. Clay seal of a *nigama* (corporation) from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३९०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

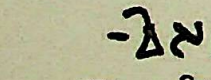

पाठ—...विसघस (=विश्वघोषस्य)

390. Clay seal of Viśvaghoṣa from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

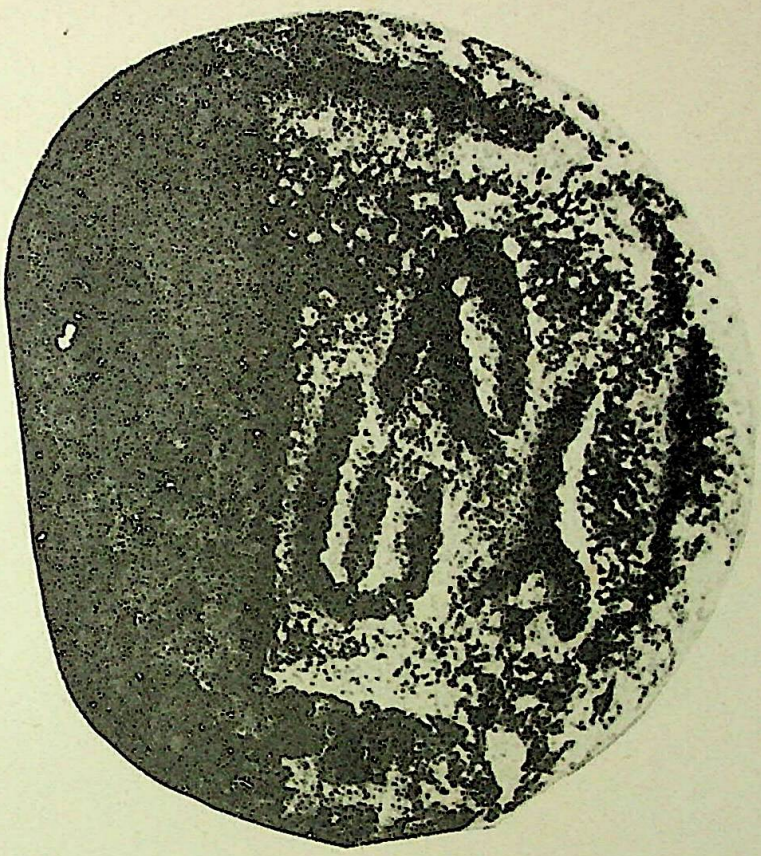

३९१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—...श

...घव

391. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३९२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—भूतमोदके

392. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *bhūtamodake.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

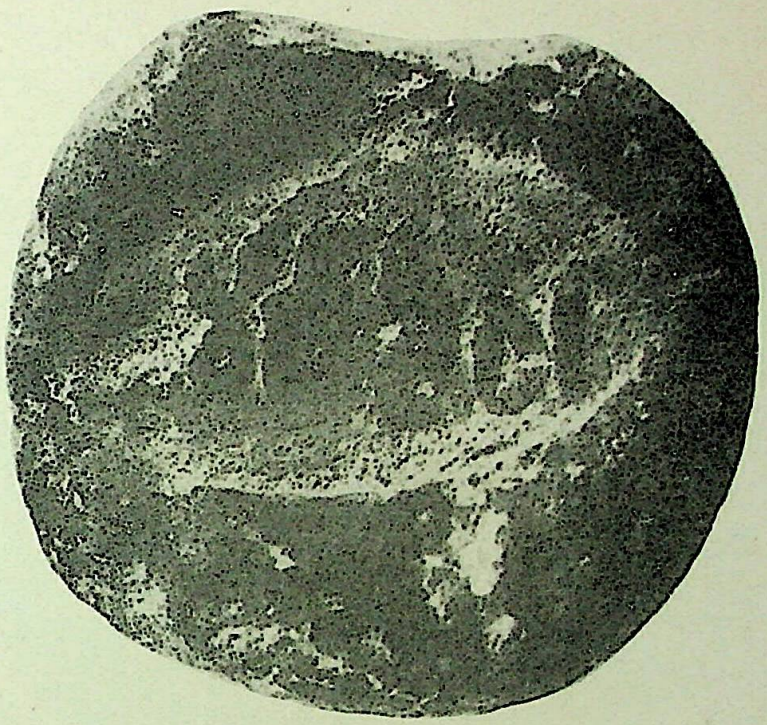

३९३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

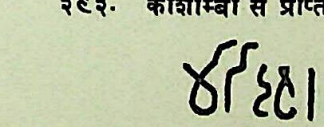

पाठ—मारिदत?

393. Clay seal of Māridatta(?) from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३९४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

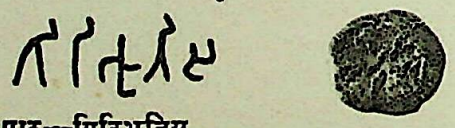

पाठ—गिरिभूतिस

394. Clay seal of Giribhūti from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३९५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—सावसद?

395. Clay seal from Kausāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

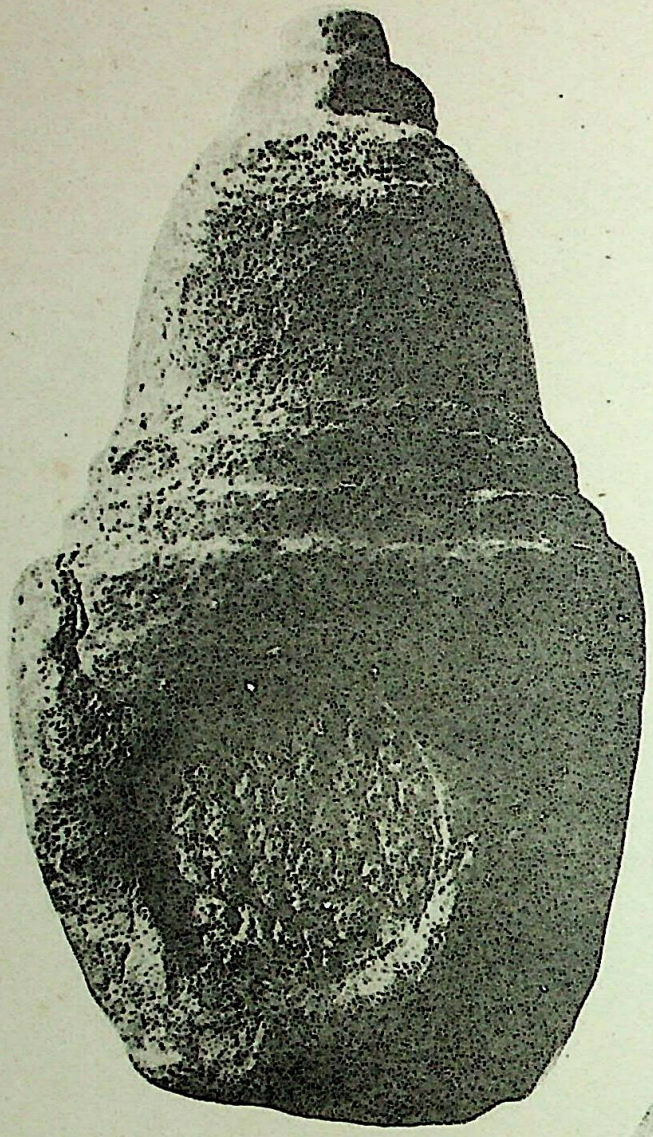

३९६. कौशाम्बी से प्राप्त स्तूपाकार मुद्रांक

पाठ—ये धर्मा हेतुप्रभवा
हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत्
तेषां च यो निरोध एवं वादी
महाश्रमणः

396. Stūpa-shaped clay seal from Kauśāmbī inscribed with the Buddhist formula *ye dharmā*...

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

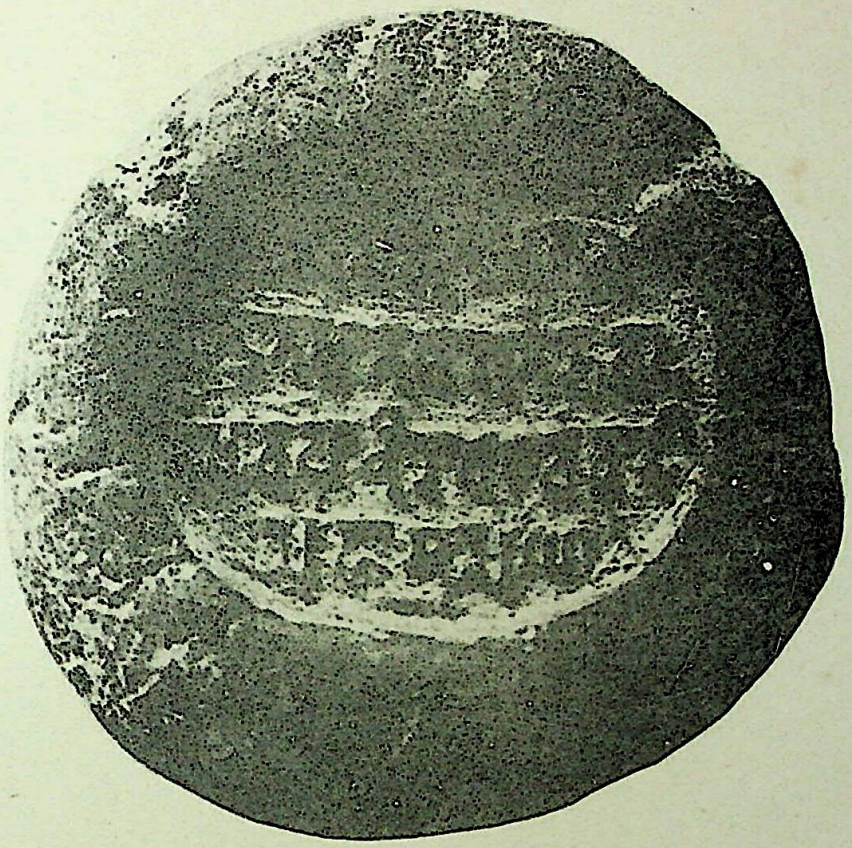

३९७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

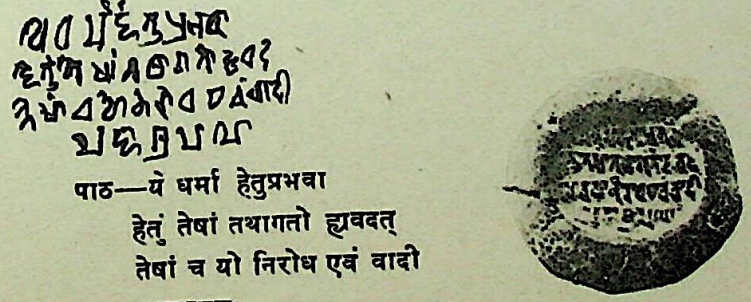

पाठ—ये धर्मा हेतुप्रभवा
हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत्
तेषां च यो निरोध एवं वादी
महाश्रमणः

397. Clay seal from Kauśāmbī inscribed with the Buddhist formula *ye dharmā*...

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३९८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

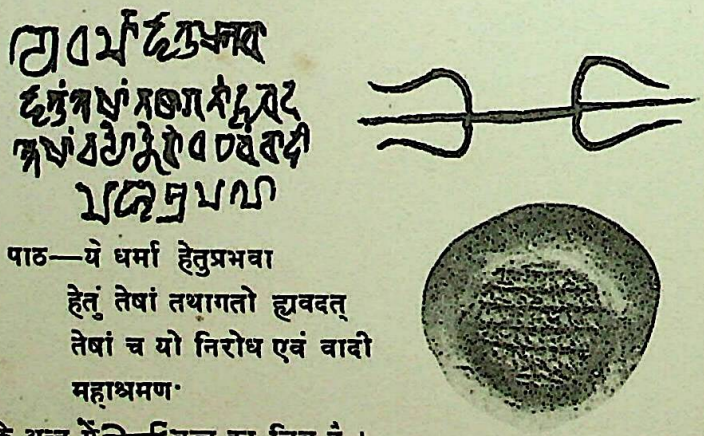

पाठ—ये धर्मा हेतुप्रभवा
हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत्
तेषां च यो निरोध एवं वादी
महाश्रमण·

लेख के अन्त में ∋—∈ वज्र का चित्र है ।

398. Clay seal from Kauśāmbī inscribed with the Buddhist formula *ye dharmā*..., followed by a vajra.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

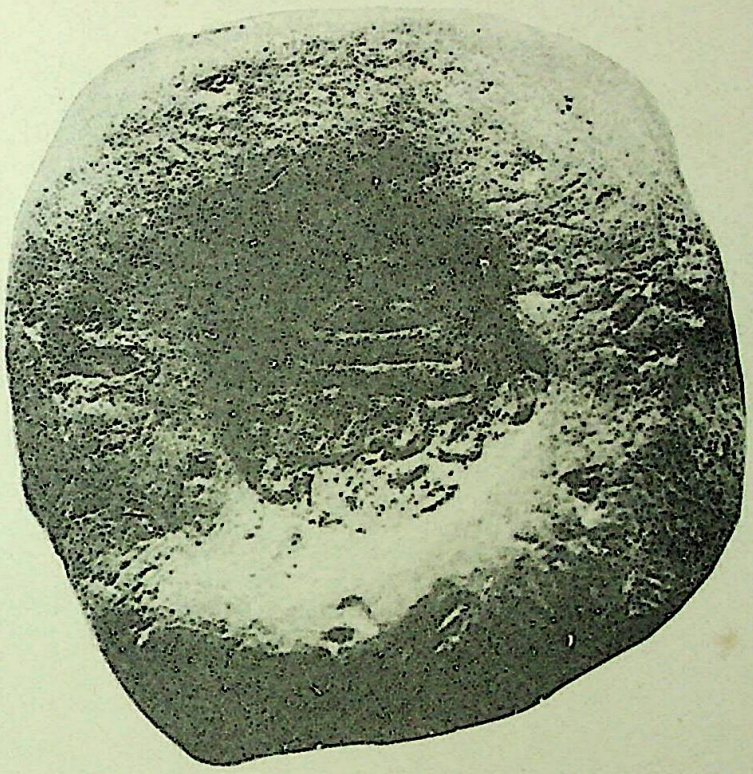

३९९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

-ध-ठ

पाठ—...या...वे

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है।

399. Clay seal from Kauśāmbī, with an indistinct inscription and a temple above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४००. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—रोदकस्य

400. Clay seal of Rodaka from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

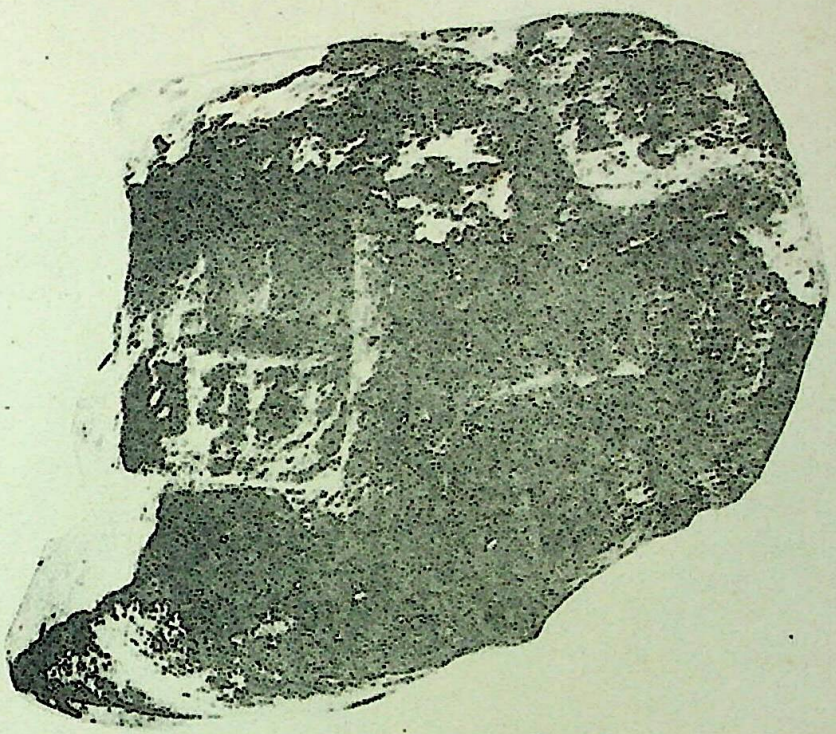

४०१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

ठयुठ्ठ

पाठ—वैष्णवस्य

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है।

401. Clay seal of Vaiṣṇava from Kauśāmbī, with the illustration of a temple above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

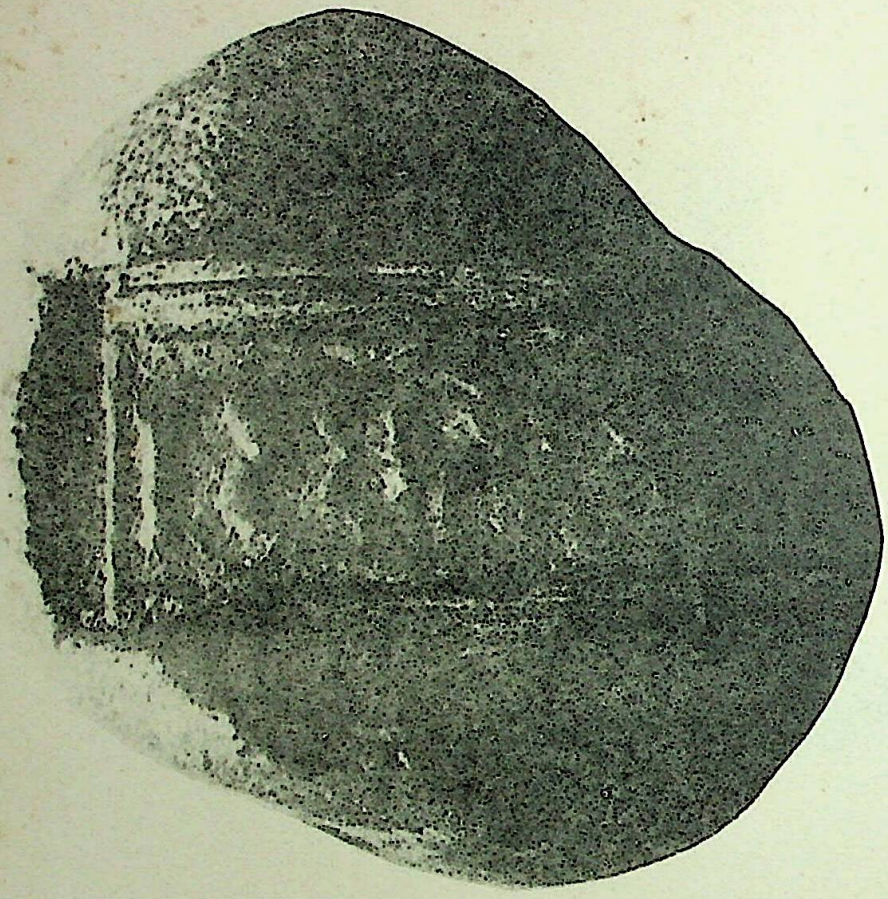

४०२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

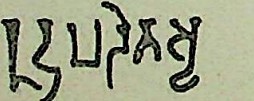

पाठ—रुद्रपडितस (=रुद्रपण्डितस्य)

402. Clay seal of Rudrapaṇḍita from Kauśāmbi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—अटक

403. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *aṭaka.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

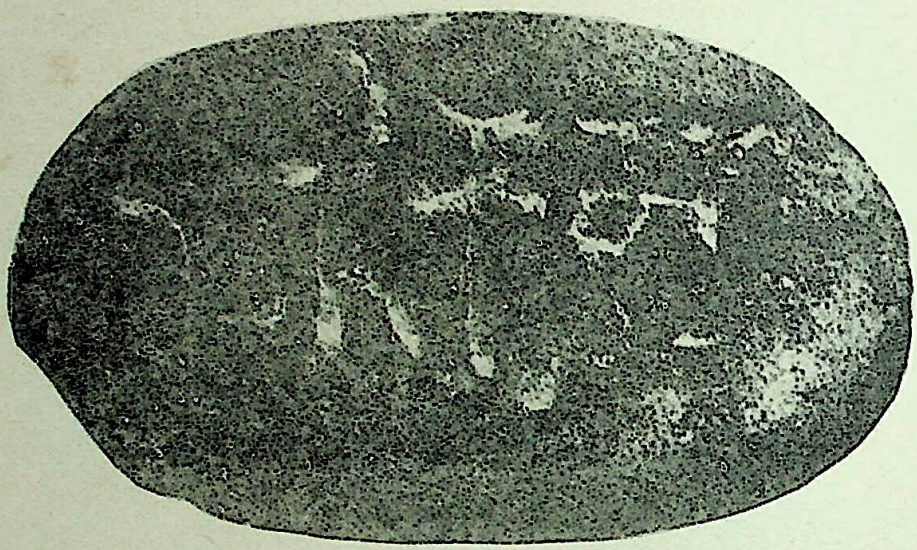

४०४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—दतिकस

404. Clay seal of Datika from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—केशव [गुप्त]

405. Clay seal of Keśava[gupta] from Kauśāmbī.

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—धम्म (=धर्म्म)

406. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *dhamma*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—.....तरमितस

407. Clay seal of °taramitra from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—श्री...ज्वर

408. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४०९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—कडहल

409. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *kaḍahala*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

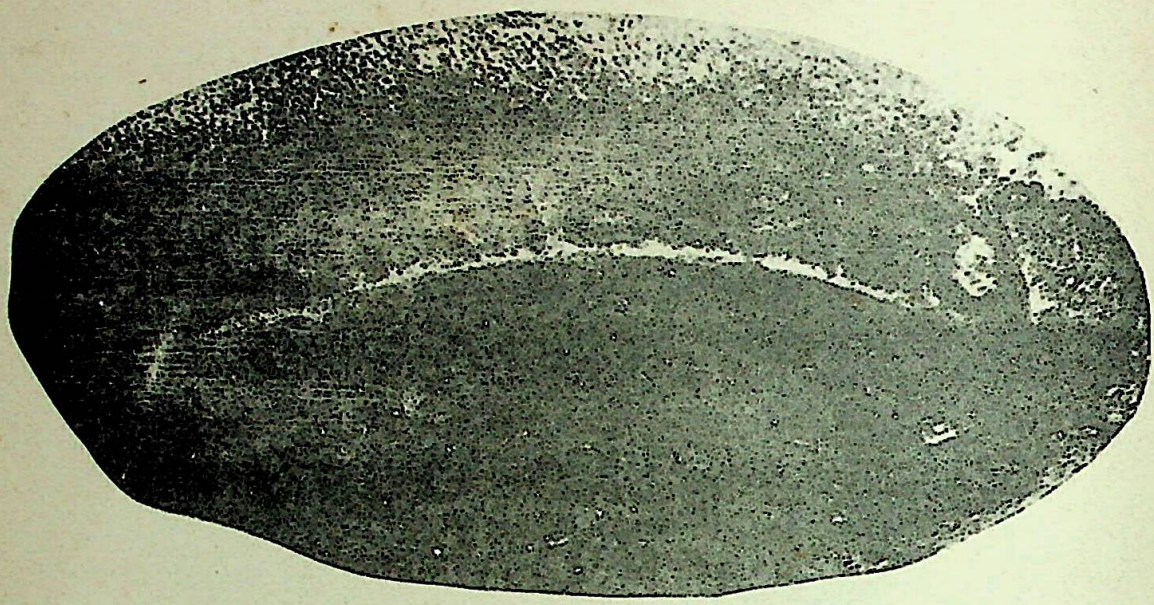

४१०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—बगरगजपुध ?

410. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *bagaragajapudha*(?).

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४११. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—...रवटव

411. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed ...*rabaṭava.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४१२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—ग...

सगक-

412. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

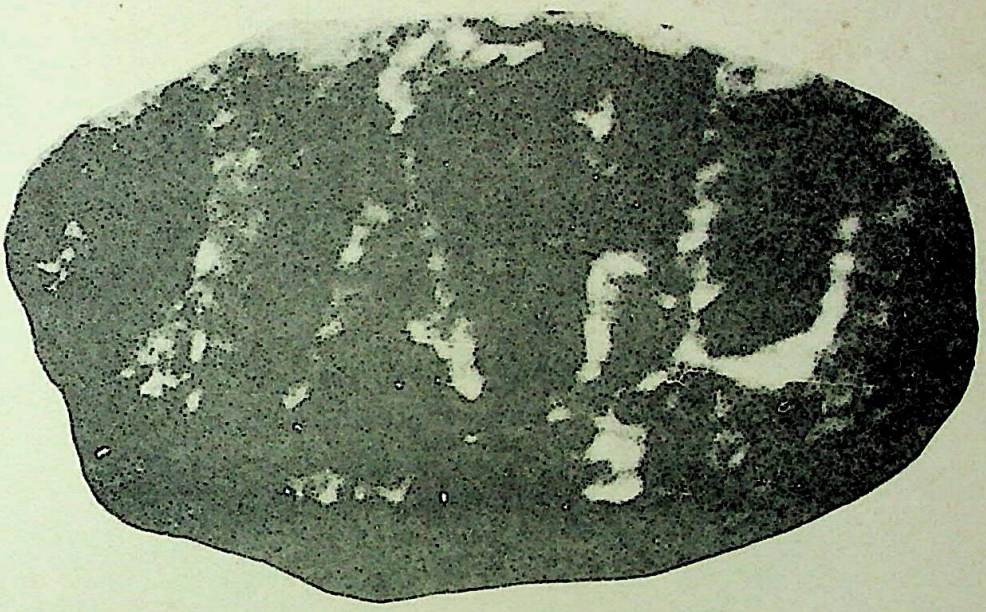

४१३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

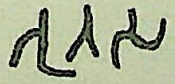

पाठ—भूतस

413. Clay seal of Bhūta from Kauśāmbi.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४१४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—गमन...

414. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *gamana*...

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४१५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ— .....स्वितस

लेख के ऊपर त्रि० चित्र है।

415. Clay seal of ...*svita* from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

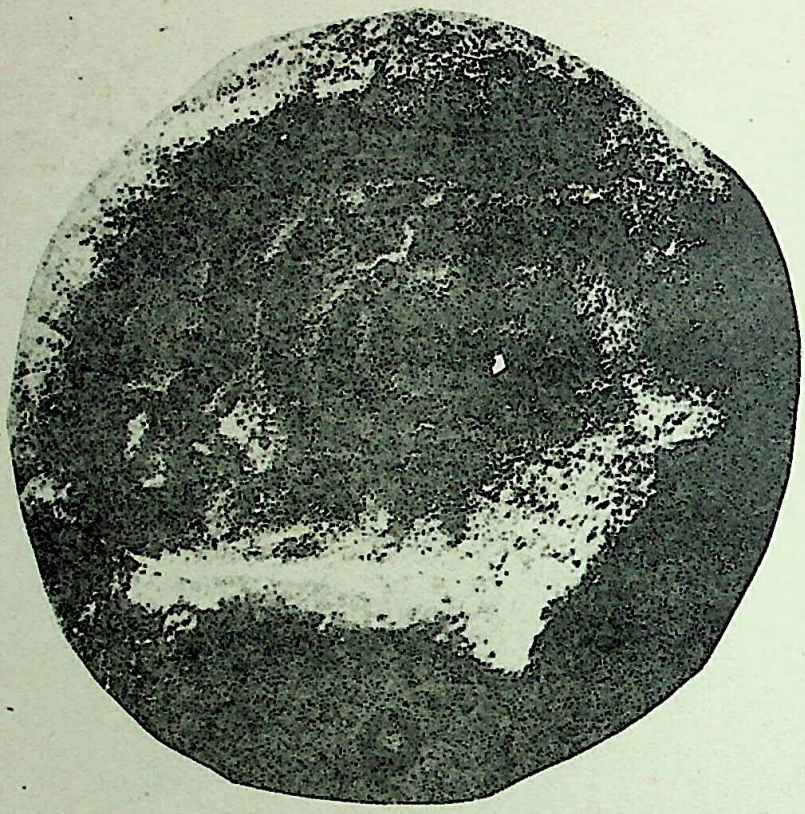

४१६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—परागि...

वानश...

416. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४१७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—पटहव...

स्वस्तिक चिह्न है।

417. Clay seal from Kauśāmbī inscribed *paṭahada*...

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४१८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

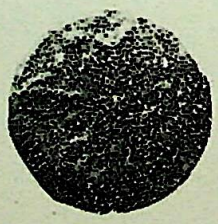

पाठ—चावठिकःयं

418. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *cāvaṭhikaḥyaṁ*.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

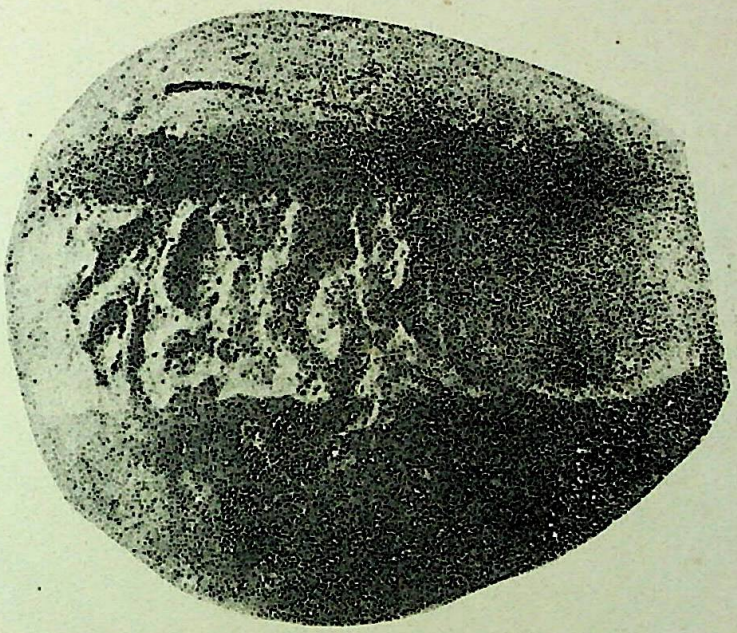

४१९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—रुशदस्य (हशदस्य?) ॥

419. Clay seal from Kauśāmbī, inscribed *ru(?ha)śadasya.*॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४२०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

पाठ—मडकस्य

ऊपर स्वस्ति चिह्न है।

420. Clay seal of Maḍaka from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४२१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

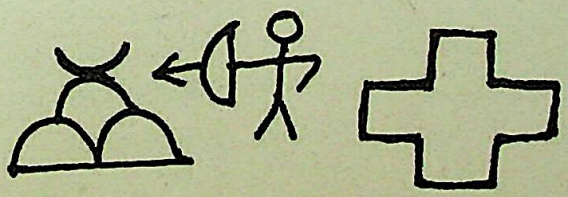

इस पर ,धनुर्धारी व्यक्ति, चिह्न हैं।

421. Clay seal from Kauśāmbī, with an archer flanked by two symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

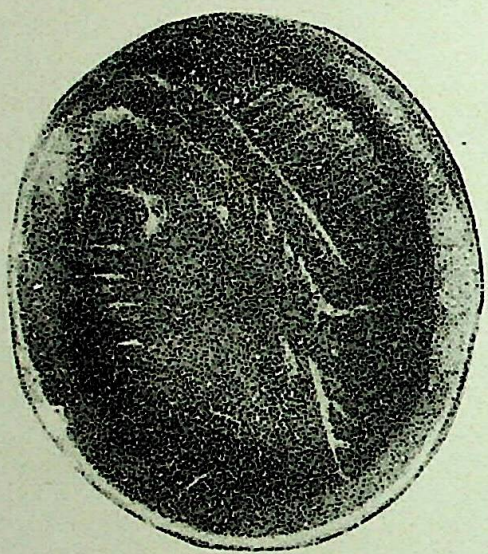

४२२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
अकीक पत्थर पर स्त्री का ग्रीवा-पर्यन्त चित्र।

422. Crystal seal with a female head.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४२३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
व्यक्ति के पैरों में लेटता हुवा कुत्ता।

423. Clay seal from Kauśāmbī with a dog crawling near his master's feet.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

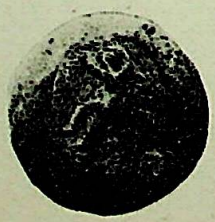

४२४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
चौकी पर स्थित व्यक्ति ।

424. Clay seal from Kauśāmbī, with a human figure on a stool.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४२५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
इण्डोपार्थियन देवता का चित्र ।

425. Clay seal from Kauśāmbī, with an Indo-Parthian deity.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

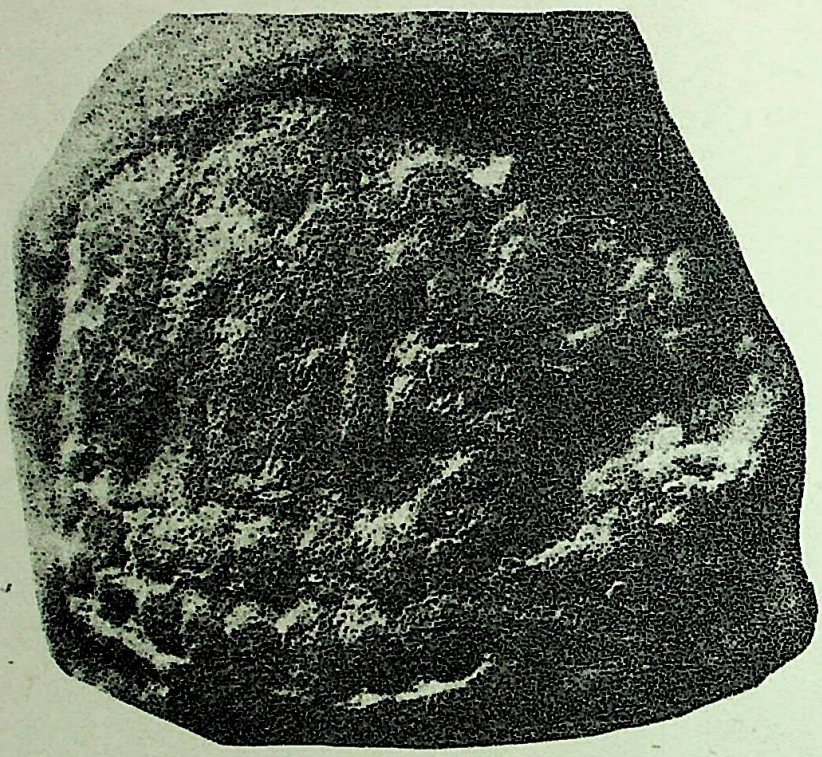

४२६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
स्त्री पुरुष का चित्र तथा चिह्न ।

426. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४२७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

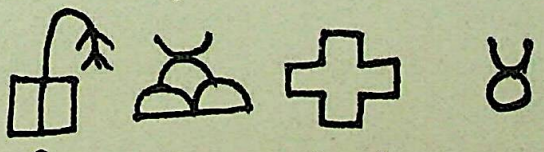

चित्र हैं।

427. Clay seal from Kauśāmbī with four symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

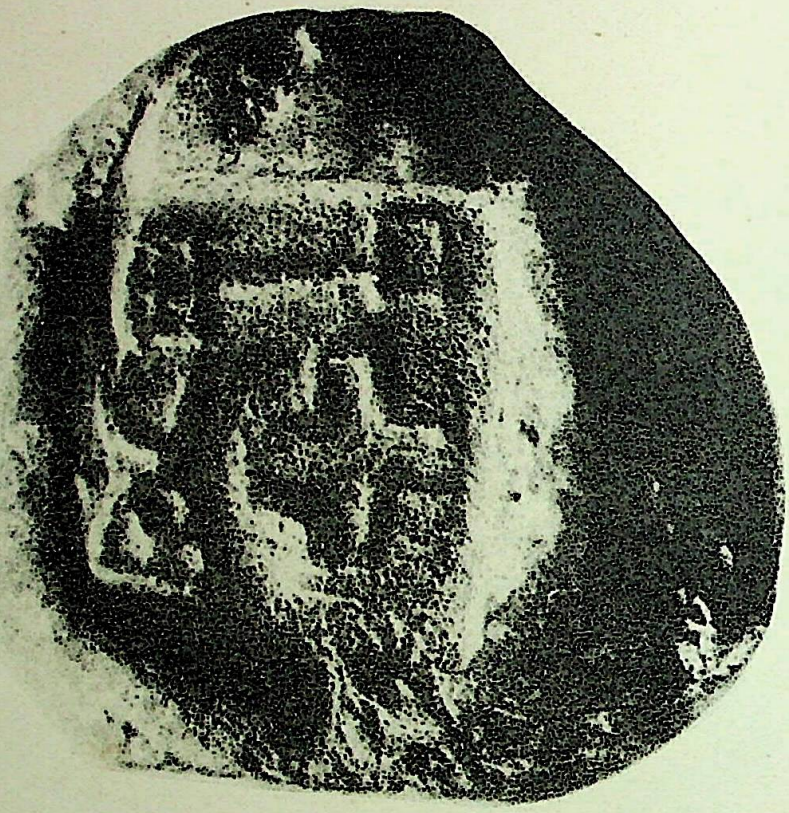

४२८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

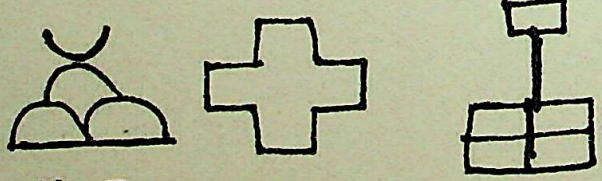

चित्र है।

428. Clay seal from Kauśāmbī with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

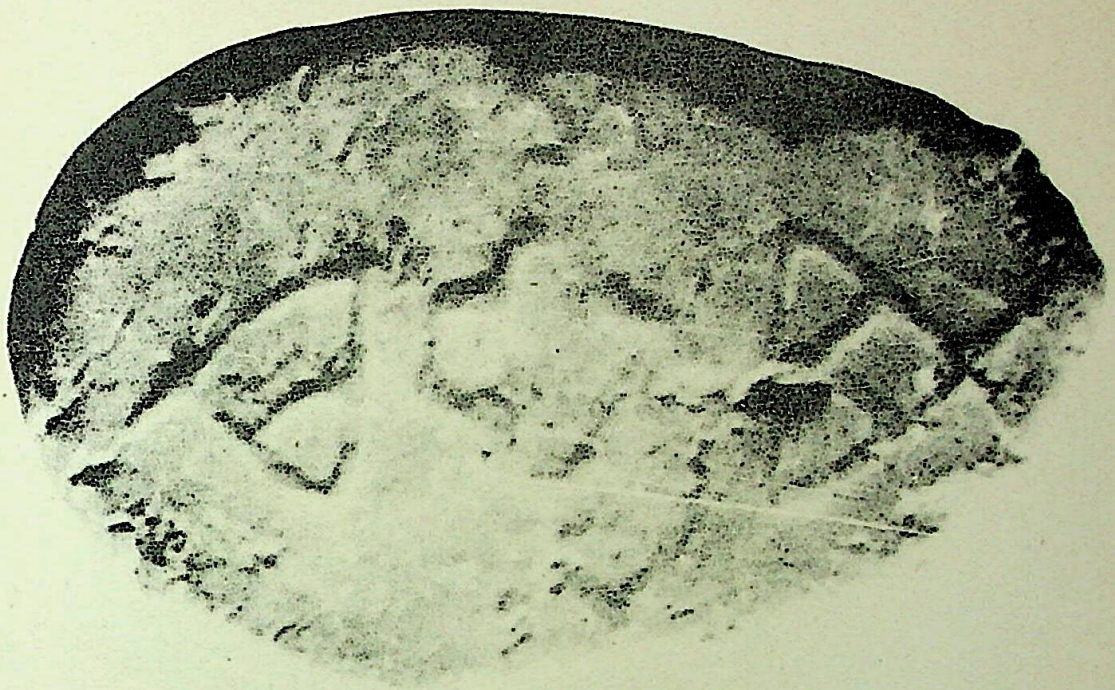

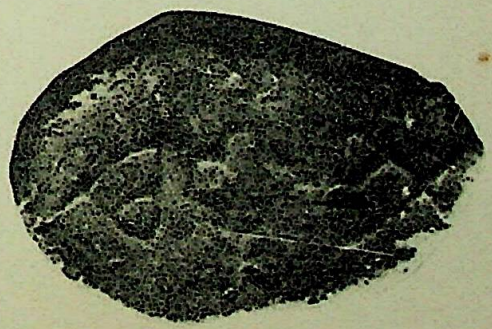

४२९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

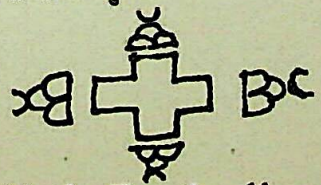

इस पर चित्र हैं।

429. Clay seal from Kauśāmbī with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४३०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

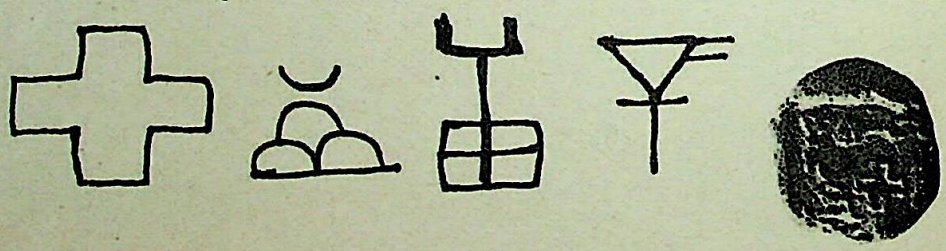

इस पर चित्र हैं।

430. Clay seal from Kauśāmbī with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४३१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
इस पर अश्व, हस्ती, नन्दी, ॐ आदि चिह्न हैं।

431. Clay seal from Kauśāmbī with a number of symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४३२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

इस पर कलश का चित्र है।

432. Clay seal from Kauśāmbī with an auspicious pitcher.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

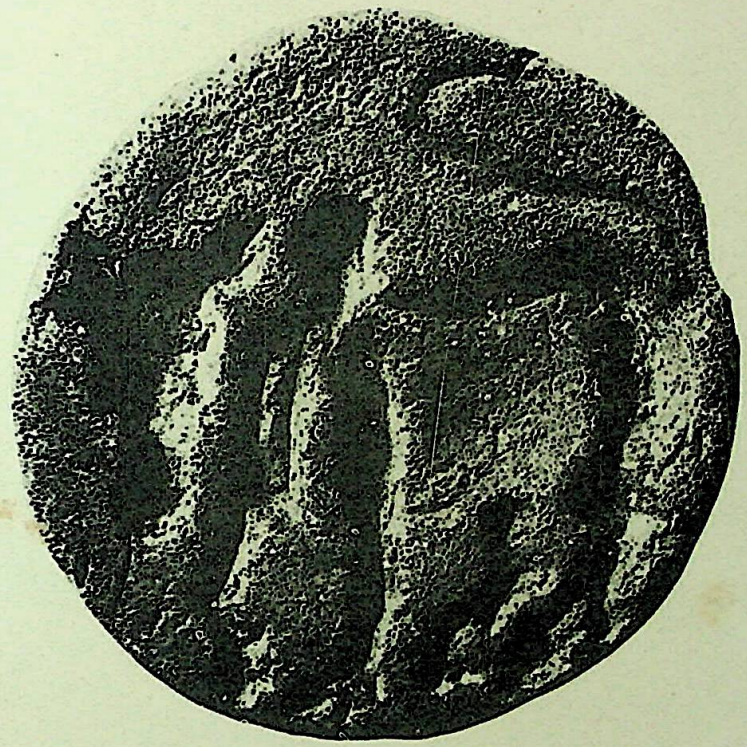

४३३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
इस पर नन्दी का चित्र है ।

433. Clay seal from Kausāmbī with Nandī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

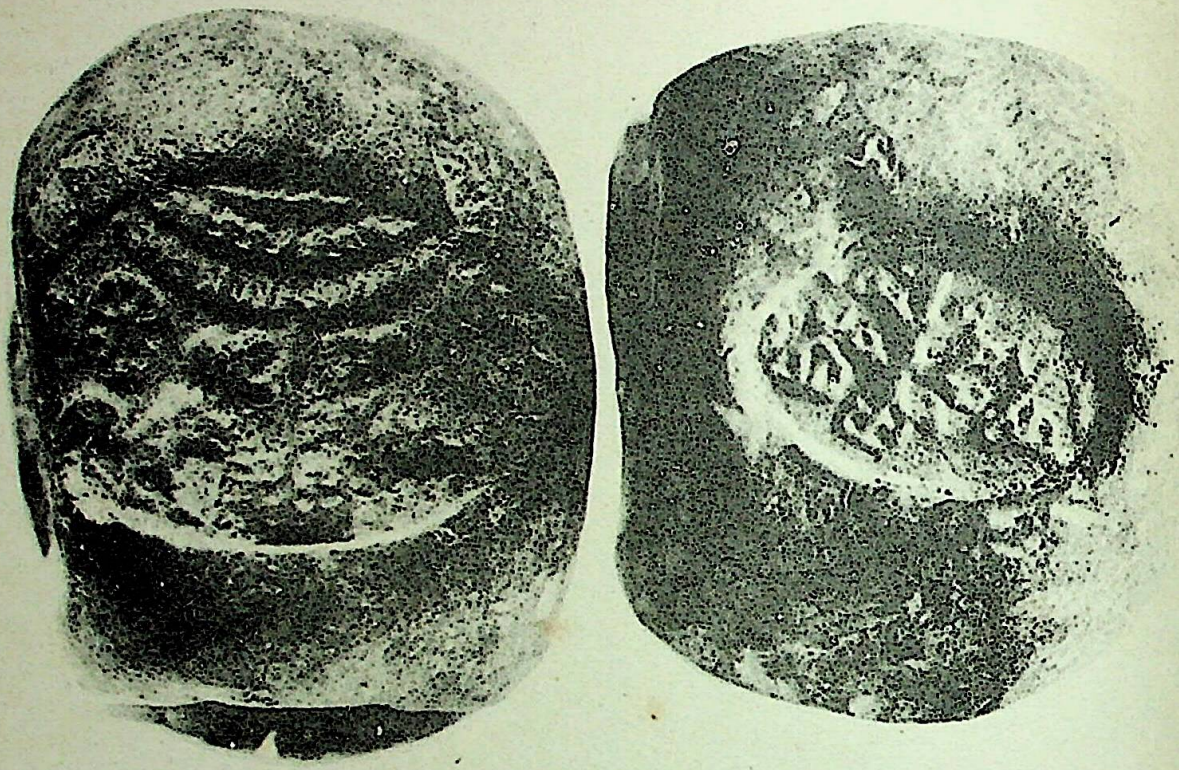

४३४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

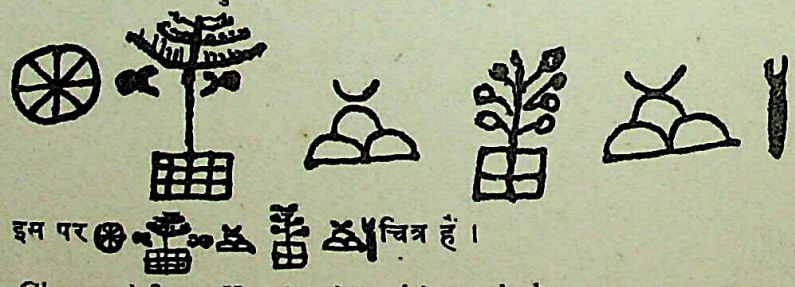

इस पर चित्र हैं।

434. Clay seal from Kauśāmbī with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४३५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
इस पर स्त्री के आगे हाथी खम्भों पर खड़ा है।

435. Clay seal from Kauśāmbi, with a female figure and elephant.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४३६. कौशाम्बी से प्राप्त हस्तिदन्त मुद्रांक

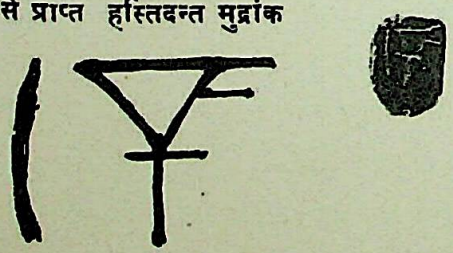

इस पर चिह्न हैं।

436. Ivory seal from Kauśāmbī with symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४३७. कौशाम्बी से प्राप्त हस्तिदन्त मुद्रांक

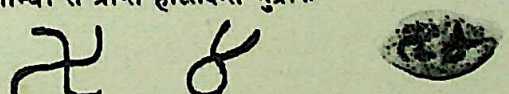

इस पर ५ ४ चिह्न हैं।

437. Ivory seal from Kaṅsāmbī with two symbols.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

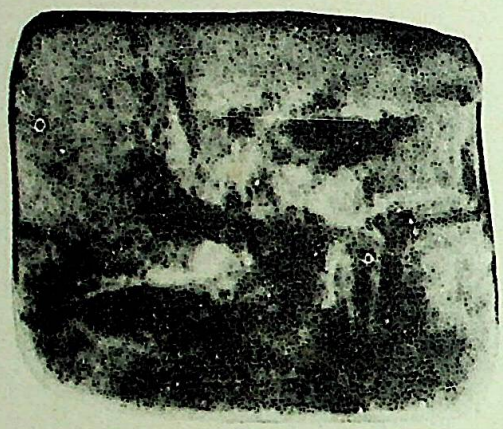

४३८. कौशाम्बी से प्राप्त हस्तिदन्त मुद्रांक

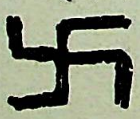

इस पर 卐 स्वस्तिक बना है ।

438. Ivory seal from Kausāmbi with svastika symbol.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६८७४

४३९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

439. Clay seal from Kauśāmbī

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४०. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
इस पर एक खड़े व्यक्ति का चित्र है।

440. Clay seal from Kauśāmbī. with a standing human figure.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४१. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
इस पर सिंह का चित्र है।

441. Clay seal from Kauśāmbī with a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४२. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
442. Clay seal from Kauśāmbī

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

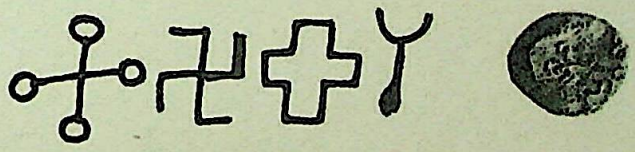

४४३. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

443. Clay seal from Kauśāmbī

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४४. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

444. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

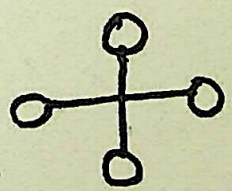

४४५. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

445. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

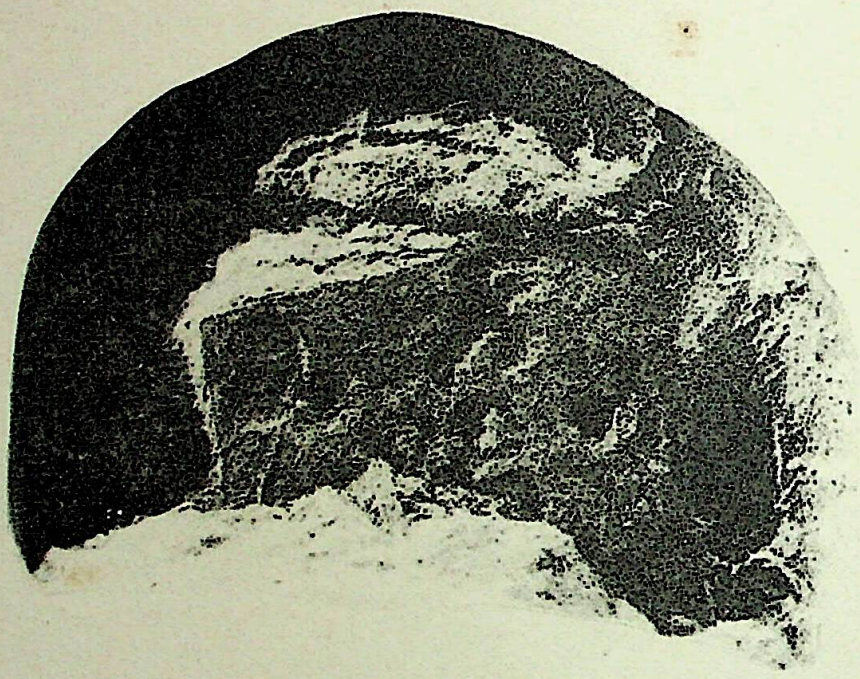

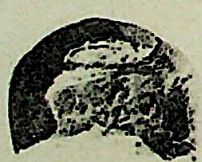

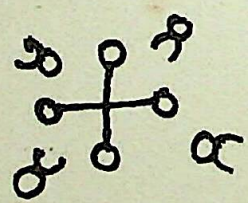

४४६. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
446. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४४७. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक

447. Clay seal from Kāuśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

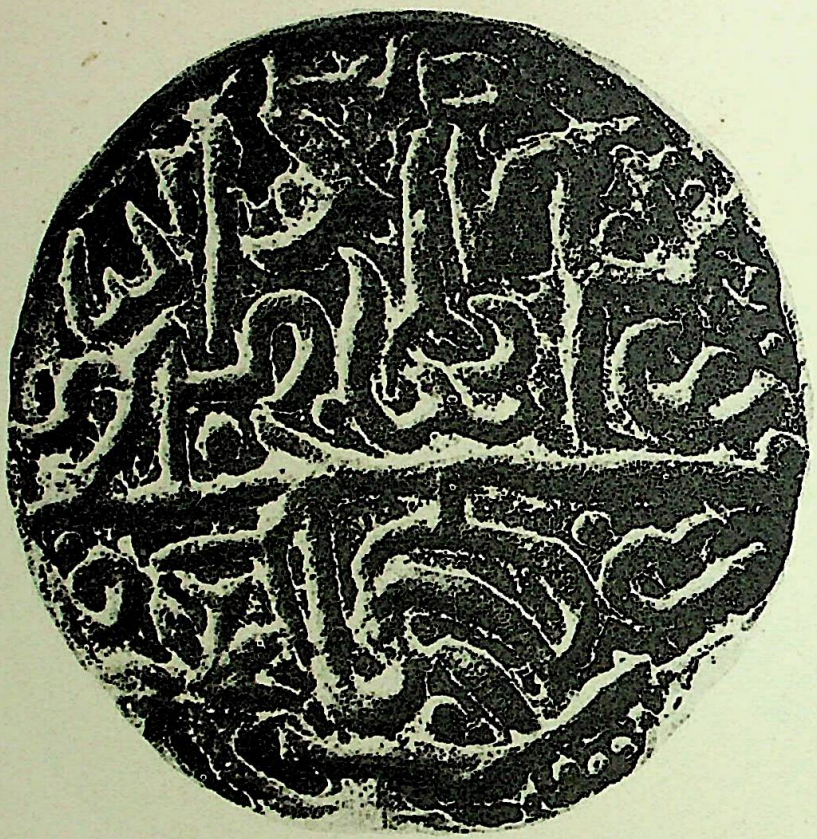

४४८. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
448. Clay seal from Kauśāmbī.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

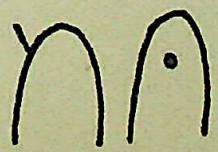

४४९. कौशाम्बी से प्राप्त मुद्रांक
449. Clay seal from Kauśāmbī,

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५०. प्रयाग से क्रीत मुद्रांक

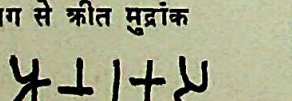

पाठ आनरकस

लेख के ऊपर नन्दी बैठा हुवा है, जिसके चारों ओर पुष्प और लताएं हैं।

450. Clay seal of Ānaraka purchased from Prayag.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५१. प्रयाग से क्रीत पीतल का मुद्रांक
इस पर सिंहवाहिनी दुर्गा का चित्र है।

451. Brass seal purchased from Prayag with Durga on a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५२. लखनऊ मे क्रीत मुद्रांक

पाठ—रसिकस्य

लेख के नीचे दौड़ता हुवा सूअर है ।

452. Clay seal of Rasika purchased from Lucknow, with a running boar below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

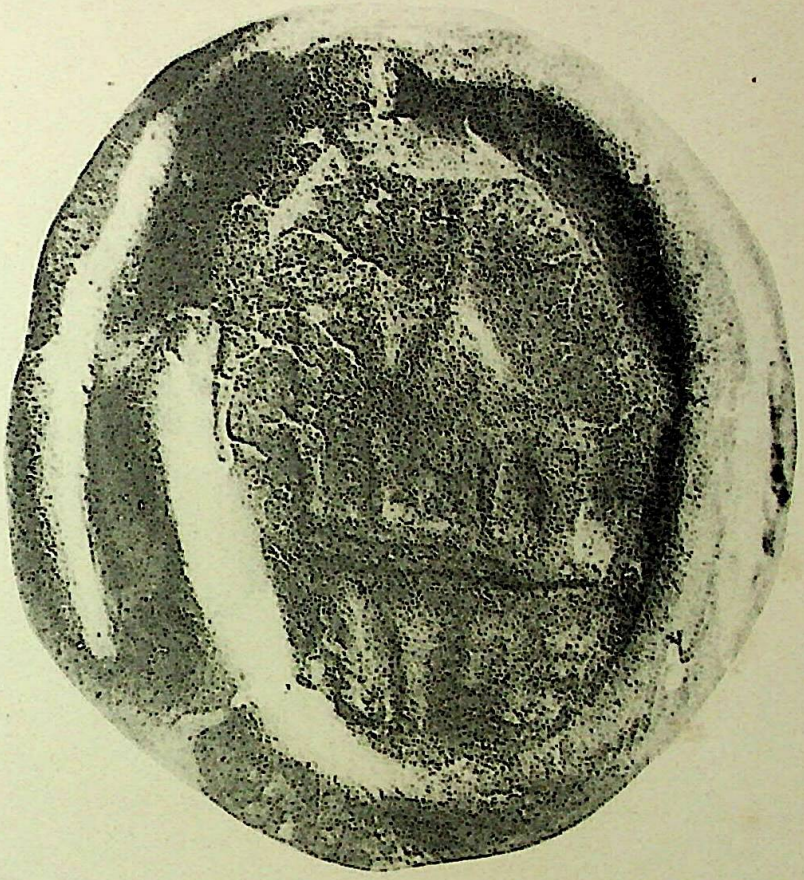

४५३. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

पाठ—शूरगुप्त

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है ।

453. Clay seal of Śūragupta purchased from Lucknow. with a temple above the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५४. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

पाठ—धनदेवस्य

लेख के नीचे नन्दी यूप से बंधा है, उसके आगे चिह्न हैं।

454. Clay seal of Dhandeva purchased from Lucknow. Nandi tied to a yūpa-pillar below the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५५. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

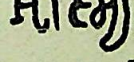

पाठ—शूरदम्य ?

लेख के ऊपर ढाल तलवार लिये योद्धा सिंह से लड़ता दिखाया गया है।

455. Clay seal purchased from Lucknow, inscribed *śūradamya* (?), with a person armed with a sword and shield fighting a lion.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

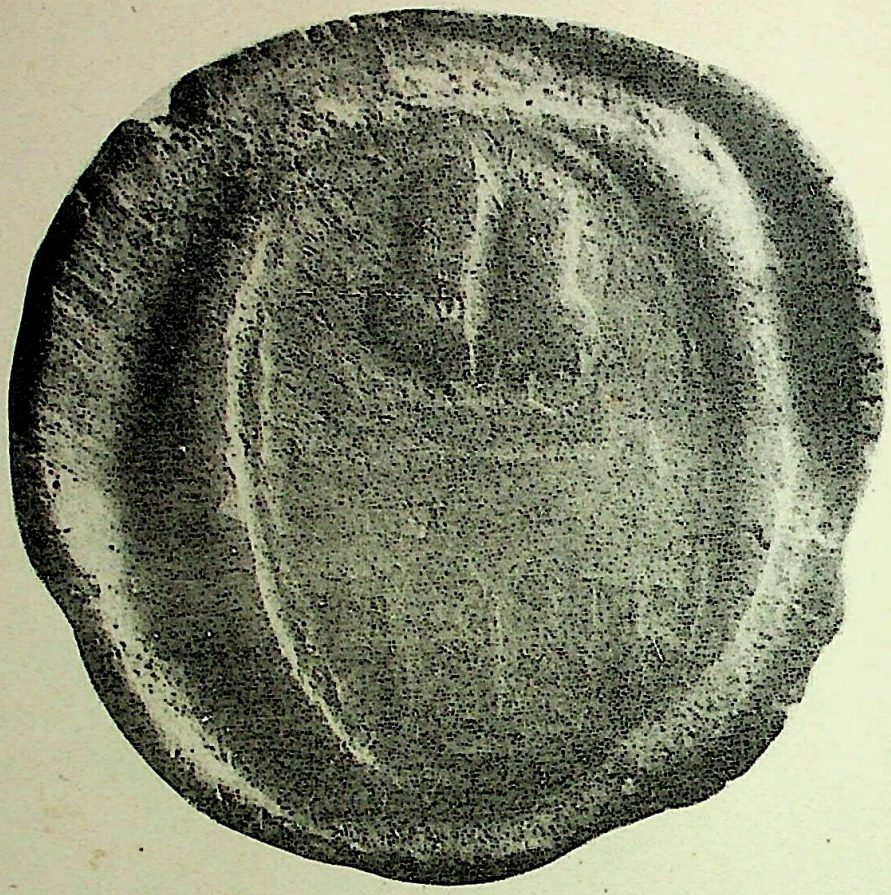

४५६. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

पुष्पसर

पाठ---पुष्यसर

लेख के ऊपर चरण-युगल के चिह्न हैं।

456. Clay seal purchased from Lucknow, inscribed *puṣpasara*, and both feet depicted above the inseription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

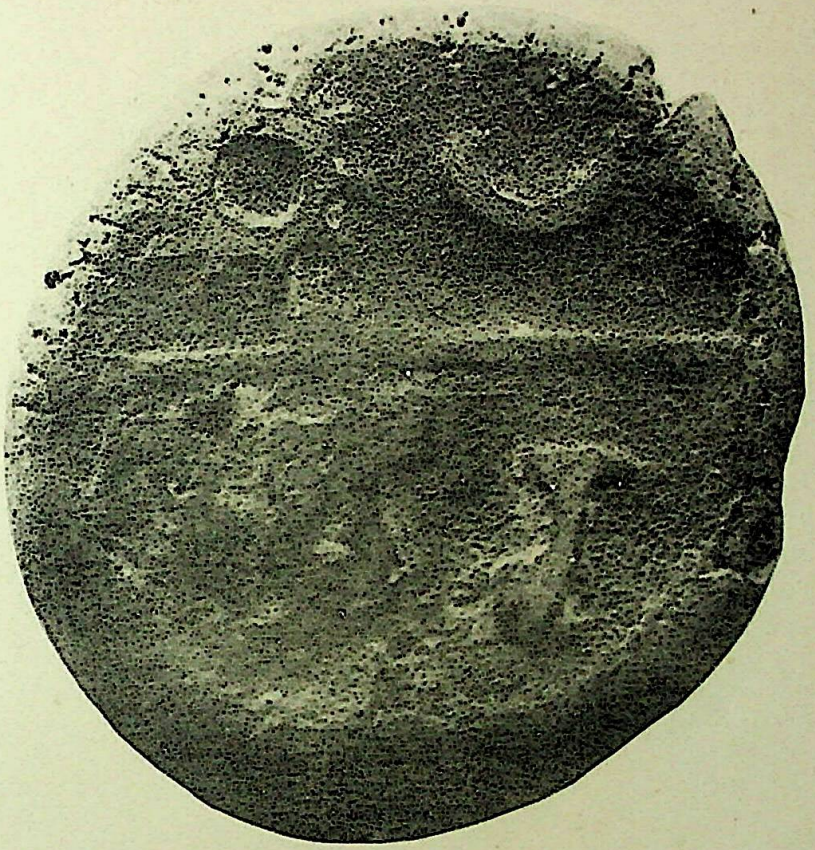

४५७. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

पाठ—...वर

इस पर सूर्य और चन्द्र का चित्र है।

457. Clay seal purchased from Lucknow, inscribed ...*vara*, bearing the sun and moon.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५८. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

पाठ —...घहव्यपा?

लेख के ऊपर मन्दिर का चित्र है।

458. Clay seal purchased from Lucknow, bearing the illustration of a temple and below it an indistinct inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५९. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक
इस पर इण्डोपार्थियन व्यक्ति का चित्र है ।

459. Clay seal purchased from Lucknow with an Indo-Parthian human figure.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४६०. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

इस पर पात्र और मल्ल का चित्र है।

460. Clay seal purchased from Lucknow, with a pot and wrestler.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४६१. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

नन्दस्य

पाठ—नन्दस्य

461. Clay seal of Nanda purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

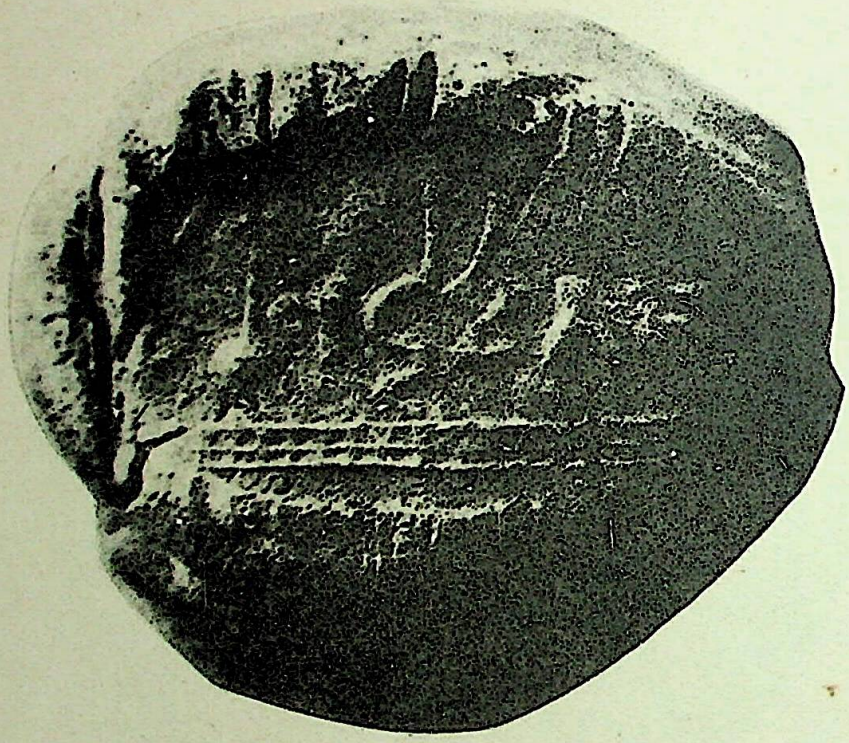

४६२. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

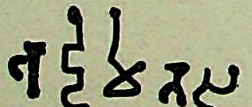

पाठ—भट्टिमितस (=भट्टिमित्रस्य)

462. Clay seal of Bhaṭṭimitra purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४६३. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

463. Clay seal purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४६४. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

464. Clay seal purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४६५. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

465. Clay seal purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४६६. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

466. Clay seal purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

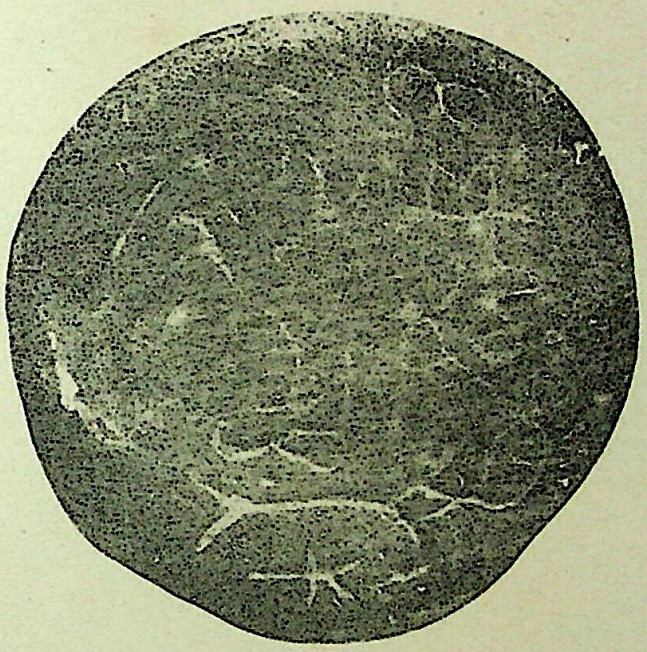

४६७. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

467. Clay seal purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

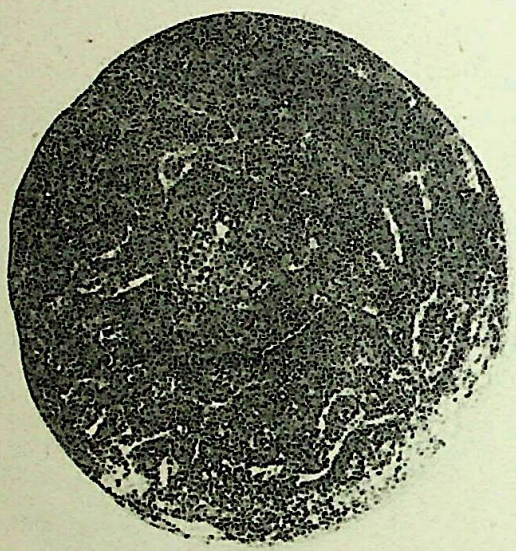

४६८. लखनऊ से क्रीत मुद्रांक

468. Clay seal purchased from Lucknow.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

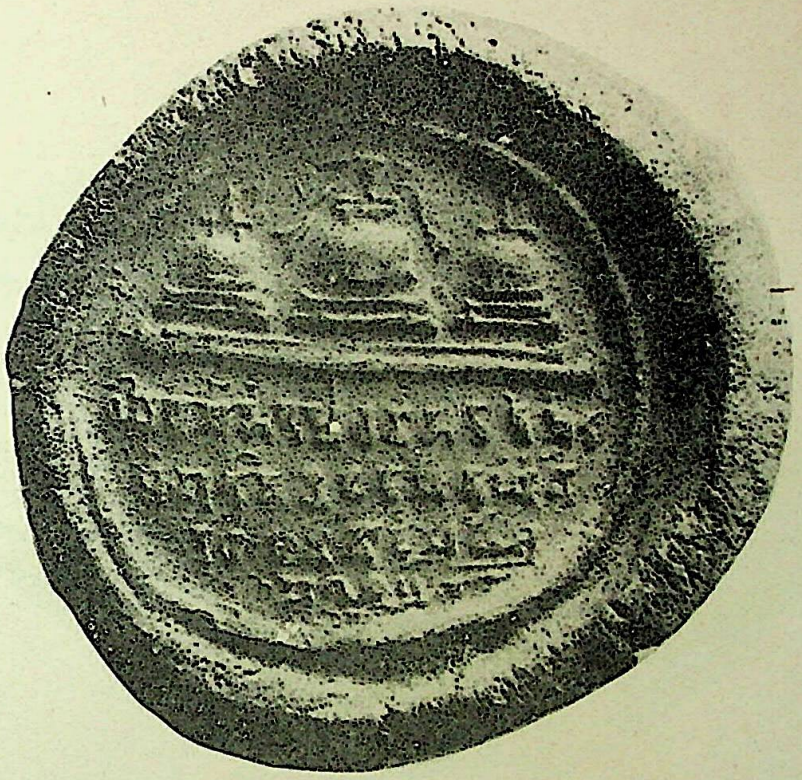

४६९. वाराणसी से क्रीत मुद्रांक

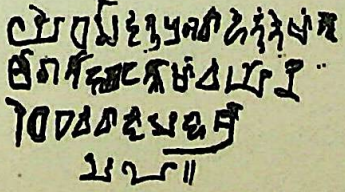

पाठ—ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत् ।
तेषां च यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः ॥

469. Clay seal from Varanasi with the Buddhist formula *ye dharmā*...

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

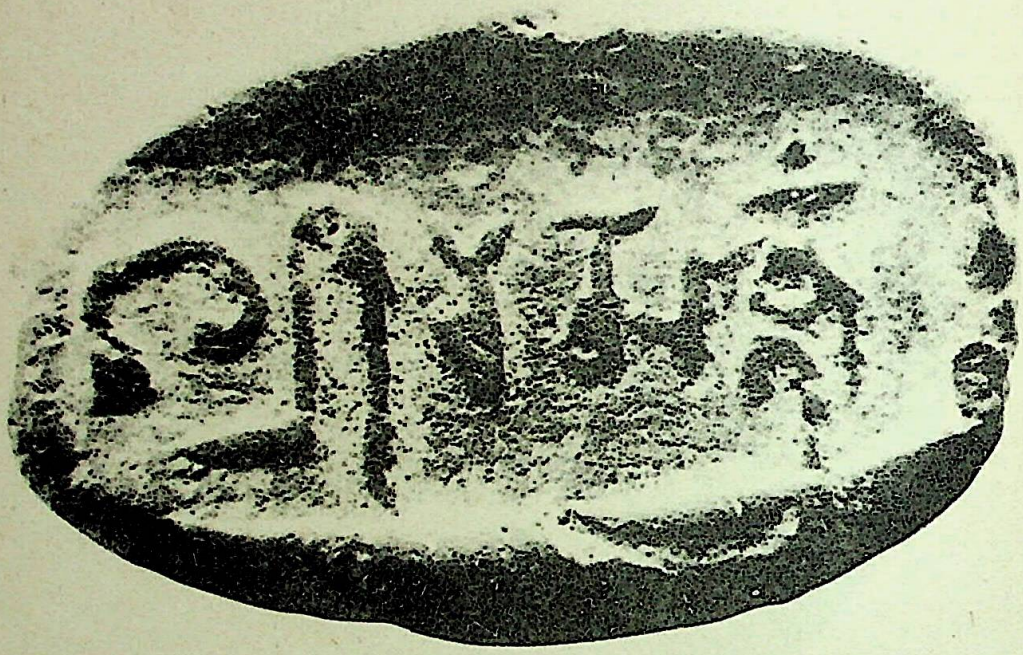

४७०. जौनपुर से क्रीत मुद्रांक

पाठ—श्रीधोमन्त्रम्

470. Clay seal from Jaunpur, inscribed *śrīdhomantram.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४७१. दिल्ली से क्रीत मुद्रांक

प्रथम ओर का पाठ-श्रीअच्युतभद्रः
नाम के ऊपर शंख और पुष्पों के चित्र हैं।

471. Clay seal purchased at Delhi, bearing the inscription *Acyutabhadra* and a conch and flowers above it..

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

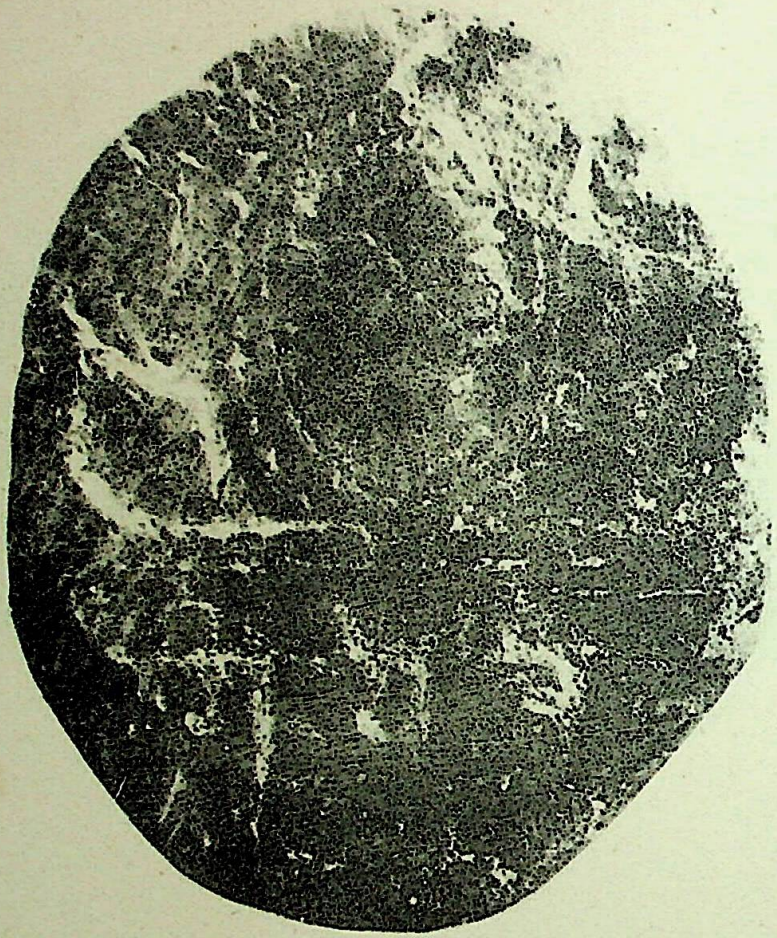

४७२. पूर्वगामी मुद्रांक के दूसरी ओर का पाठ—स्वामिनाग ऊपर चक्र और शंख के चित्र हैं।

472. Reverse of the previous seal with the inscription *svāmi-nāga*, and discus and conch above it.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

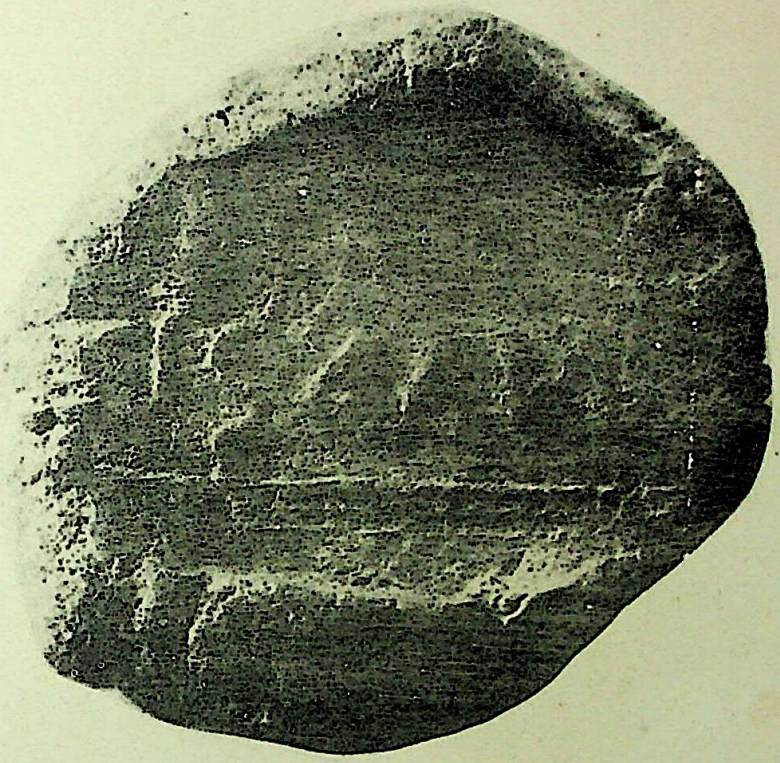

४७३. दिल्ली से क्रीत मुद्रांक

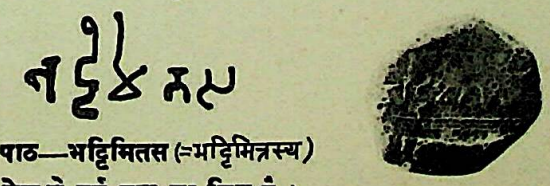

पाठ—भट्टिमितस (=भट्टिमित्रस्य)

लेख से पूर्व गदा का चित्र है।

473. Clay seal of Bhaṭṭimitra purchased at Delhi. Mace precedes the inscription.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

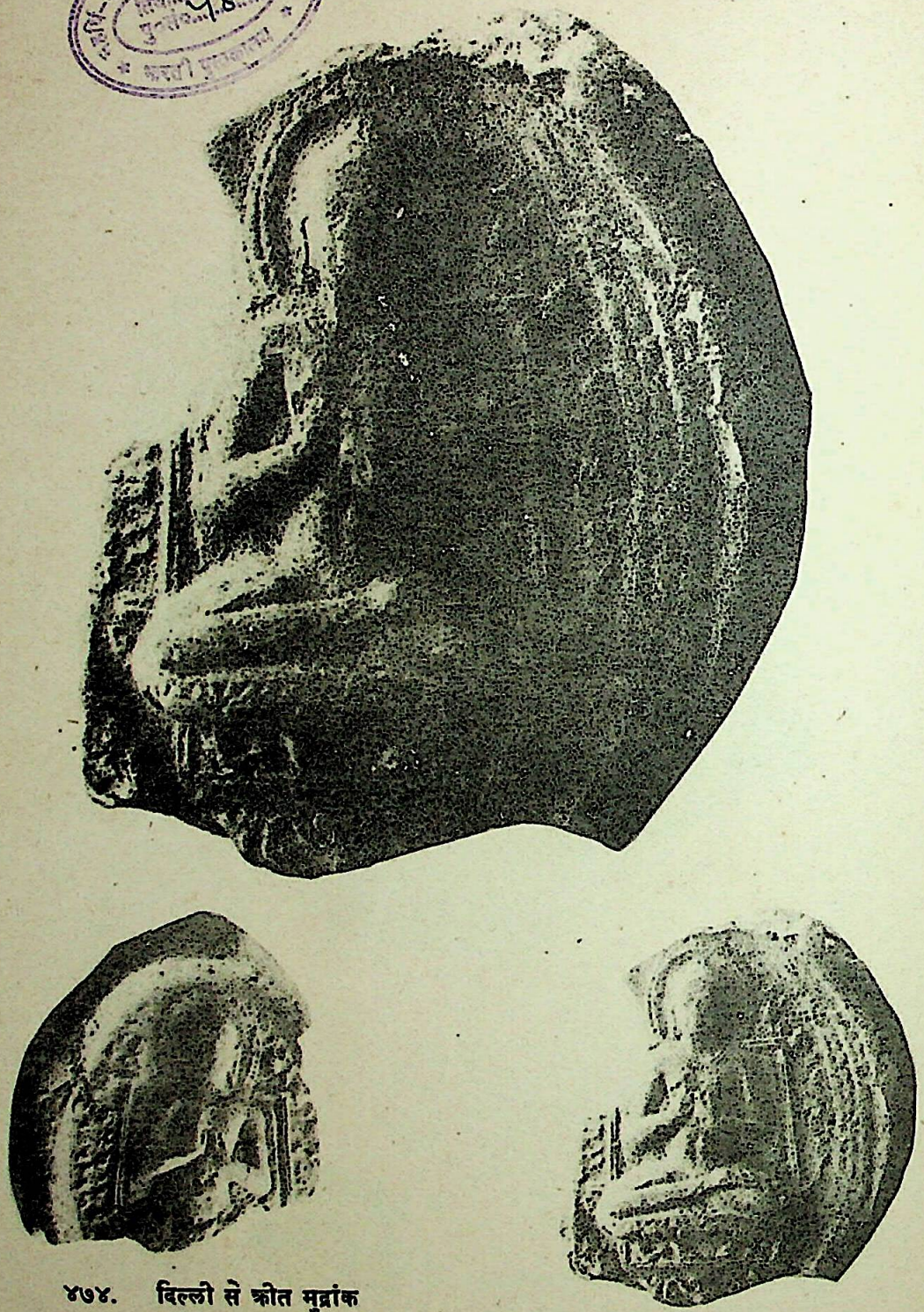

४७४. दिल्ली से क्रीत मुद्रांक
इस पर बुद्ध का चित्र है।

474. Clay seal purchased at Delhi, bearing the image of Buddha.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४७५. दिल्ली से क्रीत मुद्रांक
इस पर चतुर्भुज देवता का चित्र है। एक हाथ में खड्ग दिखाई दे रहा है।

475. Clay seal bearing a four-armed deity, purchased at Delhi. A sword can be seen in one his hands.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४७६. सुघ से प्राप्त मुद्रांक
लेख त्रुटित है। ऊपर मध्य के मुख्य कमल पुष्प पर पद्मासनस्थ बुद्ध का चित्र तथा दोनों ओर के दो-दो गौण कमल पुष्पों पर दो शिष्यों तथा सेविकाओं के चित्र हैं।

476. Clay seal from Sugha, with the inscription broken. Buddha on central lotus by four personages.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४७७. सुनेत से प्राप्त विपरीत मुद्रांक

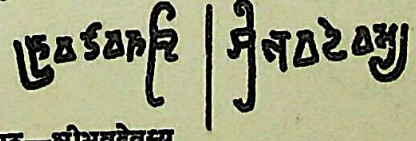

पाठ—श्रीभवदेवस्य

ऊपर शालभञ्जिका का चित्र है।

477. Reverse seal from Sunet, with a salbhanjika above the inscription *Sri Bhavadevasya.*

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महर्षि-पाणिनि-प्रज्ञा-अनुसन्धान
तिथी
पुस्त०
भारती पुस्तकालय

४७८. नौरंगाबाद से प्राप्त मुद्रांक

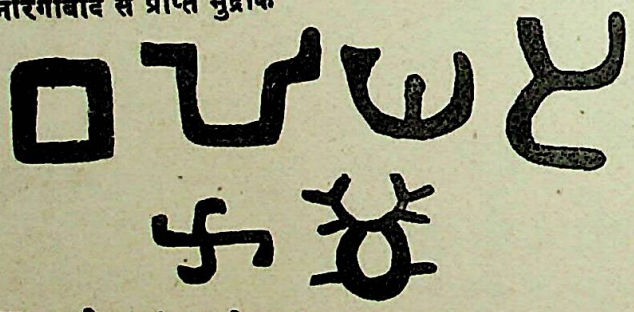

पाठ=बलीयस (=बलीयस्य)

लेख के पास स्वस्ति तथा 卐 चिह्न। सछिद्र मूठ पर भी स्वस्ति चिह्न बना है।

478. Clay seal of Baliya from Naurangabad with the syambals of svastika and 卐.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

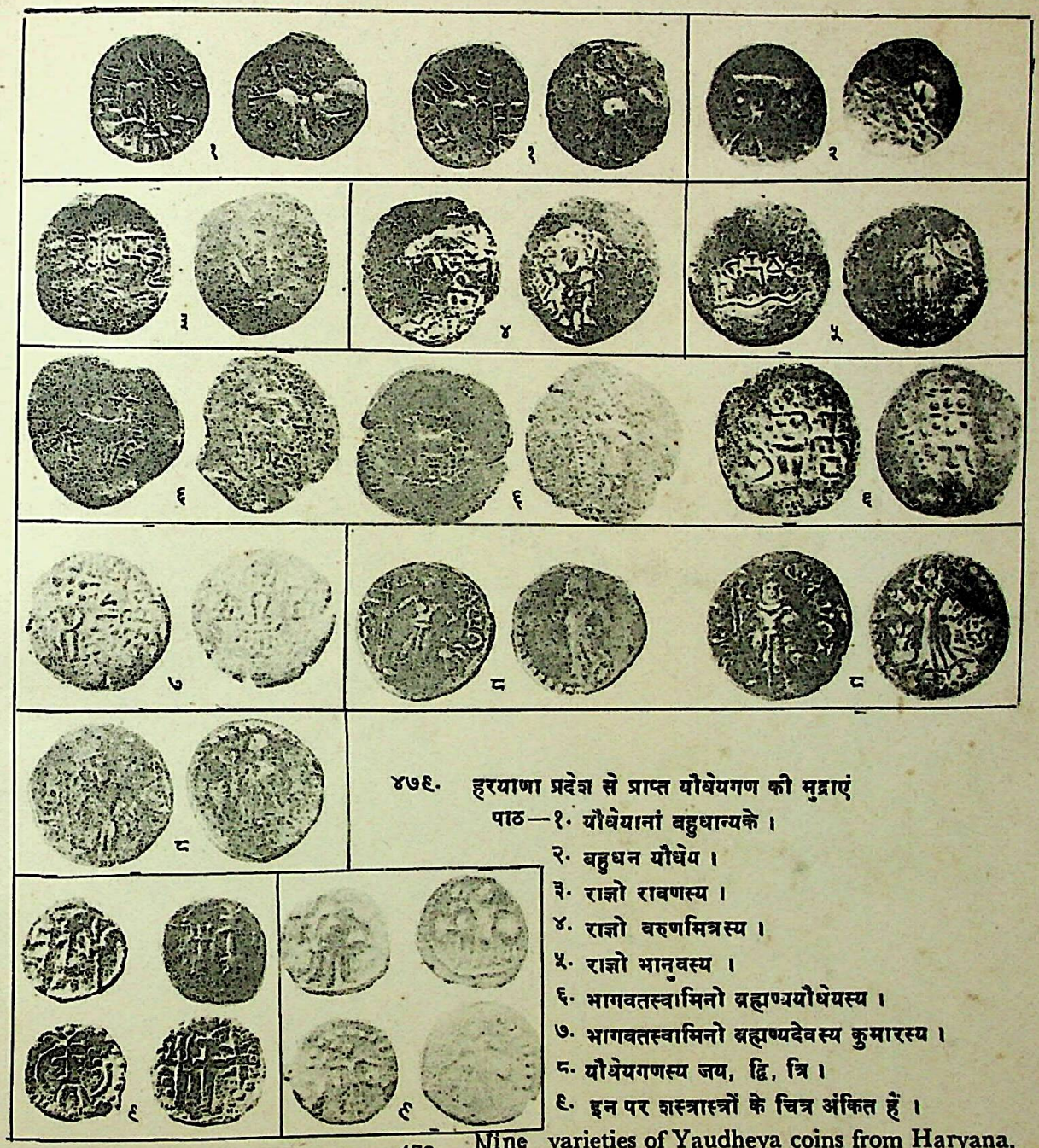

४७९. हरयाणा प्रदेश से प्राप्त यौधेयगण की मुद्राएं

पाठ—१. यौधेयानां बहुधान्यके ।
२. बहुधन यौधेय ।
३. राज्ञो रावणस्य ।
४. राज्ञो वरुणमित्रस्य ।
५. राज्ञो भानुवस्य ।
६. भागवतस्वामिनो ब्रह्मण्ययौधेयस्य ।
७. भागवतस्वामिनो ब्रह्मण्यदेवस्य कुमारस्य ।
८. यौधेयगणस्य जय, द्वि, त्रि ।
९. इन पर शस्त्रास्त्रों के चित्र अंकित हैं ।

479. Nine varieties of Yaudheya coins from Haryana.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

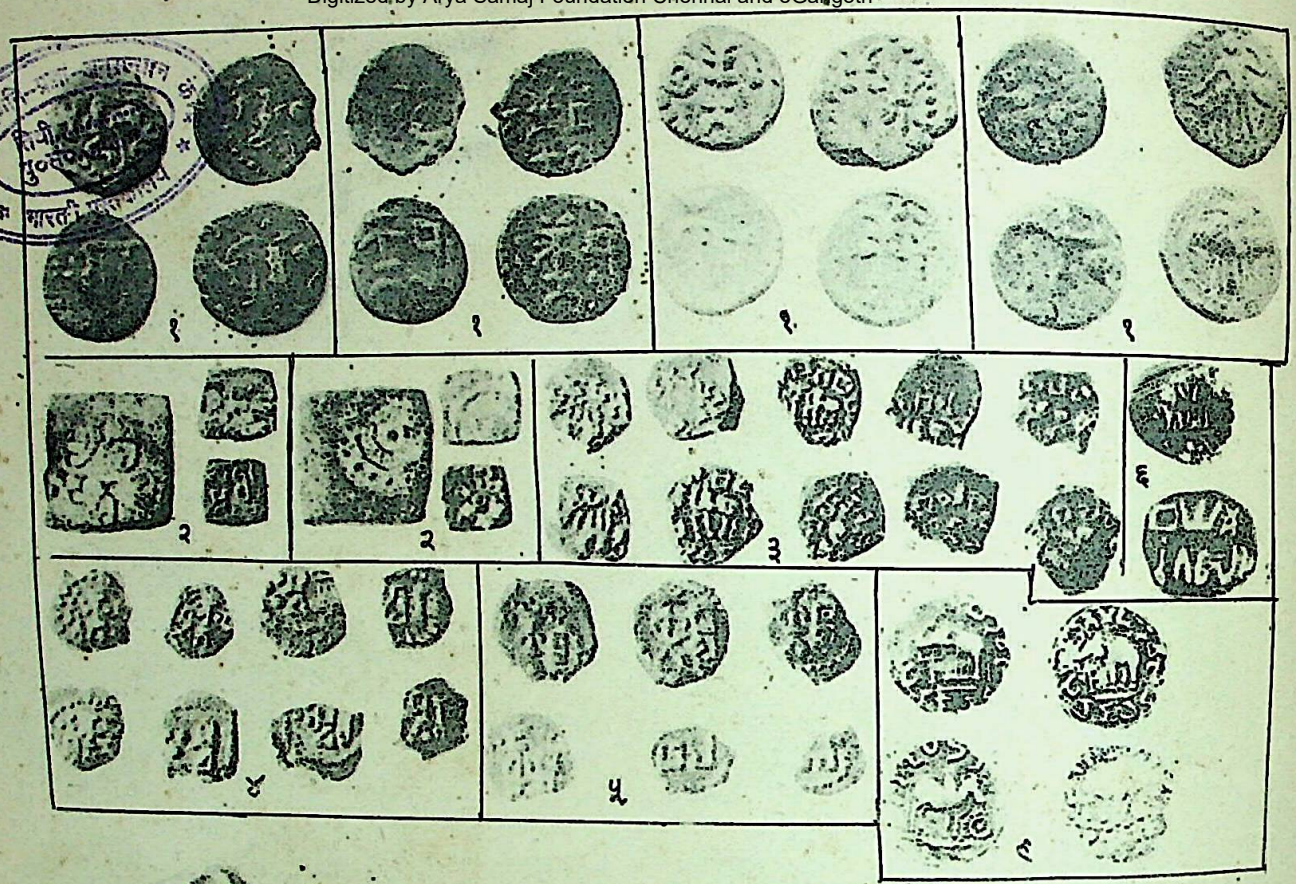

७

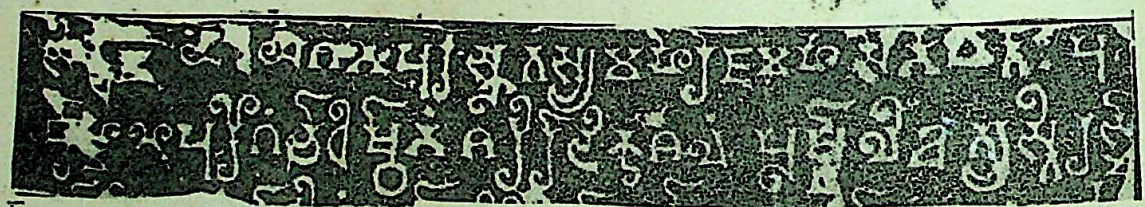

८

१. शिव, नन्दी और शस्त्रास्त्रों से युक्त यौधेय मुद्रायें

४८०. 480.

२. वृष्णिगण के राजा व्याघ्रसत्र और सत्रगुप्त की मुद्रायें दूसरी ओर चक्र का चित्र है। [illegible]गण की मुद्रायें Audumbar.
Coins of the Vṛisṇi republic inscribed Vyāghrasatra and Satragupta. Cakra on reverse.

३. महासेनापति बलवर्मा की मुद्रायें। [illegible]कुणिन्दगण की मुद्रायें Kuṇinda.
Coins of Mahasenapati Balavarman.

४. ईश्वर की मुद्रायें। ५. बल (वर्मा) की मुद्रायें। [illegible] की मुद्रा।
Coins of Iśvara. Coins of Bala (Varman) Coins of Vangapāl

१०

७. अगरोहा से प्राप्त मृत्पट्टिका पर सा, नि, ध, पा, मा, ग, रे, स उल्लिखित षड्ज आदि सात स्वरों के आद्यक्षर।
A clay tablet from Agroha inscribed with the letters *sā, ni, dha, pā, mā, ga, ré, sa* of the musical notation.

८. विजयगढ़ स्थित यौधेय लेख Vijayagadh Inscription of the Yaudheyas.

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरयाणा प्रांतीय पुरातत्त्व संग्रहालय
गुरुकुल झज्जर, रोहतक

CC-0 Rohini Kanya Maha Vidyalaya Collection.